مکمل بہشتی زیور

बहिश्ती ज़ेवर

हज़रत मौलाना अशरफ़ अली थानवी (रह०)

अपनी बात

हकीमुल उम्मत हज़रत मौलाना अशरफ़ अली थानवी की मशहूर किताब 'बहिश्ती ज़ेवर' को कौन नहीं जानता। औरतों और बच्चियों के लिए इसको इस्लामी शरीअत की 'इन्साइक्लोपेडिया' कहा जाए तो बेजान न होगा, ज़िंदगी का कौन–सा पहलू ऐसा है, जिस पर इसमें बहस न की गयी हो। इबादतों की तफ़सील तो है ही, उससे मुताल्लिक़ ज़रूरी मस्अले भी आ गये हैं। इसके अलावा खरीद व फ़रोख्त मामलात, रहन–सहन, उठना बैठना, खाना–पीना, सोना–जागना, निकाह–तलाक़, बच्चों का लालन–पालन, देखभाल तालीम व तर्बियत, अख़्लाक़ व अक़ीदा, यहां तक कि हर दिन काम आने वाली घरेलू दवाएं वग़ैरह सभी कुछ इसमें मौजूद है, इसलिए अगर यह कहा जाए तो बेजा न होगा कि 'बहिश्ती ज़ेवर' हर घर की न सिर्फ़ दीनी बल्कि दुन्यवी ज़रूरत भी है।

ऐसी अहम ज़रूरत को सिर्फ़ उर्दू तक महदूद रखना फूल की ख़ुश्बू को किसी डिबिया में बंद करने की तरह था।

आज हिंदी जिस तेज़ी से मुसलमान घरानों में फ़ैल रही है, उसे बताने की ज़रूरत नहीं। कुछ सूबे तो ऐसे भी हैं जहां के मुसलमान सिर्फ़ हिंदी ही जानते हैं, उर्दू उनके लिए अजनबी ज़ुबान है। ऐसे लोगों की ज़रूरत को देखते हुए 'बहिश्ती ज़ेवर' के हिंदी में जल्द छापे जाने की ज़रूरत शिद्दत से महसूस हो रही थी। 'बहिश्ती ज़ेवर' के नाम पर बहिश्ती ज़ेवर का मज़ाक उड़ाने वाली किताबें पहले से बाज़ार में मिल रही थीं, लेकिन 'बहिश्ती ज़ेवर मुकम्मल और असली शक्ल में अब तक कोई न थी, इसलिए और भी मुकम्मल बहिश्ती ज़ेवर लाने की ज़रूरत थी। चुनांचे यह हिंदी एडीशन इसी ज़रूरत को पूरा करने के एक मामूली कोशिश है। अल्लाह तआला क़ुबूल फ़रमाए, इस किताब से सिर्फ़ वह हिस्से निकाल दिए गएं हैं जिनकी बिल्कुल ही ज़माने में चलन नहीं है ऐसे पन्ने हैं भी थोड़े से। इसलिए पन्नों की कमी के साथ–साथ इसकी अहमियत भी बढ़ गयी है।

अल्लाह तआला से दुआ है कि वह इस किताब को लोगों की हिदायत का ज़रिया बनाए और उर्दू एडीशन की तरह इसे भी मक़्बूले आम करे, ताकि हमारे लिए आख़िरत में कामियाबी का वसीला हो सके।

हकीमुल उम्मत हज़रत मौलाना अशरफ़ अली थानवी रह० की ज़िन्दगी की एक झलक

हकीमुल उम्मत हज़रत मौलाना मुहम्मद अशरफ़ अली थानवी रह० की पैदाइश 5 रबी उस्सानी सन् 1280 हि० को सुबहे सादिक़ के वक़्त क़स्बा थाना भवन ज़िला मुज़फ़्फ़र नगर में हुई।

पेशीनगोई

हाफ़िज़ गुलाम मुर्तजा साहब पानी पती रह० ने जो एक ज़बरदस्त सूफ़ी बुज़ुर्ग थे, आप की पैदाइश की पेशीनगोई उस वक़्त फ़रमाई थी, जबकि इसका कोई अता–पता भी न था और आप का नाम अशरफ़ अली थानवी उसी वक़्त तज्वीज़ फ़रमाया था, आप दधियाल की तरफ़ से फ़ारूक़ी और ननिहाल की तरफ़ से अलवी थे।

तालीम और तर्बियत

आपके वालिद अब्दुलहक़ साहब रह० पैसे और जायदाद वाले और ख़ूब ख़र्च वाले इंसान थे। उन्होंने अपने बेटे की तालीम व तर्बियत बड़ी मेहनत व मशक़्क़त और खुले दिल से की।

मौलाना की शुरू की तालीम थाना भवन में हुई। मौलाना फ़तह मुहम्मद साहब से अरबी की इब्तिदाई किताबें और फ़ारसी की दर्मियानी किताबें पढ़ीं। फिर अपने मामूं वाजिद अली साहब से फ़ारसी की ऊंची किताबों को पूरा किया।

देवबन्द में

ज़ीक़ादा सन् 1265 हि० में दारूल उलूम देवबन्द भेजे गए और यहां से सन् 1301 हि० में फ़ारिग़ हुए, उस वक़्त आपकी उम्र 18–20 वर्ष के दर्मियान थी।

देवबन्द से मौलाना मुहम्मद याकूब आप के ख़ास उस्ताद रहे। उन

ही की निगरानी में आपने उस ज़माने में इफ़्ता (फ़तवा देने की) मश्क़ भी की। उस ज़माने में आपको मुनाज़रा से भी दिलचस्पी थी और आर्यों के मुकाबले में कई मारके जीत लिए। आपके ज़ेहन और क़ाबिलियत को देखते हुए मौलाना मुहम्मद याक़ूब साहब ने पेशीनगोई फ़रमाई थी, 'जाहं जाओगे, बस तुम ही तुम होगे, बाक़ी सारा मैदान साफ़।

उस वक़्त के उस्तादों और बुज़ुर्गों में आपको मौलाना रशीद अहमद गंगोही रह० से बहुत ज़्यादा अक़ीदत व मुहब्बत थी जो ज़िंदगी के आख़िर तक क़ायम रही। एक बार किसी ज़रूरत से मौलाना गंगोही रह० देवबन्द तश्रीफ़ लाये तो आपने बैअत की दर्ख़्वास्त की, मगर मौलाना ने मस्लहत न समझी। फिर जब 1266 हि० में मौलाना हज के लिए रवाना हुए तो आपने हज़रत हाजी साहब रह० की ख़िदमत में एक ख़त लिख भेजा कि वह मौलाना गंगोही रह० को आप की बैअत पर राज़ी फ़रमा लें, मगर इस ख़त के जवाब में हज़रत हाजी रह० ने खुद ही आपके बातिन की तर्बियत अपने ज़िम्मे ले ली और जब सन् 1301 ई० में आप मक्का मुअज़्ज़मा हाज़िर हुए और इस बार आपने हज़रत शेख़ की ख़िदमत में लगभग छः महीने क़ियाम फ़रमाया। एक फ़ैज़ पहुंचाने की ताक़त इतनी ज़्यादा और दूसरी तरफ़ फ़ैज़ हासिल करने की चाहत इस दर्जा की, तो नतीजा यह हुआ कि कुछ ही दिनों में शागिर्द व उस्ताद और पीर–मुरीद एक ही रंग में रंग गये। हज़रत हाजी साहब रह० मारे खुशी के फ़रमाने लगे कि, 'बस, तुम ठीक–ठाक मेरे तरीक़े पर हो' अब अगर इल्म व मारफ़त कि, 'से मुताल्लिक़ हज़रत रह० से कोई कुछ पूछता, तो आप अपने इस ख़ास मुरीद की तरफ़ इशारा फ़रमा देते, 'इनसे पूछ लो' ये ख़ूब समझ गये है।'

दो नसीहतें

जब छः महीने के क़ियाम के बाद आप वतन लौटने लगे तो हज़रत हाजी रह० ने दो नसीहतें फ़रमायीं, जिनमें से एक यह थी कि जब कानपुर से दिल घबरा जाए तो बस थाना भवन ही में आकर अल्लाह के भरोसे बैठ जाएं। यह सन् 1311 हि० का वाक़िया है।

मक्का मुकर्रमा के इस छः महीने के क़ियाम में आपने मशहूर आलिम क़ारी अब्दुल्लाह साहब मुहाजिर मक्की से 'तज्वीद' का फ़न सीखा और इसमें महारत हासिल की।

सदर मुदर्रिस की हैसियत से

गुजर चुका कि सन् 1309 हि० में आपने कोर्स से छुट्टी पायी। इत्तिफ़ाक़ से उन दिनों कानपूर 'मदरसा फ़ैज़े आम' में सदर मुदर्रिस (हेड मास्टरी की जगह खाली थी। क्योंकि उसके सदर मुदर्रिस मौलाना अहमद हसन साहब किसी बात पे नाराज़ होकर अलग हो गये थे और आपकी आलिमाना ज़ात का असर यह था कि किसी आपके जानशीनी की हिम्मत न होती थी। हकीमुल उम्मत को यह सारी तफ़सील मालूम न थी। जब मदरसे की तरफ़ से पेशकश हुई तो आपने अपने बुजुर्गों के मश्विरे से यह ख़िदमत क़ुबूल कर ली।

कानपूर पहुंच कर इस ज़िम्मेदारी के ओहदे से आपकी तबियत कुछ घबरा गयी, लेकिन अल्लाह की ग़ैबी मदद ने हर मुश्किल को आसान कर दिया और पढ़ने वालों और पढ़ाने वालों में इस जवां उम्र सदर मुदर्रिस के इल्म व फ़ज़्ल का सिक्का बैठ गया। लेकिन कुछ ही महीने गुज़रे होंगे कि आपने मदरसे के ज़िम्मेदारों से नाराज़ होकर इस्तीफ़ा पेश कर दिया।

नये मदरसे की बुनियाद

वतन लौटने के ख़्याल से पहले हज़रत शाह फ़ज़लुर्रहमान साहब गंजमुरादाबादी की ख़िदमत में हाज़िर हुए। कानपुर वालों ने, जो आपके पढ़ने–पढ़ाने और वाज़ व नसीहत से पूरी अक़ीदत रखते थे, आपकी जुदाई को न पूरा हो पाने वाला नुक़्सान समझा और गंजमुरादाबाद से जब आप लौटे हैं तो मजबूर करके कानपूर ही में रोक लिया।

यहां आपने जामा मस्जिद कानपुर में एक नये मदरसे की बुनियाद डाली और उसका नाम 'जामिअुल उलूम' रखा जो आज तक क़ायम है।

इस मदरसे के ख़िदमत आपने 14 वर्ष तक अंजाम दी और जब इस मुद्दत में ऐसे लोग पैदा हो गये जो मदरसे को अच्छी तरह संभाल सकते थे और दूसरी तरफ़ जब कानपुर के क़ियाम से तबियत घबरा गयी तो आपने बड़े अच्छे ढंग से खुद को इस ज़िम्मेदारी से अलग कर लिया और हज़रत शेख़ की नसीहत के मुताबिक़ थाना भवन की खानक़ाह इम्दादिया में अल्लाह पर भरोसा करके क़ियाम फ़रमा लिया।

यह सन् 1315 हि० की बात है

थाना भवन में

थाना भवन पहुंच कर लोगों के ज़ाती सुधार और बातिनी तर्बियत का काम बहुत आगे बढ़ा। ख़ानक़ाह इमदादिया तो बतिनी मरीज़ों के इलाज का मर्कज़ बन गयी। आम आदमी हो या आलिम, नया हो या पुराना सब ही क़िस्म के लोग आने लगे और उनका आना इतना लगातार और इतना ज़्यादा हुआ कि वक़्त की हुकूमत ने खुद से क़स्बा थाना भवन को एक रेलवे स्टेशन क़रार दे दिया।

आपके मुरीद सैकड़ों नहीं हज़ारों हैं। सिर्फ़ उन लोगों की तायदाद जो मुरीद बनने के अह्ल करार दिए गए, डेढ़ सौ के क़रीब पहुंचती है, जो आप के बाद भी इस काम में लगे हुए हैं। और फ़ैज़ पहुचाने के इस हल्क़े का असर न सिर्फ़ भारत और पाकिस्तान तक पहुंचा, बल्कि हिजाज और अफ्रीका और उन तमाम देशों में जहां–जहां हिन्दुस्तानी मुसलमान फैले हैं, ये असर बराबर मौजूद हैं।

आप 'सब कुछ' थे

आपकी ज़ात कमालों का मजमुआ और फ़ज़ाइल की जामेअ थी। हाफ़िज़, क़ारी मुदर्रिस, तफ़्सीर लिखने वाले, हदीस के माहिर फ़िक़्ह के आलिम, वाज़ करने वाले, सूफ़ी, फ़लसफ़ी, मुनाजरा करने वाले, नाज़िम, नाशिर (प्रकाशक) और ख़ानक़ाहनशीं, आप 'सब कुछ' थे, जिसकी हवाही आपकी इल्मी निशानियों से मिलती है, लेकिन इन सबसे बढ़कर यह कि आपने अपने फ़ज़ाइल व कमालात को तसव्वुफ़ की इस्लाह व तक्मील में लगा दिया।

इसलिए यह कहना गोया सही है कि आपको तमाम दूसरे इल्मी व अमली कमालात दिए ही इसलिए गये थें कि वह फ़न नये सिरे से जागे जो दुनिया में खींचातानी और हिन्दुस्तान में गुर्बत की हालत में था, जिसका असली मक़सद गुम हो चुका था और जहां कहीं उसका नाम व निशान था भी तो वहां इल्म में सिर्फ़ 'वह्दतुल वजूद' और 'वह्दतुश्शुहूद' की अधूरी ताबीर पर और अमल में सिर्फ़ ज़िक्र व फ़िक्र व मुरा क़बा के कुछ उसूल पर पूरा–पूरा

भरोसा कर लिया गया था।

आप की कोशिशों का नतीजा

आपकी तालीम व तर्बियत, किताबें, वाज़ व तब्लीग़ की वजह से सही अक़ीदे की गूंज लोगों तक पहुंची, सही मस्‌अलों का फैलाव अमल में आया, दीनी तालीम का इन्तिज़ाम हुआ, रस्मों और बिद्‌अतों की जड़ें कटीं। नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सुन्नतों को नयी ज़िंदगी मिली, जो ग़ाफ़िल थे, चूंकि, जो सोये थे, जागे, भूलों को याद आयी, बे–ताल्लुक़ों को अल्लाह तआला से ताल्लुक़ पैदा हुआ, रसूल सल्ल० की मुहब्बत से सीने गरमाये और अल्लाह की याद से दिल रोशन हुए और वह फ़न जो जौहर से ख़ाली हो चुका था, शिब्ली व जुनेद, बुस्तामी व जीलानी, सुहरावर्दी व सरहिंदी रह० जैसे बुज़ुर्गों के ख़ज़ानों से भर उठा।

वह एक मुजदिदद

यह शाने तज्दीद थी जो इस सदी में वक़्त के मुजद्दिद मौलाना अशरफ़ अली थानवी रह० के लिए अल्लाह तआला ने मख़्सूस फ़रमाई।

वफ़ात

ग़रज़, इस क़दर फ़ैज़ पहुंचाने के बाद इल्म व इर्फ़ान का यह सूरज 16–17 रजब सन् 1362 हि० की दर्मियानी रात में 82 साल 3 माह 11 दिन की उम्र पाकर हमेशा के लिए डूब गया।

इन्नालिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन

वफ़ात के पांच वर्ष पहले ही से मेदा व जिगर की ख़राबी ने परेशान कर रखा था, कभी क़बज़ होता और बराबर क़ायम रहता और कभी दस्त आते तो लगातार कई–कई दिन तक चले जाते। इलाज में कोई कसर नहीं छोड़ी गयी, मगर—

मरज़ बढ़ता गया ज्यों–ज्यों दवा की।

यहां तक कि भूख बन्द हो गयी। बहुत ही कमज़ोर और निढाल हो गये,

और अक्सर बेहोशी रहने लगी, लेकिन जितनी देर होश रहता, हाज़िर रहने वालों को नसीहत भरी बातें कहते-सुनाते और उस वक़्त पता भी न चलता कि आपके दिमाग़ पर बीमारी ने कुछ असर डाला है।

एक वाक़िआ

एक वाक़िया ठीक इसी हालत का है। तीन सौ रूपए का एक मनीआर्डर आया, उसमें लिखा था, मैंने एक मन्नत मानी थी कि अगर कारोबार में कामयाबी होगी तो तीन सौ रूपए हज़रते वाला की ख़िदमत में भेजूंगा। चुनांचे वही रक़म ख़िदमत में भेजी जा रही है, आप मालिक हैं, जहां चाहें ख़र्च फ़रमायें।

इसका जवाब अपनी कमज़ोर उंगलियों से बड़ी कठिनाइयों के साथ यह दिया, पहले तो तुमने लिखा था कि आप मालिक हैं, बाद को अख़्तियार ख़र्च करने का दिया है, और यह वकील बनाने वाली सूरत हुई। चूंकि मालिक बनाने और वकील बनाने में शरई तौर पर फ़र्क़ है, इसलिए वापस किया जाता है।

मरज़ुल मौत के दिन गुज़रते गये। दोशंबा 15 रजब सन् 62 हि० को सुबह से बराबर दस्त आने लगे और दिन इसी तरह गुज़रा। रात आयी तो अपनी छोटी बीवी को बुलाकर पूछा कि क्या दोनों का ख़र्च अदा हो चुका है। जब तसल्ली भरा जवाब मिल गया, तो फ़रमाया, 'आज तो हम जा रहे हैं' इसके बाद बे-होशी छा गयी और सवा घंटे तक रही। सांस तेज़-तेज़ चलता रहा। और कितनी ही औरतों ने देखा जब सांस ऊपर आता तो आपकी बीच की और शहादत की उंगली के बीच में हथेली के पीछे से एक ऐसी तेज़ रोशनी निकलती कि जलते हुए क़ुमक़ुमे फीके पड़ जाते थे। रोशनी सांस के उतार-चढ़ाव के साथ आती-जाती रही और जब सांस आख़ीर हुआ तो यह नूर भी छिप गया। क्या अजब कि जिन उंगलियों से हक़ीक़तें और मारफ़तें काग़ज़ पर ढलती रहीं, यह नूर उसी का हो।

जनाज़ा

इन्तिक़ाल की ख़बर हवा की तरह फैली और चाहने वालों के दिलों पर बिजली बन कर गिरी। दिल्ली और उसके आस-पास के इलाक़ों से स्पेशल रेलगाड़ियां छूटीं और हज़ारों अक़ीदतमंद सुबह होते-होते थाना भवन पहुंच

गये। इन हज़ारों शैदाइयों के साथ मौलाना थानवी रह० का जनाज़ा निकला। ईदगाह में जनाज़े की नमाज़ पढ़ी गई और फिर खुद आप ही के वक़्फ़ किये क़ब्रस्तान में जिसका तारीख़ी नाम 'क़ब्रस्ताने इश्क़ बाज़ान' है, इस सच्चे आशिक़ के जिस्म को सुपुर्द ख़ाक किया गया। नव्वरल्लाहु मर्क़दहू०

एक वसीयत

यों ती हज़रत रह० ने जो वसीयतें फ़रमायी हैं, वह सबकी सब सर आंखों पर, लेकिन उनमें से सिर्फ़ एक नक़्ल की जाती है और इसी पर यह बात--चीत ख़त्म की जाती है।

आपने फ़रमाया—

जहां तक मुम्किन हो दुनिया और उसकी चीज़ों से जी न लगावें और किसी वक़्त भी आख़िरत की फ़िक्र से ग़ाफ़िल न हों। हमेशा ऐसी हालत में रहें कि अगर इसी वक़्त मौत का पैग़ाम आ जाए तो चिंता इसकी न हो—

लौ ला अख़्ख़र्तनी इला अ ज लिन क़रीब फ़ अस्सद्द क़ व अकुम मिनस्सालिहीन०

और हर वक़्त यह समझें, शायद अब सांस उखड़ जाए।

और हमेशा रात के गुनाहों से पहले दिन के और दिन के गुनाहों से पहले रात के इस्तग़फ़ार करते रहें और जहां तक हो सके, बन्दों का हक़ अदा कर कर के अपना बोझ हल्का करते रहें।

आप की किताबें

आपने अपनी किताबें जिनकी तायदाद एक हज़ार के क़रीब है, अपने बाद अपनी यादगार छोड़ी। इनमें छः सौ के क़रीब तो वाज़ व नसीहतें हैं।

इन किताबों में सबसे बड़ी किताब 'तफ़सीर बयानुल क़ुरआन है जो बारह हिस्सों में है।

इसके बाद फ़िक़्ह में 'फ़तावा इम्दादिया' है जो कई हिस्सों में है।

सबसे मशहूर किताब 'बहिश्ती ज़ेवर' है जो इस वक़्त आपके हाथ में है, और जो बहुत ही ज़्यादा मशहूर व मक़्बूल किताब है और जिस से करोड़ों आदमियों ने फ़ायदा उठाया है।

'आमाले क़ुरआनी' क़ुरआन की रोशनी में तैयार की गयी अमलियात

की किताब है।

इनके अलावा अक़ीदा सही करने, बिद्अतों का तोड़ करने और तसव्वुफ़ के बारे में आपकी बहुत-सी किताबें हैं।

तफ़्सीर बयानुल क़ुरआन के बारे में कहा जाता है कि अपनी ज़ुबान और अन्दाज़ के लिहाज़ से वैसी तफ़्सीर आज तक नहीं लिखी गयी। ज़ुबान निहायत आसान कि क्या शहरी, क्या देहाती, क्या आलिम, क्या जाहिल सभी उससे पूरा फ़ायदा उठा सकते हैं। आयतों के शाने नुज़ूल, लफ़्ज़ों के मतलब व मआनी, वाक़िआत की तर्तीब, फ़िक़्ह के मस्अले-ये और इसी तरह की दूसरी चीज़ों ने इस तफ़्सीर की अहमियत बढ़ा दी है।

'इस्लाहुर्रुसूम' मुसलमानों में पायी जानी वाली रस्मों की इस्लाह और सुधार से मुताल्लिक़ है। इस किताब में हर क़िस्म की रस्मों को इस्लाम की कसौटी पर कसा गया है, और जो चीज़ कसौटी पर पूरी नहीं उतरी है, तो उसे खोटा क़रार दे दिया गया है। ज़ाहिर है खोटी चीज़ बाज़ार से कोई नहीं खरीदता, जान-बुझ कर खोटी चीज़ लेना नादानी है, तो फिर खोटी रस्मों को अपना कर क्यों अपनी आक़बत ख़राब की जाए।

आपकी किताब 'तालीमुद्दीन' कम पढ़े-लिखे बच्चों-बच्चियों के लिए एक बड़ी मुफ़ीद किताब है। इसमें अक़ीदों पर भी बहस है, शिर्क और बिद्अतों की बुराइयां भी बतायी गयी हैं। जो कुछ भी है, सब हदीस व कुरआन की रोशनी में है।

इसी तरह बच्चों की एक किताब आपकी 'हयातुल मुस्लिमीन' भी है, जो बच्चों को दीन से मुहब्बत पैदा कराने के लिए बहुत ज़रूरी है, वैसे बड़े भी इससे फ़ायदा उठा सकते हैं।

आपने आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मुबारक ज़िंदगी पर भी क़लम उठाया और ख़ूब उठाया। 'नश्रूत्तीब फ़ी ज़िकिन्नबी यिल हबीब' सीरत ही की किताब है, जिसमें हर वाक़िए को पूरे हवालों के साथ, दलील भरे अन्दाज़ में लिखा गया है। सीरत पर ऐसी ठोस और दलीलों भरी किताब बहुत कम मिलती है।

आपके वाज़ व नसीहत, जो बहुत ज़्यादा क़ीमती जवाहरपारों से कम नहीं 'मवाइज़े ह-स-ना कामिल' के नाम से अब तक चार हिस्सों में छप चुके हैं।

इंसान की उसूली और पाकीज़ा ज़िंदगी बनाने के लिए इन 'मवाइज़े ह-स ना' के चारों हिस्सों का पढ़ना निहायत ज़रूरी है।

पहले दोनों हिस्सों में रमज़ान के आदाब व इबादत और दीनी इल्म की तलब पर बड़ी इब्रत व नसीहत की बातें हैं। साथ ही मुराक़बे का बड़ा ज़ोरदार बयान भी है। मुह्सिने इन्सानियत हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि की रोशन हिदायतों और मोमिनों पर और हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के हुक़ूक़ क्या हैं, यह ज़िक्रे रसूल सल्ल० और मुहब्बते रसूल सल्ल० का नादिर नमूना है।

तीसरे और चौथे हिस्से में वाज़ व नसीहतें हैं। पहला वाज़ 'वाजुल मुजाहिद' है, यानी अल्लाह की राह में आने वाली आजमाइशों पर जमे रहना असल हिदायत है।' दूसरा वाज़ दुआओं और उसकी कुबूलियत पर आरिफ़ाना बहस से मुताल्लिक़ है। तीसरा वाज़ ज़िक्र व फ़िक्र के असरार (मर्मों) का दलील भरा बयान है। चौथा वाज़ अल्लाह वालों पर मुसीबतें व मुश्किल आएं, तो कैसे उनसे निबटना चाहिए। पांचवां वाज़ अल्लाह के दरबार की ज़रूरी हाज़िरी से मुताल्लिक़ है। वहां की शर्म से बचने के लिए कैसी ज़िंदगी गुज़ारनी चाहिए। इसके अलावा नबियों से मुहब्बत का मतलब, नेकियों का शौक़, बुराइयों से नफ़रत, इस्लाम की चाश्नी हासिल करने के तरीक़े, सदमों और ग़मों से निजात हासिल करने के लिए सही रास्ता और हर खुशी और ना–खुशी बर्दाश्त करने का सच्चा दर्स और सही सबक़ लेने के लिए इस किताब से फ़ायदा उठाना चाहिए।

हज़रत मौलाना की एक और किताब 'हुक़ूकुल बैत' है जिसमें मुस्लिम घरानों को संवारने की बेहतरीन नसीहतें हैं। किताब व सुन्नत की रोशनी में एक ख़ाका बनाया गया है, जिसमें रह कर हर मुसलमान घराना जन्नत बन सकता है।

मौलाना की एक किताब 'फ़ज़ाइले इस्तग़्फ़ार' भी है। कौन नहीं जानता कि नबियों के अलावा दुनिया का हर आदमी गुनाह कर सकता है, गुनाहगार होता है। ये गुनाह या तो सज़ा की वजह बनेंगे या माफ़ कर दिए जाएंगे। सज़ा और वह भी आख़िरत की सज़ा, खुदा की पनाह, कितनी सख़्त होगी, सोचा नहीं जा सकता। बस एक ही रास्ता है, तौबा, इस्तग़्फ़ार। इसी इस्तग़्फ़ार की फ़ज़ीलत व अहमियत पर यह किताब अपनी मिसाल आप है।

मौलाना की हर किताब इसी तरह की वाज़ व नसीहत की बातों से भरी हुई है और पढ़ने–समझने वालों के लिए एक बेहतरीन तोहफ़ा है, अमल वालों के लिए तो उनकी हैसियत राहनुमा की है।

अल्लाह तआला हम सबको अच्छी बातों पर अमल करने और बुरी बातों के छोड़ने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाए। आमीन०

مکمل بہشتی زیور

बहिश्ती ज़ेवर

हज़रत मौलाना अशरफ़ अली थानवी (रह०)

विषय सूची

क्या ? कहां ?

बिषय सूची

क्या ? कहां ?

विषय सूची

क्या ? कहां ?

विषय सूची

विषय सूची

क्या ? कहां ?

विषय सूची

विषय सूची

क्या ? कहां ?

विषय सूची

क्या ? कहां ?

विषय सूची

विषय सूची

क्या ? कहां ?

विषय सूची

क्या ? कहां ?

(भाग-1)

बहिश्ती ज़ेवर

हज़रत मौलाना अशरफ़ अली थानवी (रह०)

विषय सूची

क्या ? कहां ?

मदनी असली बहिश्ती ज़ेवर

का

पहला हिस्सा

بسم الله الرحمن الرحيم

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

الحمد لله الذي قال في كتابه يا أيها الذين آمنوا قوا أنفسكم وأهليكم نارا وقودها الناس والحجارة وقال الله تعالى واذكرن ما يتلى في بيوتكن من آيات الله والحكمة والصلوة والسلام على رسوله محمد صفوة الانبياء الذي قال في خطابه كلكم راع وكلكم مسئول عن رعيته وقال عليه السلام طلب العلم فريضة على كل مسلم ومسلمة وعلى آله واصحابه المتادبين والمؤدبين بآدابه

अलहम्दु लिल्लाहिल्लज़ी क़ाल फ़ी किताबिही या ऐयुहल्लज़ीन आमनू क़ू अन्फ़ुसकुम व अह् लीकुम नारंव्वकूदुहन्नास वल हिजारतु व क़ालल्लाहु तआला वज़्कुर्न मा युत्ला फ़ी बुयूतिकुन्न मिन आयातिल्लाहि वल हिक्मति वस्सलातु वस्सलामु अला रसूलिही मुहम्मदिन सफ़्वतिल आंबियाइल्लज़ी क़ाल फ़ी ख़िताबिही कल्लुकुम राअिन व कुल्लुकुम मसऊलुन अन रओयतिही व क़ाल अलैहिस्सलामु तलबुल अिल्मि फ़रीज़तुन अला कुल्लि मुस्लिमिंव्व मुस्लिमतिंव्व अला आलिही व अस्हाबिहिल मतादीन वल मुअद्दिबीन बिआदाबिही० अम्माबअदु—

हक़ीर नाचीज़ अशरफ़ अली थानवी हनफ़ी कहना यह चाहता है कि एक मुद्दत से हिंदुस्तान की औरतों के दीन की तबाही को देख–देखकर दिल दुखता था और उसके इलाज की चिंता में रहता था और चिन्ता की बड़ी वजह यह थी कि यह तबाही सिर्फ़ इनके दीन तक ही नहीं थी बल्कि दीन से गुज़र कर उनकी दुनिया तक पहुंच गई थी और उनकी ज़ात से गुज़र कर उनके बच्चों, बल्कि बहुत से पहलुओं से उनके शौहरों तक असर कर गई थी और जिस रफ़्तार से यह तबाही बढ़ती जाती थी उसके अंदाज़े से यह मालूम

होता था कि अगर जल्द सुधार न लाया गया, तो शायद यह रोग, क़रीब-क़रीब ला इलाज हो जाये, इसलिए ला इलाज की चिन्ता ज़्यादा हुई और इस तबाही की वजह, इलक़ाए इलाही[1] तजुर्बों, दलीलों और खुद ज़रूरी इल्म से सिर्फ़ यह मालूम हुई कि औरतों का दीनी इल्म का ल जानना है, जिसेसे उनके अक़ीदे, उनके मामले, उनके अख़्लाक़ और रहने-सहने का ढंग, सब बरबाद हो रहा है, बल्कि ईमान तक बचना मुश्किल है, क्योंकि कुफ़्र की कुछ बातें और कुछ काम भी उनसे हो जाते हैं और चूंकि बच्चे उनकी गोदों में पलते हैं, ज़ुबान के साथ उनके काम के रंग-ढंग, उनके विचार भी साथ-साथ मन में जाते हैं, जिससे उनका दीन तो उनका तबह होता ही है, मगर दुनिया भी बे-लुत्फ़ और नीरस हो जाती है। इस वजह से बुरे अक़ीदों से बुरे अख़्लाक़ और बुरे अख़्लाक़ से बुरे अमल और बुरे अमल से बुरे मामले पैदा होते हैं और यही जड़ है खाने-कमाने में गंदगी की। रहा शौहर, अगर उन्हीं जैसा हुआ, तो दो फ़सादियों के जमा होने से फ़साद (बिगाड़) में और तरक़्क़ी हुई, जिससे आख़िरत की तबाही ज़रूरी है, मगर ज़्यादातर इस फ़साद का अंजाम आपसी लड़ाई झगड़ों की शक्ल में निकल कर दुनिया की बर्बादी भी हो जाती है और अगर शौहर में समझ हुई तो उस बेचारे को जन्म भर की क़ैद मिल गई। बीवी की हर हरकत उस बेचारे शौहर के लिए तकलीफ़ पहुंचाने वाली, और उसकी हर नसीहत उस बीबी को ना-गवार और बोझ। अगर सब्र न हो सका, तो नौबत फूट और अलगाव तक पहुंच गई और अगर सब्र किया गया तो कड़ी क़ैद होने में संदेह ही नहीं और दीन का इल्म न रखने की वजह से उनकी दुनिया भी खराब होती है, जैसे, किसी की गीबत[2] की, उससे दुश्मनी हो गई और उससे कोई नुक़्सान पहुंच गया और जैसे इज़्ज़त और नाम पैदा करने के लिए बेकार की रस्मों में ख़र्च किया और दौलतमंदी ग़रीबी में बदल गई और जैसे शौहर को नाराज़ कर दिया, उसने निकाल बाहर किया या लापरवाई के साथ नज़र फेर ली और जैसे औलाद का बेजा लाड-प्यार किया और दह बे-हुनर और ना-मुकम्मल रह गई और उनको देख-देखकर सारी उम्र कोफ़्त में गुज़ारी और जैसे माल व ज़ेवर का लालच बढ़ा और लालच जितना न मिला, तो तमाम उम्र उसी उधेड़बुन में काटी और इसी तरह बहुत से बिगाड़ ज़रूरी और छूत की तरह फैलने वाले इस न जानने की वजह से पैदा होते हैं,

---

1. अल्लाह की तरफ़ से दिल में डाली हुई बात,
2. किसी के पीछे उसकी ऐसी बुराई करना, जो उसे मालूम हो तो ना-गवार हो,

चूंकि हर चीज़ का इलाज उसकी ज़िद (उलट) से होता है इसलिए इसका इलाज दीनी इल्म का जानना यक़ीनी हो गया। इस वजह से एक लम्बी मुद्दत से इस सोच–विचार में था कि औरतों को पूरा एहतिमाम[1] करके इल्मे दीन को, उर्दू ही में क्यों न हो, ज़रूर सिखलाया जाये, इस ज़रूरत से मौजूदा उर्दू के रिसाले और किताबें देखी गयीं तो इस ज़रूरत को पूरा करने के लिए काफ़ी नहीं पाई गई, कुछ किताबें तो ग़लत थीं और एतबार के क़ाबिल ही नहीं पाई गयीं। कुछ किताबें जो एतबार के क़ाबिल थीं, उनकी इबारत[2] ऐसी आसान न थी, जो औरतों की समझ में आ सके। फिर इनमें ऐसे मज़ामीन[3] मिले–जुले थे, जिनका ताल्लुक़ औरतों से कुछ भी नहीं। कुछ किताबें औरतों के लिए पाई गयीं, लेकिन वे इतनी तंग और कम थीं कि ज़रूरी मस्अले और अह्काम के बतलाने के लिए काफ़ी नहीं, इसलिए सोचा गया कि एक किताब उनके लिए ख़ास ऐसी बनाई जाए कि जिसकी इबारत बहुत ही आसान हो, दीन की तमाम ज़रूरी बातें उसमें आ जायें और जो अह्काम सिर्फ़ मर्दों के साथ मख़्सूस हैं, उनको इसमें न लिया जाये और ऐसी मुकम्मल हो कि सिर्फ़ उसका पढ़ लेना, रोज़मर्रा की दीनी ज़रूरतों में और किताबों से बे–नियाज़ कर दे और यों तो दीन के इल्म का एक किताब में जमा कर देना, ज़ाहिर है, ना–मुम्किन है। इसी तरह मुसलमानों का उलेमा से बे–नियाज़ हो जाना भी ना–मुम्किन है। कई साल तक यह ख़्याल मन में पकता रहा, लेकिन मुख़्तलिफ़ रूकावटों की वजह से, जिसमें सबसे बड़ी रूकावट, वक़्त न मिलना है, इसके शुरू करने की नौबत न आई। आख़िर सन् 1320 हि० में जिस तरह बन पड़ा ख़ुदा का नाम लेकर उसको शुरू कर ही दिया और ख़ुदा का फ़ज़्ल शामिले हाल यह हुआ कि साथ ही इसके छपने का सामान भी कुछ हासिल हो गया। इसमें अल्लाह तआला ने रंगून के मदरसा–ए–निसवां सूरती के मुहतमिम[4] सेठ साहिब का और जनाब मौलाना अब्दुल ग़फ़्फ़ार साहिब लखनवी रहमतुल्लाह अलैहि की मर्हूमा साहबज़ादी का, जो हकीम अब्दुस्सलाम साहिब दानापुरी से ब्याही थीं, हिस्सा रखा था कि उनकी रक़्मों से यह नेक काम शुरू हुआ, अल्लाह तआला क़ुबूल फ़रमाए। देखिए, आगे इसमें किस–किस का हिस्सा है। तालीफ़ (लेखन) इसकी, नाम के लिए इस नाकारा और नाचीज़

---

1. इंतिज़ाम, व्यवस्था,
2. वाक्य और शब्द वग़ैरह,
3. विषय
4. प्रिंसिपल,

से जोड़ दी गई है, सच तो यह है कि इसके कुल करता–धरता मेरे प्यारे अज़ीज़ मौलवी सैयद अहमद अली साहिब फ़तहपुरी सल्लमूह हैं।

جزاهم الله تعالى خير الجزاء عنى وعن جميع المسلمين والمسلمات

जज़ाहुमुल्लाहु तआला ख़ैरल जज़ाइ अन्नी व अन जमीअिल मुस्लिमीन वल मुस्लिमाति

(अल्लाह तआला उन्हें मेरी तरफ़ से और तमाम मुसलमान मर्दों और औरतों की तरफ़ से बेहतरीन बदला दे।)

अब यह किताब, माशाअल्लाह[1] चश्मे बद्दूर अक्सर ज़रूरतों, बल्कि दीन के आदाब को, बल्कि खाने–कमाने तक की कुछ ज़रूरतों को भी इस तरह पूरा करती है कि अगर कोई इसको शुरू से आख़िर तक समझ कर पढ़ ले तो दीन क जानकारी में एक दर्मियानी क़िस्म के आलिम के बराबर हो जाये। इसके साथ ही इबारत इतनी आसान है कि इससे ज़्यादा आसान लिखना, हम लोगों के बस का न था। जिन बातों की औरतों को आमतौर से ज़रूरत नहीं होती, जैसे जुमा, दोनों ईद और इमामत वग़ैरह के अह्काम, उनको निकाल दिया गया है। सिर्फ़ दो क़िस्म के अह्काम लिए गए हैं :—

एक वे जो मर्दों–औरतों की ज़रूरतों में मिले जुले हैं।

दूसरे वे, जो कि औरतों के साथ मख़्सूस हैं। और इन मख़्सूस मस्अलों में इस बात को ध्यान में रखा गया है कि हाशिए पर, इस सिलसिले में, मर्दों के लिए जो हुक्म हैं, उन्हें भी लिख दिया जाये, ताकि मर्द भी इससे फ़ायदा उठा सकें और ऐसे मस्अलों में ग़लती न कर सकें।

नाम इसका 'बहिश्ती ज़ेवर' औरतों के ज़ौक को ध्यान में रखकर रखा गया, क्योंकि असली ज़ेवर दीन के यही कमालात है, चुनांचे जन्नत में इन्हीं की बदौलत ज़ेवर पहनने को मिलेगा। जैसा कि अल्लाह तआला का इर्शाद है,——

كما قال الله تعالى يحلون فيها من اساور

युहल्लौन फ़ीहा मिन असाविर०

---

1. जैसा अल्लाह ने चाहा

और नबी सल्ल० फ़रमाते हैं– قَالَ رَسُوْلُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ

تبلغ الحلية من المؤمن حيث يبلغ الوضوء۔

'तब्लुगुल हिलयतु मिनल मूमिनि हैसु यब्लुगुल वुजूह०

चूंकि इस वक़्त सही अंदाज़ा नहीं हो सकता कि यह किताब कितने हिस्सों तक पहुंचेगी। इसलिए ख़त्म के इन्तिज़ार को भले काम में देर की वजह समझ कर मुनासिब मालूम हुआ कि इसके कई छोटे–छोटे हिस्से कर दिये जायें। इस तरह जल्द–जल्द छपेगी भी, और पढ़ने वालों का भी दिल बढ़ेगा कि हमने एक हिस्सा पढ़ लिया, दो हिस्से पढ़ लिए और तालीफ़ में भी गुंजाइश रहेगी कि जहां तक ज़रूरत समझो लिखते चले जाओ और यह भी फ़ायदा है कि अगर कोई लड़की कुछ हिस्सों में मज़ामीन को दूसरी किताबों से हासिल कर चुकी हो, तो पढ़ाने में उस हिस्से की कमी कर दी जायेगी, या किसी ख़ास वजह से कोई ख़ास हिस्सा ज़रूरी हो और पहले पढ़ाना हो, तो उसके पढ़ने–पढ़ाने में आसानी हो जायेगी।

चुनांचे यह पहला हिस्सा है, जो कि आप के हाथों में है। अल्लाह तआला से दुआ कीजिए कि जल्द और ख़ूबियों के साथ ख़ातमे को पहुंचे। इस दीबाचे[1] में दर्ज आयतों और हदीसों के साथ मर्दों पर वाजिब है कि इसमें अपनी बीबीयों और लड़कियों को लगायें और औरतों पर वाजिब है कि इसको हासिल करें, औलाद को, ख़ासतौर से लड़कियों को इस पर मुतवज्जह करें। दिल को उस वक़्त ख़ुशी होगी कि जो मज़ामीन ज़ेहन में हैं, वे सब जमा हो जाएं और छप जाएं और मैं अपनी आंखों से देख लूं कि लड़कियों के कोर्स में आमतौर से यह किताब दाख़िल हो गई है और घर–घर इसकी चर्चा हो रही है। आगे तौफ़ीक़ अल्लाह तआला के क़ब्ज़ा–ए–क़ुदरत में है।

मैं जिस वक़्त यह दीबाचा लिखने को था, परचा 'नूरून अला नूर' में एक नज्म इस किताब के नाम और मज़्मून से मेल खाती हुई नज़र से गुज़री जो दिल को भली मालूम हुई। जी चाहा कि अपने दीबाचे को इसी पर ख़त्म करूं ताकि पढ़ने वाले, ख़ास तौर से लड़कियां देखकर ख़ुश हों और इस किताब के मज़्मूनों में उनको ज़्यादा दिलचस्पी हो, बल्कि अगर यह नज़्म इस किताब के हर हिस्से के शुरू में हो, तो क्या कहने—

वह नज़्म यह है।

1. तम्हीद, प्राक्कथन,

असली इंसानी ज़ेवर

एक लड़की ने यह पूछा अपनी अम्मी जान से,
आप ज़ेवर की करें तारीफ़ मुझ अन्जान से।
कौन से ज़ेवर हैं अच्छे, यह जात दीजे मुझे,
और जो बद-ज़ब[1] हैं, वह भी बता दीजे मुझे।
ताकि अच्छे और बुरे में मुझको भी हो इम्तियाज़[2],
और मुझ पर आपकी बरकत से खुल जाए यह राज़।
यों कहा मां ने मुहब्बत से कि ऐ बेटी ! मेरी,
गोशे दिल[3] से बात सुन लो, ज़ेवरों की तुम ज़री।
सीम[4] व ज़र[5] के ज़ेवरों को लोग कहते हैं भला,
पर न मेरी जान होना तुम कभी इन पर फ़िदा।
सोने चांदी की चमक बस देखने की बात है,
चार दिन की चांदनी है फिर अन्धेरी रात है।
तुमको लाज़िम है करो मर्ग़ूब[6] ऐसे ज़ेवरात,
दीन व दुनिया की भलाई, जिससे ऐ जां ! आये हाथ।
सर पे झूमर अक़्ल का रखना तुम ऐ बेटी ! मुदाम[7]
चलते हैं, जिसके ज़रिए से ही सब इंसां के काम।
बालियां हो कान में ऐ जान ! गोशे होश की,
और नसीहत लाख तेरे झूमकों में ही भरी।

---

1. जो देखने में बुरे लगें,
2. फ़र्क़,
3. दिल के कान से ग़ौर से सुनो,
4. चांदी,
5. सोना,
6. पसंदीदा,
7. हमेशा

और आवेज़े नसायह[1] हों कि दिल आवेज़[2] हों,
गर करे उन पर अमल, तेरे नसीब तेज़ हों।
कान के पत्ते दिया करते हैं कानों को आज़ाब,
कान में रखो नसीहत, दें जो औराक़े किताब[3]।
और ज़ेवर गर गले के कुछ तुझे दरकार हों,
नेकियां प्यारी मेरी ! तेरे गले का हार हों।
क़ूवते बाज़ू का हासिल तुझको बाज़ूबंद हो,
कामियाबी से सदा तू खुर्रम व खुर्सन्द[4] हो।
है जो सब बाज़ू के ज़ेवर सब के सब बेकार हैं,
हिम्मतें बाज़ू की ऐ बेटी ! तेरी दरकार हैं।
हाथ के ज़ेवर से प्यारी दस्तकारी ख़ूब है,
दस्तकारी यह हुनर है, सबको जो मर्ग़ूब है।
क्या करोगी ऐ मेरी जां ! ज़ेवरे ख़लख़ाल को,
फेंक देना चाहिए बेटी, बस इस जंजाल को।
सब से अच्छा पांव का ज़ेवर यह है नूरे बसर,
तुम रहो साबित क़दम हर वक़्त राहे नेक पर।
सीम व ज़र का पांव में ज़ेवर न हो तो डर नहीं,
रास्ती से पांव फिसले गर न मेरी जां ! कहीं।

---

1. नसीहतों के बुंदें
2. मनमोहक,
3. किताब के पन्ने,
4. खुशव कामियाब,

सच्ची कहानियां [1]

पहली कहानी

प्यारे नबी हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि किसी जंगल में एक शख़्स (व्यक्ति) रहता था। बदली में उसने यकायक यह आवाज़ सुनी कि फ़्लां शख़्स के बाग़ को पानी दे। इस आवाज़ के साथ वह बदली चली और एक कंकरीले-पथरीले इलाक़े में ख़ूब पानी बरसा और तमाम एक नाले में जमा हो कर चला। यह शख़्स उस पानी के पीछे हो लिया। देखता क्या है कि एक शख़्स अपने बाग़ में खड़ा हुआ बेलचे से पानी भर रहा है। उसने बाग़ वाले से पूछा कि ऐ अल्लाह के बन्दे ! तेरा क्या नाम है ? उसने वही नाम बताया, जो उसने बदली से सुना था। फिर बाग़ वाले ने उससे पूछा, ऐ खुदा के बन्दे ! तू मेरा नाम क्यों पूछता है ? उसने कहा कि मैंने उस बदली में, जिसका यह पानी है, एक आवाज़ सुनी कि तेरा नाम लेकर कहा कि इसके बाग़ को पानी दे, तू ऐसा क्या काम करता है कि इतना मक़बूल (कुबूल किया गया, यानी अपनाया गया) है ? उसने कहा, जब तूने पूछा, तो मुझको कहना ही पड़ा कि मैं इसकी कुल पैदावार को देखता हूं और एक तिहाई ख़ैरात कर देता हूं, एक तिहाई अपने बाल-बच्चों के लिए रख लेता हूं और एक तिहाई फिर इस बाग़ में लगा देता हूं।

फ़ायदा—सुब्हानल्लाह[2], ख़ुदा की क्या रहमत है कि जो उसके कहे पर चलता है, उसके अनजाने ही काम इस तरह पूरे हो जाते हैं कि उसे ख़बर भी नहीं होती। सच है, जो अल्लाह का हो गया, उसका अल्लाह हो गया।

---

1. ये तमाम कहानियां प्यारे नबी हज़रत मुहम्मद सल्ल० की फ़रमाई हुई कहानियां हैं, इसलिए इनके सच होने में ज़रा भी शुबह नहीं किया जा सकता।
2. तमाम ग़लतियों से पाक तो सिर्फ़ अल्लाह है।

दूसरी कहानी

अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक बार फ़रमाया कि बनी इसराईल में तीन आदमी थे—एक कोढ़ी, दूसरा गंजा, तीसरा अंधा। अल्लाह तआला ने उनको अज़माना चाहा, और उनके पास एक फ़रिश्ता भेजा।

पहले वह कोढ़ी के पास आया और पूछा, तुझको क्या चीज़ प्यारी है ? उसने कहा, मुझे अच्दी रंगत और सुन्दर खाल मिल जाये और यह बीमारी जाती रहे, जिससे लोग मुझको अपने पास बैठने नहीं देते और घिन करते हैं। उस फ़रिश्ते ने अपना हाथ उसके बदन पर फेर दिया, वह उसी वक़्त अच्छा हो गया और अच्छी खाल और सुन्दर रंग निकल आया। फिर पूछा तुझको कैसा माल पसंद है ? उसने कहा, ऊंट। उसने एक गाभिन ऊंटनी भी उसे दे दी और कहा, अल्लाह तआला इसमें बरकत दे।

फिर गंजे के पास आया और पूछा, तुझको क्या चीज़ प्यारी है ? कहा, मेरे बाल अच्छे निकल आयें और यह बीमारी मुझसे जाती रहे कि लोग जिससे घिन करते हैं। फ़रिश्ते ने अपना हाथ उसके सर पर फेर दिया, वह तुरन्त अच्छा हो गया और अच्छे बाल निकल आये। फिर पूछा, तुमको कैसा माल पसन्द है ? उसने कहा, गाय। फिर उसको एक गाभिन गाय दे दी और कहा, अल्लाह तआला इसमें बरकत दे।

फिर अंधे के पास आया और पूछा तुझको क्या चीज़ चाहिए ? कहा, अल्लाह तआला मेरी निगाह ठीक कर दे कि सब आदमियों के देखूं। उस फ़रिश्तें ने आंखों पर हाथ फेर दिया। अल्लाह तआला ने उसकी निगाह ठीक कर दी। फिर पूछा, तुझको क्या माल प्यारा है ? कहा बकरी। तो उसको एक गाभिन बकरी दे दी।

तीनों के जानवरों ने बच्चे दिये। थोड़े दिनों में उसके ऊंटों से जंगल भर गया और उसकी गायों और उसकी बकरियों से भी।

फिर वह फ़रिश्ता खुदा के हुक्म से उसी पहली सूरत में कोढ़ी के पास आया और कहा, मैं एक ग़रीब आदमी हूं। मेरे सफ़र का सामान चुक गया है। आज मेरे पहुंचने का कोई साधन नहीं, सिवाय खुदा के और फिर तेरा। मैं अल्लाह के नाम पर, जिसने तुझे अच्छी रंगत और सुन्दर खाल दी, तुझसे एक ऊंट मांगता हूं कि उस पर सवार होकर अपने घर पहुंच जाऊं। वह बोला, यहां

से चल दूर हो, मुझे और बहुत से हक़ अदा करने है, तेरे देने की इसमें कोई गुंजाइश नहीं। फ़रिश्ते ने कहा, शायद तुझको मैं पहचानता हूं। क्या तू कोढ़ी नहीं था कि लोग तुझसे घिन करते थे और क्या तू ग़रीब नहीं था, फिर तुझको खुदा ने इतना बहुत माल दिया। उसने कहा, वाह ! क्या ख़ूब, यह माल तो मेरी कई पीढ़ियों से बाप–दादा के वक़्त से चला आता है। फ़रिश्ते ने कहा, अगर तू झूठा हो तो खुदा तुझको वैसा ही करदे, जैसा तू पहले था।

फिर गंजे के पास उसी पहली सूरत में आया और उसी तरह से सवाल किया। उसने भी वैसा जवाब दिया। फ़रिश्ते ने कहा, तू झूठा हो तो फिर खुदा तुझको वैसा ही करदे, जैसे पहले था।

फिर अंधे के पास उस पहली सूरत में आया और कहा, मैं मुसाफ़िर हूं, बे–सामान हो गया हूं। आज ख़ुदा के अलावा और फिर तेरे अलावा कोई साधन नहीं है। मैं उसके नाम पर जिसने दोबारा तुझको निगाह दी, तुझसे एक बकरी मांगता हूं कि इससे अपनी कार्रवाई करके सफ़र पूरा करूं। उसने कहा, बेशक मैं अंधा था, ख़ुदा ने अपनी रहमत से मुझे निगाह दी जितनी बकरियां, तेरा जी चाहे ले जा और जितनी चाहे छोड़ जा। खुदा की क़सम ! किसी चीज़ से मैं तुझको मना नहीं करता। फ़रिश्ते ने कहा, तू अपना माल अपने पास रख। मुझको कुछ नहीं चाहिए। तुम तीनों की सिर्फ़ आज़माइश मंज़ूर थी, सो हो चुकी। खुदा तुझसे खुश और उन दोनों से ना–खुश हुआ।

फ़ायदा—सोचना चाहिए कि उन दोनों की ना–शुक्री का नतीजा मिला कि तमाम माल छिन गया और जैसे थे, वैसे ही रह गये। खुदा उनसे ना–खुश हुआ और दुनिया और आख़िरत[1] दोनों में नाकाम रहे। और इस शख़्स को शुक्र की वजह से क्या बदला मिला कि माल बचा रहा और खुदा उससे खुश हुआ और दुनिया और आख़िरत में पूरी कामियाबी भी मिली।

तीसरी कहानी

एक बार हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु तआला अन्हा के पास कहीं से कुछ गोश्त आया और प्यारे नबी सल्ल० को गोश्त बहुत अच्छा लगता था, इसलिए हज़रत उम्मे सलमा रज़ि० ने नौकरानी से फ़रमाया कि गोश्त ताक़ में रख दे, शायद हज़रत खाना पसंद करें। उसने ताक़ में रख दिया। इतने में एक

1. लोक–परलोक

मांगने वाला आया और दरवाज़े पर खड़े होकर आवाज़ दी, भेजो अल्लाह के नाम पर, खुदा बरकत करे। घर में से जवाब आया, खुदा तुझको भी बरकत दे। इस लफ़्ज़ (शब्द) में यह इशारा है कि कोई चीज़ देने को मौजूद नहीं है। वह मांगने वाला चला गया।

इतने में अल्लाह के रसूल सल्ल० तश्रीफ़ लाये। फ़रमाया, ऐ उम्मे सलमा ! तुम्हारे पास खाने की कोई चीज़ है ? उन्होंने कहा, हां और नौकरानी से कहा, जा आपके लिए गोश्त लेती आ। वह गोश्त लेने गई। क्या देखती है कि वहां गोश्त का तो नाम भी नहीं है, सिर्फ़ एक सफ़ेद पत्थर का एक टुकड़ा रखा है। आपने फ़रमाया कि तुमने मांगने वाले को न दिया था, इसलिए वह गोश्त पत्थर बन गया।

फ़ायदा—विचार कीजिए, खुदा के नाम पर न देने की यह नहूसत हुई कि उस गोश्त की सूरत बिगड़ गई और पत्थर बन गया। इसी तरह जो शख़्स मांगने वाले से बहाना करके खुद खाता है, वह पत्थर खा रहा है, जिसका यह असर है कि पत्थर-दिली और दिल की सख़्ती बढ़ती चली जाती है। चूंकि हज़रत सल्ल० के घर वालियों के साथ खुदावन्द करीम की बड़ी इनायत और रहमत है, इसलिए इस गोश्त की सूरत खुली निगाहों में बदल दी, ताकि इसके इस्तेमाल से बची रहे।

चौथी कहानी

प्यारे रसूल सल्ल० की आदत थी कि फ़ज्र की नमाज़ पढ़कर अपने साथियों की तरफ़ रूख करते और फ़रमाते कि तुम में से रात को किसी ने कोई सपना तो नहीं देखा ? अगर कोई देखता तो बता दिया करता था। आप उसका कुछ फल बता दिया करते थे। आदत के मुताबिक़ एक बार सबसे पूछा कि किसी ने कोई सपना देखा है ? सभी ने कहा, नहीं देखा। आपने फ़रमाया, मैंने आज रात एक सपना देखा है कि दो आदमी मेरे पास आये और मेरा हाथ पकड़ कर मुझ को एक पवित्र धरती पर ले चले। देखता हूं कि एक आदमी बैठा हुआ है और दूसरा खड़ा है और उसके हाथ में लोहे का ज़ंबूर है, इस बैठे हुए के कल्ले को उससे चीर रहा है, यहां तक कि गुद्दी तक जा पहुंचा है, फिर दूसरे के साथ भी यही मामला कर रहा है और फिर वह कल्ला उसका दुरूस्त हो जाता है, फिर उसके साथ ऐसा ही करता है। मैंने पूछा, यह बात क्या है ? वे दोनों आदमी बोले आगे चलो। हम आगे चले, यहां तक कि एक ऐसे शख़्स पर गुज़र हुआ, जो लेटा

हुआ है और उसके सिर पर एक आदमी बड़ा भारी पत्थर लिए हुए खड़ा है उससे उसका सिर बड़े ज़ोर से फ़ोड़ता है। जब वह पत्थर उसके सिर पर दे मारता है, पत्थर लुढ़क कर दूर जा गिरता है। जब वह उसके उठाने के लिए जाता है तो लौटकर उसके पास आने नहीं पाता कि उसका सिर फिर अच्छा–भला जैसा था, वैसा ही हो जाता है और वह फिर उसको उसी तरह फोड़ता है। मैंने पूछा, यह क्या है ? वे दोनों बोले, आगे चलो।

हम आगे चले, यहां तक कि हम एक गुफ़ा में पहुंचे जो तनूर जैसा था, नीचे से कुशादा था और ऊपर से तंग। उसमें आग जल रही है और उसमें बहुत से नंगे मर्द और औरत भरे हुए हैं। जिस वक़्त वह आग ऊपर को उठती है उसके साथ ही वे सब उठ जाते हैं। यहां तक कि निकलने के क़रीब हो जाते हैं। फिर जिस वक़्त बैठती है, वे भी नीचे चले जाते हैं। मैंने पूछा, यह क्या है ? वे दोनों बोले, आगे चलो। हम आगे चले, यहां तक कि एक ख़ून की नहर पर पहुंचे। उसके बीच में एक आदमी खड़ा है और नहर के किनारे पर एक आदमी खड़ा है और उसके सामने बहुत–से पत्थर पड़े हैं। वह नहर के अन्दर वाला आदमी नहर के किनारे की तरफ़ आता है। जिस वक़्त निकलना चाहता है किनारे वाला आदमी उसके मुंह पर एक पत्थर इस ज़ोर से मारता है कि वह अपनी पहली जगह पर जा पहुंचता है। फिर जब कभी वह निकलना चाहता है, उसी तरह पत्थर मार कर उसे हटा देता है। मैंने पूछा, यह क्या है ? वे बोले, आगे चलो।

हम आगे चले, यहां तक कि एक हरे बाग़ में जा पहुंचे। उसमें एक बड़ा पेड़ है और उसके नीचे एक बूढ़ा आदमी और बहुत से बच्चे बैठे हैं और पेड़ के क़रीब एक और आदमी बैठा हुआ है। उसके सामने आग जल रही है और वह उसको धौंक रहा है। फिर वे दोनों मुझको चढ़ाकर पेड़ के ऊपर ले गये और एक घर पेड़ के बीच में बहुत ख़ूबसूरत–सा बन रहा था, उसमें ले गये। मैंने ऐसा घर कभी नहीं देखा था। उसमें मर्द, बूढ़े, जवान और औरतें–बच्चे बहुत से थे। फिर उससे बाहर लाकर और ऊपर ले गए। वहां एक घर पहले घर से भी अच्छा था। उसमें ले गये। उसमें बूढ़े और जवान थे। मैंने उन दोनों आदमियों से कहा कि तुमने मुझको तमाम रात फिराया। अब बताओ ये सब क्या भेद थे ?

उन्होंने कहा कि वह आदमी, जो तुमने देखा था कि उसके कल्ले चीरे जाते थे, वह आदमी झूठा है, झूठी बातें करता था और वे बातें पूरी दुनिया में मशहूर हो जाती थीं। उसके साथ क़ियामत तक यों ही करते रहेंगे। जिसका सिर

फ़ोड़ते हुए देखा, वह ऐसा आदमी है कि अल्लाह तआला ने उसको क़ुरआन का ज्ञान दिया, वह रात को उससे गाफ़िल होकर सो रहा और दिन को उस पर अमल न किया। क़ियामत तक उसके साथ यही मामला रहेगा। जिसको तुमने आग की खोह में देखा, वे ज़िना करने वाले लोग हैं और जिसको ख़ून की नहर में देखा, वे ज़िना करने वाले लोग हैं और जिसको ख़ून की नहर में देखा, वह सूद (ब्याज़) खाने वाला है। पेड़ के नीचे जो बूढ़े-से थे, वह हज़रत इब्राहीम अलै० थे और उनके आस-पास जो बच्चे देखे, वह लोगों की ना-बालिग़ औलाद हैं और जो आग धौंक रहा है वह दोज़ख़ का दारोग़ा मालिक है और पहला घर, जिसमें अभी आप दाख़िल हुए, मुसलमानों का है और यह दूसरा घर शहीदों का है और मैं जिबरील हूं और ये मीकाईल हैं। फिर बोले, सिर ऊपर उठाओ। मैंने सिर उठाया, तो मेरे ऊपर एक सफ़ेद बादल दीख पड़ा, बोले यह तुम्हारा घर है। मैंने कहा, मुझे छोड़ो, मैं अपने घर में दाख़िल हो जाऊं। बोले, अभी तुम्हारी उम्र बाक़ी है, पूरी नहीं हुई। अगर पूरी हो चुकती, तो अभी चले जाते।

फ़ायदा—जानना चाहिए कि नबियों का सपना वह्य होता है। ये तमाम घटनाएं सच्ची हैं। इस हदीस से कई चीज़ें मालूम हुईं :—

एक, झूठ के बारे में कि सज़ा कैसी है,
दूसरे आलिम, बग़ैर अमल के बारे में,
तीसरे ज़िना के बारे में,
चौथे सूद के बारे में,
खुदा सब मुसलमानों को इन कामों से बचाये रखे।

अक़ीदों[1] का बयान

अक़ीदा न० 1—तमाम आलम (सृष्टि) पहले बिल्कुल नापैद था, फ़िर अल्लाह तआला के पैदा करने से मौजूद हुआ।

अक़ीदा न० 2—अल्लाह एक है, वह किसी का मुहताज नहीं। न उसने किसी को जना, न वह किसी से जना गया, न कोई उसकी बीवी है। कोई उसके मुक़ाबले का नहीं।

अक़ीदा न० 3—वह हमेशा से है और हमेशा रहेगा।

अक़ीदा न० 4—कोई चीज़ उसके जैसी नहीं, वह सबसे निराला है।

अक़ीदा न० 5—वह ज़िंदा है, हर चीज़ पर उसको क़ुदरत है। कोई चीज़ उसके ज्ञान से बाहर नहीं। वह सब कुछ देखता है, सुनता है, कलाम फ़रमाता है। उसका क़लाम (बोलना) हम लोगों के कलाम की तरह नहीं। जो चाहे करता है कोई उसको रोक टोक करने वाला नहीं। वही पूजने के क़ाबिल है, उसका कोई साथी नहीं, अपने बंदों पर मेहरबान है, बादशाह है, सब ऐबों से पाक है, वही अपने बंदों को सब आफ़तों से बचाता है। वही इज़्ज़त वाला है, बड़ाई वाला है, सारी चीज़ों का पैदा करने वाला है, उसका कोई पैदा करने वाला नहीं, गुनाहों का बख़्शने वाला है, ज़बरदस्त है, बहुत देने वाला है, रोज़ी पहुंचाने वाला है, जिसकी रोज़ी चाहे, तंग करदे और जिसकी चाहे, ज़्यादा करदे, जिसको चाहे, पस्त करदे, जिसको चाहे बुलंद करदे, जिसको चाहे इज़्ज़त दे और जिसको चाहे ज़िल्लत दे। इंसाफ़ वाला है, बड़े तहम्मुल (सहनशीलता) और बर्दाश्त वाला है, ख़िदमत और इबादत की क़द्रदानी करने वाला है, दुआ को क़ुबूल करने वाला है, समाई वाला है, वह सब पर हाकिम है, उस पर कोई हाकिम नहीं, उसका कोई काम हिक्मत से खाली नहीं, वह सबका काम बनाने वाला है,

---

1. दिल से मानने और ज़ुबान से इक़रार करने का नाम अक़ीदा है, इस्लाम उन तमाम बातों को मानने और इक़रार करने को अक़ीदा कहता है जो बुनियाद है, जैसे खुदा को एक मानना, हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को आख़िरी नबी मानना, वग़ैरह।

उसी ने सबको पैदा किया है, वही क़ियामत में फिर पैदा करेगा, वही जिलाता है, वही मारता है, उसकी निशानियों और कारीगरियों को सब जानते हैं, उसकी ज़ात की बारीकी को कोई नहीं जान सकता। गुनाह करने वालों की तौबा कुबूल करता है, जो सज़ा के क़ाबिल है, उनको सज़ा देता है, वही हिदायत करता है, दुनिया में जो कुछ होता है, उसी के हुक्म से होता है, बिना उसके हुक्म से पत्ता नहीं हिल सकता, न वह सोता है, न ऊंघता है, वह पूरी कायनात की हिफ़ाज़त से थकता नहीं, वही सब चीज़ों को थामे हुए है। इसी तरह तमाम अच्छी और कमाल की कारीगरियां उसमें हैं, ग़ैब[1] का जानने वाला है।

अक़ीदा न० 6—उसकी सब सिफ़तें[2] हमेशा से हैं और हमेशा रहेंगी और उसकी कोई सिफ़त कभी जा नहीं सकती।

अक़ीदा न० 7—मख़्लूक़[3] की सिफ़तों से वह पाक है और कुरआन और हदीस में कुछ जगहों पर, जो ऐसी बातों की ख़बर दी गई है, तो उनका मतलब अल्लाह के हवाले करें कि वही उसकी हक़ीक़त जानता है और हम बे–खोद–कुरेद किये इस तरह ईमान लाते हैं और यक़ीन करते है कि जो कुछ इसका मतलब है, वह ठीक और बरहक़[4] है और यही बात बेहतर है या इसके कुछ मुनासिब मतलब लगा लें, जिससे वह समझ में आ जाये।

अक़ीदा न० 8—कायनात में जो कुछ भला बुरा होता है, सबको अल्लाह तआला उसके होने से पहले हमेशा से जानता है और अपने जानने के लिहाज़ से उसको पैदा करता है। तक़दीर इसी का नाम है और बुरी चीज़ों को पैदा करने में बहुत से भेद हैं, जिनको हर एक नहीं जानता।

अक़ीदा न० 9—बंदों[5] को अल्लाह तआला ने समझ और इरादा दिया है, जिससे वे सवाब और अज़ाब के काम अपने मन से करते हैं, मगर बंदों को किसी काम के पैदा करने की ताक़त नहीं है। गुनाह के काम से अल्लाह तआला नाराज़ और सवाब के काम से खुश होते हैं।

अक़ीदा न० 10—अल्लाह तआला ने बंदों को ऐसे काम का हुक्म नहीं दिया, जो बंदों से न हो सके।

---

1. कायनात की तमाम छिपी हुई बातें,
2. गुरा, विशेषताएं,
3. पैदा हुई चीज़ें, दुनिया की हर जानदार, बे–जान चीज़
4. हक़ पर, सच्ची बात,
5. यहां इंसान मुराद है।

अक़ीदा न० 11—कोई चीज़ ख़ुदा के ज़िम्मे ज़रूरी नहीं और जो कुछ मेहरबानी करे, उसका फ़ज़्ल[1] है।

अक़ीदा न० 12—बहुत से पैग़म्बर अल्लाह तआला के भेजे हुए बंदों को सीधी राह बतलाने आये और वे सब गुनाहों से पाक हैं। गिंती उनकी पूरी तरह अल्लाह ही को मालूम है, उनकी सच्चाई बतलाने को अल्लाह तआला ने उनके हाथों ऐसी नई-नई मुश्किल-मुश्किल बातें ज़ाहिर कीं, जो और लोग नहीं कर सकते, ऐसी बातों को मोजज़ा कहते हैं।

उनमें सबसे पहले आदम अलैहिस्सलाम थे और सबके बाद हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हैं और बाक़ी बीच में हुए।

इनमें से कुछ बहुत मश्हूर हैं, जैसे हज़रत नूह अलैहिस्सलाम, इब्राहीम अलैहिस्सलाम, इस्हाक़ अलैहिस्सलाम, इस्माईल अलैहिस्सलाम, याक़ूब अलैहिस्सलाम, यूसुफ़ अलैहिस्सलाम, दाऊद अलैहिस्सलाम, सुलेमान अलैहिस्सलाम, अय्यूब अलैहिस्सलाम, मूसा अलैहिस्सलाम, हारून अलैहिस्सलाम, ज़करीया अलैहिस्सलाम, यह्या अलैहिस्सलाम, ईसा अलैहिस्सलाम,- इल्यास अलैहिस्सलाम, अल-यसअ अलैहिस्सलाम, यूनुस अलैहिस्सलाम, लूत अलैहिस्सलाम, इद्रीस अलैहिस्सलाम, ज़ुल्किफ़्ल अलैहिस्सलाम, सालेह अलैहिस्सलाम, हूद अलैहिस्सलाम, शुऐब अलैहिस्सलाम।

अक़ीदा न० 13—सब पैग़म्बरों की गिनती अल्लाह तआला ने किसी को नहीं बताई, इसलिए यों अक़ीदा रखे कि अल्लाह तआला के भेजे हुए जितने पैगम्बर हैं, हम उन सब पर ईमान लाते हैं, जो हमको मालूम हैं, उन पर भी और जो नहीं मालूम, उन पर भी।

अक़ीदा न० 14—पैग़म्बरों में कुछ का रुत्बा कुछ से बड़ा है। सबसे ज़्यादा मर्तबा हमारे पैग़म्बर मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का है। और आपके बाद कोई नया पैग़म्बर नहीं आ सकता। क़ियामत तक जितने आदमी और जिन्न होंगे, आप सबके पैग़म्बर हैं।

अक़ीदा न० 15—हमारे पैग़म्बर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को अल्लाह तआला ने जागते में जिस्म के साथ मक्का से बैतुल मक़्दिस में, और वहां से सातों आसमानों पर और वहां से, जहां तक अल्लाह को मंज़ूर हुआ, पहुंचाया और फिर मक्का में पहुंचा दिया, उसे मेराज कहते हैं।

अक़ीदा न० 16—अल्लाह तआला ने कुछ जीवों को नूर से पैदा करके

---

1. मेहरबानी

उनको हमारी नज़रों से छिपा दिया है, उनको फ़रिश्ते कहते हैं। बहुत से काम उनके हवाले हैं। वे कभी अल्लाह के हुक्म के ख़िलाफ़ कोई काम नहीं करते। जिस काम में लगा दिया है, उसमें लगे हैं। उनमें चार फ़रिश्ते बहुत मशहूर हैं—हज़रत जिबरील अलैहिस्सलाम, हज़रत मीकाईल अलैहिस्सलाम, हज़रत इस्राफ़ील अलैहिस्सलाम, हज़रत इज़राईल अलैहिस्सलाम।

अल्लाह तआला ने कुछ जीवों को आग से बनाया है, वे भी हमको दिखाई नहीं देते। इसको जिन्न कहते हैं। इनमें अच्छे और बुरे सब तरह के होते हैं। इनके औलाद भी होती है। इनमें सबसे ज़्यादा मशहूर दुष्ट इब्लीस यानी शैतान है।

अक़ीदा न० 17—मुसलमान जब ख़ूब इबादत करता है और गुनाहों से बचता है और दुनिया से मुहब्बत नहीं रखता और पैग़म्बर साहब सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की हर तरह ख़ूब ताबेदारी करता है, तो वह अल्लाह तआला का दोस्त और प्यारा हो जाता है, ऐसे शख़्स को वली कहते हैं। ऐसे शख़्स से कभी ऐसी–ऐसी बातें होने लगती हैं, जो औरों से नहीं हो सकतीं। इन बातों को करामत कहते हैं।

अक़ीदा न० 18—वली कितने ही बड़े दर्जे को पहुंच जाए, मगर नबी के बराबर नहीं हो सकता।

अक़ीदा न० 19—वली ख़ुदा का कितना ही प्यारा हो जाए, मगर जब तक होश व हवास बाक़ी हैं, शरअ का पाबन्द रहना फ़र्ज़ है। नमाज़, रोज़ा और कोई इबादत माफ़ नहीं होती। जो गुनाह की बातें हैं, वह उसके लिए दुरूस्त नहीं हो जातीं।

अक़ीदा न० 20—जो शख़्स शरीअत के ख़िलाफ़ हो वह ख़ुदा का दोस्त नहीं हो सकता। अगर उसके हाथ से कोई अचंभे की बात दिखाई दे, या तो वह जादू है या नफ़्स या शैतान का धंधा है, इसमें अक़ीदा न रखना चाहिए।

अक़ीदा न० 21—वली लोगों को कुछ भेद की बातें सोते–जागते में मालूम हो जाती है, इसको कश्फ़ या इल्हाम कहते हैं। अगर वह शरअ के मुताबिक़ है, तो कुबूल है और अगर शरअ के ख़िलाफ़ है, तो रद्द है।

अक़ीदा न० 22—अल्लाह और रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने दीन की सब बातें कुरआन व हदीस में बंदों को बतला दीं, अब कोई बात दीन में निकालना दुरूस्त नहीं, ऐसी नई बात को बिद्अत कहते हैं। बिद्अत बहुत बड़ा गुनाह है।

अक़ीदा न० 23—अल्लाह तआला ने बहुत सी छोटी–बड़ी किताबें

आसमान से जिब्रील अलैहिस्सलाम की मारफ़त[1] बहुत से पैग़म्बरों पर उतारीं, ताकि वे अपनी–अपनी उम्मतों (मानने वालों) को दीन की बातें बतलायें–सुनायें। इनमें चार किताबे बहुत मश्हूर हैं—तौरेत हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम को मिली, ज़बूर हज़रत दाऊद अलैहिस्सलाम को इंजील हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम को, कुरआन हमारे पैग़म्बर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को और कुरआन मजीद आख़िरी किताब है। अब कोई किताब आसमान से न आएगी। क़ियामत तक कुरआन मजीद ही का हुक्म चलता रहेगा।

दूसरी किताबों को गुमराह लोगों ने बहुत कुछ बदल डाला है, मगर कुरआन मजीद की हिफ़ाज़त का अल्लाह ने वायदा फ़रमाया है, उसको कोई नहीं बदल सकता।

अक़ीदा न० 24—हमारे पैग़म्बर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को जिस–जिस मुसलमान ने देखा है, उनको सहाबी कहते हैं। उनकी बड़ी–बड़ी बुज़ुर्गियां आई हैं, इन सबसे मुहब्बत और अच्छा गुमान रखना चाहिए। अगर इनका आपस में कोई-लड़ाई झगड़ा सुनने में आये, तो उसको भूल–चूक समझे, उनकी कोई बुराई न करे, उन सब में सबसे बढ़कर चार सहाबी हैं—हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु तआला अन्हु, यह पैग़म्बर साहब के बाद उनकी जगह पर बैठे और दीन का बन्दोबस्त किया, इसलिए पहले ख़लीफ़ा कहलाये। तमाम उम्मत में यह सबसे बेहतर हैं।

इनके बाद हज़रत उमर रज़ियल्लाहु तआला अन्हु, यह दूसरे ख़लीफ़ा हैं। इनके बाद हज़रत उस्मान रज़ियल्लाहु तआला अन्हु, यह तीसरे ख़लीफ़ा हैं। इनके बाद हज़रत अली रज़ियल्लाहु तआला अन्हु, यह चौथे ख़लीफ़ा हैं।

अक़ीदा न० 25—सहाबी को इतना बड़ा रुतबा है कि बड़े से बड़ा वली भी अदना दर्जे[2] के सहाबी के बराबर मर्तबा में नहीं पहुंच सकता।

अक़ीदा न० 26—पैग़म्बर साहब की औलाद और बीवियां सब इज़्ज़त के क़ाबिल हैं। औलाद में सबसे बड़ा मर्तबा हज़रत फ़ातिमा रज़ियल्लाहु तआला अन्हा का है और बीवियों में हज़रत ख़दीजा रज़ियल्लाहु तआला अन्हा और हज़रत आइशा रज़ियल्लाहु तआला अन्हा का है।

अक़ीदा न० 27—ईमान जब दुरूस्त होता है कि अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को सब बातों में सच्चा समझे और

---

1. माध्यम,
2. छोटे दर्जे का,

इन सबको मान ले। अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्ल० की किसी बात में शक करना, उसको झुठलाना या उसमें ऐब लगाना या उसके साथ मज़ाक उड़ाना, इन सब बातों से ईमान जाता रहता है।

अक़ीदा न० 28—कुरआन और हदीस के खुले-खुले मतलब को न मानना, और ऐंच-पेंच करके अपने मतलब बनाने को मानी गढ़ना, बददीनी बात की है।

अक़ीदा न० 29—गुनाह के हलाल समझने से ईमान जाता रहता है।

अक़ीदा न० 30—गुनाह चाहे कितना बड़ा हो, जब तक उसको बुरा समझता रहे, ईमान नहीं जाता, हां, कमज़ोर हो जाता है।

अक़ीदा न० 31—अल्लाह तआला से निडर हो जाना, ना उम्मीद हो जाना कुफ़्र है।

अक़ीदा न० 32—किसी से ग़ैब की बातें पूछना और उसका यक़ीन कर लेना कुफ़्र है।

अक़ीदा न० 33—ग़ैब का हाल, सिवाए अल्लाह तआला के कोई नहीं जानता, हां, नबियों को वह्य से और वलियों को कश्फ़ और इल्हाम से और आम लोगों को निशानियों से कुछ बातें मालूम हो जाती हैं।

अक़ीदा न० 34—किसी का नाम लेकर काफ़िर कहना या लानत करना बड़ा गुनाह है, हां, यों कह सकते हैं कि ज़ालिमों पर लानत, झूठों पर लानत, मगर जिनका नाम लेकर अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने लानत की है या उनके काफ़िर होने की ख़बर दी है, उनको काफ़िर मलऊन कहना गुनाह नहीं।

अक़ीदा न० 35—जब आदमी मर जाता है अगर गाड़ा जाये, तो गाड़ने के बाद और न गाड़ा जाये, तो जिस हाल में हो, उसके पास दो फ़रिश्ते, जिनमें एक मुन्कर, दूसरे को नकीर कहते हैं, आकर पूछते हैं, तेरा परवरदिगार, कौन है ? तेरा दीन क्या है ? हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को पूछते है कि ये कौन हैं ? अगर मुर्दा ईमानदार है तो ठीक-ठीक जवाब देता है। फिर उसके लिए सब तरह का चैन है। जन्नत की तरफ़ की खिड़की खोल देते हैं, जिसमें ठंडी-ठंडी हवा और ख़ुश्बू आती है और वह मज़े में पड़ कर सोता है और अगर मुर्दा ईमानदार न हो, तो वह सब बातों में कहता है कि मुझे कुछ ख़बर नहीं, उस पर बड़ी सख़्ती और अज़ाब क़ियामत तक होता रहता है और कुछ को अल्लाह तआला यह

इम्तिहान माफ़ कर देता है, मगर ये सब बातें मुर्दे को मालूम होती हैं। हम लोग नहीं देखते, जैसे सोता आदमी सपने में सब कुछ देखता है और जागता आदमी उसके पास बे-ख़बर बैठा रहता है।

अक़ीदा न० 36—मरने के बाद हर रोज़ सुबह और शाम मुर्दे का जो ठिकाना है, दिखा दिया जाता है। जन्नती को जन्नत दिखला कर ख़ुशख़बरी देते हैं और दोज़ख़ी को दोज़ख़ दिखला कर हसरत बढ़ाते हैं।

अक़ीदा न० 37—मुर्दे के लिए दुआ या कुछ ख़ैरात वग़ैरह बख़्शने से उसको सवाब पहुंचता है, इससे उसको बड़ा फ़ायदा होता है।

अक़ीदा न० 38—अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जितनी निशानियां क़ियामत की बतलाई हैं, सब ज़रूर होने वाली हैं। इमाम मेहदी अलैहिस्सलाम ज़ाहिर होंगे और ख़ूब इंसाफ़ से बादशाही करेंगे, काना दज्जाल निकलेगा और दुनिया में बहुत फ़साद मचायेगा, उसको मारने के वास्ते हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम आसमान से उतरेंगे और उसको मार डालेंगे। याजूज माजूज बड़े ज़बरदस्त लोग हैं, वह तमाम ज़मीन पर फैल पड़ेंगे और बड़ा ऊधम मचायेंगे, फिर खुदा के क़हर से हलाक होंगे। एक अजीब तरह का जानवर ज़मीन से निकलेगा और आदमियों से बातें करेगा। पच्छिम की ओर से सूरज निकलेगा क़ुरआन मजीद उठ जायेगा और थोड़े दिनों में मुसलमान मर जायेंगे और तमाम दुनिया काफ़िरों से भर जायेगी और इसके सिवा और बहुत सी बातें होंगी।

अक़ीदा न० 39—जब सारी निशानियां पूरी हो जायेंगी, तो क़ियामत का सामान शुरू होगा। हज़रत इस्राफ़ील अलैहिस्सलाम खुदा के हुक्म से सूर फूंकेंगे, यह सूर एक बहुत बड़ी चीज़ सींग की शक्ल पर है और इस सूर के फूंकने से तमाम ज़मीन व आसमान फटकर टुकड़े-टुकड़े हो जायेंगे, तमाम जीव जंतु मर जायेंगे और जो मर चुके हैं उनकी रूहें बे-होश हो जायेंगी, मगर अल्लाह तआला को, जिनका बचाना मंज़ूर है, वे अपने हाल पर रहेंगे। एक समय इसी हालत पर गुज़र जायेगा।

अक़ीदा न० 40—फिर जब अल्लाह तआला को मंज़ूर होगा कि तमाम कायनात फिर पैदा हो जाये तो दूसरी बार फिर सूर फूका जायेगा, उससे फिर सारी कायनात पैदा हो जायेगी, मुर्दे ज़िंदा हो जायेंगे और क़ियामत के मैदान में सब इकट्ठे होंगे और वहां की तक्लीफ़ों से घबरा कर सब पैग़म्बरों के पास सिफ़ारिश कराने जायेंगे। आख़िर हमारे पैग़म्बर साहिब सल्लल्लाहु अलैहि व

सल्लम सिफ़ारिश करेंगे, तराज़ू खड़ी की जायेगी, बुरे–भले अमल तौले जायेंगे, उनका हिसाब होगा, कुछ बे–हिसाब ही जन्नत में जायेंगे, नेकों का नामा–ए–आमाल दाहिने हाथ में और बुरों का बायें हाथ में दिया जायेगा। पैग़म्बर सल्ल० अपनी उम्मत को हौज़े कौसर[1] का पानी पिलायेंगे, जो दूध से ज़्यादा सफ़ेद और शहद से ज़्यादा मीठा होगा, पुले सिरात[2] पर चलना होगा। जो नेक लोग हैं, वे उससे पार होकर बहिश्त मं पहुंच जायेंगे। जो बुरे हैं, वे उस पर से दोज़ख़ में गिर पड़ेंगे।

अक़ीदा न० 41—दोज़ख़ पैदा हो चुकी है, उसमें सांप–बिच्छू और तरह–तरह का अज़ाब है। दोज़ख़ियों में से, जिनमें ज़रा भी ईमान होगा, वे अपने आमाल की सज़ा भुगत कर पैग़म्बरों और बुज़ुर्गों की सिफ़ारिश से निकल कर बहिश्त में दाख़िल होंगे, चाहे कितने ही बड़े गुनाहगार हों, और जो काफ़िर और मुश्रिक हैं, वे उसमें हमेशा रहेंगे और उनको मौत भी न आयेगी।

अक़ीदा न० 42—बहिश्त भी पैदा हो चुकी है और उसमें तरह तरह के चैन और नेमतें हैं। बहिश्तियों को किसी तरह का डर और ग़म न होगा और वे उसमें हमेशा रहेंगे, उन उसमें से निकलेंगे, और न वहां मरेंगे।

अक़ीदा न० 43—अल्लाह तआला को अख़्तियार है कि छोटे गुनाह पर सज़ा दे दे या बड़े गुनाह को अपनी मेहरबानी से बख़्श दे और उस पर बिल्कुल सज़ा न दे।

अक़ीदा न० 44—शिर्क और कुफ़्र का गुनाह अल्लाह तआला कभी किसी का माफ़ नहीं करता और उसके सिवा और गुनाह जिसको चाहेगा, अपनी मेहरबानी से माफ़ कर देगा।

अक़ीदा न० 45—जिन लोगों का नाम लेकर अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्ल० ने उनका बहिश्ती (जन्नती) होना बतला दिया है, उनके सिवा किसी और को बहिश्ती होने का यक़ीनी हुक्म नहीं लगा सकते, हां, अच्छी निशानियां देखकर अच्छा गुमान रखना और उसकी रहमत से उम्मीद रखना ज़रूरी है।

अक़ीदा न० 46—बहिश्त में सबसे बड़ी नेमत अल्लाह तआला का दीदार (दर्शन) है, जो बहिश्तियों को नसीब होगा। उसकी लज़्ज़त के मुक़ाबले

---

1. कौसर जन्नत में दूध की एक नहर है।
2. जन्नत तक पहुंचने का एक पुल, जिसे सिर्फ़ जन्नती लोग ही पार कर सकेंगे।

में तमाम नेमतें घटिया मालूम होंगी।

अक़ीदा न० 47—दुनिया में जागते हुए इन आंखों से अल्लाह तआला को किसी ने नहीं देखा और न कोई देख सकता है।

अक़ीदा न० 48—उम्र भर में कोई कैसा ही भला-बुरा हो, मगर जिस हालत पर ख़ात्मा होता है, उसके मुताबिक़ उसको अच्छा-बुरा बदला मिलता है।

अक़ीदा न० 49—आदमी उम्र भर में जब कभी तौबा करे या मुसलमान हो, अल्लाह तआला के यहां मक़्बूल है, हां, मरते वक़्त जब दम टूटने लगे और अज़ाब के फ़रिश्ते दिखाई देने लगें, उस वक़्त न तौबा क़ुबूल होती है और न ईमान।

फ़स्ल

इसके बाद मुनासिब मालूम होता है कि कुछ बुरे अक़ीदे, रस्में और कुछ बड़े–बड़े गुनाह, जो अक्सर होते रहते है जिनसे ईमान में नुक़सान आ जाता है, बयान कर दिए जायें, ताकि लोग उनसे बचते रहें। इनमें से कुछ बिल्कुल कुफ़्र और शिर्क हैं कुछ कुफ़्र और शिर्क के क़रीब हैं और बिद्अत और गुमराही और कुछ सिर्फ़ गुनाह। मतलब यह है कि सबसे बचना ज़रूरी है। फिर जब इन चीज़ों का बयान हो चुकेगा तो उसके बाद गुनाहों से, जो दुनिया का नुक़सान और इताअत[2] से जो दुनिया का नफ़ा होता है, कुछ थोड़ा सा उसका बयान करेंगे क्योंकि दुनिया के नफ़ा–नुक़सान का लोग ज़्यादा ख़्याल करते हैं, शायद इसी ख़्याल से कुछ नेक काम की तौफ़ीक़ और गुनाह से परहेज़ हो।

कुफ़्र और शिर्क की बातें

कुफ़्र को पसंद करना, कुफ़्र की बातों को अच्छा जानना, किसी दूसरे से कुफ़्र की कोई बात कराना, किसी वजह से अपने ईमान पर शर्मिंदा होना कि अगर मुसलमान न होते तो फ़लानी बात हासिल हो जाती, औलाद वग़ैरह किसी के मर जाने पर रंज में इस क़िस्म की बातें कहना, ख़ुदा को बस इसी क़िस्म की बातें कहना, ख़ुदा को बस इसी को मारना था, दुनिया भर में मारने के लिए बस यही था, ख़ुदा को ऐसा न चाहिए था, ऐसा ज़ुल्म कोई नहीं करता, जैसा तूने किया, ख़ुदा और अल्लाह के रसूल सल्ल० के किसी हुक्म को बुरा समझना, उसमें ऐब निकालना, किसी नबी या फ़रिश्ते को हक़ीर समझना, उनको ऐब लगाना, किसी बुज़ुर्ग या पीर के साथ यह अक़ीदा रखना कि हमारे सब हाल को

---

1. अध्याय
2. फ़र्माबरदारी,
3. इस्लाम की बुनियादी बातों से इंकार को कुफ़्र कहते हैं,
4. ख़ुदा के साथ किसी को शरीक करने को शिर्क कहते हैं।

उसको हर वक़्त ख़बर रहती है, नजूमी, पंडित या जिस पर जिन्न चढ़ा हो, उससे गैब की ख़बरें पूछना या फ़ाल खुलवाना, फिर उसको सच जानना, किसी बुज़ुर्ग के कलाम से फ़ाल देखकर उसको यक़ीनी समझना, किसी को दूर से पुकारना और यह समझना कि उसको ख़बर हो गई, किसी को नफ़ा–नुक़सान का मालिक समझना, किसी से मुरादें मांगना या रोज़ी या औलाद मांगना, किसी के नाम का रोज़ा रखना, किसी को सज्दा करना, किसी के नाम का जानवर छोड़ना या चढ़ावा चढ़ाना, किसी के नाम की मन्नत मानना, किसी की क़ब्र या मकान का तवाफ़ करना, ख़ुदा के हुक्म के मुक़ाबले में किसी दूसरी बात या रस्म को आगे चलाना, किसी के सामने झुकना या तस्वीर की तरह खड़ा रहना, तोप पर बकरा चढ़ाना, किसी के नाम पर जानवर ज़िब्ह करना, जिन्न–भूत–प्रेत वग़ैरह ज़िब्ह करना, बच्चे के जीने के लिए उसके नार का पूजना, किसी की दुहाई देना, किसी जगह के बराबर अदब व इज़्ज़त करना, किसी के नाम पर बच्चे के कान–नाक छेदना, बाल और बुलाक़ पहनाना, किसी के नाम का बाज़ू पर पैसा बांधना या गले में नाड़ा डालना, सेहरा बांधना, चोटी रखना, बधी पहनाना, फ़क़ीर बनाना, अली बख़्श, हुसैन बख़्श, अब्दुन्नबी वग़ैरह नाम रखना, किसी जानवर पर किसी बुज़ुर्ग का नाम लेकर उसका अदब करना, दुनिया के कारोबार को सितारों के असर से समझना, अच्छी–बुरी तारीख़ और दिन का पूछना, शकुन लेना किसी महीने या तारीख, को मनहूस समझना, किसी बुज़ुर्ग का नाम वज़ीफ़े के तौर पर जपना, यों कहना कि ख़ुदा और रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अगर चाहेगा, तो फ़लां काम हो जायेगा, किसी के नाम या सिर की क़सम खाना, तस्वीर रखना, ख़ास तौर से किसी बुज़ुर्ग की तस्वीर बरकत के लिए रखना और उसकी ताज़ीम (आदर) करना।

बिदअतों,[1] बुरी रस्मों, और बुरी बातों का बयान

क़ब्रों पर धूम–धाम से मेला करना, चिराग़ जलाना, औरतों का वहां जाना, चादरें डालना, पुख़्ता क़ब्रें बनाना, बुज़ुर्गों के राज़ी करने को क़ब्रों की

1. कोई ऐसी नई बात जो इस्लामी अक़ीदों से मेल न खाये और मज़हब में दाख़िल कर दी जाये, बिदअत कहलाती है।

हद से ज़्यादा ताज़ीम करना, क़ब्र को चूमना–चाटना, खाक मलना, तवाफ़ या सज्दा करना, क़ब्रों की तरफ़ नमाज़ पढ़ना, मिठाई, चावल, गुल–गुल वग़ैरह चढ़ाना, ताज़िया या अलम वग़ैरह रखना, उस पर हलवा, मलीदा चढ़ाना उसको सलाम करना, किसी चीज़ को अछूती समझना, मुहर्रम के महीने में पान न खाना, मेंहदी–मिस्सी न लगाना, मर्द के पास न रहना, लाल कपड़ा न पहनना, बीबी की सहनक तक मर्दों को न खाने देना, तीजा, चालीसवां वग़ैरह को ज़रूरी समझकर करना, ज़रूरत के बावजूद औरत के दूसरे निकाह को ऐब की बात समझना, निकाह, ख़त्ना, बिस्मिल्लाह वग़ैरह में, अगर्चे वुसअत (माली ताक़त) न हो, मगर सारी ख़ानदानी रस्में करना, ख़ासतौर से क़र्ज़ दाम करके नाच–रंग वग़ैरह करना, होली दीवाली की रस्में करना, सलाम की जगह बन्दगी वग़ैरह कहना या सिर्फ़ सिर पर हाथ रखकर झुक जाना, देवर जेठ फुफीज़ाद, खालाज़ाद भाई के सामने बेशर्मी के साथ या और किसी ना महरम[1] के सामने आना, गगरा दरिया से गाते–बचाते लाना, राग–बजा, गाना सुनना, डोमनियों वग़ैरह को नचाना और देखना, उस पर खुश होकर उनको इनआम देना, नसब पर फ़ख्र करना या किसी बुज़ुर्ग से मंसूब होने को निजात के लिए काफ़ी समझना, किसी के नसब में ख़राबी हो, उस पर तान करना, पेशे को ज़लील समझना, हद से ज़्यादा किसी की तारीफ़ करना, शादियों में फ़िज़ूल ख़र्ची और ख़ुराफ़ात बातें करना, हिंदुओं की रस्में करना, दूल्हा को ख़िलाफ़े शरअ पोशाक पहनाना, कंगना, सेहरा बांधना, मेंहदी लगाना, आतशबाज़ी, टट्टियों वग़ैरह का सामान करना, फ़िज़ूल सजावट करना, घर के अंदर औरतों के दर्मियान दूल्हा को बुलाना और सामने आ जाना, ताक–झांककर उसको देख लेना, सयानी समझदार सालियों वग़ैरह का सामने आना, उनसे हंसी–दिल्लगी करना, चौथी खेलना, जिस जगह दूल्हा–दूल्हन लेटे हों, उसके गिर्द जमा होकर बातें सुनना, झांकना, ताकना, अगर कोई बात मालूम हो जाये, तो उसको औरों से कहना, मांझे बिठलाना और ऐसी शर्म करना, जिससे नमाज़ें क़ज़ा हो जायें, शेख़ी से महर ज़्यादा मुक़र्रर करना, ग़मी में चिल्लाकर रोना, मुंह और सीना पीटना, बयान करके रोना, इस्तमेली घड़े तोड़ डालना, जो कपड़े उसके बदन से लगें, सबको धुलवाना, साल भर या कुछ ज़्यादा उस घर में अचार न पड़ना, कोई ख़ुशी का काम न करना, ख़ास–ख़ास तारीख़ों

---

1. ऐसा ग़ैर मर्द जिससे शादी हो सकती है।

में फिर ग़म का ताज़ा करना, हद से ज़्यादा साज–सज्जा में लग जाना, सादा पहनावा ऐबदार समझना, मकान में तस्वीरें लगाना, ख़ासदान, इत्रदान, सुर्मादानी, सलाई वग़ैरह चांदी–सोने की इस्तेमाल करना, बहुत बारीक कपड़ा या बजता ज़ेवर पहनना, लंहगा पहनना, मर्दों के मज्मे में जाना, ख़ास तौर से ताज़िया देखने और मेलों में जाना, मर्दों के रंग–ढंग अपनाना, बदन गोदवाना, ख़ुदाई रात करना, टोटका करना, सिर्फ़ साज–सज्जा के लिए दीवारगीरी–छतगीरी लगाना, सफ़र को जाते वक़्त या लौटते वक़्त ग़ैर–महरम के गले लगना, या गले लगाना, जीने के लिए लड़के का कान या नाक छेदना, लड़के को बाला या बुलाक़ पहनाना, रेशमी कुसुम या ज़ाफ़रान का रंगा हुआ कपड़ा या हंसली या घुंघरू या और कोई ज़ेवर पहनाना, कम रोने के लिए अफ़ीम खिलाना, किसी बीमारी में शेर का दूध या उसका गोश्त खिलाना, इस क़िस्म की और बहुत-सी बातें हैं, नमूने के तौर पर इतनी बयान कर दी गई।

कुछ बड़े–बड़े गुनाह जिनके करने वाले पर बहुत सख़्ती आई है

ख़ुदा से शिर्क करना, नाहक़ ख़ून करना, वे औरतें जिनकी औलाद नहीं होती, किसी के संवर में, कुछ ऐसे टोटके करती हैं कि यह बच्चा मर जाये और हमारे औलाद हो, यह भी इसी ख़ून में दाख़िल है। मां–बाप को सताना, ज़िना करना, यतीम का माल खाना, जैसे अक्सर औरतें ख़ाविंद के तमाम माल और जायदाद पर क़ब्ज़ा करके छोटे बच्चों का हिस्सा उड़ाती है, लड़कियों को मीरास का हिस्सा न देना, किसी औरत को ज़रा से शुबह में ज़िना की तोहमत लगाना, जुल्म करना, किसी को उसके पीछे बुराई से याद करना, ख़ुदा–ए–तआला की रहमत से ना–उम्मीद होना, वायदा करके पूरा न करना, अमानत में ख़ियानत करना, ख़ुदा–ए–तआला का कोई फ़र्ज़, जैसे नमाज़, रोज़ा, हज, ज़कात छोड़ देना, कुरआन शरीफ़ पढ़कर भुला देना, झूठ बोलना, ख़ास तौर से झूठी क़सम खाना, ख़ुदा के सिवा और किसी की क़सम खाना, या इस तरह क़सम खाना कि मरते वक़्त कलमा नसीब न हो, ईमान पर ख़ात्मा न हो, ख़ुदा के सिवा और किसी को सज्दा करना, बिला

उज़्र नमाज़ क़ज़ा कर देना, किसी मुसलमान को काफ़िर या खुदा की मार, खुदा की फिटकार, खुदा का दुश्मन वग़ैरह कहना, किसी का गिला शिकवा करना, या सुनना, चोरी करना, ब्याज़ लेना, अनाज की मंहगाई से खुश होना, मोल चुकाकर पीछे ज़बरदस्ती से कम कर देना, ग़ैर–महरम के पास तंहाई में बैठना, जुआ खेलना, कुछ औरतें और लड़कियां बद–बद के गिट्टे या और कोई खेल खेलती हैं, यह भी जुआ है, काफ़िरों की रस्में पसंद करना, खाने को बुरा कहना, राग–बाजा सुनना, नाच देखना, क़ादिर होने पर भी नसीहत करना, किसी से मसख़रापन करके बे–इज़्ज़त करना और शर्मिंदा करना, किसी का ऐब ढूंढना।

गुनाहों से दुनिया के कुछ नुक़्सानों का बयान

इल्म से महरूम रहना, रोज़ी कम हो जाना, खुदा की याद से वहशत हो जाना आदमियों से वहशत हो जाना, ख़ास कर नेक आदमियों से अक्सर कामों में मुश्कील पड़ जाना, दिल में सफ़ाई न रहना, दिल में और कभी–कभी तमाम बदन में कमज़ोरी हो जाना, फ़मर्राबरदारी से महरूम रहना, उमर घट जाना, तौबा की तौफ़ीक़ न होना, कुछ दिनों में गुनाहों की बुराई दिल से जाती रहना, अल्लाह तआला के नज़दीक ज़लील हो जाना, दूसरे जीवों को उसका नुक़्सान पहुंचाना और इस वजह से उस पर लानत करना, अक़्ल में ख़राबी पैदा हो जाना, अल्लाह के रसूल सल्ल० की तरफ़ से उस पर लानत होना, फ़रिश्तों की दुआ से महरूम रहना, पैदावार में कमी होना, शर्म और ग़ैरत का जाते रहना, अल्लाह तआला की बड़ाई उसके दिल से निकल जाना, नेमतों का छिन जाना, बलाओं की भीड़ लग जाना, उस पर शैतानों का मुक़र्रर हो जाना, दिल का परेशान रहना, मरते वक़्त मुंह से कलमा न निकलना, खुदा की रहमत से मायूस होना और इस वजह से बे–तौबा मर जाना।

इबादत से दुनिया के कुछ फ़ायदों का बयान

रोज़ी बढ़ना, तरह–तरह की बरकत होना, तकलीफ़ और परेशानी दूर

हो जाना, मुरादों में पूरा होने में आसानी होना, लुत्फ़ की ज़िंदगी होना, बारिश होना, हर क़िस्म की बला का टल जाना, अल्लाह तआला का मेहरबान और मददगार रहना, फ़रिश्तों को हुक्म होना कि उसका दिल मज़बूत रखो, सच्ची इज़्ज़त और आबरू मिलना, मर्तबे का बुलंद होना, सबके दिलों में उसकी मुहब्बत हो जाना, कुरआन का उसके हक़ में शिफ़ा होना, माल का नुक़्सान हो जाये, तो उसका अच्छा बदला मिल जाना, दिन–ब–दिन नेमत में तरक़्क़ी होना, माल बढ़ना, दिल में राहत और तसल्ली रहना, आगे की नस्ल में नफ़ा पहुंचना, ज़िंदगी में ग़ैबी बशारतें नसीब होना, मरते वक़्त फ़रिश्तों का ख़ुशख़बरी सुनाना, मुबारकबाद देना, उम्र बढ़ाना, ग़रीबी और फ़ाक़े से बचा रहना थोड़ी चीज़ में ज़्यादा बरकत होना, अल्लाह तआला का गुस्सा जाता रहना।

वुज़ू का बयान[1]

वुज़ू करने वाली को चाहिए कि वुज़ू करते वक़्त क़िब्ले की तरफ़ मुंह करके किसी ऊंची जगह बैठे कि छींटें उड़कर ऊपर न पड़ें और वुज़ू शुरू करते वक़्त बिस्मिल्लाह कहे।

सबसे पहले तीन बार गट्टों तक हाथ धोये, फिर तीन बार कुल्ली करे और मिस्वाक करे। अगर मिस्वाक न हो, तो किसी मोटे कपड़े या सिर्फ़ उंगली से अपने दांत साफ़ करे कि सब मैल–कुचैल जाता रहे। अगर रोज़दार न हो तो ग़रारा करके अच्छी तरह सारे मुहं में पानी पहुंचाये और अगर रोज़ा हो तो ग़रारा न करे कि शायद कुछ पानी हलक़ में चला जाये, फिर तीन बार नाक में पानी डाले और बायें हाथ से नाक साफ़ करे, लेकिन जिसका रोज़ा है वह जितनी दूर तक नरम–नरम गोश्त है, उससे ऊपर पानी न ले जाये, फिर तीन बार मुंह धोये, इस तरह कि सर के बालों से लेकर ठोढ़ी के नीचे तक और इस कान की लौ से उस कान की लौ तक सब जगह पानी बह जाये, दोनों भवों के नीचे भी पानी बह जाये, कहीं सूखा न रहे, फिर तीन बार दाहिना हाथ कुहनियों सहित धोये, फिर बायां हाथ और एक हाथ की उंगलियों को दूसरे हाथ की उंगलियों में डालकर

1. नमाज़ पढ़ने से पहले हाथ–मुंह धोने के ख़ास तरीक़े को वुज़ू कहते हैं।

ख़िलाल करे और अंगूठी–छल्ला–चूड़ी, जो कुछ हाथों में पहने हो, हिला ले कि कहीं सूखा न रह जाये, फिर एक बार सारे सिर का मसह करे, फिर कान का मसह करे अंदर की तरफ़ की कलमा की उंगली से और कान के ऊपर का अंगूठों से मसह करे, फिर उंगलियों के पीछे की तरफ़ से गरदन का मसह करे, लेकिन गले का मसह न करे कि यह बुरा और मना है। कान के मसह के लिए नये पानी के लेने की ज़रूरत नहीं है। सिर के मसह से जो बचा हुआ पानी हाथ में लगा हुआ है, वही काफ़ी है और तीन बार दाहिना पांव टखने सहित धोये, फिर बायां पांव टखने सहित तीन बार धोये और बायें हाथ की छंगुलिया से पैरों की उंगलियों का ख़िलाल करे, पैर की दाहिनी छंगुलिया से शुरू करे और बायीं छंगुलिया पर ख़त्म करे।

यह वुज़ू करने का तरीक़ा है, लेकिन इसमें कुछ चीज़ें ऐसी हैं कि अगर इसमें से एक भी छूट जाये या कुछ कमी रह जाये, तो वुज़ू नहीं होता। जैसे पहले बे–वुज़ू थी, अब भी बे–वुज़ू रहेगी। ऐसी चीज़ों को फ़र्ज़ कहते हैं।

और कुछ बातें ऐसी हैं कि उनके छूट जाने से वुज़ू तो हो जाता है, लेकिन उनके करने से सवाब मिलता है और शरीअत में उनके करने की ताकीद भी आई है। अगर कोई अक्सर छोड़ दिया करे, तो गुनाह होता है, ऐसी चीज़ों को सुन्नत कहते हैं और कुछ चीज़ें ऐसी हैं, जिनके करने से सवाब होता है और न करने से कुछ गुनाह नहीं होता और शरअ में उनके करने की ताकीद भी नहीं है, ऐसी बातों को मुस्तहब[1] कहते हैं।

मस्अला[2] 1—वुज़ू में फ़र्ज़ सिर्फ़ चार हैं—एक बार सारे मुंह का धोना, एक–एक बार दोनों कुहनियों सहित दोनों हाथ धोना, एक बार चौथाई सिर का मसह करना, एक बार टख़नों सहित दोनों पांव धोना, बस फ़र्ज़ इतना ही है। इसमें से अगर एक चीज़ भी छूट जायगी, या कोई जगह बाल बराबर भी सूखी रह जायेगी, तो वुज़ू न होगा।

मस्अला 2—पहले गट्टों तक दोनों हाथ धोना और बिस्मिल्लाह करके कुल्ली करना और नाक में पानी डालना, मिस्वाक करना, सारे सिर का मसह करना, हर अंग को तीन बार धोना, कानों का मसह करना, हाथ

1. मुस्तहब पसंदीदा को कहते हैं, यानी ऐसा काम जिसे शरीअत पसंदीदा निगाह से देखे।

2. कुरआन, हदीस, फिर उम्मत के मिलकर किये गये फ़ैसले की रोशनी में शरीअत में जो बात तै कर दी जाये, उसे मस्अला कहते हैं।

और पैरों की उंगलियों का ख़िलाल करना, ये सब बातें सुन्नत हैं और इसके सिवा जो और बातें हैं, वे सब मुस्तहब हैं।

मस्अला 3—जब ये चारों अंग धुल जायेंगे, जिनका धोना फ़र्ज़ है, तो वुज़ू हो जाएगा, चाहे वुज़ू का इरादा हो या न हो, जैसे कोई नहाते वक़्त सारे बदन पर पानी बहा ले और वुज़ू न करे, या हौज़ में गिर पड़े या पानी बरसने में बाहर खड़ी हो जाये और वुज़ू के ये अंग धुल जायें तो वुज़ू हो जायेगा, लेकिन सवाब वुज़ू का न मिलेगा।

मस्अला 4—सुन्नत यही है कि इस तरह से वुज़ू करे, जिस तरह हमने ऊपर बयान किया है और अगर कोई उलटा वुज़ू करे कि पहले पांव धो डाले, और फिर मसह[1] करे, फिर दोनों हाथ धोये, फिर मुंह धो डाले या और किसी तरह उलट-पलट करके वुज़ू करे, तो भी वुज़ू हो जाता है, लेकिन सुन्नत के मुताबिक़ वुज़ू नहीं होता और गुनाह का डर है।

मस्अला 5—इसी तरह अगर बायां पांव पहले धोया, तब भी वुज़ू हो गया, लेकिन मुस्तहब के ख़िलाफ़ है।

मस्अला 6—एक अंग को धोकर दूसरे अंग के धोने में इतनी देर न लगाये कि पहला अंग सूख जाये, बल्कि उसके सूखने से पहले दूसरा अंग धो डाले। अगर पहला अंग सूख गया, फिर दूसरा अंग धोया, तो वुज़ू हो जायेगा, लेकिन यह बात सुन्नत के ख़िलाफ़ है।

मस्अला 7—अंग के धोते वक़्त यह भी सुन्नत है कि उस पर हाथ भी फेर ले, ताकि कोई जगह सूखी न रहे, सब जगह पानी पहुंच जाये।

मस्अला 8—वक़्त आने से पहले ही वुज़ू-नमाज़ का सामान और तैयारी करना बेहतर और मुस्तहब है।

मस्अला 9—जब तक कोई मजबूरी न हो, खुद अपने हाथ से वुज़ू करे किसी और से पानी न डलवाये और वुज़ू करने में दुनिया की कोई बात-चीत न करे, बल्कि हर अंग के धोते वक़्त बिस्मिल्लाह[2] और कलमा[3] पढ़ा करे और पानी कितना ही ज़्यादा क्यों न हो, चाहे दरिया के किनारे पर हो, लेकिन तब भी पानी को ज़रूरत से ज़्यादा ख़र्च न करे और न पानी में बहुत कमी करे कि अच्छी तरह धोने में कठिनाई हो न किसी अंग को तीन

---

1. मसह भीगे हाथ के फेरने को कहते हैं। वैसे सिर पर भीगा हाथ फेरना मुराद है, जो फ़र्ज़ है।
2. बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम,
3. ला इलाह इल्लल्लाह मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह

5

बार से ज़्यादा धोये और मुंह धोते वक़्त पानी का छींटा ज़ोर से मुंह पर न मारे, न फुंकार मार का छीटें उड़ाये और आंखों को बहुत ज़ोर से बंद न करे कि ये सब बातें मक्रूह और मना हैं। अगर या और मुंह ज़ोर से बंद किया और पलक या होंठ पर कुछ सूखा रह गया, या आंख के कोने में पानी नहीं पहुंचा तो वुज़ू नहीं हुआ।

मस्अला 10—अंगूठी, छल्ले, चूड़ी, कंगन, वग़ैरह अगर ढीले हों कि बे-हिलाये भी उनके नीचे पानी पहुंच जाये, तब भी उनका हिला लेना मुस्तहब है और अगर ऐसे तंग हों कि बग़ैर हिलाये पानी न पहुंचने का गुमान हो, तो उनको हिलाकर अच्छी तरह पानी पहुंचा देना ज़रूरी और वाजिब है। नथ का भी यही हुक्म है। अगर सूराख ढीला है, उस वक़्त तो हिलाना मुस्तहब है और जब तंग हो कि बे-फिराये और हिलाये पानी न पहुंचेगा, तो मुंह धोते वक़्त घुमाकर और हिलाकर पानी अंदर पहुंचाना वाजिब है।

मस्अला 11—अगर किसी के नाखून में आटा लगकर सूख गया हो और उसके नीचे पानी नहीं पहुंचा, तो वुज़ू नहीं हुआ। जब याद आये और आटा देखे तो आटा छुड़ा कर पानी में डाल ले और अगर पानी पहुंचाने से पहले कोई नमाज़ पढ़ ली हो, तो उसको लौटा दे और फिर से पढ़े।

मस्अला 12—किसी के माथे पर अफ़शां चुनी हो और ऊपर-ऊपर से पानी बहा ले कि अफ़शां न छूटने पाये, तो वुज़ू नहीं होता। माथे का सब गोंद छुड़ाकर मुंह धोना चाहिए।

मस्अला 13—जब वुज़ू कर चुको तो सूरः इन्ना अन्ज़ल्ना और यह दुआ पढ़े :—

اَللّٰهُمَّ اجْعَلْنِيْ مِنَ التَّوَّابِيْنَ وَاجْعَلْنِيْ
مِنَ الْمُتَطَهِّرِيْنَ وَاجْعَلْنِيْ مِنْ عِبَادِكَ الصّٰلِحِيْنَ وَاجْعَلْنِيْ مِنَ
الَّذِيْنَ لَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُوْنَ ۝

अल्लाहुम्मज् अल्नी मिनत्तव्वाबीन मिनल् मुततह् हिरीन वज्अल्नी मिन् अिबादिकस्सालिहीन वज्अल्नी मिनल्लज़ीन ला खौफुन अलैहिम व ला हुम यहज़्नून०

मस्अला 14—जब वुज़ू कर चुके तो बेहतर है कि दो रक्अत नमाज़ पढ़े, इस नमाज़ को जो वुज़ू के बाद पढ़ी जाती है, 'तहीयतुलवुज़ू' कहते हैं। हदीस शरीफ़ में इसका बड़ा सवाब आया है।

मस्अला 15—अगर एक वक़्त वुज़ू किया था, फिर दूसरा वक़्त आ गया और अभी वुज़ू नहीं टूटा है, तो उसी वुज़ू से नमाज़ पढ़ना जायज़ है और अगर ताज़ा वुज़ू करे तो बहुत सवाब मिलता है।

मस्अला 16—जब एक बार वुज़ू कर लिया और अभी वह टूटा नहीं, तो जब तक उस वुज़ू से कोई इबादत न कर ले उस वक़्त तक दूसरा वुज़ू करना मकरूह और मना है। अगर नहाते वक़्त किसी ने वुज़ू किया है तो उसी वुज़ू से नमाज़ पढ़ना चाहिए। बग़ैर उसके टूटे दूसरा वुज़ू न करे। हां, अगर कम से कम दो रक्अत इस वुज़ू से पढ़ चुकी हो, तो वुज़ू करने में कुछ हरज नहीं, बल्कि सवाब है।

मस्अला 17—किसी के हाथ या पांव फट गये और उससे मोम–रोगन या और कोई दवा भर ली (और उसके निकालने से नुक़्सान होगा) और बग़ैर उसके निकाले ऊपर ही ऊपर पानी बहा दिया, तो वुज़ू दुरुस्त है।

मस्अला 18—वुज़ू करते वक़्त एड़ी पर या किसी और जगह पानी नहीं पहुंचा और जब पूरा वुज़ू हो चुका, तब मालूम हुआ कि फ़्लानी जगह सूखी है तो वहां पर सिर्फ़ हाथ फेर लेना काफ़ी नहीं है, बल्कि पानी बहाना चाहिए।

मस्अला 19—अगर–हाथ पांव वग़ैरह में कोई फोड़ा है या कोई और ऐसी बीमारी है कि उस पर पानी डालने से नुक़्सान होता है, तो पानी न डाले, वुज़ू करते वक़्त सिर्फ़ भीगा हाथ फेरले, उसको मसह कहते हैं और अगर यह भी नुक़्सान करे तो हाथ भी न फेरे, उतनी जगह छोड़ दे।

मस्अला 20—अगर ज़ख़्म पर पट्टी बंधी हो और पट्टी खोल कर ज़ख़्म पर मसह करने से नुक़्सान हो या पट्टी खोलने–बांधने में बड़ी कठिनाई और तक्लीफ़ हो, तो पट्टी के ऊपर मसह कर लेना दुरुस्त है। अगर ऐसा न हो तो पट्टी पर मसह करना दुरुस्त नहीं, पट्टी खोलकर ज़ख़्म पर मसह करना चाहिए।

मस्अला 21—अगर पूरी पट्टी के नीचे ज़ख़्म नहीं है, तो पट्टी खोलकर, ज़ख़्म छोड़कर और सब धो सके, तो धोना चाहिए और अगर पट्टी न खोल सके, तो सारी पट्टी पर मसह कर ले। जहां ज़ख़्म है, वहां भी और जहां ज़ख़्म नहीं है, वहां भी।

मस्अला 22—हड्डी के टूट जाने के वक़्त जो बांस की खपच्चियां रखकर टिक्ठी बनाकर बांधते हैं, उसका भी यही हुक्म है कि जब तक

टिक्ठी न खोल सके, टिक्ठी के ऊपर हाथ फेर लिया करे और फ़स्द की पट्टी का भी यही हुक्म है कि अगर ज़ख़्म के ऊपर मसह न कर सके तो पट्टी खोलकर कपड़े की गद्दी पर मसह करे और अगर कोई खोलने–बांधने वाला न मिले, तो पट्टी ही पर मसह करे।

मस्अला 23—टिक्ठी और पट्टी वग़ैरह में बेहतर तो यह है कि सारी टिक्ठी पर मसह करे और अगर सारी पर न करे, बल्कि आधी से ज़्यादा पर करे तो भी जायज़ है, अगर सिर्फ़ आधी या आधी से कम पर करे, तो जायज़ नहीं है।

मस्अला 24—अगर टिक्ठी या पट्टी खुलकर गिरे और ज़ख़्म भी अच्छा नहीं हुआ तो फिर बांध ले और वही पहला मसह बाक़ी है, फिर मसह करने की ज़रूरत नहीं है। अगर ज़ख़्म अच्छा हो गया है कि अब बांधने की ज़रूरत नहीं है, तो मसह टूट गया, अब उतनी जगह धोकर नमाज़ पढ़े और सारा वुज़ू दोहराना ज़रूरी नहीं है।

वुज़ू को तोड़ने वाली चीज़ों का बयान

मस्अला 1—पाखाना–पेशाब और हवा, जो पीछे से निकले, उससे वुज़ू टूट जाता है, हां, अगर आगे की राह से हवा निकले, जैसा कि कभी बीमारी से ऐसा हो जाता है, तो उससे वुज़ू नहीं टूटता और अगर आगे या पीछे से कोई कीड़ा जैसे केचुवा या कंकरी वग़ैरह निकली, तो वुज़ू टूट जाता है।

मस्अला 2—अगर किसी के कोई ज़ख़्म हो, उसमें से कीड़ा निकला या कान से निकला या ज़ख़्म में से कुछ गोश्त कट कर गिर पड़ा और ख़ून नहीं निकला, तो उससे वुज़ू नहीं टूटा।

मस्अला 3—अगर किसी ने फ़स्द ली या नक्सीर फूटी या चोट लगी और ख़ून निकल आया। फोड़े–फुंसी से या बदन भर में और कहीं से ख़ून निकला या पीप निकली तो वुज़ू जाता रहा। हां, अगर ज़ख़्म के मुंह ही पर रहे, ज़ख़्म के मुंह से आगे न बढ़े, तो वुज़ू नहीं गया और अगर किसी के सूई चूभ गई और ख़ून निकल आया, लेकिन बहा नहीं, तो वुज़ू नहीं टूटा और तनिक भी बह पड़ा, तो वुज़ू टूट गया।

मस्अला 4—अगर किसी ने नाक सिंकी और उसमें जमे हुए ख़ून की फुटकियां निकलीं, तो वुज़ू नहीं गया। वुज़ू जब टूटता है कि पतला ख़ून

निकले और बह पड़े, सो अगर किसी ने अपनी नाक में उंगली डाली, फिर जब उसको निकाला, तो उंगली में ख़ून का धब्बा मालूम हुआ, लेकिन वह ख़ून बस इतना ही है कि उंगली में तो थोड़ा सा लग जाता है, लेकिन बहता नहीं, तो इससे वुज़ू नहीं टूटता।

मस्अला 5—किसी की आंख के अंदर कोई दाना वग़ैरह था, वह टूट गया या खुद उसने तोड़ दिया और उसका पानी बह कर आंख में तो फैल गया, लेकिन आंख के बाहर नहीं निकला, तो उसका वुज़ू नहीं टूटा, और अगर आंख के बाहर पानी निकल पड़ा तो वुज़ू टूट गया। इसी तरह अगर कान के अंदर दाना हुआ और टूट जाये, तो जब ख़ून–पीप सूराख़ के अंदर उस जगह तक रहे, जहां पानी पहुंचाना गुस्ल के वक़्त फ़र्ज़ नहीं है, तब तक वुज़ू नहीं जाता और ऐसी जगह पर आ जाये, जहां पानी पहुंचाना फ़र्ज़ है, तो वुज़ू टूट जायेगा।

मस्अला 6—किसी ने अपने फोड़े या छाले के ऊपर का छिलका नोच डाला और उसके नीचे ख़ून या पीप दिखाई देने लगा, लेकिन वह ख़ून–पीप अपनी जगह पर ठहरा है, किसी तरफ़ बहा नहीं, तो वुज़ू नहीं टूटा और जो बह पड़ा, तो वुज़ू टूट गया।

मस्अला 7—किसी के फोड़े में बहुत बड़ा घाव हो गया, तो जब तक ख़ून–पीप उसके सूराख़ के अंदर ही अंदर है, बाहर निकल कर बदन पर न आये, उस वक़्त तक वुज़ू नहीं टूटता।

मस्अला 8—अगर फोड़े–फुंसी का ख़ून आपसे नहीं निकला बल्कि उसने दबा के निकाला है, तब भी वुज़ू टूट जायेगा, जबकि वह ख़ून बह जाये।

मस्अला 9—किसी के ज़ख़्म से थोड़ा–थोड़ा ख़ून निकलने लगा, उसने उस पर मिट्टी डाल दी या कपड़े से पोंछ लिया, फिर थोड़ा–सा निकला, फिर उसने पोंछ डाला, इसी तरह कई बार किया कि ख़ून बहने न पाया, तो दिल में सोचे, अगर ऐसा मालूम हो, अगर पोंछा न जाता तो बह पड़ता तो वुज़ू टूट जायेगा और अगर ऐसा हो कि पोंछा न जाता, तब भी न बहता, तो वुज़ू न टूटेगा।

मस्अला 10—किसी के थूक में ख़ून मालूम हुआ, तो अगर थूक में ख़ून बहुत कम है और थूक का रंग सफ़ेदी या ज़रदी मायल है, वुज़ू नहीं गया और अगर ख़ून ज़्यादा या बराबर है और रंग सुर्ख़ीमायल है तो वुज़ू टूट गया।

मस्अला 11—अगर दांत से कोई चीज़ काटी और उस चीज़ पर

ख़ून का धब्बा मालूम हुआ या दांत से ख़िलाल किया और ख़िलाल में ख़ून की लाली दिखाई दी, लेकिन थूक में बिल्कुल ख़ून का रंग नहीं मालूम होता, तो वुज़ू नहीं टूटा।

मस्अला 12— किसी ने जोंक लगवायी और जोंक में इतना ख़ून भर गया कि अगर बीच से काट दो तो ख़ून बह पड़े तो वुज़ू जाता रहा और जो इतना न पिया हो, बल्कि बहुत कम पिया हो, तो वुज़ू नहीं टूटता और मच्छर या मक्खी या खटमल ने ख़ून पिया, तो वुज़ू नहीं टूटा।

मस्अला 13—किसी के कान में दर्द होता है और पानी निकला करता है, तो यह पानी, जो कान से बहता है नजिस[1] है, अगरचे कुछ फूड़ा—फुंसी न मालूम होती हो, तो उसके निकलने से वुज़ू टूट जाएगा, जब कान के सूराख़ से निकलकर उस जगह तक जाये, जिसका धोना गुस्ल करते वक़्त फ़र्ज़ है, इसी तरह अगर नाक से पानी निकले और दर्द भी होता हो, तो इससे वुज़ू टूट जायेगा। ऐसे ही अगर आंखें दुखती हों और खटकती हो तो पानी बहने और आंसू निकलने से वुज़ू टूट जाता है और अगर आंखें न दुखती हों, न उनमें कुछ खटक हो, तो आंसू निकलने से वुज़ू नहीं टूटता।

मस्अला 14—अगर छाती से पानी निकलता है और दर्द भी होता है, तो वह भी नजिस है, उससे वुज़ू जाता रहेगा और अगर दर्द नहीं है तो नजिस नहीं है और उससे वुज़ू भी न टूटेगा।

मस्अला 15—अगर क़ै हुई और उसमें खाना या पानी या पित गिरे तो अगर मुंह भर क़ै हुई हो, तो वुज़ू टूट गया और अगर मुंह भर क़ै नहीं हुई तो वुज़ू नहीं टूटा और मुंह भर होने का यह मतलब है कि मुश्किल से मुंह में रुके और क़ै में निरा बलग़म गिरे, तो वुज़ू नहीं गया, चाहे जितना हो। भर मुंह हो या न हो, सबका एक हुक्म है और अगर क़ै में ख़ून गिरे, तो अगर पतला भारी बहता हुआ हो, तो वुज़ू टूट जायेगा, चाहे कम हो, चाहे ज़्यादा, भर मुंह हो या न हो और अगर जमा हुआ, टुकड़े—टुकड़े गिरे और भर मुंह हो, तो वुज़ू टूट जायेगा और अगर कम हो, तो वुज़ू न जायेगा।

मस्अला 16—अगर थोड़ी—थोड़ी करके कई बार क़ै हुई, लेकिन सब मिलाकर इतनी है कि अगर एक बार गिरती, तो भर मुंह हो जाती, तो अगर एक ही मतली बराबर बाक़ी रही और थोड़ी—थोड़ी क़ै होती रही, तो वुज़ू टूट गया और अगर एक ही मतली बराबर नहीं रही, बल्कि पहली बार

---

1. ना—पाक

की मतली जाती रही थी और जी अच्छा हो गया था, फिर दोहरा कर मतली शुरू हुई और थोड़ी-सी कै हो गई फिर जब यह मतली जाती रही और तीसरी बार फिर मतली शुरू होकर कै हुई, तो वुज़ू नहीं टूटता।

मस्अला 17—लेटे-लेटे आंख लग गई या किसी चीज़ से टेक लगा कर बैठे-बैठे सो गई और ऐसी ग़फ़लत हो गई कि अगर वह टेक न होती, तो गिर पड़ती, तो वुज़ू जाता रहा और अगर नमाज़ में बैठे-बैठे या खड़े-खड़े सो जाये, तो वुज़ू नहीं गया और अगर सज्दे में सो जाये तो वुज़ू टूट जायेगा।

मस्अला 18—अगर नमाज़ से बाहर बैठे-बैठे सो जाये और अपना चूतड़ एड़ी से दबा ले और दीवार वग़ैरह किसी से टेक भी न लगाये, तो वुज़ू नहीं टूटता।

मस्अला 19—बैठे-बैठे नींद का एक ऐसा झोंका आया कि गिर पड़ी तो अगर गिर के फ़ौरन ही आंख खुल गयी, तो वुज़ू नहीं गया और जो गिरने के ज़रा बाद आंख खुली हो तो वुज़ू जाता रहा और अगर बैठी झूमती रही, गिरी नहीं तब भी वुज़ू नहीं गया।

मस्अला 20—अगर बे-होश हो गई और जुनून[1] से अक़्ल जाती रही, तो वुज़ू जाता रहा, चाहे बेहोशी और जुनून थोड़ी ही देर रहा हो और ऐसे ही अगर तम्बाकू वग़ैरह कोई नशे की चीज़ खा ली और इतना नशा हो गया कि अच्छी तरह नहीं चला जाता और क़दम इधर-उधर बहकता और डगमगाता है, तो भी वुज़ू जाता रहा।

मस्अला 21—अगर नमाज़ में इतनी ज़ोर से हंसी निकल गई कि उसने आप भी अपनी आवाज़ सुन ली और उसके पास वालियों ने भी, सब ने सुन ली, जैसे खिलखिला कर हंसने में सब पास वालियां सुन लेती हैं, इससे भी वुज़ू टूट गया और नमाज़ भी टूट गई और अगर ऐसा हुआ कि अपने को आवाज़ सुनाई दे, मगर सब पास वालियां न सुन सकीं, अगरचे बहुत ही पास वाली सुन ले, इससे नमाज़ टूट जायेगी, वुज़ू न टूटेगा। अगर हंसी में सिर्फ़ दांत खुल गये, आवाज़ बिल्कुल न निकली, तो न वुज़ू टूटा और न नमाज़ गई, हां छोटी लड़की, जो अभी जवान न हुई हो, ज़ोर से नमाज़ में हंसे या तिलावत के सज्दे में बड़ी औरत को हंसी आये, तो वुज़ू नहीं जाता, हां, वह सज्दा और नमाज़ जाती रहेगी, जिसमें हंसी आई।

---

1. पागलपन,

नोट—मस्अला न० 22, 23, 24, 25, पृ० न० 60 पर दर्ज किया गया है।

मस्अला 26—वुज़ू के बाद नाख़ून कटाये या घाव के ऊपर की मुरदार खाल नोच डाली, तो वुज़ू में कोई नुक़्सान नहीं पाया, न तो वुज़ू के दोहराने की ज़रूरत है और न ही उतनी जगह को फिर तर करने का हुक्म है।

मस्अला 27—वुज़ू के बाद किसी का सतर[1] देख लिया या अपना सतर खुल गया, या नंगी होकर नहाई या नंगे ही नंगे वुज़ू किया, तो उसका वुज़ू दुरूस्त है, फिर वुज़ू दोहराने की ज़रूरत नहीं है, हां बग़ैर मजबूरी के किसी का सतर देखना या अपना दिखलाना गुनाह की बात है।

मस्अला 28—जिस चीज़ के निकलने से वुज़ू टूट जाता है, वह चीज़ नजिस होती है और जिससे वुज़ू नहीं टूटता, वह नजिस भी नहीं, तो अगर ज़रा सा ख़ून निकला कि ज़ख़्म के मुंह से बहा नहीं, या ज़रा सी क़ै हुई, भर मुंह नहीं हुई और उसमें खाना या पानी या पित या जमा हुआ ख़ून निकला, तो यह ख़ून और क़ै नजिस नहीं है और अगर कपड़े या बदन में लग जाये, उसका धोना वाजिब नहीं और अगर मुंह भर क़ै हुई और ख़ून ज़ख़्म से बह गया तो वह नजिस है, उसका धोना वाजिब है और अगर इतनी क़ै करके कटोरे या लोटे को मुंह लगा करके कुल्ली के वास्ते पानी लिया तो वह बरतन ना पाक हो जायेगा, इसलिए चुल्लू से पानी लेना चाहिए।

मस्अला 29—छोटा लड़का, जो दूध डालता है, उसका भी यही हुक्म है कि अगर मुंह भर न हो, तो नजिस नहीं है, और जब मुंह भर हो, तो नजिस है। अगर उसके बे-धोये नमाज़ पढ़ेगी, तो नमाज़ न होगी।

मस्अला 30—अगर वुज़ू करना तो याद है और उसके बाद वुज़ू टूटना अच्छी तरह याद नहीं कि टूटा है या नहीं टूटा, तो ऐसा वुज़ू बाक़ी समझा जायेगा उसी से नमाज़ दुरूस्त है, लेकिन फिर वुज़ू कर लेना बेहतर है।

मस्अला 31—जिसको वुज़ू करने में शक हो कि फ़लां अंग धोया है या नहीं, तो वह अंग फिर धो लेना चाहिए और अगर वुज़ू कर चुकने के बाद शक हुआ, तो कुछ परवा न करे वुज़ू हो गया, हां अगर यक़ीन हो जाये कि फ़लानी बात रह गई है, तो उसको कर ले।

मस्अला 32—बे वुज़ू कुरआन मजीद का छुना दुरूस्त नहीं है, हां

---

1. छिपाने की जगहें,

अगर ऐसे कपड़े से छू ले, जो बदन से जुदा हो जो जायज़ है। दोपट्टा या कुरते के दामन से, जबकि उसको पहने-ओढ़े हुए हो, तो उससे छूना दुरूस्त नहीं, हां अगर उतरा हुआ हो, तो उससे छूना दुरूस्त है और ज़ुबानी पढ़ना दुरूस्त है और कलाम मजीद खुला हुआ रखा है, उसको देख-देख कर पढ़ा, लेकिन हाथ नहीं लगाया, वह भी दुरूस्त है। इसी तरह बे-वुज़ू ऐसे तावीज़ का और ऐसी तश्तरी का छूना भी दूरूस्त नहीं, जिसमें कुरआन करीम की आयत लिखी हो, खूब याद रखो।

गुस्ल[1] का बयान

मस्‌अला 1—गुस्ल करने वाली को चाहिए कि पहले गट्टों तक धोये, फिर इस्तिंजे की जगह धोये, हाथ और इस्तिंजे की जगह पर नजासत हो, तब भी और न हो, तब भी, हर हाल में इन दोनों का पहले धोना चाहिए, फिर जहां बदन पर नजासत लगी हो, पाक करे, फिर वुज़ू करे। अगर किसी चौकी या पत्थर पर गुस्ल करती हो, तो वुज़ू करते वक़्त पैर भी धो ले और ऐसी जगह है कि पैर भर जायेंगे और गुस्ल के बाद फिर धोने पड़ेंगे, तो सारा वुज़ू करे, मगर पैर न धोये फिर वुज़ू के बाद तीन बार अपने सर पर पानी डाले, फिर तीन बार दाहिने कंधे पर पानी डाले, इस तरह कि सारे जिस्म पर पानी बह जाये, फिर उस जगह से हटकर पाक जगह पर आ जाये और पैर धोये और अगर वुज़ू के वक़्त पैर धो लिए हों तो अब धोने की ज़रूरत नहीं।

मस्‌अला 2—पहले सारे जिस्म पर अच्छी तरह हाथ फेर ले, तब पानी बहाये, ताकि सब जगह अच्छी तरह पानी पहुंच जाये, सूखा न रहे।

मस्‌अला 3—गुस्ल का तरीक़ा जो हमने अभी बयान किया, सुन्नत के मुताबिक़ है, उसमें से कुछ चीज़ें फ़र्ज़ हैं कि उनके बग़ैर गुस्ल दुरूस्त नहीं होता, आदमी ना-पाक रहता है। और कुछ चीज़ें सुन्नत हैं, उनके करने से सवाब मिलता है और अगर न करे तो भी गुस्ल हो जाता है।

फ़र्ज़ तो सिर्फ़ तीन चीज़ें हैं—

1. इस तरह कुल्ली करना कि सारे मुंह में पानी पहुंच जाये,
2. नाक में पानी डालना, जहां तक नर्म है,

---

1. नहाना,

3. सारे बदन पर पानी पहुंचाना।

मस्अला 4—गुस्ल करते वक़्त क़िब्ले की तरफ़ मुंह न करे और पानी बहुत ज़्यादा न फेंके और न बहुत कम ले कि अच्छी तरह गुस्ल न कर सके और ऐसी जगह गुस्ल करे कि उसे कोई न देखे और गुस्ल करते वक़्त बातें न करे और गुस्ल के बाद किसी कपड़े से अपना बदन पोंछ डाले और बदन ढकने में बहुत जल्दी करे, यहां तक कि अगर वुज़ू करते वक़्त पैर न धोये हों तो गुस्ल की जगह से हट कर पहले अपना बदन ढके, फिर दोनो पैर धोये।

मस्अला 5—अगर तंहाई की जगह हो, जहां कोई न देख पाये, तो नंगे होकर नहाना भी दुरूस्त है, चाहे खड़ी होकर नहाये या बैठकर और चाहे गुस्लख़ाने की छत पिटी हो या न पिटी हो, लेकिन बैठकर नहाना बेहतर है, क्योंकि इसमें पर्दा ज़्यादा है और नाफ़ से लेकर घुटने के नीचे तक दूसरी औरत के सामने भी बदन खोलना गुनाह है। अक्सर औरतें दूसरी के सामने बिल्कुल नंगी होकर नहाती हैं, यह बड़ी बे–ग़ैरती की बात है।

मस्अला 6—जब सारे बदन पर पानी ख़ूब पड़ जाये और कुल्ली करे और नाक में पानी डाल ले, तो गुस्ल हो जायेगा, चाहे गुस्ल करने का इरादा हो, चाहे न हो, तो अगर पानी बरसते में ठंडी होने की ग़रज़ में खड़ी हो गई या हौज़ वग़ैरह में गिर पड़ी और सब बदन भीग गया और कुल्ली भी कर ली और नाक में पानी डाल लिया, तो गुस्ल हो गया। इसी तरह गुस्ल करते वक़्त कलमा पढ़ना या पढ़कर पानी दम करना ज़रूरी नहीं, चाहे कलमा पढ़े या न पढ़े, हर हाल में आदमी पाक हो जाता है, बल्कि नहाते वक़्त कलमा या और कोई दुआ न पढ़ना बेहतर है, उस वक़्त कुछ न पढ़े।

मस्अला 7—अगर बदन भर में बाल बराबर भी कोई जगह सूखी रह जाये, तो गुस्ल न होगा। इसी तरह अगर गुस्ल करते वक़्त कुल्ली करना भूल गई या नाक में पानी नहीं डाला, तो भी गुस्ल नहीं हुआ।

मस्अला 8—अगर गुस्ल के बाद याद आये कि फ़्लानी जगह सूखी रह गई थी, तो फिर से नहाना वाजिब नहीं, बल्कि जहां सूखा रह गया था उसी को धो ले, लेकिन सिर्फ़ हाथ फेर लेना काफ़ी नहीं है, बल्कि थोड़ा पानी उस जगह बहा लेना चाहिए और अगर कुल्ली करना भूल गई हो तो अब कुल्ली करे, अगर नाक में पानी न डाला हो, तो अब डाल ले। मतलब यह कि जो चीज़ रह गई हो, अब उसको कर ले, नये सिरे से गुस्ल

करने की ज़रूरत नहीं।

मस्अला 9—अगर किसी बीमारी की वजह से सर पर पानी डालना नुक़्सान करे तो सर छोड़कर और सारा बदन धो ले, तब भी गुस्ल हो गया, लेकिन जब अच्छी हो जाये, तो अब सर धो डाले, फिर से नहाने की ज़रूरत नहीं है।

नोट—मस्अला 10 पृ० न० 61 पर दर्ज किया गया है

मस्अला 11—अगर सर के बाल गुंधे हुए न हों, तो सब बाल भिगोना और सारी जड़ों में पानी पहुंचाना फ़र्ज़ है। एक बाल भी सूखा रह गया, या एक बाल की जड़ में पानी नहीं पहुंचा, तो गुस्ल नहीं होगा और बाल गुंधे हुए हों, तो बालों का भिगोना माफ़ है, हां, सब जड़ों में पानी पहुंचाना फ़र्ज़ है, एक जड़ भी सूखी न रहने पाये और अगर बे–खोले सब जड़ों में पानी न पहुंच सके, तो खोल डाले और बालों को भी भिगोदे।

मस्अला 12—नथ और बालियों और अंगूठी–छल्लों को ख़ूब हिला ले कि पानी सूराख़ों में पहुंच जाये और अगर बालियां न पहने हों, तब भी इरादा करके सूराख़ों में पानी डाल ले, ऐसा न हो कि पानी न पहुंचे और गुस्ल सही न हो, हां, अगर अंगूठी–छल्ले ढीले हों कि बे–हिलाए भी पानी पहुंच जाए, तो हिलाना वाजिब नहीं, लेकिन हिला लेना अब भी मुस्तहब है।

मस्अला 13—अगर नाख़ून में आटा लगकर सूख गया और उसके नीचे पानी नहीं पहुंचा तो गुस्ल नहीं हुआ, जब याद आये और आटा देखे, तो छुड़ाकर पानी डाल ले, अगर पानी पहुंचने से पहले कोई नमाज़ पढ़ ली हो, तो उसको लौटा दे।

मस्अला 14—अगर हाथ पांव फट गये हों और उसमें मोम–रोगन या कोई दवा भरी हो तो उसके ऊपर से पानी बहा लेना दुरूस्त है।

मस्अला 15—कान और नाक में भी ख़्याल करके पानी पहुंचाना चाहिए, पानी न पहुंचे तो गुस्ल न होगा।

मस्अला 16—नहाते वक़्त कुल्ली नहीं की, लेकिन मुंह भर के पानी पी लिया कि सारे मुंह में पहुंच गया, तो भी गुस्ल हो गया, क्योंकि मतलब तो सारे मुंह में पानी पहुंच जाने से है, कुल्ली करे या न करे, हां, अगर ऐसी तरह पानी पिये कि सारे मुंह भर में पानी न पहुंचे, तो यह पीना काफ़ी नहीं है, कुल्ली कर लेना चाहिए।

मस्अला 17—अगर बालों में या हाथ–पैरों में तेल लगा हुआ है कि बदन पर पानी अच्छी तरह ठहरता नहीं है, बल्कि पड़ते ही ढलक जाता है,

तो इसका कुछ हरज नहीं है, जब सारे बदन और सारे सर पर पानी डाल लिया, गुस्ल हो गया।

मस्अला 18—अगर दांतों के बीच में डली का टुकड़ा फंस गया, तो उसको खिलाल से निकाल डाले, अगर इसकी वजह से दांतों के बीच में पानी न पहुंचेगा, तो गुस्ल न होगा।

मस्अला 19—माथे पर अफ़शां चुनी हो या बालों में इतना गोंद लगा है कि बाल अच्छी तरह न भीगेंगे, तो गोंद ख़ूब छुड़ा डाले और अफ़शां धो डाले, अगर गोंद के नीचे पानी न पहुंचेगा, ऊपर ही ऊपर से बह जायेगा, तो गुस्ल न होगा।

मस्अला 20—अगर मिस्सी की धड़ी जमा ली है, तो उसको छुड़ा कर कुल्ली करे नहीं तो गुस्ल न होगा।

मस्अला 21—किसी की आंखें दुखती हैं, इसलिए उसकी आंखों से कीचड़ बहुत निकला और ऐसा सूख गया कि अगर उसको न छुड़ायेगी तो उसके नीचे आंख के कोये पर पानी न पहुंचेगा, तो उसका छुड़ा डालना वाजिब है, उसके छुड़ाये बग़ैर न वुज़ू दुरुस्त है, ना गुस्ल।

किस पानी से वुज़ू करना और नहाना दुरुस्त है और किस पानी से नहाना दुरुस्त नहीं

मस्अला 1—आसमान से बरसे हुए पानी और नदी–नाले, चश्मे और कुंए–तालाब और दरियाओं के पानी से वुज़ू और गुस्ल करना दुरुस्त है, चाहे मीठा पानी हो या खारी।

मस्अला 2—किसी फल या पेड़ या पत्तों से निचोड़े हुए अर्क़ से वुज़ू करना दुरुस्त नहीं। इसी तरह जो पानी तरबूज़ से निकलता है, उससे और गन्ने वग़ैरह के रस से वुज़ू और गुस्ल दुरुस्त नहीं है।

मस्अला 3—जिस पानी में कोई और चीज़ मिल गई और ऐसा हो गया कि अब बोल–चाल में उसको पानी नहीं कहते, बल्कि उसका कुछ और नाम हो गया, तो उससे वुज़ू और गुस्ल जायज़ नहीं, जैसे शर्बत, शीरा और शोरबा और सिरका और गुलाब और अर्क़ गावज़ुबां वग़ैरह कि इनसे वुज़ू दुरुस्त नहीं है।

मस्अला 4—जिस पानी में कोई पाक चीज़ पड़ गई और पानी के

रंग या मज़े में कोई फ़र्क़ आ गया, लेकिन वह चीज़ पानी में पकाई नहीं गई, न पानी के पतले होने में कोई फ़र्क़ आया, जैसे कि बहते हुए पानी में कुछ रेत मिली हुई होती है या पानी में ज़ाफ़रान मिल गया हो और उसका बहुत हल्का रंग आ गया हो या साबुन पड़ गया या इसी तरह की कोई चीज़ पड़ गई, तो इन सब सूरतों में वुज़ू और गुस्ल दुरुस्त है।

मस्अला 5—अगर कोई चीज़ पानी में डालकर पकाई गई, उससे रंग–मज़ा वग़ैरह बदला, तो इस पानी से वुज़ू दुरुस्त नहीं, हां अगर ऐसी चीज़ पकाई गई, जिससे मैल–कुचैल ख़ूब साफ़ हो जाता है, और उसके पकाने से पानी गाढ़ा न हुआ, तो उससे वुज़ू दुरुस्त है, जैसे कि मुर्दा नहलाने के लिए बेरी की पत्तियां पकाते हैं, तो इसमें कुछ हरज नहीं, हां, अगर इतनी ज़्यादा डाल दें कि पानी गाढ़ा हो गया, तो उससे वुज़ू और गुस्ल दुरुस्त नहीं।

मस्अला 6—कपड़ा रंगने के लिए ज़ाफ़रान घोला या पुड़िया घोली, तो उससे वुज़ू दुरुस्त नहीं।

मस्अला 7—अगर पानी में दूध मिल गया, तो अगर दूध का रंग अच्छी तरह से पानी में आ गया, तो वुज़ू दुरुस्त नहीं और अगर दूध बहुत कम था कि रंग नहीं आया, तो वुज़ू दुरुस्त है।

मस्अला 8—जंगल में कहीं थोड़ा पानी मिला, तो जब तक उसकी नजासत का यक़ीन न हो जाये, उस वक़्त तक उससे वुज़ू करे, सिर्फ़ इस ख़्याल (वहम) से न छोड़ दे कि शायद नजिस हो। अगर इसके होते हुए तयम्मुम[1] करेगी, तो तयम्मुम न होगा।

मस्अला 9—किसी कुएं वग़ैरह में पेड़ के पत्ते गिर पड़े और पानी में बदबू आने लगी और रंग और मज़ा भी बदल गया, तो भी उससे वुज़ू दुरुस्त है, जब तक कि पानी इस तरह पतला बाक़ी रहे।

मस्अला 10—जिस पानी में नजासत पड़ जाये, उससे वुज़ू–गुस्ल कुछ भी दुरुस्त नहीं, चाहे वह नजासत थोड़ी हो या बहुत हो। हां अगर बहता हुआ पानी हो, तो वह नजासत के पड़ने से ना–पाक नहीं होता, जब तक उसके रंग या मज़े या बू में फ़र्क़ न आये और जब नजासत की वजह से रंग या मज़ा बदल गया या बू आने लगी, तो बहता हुआ पानी भी नजिस हो जायेगा,

---

1. पानी न मिलने पर, किसी सूखी, पाक, धूलदार जगह पर हाथ मारकर, हाथ और मुंह मलने को तयम्मुम कहते हैं।

उससे वुज़ू दुरूस्त नहीं। जो पानी घास–तिनके–पत्थर को बहा ले जाये, वह बहता पानी है, चाहे कितना ही धीरे–धीरे बहता हो।

मस्अला 11—बड़ा भारी हौज़, जो दस हाथ लम्बा, दस हाथ चौड़ा और इतना गहरा हो कि अगर चुल्लू से पानी उठायें तो ज़मीन न खुले, यह भी बहते हुए पानी की तरह है, ऐसे हौज़ को 'देह दर देह' कहते हैं। अगर इसमें ऐसी नजासत पड़ जाये, जो पड़ जाने के बाद दिखलाई नहीं देती, जैसे पेशाब, ख़ून, शराब वग़ैरह, तो चारों तरफ़ वुज़ू करना दुरूस्त है। जिधर चाहे वुज़ू करे। अगर ऐसी नजासत पड़ जाये जो दिखाई देती है जैसे मुर्दा कुत्ता, तो जिधर पड़ा हो, उस तरफ़ वुज़ू न करे, उसके सिवा और जिस तरफ़ चाहे करे। हां अगर इतने बड़े हौज़ में इतनी नजासत पड़ जाये कि रंग या मज़ा बदल जाये या बदबू आने लगे, तो नजिस हो जायेगा।

मस्अला 12—अगर बीस हाथ लम्बा या पांच हाथ चौड़ा या पचीस हाथ लम्बा और चार हाथ चौड़ा हो, वह हौज़ भी देह दर देह के जैसा है।

मस्अला 13—छत पर नजासत पड़ी है और पानी बरसा और परनाला चला, तो अगर आधी या आधी से ज़्यादा छत नापाक है तो वह पानी नजिस है और अगर छत आधी से कम नापाक है, तो वह पानी पाक है और अगर नजासत परनाले के पास ही हो और इतनी हो कि सब पानी उससे मिलकर आता हो वह नजिस है।

मस्अला 14—अगर पानी धीरे–धीरे बहता हो, तो बहुत जल्दी–जल्दी वुज़ू न करे कि जो धोवन गिरता है, वही हाथ में आ जाये।

मस्अला 15—देह दर देह हौज़ में, जहां धोवन गिरा है, अगर वहीं से फिर पानी उठा ले तो भी जायज़ है।

मस्अला 16—अगर कोई काफ़िर या लड़का, बच्चा अपना हाथ पानी में डाल दे, तो पानी नजिस नहीं होता, हां, अगर मालूम हो जाये कि उसके हाथ में नजासत लगी थी, तो नापाक हो जायेगा, लेकिन छोटे बच्चे का कुछ एतबार नहीं। इसलिए जब तक कोई और पानी मिले, उसके हाथ डाले हुए पानी से वुज़ू न करना बेहतर है।

मस्अला 17—जिस पानी में ऐसी जानदार चीज़ मर जाये, जिसके बहता हुआ ख़ून नहीं होता, या बाहर मर कर पानी में गिर पड़े, तो पानी नजिस नहीं होता, जैसे मच्छर, मक्खी, भिड़, ततैया, बिच्छू, शहद की मक्खी या इसी क़िस्म की और जो कोई चीज़ हो।

मस्अला 18—जिस चीज़ का जन्म पानी का हो और हर दम पानी ही में रहा करती हो, उसके मर जाने से पानी ख़राब नहीं होता, पाक रहता है जैसे मछली, मेंढक, कछुवा, केकड़ा वग़ैरह। और अगर पानी के सिवा और किसी चीज़ में मर जाये जैसे, सिरका, शीरा, दूध वग़ैरह, तो वह भी नापाक नहीं होता और खुश्की का मेंढक और पानी का मेंढक, दोनों का एक हुक्म है। यानी न इसके मरने से, पानी नजिस होता है, न उसके मरने से, लेकिन अगर खुश्की के किसी मेंढक में ख़ून होता हो, तो उसके मारने से पानी वग़ैरह, जो चीज़ हो नापाक हो जायेगी।

फ़ायदा—पानी के मेंढक की पहचान यह है कि उसकी उंगलियों के बीच में झल्ली लगी होती है और खुश्की के मेंढक की उंगलियां अलग–अलग होती हैं।

मस्अला 19—जो चीज़ पानी में रहती हो, लेकिन उसका जन्म पानी का न हो, उसके मर जाने से पानी ख़राब व नजिस हो जाता है। जैसे, बत्तख और मुर्ग़ाबी। इसी तरह मेंढक मर कर पानी में गिर पड़े, तो भी नजिस हो जाता है।

मस्अला 20—मेंढक, कछुवा वग़ैरह अगर पानी में मर कर बिल्कुल गल जाये और टुकड़े–टुकड़े होकर पानी में मिल जाये, तो भी पानी पाक है, लेकिन उसका पीना और उससे खाना–पकाना दुरूस्त नहीं, हां, वुज़ू, गुस्ल उससे कर सकते हैं।

मस्अला 21—धूप के जले हुए पानी से सफ़ेद दाग़ हो जाने का डर है, इसलिए उससे वुज़ू और गुस्ल न करना चाहिए।

मस्अला 22—मुर्दार की खाल को जब धूप में सुखा डालें या कुछ दवा वग़ैरह लगाकर दुरूस्त कर लें कि पानी भर जाये और रखने से ख़राब न हो, तो पाक हो जाती है, उस पर नमाज़ पढ़ना दुरूस्त है, और मुश्क वग़ैरह बनाकर उसमें पानी रखना भी दुरूस्त है, लेकिन सूअर की खाल पाक नहीं होती और सब खालें पाक हो जाती हैं, मगर आदमी की खाल से कोई काम लेना और बरतना बहुत गुनाह है।

मस्अला 23—कुत्ता, बंदर, बिल्ली, शेर वग़ैरह, जिनकी खाल बनाने से पाक हो जाती है, बिस्मिल्लाह कह कर ज़िब्ह करने से भी खाल पाक हो जाती है, चाहे बनाई हो या बे–बनाई। हां, ज़िब्ह करने से उनका गोश्त पाक नहीं होता और उनका खाना भी दुरूस्त नहीं।

मस्अला 24—मुर्दार के बाल और सींग और हड्डी और दांत, ये सब

चीज़ें पाक हैं। अगर पानी में पड़ जायें, तो नजिस न होगा, हां, मगर हड्डी और दांत वग़ैरह पर उस मुर्दार की कुछ चिकनाई वग़ैरह लगी हो, तो वह नजिस है और पानी भी नजिस हो जायेगा।

मस्अला 25—आदमी की भी हड्डी और बाल पाक हैं, लेकिन उनको बरतना और काम में लाना जाएज़ नहीं, बल्कि इज़्ज़त से किसी जगह गाड़ देना चाहिए।

कुएं का बयान

मस्अला 1—जब कुएं में कोई नजासत गिर पड़े, तो कुआं नापाक हो जाता है और पानी खींच डालने से पाक हो जाता है, चाहे थोड़ी नजासत गिरे या बहुत, सारा पानी निकालना चाहिए। जब सारा पानी निकल जायेगा, तो पाक हो जायेगा। कुएं के अंदर के कंकर, दीवार वग़ैरह के धोने की ज़रूरत नहीं, वे सब आप ही आप पाक हो जायेंगे। इसी तरह रस्सी-डोल, जिससे पानी निकाला है, कुएं के पाक होने से आप ही आप पाक हो जायेगा, इन दोनों के भी धोने की ज़रूरत नहीं।

फ़ायदा——सब पानी के निकालने का यह मतलब है कि इतना निकालें कि पानी टूट जाये और आधा डोल भी न भरे।

मस्अला 2—कुएं में कबूतर या गौरय्या यानी चिड़िया की बीट गिर गयी तो नजिस नहीं हुआ। और मुर्ग़ी और बतख़ की गंदगी से नजिस हो जाता है और सारा पानी निकालना वाजिब है।

मस्अला 3—कुत्ता, बिल्ली, गाय, बकरी वग़ैरह पेशाब कर दे या कोई और नजासत गिरे तो सब पानी निकाला जाये।

मस्अला 4—अगर आदमी या कुत्ता या बकरी या इसी के बराबर कोई और जानवर गिरकर मर जाये तो सारा पानी निकाला जाये।

मस्अला 5—अगर कोई जानदार चीज़ कुएं में मर जाये और फूल जाये या फट जाये, तब भी सब पानी निकाला जाये, चाहे छोटा जानवर हो, चाहे बड़ा। तो अगर चूहा या गौरय्या मरकर फूल जाये या फट जाये, तो सब पानी निकालना चाहिए।

मस्अला 6—अगर चूहा या चिड़िया या इसी के बराबर कोई और चीज़ गिरकर मर गई, लेकिन फूली-फटी नहीं, तो बीस डोल निकालना वाजिब है और तीस निकाल डालें तो बेहतर है। लेकिन पहले चूहा निकाला

लें, तब पानी निकालना शुरू करें, अगर चूहा न निकला, तो इस पानी निकालने का कुछ एतबार नहीं, चूहा निकालने के बाद फिर उतना ही पानी निकालना पड़ेगा।

मस्अला 7—बड़ी छिपकली, जिसमें बहता हुआ ख़ून होता है, उसका हुक्म भी यही है कि अगर मर जाये और फूले–फटे नहीं, तो बीस डोल निकालना चाहिए और तीस डोल निकालना बेहतर है। और जिसमें बहता हुआ ख़ून न होता हो, उसके मरने से पानी नापाक नहीं होता।

मस्अला 8—अगर कबूतर या मुर्ग़ी या बिल्ली या इसी के बराबर कोई चीज़ गिर कर मर जाये और फूले नहीं, तो चालीस डोल निकालना वाजिब है और साठ डोल निकाल देना बेहतर है।

मस्अला 9—जिस कुएं पर जो डोल पड़ा रहता है, उसी के हिसाब से निकालना चाहिए और अगर इतने बड़े डोल से निकाला, जिसमें पानी बहुत समाता है, तो उसका हिसाब लगा लेना चाहिए। अगर उसमें दो डोल समाता है, तो दो डोल समझें और अगर चार डोल समाता हो, तो चार डोल समझना चाहिए। मतलब यह है कि जितने डोल पानी उसमें आता हो, उसी के हिसाब से खींचा जायेगा।

मस्अला 10—अगर कुएं में इतना बड़ा सोत है कि सब पानी नहीं निकल सकता, जैसे–जैसे पानी निकालते हैं, वैसे–वैसे उसमें से और निकल आता है, तो जितना पानी उसमें उस वक़्त मौजूद है, अंदाज़ा करके उसी क़दर पानी निकाल डालें।

फ़ायदा—पानी का अंदाज़ा करने की कई शक्लें हैं :—

एक यह है कि मिसाल के तौर पर पांच हाथ पानी है, तो एकदम लगातार सौ डोल पानी निकाल कर देखो कि कितना पानी कम हुआ। अगर एक हाथ कम हुआ हो तो बस उसी से हिसाब लगा लो कि सौ डोल में एक हाथ पानी टूटा तो पांच हाथ पानी पांच सौ में निकल जायेगा।

दूसरे यह कि जिन लोगों को पानी की पहचान हो और उसका अंदाज़ा आता हो, ऐसे दो दीनदार मुसलमानों से अंदाज़ा करा लो, जितना वे कहें निकलवा दो और जहां ये दोनों बातें मुश्किल मालूम हों, तीन सौ डोल निकलवा लें।

मस्अला 11—कुएं में मरा हुआ चूहा या और कोई जानवर निकला और यह मालूम नहीं कि कब से गिरा है और अभी फूला–फटा भी नहीं है, तो जिन लोगों ने उस कुएं से वुज़ू किया है, एक दिन–रात की नमाज़ें दोहरायें और उस पानी से जो कपड़े धोये हैं, फिर उनको धोना चाहिए और

अगर फूल गया है या फट गया है तो, तीन रात की नमाज़ें दोहराना चाहिए। हां, जिन लोगों ने उस पानी से वुज़ू नहीं किया है, वे न दोहराएं, यह बात तो एहतियात की है। वरना कुछ आलिमों ने यह कहा है कि जिस वक़्त कुएं का नापाक होना मालूम हुआ है, उसी वक़्त से नापाक समझेंगे, उससे पहले की नमाज़-वुज़ू सब दुरूस्त है, अगर कोई इस पर अमल करे, तब भी दुरूस्त है।

मस्अला 12—जिसको नहाने की ज़रूरत है, वह डोल ढूंढने के लिए कुएं में उतरा और उसके बदन और कपड़े पर नजासत की गंदगी नहीं है, तो कुआं नापाक न होगा। ऐसे ही अगर काफ़िर उतरे और उसके कपड़े और बदन पर नजासत न हो, तब भी कुआं पाक है, हां अगर नजासत लगी हो, तो नापाक हो जायेगा, और सब पानी निकालना पड़ेगा और अगर शक हो कि मालूम नहीं कि कपड़ा नापाक है या पाक तब भी कुआं पाक समझा जायेगा, लेकिन अगर दिल की तसल्ली के लिए बीस या तीस डोल निकलवा दें, तब भी कुछ हरज नहीं।

मस्अला 13—कुएं में बकरी या चूहा गिर गया और ज़िंदा निकल आया तो पानी पाक है, कुछ न निकाला जाये।

मस्अला 14—चूहे को बिल्ली ने पकड़ा और उसके दांत लगने से ज़ख़्मी हो गया, फिर उससे छूटकर उसी तरह ख़ून से भरा हुआ कुएं में गिर पड़ा तो सारा पानी निकाला जाये।

मस्अला 15—चूहा नाली से निकल कर भागा, और उसके बदन में नजासत भर गई, फिर कुंए में गिर पड़ा, तो सारा पानी निकाला जाये, चूहा कुंए में मर जाये या ज़िंदा निकले।

मस्अला 16—चूहे की दूम कट कर गिर पड़े, तो सारा पानी निकाला जाये। इसी तरह वह छिपकली, जिसमें बहता ख़ून होता हो, उसकी दुम गिरने से भी सब पानी निकाला जायेगा।

मस्अला 17—जिस चीज़ के गिरने से कुआं नापाक हुआ है, अगर वह चीज़ कोशिश के बावजूद न निकल सके, तो देखना चाहिए कि वह चीज़ कैसी है। अगर वह चीज़ ऐसी है कि खुद तो पाक होती है, लेकिन नापाकी लगने से नापाक हो गई है, जैसे नापाक कपड़ा, नापाक गेंद, नापाक जूता, तब उसका निकालना माफ़ है, वैसे ही पानी निकाल डालें। अगर वह चीज़ ऐसी है कि खुद नापाक है, जैसे मुर्दा जानवर, चूहा वग़ैरह, तो जब तक यह यक़ीन न हो जाये कि यह गल-सड़कर मिट्टी हो गया है, उस वक़्त तक कुआं पाक नहीं हो सकता और जब यह यक़ीन हो जाये, उस वक़्त सारा

पानी निकाल दें, कुआं पाक हो जायेगा।

मस्अला 18—जितना पानी कुएं में से निकालना ज़रूरी हो, चाहे एक दम निकालें, चाहे थोड़ा–थोड़ा कई बार में निकालें, हर तरह पाक हो जायेगा।

जानवरों के जूठे का बयान

मस्अला 1—आदमी का जूठा पाक है, चाहे बद–दीन हो, या हैज़[1] या निफ़ास[2] में हो, हर हाल में पाक है इसी तरह पसीना भी इन सब का पाक है, हां, अगर उसके हाथ या मुंह में कोई नापाकी लगी हो, तो उससे वह जूठा नापाक हो जायेगा।

मस्अला 2—कुत्ते का जूठा नजिस है। अगर किसी बरतन में मुंह डाल दे, तो तीन बार धोने से पाक हो जायेगा, चाहे मिट्टी का बरतन हो, चाहे तांबे वग़ैरह का, धोने से सब पाक हो जाता है, लेकिन बेहतर यह है कि सात बार धोये और एक बार मिट्टी लगा कर मांझ भी डाले कि ख़ून साफ़ हो जाये।

मस्अला 3—सूअर को जूठा भी नजिस है। इसी तरह शेर, भेड़िया, बंदर, गीदड़ वग़ैरह जितने चीर फाड़कर खाने वाले जानवर हैं, सबका जूठा नजिस है।

मस्अला 4—बिल्ली का जूठा पाक तो हैं, लेकिन मकरूह[3] है। दूसरा पानी होते हुए उससे वुज़ू न करे, हां, अगर कोई और पानी न मिले, तो उससे वुज़ू कर ले।

मस्अला 5—दूध, सालन वग़ैरह में बिल्ली ने मुंह डाल दिया, तो अगर अल्लाह ने सब कुछ ज़्यादा दिया हो, तो उसे न खाये और अगर ग़रीब आदमी हो, तो खा लें, इसमें कुछ हरज नहीं और गुनाह नहीं है, बल्कि ऐसे आदमी के लिए मकरूह भी नहीं है।

मस्अला 6—अगर बिल्ली ने चूहा खाया, और फ़ौरन आकर बरतन में मुंह डाल दिया, तो वह नजिस हो जायेगा और जो थोड़ी देर ठहर के

---

1. माहवारी,
2. बच्चा पैदा होने के बाद का ख़ून,
3. नापसंदीदा,

मुंह डाले कि अपना मुंह जुबान से चाट चुकी हो, तो नजिस न होगा, बल्कि मकरूह ही रहेगा।

मस्अला 7—खुली हुई मुर्ग़िया, जो इधर-उधर गंदी पलीद चीज़ें खाती फिरती हैं, उनका जूठा मकरूह है और जो मुर्ग़ी बंद रहती है, उसका जूठा मकरूह नहीं, बल्कि पाक है।

मस्अला 8—शिकार करने वाले परिंदे जैसे शिकरा, बाज़ वग़ैरह, उनका जूठा भी मकरूह है, लेकिन जो पालतू हो और मुरदार न खाने पाये और न उसकी चोंच में किसी नजासत के लगे होने का शुबह हो, उसका जूठा पाक है।

मस्अला 9—हलाल जानवर, जैसे मेंढा, बकरी, भेड़, गाय, भैंस, हिरनी वग़ैरह और हलाल चिड़िया जैसे मैना, तोता, फ़ाख़्ता, गौरय्या, इन सबका जूठा पाक है।

मस्अला 10—जो चीज़ें घरों में रहा करती हैं जैसे सांप-बिच्छू, चूहा, छिपकली, वग़ैरह, उनका जूठा मकरूह है।

मस्अला 11—अगर चूहा रोटी काट कर खा जाये, तो बेहतर यह है कि उस जगह से थोड़ी सी तोड़ डाले, तब खाये।

मस्अला 12—गधे और ख़च्चर का जूठा पाक है, लेकिन वुज़ू होने में शक है, तो अगर कहीं सिर्फ़ गधे-ख़च्चर का जूठा पानी मिले और उसके सिवा और पानी न मिले, तो वुज़ू भी करे और तयम्मुम भी करे और चाहे पहले वुज़ू कर ले और चाहे पहले तयम्मुम कर ले, दोनों अख़्तियार है।

मस्अला 13—जिन जानवरों का जूठा नजिस है, उनका पसीना पाक है और जिनका जूठा पाक है, उनका पसीना भी पाक है और जिनका जूठा मकरूह है, उनका पसीना भी मकरूह है और गधे और ख़च्चर का पसीना पाक है। कपड़े और बदन पर लग जाये, जो धोना वाजिब नहीं, लेकिन धो डालना बेहतर है।

मस्अला 14—किसी ने बिल्ली पाली और वह पास आकर बैठी और हाथ वग़ैरह चाटती है, तो जहां चाटे या उसका लुआब लगे, उसको धो डालना चाहिए। अगर न धोया, योंही रहने दिया, तो मकरूह और बुरा किया।

मस्अला 15—ग़ैर-मर्द का जूठा खाना और पानी औरत के लिए मकरूह है, जब कि वह जानती हो कि यह उसका जूठा है और अगर मालूम न हो, तो मकरूह नहीं।

तयम्मुम का बयान

मस्अला 1—अगर कोई जंगल में है और बिल्कुल मालूम नहीं कि पानी कहां है, न वहां कोई आदमी है, जिससे पूछे, तो ऐसे वक़्त तयम्मुम कर ले और अगर कोई आदमी मिल गया और उसने एक मील के शरअी के अंदर–अंदर पानी का पता बाताया और उसकी बात भी सच्ची जान पड़ी या आदमी तो नहीं मिला, लेकिन किसी निशानी से खुद उसका जी कहता है कि यहां एक मील शरअी के अंदर–अंदर कहीं पानी ज़रूर है तो पानी का इतना खोजना कि उसको और उसके साथियों को किसी क़िस्म की तक्लीफ़ और हरज न हो, ज़रूरी है, बे–ढूंढे तयम्मुम करना दुरूस्त नहीं है। और अगर ख़ूब यक़ीन है कि पानी एक मील शरअी के अंदर है तो पानी लाना वाजिब है।

फ़ायदा—मील शरअी मील अंग्रेज़ी से कुछ ज़्यादा होता है यानी अंग्रेज़ी एक मील पूरा और उसका आठवां हिस्सा, ये सब मिलकर एक मील शरअी होता है।

मस्अला 2—अगर पानी का पता चल गया, लेकिन पानी एक मील से दूर है, तो इतना दूर जाकर पानी लाना वाजिब नहीं है, बल्कि तयम्मुम कर लेना दुरूस्त है।

मस्अला 3—अगर कोई आबादी से एक मील के फ़ासले पर हो और एक मील से क़रीब कहीं पानी न मिले, तो भी तयम्मुम कर लेना दुरूस्त है, चाहे मुसाफ़िर हो या मुसाफ़िर न हो, थोड़ी दूर जाने के लिए निकली हो।

मस्अला 4—अगर राह में कुआं तो मिल गया, मगर लोटा–डोरा पास नहीं है, इसलिए कुएं से पानी नहीं निकाल सकती, न किसी और से मांगे मिल सकता है, तो भी तयम्मुम दुरूस्त है।

मस्अला 5—अगर कहीं पानी मिल गया, लेकिन बहुत थोड़ा है, तो अगर इतना हो कि एक–एक बार मुंह और दोनों हाथ–पैर धो सके तो तयम्मुम करना दुरूस्त नहीं है, बल्कि एक–एक बार इन चीज़ों को धोये और सर का मसह कर ले और कुल्ली वग़ैरह करना यानी वुज़ू की सुन्नतें छोड़ दे और अगर इतना भी न हो तो तयम्मुम कर ले।

मस्अला 6—अगर बीमारी की वजह से पानी नुक़्सान करता हो कि अगर वुज़ू या गुस्ल करेगी, तो बीमारी बढ़ जायेगी या देर में अच्छी होगी,

तब भी तयम्मुम दुरूस्त है, लेकिन अगर ठंडा पानी नुक़सान करता हो और गर्म पानी नुक़सान न करे तो गर्म पानी से गुस्ल करना वाजिब है, हां, अगर ऐसी जगह है कि गर्म पानी नहीं मिल सकता तो तयम्मुम करना दुरूस्त है।

मस्अला 7—अगर पानी क़रीब है, यानी यक़ीनी तौर पर एक मील से कम दूर है, तो तयम्मुम करना दुरूस्त नहीं, जाकर पानी और वुज़ू करना वाजिब है। मर्दों से शर्म की वजह से या पर्दे की वजह से पानी लेने को न जाना और तयम्मुम कर लेना दुरूस्त नहीं। ऐसा पर्दा जिसमें शरीअत का कोई हुक्म छूट जाये, नाजायज़ और हराम है। ओढ़ कर या सारे बदन से चादर लपेट कर जाना वाजिब है, हां, लोगों के सामने बैठकर वुज़ू न करे और उनके सामने मुंह हाथ न खोले।

मस्अला 8—जब तक पानी से वुज़ू न कर सके, बराबर तयम्मुम करती रहे, चाहे जितने दिन गुज़र जायें, कुछ ख़्याल न करे, जितनी पाकी वुज़ू और गुस्ल करने से होती है, उतनी ही पाकी तयम्मुम से भी हो जाती है। यह न समझे कि तयम्मुम से अच्छी तरह पाक नहीं होती।

मस्अला 9—अगर पानी मोल बिकता है तो अगर उसके दाम न हों, तो तयम्मुम कर लेना दुरूस्त है और अगर दाम पास हों और रास्ते में किराए–भाड़े की जितनी ज़रूरत पड़ेगी, उससे ज़्यादा भी है, तो ख़रीदना वाजिब है, हां, अगर इतना मंहगा बेचे कि इतने दाम कोई लगा नहीं सकता, तो ख़रीदना वाजिब नहीं, तयम्मुम कर लेना दुरूस्त है और अगर किराए वग़ैरह यानी रास्ते के ख़र्च से ज़्यादा दाम नहीं हैं, तो भी ख़रीदना वाजिब नहीं, तयम्मुम कर लेना दुरूस्त है।

मस्अला 10—अगर कहीं इतनी सर्दी पड़ती हो और बर्फ़ कटती हो कि नहाने से मर जाने या बीमार हो जाने का डर हो और रज़ाई लिहाफ़ वग़ैरह कोई ऐसी चीज़ भी नहीं कि नहाकर उसमें गर्म हो जाये, तो ऐसी मजबूरी के वक़्त तयम्मुम कर लेना दुरूस्त है।

मस्अला 11—अगर किसी के आधे से ज़्यादा बदन पर ज़ख़्म हो या चेचक निकली हो, तो नहाना वाजिब नहीं, बल्कि तयम्मुम कर ले।

मस्अला 12—अगर किसी मैदान में तयम्मुम करके नमाज़ पढ़ ली और पानी वहां से क़रीब ही था, लेकिन उसको ख़बर न थी, तो तयम्मुम और नमाज़ दोनों दुरूस्त हैं, जब मालूम हो, दोहराना ज़रूरी नहीं।

मस्अला 13—अगर सफ़र में किसी और के पास पानी हो, तो अपने जी को देखे, अगर अंदर से दिल कहता हो कि अगर मैं मांगूंगी तो

पानी मिल जायेगा, तो बे–मांगे हुए तयम्मुम करना दुरूस्त नहीं और अगर अंदर से दिल यह कहता हो कि मांगे से वह आदमी पानी नहीं देगा तो बे–मांगे भी तयम्मुम करके नमाज़ पढ़ लेना दुरूस्त है, लेकिन अगर नमाज़ के बाद उससे पानी मांगा और उसने दे दिया तो नमाज़ को दोहराना पड़ेगा।

मस्अला 14—अगर ज़मज़म का पानी ज़मज़मी में भरा हुआ है तो तयम्मुम करना दुरूस्त नहीं, ज़मज़मियों को खोलकर उस पानी में नहाना और वुज़ू करना वाजिब है।

मस्अला 15—किसी के पास पानी तो है, लेकिन रास्ता ऐसा ख़राब है कि कहीं पानी नहीं मिल सकता, इसलिए राह में प्यास के मारे तक्लीफ़ और हलाकत का डर हो, तो वुज़ू न करे, तयम्मुम कर लेना दुरूस्त है।

मस्अला 16—अगर ग़ुस्ल करना नुक़्सान करता हो और वुज़ू नुक़्सान न करे तो ग़ुस्ल की जगह तयम्मुम कर ले। फिर अगर तयम्मुम ग़ुस्ल के बाद टूट जाये, तो वुज़ू के लिए तयम्मुम न करे, बल्कि वुज़ू की जगह वुज़ू करना चाहिए और अगर ग़ुस्ल के तयम्मुम से पहले कोई बात वुज़ू तोड़ने वाली भी पाई गई और फिर ग़ुस्ल का तयम्मुम किया हो, तो भी तयम्मुम ग़ुस्ल व वुज़ू दोनों के लिए काफ़ी है।

मस्अला 17—तयम्मुम करने का तरीक़ा यह है कि दोनों हाथ पाक ज़मीन पर मारे और सामने मुंह पर मल ले, फिर दूसरी बार ज़मीन पर दोनों हाथ मारे और दोनों हाथों पर कुहनी समेत मले। चूड़ियों, कंगनों वग़ैरह के दर्मियान अच्छी तरह मले, अगर उसके ख़्याल में नाख़ून बराबर भी कोई जगह छूट जायेगी, तो तयम्मुम न होगा। अंगूठी–छल्ले उतार डाले ताकि कोई जगह छूट न जाये, उंगलियों में खिलाल कर ले, जब ये दोनों चीज़ें कर लीं, तो तयम्मुम हो गया।

मस्अला 18—मिट्टी पर हाथ मारके हाथ झाड़ डाले ताकि बांहों और मुंह भभूत न लग जाये और सूरत न बिगड़े।

मस्अला 19—ज़मीन के सिवा और जो चीज़ मिट्टी की क़िस्म से हो, उस पर भी तयम्मुम दुरूस्त है जैसे मिट्टी, रेत, पत्थर, गच, चूना, हड़ताल, सुर्मा, गेरू वग़ैरह और जो चीज़ मिट्टी की क़िस्म से न हो, उससे तयम्मुम दुरूस्त नहीं, जैसे सोना, चांदी, रांगा, गेहूं, लकड़ी, कपड़ा, और अनाज वग़ैरह। हां अगर इन चीज़ों पर गर्द और मिट्टी लगी हो, उस वक़्त, हां, उन पर तयम्मुम दुरूस्त है।

मस्अला 20—जो चीज़ न तो आग में जले और न गले, वह चीज़ मिट्टी की क़िस्म से है, उस पर तयम्मुम दुरूस्त है और जो चीज़ जल कर राख हो जाये या गल जाये, उस पर तयम्मुम दुरूस्त नहीं। इसी तरह राख पर भी तयम्मुम दुरूस्त नहीं।

मस्अला 21—तांबे के बर्तन और तकिए और गद्दे वग़ैरह कपड़े पर तयम्मुम करना दुरूस्त नहीं। हां, अगर उस पर इतनी गर्द है कि हाथ मारने से ख़ूब उड़ती है और हथेलियों में ख़ूब अच्छी तरह लग जाती है तो तयम्मुम दुरूस्त है और अगर हाथ मारने से थोड़ी-थोड़ी गर्द उड़ती हो तो भी उस पर तयम्मुम दुरूस्त नहीं और मिट्टी के घड़े, बंधने पर तयम्मुम दुरूस्त है, चाहे इसमें पानी भरा हो या न हो, लेकिन अगर उस पर रोग़न फिरा हुआ हो, तो तयम्मुम दुरूस्त नहीं।

मस्अला 22—अगर पत्थर पर बिल्कुल गर्द न हो, तब भी तयम्मुम दुरूस्त है, बल्कि अगर पानी से ख़ूब धुला हुआ हो, तब भी दुरूस्त है। हाथ पर गर्द का लगना कुछ ज़रूरी नहीं है, इसी तरह पक्की ईंट पर भी तयम्मुम दुरूस्त है, चाहे उस पर कुछ गर्द हो, चाहे न हो।

मस्अला 23—कीचड़ से तयम्मुम करना गरचे दुरूस्त है, मगर मुनासिब नहीं। अगर कहीं कीचड़ के सिवा और कोई चीज़ न मिले तो यह तरकीब करे कि अपना कपड़ा कीचड़ से भर ले, जब वह सूखे तो उससे तयम्मुम कर ले। हां, अगर नमाज़ का वक़्त ही निकला जाता हो, तो उस वक़्त जिस तरह बन पड़े, तर से खुश्क से, तयम्मुम करे, नमाज़ क़ज़ा न होने दे।

मस्अला 24—अगर ज़मीन पर पेशाब वग़ैरह कोई नजासत पड़ गई और धूप से सूख गई और बदबू भी जाती रही, तो वह ज़मीन पाक हो गई। नमाज़ उस पर दुरूस्त है, लेकिन उस ज़मीन पर तयम्मुम करना दुरूस्त नहीं, जब मालूम हो कि यह ज़मीन ऐसी है और अगर न मालूम हो तो वहम न करे।

मस्अला 25—जिस तरह वुज़ू की जगह तयम्मुम दुरूस्त है, उसी तरह गुस्ल की जगह भी मजबूरी के वक़्त तयम्मुम दुरूस्त है। ऐसे ही जो औरत हैज़ व निफ़ास से पाक हुई हो, मजबूरी के वक़्त उसको भी तयम्मुम दुरूस्त है, वुज़ू और गुस्ल के तयम्मुम में कोई फ़र्क़ नहीं। दोनों का एक ही तरीक़ा है।

मस्अला 26—अगर किसी को बतलाने के लिए तयम्मुम करके

दिखलाया, दिल में अपने तयम्मुम करने की नीयत नहीं, बल्कि सिर्फ़ उसको दिखलाने का इरादा है, तो उसका तयम्मुम न होगा, क्योंकि तयम्मुम दुरूस्त होने में तयम्मुम करने का इरादा ज़रूरी है, तो जब तयम्मुम करने का इरादा न हो, सिर्फ़ दूसरे को बतलाने और दिखलाने का इरादा हो, तो तयम्मुम न होगा।

मस्अला 27—तयम्मुम करते वक़्त अपने दिल में बस इतना इरादा कर ले कि मैं पाक होने के लिए तयम्मुम करती हूं या नमाज़ पढ़ने के लिए तयम्मुम करती हूं तो तयम्मुम हो जायेगा और यह इरादा करना कि मैं गुस्ल का तयम्मुम करती हूं या वुज़ू का, कुछ ज़रूरी नहीं है।

मस्अला 28—अगर कुरआन मजीद के छूने के लिए तयम्मुम किया तो इससे नमाज़ पढ़ना दुरूस्त नहीं है और अगर एक नमाज़ के लिए तयम्मुम किया, दूसरे वक़्त की नमाज़ भी उससे पढ़ना दुरूस्त है और कुरआन मजीद का छूना भी तयम्मुम से दुरूस्त है।

मस्अला 29—किसी को नहाने की भी ज़रूरत है और वुज़ू भी नहीं है, तो एक ही तयम्मुम करे, दोनों के लिए अलग-अलग तयम्मुम करने की ज़रूरत नहीं है।

मस्अला 30—किसी ने तयम्मुम कर के नमाज़ पढ़ ली, फिर पानी मिल गया और वक़्त अभी बाक़ी है, तो नमाज़ का दोहराना वाजिब नहीं, वही नमाज़ तयम्मुम से दुरूस्त हो गई।

मस्अला 31—अगर पानी एक मील शरई से दूर नहीं, लेकिन वक़्त बहुत तंग है। अगर पानी लेने जायेगी, तो नमाज़ का वक़्त जाता रहेगा, तो भी तयम्मुम दुरूस्त नहीं है, पानी लाये और नमाज़ क़ज़ा पढ़े।

मस्अला 32—पानी मौजूद होते वक़्त कुरआन मजीद के छूने के लिए तयम्मुम करना दुरूस्त है।

मस्अला 33—अगर आगे चलकर पानी मिलने की उम्मीद हो तो बेहतर है कि अव्वल वक़्त नमाज़ न पढ़े, बल्कि पानी का इंतिज़ार करे, लेकिन इतनी देर न लगाये कि वक़्त मकरूह हो जाये और पानी का इंतिज़ार न किया, अव्वल ही वक़्त नमाज़ पढ़ ली, तब भी दुरूस्त है।

मस्अला 34—अगर पानी पास है, लेकिन यह डर है कि रेल पर से उतरेगी, तो रेल चल देगी, तब भी तयम्मुम दुरूस्त है या सांप वग़ैरह कोई जानवर पानी के पास है, जिससे पानी नहीं मिल सकता, तो भी तयम्मुम दुरूस्त है।

मस्अला 35—सामान के साथ पानी बंद रखा था, लेकिन याद नहीं रहा और तयम्मुम करके नमाज़ पढ़ ली फिर याद आया कि मेरे सामान में तो पानी बंधा हुआ है, तो अब नमाज़ का दोहराना वाजिब नहीं।

मस्अला 36—जितनी चीज़ों से वुज़ू टूट जाता है, उनसे तयम्मुम भी टूट जाता है और पानी मिल जाने से भी तयम्मुम टूट जाता है। इसी तरह अगर तयम्मुम करके आगे चली और पानी एक मील शरई के कम फ़ासिले पर रह गया तो भी तयम्मुम टूट गया।

मस्अला 37—अगर वुज़ू का तयम्मुम है तो वुज़ू के मुवाफ़िक़ पानी मिलने से तयम्मुम टूटेगा और गुस्ल का तयम्मुम है तो जब गुस्ल के मुवाफ़िक़ पानी मिलेगा, तब तयम्मुम टूटेगा और अगर पानी कम मिला, तो तयम्मुम नहीं टूटा।

मस्अला 38—अगर रास्ते में पानी मिला, लेकिन उसको पानी की कुछ ख़बर न हुई और मालूम न हुआ कि यहां पानी है तो भी तयम्मुम नहीं टूटा। इसी तरह अगर रास्ते में पानी मिला और मालूम भी हो गया, लेकिन रेल पर से न उतर सकी, तो भी तयम्मुम नहीं टूटा।

मस्अला 39—अगर बीमारी की वजह से तयम्मुम किया है, तो जब बीमारी जाती रही कि वुज़ू और गुस्ल नुक़सान न करे तो तयम्मुम टूट जायेगा। अब वुज़ू और गुस्ल करना वाजिब है।

मस्अला 40—पानी नहीं मिला, इस वजह से तयम्मुम कर लिया, फिर ऐसी बीमारी हो गई, जिससे पानी नुक़सान करता है, फिर बीमारी के बाद पानी मिल गया, तो अब तयम्मुम बाक़ी नहीं रहा, जो पानी न मिलने की वजह से किया था, फिर से तयम्मुम करे।

मस्अला 41—अगर नहाने की ज़रूरत थी, इसलिए गुस्ल किया, लेकिन ज़रा-सा बदन सूखा रह गया और पानी ख़त्म हो गया, तो अभी वह पाक नहीं हुई, इसलिए उसको तयम्मुम कर लेना चाहिए। जब भी पानी मिले तो इतनी सूखी जगह को धो ले, फिर से नहाने की ज़रूरत नहीं है।

मस्अला 42—अगर ऐसे वक़्त पानी मिला कि वुज़ू भी टूट गया, तो इस सूखी जगह को पहले धो ले और वुज़ू के लिए तयम्मुम करे और अगर पानी इतना कम है कि वुज़ू तो हो सकता है, लेकिन वह सूखी जगह इतने पानी में नहीं धुल सकती, तो वुज़ू करे और उस सूखी जगह के लिए गुस्ल का तयम्मुम कर ले। हां, अगर इस गुस्ल का तयम्मुम पहले कर चुकी हो, तो अब भी तयम्मुम करने की ज़रूरत नहीं, वही पहला तयम्मुम बाक़ी है।

मस्अला 43—किसी का कपड़ा या बदन भी नजिस है और वुज़ू की भी ज़रूरत है और पानी थोड़ा है, तो बदन और कपड़ा धो ले और वुज़ू के बदले तयम्मुम कर ले।

मोज़ों पर मसह करने का बयान

मस्अला 1—अगर चमड़े के मोज़े वुज़ू करके पहन ले और फिर वुज़ू टूट जाये, तो फिर वुज़ू करते वक़्त मोज़ों पर मसह कर लेना दुरूस्त है और अगर मोज़ा उतार कर पैर धो लिया करे तो यह सबसे बेहतर है।

मस्अला 2—अगर वह मोज़ा इतना छोटा है कि टख़ने मोज़े के अंदर छिपे हुए न हों, तो उस पर मसह दुरूस्त नहीं। इसी तरह अगर बग़ैर वुज़ू के मोज़ा पहन लिया, तो उस पर मसह दुरूस्त नहीं, उतार कर पैर धोना चाहिए।

मस्अला 3—सफ़र में तीन दिन–रात तक मोज़ों पर मसह करना दुरूस्त है और जो सफ़र में न हो, उसको एक दिन, एक रात और जिस वक़्त से वुज़ू टूटा है, उस वक़्त से एक दिन, एक रात एक या तीन दिन तीन रात का हिसाब किया जाएगा। जिस वक़्त से मोज़ा पहना है उसका एतबार न करेंगे जैसे किसी ने जुहर के वक़्त वुज़ू करके मोज़ा पहना, फिर सूरज डूबने के वक़्त वुज़ू टूटा, तो अगले दिन के सूरज डूबने तक मसह करना दुरूस्त है और सफ़र में तीसरे दिन के सूरज डूबने तक जब सूरज डूब गया, तो अब मसह करना भी दुरूस्त नहीं रहा।

मस्अला 4—अगर कोई ऐसी बात हो गई, जिससे नहाना वाजिब हो गया, तो मोज़ा उतार कर नहाये, गुस्ल के साथ मोज़े पर मसह करना दुरूस्त नहीं।

मस्अला 5—मोज़े के ऊपर की तरफ़ मसह करे, तलवे की तरफ़ मसह न करे।

मस्अला 6—मोज़े पर मसह करने का तरीक़ा यह है——
हाथ की उंगलियां तर करके आगे की तरफ़ रखे, उंगलियां तो समूची मोज़े पर रख दे और हथेली मोज़े से अलग रखे, फिर उनको खींचकर टख़ने की तरफ़ ले जाये और उंगलियों के साथ–साथ हथेली भी रख दे और हथेली समेत उंगलियों को खींचकर ले जाये, तो भी दुरूस्त है।

मस्अला 7—अगर कोई उलटा मसह करे यानी टख़ने की तरफ़ से

खींचकर उंगलियों की तरफ़ लाये, तो भी जायज़ है, लेकिन मुस्तहब के ख़िलाफ़ है। ऐसे ही अगर लम्बाई में मसह न करे, तो चौड़ाई में मसह करे, तो यह भी दुरूस्त है, लेकिन मुस्तहब के ख़िलाफ़ है।

मस्अला 8—अगर तलवे या ऐड़ी या मोज़े के अग़ल-बग़ल में मसह करे तो यह मसह दुरूस्त नहीं हुआ।

मस्अला 9—अगर पूरी उंगलियों को मोज़े पर नहीं रखा, बल्कि सिर्फ़ उंगलियों का सिर मोज़ा पर रख दिया और उंगलियां खड़ी रखीं, तो यह मसह दुरूस्त नहीं हुआ, हां अगर उंगलियों से पानी टपक रहा हो, जिससे बहकर तीन उंगलियों के बराबर पानी मोज़े को लग जाये, तो दुरूस्त हो जायेगा।

मस्अला 10—मसह में मुस्तहब तो यही है कि हथेली की तरफ़ से मसह करे और अगर कोई हथेली के ऊपर की तरफ़ मसह करे तो भी दुरूस्त है।

मस्अला 11—अगर किसी ने मोज़े पर मसह नहीं किया, लेकिन पानी बरसते वक़्त बाहर निकली या भीगी घास में चली तो मसह हो गया।

मस्अला 12—हाथ की तीन उंगलियां भर हर मोज़े पर मसह करना फ़र्ज़ है, इससे कम में मसह दुरूस्त न होगा।

मस्अला 13—जो चीज़ वुज़ू तोड़ देती है, उससे मसह भी टूट जाता है और मोज़ों के उतार देने से भी मसह टूट जाता है तो अगर किसी का वुज़ू तो नहीं टूटा, लेकिन उसने मोज़े उतार डाले तो मसह जाता रहा। अब दोनों पैर धो ले, फिर से वुज़ू करने की ज़रूरत नहीं है।

मस्अला 14—अगर एक मोज़ा उतार डाला, तो दूसरा मोज़ा भी उतार कर दोनों पांव का धोना वाजिब है।

मस्अला 15—अगर मसह की मुद्दत पूरी हो गई तो भी मसह जाता रहा। अगर वुज़ू न टूटा हो तो मोज़ा उतार कर दोनों पांव धोये, पूरे वुज़ू को दोहराना वाजिब नहीं और अगर वुज़ू टूट गया हो तो मोज़ा उतार कर पूरा वुज़ू करे।

मस्अला 16—मोज़े पर मसह करने के बाद कहीं पानी में पैर पड़ गया और मोज़ा ढीला था, इसलिए मोज़े के अंदर पानी चला गया और सारा पांव या आधे से ज़्यादा पांव भीग गया, तो भी मसह जाता रहा। दूसरा मोज़ा भी उतार दे और दोनों पैर अच्छी तरह से धोये।

मस्अला 17—जो मोज़ा इतना फट गया हो कि चलने में पैर की छोटी तीन उंगलियों के बराबर खुल जाता है, तो उस पर मसह दुरूस्त नहीं और उससे कम खुलता है तो मसह दुरूस्त है।

मस्अला 18—अगर मोज़े की सीवन खुल गई, लेकिन उसमें से पैर नहीं दिखलाई देता, तो मसह दुरूस्त है और अगर ऐसा हो कि चलते वक़्त तो तीन उंगलियों के बराबर पैर दिखाई देता है और यों नहीं दिखाई देता तो मसह दुरूस्त नहीं।

मस्अला 19—अगर एक मोज़े में दो उंगलियों के बराबर पैर खुल जाता है और दूसरे मोज़े में एक उंगली के बराबर, तो कुछ हरज नहीं, मसह जायज़ है और अगर एक ही मोज़ा कई जगह से फटा है और सब मिलाकर तीन उंगलियों के बराबर खुल जाता है, तो मसह जायज़ नहीं और अगर इतना कम हो कि सब मिलाकर भी पूरी तीन उंगलियों के बराबर नहीं होता, तो मसह दुरूस्त है।

मस्अला 20—किसी ने मोज़े पर मसह करना शुरू किया और अभी एक दिन–रात गुज़रने न पाया था कि मुसाफ़िर हो गई, तो तीन दिन रात तक मसह करती रहे और अगर सफ़र से पहले ही एक दिन–रात गुज़र जाये, तो मुद्दत ख़त्म हो चुकी, पैर धोकर फिर मोज़ा पहने।

मस्अला 21—अगर सफ़र में मसह करती थी, फिर घर पहुंच गई, तो अगर एक दिन–रात पूरी हो चुकी है, तो अब मोज़ा उतार दे, अब उस पर मसह दुरूस्त नहीं और अगर अभी एक दिन रात भी नहीं पूरी हुई, तो एक दिन–रात पूरी करे, उससे ज़्यादा तक मसह दुरूस्त नहीं।

मस्अला 22—अगर जुर्राब के ऊपर मोज़ा पहने है, तब भी मोज़े पर मसह दुरूस्त है।

मस्अला 23—जुर्राबों पर मसह करना दुरूस्त नहीं है। हां, अगर उन पर चमड़ा चढ़ा दिया गया हो या सारे मोज़े पर चमड़ा न चढ़ाया हो, बल्कि मर्दाना जूते की शक्ल पर चमड़ा लगा दिया गया हो, बहुत संगीन और सख़्त हो कि रास्ता भी चल सकती हो, तो इन सूरतों में जुर्राब पर भी मसह करना दुरूस्त है।

मस्अला 24—बुर्क़ा और दस्तानों पर मसह दूरूस्ते नहीं।

शेष पृष्ठ 38 का

वुज़ू को तोड़ने वाली चीज़ों का बयान

मस्अला 22—मर्द के हाथ लगाने से या यों ही ख़्याल करने से

अगर आगे की राह से पानी आ जाये तो वुज़ू टूट जाता है और उस पानी को जो जोश के वक़्त निकलता है, 'मज़ी' कहते हैं।

मस्अला 23—बीमारी की वजह से रेंट की तरह लेसदार पानी आगे की राह से आता हो, तो एहतियात इस कहने में है कि वह पानी नजिस है और उसके निकलने से वुज़ू टूट जाता है।

मस्अला 24—पेशाब या मज़ी की बूंद सूराख़ से बाहर निकल आयी, लेकिन अभी उसी खाल के अंदर है, जो ऊपर होती है, तब भी वुज़ू टूट गया। वुज़ू टूटने के लिए ख़ाल से बाहर निकलना ज़रूरी नहीं है।

मस्अला 25—मर्द के पेशाब की जगह से जब औरत के पेशाब की जगह मिल जाये और कुछ कपड़ा वग़ैरह बीच में आड़ न हो, तो वुज़ू टूट जाता है। ऐसे ही अगर दो औरतें अपनी-अपनी पेशाब करने की जगहें मिलायें, तब भी वुज़ू टूट जाता है, लेकिन यह खुद बहुत बुरा और गुनाह है। दोनों हालतों में चाहे कुछ निकले, चाहे कुछ निकले, चाहे न निकले, एक ही हुक्म है।

शेष पृष्ठ 42 का

गुस्ल का बयान

मस्अला 10—पेशाब की जगह आगे की खाल के अंदर पानी पहुंचाना गुस्ल में फ़र्ज़ है, अगर पानी न पहुंचेगा, तो गुस्ल न होगा।

जिन चीज़ों से गुस्ल वाजिब होता है, उनका बयान

मस्अला 1—सोते या जागते में जब जवानी के जोश के साथ मनी निकल आये, तो गुस्ल वाजिब हो जाता है, चाहे मर्द के हाथ लगाने से पहले या सिर्फ़ ख़्याल और बयान करने से निकले या और किसी तरह से निकले, हर हाल में गुस्ल वाजिब है।

मस्अला 2—अगर आंख खुली और कपड़े या बदन पर मनी लगी

हुई देखी तो भी गुस्ल करना वाजिब है, चाहे सोते में कोई सपना देखा हो या न देखा हो।

तंबीह—जवानी के जोश के वक़्त अव्वल–अव्वल जो पानी निकलता है और उसके निकलने से जोश ज़्यादा हो जाता है, कम नहीं होता, उसको मज़ी कहते हैं और ख़ूब मज़ा आकर जब जी भर जाता है, उस वक़्त जो निकलता है, उसको मनी कहते हैं। और पहचान इन दोनों की यही है कि मनी निकलने के बाद जी भर जाता है और जोश ठंडा पड़ जाता है और मज़ी के निकलने से जोश कम नहीं होता बल्कि ज़्यादा हो जाता है और मज़ी पतली होती है और मनी गाढ़ी होती है। इसलिए सिर्फ़ मज़ी के निकलने से गुस्ल वाजिब नहीं होता, हां, वुज़ू टूट जाता है।

मस्अला 3—जब मर्द के पेशाब की जगह की सुपरी अंदर चली जाये और छिप जाये तो भी गुस्ल वाजिब हो जाता है, चाहे मनी निकले या न निकले। मर्द की सुपारी आगे की राह में गई हो तो भी गुस्ल वाजिब है, चाहे कुछ भी न निकला हो और अगर पीछे की राह में गई हो, तो भी गुस्ल वाजिब है, लेकिन पीछे की राह में करना और कराना बड़ा गुनाह है।

मस्अला 4—जो ख़ून आगे की राह से हर महीने आया करता है, उसको हैज़ कहते हैं। जब यह ख़ून बंद हो जाये तो गुस्ल करना वाजिब है। और जो ख़ून बच्चा पैदा होने के बाद आता है, उसकी निफ़ास कहते हैं, उसके बंद होने पर गुस्ल करना वाजिब है। कहने का मतलब यह है कि चार चीज़ों से गुस्ल वाजिब होता है—

1. जोश के साथ मनी निकलना,
2. मर्द की सुपारी को अंदर चला जाना,
3. हैज़, व
4. निफ़ास के ख़ून का बंद हो जाना।

मस्अला 5—छोटी लड़की से अगर किसी मर्द ने सोहबत की, जो अभी जवान नहीं हुई तो उस पर गुस्ल वाजिब नहीं, लेकिन आदत डालने के लिए उससे गुस्ल कराना चाहिए।

मस्अला 6—सोते में मर्द के पास रहने और सोहबत करने का सपना देखा और मज़ा भी आया, लेकिन आंख खुली तो देखा कि मनी नहीं निकली है, तो उस पर गुस्ल वाजिब नहीं है, हां अगर मनी निकल आई हो तो गुस्ल वाजिब है। और अगर कपड़े या बदन पर कुछ भीगा–भीगा मालूम हो, लेकिन यह ख़्याल हो कि यह मज़ी है, मनी नहीं है, तब भी गुस्ल करना

वाजिब है।

मस्अला 7—अगर थोड़ी सी मनी निकली, और गुस्ल कर लिया, फिर नहाने के बाद मनी निकल आई तो फिर नहाना वाजिब है। और अगर नहाने के बाद शौहर की मनी निकली जो औरत के अंदर थी, तो गुस्ल दुरुस्त हो गया, फिर नहाना वाजिब नहीं है।

मस्अला 8—बीमारी की वजह से या और किसी वजह से आप ही आप मनी निकल आई, अगर जोश और ख़्वाहिश बिल्कुल नहीं थी, तो गुस्ल वाजिब नहीं, हां, वुज़ू टूट जायेगा।

मस्अला 9—मियां–बीवी दोनों एक पलंग पर सो रहे थे, जब उठे तो चादर पर मनी का धब्बा देखा और सोते में सपने का देखना न मर्द का याद है न औरत को, तो दोनों नहा लें, एहतियात इसी में है क्योंकि मालूम नहीं यह किसकी मनी है।

मस्अला 10—जब कोई काफ़िर मुसलमान हो जाये, तो उसको गुस्ल कर लेना मुस्तहब है।

मस्अला 11—जब कोई मुर्दे को नहलाये, तो नहलाने के बाद गुस्ल कर लेना मुस्तहब है।

मस्अला 12—जिस पर नहाना वाजिब है वह अगर नहाने के पहले कुछ खाना–पीना चाहे, तो पहले अपने हाथ और मुंह धो ले और कुल्ली कर ले तब खाये–पिये और अगर बे–हाथ–मुंह धोये खा पी ले, तब भी कोई गुनाह नहीं है।

मस्अला 13—जिनको नहानें की ज़रूरत है, उनको कुरआन मजीद का छूना और उसका पढ़ना और मस्जिद में जाना जायज़ नहीं है और अल्लाह तआला का नाम लेना और कलमा पढ़ना और दरूद शरीफ़ पढ़ना जायज़ है और इस क़िस्म के मस्अलों को हम इन्शाअल्लाहु तआला हैज़ के बयान में अच्छी तरह से बयान करेंगे, वहां देख लेना चाहिए।

मस्अला 14—तफ़्सीर[1] की किताबों को बे–नहाये और बे–वुज़ू छूना मकरूह है और तर्जुमेदार कुरआन को छूना बिल्कुल हराम है।

---

1. कुरआन की टीका व व्याख्या,

(भाग-2)

बहिश्ती ज़ेवर

हज़रत मौलाना अशरफ़ अली थानवी (रह०)

www.idaraimpex.com

बिषय सूची

क्या ? कहां ?

असली बहिश्ती ज़ेवर

का

दूसरा हिस्सा

بِسْمِ اللّٰہِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِیْمِ

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

नजासत[1] के पाक करने का बयान

मस्अला 1—नजासत[2] की दो क़िस्में हैं—

एक वह जिसकी नजासत ज़्यादा सख़्त है। थोड़ी–सी लग जाये, तब भी धोने का हुक्म है, इसको नजासते ग़लीज़ा कहते हैं।

दूसरे वह, जिसकी नजासत ज़रा कम और हल्की है, उसको नजासते ख़फ़ीफ़ा कहते हैं।

मस्अला 2—ख़ून और आदमी का पाख़ाना–पेशाब और मनी और शराब और कुत्ते–बिल्ली का पाखाना–पेशाब और सूअर का मांस और उसके बाल और हड्डी वग़ैरह, उसकी सारी चीज़ें और घोड़े–गधे, ख़च्चर की लीद, और गाय–बैल–भैंस वग़ैरह का गोबर और बकरी–भेड़ की मेंगनी वग़ैरह, मतलब यह कि सब जानवरों का पाख़ाना और मुर्ग़ी–बत्तख़ और मुर्ग़ाबी की बीट और गधे और ख़च्चर और सब हराम जानवरों का पेशाब, ये सब चीज़ें नजासते ग़लीज़ा हैं।

मस्अला 3—छोटे दूध–पीते बच्चे का पेशाब–पाख़ाना भी नजासते ग़लीज़ा है।

---

1. जिन बयानों से यह हिस्सा शुरू था, वह पृ० 131 से पृ० 140 तक लिखे हुए मिलेंगे।

मस्अला 4—हराम परिंदों की बीट और हलाल जानवरों का पेशाब, जैसे बकरी–गाय–भैंस वग़ैरह और घोड़े का पेशाब नजासते ख़फ़ीफ़ा है।

मस्अला 5—मुर्ग़ी, बत्तख़, मुर्ग़ाबी के सिवा और हलाल परिंदों की बीट पाक है, जैसे कबूतर, गौरय्या यानी चिड़िया, मैना वग़ैरह और चमगादड़ का पेशाब और बीट भी पाक है।

मस्अला 6—नजासते ग़लीज़ा में से अगर पतली और बहने वाली चीज़ कपड़े या बदन में लग जाये, तो अगर फैलाव में रूपए के बराबर या उससे कम हो, तो माफ़ है, उसको धोये बग़ैर अगर नमाज़ पढ़ ले तो नमाज़ हो जायेगी, लेकिन न धोना और इसी तरह नमाज़ पढ़ते रहना मकरूह और बुरा है और अगर रूपए से ज़्यादा हो तो वह माफ़ नहीं, बग़ैर उसके धोए नमाज़ न होगी और अगर नजासते ग़लीज़ा में से गाढ़ी चीज़ लग जाये, जैसे पाख़ाना और मुर्ग़ी वग़ैरह की बीट, तो अगर वज़न में साढ़े चार माशा या उससे कम हो, तो बे–धोए हुए नमाज़ दुरूस्त है और अगर उससे ज़्यादा लग जाये, तो बे–धोये नमाज़ दुरूस्त नहीं है।

मस्अला 7—अगर नजासते ख़फ़ीफ़ा कपड़े या बदन में लग जाये, तो जिस हिस्से में लगी है, अगर उसके चौथाई से कम हो, तो माफ़ है और अगर पूरा चौथाई या उससे ज़्यादा हो, तो माफ़ नहीं यानी आस्तीन में लगी है, तो आस्तीन की चौथाई से कम हो और अगर कली में लगी है तो उसकी चौथाई से कम हो, अगर दोपट्टे में लगी है तो उसकी चौथाई से कम हो तब माफ़ है। इसी तरह अगर नजासते ख़फ़ीफ़ा हाथ में भरी है, तो हाथ की चौथाई से कम हो तो माफ़ है। इसी तरह अगर टांग में लग जाये, तो उसकी चौथाई से कम हो, तब माफ़ है, मतलब यह है कि जिस अंग में लगे, उसकी चौथाई से कम हो और अगर पूरा चौथाई हो, तो माफ़ नहीं, उसका धोना वाजिब है, यानी बे–धोये हुए नमाज़ दुरूस्त नहीं।

मस्अला 8—नजासते ग़लीज़ा जिस पानी में पड़ जाये, तो वह पानी भी नजिस हो जाता है और नजासते ख़फ़ीफ़ा पड़ जाये, तो पानी भी नजिसे ख़फ़ीफ़[1] हो जाता है, चाहे कम पड़े या ज़्यादा।

मस्अला 9—कपड़े में नजिस तेल लग गया और हथेली के गहराव यानी रूपए से कम भी है, लेकिन वह दो एक दिन में फैलकर ज़्यादा हो

---

1. हल्का नजिस (नापाक)

गया, तो जब तक रुपए से ज़्यादा न हो माफ़ है, और जब बढ़ गया, तो माफ़ नहीं रहा। अब उसका धोना वाजिब है, बग़ैर धोये हुए नमाज़ न होगी।

मस्अला 10—मछली का खून नजिस नहीं है। अगर लग जाये तो, कुछ हरज नहीं। इसी तरह मक्खी, खटमल, मच्छर का खून भी नजिस नहीं है।

मस्अला 11—अगर पेशाब की छींटें सूई की नोक के बराबर पड़ जायें कि देखने में दिखाई न दें, तो इसका कुछ हरज नहीं, धोना वाजिब नहीं है।

मस्अला 12—अगर दलदार नजासत लग जाये, जैसे पाख़ाना, ख़ून, तो इतना धोये कि नजासत छूट जाये और धब्बा जाता रहे, चाहे जितनी बार में छूटे। जब नजासत छूट जायेगी, तो कपड़ा पाक हो जायेगा और अगर बदन में लग गई हो, तो उसका भी यही हुक्म है, हां, अगर पहली बार ही में नजासत छूट गई, तो दो बार और धो लेना बेहतर है और अगर दो बार में छूटी है, तो एक बार और धो ले, मतलब यह है कि तीन बार पूरे कर लेना बेहतर है।

मस्अला 13—अगर ऐसी नजासत है कि कई बार धोने और नजासत के छूट जाने पर भी बदबू नहीं गई, या कुछ धब्बा रह गया है, तो भी कपड़ा पाक हो गया, साबुन वग़ैरह लगाकर धब्बा छुड़ाना और बदबू दूर करना ज़रूरी नहीं।

मस्अला 14—और अगर पेशाब की तरह की कोई चीज़ लग गई, जो दलदार नहीं है, तो तीन बार धोये और हर बार निचोड़े और तीसरी बार अपनी ताक़त भर ख़ूब ज़ोर से निचोड़े, तब पाक होगा, तो अगर ख़ूब ज़ोर से न निचोड़ेगी, तो कपड़ा पाक न होगा।

मस्अला 15—अगर नजासत ऐसी चीज़ में लगी है, जिसको निचोड़ नहीं सकती, जैसे तख़्त, चटाई, ज़ेवर, मिट्टी या चीनी के बरतन बोतल, जूता वग़ैरह, तो उसके पाक करने का तरीक़ा यह है कि एक बार धो कर ठहर जाये। जब पानी टपकना बंद हो जाये, फिर धोये, फिर जब पानी टपकना रुके, तब फिर धोये। इसी तरह तीन बार धोये, तो वह चीज़ पाक हो जायेगी।

मस्अला 16—पानी की तरह जो चीज़ पतली और पाक हो उससे नजासत का धोना दुरूस्त है, तो अगर कोई गुलाब या अर्क़ गावज़ुबा या किसी अर्क़ या सिर्के से धोये तो भी चीज़ पाक हो जायेगी, लेकिन घी और तेल और दूध वग़ैरह किसी ऐसी चीज़ से धोना दुरूस्त नहीं, जिसमें कि

चिकनाई हो, वह चीज़ ना पाक रहेगी।

नोट—मस्अला 17 पृ० 152 पर है।

मस्अला 18—जूते और चमड़े के मोज़े में अगर दलदार नजासत लग कर सूख जाये जैसे, गोबर, पाखाना, ख़ून, मिट्टी वग़ैरह, तो ज़मीन पर ख़ूब घिसकर नजासत छुड़ा डालने से पाक हो जाता है, ऐसे ही खुरच डालने से भी पाक हो जाता है और अगर सूखी न हो, तब भी, अगर इतना रगड़ डाले और घिस दे कि नजासत का नाम व निशान बाक़ी न रहे, तो पाक हो जायेगा।

मस्अला 19—अगर पेशाब की तरह कोई नजासत जूते या चमड़े के मोज़े में लग गई, जो दलदार नहीं है, तो बे–धोये पाक नहीं होगा।

मस्अला 20—कपड़ा और बदन सिर्फ़ धोने ही से पाक होता है, चाहे दलदार नजासत लगे या बे–दल की, किसी और तरह पाक नहीं होता।

मस्अला 21—आईने का शीशा और छुरी, चाक़ू, चांदी–सोने के ज़ेवरात, फूल, तांबे, लोहे, गिलट, शीशे वग़ैरह की चीज़ें अगर नजिस हो जायें, तो ख़ूब पोंछ डालने और रगड़ डालने या मिट्टी से मांझ डालने से पाक हो जाती हैं, लेकिन अगर नक़्शी चीज़ें हो, तो बे–धोये पाक न होंगी।

मस्अला 22—ज़मीन पर नजासत पड़ गई, फिर ऐसी सूख गई कि नजासत का निशान बिल्कुल जाता रहा, न तो नजासत का धब्बा है, न बदबू आती है, तो इस तरह सूख जाने से ज़मीन पाक हो जाती है, लेकिन ऐसी ज़मीन पर तयम्मुम दुरुस्त नहीं, हां, नमाज़ पढ़ना दुरुस्त है। जो ईंटें या पत्थर चूना या गारे से ज़मीन में ख़ूब जमा दिये गये हों कि बे–खोदे जमीन से अलग न हो सकें, उनका भी यही हुक्म है कि सूख जाने और नजासत का निशान न रहने से पाक हो जायेंगे।

मस्अला 23—जो ईंटें सिर्फ़ ज़मीन में बिछा दी गई हैं, चूना या गारे से उनकी जोड़ाई नहीं की गई है, वे सूखने से पाक न होंगी, उनको धोना पड़ेगा।

मस्अला 24—ज़मीन पर जमी हुई घास भी सूखने और नजासत का निशान जाते रहने से पाक हो जाती है और अगर कटी हुई घास हो, तो बे–धोये पाक न होगी।

मस्अला 25—नजिस चाक़ू, छुरी या मिट्टी और तांबे वग़ैरह के बरतन, अगर दहकती हुई आग में डाल दिये जायें, तो भी पाक हो जाते हैं।

मस्अला 26—हाथ में कोई नजिस चीज़ लगी थी, उसको किसी ने ज़ुबान से तीन बार चाट लिया, तो भी पाक हो जायेगा, मगर चाटना मना है या छाती पर बच्चे की क़ै का दूध लगा गया, फिर बच्चे ने तीन बार चूस कर पी लिया, वह पाक हो गया।

मस्अला 27—अगर कोरा बरतन नजिस हो जाये और वह बरतन नजासत को चूस ले, तो सिर्फ़ धोने से पाक न होगा, बल्कि उसमें पानी भर दे, जब नजासत का असर पानी में आ जाये, तो गिरा कर फिर भर दे, इसी तरह बराबर करती रहे। जब नजासत का नाम व निशान बिल्कुल जाता रहे, न रंग बाक़ी रहे, न बदबू, तब पाक होगा।

मस्अला 28—नजिस मिट्टी से जो बरतन कुम्हार ने बनाये, तो जब तक वे कच्चे हैं, नापाक हैं, जब पका लिए गए, तो पाक हो गये।

मस्अला 29—शहद या शीरा या घी–तेल नापाक हो गया, तो जितना तेल वग़ैरह हो, उतना या उससे ज़्यादा पानी डाल कर पकाये। जब पानी जल जाये तो फिर पानी डालकर जलाये। इसी तरह तीन बार करने से पाक हो जायेगा। या यों करो कि जितना घी–तेल हो, उतना ही पानी डालकर हिलाओ। जब वह पानी के ऊपर आ जाये, तो किसी तरह उठा लो। इसी तरह तीन बार पानी मिलाकर उठाओ, तो पाक हो जायेगा और घी अगर जम गया हो, तो पानी डाल कर आग पर रख दो, जब पिघल जाये तो उसको निकाल लो।

मस्अला 30—नजिस रंग में कपड़ा रंगा, तो इतना धोये कि पानी साफ़ आने लगे, तो पाक हो जायेगा, चाहे कपड़े से रंग छूटे या न छूटे।

मस्अला 31—गोबर, कंडे और लीद वग़ैरह नजिस चीज़ों की राख पाक है और उनका धुंवा भी पाक है। रोटी में लग जायें तो कुछ हरज नहीं।

मस्अला 32—बिछौने का एक कोना नजिस है और बाक़ी सब पाक है, तो पाक कोने पर नमाज़ पढ़ना दुरुस्त है।

मस्अला 33—जिस ज़मीन को गोबर में लीपा हो, या मिट्टी में गोबर मिला कर लीपा हो, वह नजिस है, उस पर बग़ैर कोई पाक चीज़ बिछाये नमाज़ दुरुस्त नहीं।

मस्अला 34—गोबर से लीपी हुई ज़मीन अगर सूख गई हो, तो उस पर गीला कपड़ा बिछाकर भी नमाज़ पढ़ना दुरुस्त है, लेकिन वह इतना गीला न हो कि उस ज़मीन की कुछ मिट्टी छूटकर कपड़े में भर जाये।

मस्अला 35—पैर धोकर नापाक ज़मीन पर चली और पैर का

निशान ज़मीन पर बन गया, तो उससे पैर नापाक न होगा। हां, अगर पैर के पानी से ज़मीन इतनी भीग जाये कि ज़मीन की कुछ मिट्टी या वह नजिस पानी पैर में लग जाये, तो नजिस हो जायेगा।

मस्अला 36—नजिस बिछौने पर सोयी और पसीने से वह कपड़ा नम हो गया, तो उसका भी यही हुक्म है कि उसका कपड़ा और बदन नापाक न होगा। हां, अगर इतना भीग जाये, तो नजिस हो जायेगा।

मस्अला 37—नजिस मेंहदी हाथों-पैरों में लगाई, तो तीन बार अब धो डालने से हाथ-पैर पाक हो जायेंगे, रंग का छुड़ाना वाजिब नहीं।

मस्अला 38—नजिस सुर्मा या काजल आंखों में लगाया, तो उसका पोंछना और धोना वाजिब नहीं। हां, अगर फैलकर बाहर आंख में आ गया, तो धोना वाजिब है।

मस्अला 39—नजिस तेल सिर में डाल लिया या बदन में लगा लिया, तो क़ायदे के मुताबिक़ तीन बार धोने से पाक हो जायेगा। खली डालकर या साबुन लगाकर तेल का छोड़ाना वाजिब नहीं।

मस्अला 40—कुत्ते ने आटे में मुंह डाल दिया, बंदर ने जूठा कर दिया तो अगर आटा गुंधा हुआ हो, तो जहां मुंह डाला है, उतना निकाल डाले, बाक़ी का खाना दुरुस्त है। और अगर सूखा आटा हो तो जहां-जहां उसके मुंह का लुआब हो, निकाल डाले। बाक़ी सब पाक है।

मस्अला 41—कुत्ते का लुआब नजिस है और खुद कुत्ता नजिस नहीं। सो अगर कुत्ता किसी के कपड़े या बदन से छू जाये, तो नजिस नहीं होता, चाहे कुत्ते का बदन सूखा हो या गीला। हां, अगर कुत्ते के बदन पर कोई नजासत हो, तो और बात है।

मस्अला 42—रूमाली भीगी होने के वक़्त हवा निकले, तो उससे कपड़ा नजिस नहीं हुआ।

मस्अला 43—नजिस पानी में जो कपड़ा भीग गया था, उसके साथ पाक कपड़े को लपेट कर रख दिया और उसकी तरी उस पाक कपड़े में आ गई, लेकिन न तो उसमें नजासत का कुछ रंग आया, न बदबू आई, तो अगर यह पाक कपड़ा इतना भीग गया हो कि निचोड़ने से एक आध क़तरा टपक पड़े या निचोड़ते वक़्त हाथ भीग जाये, तो वह पाक कपड़ा भी नजिस हो जायेगा और अगर इतना न भीगा हो, तो पाक रहेगा और अगर पेशाब वग़ैरह ख़ास नजासत के भीगे हुए कपड़े के साथ लपेट दिया तो जब पाक कपड़े में तनिक-सी भी उसकी नमी और धब्बा आ गया, तो नजिस हो

जायेगा।

मस्अला 44—अगर लकड़ी का तख़्ता एक तरफ़ से नजिस है और दूसरी तरफ़ से पाक है, तो अगर इतना मोटा है कि बीच से चिर सकता है, तो उसको पलट कर दूसरी तरफ़ नमाज़ पढ़ना दुरूस्त है और अगर इतना मोटा न हो, तो दुरूस्त नहीं।

मस्अला 45—दो तह का कोई कपड़ा है और एक तह नजिस है, दूसरी पाक है तो अगर दोनों तहें सिली हुई न हों, तो पाक तह की तरफ़ नमाज़ पढ़ना दुरूस्त है और अगर सिली हुई हों, तो पाक तह पर भी नमाज़ पढ़ना दुरूस्त नहीं है।

इस्तिंजे का बयान

मस्अला 1—जब सोकर उठे, तो जब तक गट्टे तक हाथ न धो ले, तब तक हाथ पानी में न डाले, चाहे हाथ पाक हो और चाहे नापाक हो। अगर पानी छोटे बर्तन में रखा हो, जैसे लोटा, आबख़ोरा, तो उसको बायें हाथ से उठाकर दाहिने हाथ पर डाले और तीन बार धोये, फिर बर्तन दाहिने हाथ में लेकर बायां हाथ तीन बार धोये और अगर छोटे बर्तन में पानी न हो, बड़े मटके वग़ैरह में हो, तो किसी आबख़ोरे वग़ैरह से निकाल ले, लेकिन उंगलियां पानी में न डूबने पायें और अगर आबख़ोरा वग़ैरह कुछ न हो, तो बायें हाथ की उंगलियों से चुल्लू बना के पानी निकाले और जहां तक हो सके, पानी में उंगलियां कम डाले और पानी निकाल के पहले दाहिना हाथ धाये जब वह हाथ धुल जाये तो दाहिना हाथ जितना चाहे डाले दे और पानी निकाल के बायां हाथ धोये और यह तरीक़ा हाथ धोने का उस वक़्त है, कि हाथ नापाक न हों और अगर नापाक हों, तो हरगिज़ मटके में डाले, बल्कि किसी और तरीक़े से पानी निकाले कि नजिस न होने पाये, मिसाल के तौर पर पाक रूमाल डाल के निकाले और जो पानी की धार रूमाल से बहे, उससे हाथ पाक करे या और जिस तरह मुम्किन हो।

मस्अला 2—जो नजासत आगे या पीछे की राह से निकले, उससे इस्तिंजा[1] करना सुन्नत है।

1. पाकी रहना, पाक करना।

मस्अला 3—अगर नजासत बिल्कुल इधर–उधर न लगे और इसलिए पानी से इस्तिंजा न करे, बल्कि पाक पत्थर या ढेले से इस्तिंजा कर ले और इतना पोंछ डाले कि नजासत जाती रहे और बदन साफ़ हो जाये, तो भी जायज़ है, लेकिन यह बात सफ़ाई के स्वभाव के ख़िलाफ़ है। हां, अगर पानी न हो या कम हो, तो मजबूरी है।

मस्अला 4—ढेले से इस्तिंजा करने का कोई ख़ास तरीक़ा नहीं है, बस इतना ध्यान रखे कि नजासत इधर–उधर फैलने न पाये और बदन ख़ूब साफ़ हो जाये।

मस्अला 5—ढेले से इस्तिंजा करने के बाद पानी से इस्तिंजा करना सुन्नत है, लेकिन अगर नजासत हथेली के गहराव यानी रूपए से ज़्यादा फैल जाये, तो ऐसे वक़्त पानी से धोना वाजिब है। बे–धोये नमाज़ न होगी। अगर नजासत न फैली न हो, तो सिर्फ़ ढेले से पाक करके भी नमाज़ दुरूस्त है, लेकिन सुन्नत के ख़िलाफ़ है।

मस्अला 6—पानी से इस्तिंजा करे, तो पहले दोनों हाथ गट्टे तक धोये, फिर तंहाई की जगह जाकर बदन ढीला करके बैठे और इतना धोये कि दिल कहने लगे कि अब बदन पाक हो गया। हां, अगर कोई शक्की मिज़ाज हो कि पानी बहुत फेंकती है, फिर भी दिल अच्छी तरह साफ़ नहीं होता, तो उसको यह हुक्म है कि तीन बार या सात बार धो ले, बस इससे ज़्यादा न धोये।

मस्अला 7—अगर कहीं तंहाई का मौक़ा न मिले, तो पानी से इस्तिंजा करने के वास्ते, किसी के सामने अपने बदन को खोलना दुरूस्त नहीं। न मर्द के सामने न किसी औरत के सामने। ऐसे वक़्त इस्तिंजा न करे और बे–इस्तिंजा किये नमाज़ पढ़ ले। क्योंकि बदन का खोलना बड़ा गुनाह है।

मस्अला 8—हड्डी और नजासत, जैसे गोबर, लीद वग़ैरह और कोयला व कंकर और शीशा और पक्की ईंट और खाने की चीज़ और काग़ज़ से और दाहिने हाथ से इस्तिंजा करना बुरा और मना है, न करना चाहिए, लेकिन अगर कोई कर ले, तो बदन पाक हो जायेगा।

मस्अला 9—खड़े–खड़े पेशाब करना मना है।

मस्अला 10—पेशाब व पाख़ाना करते वक़्त क़िब्ले की तरफ़ मुंह करना और पीठ करना मना है।

मस्अला 11—छोटे बच्चे को क़िब्ले की तरफ़ बिठा कर हगाना–मुताना भी मकरूह और मना है।

मस्अला 12—इस्तिंजा के बचे हुए पानी से वुज़ू करना दुरूस्त है और वुज़ू के बचे हुए पानी से इस्तिंजा भी दुरूस्त है, लेकिन न करना बेहतर है।

मस्अला 13—जब पाखाना–पेशाब को जाये, तो पाखाना के दरवाज़े से बाहर बिस्मिल्लाह कहे और यह दुआ पढ़े—

اَللّٰهُمَّ اِنِّیْ اَعُوْذُبِكَ مِنَ الْخُبُثِ وَالْخَبَائِثِ

अल्लाहुम्म इन्नी अऊज़ु बिक मिनल् ख़ुब्सि वल् ख़बाइसि०

और नंगे सिर न जाये और अगर किसी अंगूठी वग़ैरह पर अल्लाह तआला और उसके रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का नाम हो, तो उसको उतार डाले और पहले बायां पैर रखे और अंदर खुदा का नाम न ले। अगर छिंक आये, तो सिर्फ़ दिल ही दिल में अल्हम्दु लिल्लाह कहे, जुबान से कुछ न कहे। न वहां कुछ बोले, न बात करे। फिर जब निकले तो दाहिना पैर पहले निकाले और दरवाज़े से निकल कर यह दुआ पढ़े—

غُفْرَانَكَ اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِیْ اَذْهَبَ عَنِّی الْاَذٰی وَعَافَانِیْ

गुफरानक अल्हम्दु लिल्लाहिल्लज़ी अज़्हब अन्निल् अज़ा व आफ़ानी०

और इस्तिंजा के बाद बायें हाथ को ज़मीन पर रगड़ कर या मिट्टी से मल कर धोये।

नमाज़ का बयान

अल्लाह तआला के नज़दीक नमाज़ का बहुत बड़ा मर्तबा है। कोई इबादत अल्लाह तआला के नज़दीक नमाज़ से ज़्यादा प्यारी नहीं है। अल्लाह तआला ने अपने बंदों पर पांच वक़्त की नमाज़ें फ़र्ज़ कर दी हैं, उनके पढ़ने का बड़ा सवाब है और उनके छोड़ देने से बड़ा गुनाह होता है।

हदीस शरीफ़ में आया है कि जो कोई अच्छी तरह से वुज़ू किया करे और ख़ूब अच्छी तरह दिल लगा के नमाज़ पढ़ा करे, क़ियामत के दिन अल्लाह तआला उसके छोटे–छोटे गुनाह सब बख़्श देगा और जन्नत देगा और मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व आलिही व सल्लम ने फ़रमाया है कि नमाज़ दीन का स्तून है, जिसने नमाज़ को अच्छी तरह पढ़ा, उसने दीन को ठीक रखा और जिसने इस स्तून को गिरा दिया (यानी नमाज़ को न पढ़ा)

उसने दीन को बरबाद कर दिया।

और हज़रत मुहम्मद सल्ल० ने फ़रमाया है कि क़ियामत में सबसे पहले नमाज़ ही की पूछ होगी नमाज़ियों के हाथ और पांव और मुंह क़ियामत में आफ़्ताब की तरह चमकते होंगे और बे–नमाज़ी इस दौलत से महरूम रहेंगे।

और हज़रत मुहम्मद सल्ल० ने फ़रमाया है कि नमाज़ियों का हश्र क़ियामत के दिन नबियों, शहीदों और वलियों के साथ और बे–नमाज़ियों का हश्र फ़िरऔन, हामान, कारून और बड़े–बड़े काफ़िरों के साथ होगा, इसलिए नमाज़ पढ़ना बहुत ज़रूरी है और न पढ़ने से दीन व दुनिया दोनों को बहुत नुक़्सान होता है। इससे बढ़कर और क्या होगा कि बे–नमाज़ी का हश्र काफ़िरों के साथ किया गया, बे–नमाज़ी काफ़िरों के बराबर समझा गया। खुदा की पनाह ! नमाज़ न पढ़ना कितनी बुरी बात है।

हां, इन लोगों पर नमाज़ वाजिब नहीं––मज्नून (पागल), छोटे लड़के–लड़की, जो अभी जवान हुए हों। बाक़ी सब मुसलमानों पर फ़र्ज़ है। लेकिन औलाद जब सात वर्ष की हो जाये, तो उसके मां–बाप को हुक्म है कि उनसे नमाज़ पढ़वायें और जब दस वर्ष की हो जाये, तो मार कर पढ़ायें और नमाज़ का छोड़ना कभी किसी वक़्त दुरुस्त नहीं है। जिस तरह हो सके, नमाज़ ज़रूर पढ़े, हां, अगर नमाज़ पढ़ना भूल गई, बिल्कुल याद ही न रहा, जब वक़्त जाता रहा, तब याद आया कि मैंने नमाज़ नहीं पढ़ी या ऐसी ग़ाफ़िल सो गई कि आंख न खुली और नमाज़ क़ज़ा हो गई, तो ऐसे वक़्त गुनाह न होगा। लेकिन जब याद आये और आंख खुले, तो वुज़ू करके तुरन्त क़ज़ा पढ़ लेना फ़र्ज़ है, हां अगर वक़्त मकरूह हो तो ज़रा ठहर जाये, ताकि मकरूह वक़्त निकल जाये। इसी तरह जो नमाज़ें बेहोशी की वजह से नहीं पढ़ीं, इसमें भी गुनाह नहीं, लेकिन होश आने के बाद तुरन्त क़ज़ा पढ़नी पड़ेगी।

नोट 1––मस्अला 1 और 'जवान होने का बयान' पृ० 142 पर लिखा गया है।

नमाज़ के वक़्तों का बयान

मस्अला 1––पिछली रात को सुबह होते वक़्त पूरब की तरफ़ यानी जिधर से सूरज निकलता है, आसमान की लम्बान पर कुछ सफ़ेदी दिखाई

देती है, फिर थोड़ी देर में आसमान के किनारे पर चौड़ान में सफ़ेदी मालूम होती है और देखते–देखते बढ़ती चली जाती है और थोड़ी देर में बिल्कुल उजाला हो जाता है, तो जब से यह चौड़ी सफ़ेदी दिखाई दे, तब से फ़ज्र की नमाज़ का वक़्त शुरू हो जाता है और सूरज निकलने तक बाक़ी रहता है। जब सूरज का थोड़ा सा किनारा निकल आता है, तो फ़ज्र का वक़्त ख़त्म हो जाता है लेकिन अव्वल ही वक़्त बहुत तड़के नमाज़ पढ़ लेना बेहतर है।[1]

मस्अला 2—दोपहर ढल जाने से ज़ुहर का वक़्त शुरू हो जाता है और दोपहर ढल जाने की निशानी यह है कि लम्बी चीज़ों का साया पच्छिम से उत्तर की ओर सरकता–सरकता बिल्कुल उत्तर की सीध में आकर पूरब की तरफ़ मुड़ने लगे, बस समझो कि दोपहर ढल गई और पूरब की तरफ़ मुंह करके खड़े होने से बायें हाथ की तरफ़ का नाम उत्तर है और एक पहचान इससे भी आसान है, वह यह कि सूरज निकलकर जितना ऊंचा होता है, हर चीज़ का साया घटता जाता है, तो जब घटना रूक जाये, उस वक़्त ठीक दोपहर का वक़्त है। फिर जब साया बढ़ना शुरू हो जाये, तो समझो के दिन ढल गया। तो उसी वक़्त से ज़ुहर का वक़्त शुरू होता है और जितना साया ठीक दोपहर को होता है, उसको छोड़कर जब तक हर चीज़ का साया दोगुना हो जाये, उस वक़्त तक ज़ुहर का वक़्त रहता है। मिसाल के तौर पर एक हाथ लकड़ी का साया ठीक दोपहर को चार उंगुल था, तो जब तक दो हाथ चार उंगुल न हो, तब तक ज़ुहर का वक़्त है और जब तक दो हाथ और चार उंगुल हो गया, तो असर का वक़्त आ गया। और असर का वक़्त सूरज डूबने तक बाक़ी रहता है, लेकिन जब सूरज का रंग बदल जाये और धूप पीली पड़ जाये, उस वक़्त असर की नमाज़ पढ़ना मकरूह है। अगर किसी वजह से इतनी देर हो गई, तो ख़ैर पढ़ ले, क़ज़ा न करे, लेकिन फिर कभी इतनी देर न करे और इस असर के सिवा और कोई नमाज़ ऐसे वक़्त पढ़ना दुरूस्त नहीं है, न क़ज़ा, न नफ़्ल, कुछ न पढ़े।

मस्अला 3—जब सूरज डूब गया, तो मग़्रिब का वक़्त आ गया, फिर जब तक पच्छिम की तरफ़ आसमान के किनारे पर लाली बाक़ी रहे, तब तक मग़्रिब का वक़्त रहता है, लेकिन मग़्रिब की नमाज़ में इतनी देर न करे, कि तारे ख़ूब चटक जायें कि इतनी देर करना मकरूह है। फिर जब वह

---

1. और यह हुक्म औरतों का है और मर्दों के लिए हुक्म यह है कि जब उजाला हो जाये, तब पढ़ें, बहुत अंधेरे में न पढ़ें।

लाली जाती रहे, तो इशा का वक़्त शुरू हो गया और सुबह होने तक बाक़ी रहता है, लेकिन आधी रात के बाद इशा का वक़्त मकरूह हो जाता है और सवाब कम मिलता है, इसलिए इतनी देर करके नमाज़ न पढ़े और बेहतर यह है तिहाई रात जाने से पहले ही पहले पढ़ ले।

मस्अला 4—गर्मी के मौसम में ज़ुहर की नमाज़ में जल्दी न करे। गर्मी की तेज़ी का वक़्त जाता रहे, तब पढ़ना मुस्तहब है और जाड़ों में अव्वल वक़्त पढ़ लेना मुस्तहब है।

मस्अला 5—और असर की नमाज़ ज़रा इतनी देर करके पढ़ना बेहतर है कि वक़्त आने के बाद अगर कुछ नफ़्लें पढ़ना चाहे, तो पढ़ सके, क्योंकि असर के बाद तो नफ़्लें पढ़ना दुरूस्त नहीं, चाहे गर्मी का मौसम हो या जोड़े का—दोनों का एक ही हुक्म है, लेकिन इतनी देर न करे कि सूरज में पीलापन आ जाये और धूप का रंग बदल जाये और मग़्रिब की नमाज़ में जल्दी करना और सूरज डूबते ही पढ़ लेना मुस्तहब है।

मस्अला 6—जो कोई तहज्जुद की नमाज़ पिछली रात को उठकर पढ़ा करती हो, तो अगर पक्का भरोसा हो कि आंख ज़रूर खुलेगी, तो उसको वित्र की नमाज़ तहज्जुद के बाद पढ़ना बेहतर है, लेकिन अगर आंख खुलने का एतबार न हो और सो जाने का डर हो, तो इशा के बाद सोने से पहले पढ़ लेना चाहिए।

मस्अला 7—बदली के दिन फ़जर, ज़ुहर और मग़्रिब की नमाज़ ज़रा देर करके पढ़ना बेहतर है और असर में जल्दी करना मुस्तहब है।

मस्अला 8—सूरज निकलने के वक़्त और ठीक दोपहर को और सूरज डूबते वक़्त कोई नमाज़ सही नहीं है हां, असर की नमाज़ अगर अभी नहीं पढ़ी हो, तो वह सूरज डूबते वक़्त भी पढ़ ले और इन तीनों वक़्त तिलावत का सज्दा भी मकरूह और मना है।

मस्अला 9—फ़जर की नमाज़ पढ़ लेने के बाद जब तक सूरज निकल के ऊंचा न हो जाये, नफ़्ल नमाज़ पढ़ना मकरूह है, हां, सूरज निकलने से पहले क़ज़ा नमाज़ पढ़ना दुरूस्त है और तिलावत का सज्दा भी दुरूस्त है और जब सूरज निकल आया जो जब तक ज़रा रोशनी न आ जाये क़ज़ा नमाज़ भी दुरूस्त नहीं। ऐसे ही असर की नमाज़ पढ़ लेने के बाद नफ़्ल नमाज़ पढ़ना जायज़ नहीं, हां, क़ज़ा और सज्दे की आयत का सज्दा दुरूस्त है। लेकिन जब धूप फीकी पड़ जाये, तो यह भी दुरूस्त नहीं।

मस्अला 10—फ़जर के वक़्त सूरज निकल आने के डर से जल्दी

के मारे सिर्फ़ फ़जर पढ़ लिए, तो अब जब तक सूरज ऊंचा और रोशन न हो जाये, तब तक सुन्नत न पढ़े। जब ज़रा रोशनी आ जाये, तब सुन्नत वग़ैरह और जो नमाज़ चाहे, पढ़े।

मस्अला 11—जब सुबह हो जाये और फ़जर का वक़्त आ जाये तो दो रक्अत सुन्नत और दो रक्अत फ़र्ज़ के अलावा और कोई नफ़्ल नमाज़ पढ़ना दुरूस्त नहीं यानी मकरूह है, हां, क़ज़ा नमाज़ें पढ़ना और सज्दे की आयत पर सज्दा करना दुरूस्त है।

मस्अला 12—अगर फ़जर की नमाज़ पढ़ने में सूरज निकल आया, तो नमाज़ नहीं हुई। सूरज में रोशनी आ जाने के बाद क़ज़ा पढ़े और अगर असर की नमाज़ पढ़ने में सूरज डूब गया, तो नमाज़ हो गई, क़ज़ा न पढ़े।

मस्अला 13—इशा की नमाज़ पढ़ने से पहले सो रहना मकरूह है, नमाज़ पढ़के सोना चाहिए, लेकिन कोई मरीज़ है या सफ़र से बहुत थका-मांदा हो और किसी से कह दे कि मुझको नमाज़ के वक़्त जगा देना, तो सो रहना दुरूस्त है।

नमाज़ की शर्तों का बयान

मस्अला 1—नमाज़ शुरू करने से पहले कई चीज़ें वाजिब हैं—अगर वुज़ू न हो तो वुज़ू करे, नहाने की ज़रूरत हो तो गुस्ल करे। बदन पर या कपड़े पर कोई नजासत लगी हो, तो उसको पाक करे, जिस जगह नमाज़ पढ़नी है वह भी पाक होनी चाहिए, सिर्फ़ मुंह और दोनों हथेली और दोनों पैर के सिवा सिर से पैर तक सारा बदन ख़ूब ढांक लो।[1] क़िब्ले की तरफ़ मुंह करके जिस नमाज़ को पढ़ना चाहती है, उसकी नीयत यानी दिल से इरादा करे, वक़्त आने के बाद नमाज़ पढ़े—ये सब चीज़ें नमाज़ के लिए शर्त हैं। अगर इनमें से एक चीज़ भी छूट जायेगी, तो नमाज़ न होगी।

मस्अला 2—बारीक तंज़ेब या बक या जाली वग़ैरह का बड़ा बारीक दोपट्टा ओढ़ कर नमाज़ पढ़ना दुरूस्त नहीं है।

---

1. यह सिर्फ़ औरतों का हुक्म है और मर्दों को सिर्फ़ नाफ़ के नीचे से लेकर घुटने तक ढकना फ़र्ज़ है, इसके अलावा और बदन खुला हो तो नमाज़ हो जायेगी, लेकिन बिला ज़रूरत ऐसा करना मकरूह है।

मस्अला 3—अगर नमाज़ पढ़ते वक़्त चौथाई पिंडली या चौथाई रान या चौथाई बांह खुल जाये और इतनी देर खुली रहे, जितनी देर में तीन बार सुब्हानल्लाह कह सके, तो नमाज़ जाती रही, फिर से पढ़े और अगर इतनी देर न लगी, बल्कि खुलते ही ढक लिया तो नमाज़ हो गई। इसी तरह जितने बदन का ढांकना वाजिब है, उसमें से जब चौथाई हिस्सा खुल जायेगा, तो नमाज़ न होगी, जैसे एक कान का चौथाई या चौथाई सिर, चौथाई बाल या चौथाई पेट या चौथाई पीठ, चौथाई गरदन, चौथाई सीना, चौथाई छाती वग़ैरह खुल जाने से नमाज़ न होगी।

मस्अला 4—जो लड़की अभी जवान नहीं हुई, अगर उसकी ओढ़नी सरक गई और उसका सिर खुल गया, तो उसकी नमाज़ हो गई।

मस्अला 5—अगर कपड़े या बदन पर कुछ नजासत लगी है, लेकिन पानी कहीं नहीं मिलता, तो इसी तरह नजासत के साथ नमाज़ पढ़ ले।

मस्अला 6—और अगर सारा कपड़ा नजिस हो या पूरा कपड़ा, तो नजिस नहीं लेकिन बहुत ही कम पाक है यानी एक चौथाई से कम पाक है और बाक़ी सबका सब नजिस है, तो ऐसे वक़्त यह भी दुरूस्त है कि उस कपड़े को पहने–पहने नमाज़ पढ़े और यह भी दुरूस्त है कि कपड़ा उतार डाले और नंगी होकर नमाज़ पढ़े, लेकिन नंगी होकर नमाज़ पढ़ने से उस नजिस कपड़े को पहन कर पढ़ना बेहतर है और अगर चौथाई कपड़ा या चौथाई से ज़्यादा पाक हो तो नंगी होकर नमाज़ पढ़ना दुरूस्त नहीं। उसी नजिस कपड़े को पहन कर पढ़ना वाजिब है।

मस्अला 7—अगर किसी के पास बिल्कुल कपड़ा न हो तो नंगी नमाज़ पढ़े लेकिन ऐसी जगह पढ़े कि कोई देख न सके और खड़े होकर नमाज़ न पढ़े, बल्कि बैठकर पढ़े और रूकूअ–सज्दे को इशारे से अदा करे और अगर खड़े–खड़े पढ़े और रूकूअ–सज्दा करे, तो भी दुरूस्त है, नमाज़ हो जायेगी, लेकिन बैठकर पढ़ना बेहतर है।

मस्अला 8—सफ़र में किसी के पास थोड़ा–सा पानी है कि अगर नजासत धोती है, तो वुज़ू के लिए नहीं बचता और अगर वुज़ू करे, तो नजासत पाक करने के लिए पानी न बचेगा, तो उस पानी से नजासत धो डाले, फिर वुज़ू के लिए तयम्मुम करे।

मस्अला 9—ज़ुहर की नमाज़ पढ़ी, लेकिन जब पढ़ चुकी तो मालूम हुआ कि जिस वक़्त नमाज़ पढ़ी थी, उस वक़्त ज़ुहर का वक़्त नहीं

था, बल्कि अस्र का वक़्त आ गया था, तो अब फिर क़ज़ा पढ़ना वाजिब नहीं है, बल्कि वही नमाज़ जो पढ़ी है, क़ज़ा में आ जायेगी और ऐसा समझेंगे कि गोया क़ज़ा पढ़ी थी।

मस्अला 10—अगर वक़्त आने से पहले ही नमाज़ पढ़ ली, तो नमाज़ नहीं होगी।

नीयत करने का बयान

मस्अला 1—ज़ुबान से नीयत करना ज़रूरी नहीं, बल्कि दिल में जब इतना सोच ले कि मैं आज की जुहर की फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ती हूं, अगर सुन्नत पढ़ती हो, तो यह सोच ले कि मैं आज की जुहर की सुन्नत पढ़ती हूं, बस इतना ख़्याल करके अल्लाहु अक्बर कहे और हाथ बांध ले, तो नमाज़ हो जायेगी। जो लम्बी-चौड़ी नीयत लोगों में मशहूर है, उसका कहना ज़रूरी नहीं है।

मस्अला 2—अगर ज़ुबान से नीयत कहना चाहे तो इतना कह देना काफ़ी है, नीयत करती हूं मैं आज जुहर के फ़र्ज़ की—अल्लाहु अक्बर ! या नीयत करती हूं मैं जुहर की सुन्नतों की—अल्लाहु अक्बर और चार रक्अत नमाज़ जुहर, मुंह मेरा तरफ़ काबा शरीफ़ के, यह सब कहना ज़रूरी नहीं है, चाहे कहे, चाहे न कहे।

मस्अला 3—अगर दिल में तो यही ख़्याल है कि जुहर की नमाज़ पढ़ती हूं लेकिन जुहर की जगह ज़ुबान से अस्र का वक़्त निकल गया, तो भी नमाज़ हो जायेगी।

मस्अला 4—अगर भूले से चार रक्अत की जगह छः रक्अत या तीन रक्अत ज़ुबान से निकल जाये, तो भी नमाज़ हो जायेगी।

मस्अला 5—अगर कई नमाज़ें क़ज़ा हो गई हैं और क़ज़ा पढ़ने का इरादा किया है, तो वक़्त मुक़र्रर करके नीयत करे यानी यों नीयत करे कि मैं फ़जर की क़ज़ा पढ़ती हूं। अगर जुहर की क़ज़ा पढ़ना मंज़ूर हो, तो यों नीयत करे कि जुहर के फ़र्ज़ की क़ज़ा पढ़ती हूं। इस तरह जिस वक़्त की क़ज़ा पढ़ना हो, ख़ास उसी की नीयत करना चाहिए। अगर सिर्फ़ इतनी नीयत कर ले कि मैं क़ज़ा नमाज़ पढ़ती हूं और ख़ास उस वक़्त की नीयत नहीं की, तो क़ज़ा सही न होगी, फिर से पढ़नी पड़ेगी।

मस्अला 6—अगर कई दिन की नमाज़ें क़ज़ा हो गयीं, तो दिन-तारीख़

भी मुक़र्रर करके नीयत करना चाहिए, जैसे किसी की सनीचर, इतवार, पीर और मंगल, चार दिन की नमाज़ें जाती रहीं तो अब सिर्फ़ इतनी नीयत करना कि मैं फ़जर की क़ज़ा पढ़ती हूं, दुरुस्त नहीं है, बल्कि यों नीयत करे कि सनीचर की फ़जर की क़ज़ा पढ़ती हूं, दुरुस्त नहीं है, बल्कि यों नीयत करे कि सनीचर की फ़जर की क़ज़ा पढ़ती हूं फिर जुहर पढ़ते वक़्त कहे कि सनीचर की जुहर की क़ज़ा पढ़ती हूं। इसी तरह कहती जाये फिर जब सनीचर की सब नमाज़ें क़ज़ा कर चुके, तो कहे कि इतवार की फ़जर की क़ज़ा पढ़ती हूं। इसी तरह सब नमाज़ें क़ज़ा पढ़े। अगर कई महीने और कई साल की नमाज़ें क़ज़ा हों, तो महीने और साल का भी नाम ले और कहे कि फ़लां साल की फ़लां महीने की फ़लां तारीख़ की फ़जर की नमाज़ क़ज़ा पढ़ती हूं। इस तरह नीयत किये बग़ैर क़ज़ा सही नहीं होती।

मस्अला 7—अगर किसी को दिन, तारीख़, महीना, साल, कुछ याद न हो तो यों नीयत करे कि फ़जर की नमाज़ें, जितनी मेरे ज़िम्मे क़ज़ा हैं, उनमें से जो सबसे पहली है, उसकी क़ज़ा पढ़ती हूं या जुहर की नमाज़ें, जितनी मेरे ज़िम्मे क़ज़ा हैं, उनमें से जो सबसे पहली है, उसकी क़ज़ा पढ़ती हूं। इसी तरह नीयत कर के बराबर क़ज़ा पढ़ती रहे। जब दिल गवाही दे दे कि अब सब नमाज़ें, जितनी जाती रही थीं, सबकी क़ज़ा पढ़ चुकी हूं, तो क़ज़ा पढ़ना छोड़ दे।

मस्अला 8—सुन्नत और नफ़्ल और तरावीह की नमाज़ में सिर्फ़ इतनी नीयत कर लेना काफ़ी है कि मैं नमाज़ पढ़ती हूं, सुन्नत होने या नफ़्ल होने की कुछ नीयत नहीं की, तो भी दुरुस्त है, मगर सुन्नत तरावीह की नीयत कर लेना ज़्यादा एहतियात की बात है।

क़िब्ले की तरफ़ मुंह करने का बयान

मस्अला 1—अगर किसी ऐसी जगह है कि क़िब्ला मालूम नहीं होता, कि किधर है और न वहां कोई ऐसा आदमी है, जिससे पूछ सके, तो अपने दिल में सोचे। जिधर दिल गवाही दे, उस तरफ़ पढ़ ले। अगर बे-सोचे पढ़ लेगी तो नमाज़ न होगी, लेकिन अगर बाद में मालूम हो जाये कि ठीक क़िब्ले की तरफ़ ही पढ़ी है, तो नमाज़ हो जायेगी और अगर वहां आदमी तो मौजूद है, लेकिन पर्दे और शर्म की वजह से पूछा नहीं, इसी तरह नमाज़ पढ़ ली, तो भी नमाज़ नहीं हुई। ऐसे वक़्त ऐसी शर्म न करनी चाहिए,

बल्कि पूछ के नमाज़ पढ़े।

मस्अला 2—अगर कोई बतलाने वाला न मिला और दिल की गवाही पर नमाज़ पढ़ ली, फिर मालूम हुआ कि जिधर नमाज़ पढ़ी है, उधर क़िब्ला नहीं है, तो भी नमाज़ हो गई।

मस्अला 3—अगर बे-रूख नमाज़ पढ़ती थी, फिर नमाज़ ही में मालूम हो गया कि क़िब्ला उधर नहीं है, बल्कि फ़लां तरफ़ है, तो नमाज़ ही में क़िब्ले की तरफ़ घूम जाये। अब मालूम होने के बाद अगर क़िब्ले की तरफ़ न फिरेगी, तो नमाज़ न होगी।

मस्अला 4—अगर कोई काबा शरीफ़ के अंदर नमाज़ पढ़े, तो यह भी जायज़ है और इसके अंदर नमाज़ पढ़ने वाली को अख़्तियार है, जिधर चाहे मुंह करके नमाज़ पढ़े।

मस्अला 5—काबा शरीफ़ के अन्दर फ़र्ज़ नमाज़ भी दुरूस्त है और नफ़्ल भी दुरूस्त है।

फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ने के तरीक़े का बयान

मस्अला 1—नमाज़ की नीयत करके अल्लाहु अक्बर कहें और अल्लाहु अक्बर कहते वक़्त अपने दोनों हाथ कंधे[1] तक उठाये। हाथ को दोपट्टे से बाहर न निकाले, फिर सीने[2] पर बांध ले, और दाहिने हाथ की हथेली को बायें हाथ के पिछले हिस्से[3] पर रख दे और यह दुआ पढ़े—

سُبْحَانَكَ اللّٰهُمَّ وَبِحَمْدِكَ وَتَبَارَكَ اسْمُكَ وَتَعَالٰى جَدُّكَ وَلَا اِلٰهَ غَيْرُكَ

सुब्हानकल्लाहुम्म व बिहम्दिक व तबारकस्मुक व तआला जद्दु क व ला इलाह गै़रूक०

फिर 'अऊज़ु बिल्लाहि मिनश्शैता निर्रजीम' (اعوذ بالله) और 'बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम' (بسم الله) पढ़ कर अल्हम्दु (الحمد ... ولا الضالين) पढ़े और वलज़्ज़ाल्लीन० के बाद आमीन कहे। फिर बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम पढ़ के कोई सूरः पढ़े। फिर अल्लाहु अक्बर कह के

---

1. और मर्द दोनों कानों की लौ तक हाथ उठायें,
2. और मर्द नाफ़ के नीचे हाथ बांधे,
3. और मर्द दाहिने हाथ से बायां पहुंचा पकड़ लें।

रूकूअ में जाये और—

सुब्हान रब्बियल् अज़ीम० (سُبْحَانَ رَبِّيَ الْعَظِيْم) तीर बार या पांच बार या सात बार कहे और रूकूअ में दोनों हाथ की उंगलियां मिला कर घुटनों[1] पर रख दे और दोनों बाज़ू पहलू से ख़ूब मिलाये रहे[2]। और दोनों पैर के टख़ने बिल्कुल मिला दे, फिर— سَمِعَ اللّٰهُ لِمَنْ حَمِدَهٗ ۔ رَبَّنَا لَكَ الْحَمْدُ समिअल्लाहु लिमन हमिदह—रब्बना लकल् हम्दु कहती हुई सर को उठाये। जब ख़ूब सीधी खड़ी हो जाये, तो फिर अल्लाहु अक्बर कहती हुई सज्दे में जाये। ज़मीन पर पहले घुटने रखे, फिर कानों के बराबर हाथ रखे और उंगलियां ख़ूब मिला ले फिर दोनों हाथों के बीच में माथा रखे और सज्दे के वक़्त माथा और नाक दोनों ज़मीन पर रख दे और हाथ और पांव की उंगलियां क़िब्ले की तरफ़ रखे, मगर पांव खड़े न करे, बल्कि दाहिनी तरफ़ को निकाल दे और ख़ूब सिमट कर और दब[3] कर सज्दा करे कि पेट दोनों रानों से और बाहें दोनों पहलू से मिलादे और दोनों बाहें ज़मीन पर रख दे[4]। और सज्दे में कम से कम तीन बार— سُبْحَانَ رَبِّيَ الْاَعْلٰى सुब्हान रब्बिअल् आला कह के अल्लाहु अक्बर कहती हुई खड़ी हो जाये और ज़मीन पर हाथ टेक कर न उठे। फिर बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम कह कर अलहम्दु और सूरः पढ़ के दूसरी रकअत इसी तरह पूरी करे। जब दूसरा सज्दा कर चुके तो बायें चूतड़[5] पर बैठे और अपने दोनों पांव दाहिनी तरफ़ निकाल दे और दोनों हाथ अपनी रानों पर रख ले और उंगलियां ख़ूब मिला कर रखे। फिर पढ़े—

اَلتَّحِيَّاتُ لِلّٰهِ وَالصَّلَوٰاتُ وَالطَّيِّبٰتُ ۔
اَلسَّلَامُ عَلَيْكَ اَيُّهَا النَّبِيُّ وَرَحْمَةُ اللّٰهِ وَبَرَكَاتُهٗ اَلسَّلَامُ عَلَيْنَا وَعَلٰى
عِبَادِ اللّٰهِ الصّٰلِحِيْنَ ۔ اَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَاَشْهَدُ اَنَّ مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ
وَرَسُوْلُهٗ ۔

अत्तहीयातु लिल्लाहि वस्सलवातु वत्तय्यिबातु अस्सलामु अलैक अय्युहन्नबीयु व रहमतुल्लाहि व बरकातुहू अस्सलामु अलैना व अला इबादिल्ला हिस्सालिहीन अशहदु अल्लाइलाह इल्लल्लाहु व अशहदु अन्न मुहम्मदन अब्दुहू व रसूलुहू०

1. और मर्द अपने दोनों घुटने पकड़ ले और उंगलियां खुली रखें, 2. और मर्द मंद बाज़ू पहलू से अलग रखें, 3. और मर्द ख़ूब खुलकर सज्दा करें और पेट को रानों से और बाहे पहलू से जुदा रखे, 4. मर्द ज़मीन पर कुहनियां न रखे, 5. मर्द अपना दाहिना पैर खड़ा रखे और बायें पैर पर बैठे।

और जब कलमे पर पहुंचे तो बीच की उंगली और अंगूठे से हल्क़ा बना कर लाइलाह कहने के वक़्त कलमे की उंगली उठा दे और इल्लल्लाह कहने के वक़्त झुका दे, मगर अक़्द और हल्क़े की शक्ल आख़िर नमाज़ तक बाक़ी रखे। अगर चार रक्अत पढ़ना हो, तो इससे ज़्यादा और कुछ न पढ़े, बल्कि फ़ौरन अल्लाहु अक्बर कह कर उठ खड़ी हो और दो रक्अतें और पढ़ ले और फ़र्ज़ नमाज़ में पिछली दो रक्अतों में अल्हम्दु के साथ कोई सूरः न मिलाये। जब चौथी रक्अत पर बैठे, फिर अत्तहीयातु पढ़ के यह दरूद पढ़े—

اَللّٰهُمَّ صَلِّ عَلٰى مُحَمَّدٍ وَّعَلٰى اٰلِ مُحَمَّدٍ كَمَا صَلَّيْتَ عَلٰى اِبْرَاهِيْمَ وَعَلٰى اٰلِ اِبْرَاهِيْمَ اِنَّكَ حَمِيْدٌ مَّجِيْدٌ ۞ اَللّٰهُمَّ بَارِكْ عَلٰى مُحَمَّدٍ وَّعَلٰى اٰلِ مُحَمَّدٍ كَمَا بَارَكْتَ عَلٰى اِبْرَاهِيْمَ وَعَلٰى اٰلِ اِبْرَاهِيْمَ اِنَّكَ حَمِيْدٌ مَّجِيْدٌ

अल्लाहुम्म सल्लि अला मुहम्मदिंव्व अला आलि मुहम्मदिन कमा सल्लैत अला इब्राहीम व अला आलि इब्राहीम इन्नक हमीदुम् मजीद० अल्लाहुम्म बारिक अला मुहम्मदिंव्व अला आलि मुहम्मदिन कमा बारक्त अला इब्राहीम व अला आलि इब्राहीम इन्नक हमीदुम मजीद०

फिर यह दुआ पढ़े—

رَبَّنَا اٰتِنَا فِى الدُّنْيَا حَسَنَةً وَّفِى الْاٰخِرَةِ حَسَنَةً وَّقِنَا عَذَابَ النَّارِ

रब्बना आतिना फ़िद्दुन्या हसनतंव्व फ़िल् आख़िरति हसनतंव्व क़िना अज़ाबन्नारि या यह दुआ पढ़े—

اَللّٰهُمَّ اغْفِرْ لِىْ وَلِوَالِدَىَّ وَلِجَمِيْعِ الْمُؤْمِنِيْنَ وَالْمُؤْمِنَاتِ وَالْمُسْلِمِيْنَ وَالْمُسْلِمَاتِ الْاَحْيَاءِ مِنْهُمْ وَالْاَمْوَاتِ

अल्लाहुम्मग़्फ़िरली वलि वालिदय्य व लिजमीअिल् मुअमिनीन वल मुअमिनाति वल् मुस्लिमीन वल मुस्लिमाति अल–अह् याइ मिन्हुम वल अम्वाति० या कोई और दुआ पढ़े जो हदीस में या क़ुरआन मजीद में आई हो। फिर अपने दाहिनी तरफ़ सलाम फेरे और कहे— اَلسَّلَامُ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَةُ اللّٰهِ

अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाहि० फिर यही कह कर बाईं तरफ़ सलाम फेरे और सलाम करते वक़्त फ़रिश्तों पर सलाम करने की नीयत करे।

यह नमाज़ पढ़ने का तरीक़ा है, लेकिन इनमें जो बातें फ़र्ज़ हैं, उनमें से

एक बात भी छूट जाये, तो नमाज़ नहीं होती, चाहे जान–बुझ कर छोड़े या भूले से, दोनों का एक ही हुक्म है।

और कुछ चीज़ें वाजिब हैं कि इसमें से अगर कोई चीज़ जान–बूझकर छोड़ दे, तो नमाज़ पढ़नी पड़ती है। अगर कोई फिर से न पढ़े, तो ख़ैर, तब भी फ़र्ज़ सर से उतर जाता है, लेकिन बहुत गुनाह होता है और अगर भूले से छूट जाये, तो सह्व का सज्दा करने से नमाज़ हो जायेगी।

मस्अला 2—नमाज़ में छः चीज़ें फ़र्ज़ हैं—

1. नीयत बांधते वक़्त अल्लाहु अक्बर कहना, 2. खड़ा होना, 3. क़ुरआन में से कोई सूरः या आयत पढ़ना 4. रूकूअ करना, 5. दोनों सज्दे करना और 6. नमाज़ के आख़िर में जितनी देर अत्तहीयात पढ़ने में लगती हो, उतनी देर बैठना।

मस्अला 3—ये चीज़ें नमाज़ में वाजिब हैं अल्हम्दु पढ़ना और फिर सूरः मिलाना, फिर रूकूअ करना, फिर सज्दा करना, दो रक्अत पर बैठना, दोनों बैठकों में अत्तहीयात पढ़ना, वित्र की नमाज़ में दुआ–ए–कुनूत पढ़ना, अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाह कह कर सलाम फेरना, हर चीज़ को इत्मीनान से अदा करना, बहुत जल्दी न करना।

मस्अला 4—इन बातों के सिवा जितनी और बातें हैं, वे सब सुन्नत हैं, लेकिन कुछ इनमें मुस्तहब हैं।

मस्अला 5—अगर कोई नमाज़ में अल्हम्दु न पढ़े, बल्कि कोई और आयत या कोई पूरी सूरः पढ़े या सिर्फ़ अल्हम्दु पढ़े उनके साथ कोई सूरः या कोई आयत न मिलाये या दो रक्अत पढ़के न बैठे, बे–बैठे और बे अत्तहीयात पढ़े तीसरी रक्अत के लिए खड़ी हो जाये या बैठे तो गई, लेकिन अत्तहीयात नहीं पढ़ी, तो इन सूरतों में सर से फ़र्ज़ तो उतर जायेगा, लेकिन नमाज़ बिल्कुल निकम्मी और ख़राब है, फिर से पढ़ना वाजिब है, न दोहरायेगी, तो बहुत बड़ा गुनाह होगा। हां, अगर भुले से ऐसा किया हो तो सज्दा–सह्व कर लेने से नमाज़ दुरूस्त हो जायेगी।

मस्अला 6—अगर अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाहि कह कर सलाम नहीं फेरा, बल्कि जब सलाम का वक़्त आया तो किसी से बोल पड़ी, बातें करने लगी, या उठकर कहीं चली गई या और कोई ऐसा काम किया, जिस से नमाज़ टूट जाती है, तो इस का भी यही हुक्म है कि फ़र्ज़ तो उतर जायेगा, लेकिन नमाज़ का दोहराना वाजिब है। फिर से न पढ़ेगी तो बड़ा गुनाह होगा।

मस्अला 7—अगर पहले सूरः पढ़ी, फिर अल्हम्दु पढ़ी तब नमाज़

भी दोहराना पड़ेगी और अगर भूले से ऐसा कर ले तो सज्दा सह्व कर ले।

मस्अला 8—अल्हम्दु के बाद कम से कम तीन आयतें पढ़नी चाहिएं। अगर एक ही आयत या दो आयतें अलहम्दु के बाद पढ़े, तो अगर वह एक आयत इतनी बड़ी हो कि छोटी–छोटी तीन आयतों के बराबर हो जाये, तब भी दुरुस्त है।

मस्अला 9—अगर कोई रुकूअ से खड़ी होकर—या रुकूअ में 'सुब्हान रब्बियल अज़ीम(سُبْحَانَ رَبِّيَ الْعَظِيْمِ) न पढ़े या सज्दे में सुब्हान रब्बियल आला ( ) न पढ़े या आख़िर की बैठक में अत्तहीयातु के बाद दरूद शरीफ़ न पढ़े तो भी नमाज़ होगी, लेकिन सुन्नत के ख़िलाफ़ है। इसी तरह अगर दरूद शरीफ़ के बाद कोई दुआ न पढ़ी, सिर्फ़ दरूद शरीफ़ पढ़कर सलाम फेर दिया, तब भी नमाज़ दुरुस्त है, लेकिन सुन्नत के ख़िलाफ़ है।

मस्अला 10—नीयत बांधते वक़्त हाथों को उठाना सुन्नत है। अगर कोई न उठाये, तब भी नमाज़ दुरुस्त है, मगर ख़िलाफ़े सुन्नत है।

मस्अला 11—हर रक्अत में बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम पढ़ कर अल्हम्दु पढ़े और जब सूरः मिलाये तो सूरः से पहले बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम पढ़ ले, यही बेहतर है।

मस्अला 12—सज्दा के वक़्त अगर नाक और माथा दोनों ज़मीन पर न रखे, बल्कि सिर्फ़ माथा ज़मीन पर रखे और नाक न रखे, तो भी नमाज़ दुरुस्त है। और माथा नहीं लगाया, सिर्फ़ नाक ज़मीन पर लगाई, तो नमाज़ नहीं हुई, हां, अगर कोई मजबूरी हो, तो सिर्फ़ नाक लगाना भी दुरुस्त है।

मस्अला 13—अगर रुकूअ के बाद अच्छी तरह खड़ी नहीं हुई, ज़रा सर उठाकर सज्दे में चली गई, तो नमाज़ फिर से पढ़ ले।

मस्अला 14—अगर दोनों सज्दों के बीच में अच्छी तरह नहीं बैठी, ज़रा–सा सर उठाकर दूसरा सज्दा कर लिया, तो अगर ज़रा ही सर उठाया हो, तो एक ही सज्दा हुआ, दोनों सज्दे अदा नहीं हुए और नमाज़ बिल्कुल नहीं हुई और अगर इतनी उठी हो कि क़रीब–क़रीब बैठने के हो गई हो, तो ख़ैर नमाज़ सर से उतर गई, लेकिन बड़ी निकम्मी और खराब हो गई, इसलिए फिर से पढ़ना चाहिए, नहीं तो बड़ा गुनाह होगा।

मस्अला 15—अगर रूमाल पर या रूई की चीज़ पर सज्दा करे तो सर को ख़ूब दबा कर सज्दा करे, इतना दबाये कि उससे ज़्यादा न दब सके, अगर ऊपर ज़रा इशारे से सर रख दिया, दबाया नहीं, तो सज्दा नहीं हुआ।

मस्अला 16—फ़र्ज़ नमाज़ में पिछली दो रक्अतों में अगर अल्हम्दु के बाद कोई सूर भी पढ़ गई तो नमाज़ में कुछ नुक़्सान नहीं आया, नमाज़ बिल्कुल सही है।

मस्अला 17—अगर पिछली दो रक्अतों में अल्हम्दु न पढ़े, बल्कि तीन बार 'सुब्हानल्लाह–सुब्हानल्लाह' कह ले तो भी दुरुस्त है, लेकिन अल्हम्दु पढ़ लेना बेहतर है और अगर कुछ न पढ़े, चुपकी खड़ी रहे[1], तो भी कुछ हरज नहीं, नमाज़ दुरुस्त है।

मस्अला 18—पहली दो रक्अतों के साथ सूरः मिलाना वाजिब है। अगर कोई पहली दो रक्अतों में सिर्फ़ अल्हम्दु पढ़े, सूरः न मिलाये या अल्हम्दु भी न पढ़े, सुब्हानल्लाह–सुब्हानल्लाह पढ़ती रहे, तो अब पिछली रक्अतों में अल्हम्दु के साथ सूरः मिलाना चाहिए, फिर अगर जान–बूझकर ऐसा किया है, तो नमाज़ फिर से पढ़े और अगर भूले से किया हो, तो सह्व का सज्दा कर ले।

मस्अला 19—नमाज़ में अल्हम्दु और सूरः वग़ैरह सारी चीज़ें धीरे और चुपके से पढ़े[2], लेकिन इस तरह पढ़ना चाहिए कि खुद अपने कान में आवाज़ ज़रूर आये। अगर अपनी आवाज़ खुद अपने आप को भी सुनाई न दे, तो नमाज़ न होगी।

मस्अला 20—किसी नमाज़ के लिए सूरः मुक़र्रर न करे, बल्कि जो जी चाहे, पढ़ा करे, सूरः मुक़र्रर कर लेना मकरूह है।

मस्अला 21—दूसरी रक्अत में पहली रक्अत से ज़्यादा लम्बी सूरः न पढ़े।

मस्अला 22—सब औरतें अपनी–अपनी नमाज़ अलग–अलग पढ़ें, जमाअत से न पढ़े और जमाअत के लिए मस्जिद में जाना और वहां जा कर मर्दों के साथ नमाज़ पढ़ना न चाहिए। अगर कोई औरत अपने शौहर वग़ैरह किसी महरम के साथ जमाअत करके नमाज़ पढ़े, तो उसके मस्अले किसी से पूछ ले। चूंकि ऐसा मौक़ा कम होता है, इसलिए हमने बयान नहीं किए। हां, इतनी बात याद रखे कि अगर कभी ऐसा मौक़ा हो, तो किसी मर्द के बराबर

---

1. यानी तीन बार सुब्हानल्लाह कहने के बराबर चुपकी खड़ी रहे।
2. और मर्द भी जुहर व असर की नमाज़ में चुपके से पढ़ें और फज्र और मग़्रिब और ईशा में अगर इमाम है, तो ज़ोर से पढ़ें और अकेला हो तो अख़्तियार है, जिस तरह चाहे पढ़े।

हरगिज़ न खड़ी हो, बिल्कुल पीछे रहे, वरना उसकी नमाज़ भी ख़राब होगी और उस मर्द की नमाज़ भी बर्बाद हो जायेगी।

मस्अला 23—अगर नमाज़ पढ़ते में वुज़ू टूट जाये तो वुज़ू करके फिर से नमाज़ पढ़े।[1]

मस्अला 24—मुस्तहब यह है कि जब खड़ी हो तो अपनी निगाह सज्दे की जगह रखे और जब रुकूअ में जाये, तो पांवों पर निगाह रखे और जब सज्दा करे, तो नाक पर और सलाम फेरते वक़्त कंधों पर निगाह रखे और जब जम्हाई आये, तो मुंह ख़ूब बंद करे, अगर और किसी तरह न रुके, तो हाथ की हथेली के ऊपर की तरफ़ से रोके और जब गला सहलाये[2] तो जहां तक हो सके, खांसी को रोके और ज़ब्त करे।

क़ुरआन मजीद पढ़ने का बयान

मस्अला 1—क़ुरआन शरीफ़ को सही-सही पढ़ना वाजिब है। हर अक्षर को ठीक-ठीक पढ़े, और पूरी आवाज़ निकाल कर पढ़े।

मस्अला 2—अगर किसी से कोई अक्षर नहीं निकलता, तो सही पढ़ने की मश्क़ करना ज़रूरी है। अगर सही पढ़ने की मेहनत न करेगी, तो गुनाहगार होगी और उसकी कोई नमाज़ सही न होगी, हां, अगर मेहनत से भी दुरुस्ती न हो, तो मजबूरी है।

मस्अला 3—अगर सब अक्षर सही निकलते हैं, लेकिन ऐसी बे-परवाई से पढ़ती है कि एक ही आवाज़ निकलने के बजाय, दूसरे की निकलती है, सब गुनाहगार है और नमाज़ सही नहीं होती।

मस्अला 4—जो सूरः पहली रक्अत में पढ़ी है, वही सूरः दूसरी रक्अत में फिर पढ़ गई, तो भी कुछ हरज नहीं, लेकिन बे-ज़रूरत ऐसा करना बेहतर नहीं।

मस्अला 5—जिस तरह क़ुरआन मजीद में सूरतें आगे-पीछे लिखी हैं, नमाज़ में उसी तरह पढ़ना चाहिए। जिस तरह अम्म के सीपारे में लिखी है, उस तरह से न पढ़े यानी जब पहली रक्अत में कोई सूरः पढ़े, तो अब

---

1. चूंकि बिना की शर्तें व मसअले बहुत नाज़ुक हैं और इख़्तिलाफ़ी मसअला है, इसलिए वे सब मसअले छोड़ दिये गये हैं।
2. यानी गले के अंदर खुजुली होने लगे।

दूसरी रक्अत में उसके बाद वाली सूरः पढ़े, उसके पहले वाली सूरः न पढ़े, जैसे किसी ने पहली रक्अत में 'क़ुल या ऐयुहल् काफ़िरून' पढ़ी तो अब 'इज़ा जाअ' या 'क़ुल अऊज़ु बिरब्बिल् फ़लकि' या 'क़ुल अऊज़ु बिरबिन्नासि' पढ़े और अलम तर कैफ़' और 'लिइलाफ़ि' वग़ैरह उसके ऊपर की सूरतें न पढ़े कि इस तरह पढ़ना मकरूह है, लेकिन अगर भूले से इस तरह पढ़ जाये, जो मकरूह नहीं है।

मस्अला 6—जब कोई सूरः शुरू करे, तो बे-ज़रूरत उसको छोड़कर दूसरी सूरः शुरू करना मकरूह है।

मस्अला 7—जिसको नमाज़ बिल्कुल न आती हो या नई-नई मुसलमान हुई हो, वह सब जगह 'सुब्हानल्लाह-सुब्हानल्लाह' पढ़ती रहे तो फ़र्ज़ अदा हो जायेगा, लेकिन नमाज़ बराबर सीखती रहे। अगर नमाज़ सीखने में कोताही करेगी, तो बहुत गुनाहगार होगी।

नमाज़ तोड़ देने वाली चीज़ों का बयान

मस्अला 1—जान-बूझकर या भूले से नमाज़ में बोल उठी, तो नमाज़ जाती रही।

मस्अला 2—नमाज़ में 'आह' या 'ओह' या 'उफ़' या 'हाय' कहे या ज़ोर से रोये, तो नमाज़ जाती रहती है, हां, अगर जन्नत दोज़ख़ को याद करने से दिल भर आया और ज़ोर से आवाज़ निकल पड़ी या आह या उफ़ वग़ैरह निकली, तो नमाज़ नहीं टूटी।

मस्अला 3—बे-ज़रूरत खंखारने और गला साफ़ करने से, जिससे एक-आध लफ़्ज़ भी पैदा हो जाये, तो नमाज़ टूट जाती है, हां, मजबूरी के वक़्त खंखारना दुरुस्त है और नमाज़ नहीं जाती।

मस्अला 4—नमाज़ में छींक आई उस पर 'अलहम्दु लिल्लाह' कहा, तो नमाज़ नहीं गई, लेकिन कहना नहीं चाहिए और अगर किसी और को छींक आई और उसने नमाज़ में ही उसको 'यर्हमुकल्लाह' कहा, तो नमाज़ जाती रही।

मस्अला 5—क़ुरआन शरीफ़ में देख-देखकर पढ़ने से नमाज़ टूट जाती है।

मस्अला 6—नमाज़ में इतनी मुड़ गई कि सीना क़िब्ले की तरफ़ से फिर गया, तो टूट गई।

मस्‌अला 7—किसी के सलाम का जवाब दिया और 'व अलैकुमुस्सलाम' कहा, तो नमाज़ जाती रही।

मस्‌अला 8—नमाज़ के अंदर जूड़ा बांधा, तो नमाज़ जाती रही।

मस्‌अला 9—नमाज़ में कोई चीज़ खाई या कुछ खा-पी लिया तो नमाज़ जाती रही। यहां तक कि अगर एक तिल या धुरा उठाकर खा ले, तो भी नमाज़ टूट जायेगी, हां, अगर धुरा वग़ैरह कोई चीज़ दोतों में अटकी हुई थी, अब उसको निगल गई तो अगर चने से कम हो, तब तो नमाज़ हो गई। और अगर चने के बराबर या ज़्यादा हो, तो नमाज़ टूट गई।

मस्‌अला 10—मुंह में पान दबा हुआ है और उसकी पीक हलक़ में जाती रहे, तो नमाज़ नहीं हुई।

मस्‌अला 11—कोई मीठी चीज़ खाई, फिर कुल्ली करके नमाज़ पढ़ने लगी, लेकिन मुंह में उसका मज़ा कुछ बाक़ी है और थूक के साथ हलक़ में जाता है, तो नमाज़ सही है।

मस्‌अला 12—नमाज़ में कुछ ख़ुशख़बरी सुनी और उस पर 'अल्हम्दु लिल्लाहि' कह दिया या किसी की मौत की ख़बर सुनी, उस पर इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन० पढ़ा, तो नमाज़ जाती रही।

मस्‌अला 13—नमाज़ में बच्चे ने आकर दूध पी लिया, तो नमाज़ जाती रही। हां, अगर दूध नहीं निकला, तो नमाज़ नहीं गई।

मस्‌अला 14—कोई लड़का वग़ैरह गिर पड़ा, उसके गिरते वक़्त बिस्मिल्लाह कह दिया, तो नमाज़ जाती रही।

मस्‌अला 15—अल्लाहु अक्बर कहते वक़्त अ को बढ़ा दिया और अल्लाहु अक्बर कहा, तो नमाज़ जाती रही। इसी तरह अगर अक्बर के ब को बढ़ा कर पढ़ा और अल्लाहु अक्बर कहा, तो भी नमाज़ जाती रही।

मस्‌अला 16—किसी ख़त या किसी किताब पर नज़र पड़ी और उसको अपनी ज़ुबान से नहीं पढ़ा, लेकिन दिल ही दिल में मतलब समझ गई, तो नमाज़ नहीं टूटी, हां, अगर ज़ुबान से पढ़ ले तो नमाज़ जाती रहेगी।

मस्‌अला 17—नमाज़ी के सामने से अगर कोई चला जाये, या कुत्ता-बिल्ली, बकरी, वग़ैरह कोई जानवर निकल जाये, तो नमाज़ नहीं टूटी, लेकिन सामने से जाने वाले आदमी को बड़ा गुनाह होगा। इसलिए

ऐसी जगह नमाज़ पढ़ना चाहिए, जहां आगे से कोई न निकले और फिरने–चलने में लोगों को तक्लीफ़ न हो और अगर ऐसी अलग जगह कोई न हो, तो अपने सामने लकड़ी गाड़े, जो कम से कम एक हाथ लंबी और एक अंगुल मोटीं हो और उस लकड़ी के पास खड़ी हो और उसको बिल्कुल नाक के सामने न रखे, बल्कि दाहिनी या बायीं आंख के सामने रखे। अगर कोई लकड़ी न गाड़े, तो इतनी ही ऊंची कोई और चीज़ सामने रख ले, जैसे मोंढा, तो अब सामने से जाना दुरुस्त है, कोई गुनाह न होगा।

मस्‌अला 18—किसी ज़रूरत की वजह से अगर क़िब्ला की तरफ़ आधा क़दम आगे बढ़ गई या पीछे हट गई, लेकिन सीना क़िब्ले की तरफ़ नहीं फिरा, तो नमाज़ दुरुस्त हो गई, लेकिन अगर सज्दे की जगह से आगे बढ़ जायेगी, तो नमाज़ न होगी।

जो चीज़ें नमाज़ में मकरूह और मना हैं उनका बयान

मस्‌अला 1—मकरूह वह चीज़ है, जिससे नमाज़ तो नहीं टूटती, लेकिन सवाब कम हो जाता है और गुनाह होता है।

मस्‌अला 2—अपने कपड़े या बदन या ज़ेवर से खेलना या कंकरियों को हटाना मकरूह है। हां, अगर कंकरियों की वजह से सज्दा न कर सके, तो एक–दो मर्तबा हाथ से बराबर कर देना और हटा देना दुरुस्त है।

मस्‌अला 3—नमाज़ में उंगलियां चटख़ाना और कूल्हे पर हाथ रखना और दाहिने–बायें मुंह मोड़ के देखना, यह सब मकरूह है, हां, अगर कनखियों से कुछ देखे और गरदन न फेरे तो ऐसा करना मकरूह तो नहीं है, लेकिन बिला सख़्त ज़रूरत के ऐसा करना भी अच्छा नहीं है।

मस्‌अला 4—नमाज़ में दोनों पैर खड़े रखकर बैठना या चार ज़ानू बैठना या कुत्ते की तरह बैठना, यह सब मकरूह है। हां, दुख–बीमारी की वजह से, जिस तरह बैठने का हुक्म है, उस तरह न बैठ सके तो, जिस तरह बैठ सके, बैठ जाये। उस वक़्त कुछ मकरूह नहीं है।

मस्‌अला 5—सलाम के जवाब में हाथ उठाना और हाथ से सलाम का जवाब देना मकरूह है और अगर ज़ुबान से जवाब दिया तो नमाज़ टूट गई, जैसा कि ऊपर बयान हो चुका है।

मस्अला 6—नमाज़ में इधर-उधर से अपने कपड़े को समेटना और संभालना कि मिट्टी से न भरने पाये, मकरूह है।

मस्अला 7—जिस जगह यह डर हो कि नमाज़ में हंसा देगा, ख़्याल हट जायेगा, तो नमाज़ में भूल-चूक हो जायेगी, ऐसी जगह नमाज़ पढ़ना मकरूह है।

मस्अला 8—अगर कोई आगे बैठी बातें कर रही हो, या किसी और काम में लगी हो तो उसके पीछे उसकी पीठ की तरफ़ मुंह करके नमाज़ पढ़ना मकरूह नहीं है। लेकिन अगर बैठने वाली को इससे तक्लीफ़ हो और वह उस रूक जाने से घबराये तो ऐसी हालत में किसी के पीछे नमाज़ न पढ़े या वह इतने ज़ोर-ज़ोर से बातें करती हो कि नमाज़ में भूल जाने का डर है, तो तो वहां नमाज़ न पढ़ना चाहिए, मकरूह है और किसी के मुंह की तरफ़ मुंह कर के नमाज़ पढ़ना मकरूह है।

मस्अला 9—अगर नमाज़ी के सामने क़ुरआन शरीफ़ या तलवार लटकी हो, तो इसका कुछ हरज नहीं है।

मस्अला 10—जिस फ़र्श पर तस्वीरें बनी हों, उस पर नमाज़ हो जाती है, लेकिन तस्वीर पर सज्दा न करे और तस्वीरदार जो नमाज़ में रखना मकरूह है और तस्वीर का घर में रखना बड़ा गुनाह है।

मस्अला 11—अगर तस्वीर सर के ऊपर हो यानी छत में या छतरी में तस्वीर बनी हो या आगे की तरफ़ को हो, या दाहिनी तरफ़ या बायीं तरफ़ हो, तो नमाज़ मकरूह है और अगर पैर के नीचे हो तो नमाज़ मकरूह नहीं, लेकिन अगर बहुत छोटी तस्वीर हो कि अगर ज़मीन पर रख दे तो खड़े होकर दिखाई दे या पूरी तस्वीर न हो बल्कि सर कटा हुआ और मिटा हो, तो इसका कुछ हरज नहीं। ऐसी तस्वीर से किसी सूरत में नमाज़ मकरूह नहीं होती, चाहे जिस तरह हो।

मस्अला 12—तस्वीरदार कपड़ा पहन कर नमाज़ पढ़ना मकरूह है।

मस्अला 13—पेड़ या मकान वगैरह, किसी बे-जान चीज़ का नक़्श बना हो, तो वह मकरूह नहीं है।

मस्अला 14—नमाज़ के अंदर आयतों का या किसी चीज़ का उंगलियों पर गिनना मकरूह है, हां अगर उंगलियों को दबा कर गिनती याद रखे तो कुछ हरज नहीं।

मस्अला 15—दूसरी रक्अत को पहली रक्अत से ज़्यादा लम्बी

करना मकरूह है।

मस्अला 16—किसी नमाज़ में कोई सूरः मुक़र्रर कर लेना कि हमेशा वही पढ़ा करे, कोई और सूरः कभी न पढ़े, यह बात मकरूह है।

मस्अला 17—कंधे पर रूमाल डाल कर नमाज़ पढ़ना मकरूह है।

मस्अला 18—बहुत बुरे और मैले-कुचैले कपड़े पहन कर नमाज़ पढ़ना मकरूह है। और अगर दूसरे कपड़े न हो तो जायज़ है।

मस्अला 19—पैसा-कौड़ी वग़ैरह कोई चीज़ मुंह में लेकर नमाज़ पढ़ना मकरूह है। और अगर ऐसी चीज़ हो कि नमाज़ में क़ुरआन शरीफ़ वग़ैरह नहीं पढ़ सकती, तो नमाज़ नहीं हुई, टूट गई।

मस्अला 20—जिस वक़्त पेशाब-पाख़ाना ज़ोर से लगा हो, ऐसे वक़्त नमाज़ पढ़ना मकरूह है।

मस्अला 21—जब बहुत भूख लगी हो और खाना तैयार हो तो पहले खाले, तब नमाज़ पढ़े। बे-खाना खाये नमाज़ पढ़ना मकरूह है। हां, अगर वक़्त तंग होने लगे, तो पहले नमाज़ पढ़ ले।

मस्अला 22—आंखें बंद करके नमाज़ पढ़ना बेहतर नहीं है। लेकिन आंख बंद करने से नमाज़ में दिल ख़ूब लगे, तो बंद करके पढ़ने में कोई बुराई नहीं।

मस्अला 23—बे-ज़रूरत नमाज़ में थूकना और नाक साफ़ करना मकरूह है और अगर ज़रूरत पड़े, तो दुरूस्त है। जैसे किसी को खांसी आई और मुंह से बल्ग़म आ गया, तो अपने बाईं तरफ़ थूक दे या कपड़े में लेकर मल डाले और दाहिनी तरफ़ और क़िब्ले की तरफ़ न थूके।

मस्अला 24—नमाज़ में कठमल ने काट खाया, तो उसको पकड़ के छोड़ दे, नमाज़ पढ़ने में मारना अच्छा नहीं। और अगर खटमल ने अभी काटा नहीं है, तो उसको न पकड़े। बे-काटे पकड़ना भी मकरूह है।

मस्अला 25—फ़र्ज़ नमाज़ में बे-ज़रूरत दीवार वग़ैरह किसी चीज़ के सहारे खड़ा होना मकरूह है।

मस्अला 26—अभी सूरः पूरी ख़त्म नहीं हुई, दो-एक कलमे रह गये थे कि जल्दी के मारे रूकूअ में चली गई और सूरः को रूकूअ में जा कर ख़त्म किया, तो मकरूह हुई।

मस्अला 27—अगर सज्दे की जगह पैर से ऊंची हो, जैसे कोई दहलीज़ पर सज्दा करे, तो देखो कितनी ऊंची है। अगर एक बालिश्त से ज़्यादा ऊंची है, तो नमाज़ दुरूस्त न होगी और अगर एक बालिश्त या इससे

कम है, तो नमाज़ दुरूस्त है। लेकिन बे–ज़रूरत ऐसा करना मकरूह है।

जिन वजहों से नमाज़ का तोड़ देना दुरूस्त है, उसका बयान

मस्अला 1—नमाज़ पढ़ने में रेल चल दे और उस पर अपना अस्बाब रखा हुआ है, या बाल बच्चे सवार हैं, तो नमाज़ तोड़ के बैठ जाना दुरूस्त है।

मस्अला 2—सामने सांप आ गया, तो उसके डर से नमाज़ का तोड़ देना दुरूस्त है।

मस्अला 3—नमाज़ में किसी ने जूती उठा ली और डर है कि अगर नमाज़ न तोड़ेगी, तो लेकर भाग जायेगा, तो उसके लिए नमाज़ तोड़ देना दुरूस्त है।

मस्अला 4—रात को मुर्ग़ी खुली रह गई और बिल्ली उसके पास आ गई, तो उसके ख़ौफ़ से नमाज़ तोड़ देना दुरूस्त है।

मस्अला 5—कोई नमाज़ में है और हांडी उबलने लगी, जिस की लागत तीन–चार आना है, तो नमाज़ तोड़ कर उसको दुरूस्त कर देना जायज़ है, मतलब यह है कि जब ऐसी चीज़ के बर्बाद हो जाने या ख़राब हो जाने का डर है, जिसकी क़ीमत तीन–चार आना हो, तो उसकी हिफ़ाज़त के लिए नमाज़ का तोड़ देना दुरूस्त है।

मस्अला 6—अगर नमाज़ में पेशाब या पाख़ाना ज़ोर करे, तो नमाज़ तोड़ दे और फ़ारिग़ होकर फिर पढ़े।

मस्अला 7—कोई अंधी औरत या मर्द जा रहा है और आगे कुआं है और उसमें गिर पड़ने का डर है, उसके बचाने के लिए नमाज़ का तोड़ देना फ़र्ज़ है। अगर नमाज़ नहीं तोड़ी और वह गिर के मर गया, तो गुनाहगार होगी।

मस्अला 8—किसी बच्चे वग़ैरह के कपड़ों में आग लग गई और वह जलने लगा, तो उसके लिए भी नमाज़ तोड़ देना फ़र्ज़ है।

मस्अला 9—मां–बाप, दादा–दादी, नाना–नानी किसी मुसीबत की वजह से पुकारें, तो फ़र्ज़ नमाज़ को तोड़ देना वाजिब है, जैसे किसी का बाप–मां वग़ैरह बीमार है और पाख़ाना वग़ैरह किसी ज़रूरत से गया और

आते में या जाते में पैर फिसल गया और गिर पड़ा, तो नमाज़ तोड़ के उसे उठा ले, लेकिन अगर कोई और उठाने वाला हो, तो बे–ज़रूरत नमाज़ न तोड़े।

मस्अला 10—और अभी गिरी भी नहीं है, लेकिन गिरने का डर है और उसने उसको पुकारा, तब भी नमाज़ तोड़ दे।

मस्अला 11—और अगर किसी ऐसी ज़रूरत के लिए नहीं पुकारा, यों ही पुकारा है, तो फ़र्ज़ नमाज़ का तोड़ देना दुरुस्त नहीं।

मस्अला 12—और अगर नफ़्ल या सुन्नत पढ़ती हो, उस वक़्त मां–बाप, दादा–दादी, नाना–नानी, पुकारें, लेकिन यह उनको मालूम नहीं है कि फ़लानी नमाज़ पढ़ रही है, तो ऐसे वक़्त भी नमाज़ को तोड़कर उनको बात का जवाब देना वाजिब है, चाहे किसी मुसीबत से पुकारें और चाहे बे–ज़रूरत पुकारें, दोनों का एक हुक्म है। अगर नमाज़ तोड़ के न बोले, तो गुनाह होगा। और अगर वे जानते हों कि नमाज़ पढ़ती है, फिर भी पुकारें, तो नमाज़ न तोड़े, लेकिन अगर किसी ज़रूरत से पुकारें और उनको सख़्त तक्लीफ़ होने का डर हो, तो नमाज़ तोड़ दे।

वित्र नमाज़ का बयान

मस्अला 1—वित्र की नमाज़ वाजिब है और वाजिब दर्जा क़रीब–क़रीब फ़र्ज़ के बराबर है, छोड़ देने से बड़ा गुनाह होता है और अगर कभी छूट जाये, तो जब मौक़ा मिले, तुरन्त उसकी क़ज़ा पढ़नी चाहिए।

मस्अला 2—वित्र की तीन रक्अतें हैं। दो रक्अत पढ़ के बैठे और अत्तहीयात पढ़ी और दरूद बिल्कुल न पढ़े, बल्कि अत्तहीयात पढ़ चुकने के बाद तुरन्त उठ खड़ी हो, और अलहम्दु और सूरः पढ़कर अल्लाहु अक्बर कहे और कंधे तक हाथ उठाये,[1] और फिर बांध ले, फिर दुआ–ए–क़ुनूत पढ़ के रुकूअ करे और तीसरी रक्अत पर बैठ कर अत्तहीयात और दरूद शरीफ़ और दुआ पढ़कर सलाम फेरे।

मस्अला 3—दुआ–ए–क़ुनूत यह है—

اَللّٰهُمَّ اِنَّا نَسْتَعِيْنُكَ وَنَسْتَغْفِرُكَ وَنُؤْمِنُ بِكَ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْكَ وَنُثْنِيْ عَلَيْكَ الْخَيْرَ وَنَشْكُرُكَ وَلَا نَكْفُرُكَ وَنَخْلَعُ وَنَتْرُكُ مَنْ يَّفْجُرُكَ ط اَللّٰهُمَّ اِيَّا

1. मर्द कान की लौ तक हाथ उठायें।

نَعْبُدُ وَلَكَ نُصَلِّيْ وَنَسْجُدُ وَاِلَيْكَ نَسْعٰى وَنَحْفِدُ وَنَرْجُوْا رَحْمَتَكَ وَنَخْشٰى عَذَابَكَ اِنَّ عَذَابَكَ بِالْكُفَّارِ مُلْحِقٌ ۝

अल्लाहुम्म इन्ना नस्तईनुक व नस्तग़िफ़रूक व नुअ्मिनु बिक व नतवक्कलु अलैक व नुस्नी अलैकल् ख़ैर व नश्कुरूक व ला नक्फ़ुरूक व नख़्लअु व नत्रुकु मंय्यफ़्जुरूक अल्लाहुम्म ईयाक नअ्बुदु व लक नुसल्ली व नस्जुदु व इलैक नस्आ व नहि्फ़दु व नर्जू रहम त क व नख़्शा अज़ाबक इन्न अज़ाबक बिल्कुफ़्फ़ारि मुल्हिक़०

मस्अला 4—वित्र की तीनों रक्अतों में अल्हम्दु के साथ सूरः मिलाना चाहिए, जैसा कि अभी बयान हो चुका है।

मस्अला 5—अगर तीसरी रक्अत में दुआ–ए–क़ुनूत पढ़ना भूल गई और जब रुकूअ में चली गई, तब याद आ गया, तो अब दुआ–ए–क़ुनूत न पढ़े, बल्कि नमाज़ के ख़त्म पर सह्व का सज्दा करे और अगर रुकूअ छोड़कर उठ खड़ी हो और दुआ–ए–क़ुनूत पढ़ ले, तब भी ख़ैर नमाज़ हो गई, लेकिन ऐसा न करना चाहिए था और सह्व का सज्दा इस सूरत में वाजिब है।

मस्अला 6—अगर भूले से पहली या दूसरी रक्अत में दुआ–ए–क़ुनूत पढ़ गई, तो उसका कुछ एतबार नहीं है। तीसरी रकअत में फिर पढ़ना चाहिए और सह्व का सज्दा भी करना पड़ेगा।

मस्अला 7—जिसको दुआ–ए–क़ुनूत याद न हो, यह पढ़ लिया करे

رَبَّنَا اٰتِنَا فِي الدُّنْيَا حَسَنَةً وَّفِي الْاٰخِرَةِ حَسَنَةً وَّقِنَا عَذَابَ النَّارِ

रब्बना आतिना फ़िद्दुन्या ह स न तंव्व फ़िल आख़िरति ह स नतंव्व क़िना अज़ाबन्नारि० या तीन बार यह कह ले—

अल्लहुम्मग़्फ़िरली اَللّٰهُمَّ اغْفِرْ لِيْ
या तीन बार— يَا رَبِّ يَا رَبِّ يَا رَبِّ
या रब्बि या रब्बि या रब्बि कह ले तो नमाज़ हो जायेगी।

सुन्नत और नफ़्ल नमाज़ों का बयान

मस्अला 1—फ़ज्र के वक़्त फ़र्ज़ से पहले दो रक्अत नमाज़ सुन्नत है। हदीस में इसकी बड़ी ताकीद आई है। कभी इसको न छोड़े। अगर किसी

दिन देर हो गई और नमाज़ का वक़्त बिल्कुल आख़िरी हो गया, तो ऐसी मजबूरी के वक़्त सिर्फ़ दो रक्अत फ़र्ज़ पढ़ ले, लेकिन जब सूरज निकल आये और ऊंचा हो जाये, तो सुन्नत की दो रक्अत क़ज़ा पढ़ ले।

मस्अला 2—जुहर के वक़्त पहले चार रक्अत सुन्नत पढ़े, फिर चार रक्अत फ़र्ज़, फिर दो रक्अत सुन्नत। जुहर के वक़्त की ये छः रक्अतें भी ज़रूरी हैं। इनके पढ़ने की बहुत ताकीद आई है। वे–वजह छोड़ देने से गुनाह होता है।

मस्अला 3—अस्र के वक़्त पहले चार रक्अत सुन्नत पढ़े, फिर चार रक्अत फ़र्ज़ पढ़े, लेकिन अस्र के वक़्त की सुन्नतों की ताकीद नहीं है। अगर काई न पढ़े, तो भी कोई गुनाह नहीं होता और जो कोई पढ़े, उसको बहुत सवाब मिलता है।

मस्अला 4—मग़्रिब के वक़्त पहले तीन रक्अत फ़र्ज़ पढ़े, फिर दो रक्अत सुन्नत पढ़े। ये सुन्नतें भी ज़रूरी हैं, न पढ़ने से गुनाह होगा।

मस्अला 5—इशा के वक़्त बेहतर और मुस्तहब यह है कि पहले चार रक्अत सुन्नत पढ़े, फिर चार रक्अत फ़र्ज़, फिर दो रक्अत सुन्नत पढ़े, फिर अगर जी चाहे, तो दो रक्अत नफ़्ल भी पढ़ ले। इस हिसाब से इशा की छः रक्अत सुन्नत हुई और अगर कोई इतनी रक्अतें न पढ़े, तो पहले चार रक्अत फ़र्ज़ पढ़े, फिर दो रक्अत सुन्नत पढ़े, फिर वित्र पढ़े। इशा के बाद दो रक्अतें पढ़ना ज़रूरी हैं न पढ़ेगी तो गुनाहगार होगी।

मस्अला 6—रमज़ान शरीफ़ के महीने में तरावीह की नमाज़ भी सुन्नत है, इसकी भी ताकीद आई है, इसका छोड़ देना और न पढ़ना गुनाह है औरतें तरावीह की नमाज़ अक्सर छोड़ देती हैं, ऐसा हरगिज़ न करना चाहिए। इशा के फ़र्ज़ और दो सुन्नतों के बाद बीस रक्अत तरावीह पढ़ना चाहिए। दो रक्अत की नीयत बांधे, चाहे[1] चार रक्अत की, मगर दो–दो

---

1. मराक़ी उल्ल् फ़लाह में है कि हर दो रक्अत पढ़कर सलाम फेरे और अगर मिलायें यानी दो रक्अत से ज़्यादा एक सलाम में पढ़ें, अगर हर दो रक्अत पर अत्तहीयात पढ़े तो दुरुस्त है। ज़्यादा सही क़ौल यह है कि जान–बुझ कर ऐसा करना मकरूह है और तरावीह सही हो जायेगी। सब रक्अतें हिसाब में गिनी जायेंगी और अगर हर दो रक्अत पर न बैठे, सिर्फ़ आख़िर में बीस रक्अत पूरा करके या चार रक्अत पर बैठे, तो बीस रक्अत महसूब हो जायेगी (समझा जायेगा)

रक्अत पढ़ना ज़्यादा बेहतर है। जब बीसों रक्अत पढ़ ले, तो फिर वित्र पढ़े।

फ़ायदा जिन सुन्नतों को पढ़ना ज़रूरी है, वह 'सुन्नत मुअक्कदा' कहलाती हैं और रात–दिन में ऐसी सुन्नतें बारह हैं—दो फ़ज्र की, चार जुहर से पहले, दो जुहर के बाद, दो मग़्रिब के बाद और दो इशा के बाद और रमज़ान में तरावीह। कुछ आलिमों ने तहज्जुद को भी मुअक्कदा में गिना है।

मस्अला 7—इतनी नमाज़ें तो शरह की तरफ़ से मुक़र्रर हैं। अगर इससे ज़्यादा पढ़ने को किसी का दिल चाहे, तो जितना चाहे ज़्यादा पढ़े और जिस वक़्त चाहे पढ़े। इतना ख़्याल रखे कि जिन वक़्तों में नमाज़ पढ़ना मकरूह है, उस वक़्त न पढ़े और सुन्नत के अलावा जो कुछ पढ़ेगी, उसको नफ़्ल कहते हैं। जितनी ज़्यादा नफ़्लें पढ़ेगी उतना ही ज़्यादा सवाब मिलेगा। इसकी कोई हद नहीं है। कुछ खुदा के बंदे ऐसे हुए हैं कि सारी रात नफ़्लें पढ़ा करते थे और बिल्कुल नहीं सोते थे।

मस्अला 8—यानी नीचे दी हुई नफ़्लों का सवाब बहुत ज़्यादा होता है। इसलिए और नफ़्लों से इनका पढ़ना बेहतर है कि थोड़ी–सी मेहनत में बहुत सवाब मिलता है। वे यह हैं तहीयतुल वुज़ू, इश्राक़, चाश्त, अव्वाबीन, तहज्जुद, सलातुत्तस्बीह।

मस्अला 9—तहीयतुल वुज़ू इसको कहते हैं कि जब कभी वुज़ू करे तो वुज़ू के बाद दो रक्अत नफ़्ल पढ़ लिया करे। हदीस शरीफ़ में इसकी बड़ी बड़ाई बयान हुई है, लेकिन जिस वक़्त नफ़्ल नमाज़ मकरूह है, उस वक़्त न पढ़े।

मस्अला 10—इश्राक़ की नमाज़ का यह तरीक़ा है कि जब फ़ज्र की नमाज़ पढ़ चुके तो जा–ए–नमाज़ पर से न उठे। उसी जगह बैठे–बैठे दरूद शरीफ़ या कलमा या कोई और वज़ीफ़ा पढ़ती रहे और अल्लाह की याद में लगी रहे, दुनिया की कोई बातचीत न करे, न दुनिया का कोई काम करे। जब सूरज निकल आये, ऊंचा हो जाये तो दो रक्अत या चार रक्अत पढ़ ले तो एक हज और एक उमरा का सवाब मिलता है और अगर फ़ज्र की नमाज़ के बाद किसी दुनिया के धंधे में लग गई, फिर सूरज ऊंचा हो जाने के बाद इश्राक़ की नमाज़ पढ़ी तो भी दुरूस्त है, लेकिन सवाब कम हो जायेगा।

मस्अला 11—फिर जब सूरज ख़ूब ज़्यादा ऊंचा हो जाये और धूप तेज़ हो जाये, तब कम से कम दो रक्अत पढ़े या इससे ज़्यादा पढ़े यानी

चार रक्अत, आठ रक्अत या बारह रक्अत पढ़े, इसको चाश्त कहते हैं। इसका भी बहुत सवाब है।

मस्अला 12—मग़्रिब के फ़र्ज़ और सुन्नतों के बाद कम से कम छः रक्अतें और ज़्यादा से ज़्यादा बीस रक्अतें पढ़े, इसको अव्वाबीन कहते हैं।

मस्अला 13—आधी रात को उठकर नमाज़ पढ़ने का बड़ा ही सवाब है, इसी को तहज्जुद कहते हैं। यह नमाज़ अल्लाह तआला के नज़दीक बहुत मक्बूल है और सबसे ज़्यादा इसका सवाब मिलता है। तहज्जुद की कम से कम चार रक्अतें और ज़्यादा से ज़्यादा बारह रक्अतें हैं। आधी रता को हिम्मत न हो, तो इशा के बाद पढ़ ले, मगर वैसा सवाब न होगा। इसके अलावा भी रात-दिन जितनी पढ़नी चाहें, नफ़्लें पढ़े।

मस्अला 14—सलातुत्तस्बीह का हदीस शरीफ़ में बड़ा सवाब आया है और इसके पढ़ने से बहुत ज़्यादा सवाब मिलता है। हज़रत मुहम्मद सल्ल० ने अपने चचा हज़रत अब्बास रज़ि० को यह नमाज़ सिखाई थी और फ़रमाया था कि इसके पढ़ने से तुम्हारे सब गुनाह अगले-पिछले, नये- पुराने, छोटे-बड़े सब माफ़ हो जायेंगे और फ़रमाया था कि अगर हो सके तो हर रोज़ यह नमाज़ पढ़ लिया करो और हर रोज़ न हो सके, तो हफ़्ते में एक बार पढ़ लिया करो। अगर हफ़्ते में न हो सके तो हर महीने में पढ़ लिया करो और हर महीने न हो सके तो हर साल में एक बार पढ़ लो। अगर यह भी न हो सके, तो उम्र भर में एक बार पढ़ लो।

नमाज़ पढ़ने का तरीक़ा यह है कि चार रक्अत की नीयत बांधे। और सुब्हानकल्लाहुम्म और अलहम्दु और सूरः जब पढ़ चुके तो रुकूअ से पहले ही पन्द्रह बार यह पढ़े—

سُبْحَانَ اللّٰهِ وَالْحَمْدُ لِلّٰهِ وَلَآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَاللّٰهُ اَكْبَرُ

सुब्हानल्लाहि वल् हम्दु लिल्लाहि व ला इलाह इल्लल्लाहु वललाहु अक्बर०

फिर रुकूअ में जाये और 'सुब्हान रब्बियल् अज़ीम०' कहने के बाद दस बार फिर यही पढ़े। फिर रुकूअ से उठे और समिअल्लाहुलिमन् हमिदह् के बाद फिर दस बार पढ़े, फिर सज्दे में जाये। और सुब्हान रब्बियल् आला के बाद फिर दस बार पढ़े। फिर सज्दे से उठके दस बार दूसरा सज्दा करे, इसमें भी दस बार पढ़े, फिर सज्दे से उठकर बैठे और दस बार पढ़ के दूसरी रक्अत के लिए खड़ी हो।

इसी तरह दूसरी रक्अत पढ़े और जब दूसरी रक्अत में अत्तहीयात के लिए बैठे, तो पहले वही दुआ दस बार पढ़ ले, तब अत्तहीयात पढ़े। इसी तरह चारों रक्अते पढ़े।

मस्अला 15—इन चारों रक्अतों में जो सूरः चाहे पढ़े, कोई सूरः तै नहीं है।

फ़स्ल

मस्अला 1—दिन को नफ़्लें पढ़े तो चाहे दो रक्अत की नीयत बांधे और चाहे चार–चार रक्अत की नीयत बांधे और दिन को चार रक्अत से ज़्यादा नीयत बांधना मकरूह है और अगर रात को एक दम से छः–छः या आठ–आठ रक्अत की नीयत बांध ले, तो भी दुरूस्त है और इससे ज़्यादा की नीयत बांधना रात को भी मकरूह है।

मस्अला 2—अगर चार रक्अतों की नीयत बांधे और चारों पढ़नी भी चाहे तो जब दो रक्अत पढ़ के बैठे, उस वक़्त अख़्तियार है, चाहे अत्तहीयात के बाद दरूद शरीफ़ और दुआ भी पढ़े, फिर बे–सलाम फेरे उठ खड़ी हो, फिर तीसरी रक्अत पर 'सुब्हानकल्लाहुम्म' पढ़ के 'अऊजु' और 'बिस्मिल्लाहि' और 'अल्हम्दु' से शुरू कर दे, फिर चौथी रक्अत पर बैठकर अत्तहीयात वग़ैरह सब पढ़कर सलाम फेरे और अगर आठ रक्अत की नीयत बांधी है और आठों रक्अतें एक सलाम से पूरी करना चाहे, तो चौथी रक्अत पर सलाम न फेरे और इसी तरह दोनों बातें अब भी दुरूस्त है, चाहे अत्तहीयात और दरूद शरीफ़ और दुआ पढ़के खड़ी हो जाये और फिर सुब्हानकल्लाहुम्म पढ़े और चाहे सिर्फ़ अत्तहीयात पढ़ कर खड़ी होकर बिस्मिल्लाह और अलहम्दु लिल्लाह से शुरू कर दे और इसी तरह छठी रक्अत में बैठकर भी चाहे अत्तहीयात दुआ सब कुछ पढ़के खड़ी हो, फिर सुब्हानकल्लाहुम्म पढ़े और चाहे सिर्फ़ अत्तहीयात पढ़के खड़ी होकर बिस्मिल्लाह और अल्हम्दु लिल्लाह शुरू कर दे और आठवीं रक्अत में बैठकर सब कुछ पढ़कर सलाम फेरे। इसी तरह हर दो रक्अत पर इन दोनों बातों का अख़्तियार है।

मस्अला 3—सुन्नत और नफ़्ल की सब रक्अतों में अल्हम्दु के साथ सूरः मिलाना वाजिब है। अगर जानते–बूझते सूरः न मिलायेगी, तो गुनाहगार होगी और अगर भूल गई तो सह्व का सज्दा करना पड़ेगा और सह्व के सज्दे का बयान आगे आयेगा।

मस्अला 4—नफ़्ल नमाज़ की जब किसी ने नीयत बांध ली, तो अब उसका पूरा करना वाजिब हो गया। अगर तोड़ देगी, तो गुनाहगार होगी

और जो नमाज़ तोड़ी है, उसकी क़ज़ा पढ़नी पड़ेगी, लेकिन नफ़्ल की हर दो रक्अत अलग–अलग है। अगर चार या छः रक्अत की नीयत बांधे, तो सिर्फ़ दो ही रक्अत का पूरा करना वाजिब हुआ, चारों रक्अतें वाजिब नहीं हुईं। बस अगर किसी ने चार रक्अत नफ़्ल की नीयत की, फिर दो रक्अत पढ़के सलाम फेर दिया, तो कुछ गुनाह नहीं।

मस्अला 5—अगर किसी ने चार रक्अत की नीयत बांधी और अभी दो रक्अतें पूरी न हुई थीं कि नमाज़ तोड़ दी, तो सिर्फ़ दो रक्अत की क़ज़ा पढ़े।

मस्अला 6—और अगर चार रक्अत की नीयत बांधी और दो रक्अत पढ़ चुकी, तीसरी या चौथी में नीयत तोड़ दी, तो अगर दूसरी रक्अत पर नहीं बैठी, बे–अत्तहीयात पढ़े भूले से खड़े हो गई या जान–बूझ कर खड़ी हो गई, तो पूरी चारों रक्अतों की क़ज़ा पढ़े।

मस्अला 7—ज़ुहर की चार रक्अत सुन्नत की नीयत अगर टूट जाये तो पूरी चार रक्अतें फिर से पढ़े, चाहे दो रक्अत पर बैठकर अत्तहीयात पढ़ी हो या न पढ़ी हो।

मस्अला 8—नफ़्ल नमाज़ बैठकर पढ़ना भी दुरुस्त है, लेकिन बैठकर पढ़ने से आधा सवाब मिलता है, इसलिए खड़े होकर पढ़ना बेहतर है। इस में वित्र के बाद की नफ़्लें भी आ गयीं, हां, बीमारी की वजह से खड़ी न हो सके, तो पूरा सवाब मिलेगा और फ़र्ज़ नमाज़ और सुन्नत, जब तक मजबूरी न हो, बैठकर पढ़ना दुरुस्त नहीं।

मस्अला 9—अगर नफ़्ल नमाज़ को बैठकर शुरू किया, फिर कुछ बैठे–बैठे पढ़कर खड़ी हो गई, यह भी दुरुस्त है।

मस्अला 10—नफ़्ल नमाज़ खड़े होकर शुरू की, फिर पहली ही रक्अत या दूसरी रक्अत में बैठ गई, यह भी दुरुस्त है।

मस्अला 11—नफ़्ल नमाज़ खड़े–खड़े पढ़ी, लेकिन कमज़ोरी की वजह से थक गई, तो किसी लाठी या दीवार की टेक लगा लेना और उसके सहारे से खड़ा होना भी दुरुस्त है, मकरूह नहीं।

इस्तिख़ारे की नमाज़ का बयान

मस्अला 1—जब कोई काम करने का इरादा करे, तो अल्लाह मियां से सलाह ले ले। इस सलाह लेने को इस्तिख़ारा कहते हैं। हदीस

शरीफ़ में ऐसा करने पर बहुत उभारा गया है। प्यारे नबी सल्ल० ने फ़रमाया है कि अल्लाह तआला से सलाह न लेना और इस्तिख़ारा न करना बदबख़्ती और कम–नसीबी की बात है, कहीं मंगनी करे या ब्याह करे या सफ़र करे या और कोई काम करे, तो बे–इस्तिख़ारा किये न करे तो इन्शाअल्लाहु तआला कभी अपनें किये पर शर्मिंदा न होगी।

मस्अला 1—इस्तिख़ारा की नमाज़ का यह तरीक़ा है कि पहले दो रक्अत नफ़्ल नमाज़ पढ़े, इसके बाद ख़ूब दिल लगा कर यह दुआ पढ़े—

اَللّٰهُمَّ اِنِّیْ اَسْتَخِيْرُكَ بِعِلْمِكَ وَاَسْتَقْدِرُكَ بِقُدْرَتِكَ وَاَسْئَلُكَ مِنْ
فَضْلِكَ الْعَظِيْمِ فَاِنَّكَ تَقْدِرُ وَلَا اَقْدِرُ وَتَعْلَمُ وَلَا اَعْلَمُ وَاَنْتَ عَلَّامُ الْغُيُوْبِ اَللّٰهُمَّ
اِنْ كُنْتَ تَعْلَمُ اَنَّ هٰذَا الْاَمْرَ خَيْرٌ لِّيْ فِيْ دِيْنِيْ وَمَعَاشِيْ وَعَاقِبَةِ اَمْرِيْ فَاقْدُرْهُ لِيْ
وَيَسِّرْهُ لِيْ ثُمَّ بَارِكْ لِيْ فِيْهِ وَاِنْ كُنْتَ تَعْلَمُ اَنَّ هٰذَا الْاَمْرَ شَرٌّ لِّيْ فِيْ دِيْنِيْ
وَمَعَاشِيْ وَعَاقِبَةِ اَمْرِيْ فَاصْرِفْهُ عَنِّيْ وَاصْرِفْنِيْ عَنْهُ وَاقْدُرْ لِيَ الْخَيْرَ حَيْثُ
كَانَ ثُمَّ اَرْضِنِيْ بِهٖ —— هٰذَا الْاَمْرَ

अल्लाहुम्म इन्नी अस्तख़ीरुक बिअिल्मिक व अस्तक़्दिरुक बिक़ुद्रतिक व अस्अलुक मिन् फ़ज़्लिकल् अज़ीमि फइन्नक ताक़्दिरु व ला आक़्दिरु व तअ्लमु व ला अअ्लमु व अन्त अल्लामुल् गुयूबि अल्लाहुम्म इन् कुन्तु तअ्लमु अन्न 'हाज़लअम्र' ख़ैरुल्ली फ़ी दीनी व मआशी व आक़िबति अम्ररी फ़क़्दुरहु ली व यस्सिर्हुली सुम्म बारिकली फ़ीहि व इन् कुन्त तअ्लमु अन्न 'हाज़ल अम्र' शर्रुल्ली फ़ी दीनी व मआशी व आक़िबति अम्री फ़स्रिफ़्हु अन्नी व स्रिफ़्ली अन्हु व अक़्दिर लियल् जब सो कर उठे, उस वक़्त जो बात दिल में मज़बूती से आये, ख़ैर हैसु कान सुम्म अर्ज़िनी बिही।

और जब 'हाज़ल अम्र' पर पहुंचे, तो उसके पढ़ते वक़्त उसी काम का ध्यान कर ले, जिसके लिए इस्तिख़ारा करना चाहती है। इसके बाद पाक व साफ़ बिछौने पर क़िब्ले की तरफ़ मुंह कर के बा–वुज़ू सो जाये। जब सो कर उठे, उस वक़्त जो बात दिल में मज़बूती से आये, वही बेहतर है, उसी को करना चाहिए।

मस्अला 3—अगर एक दिन में कुछ मालूम न हुआ और दिल की परेशानी नहीं दूर हुई तो दूसरे दिन फिर ऐसा ही करे। इसी तरह सात दिन तक करे। इन्शाअल्लाह तआला ज़रूर उस काम की अच्छाई–बुराई मालूम

हो जायेगी।

मस्अला 3—अगर हज के लिए जाना हो तो यह इस्तिख़ारा न करे कि मैं जाऊं या न जाऊं बल्कि यों इस्तिख़ारा करे कि फ़लाने दिन जाऊं या न जाऊं।

तौबा की नमाज़ का बयान

अगर कोई बात शरीअत के ख़िलाफ़ हो जाये, तो दो रक्अत नमाज़ नफ़्ल पढ़कर अल्लाह तआला के सामने ख़ूब गिड़गिड़ाकर उससे तौबा करे और अपने किये पर पछताये और अल्लाह तआला से माफ़ कराये और आगे के लिए पक्का इरादा करे कि अब कभी न करूंगी। इससे वह गुनाह अल्लाह की मेहरबानी से माफ़ हो जाता है।

क़ज़ा नमाज़ों के पढ़ने का बयान

मस्अला 1—जिस की कोई नमाज़ छूट गयी, हो तो जब याद आये, तुरन्त उसकी क़ज़ा पढ़े, बिला किसी मजबूरी के क़ज़ा पढ़ने में देर लगाना गुनाह है। तो जिस की कोई नमाज़ क़ज़ा हो गई और उसने तुरन्त उसकी क़ज़ा न पढ़ी, दूसरे वक़्त पर दूसरे दिन पर, टाल दिया कि फ़लाने दिन पढ़ लूंगी और उस दिन से पहले ही अचानक मौत से मर गई तो दोहरा गुनाह हुआ। एक तो नमाज़ के क़ज़ा हो जाने का और दूसरे तुरंत क़ज़ा न पढ़ने का।

मस्अला 2—अगर किसी की कई नमाज़ें क़ज़ा हो गई, तो जहां तक हो सके, जल्दी से सब की क़ज़ा पढ़ ले, हो सके तो हिम्मत करके एक ही वक़्त सब की क़ज़ा पढ़ ले। यह ज़रूरी नहीं कि जुहर की क़ज़ा जुहर के वक़्त पढ़े और असर की क़ज़ा अस्र के वक़्त और अगर बहुत-सी नमाज़ें कई महीने या कई वर्ष की सज़ा हों, तो उनकी क़ज़ा में भी जहां तक हो सके, जल्दी करे। एक-एक वक़्त दो-दो, चार-चार नमाज़ें क़ज़ा पढ़ लिया करे। अगर कोई मजबूरी हो तो ख़ैर, एक वक़्त एक ही नमाज़ की क़ज़ा सही, यह बहुत कम दर्जे की बात है।

मस्अला 3—क़ज़ा पढ़ने का कोई वक़्त मुक़र्रर नहीं है। जिस वक़्त मुहलत हो, वुज़ू करके पढ़ ले, हां, इतना ध्यान रहे कि मकरूह वक़्त न हो।

मस्अला 4—जिसकी एक ही नमाज़ क़ज़ा हुई, इससे पहले कोई

नमाज़ उसकी क़ज़ा नहीं हुई या इससे पहले नमाज़ें क़ज़ा तो हुईं लेकिन सब की क़ज़ा पढ़ चुकी है, सिर्फ़ इसी एक नमाज़ की क़ज़ा पढ़ना बाक़ी है, तो पहले इसकी क़ज़ा पढ़ ले, तब कोई और नमाज़ पढ़ें। अगर बग़ैर क़ज़ा पढ़े हुए अदा नमाज़ पढ़ी, तो अदा दुरुस्त नहीं हुई। क़ज़ा पढ़के फिर अदा पढ़े। हां, अगर क़ज़ा पढ़ना याद नहीं रहा या बिल्कुल भूल गई, तो अदा दुरुस्त हो गई, अब जब याद आये, तो सिर्फ़ क़ज़ा पढ़ ले, अदा को न दोहराये।

मस्अला 5—अगर वक़्त बहुत तंग है कि अगर क़ज़ा पहले पढ़ेगी तो अदा नमाज़ का वक़्त बाक़ी न रहेगा, तो पहले अदा पढ़ले, तब क़ज़ा पढ़े।

मस्अला 6—अगर दो या तीन या चार या पांच नमाज़ें क़ज़ा हो गयीं और सिवाए इन नमाज़ों के उसके ज़िम्मे किसी और नमाज़ की क़ज़ा बाक़ी नहीं है यानी उम्र भर में जब से जवान हुई है, कभी कोई नमाज़ क़ज़ा न हुई या क़ज़ा तो हो गई, लेकिन सब की क़ज़ा पढ़ चुकी है, तो जब तक इन पांचों की क़ज़ा न पढ़ ले तब तक अदा नमाज़ पढ़ना दुरुस्त नहीं है और जब इन पांचों की क़ज़ा पढ़े, तो इस तरह पढ़े कि जो नमाज़ सबसे अव्वल छूटी है, पहले उसकी क़ज़ा पढ़े, फिर उसके बाद वाली, फिर उसके बाद वाली। इसी तरह तर्तीब से पांचों की क़ज़ा पढ़े।

जैसे किसी ने पूरे एक दिन की नमाज़ नहीं पढ़ी। फजर, जुहर, अस्र मग़्रिब, इशा—ये पांचों नमाज़ें छूट गयीं तो पहले फ़ज्र, फिर जुहर, फिर असर, फिर मग़्रिब, फिर इशा, इसी तर्तीब से क़ज़ा पढ़े। अगर पहले फ़ज्र की क़ज़ा नहीं पढ़ी, बल्कि जुहर की पढ़ी या अस्र की या और कोई, तो दुरुस्त नहीं हुई, फिर से पढ़ने पढ़ेगी।

मस्अला 7—अगर किसी की छः नमाज़ें क़ज़ा हो गयीं, तो अब उनकी क़ज़ा पढ़े बग़ैर भी अदा नमाज़ पढ़ना जायज़ है और जब इन छः नमाज़ों की क़ज़ा पढ़े, तो जो नमाज़ सबसे अव्वल क़ज़ा हुई है, उसकी क़ज़ा पढ़ना वाजिब नहीं है, बल्कि जो चाहे पहले पढ़े और पीछे पढ़े, सब जायज़ है और अब तर्तीब से पढ़ना वाजिब नहीं है।

मस्अला 8—दो-चार महीने या दो-चार वर्ष हुए कि किसी की छः नमाज़ें या ज़्यादा क़ज़ा हो गई थीं और अब तक उसकी क़ज़ा नहीं पढ़ी, लेकिन उसके बाद से हमेशा नमाज़ पढ़ती रही, कभी क़ज़ा नहीं होने पाई, मुद्दत के बाद अब फिर एक नमाज़ जाती रही, तो इस शक्ल

में भी बग़ैर उसकी क़ज़ा पढ़े हुए अदा नमाज़ पढ़ना दुरूस्त है और तर्तीब वाजिब है।

मस्अला 9—किसी के ज़िम्मे छः नमाज़ें या बहुत सी नमाज़ें क़ज़ा थीं, इस वजह से तर्तीब से पढ़ना उस पर वाजिब नहीं था, लेकिन उसने एक-एक, दो-दो करके सब की क़ज़ा पढ़ ली, अब किसी नमाज़ की क़ज़ा पढ़ना बाक़ी नहीं रही, तो अब फिर जब एक नमाज़ या पांच नमाज़ें क़ज़ा हो जायें, तो तर्तीब से पढ़ना पड़ेगा और बिला इन पांचों की क़ज़ा पढ़े अदा नमाज़ पढ़ना दुरूस्त नहीं, हां अब फिर अगर छः नमाज़ें छूट जायें, तो फिर तर्तीब माफ़ हो जायेगी और बग़ैर उन छः नमाज़ों की क़ज़ा पढ़े भी अदा पढ़ना दुरूस्त होगा।

मस्अला 10—किसी की बहुत सी नमाज़ें क़ज़ा हो गई थीं, उसने थोड़ी-थोड़ी करके सबकी क़ज़ा पढ़ ली। अब सिर्फ़ चार-पांच नमाज़ें रह गयीं, तो अब इन चार-पांच नमाज़ों को तर्तीब से पढ़ना वाजिब नहीं है, बल्कि अख़्तियार है, जिस तरह चाहे पढ़े और बग़ैर इन बाक़ी नमाज़ों की क़ज़ा पढ़े हुए भी अदा नमाज़ पढ़ लेना दुरूस्त है।

मस्अला 11—अगर वित्र की नमाज़ क़ज़ा हो गई और सिवाए वित्र के कोई और नमाज़ उसके ज़िम्मे क़ज़ा नहीं है, तो बग़ैर वित्र की नमाज़ पढ़े हुए फ़जर की नमाज़ पढ़ लेना दुरूस्त नहीं है। अगर वित्र का क़ज़ा होना याद हो, फिर भी पहले क़ज़ा न पढ़े, बल्कि फ़जर की नमाज़ पढ़ ले, तो अब क़ज़ा पढ़ के फ़जर की नमाज़ फिर पढ़ना पड़ेगी।

मस्अला 12—सिर्फ़ इशा की नमाज़ पढ़ के सो रही, फिर तहज्जुद के वक़्त उठी और वुज़ू करके तहज्जुद और वित्र की नमाज़ पढ़ी। तो फिर सुबह को याद आया कि इशा की नमाज़ भूले से बे-वुज़ू पढ़ ली थी, तो अब सिर्फ़ इशा की क़ज़ा पढ़े, वित्र की क़ज़ा न पढ़े।

मस्अला 13—क़ज़ा सिर्फ़ इश नमाज़ों और वित्र की पढ़ी जाती है, सुन्नतों की क़ज़ा नहीं है। हां, अगर फ़जर की नमाज़ क़ज़ा हो जाये, तो अगर दोपहर से पहले-पहले क़ज़ा पढ़े तो सुन्नत और फ़र्ज़ दोनों की क़ज़ा पढ़े और अगर दोपहर के बाद क़ज़ा पढ़े, तो सिर्फ़ दो रक्अत फ़र्ज़ की क़ज़ा पढ़े।

मस्अला 14—अगर फ़जर का वक़्त तंग हो गया, इसलिए सिर्फ़ दो रक्अत फ़र्ज़ पढ़ लिए, सुन्नत छोड़ दी, तो बेहतर यह है कि सूरज ऊंचा होने के बाद सुन्नत की क़ज़ा पढ़ ले, लेकिन दोपहर से पहले ही पहले पढ़

ले।

मस्अला 15—किसी बे-नमाज़ी ने तौबा की तो, जितनी नमाज़ें उम्र भर में क़ज़ा हुई हैं, सब की क़ज़ा पढ़ना वाजिब है, तौबा से नमाज़ें माफ़ नहीं होतीं। हां न पढ़ने से जो गुनाह हुआ था, वह तौबा से माफ़ हो गया। अब उनकी क़ज़ा न पढ़ेगी, तो फिर गुनाहगार होगी।

मस्अला 16—अगर किसी की कुछ नमाज़ें क़ज़ा हो गई हों, और उनकी क़ज़ा पढ़ने की अभी नौबत नहीं आई, तो मरते वक़्त नमाज़ों की तरफ़ से फ़िदया देने की वसीयत कर जाना वाजिब है, नहीं तो गुनाह होगा और नमाज़ के फ़िदये का बयान रोज़े के फ़िदये के साथ आयेगा, इन शाअल्लाहु तआला।

सज्दा सह्व का बयान

मस्अला 1—नमाज़ में जितनी चीज़ें वाजिब हैं, उनमें से एक वाजिब या कई वाजिब अगर भूले से रह जायें तो सज्दा सह्व करना वाजिब है, और उसके कर लेने से नमाज़ दुरूस्त हो जाती है। अगर सज्दा सह्व नहीं किया, नमाज़ फिर से पढ़े।

मस्अला 2—अगर भूले से कोई नमाज़ का फ़र्ज़ छूट जाये तो सज्दा सह्व करने से नमाज़ दुरूस्त नहीं होती, फिर से नमाज़ पढ़े।

मस्अला 3—सज्दा सह्व करने का तरीक़ा यह है कि आख़िरी रक्अत में सिर्फ़ अत्तहीयात पढ़ के एक तरफ़ सलाम फेर कर दो सज्दे करे, फिर बैठकर अत्तहीयात और दरूद शरीफ़ और दुआ पढ़ के दोनों तरफ़ सलाम फेरे और नमाज़ ख़त्म करे।

मस्अला 4—अगर किसी ने भूल कर सलाम फेरने से पहले ही सज्दा सह्व कर लिया, तब भी अदा हो गया और नमाज़ सही हो गई।

मस्अला 5—अगर भूले से दो रूकूअ कर लिए या तीन सज्दे कर लिए तो सज्दा सह्व करना वाजिब है।

मस्अला 6—नमाज़ में अलहम्दु पढ़ना भूल गई, सिर्फ़ कोई सूरः पढ़ी या पहले सूरः पढ़ी और फिर अलहम्दु पढ़ी तो सज्दा सह्व करना वाजिब है।

मस्अला 7—फ़र्ज़ की पहली दो रक्अतों में सूरः मिलाना भूल गई तो पिछली दोनों रक्अतों में सूरः मिलाये और सज्दा सह्व करे और अगर

पहली दो रक्अतों में से एक रक्अत में सूरः नहीं मिलाई, तो पिछली एक रक्अत में सूरः मिलाये और सज्दा सह्व करे और अगर पिछली दो रक्अतों में भी सूरः मिलाना याद न रहा, न पहली रक्अतों में सूरः मिलाई, न पिछली रक्अतों में, बिल्कुल आख़िरी रक्अत में सूरः नहीं मिलाई, तब भी सज्दा सह्व करने से नमाज़ हो जायेगी।

मस्अला 8—सुन्नत और नफ़्ल की सब रक्अतों में सूरः मिलाना वाजिब है, इसलिए अगर किसी रक्अत में सूरः मिलाना भूल जाये, तो सज्दा सह्व करे।

मस्अला 9—अल्हम्दु पढ़का सोचने लगी कि कौन-सी सूरः पढ़े और इस सोच-विचार में इतनी देर लग गई, जितनी देर में तीन बार 'सुब्हानल्लाह' कह सकती है, तो भी सज्दा सह्व वाजिब है।

मस्अला 10—अगर बिल्कुल आख़िरी रक्अत में अत्तहीयात और दरूद पढ़ने के बाद शक हुआ कि मैंने चार रक्अतें पढ़ी हैं या तीन, इसी सोच में चुप बैठी रही और सलाम फेरने में इतनी देर लग गई, जितनी देर में तीन बार सुब्हानल्लाह कह सकती है, फिर याद आ गया कि मैंने चारों रक्अतें पढ़ लीं, तो इस शक्ल में भी सज्दा सह्व करना वाजिब है।

मस्अला 11—जब अल्हम्दु और सूरः पढ़ चुकी और भूले से कुछ सोचने लगी और रुकूअ में इतनी देर हो गई, जितनी कि ऊपर बयान हुई तो सज्दा सह्व का करना वाजिब है।

मस्अला 12—इसी तरह अगर पढ़ते-पढ़ते बीच में रुक गई और कुछ सोचने लगी और सोचने में इतनी देर लग गई या जब दूसरी या चौथी रक्अत पर अत्तहीयात के लिए बैठी, तो तुरन्त अत्तहीयात नहीं शुरू की, कुछ सोचने में इतनी देर लग गई या जब रुकूअ से उठी तो देर तक खड़ी कुछ सोचा की या दोनों सज्दों के बीच में जब बैठी, तो कुछ सोचने में इतनी देर लगा दी तो इन सब शक्लों में सज्दा सह्व करना वाजिब है। मतलब यह है कि जब भूले से किसी बात के करने में देर कर देगी या किसी बात के सोचने की वजह से देर लग जायेगी, तो सज्दा सह्व करना वाजिब होगा।

मस्अला 13—तीन रक्अत या चार रक्अत वाली फ़र्ज़ नमाज़ में जब दो रक्अत पर अत्तहीयात के लिए बैठी, तो दो बार अत्तहीयात पढ़ गई, तो भी सज्दा सह्व वाजिब है और अगर अत्तहीयात के बाद इतना दरूद शरीफ़ भी पढ़ गई—अल्लाहुम्म सल्लि अला मुहम्मद या इससे ज़्यादा पढ़ गई, तब याद आया और उठ खड़ी हुई, तो भी सज्दा सह्व वाजिब है। और

अगर इससे कम पढ़ा तो सज्दा सह्व वाजिब नहीं।

मस्अला 14—नफ़्ल नमाज़ में दो रक्अत पर बैठकर अत्तहीयात के साथ दरूद शरीफ़ भी पढ़ना जायज़ है, इसलिए नफ़्ल में दरूद शरीफ़ पढ़ने से सज्दा सह्व नहीं होता, हां, अगर दो बार अत्तहीयात पढ़ जाये, तो नफ़्ल में भी सज्दा सह्व वाजिब है।

मस्अला 15—अत्तहीयात पढ़ने बैठी, मगर भूल से अत्तहीयात की जगह कुछ और पढ़ गई या अल्हम्दु पढ़ने लगी, तो भी सज्दा सह्व वाजिब है।

मस्अला 16—नीयत बांधने के बाद 'सुब्हानकल्लाहुम्म' की जगह दुआ-ए-कुनूत पढ़ने लगी, तो सज्दा सह्व वाजिब नहीं। इसी तरह फ़र्ज़ की तीसरी या चौथी रक्अत में अगर अल्हम्दु की जगह अत्तहीयात या कुछ और पढ़नी लगी तो भी सज्दा सह्व वाजिब नहीं है।

मस्अला 17—तीन रक्अत या चार रक्अत वाली नमाज़ में बीच में बैठना भूल गई और दो रक्अत पढ़ के तीसरी रक्अत के लिए खड़ी हो गई तो अगर नीचे का आधा धड़ अभी सीधा न हुआ, तो बैठ जाये और अत्तहीयात पढ़ ले, तब खड़ी हो और ऐसी हालत में सज्दा सह्व करना वाजिब नहीं और अगर नीचे का आधा धड़ सीधा हो गया, तो न बैठे, बल्कि खड़ी होकर चारों रक्अतें पूरी न कर ले। सिर्फ़ आख़िर में बैठे और इस शक्ल में सज्दा सह्व वाजिब है। अगर सीधी खड़ी हो जाने के बाद फिर लौट आयेगी और बैठकर अत्तहीयात पढ़ेगी, तो गुनाहगार होगी और सज्दा सह्व करना अब भी वाजिब होगा।

मस्अला 18—अगर चौथी रक्अत पर बैठना भूल गई तो अगर नीचे का धड़ अभी सीधा नहीं हुआ, तो बैठ जाये और अत्तहीयात और दरूद वग़ैरह पढ़ के सलाम फेरे और सज्दा सह्व न करे और अगर सीधी खड़ी हो गई हो, तब भी बैठ जाये, बल्कि अगर अल्हम्दु और सूरः भी पढ़ चुकी हो, या रूकूअ भी कर चुकी हो, तब भी बैठ जाये और अत्तहीयात पढ़ के सज्दा सह्व करे, हां, अगर रूकूअ के बाद भी याद न आया और पांचों रक्अत का सज्दा कर लिया, तो फ़र्ज़ नमाज़ फिर से पढ़े, यह नमाज़ नफ़्ल हो गई, एक रक्अत और मिला के पूरी छः रक्अत करे और सज्दा सह्व न करे और अगर एक रक्अत और नहीं मिलाई और पांचवीं रक्अत पर सलाम फेर दिया तो चार रक्अतें नफ़्ल हो गयीं और एक रक्अत बेकार गई।

मस्अला 19—अगर चौथी रक्अत पर बैठी और अत्तहीयात पढ़ के खड़ी हो गई, तो सज्दा करने से पहले जब याद आये, बैठ जाये, और

अत्तहीयात न पढ़े, बल्कि बैठकर तुरन्त सलाम फेर के सज्दा सह्व कर ले और अगर पांचवीं रक्अत का सज्दा कर चुकी, तब याद आया तो एक रक्अत और मिला के छः कर ले, चार फ़र्ज़ हो गये और दो नफ़्ल और छठी रक्अत पर सज्दा सह्व भी करे। अगर पांचवीं रक्अत पर सलाम फेर दिया और सज्दा सह्व कर लिया, तो बुरा किया, चार फ़र्ज़ हुए और एक रक्अत अकारत गई।

मस्अला 20—अगर चार रक्अत नफ़्ल नमाज़ पढ़ी और बीच में बैठना भूल गई, तो जब तक तीसरी रक्अत का सज्दा न किया हो, तब तक याद आने पर बैठ जाना चाहिए और अगर सज्दा कर लिया, तो ख़ैर, तब भी नमाज़ हो गई। और सज्दा सह्व इन दोनों शक्लों में वाजिब है।

मस्अला 21—अगर नमाज़ में शक हो गया कि तीन रक्अतें पढ़ी हैं या चार रक्अतें, तो अगर यह शक संयोग से हो गया है, ऐसा शक पड़ने की उसकी आदत नहीं है, तो फिर से नमाज़ पढ़े और अगर शक करने की आदत है और अक्सर ऐसा शक हो जाता है, तो दिल में सोचकर देखे कि दिल ज़्यादा किधर जाता है। अगर ज़्यादा विचार तीन रक्अत पढ़ने से का हो, तो एक और पढ़ ले और सज्दा सह्व वाजिब नहीं है और अगर ज़्यादा विचार यही है कि मैंने चारों रक्अतें पढ़ ली हैं, तो और रक्अत न पढ़े और सज्दा सह्व भी न करे और अगर सोचने के बाद भी दोनों तरफ़ बराबर विचार रहे, न तीन रक्अत की ओर ज़्यादा विचार जाता है और न चार की ओर, तो तीन ही रक्अतें समझे और एक रक्अत और पढ़ ले। लेकिन इस शक्ल में तीसरी रक्अत पर भी बैठकर अत्तहीयात पढ़े, तब खड़ी होकर चौथी रक्अत पढ़े और सज्दा सह्व भी करे।

मस्अला 22—अगर यह शक हुआ कि पहली रक्अत है या दूसरी रक्अत, इसका भी यही हुक्म है कि अगर संयोग से यह शक पड़ा हो, तो फिर से पढ़े और अक्सर शक पड़ जाता है, तो जिधर ज़्यादा गुमान जाये, उसको अख़्तियार करे और अगर दोनों तरफ़ बराबर गुमान रहे, किसी तरफ़ ज़्यादा न हो, तो एक ही समझे, लेकिन इस पहली रक्अत पर बैठकर अत्तहीयात पढ़े कि शायद दूसरी रक्अत हो और दूसरी रक्अत पढ़ के बैठे और उसमें अल्हम्दु के साथ सूरः भी मिलाये। फिर तीसरी रक्अत पढ़ के भी बैठे कि शायद यही चौथी हो। फिर चौथी रक्अत पढ़े और सज्दा सह्व करके सलाम फेरे।

मस्अला 23—अगर यह शक हुआ कि यह दूसरी रक्अत है या तीसरी तो इसका भी यही हुक्म है। अगर दोनों विचार बराबर दर्जे के हों, तो दूसरी रक्अत पर बैठकर तीसरी रक्अत पढ़े और फिर बैठकर अत्तहीयात पढ़े कि शायद यही चौथी हो, फिर चौथी पढ़े और सज्दा सह्व करके सलाम फेरे।

मस्अला 24—अगर नमाज़ पढ़ चुकने के बाद यह शक हुआ कि न जाने तीन रक्अत पढ़ी हैं या चार, तो इस शक का कुछ एतबार नहीं, नमाज़ हो गई, हां, अगर ठीक याद आ जाये कि तीन ही हुईं, तो फिर खड़ी होकर एक रक्अत और पढ़े और सज्दा सह्व कर ले और अगर पढ़ के बोल पड़ी हो या और कोई बात की, जिस ये नमाज़ टूट जाती है, तो फिर से पढ़े। इसी तरह अगर अत्तहीयात पढ़ चुकने के बाद यह शक हुआ, तो उस का यही हुक्म है कि जब तक ठीक याद न आये, उसका कुछ एतबार न करे, लेकिन अगर कोई एहतियात के तौर पर नमाज़ फिर से पढ़ ले, तो अच्छा है कि दिल की खटक निकल जाये और शुब्ह बाक़ी न रहे।

मस्अला 25—अगर नमाज़ में कई बातें ऐसी हो गयीं, जिनसे सज्दा सह्व वाजिब होता है, तो एक ही सज्दा सब की तरफ़ से हो जोयगा। एक नमाज़ में दो बार सज्दा सह्व नहीं किया जाता।

मस्अला 26—सज्दा सह्व करने के बाद फिर कोई बात ऐसी हो गई जिससे सज्दा वाजिब होता है, तो वही पहला सज्दा बाक़ी है, अब फिर सज्दा सह्व न करे।

मस्अला 27—नमाज़ में कुछ भुल गई थी, जिससे सज्दा सह्व वाजिब था, लेकिन सज्दा सह्व करना भुल गई और दोनों तरफ़ सलाम फेर दिया, लेकिन अभी उसी जगह बैठी है और सीना क़िब्ले की तरफ़ से नहीं फेरा, न किसी से कुछ बोली, न कोई और बात ऐसी हुई, जिससे नमाज़ टूट जाती है, तो अब सज्दा सह्व कर ले, बल्कि अगर इसी तरह बैठे–बैठे कलमा और दरूद शरीफ़ वग़ैरह या कोई वज़ीफ़ा भी पढ़ने लगी हो, तब भी कुछ हरज नहीं। अब सज्दा सह्व कर ले, तो नमाज़ हो जायेगी।

मस्अला 28—सज्दा सह्व वाजिब था और उसने जान–बूझकर दोनों तरफ़ सलाम फेर दिया और यह नीयत थी कि मैं सज्दा सह्व न करूंगी, तब भी जब तक कोई ऐसी बात न हो, जिससे नमाज़ जाती रहती है, सज्दा सह्व कर लेने का अख़्तियार रहता है।

मस्अला 29—चार रक्अत वाली या तीन रक्अत वाली नमाज़ में

भूले से दो रक्अत पर सलाम फेर दिया तो अब उठकर इस नमाज़ को पूरा कर ले और सज्दा सह्व करे, हां, अगर सलाम फेरने के बाद कोई बात हो गई, जिस से नमाज़ जाती रहती है, तो फिर से नमाज़ पढ़े।

मस्अला 30—भूले से वित्र की पहली या दूसरी रक्अत में दुआ–ए–कुनूत पढ़ गई, तो इसका कुछ एतबार नहीं, तीसरी रक्अत में फिर पढ़े और सज्दा सह्व करे।

मस्अला 31—वित्र की नमाज़ में शुब्ह हुआ कि न जाने यह दूसरी रक्अत है या तीसरी रक्अत और किसी बात की तरफ़ ज़्यादा विचार नहीं है, बल्कि दोनों तरफ़ बराबर दर्जे का विचार है, तो उसी रक्अत में दुआ–ए–कुनूत पढ़े और बैठकर अत्तहीयात के बाद खड़ी होकर एक रक्अत और पढ़े और उसमें दुआ–ए–कुनूत पढ़े और आख़िर में सज्दा सह्व कर ले।

मस्अला 32—वित्र में दुआ–ए–कुनूत की जगह सुब्हानकल्लाहुम्म पढ़ गई, फिर जब याद आया तो दुआ–ए–कुनूत पढ़ी तो सज्दा सह्व वाजिब नहीं है।

मस्अला 33—वित्र में दुआ–ए–कुनूत पढ़ना भूल गई, सूरः पढ़ के रुकूअ में चली गई, तो सह्व वाजिब है।

मस्अला 34—अल्हम्दु लिल्लाह पढ़ के दो सज्दा या तीन सूरतें पढ़ गई, तो कुछ डर नहीं और सज्दा सह्व वाजिब नहीं।

मस्अला 35—फ़र्ज़ नमाज़ में पिछली दोनों रक्अतों या एक रक्अत में सूरः मिलाई, तो सज्दा सह्व वाजिब नहीं।

मस्अला 36—नमाज़ के अव्वल में सुब्हानकल्लाहुम्म पढ़ना भूल गई या रुकूअ में 'सुब्हान रब्बियल् अज़ीम' नहीं पढ़ा या सज्दे में 'सुब्हान रब्बियल् आला' नहीं कहा या रुकूअ से उठकर 'समिअल्लाहु लिमन हमिदह' कहना याद न रहा, नीयत बांधते वक्त कंधे तक हाथ नहीं उठाये या आख़िरी रक्अत में दरूद शरीफ़ या दुआ नहीं पढ़ी, यों ही सलाम फेर दिया, तो इन सब शक्लों में सज्दा सह्व वाजिब नहीं है।

मस्अला 37—फ़र्ज़ की दोनों पिछली रक्अतों में या एक रक्अत में अल्हम्दु पढ़ना भूल गई, चुपके खड़ी रह के रुकूअ में चली गई, तो भी सज्दा सह्व वाजिब नहीं।

मस्अला 38—जिन चीज़ों को भूल कर करने से सज्दा सह्व वाजिब होता है, अगर उनको कोई जान–बूझकर करे तो सज्दा सह्व वाजिब नहीं रहा, बल्कि नमाज़ फिर से पढ़े। अगर सज्दा सह्व कर भी लिया, तब भी

नमाज़ नहीं हुई। जो चीज़ें नमाज़ में न फ़र्ज़ हैं, न वाजिब, उनको भूल कर छोड़ देने से नमाज़ हो जाती है और सज्दा सह्व वाजिब नहीं होता।

सज्दा तिलावत का बयान

मस्अला 1—क़ुरआन शरीफ़ में तिलावत के सज्दे चौदह हैं। जहां–जहां कलाम मजीद के किनारे पर सज्दा लिखा होता है, उस आयत को पढ़कर सज्दा करना वाजिब हो जाता है और उस सज्दे को सज्दा तिलावत कहते हैं।

मस्अला 2—सज्दा तिलावत करने का तरीक़ा यह है कि अल्लाहु अक्बर कह के सज्दा करे और अल्लाहु अक्बर कहते वक़्त हाथ न उठाये। सज्दे में कम से कम तीन बार 'सुब्हान रब्बियल आला' कह के फिर अल्लाहु अक्बर कह कर सर उठा ले, बस सज्दा तिलावत अदा हो गया।

मस्अला 3—बेहतर यह है कि खड़ी होकर पहले अल्लाहु अक्बर कह कर सज्दा में जाये, फिर अल्लाहु अक्बर कह के खड़ी हो जाये और अगर बैठकर अल्लाहु अक्बर कह के सज्दे में जाये, फिर अल्लाहु अक्बर कह के उठ बैठे, खड़ी न हो, तब भी दुरूस्त है

मस्अला 4—सज्दे की आयत को जो शख़्स पढ़े, उस पर भी सज्दा करना वाजिब है और जो सुने, उस पर भी वाजिब हो जाता है, चाहे क़ुरआन शरीफ़ सुनने के इरादे से बैठी हो या किसी और काम में लगी हो और बिना इरादे के सज्दे की आयत सुन ली हो, इसलिए बेहतर यह है कि सज्दे को धीरे से पढ़े, ताकि किसी और पर सज्दा वाजिब न हो।

मस्अला 5—जो चीज़ें नमाज़ के लिए शर्त हैं, वह सज्दा तिलावत के लिए भी शर्त हैं, यानी वुज़ू का होना, जगह का पाक होना, बदन और कपड़े का पाक होना, क़िब्ले की तरफ़ सज्दा करना, वग़ैरह।

मस्अला 6—जिस तरह नमाज़ का सज्दा किया जाता है, उसी तरह सज्दा तिलावत भी करना चाहिए। कुछ औरतें क़ुरआन शरीफ़ ही पर सज्दा कर लेती हैं, उससे सज्दा अदा नहीं होता और सर से नहीं उतरता।

मस्अला 7—अगर किसी का वुज़ू उस वक़्त न हो तो फिर में याद न रहे।

मस्अला 8—अगर किसी के ज़िम्मे बहुत से सज्दे तिलावत के बाक़ी हों, अब तक अदा न किये हों, तो अब अदा करे, उम्र भर में कभी न

कभी अदा कर लेने चाहिएं। अगर कभी अदा न करेगी, तो गुनाहगार होगी।

मस्अला 9—अगर हैज़ या निफ़ास की हालत में किसी से सज्दे की आयत सुन ली तो उस पर सज्दा वाजिब नहीं हुआ और अगर ऐसी हालत में सुना जब कि उस पर नहाना वाजिब था, तो नहाने के बाद सज्दा करना वाजिब है।

मस्अला 10—अगर बीमारी की हालत में सुने और सज्दा करने की ताक़त न हो, तो जिस तरह नमाज़ का सज्दा इशारे से करती है, उसी तरह इसका सज्दा भी इशारे से करे।

मस्अला 11—अगर नमाज़ में सज्दे की आयत पढ़े तो वह आयत पढ़ने के बाद तुरन्त ही नमाज़ में सज्दा करे, सूरः पढ़ के रुकूअ में जाये। अगर उस आयत को पढ़कर तुरन्त सज्दा न किया, इसके बाद दो आयतें या तीन आयतें और पढ़ लीं, तब सज्दा किया, तो यह भी दुरूस्त है और अगर इससे भी ज़्यादा पढ़ गई, तब सज्दा किया, तो सज्दा अदा तो हो गया लेकिन गुनाहगार हुई।

मस्अला 12—अगर नमाज़ में सज्दे की आयत पढ़ी और नमाज़ ही में सज्दा न किया, तो अब नमाज़ पढ़ने के बाद सज्दा करने से अदा न होगा, हमेशा के लिये गुनाहगार रहेगी। अब अलावा तौबा–इस्तग़्फ़ार के और कोई सूरत माफ़ी की नहीं है।

मस्अला 13—सज्दे की आयत पढ़कर अगर तुरन्त रुकूअ में चली जाये और रुकूअ में यह नीयत कर ले कि मैं सज्दा तिलावत की तरफ़ से भी यही रुकूअ करती हूं तब भी वह सज्दा अदा हो जायेगा और अगर रुकूअ में यह नीयत की तो रुकूअ के बाद सज्दा जब करेगी, तो उसी सज्दे से सज्दा तिलावत भी अदा हो जायेगा, चाहे कुछ नीयत करे, चाहे न करे।

मस्अला 14—नमाज़ पढ़ते में किसी और से सज्दे की आयत सुने तो नमाज़ में सज्दा न करे, बल्कि नमाज़ के बाद करे। अगर नमाज़ ही में करेगी तो वह सज्दा अदा न होगा, फिर करना पड़ेगा और गुनाह भी होगा।

मस्अला 15—एक ही जगह बैठे–बैठे सज्दे की आयत को कई बार दोहरा कर पढ़े तो एक ही सज्दा वाजिब है, चाहे सब बार पढ़ के आख़िर में सज्दा करे या पहली बार पढ़ के सज्दा कर ले, फिर उसी को बार–बार दोहराती रहे और अगह जगह बदल गई, तब उसी आयत को दोहराया, फिर तीसरी जगह जाके वही आयत फिर पढ़ी, इसी तरह बराबर जगह बदलती रही, तो जितनी बार दोहराये, उतनी ही बार सज्दा करे।

मस्‌अला 16—अगर एक ही जगह बैठे-बैठे सज्दे की कई आयतें पढ़ीं तो भी जितनी आयतें पढ़े, उतने सज्दे करे।

मस्‌अला 17—बैठे-बैठे सज्दे की कोई आयत पढ़ी, फिर उठ खड़ी हुई, लेकिन चली फिरी नहीं, जहां बैठी थी वहीं खड़े-खड़े वही आयत फिर दोहराई, तो एक ही सज्दा वाजिब है।

मस्‌अला 18—एक ही जगह सज्दे की आयत पढ़ी और उठ कर किसी काम को चली गई फिर उसी जगह आकर वही आयत पढ़ी, तब भी दो सज्दे करे।

मस्‌अला 19—एक जगह बैठे-बैठे सज्दे की कोई आयत पढ़ी फिर जब क़ुरआन मजीद की तिलावत कर चुकी, तो उसी जगह बैठे-बैठे किसी और काम में लग गई, जैसे खाना खाने लगी या सीने-पिरोने में लग गई या बच्चे को दूध पिलाने लगी, इसके बाद फिर वही आयत उसी जगह पढ़ी, तब भी दो सज्दे वाजिब हुए और जब कोई और काम करने लगी तो ऐसा समझेंगे कि जगह बदल गई।

मस्‌अला 20—एक कोठरी या दालान के एक कोने में सज्दे की कोई आयत पढ़ी और फिर दूसरे कोने में जा कर वही आयत पढ़ी तब भी एक सज्दा ही काफ़ी है, चाहे जितनी बार पढ़े। हां, अगर दूसरे काम में लग जाने के बाद वही आयत पढ़ेगी, तो दूसरा सज्दा करना पड़ेगा। फिर तीसरे काम में लगने के बाद अगर पढ़ेगी तो तीसरा सज्दा वाजिब हो जायेगा।

मस्‌अला 21—अगर बड़ा घर हो तो दूसरे कोने पर जाकर दोहराने से दूसरा सज्दा वाजिब होगा और तीसरे कोने पर तीसरा सज्दा।

मस्‌अला 22—मस्जिद का भी यही हुक्म है, जो एक कोठरी का हुक्म है। अगर सज्दे की एक आयत कई बार पढ़े, तो एक ही सज्दा वाजिब है, चाहे एक ही जगह बैठे-बैठे दोहराया करे या मस्जिद में इधर-उधर टहल कर पढ़े।

मस्‌अला 23—अगर नमाज़ में सज्दा की एक ही आयत को कई बार पढ़े, तब भी एक ही सज्दा वाजिब है, चाहे सब बार पढ़ के आख़िर में सज्दा करे या एक बार पढ़ के सज्दा कर लिया। फिर उसी रक्‌अत या दूसरी रक्‌अत में वही आयत पढ़े।

मस्‌अला 24—सज्दे की कोई आयत पढ़ी और सज्दा नहीं किया

फिर उसी जगह नीयत बांध ली और वही आयत फिर नमाज़ में पढ़ी और और नमाज़ में सज्दा तिलावत किया तो यही सज्दा काफ़ी है। दोनों सज्दे इसी से अदा हो जायेंगे, हां अगर जगह बदल गई तो दूसरा सज्दा भी वाजिब है।

मस्अला 25—अगर सज्दे की आयत पढ़ कर सज्दा कर लिया। फिर उसी जगह नमाज़ की नीयत बांध ली और वही आयत नमाज़ में दोहराई, तो अब नमाज़ में फिर सज्दा करे।

मस्अला 26—पढ़ने वाली की जगह नहीं बदली, एक ही जगह बैठे–बैठे एक आयत को बार–बार पढ़ती रही, लेकिन सुनने वाले की जगह बदल गई कि पहली बार और जगह सुना था, दूसरी बार और जगह, तीसरी बार तीसरी जगह, तो पढ़ने वाली पर एक ही सज्दा वाजिब है और सुनने वाली पर कई सज्दे वाजिब हैं, जितनी बार सुने, उतने ही सज्दे करे।

मस्अला 27—अगर सुनने वाली की जगह नहीं बदली, बल्कि पढ़ने वाली की जगह बदल गई, तो पढ़ने वाली पर कई सज्दे वाजिब होंगे और सुनने वाली पर एक ही सज्दा है।

मस्अला 28—सारी सूरः को पढ़ना और सज्दे की आयत को छोड़ देना मकरूह और मना है, सिर्फ़ सज्दे से बचने के लिए वह आयत न छोड़े कि इसमें सज्दे से गोया इंकार है।

मस्अला 29—अगर सूरः में कोई आयत न पढ़े सिर्फ़ सज्दे की आयत पढ़े, तो उसका कुछ हरज नहीं और अगर नमाज़ में ऐसा करे, तो उसमें यह भी शर्त है कि वह इतनी बड़ी हो कि छोटी तीन आयत के बराबर हो, लेकिन बेहतर यह है कि सज्दे की आयत को दो एक आयत के साथ मिला कर पढ़े।

बीमार की नमाज़ का बयान

मस्अला 1—नमाज़ को किसी हालत में न छोड़े, जब तक खड़े होकर नमाज़ पढ़ने की ताक़त रहे, खड़े होकर नमाज़ पढ़ती रहे, और जब खड़ा न हुआ जाये, तो बैठकर नमाज़ पढ़े, बैठे–बैठे रुकूअ करे और रुकूअ करके दोनों सज्दे करे और रुकूअ के लिए इतना झुके कि माथा घुटनों के सामने आ जाये।

मस्अला 2—अगर रुकूअ और सज्दा करने की भी ताक़त न हो तो

रुकूअ और सज्दे को इशारे से अदा करे और सज्दे के लिए ज़्यादा झुक जाया करे।

मस्अला 3—सज्दा करने के लिए तकिया वग़ैरह कोई ऊंची चीज़ रख लेना और उस पर सज्दा करना बेहतर नहीं। जब सज्दे की ताक़त न हो, तो बस इशारा कर लिया करे, तकिया के ऊपर सज्दे की ज़रूरत नहीं।

मस्अला 4—अगर खड़े होने की ताक़त तो है, लेकिन खड़े होने से बड़ी तक्लीफ़ होती है या बीमारी के बढ़ जाने का डर है, तब भी बैठकर नमाज़ पढ़ना दुरुस्त है।

मस्अला 5—अगर खड़ी तो हो सकती है लेकिन रुकूअ और सज्दा नहीं कर सकती, तो चाहे खड़े होकर पढ़े और रुकूअ व सज्दा को इशारे से अदा करे और चाहे बैठकर नमाज़ पढ़े और रुकूअ व सुजूद को इशारे से अदा करे, लेकिन बैठकर पढ़ना दुरुस्त है।

मस्अला 6—अगर बैठने की भी ताक़त नहीं रही, तो पीछे गाव तकिया वग़ैरह लगा कर इस तरह लेट जाये कि सर ख़ूब ऊंचा रहे, बल्कि क़रीब–क़रीब बैठने के रहे और पांव क़िब्ले की तरफ़ फैला ले और अगर कुछ ताक़त हो, तो क़िब्ले की तरफ़ पैर न फैलाये, बल्कि घुटने खड़े रखे, फिर सर के इशारे से नमाज़ पढ़े और सज्दे का इशारा ज़्यादा नीचा करे। अगर गाव तकिया से टेक लगा कर भी इस तरह न लेट सके कि सर और सीना वग़ैरह ऊंचा रहे, तो क़िब्ले की तरफ़ पैर करके बिल्कुल चित लेट जाये, लेकिन सर के नीचे कोई ऊंचा तकिया रख दे कि मुंह क़िब्ले की तरफ़ हो जाये। आसमान की तरफ़ न रहे, फिर सर के इशारे से नमाज़ पढ़े, रुकूअ का इशारा कम करे और सज्दे का इशारा ज़रा ज़्यादा करे।

मस्अला 7—अगर चित न लेटे बल्कि दायें या बायीं करवट पर क़िब्ले की तरफ़ मुंह करके लेटे और सर के इशारे से रुकूअ व सज्दा करे, यह भी जायज़ है, लेकिन चित लेट कर पढ़ना ज़्यादा अच्छा है।

मस्अला 8—अगर सर का इशारा करने की भी ताक़त नहीं रही, तो नमाज़ न पढ़े, फिर अगर एक रात–दिन से ज़्यादा यही हालत रही, तो नमाज़ बिल्कुल माफ़ हो गई। अच्छे होने के बाद क़ज़ा पढ़ना भी वाजिब नहीं है। और अगर एक दिन–रात से ज़्यादा यह हालत नहीं रही, बल्कि एक दिन–रात में फिर इशारे से पढ़ने की ताक़त आ गई, तो इशारे ही से क़ज़ा पढ़े। और यह इरादा न करे कि जब बिल्कुल अच्छी हो जाऊंगी, तब पढ़ूंगी कि शायद मर गई तो गुनाहगार मरेगी।

मस्अला 9—इसी तरह अगर अच्छा-भला आदमी बेहोश हो जाये तो अगर बेहोशी एक दिन-रात से ज़्यादा न हुई हो, तो क़ज़ा वाजिब है और अगर एक दिन-रात से भी ज़्यादा हो गई हो, तो क़ज़ा पढ़ना वाजिब नहीं।

मस्अला 10—जब नमाज़ शुरू की, उसी वक़्त भली-चंगी थी, फिर जब थोड़ी नमाज़ पढ़ चुकी, तो नमाज़ ही में कोई ऐसी रग चढ़ गई कि खड़ी न हो सकी, तो बाक़ी नमाज़ बैठकर पढ़े। अगर रुकूअ-सज्दा कर सके, तो करे, नहीं तो रुकूअ-सज्दा को सर के इशारे से करे। और अगर ऐसा हाल हो गया कि बैठने की भी ताक़त न रही, तो उसी तरह लेट कर बाक़ी नमाज़ को पूरा करे।

मस्अला 11—बीमारी की वजह से थोड़ी नमाज़ बैठकर पढ़ी और रुकूअ की जगह रुकूअ और सज्दे की जगह सज्दा किया। फिर नमाज़ में ही अच्छी हो गई, तो उसी नमाज़ को खड़ी होकर पूरा करे।

मस्अला 12—अगर बीमारी की वजह से रुकूअ-सज्दे की ताक़त न थी, इसलिये सर के इशारे से रुकूअ व सज्दा किया, फिर जब कुछ नमाज़ पढ़ चुकी तो ऐसी हो गई कि अब रुकूअ व सज्दा कर सकती है, तो अब यह नमाज़ जाती रही। इसको पूरा न करे, बल्कि फिर से पढ़े।

मस्अला 13—फ़ालिज गिरा और ऐसी बीमारी हो गई कि पानी से इस्तिंजा नहीं कर सकती तो कपड़े या ढेले से पोंछ डाला करे और इसी तरह नमाज़ पढ़े। अगर खुद तयम्मुम न कर सके, तो कोई दूसरा तयम्मुम करा दे और अगर ढेले या कपड़े से भी पोंछने की ताक़त नहीं है, तो भी नमाज़ क़ज़ा न करे। इसी तरह नमाज़ पढ़े। किसी और को उसके बदन का देखना और पोंछना दुरुस्त नहीं है, न मां, न बाप, न लड़का, न लड़की। हां, बीवी को अपने मियां का और मियां को अपनी बीवी का बदन देखना दुरुस्त है। इसके अलावा किसी को दुरुस्त नहीं।

मस्अला 14—तन्दुरुस्ती के ज़माने में कुछ नमाज़ें क़ज़ा हो गई थीं, फिर बीमार हो गई, तो बीमारी के ज़माने में जिस तरह नमाज़ पढ़ने की ताक़त हो, उनकी क़ज़ा पढ़े, यह इंतिज़ार न करे कि जब खड़े होने की ताक़त आये, तब पढ़ूं या जब बैठने लगूं और रुकूअ-सज्दा करने की ताक़त आये, तब पढ़ूं, ये सब शैतानी ख़्यालात हैं। दीनदारी की बात यह है कि तुरन्त पढ़े, देर न करे।

मस्अला 15—अगर बीमार का बिस्तर नजिस है, लेकिन उसके

बदलने में बहुत तक्लीफ़ होगी, तो उसी पर पढ़ नमाज़ लेना दुरुस्त है।

मस्‌अला 16—हकीम ने किसी की आंख बनाई और हिलने-जुलने से मना कर दिया, तो लेटे-लेटे नमाज़ पढ़ती रहे।

सफ़र की हालत में नमाज़ पढ़ने का बयान

मस्‌अला 1—अगर कोई एक मंज़िल या दो मंज़िल का सफ़र करे, तो इस सफ़र से शरीअत का कोई हुक्म नहीं बदलता और शरीअत के क़ायदे से उसे मुसाफ़िर नहीं कहते। उसको सारी बातें इसी तरह करनी चाहिये, जैसे कि अपने घर में करती थी। चार रक्‌अत वाली नमाज़ को चार रक्‌अत पढ़े और मोज़ा पहने हो, तो एक रात-दिन मसह करे। इसके बाद मसह करना दुरुस्त नहीं।

मस्‌अला 2—जो कोई तीन मंज़िल चलने का इरादा करके निकले, वह शरीअत के क़ायदे से मुसाफ़िर है। जब अपने शहर की आबादी से बाहर हो गई, तो शरीअत से मुसाफ़िर बन गई। और जब तक आबादी के अंदर-अंदर चलती रहे, तब तक मुसाफ़िर नहीं है और स्टेशन अगर आबादी के अंदर हो, तो आबादी के हुक्म में है और जो आबादी के बाहर हो, तो वहां पहुंच कर मुसाफ़िर हो जायेगी।

मस्‌अला 3—तीन मंज़िल यह है कि अक्सर पैदल चलने वाले वहां तीन रोज़ में पहुंचा करते हैं। तख़्मीना इस का हमारे मुल्क में कि दरिया और पहाड़ में सफ़र नहीं करना पड़ता, 48 मील अंग्रेज़ी है।

मस्‌अला 4—अगर कोई जगह इतनी दूर है कि ऊंट और आदमी की चाल के एतबार से तो तीन मंज़िल है, लेकिन तेज़ इक्का या तेज़ बहली पर सवार है, इसलिए दो दिन ही में पहुंच जायेगी, या रेल में सवार होकर ज़रा-सी देर में पहुंच जायेगी, तब भी वह शरीअत के हिसाब से मुसाफ़िर है।

मस्‌अला 5—जो कोई शरीअत से मुसाफ़िर हो, वह ज़ुहर और अस्र और इशा की फ़र्ज़ नमाज़ दो-दो रक्‌अतें पढ़े और सुन्नतों का हुक्म है कि जल्दी हो तो फ़जर की सुन्नतों के अलावा और सुन्नतें छोड़ देना दुरुस्त है। इस छोड़ देने से कुछ गुनाह न होगा। और अगर कुछ जल्दी न हो, न अपने साथियों में रह जाने का डर हो, तो न छोड़े। और सुन्नतें सफ़र में पूरी-पूरी पढ़े, इनमें कमी नहीं है।

मस्अला 6—फ़ज्र और मग़रिब और वित्र की नमाज़ में भी कोई कमी नहीं है, जैसे हमेशा पढ़ती है, वैसे ही पढ़े।

मस्अला 7—जुहर, अस्र, इशा की नमाज़ दो रक्अतों से ज़्यादा न पढ़े, पूरी चार रक्अतें पढ़ना गुनाह है, जैसे जुहर के कोई छः फ़र्ज़ पढ़े, तो गुनाहगार होगी।

मस्अला 8—अगर भूले से चार रक्अतें पढ़ लीं, तो अगर दूसरी रक्अत पर बैठ कर अत्तहीयात पढ़ी हैं, तब तो दो रक्अतें फ़र्ज़ की हो गईं और दो रक्अतें नफ़्ल की हो जायेंगी और सज्दा सह्व करना पड़ेगा और अगर दो रक्अत पर न बैठी हो, तो चारों रक्अतें नफ़्ल हो गईं, फ़र्ज़ नमाज़ फिर से पढ़े।

मस्अला 9—अगर रास्ते में कहीं ठहर गई, तो अगर पंद्रह दिन कम ठहरने की नीयत है तो बराबर वह मुसाफ़िर रहेगी। चार रक्अत वाली फ़र्ज़ नमाज़ दो रक्अत पढ़ती रहे और अगर पंद्रह दिन या इससे ज़्यादा ठहरने की नीयत कर ली है तो अब वह मुसाफ़िर नहीं रही। फिर अगर नीयत बदल गई और पन्द्रह दिन से पहले जाने का इरादा हो गया, तब भी मुसाफ़िर न बनेगी। नमाज़ें पूरी-पूरी पढ़े। फिर जब यहां से चले तो अगर यहां से वह जगह तीन मंज़िल हो, जहां जाती है, तो फिर मुसाफ़िर हो जायेगी और जो इससे कम हो तो मुसाफ़िर नहीं हुई।

मस्अला 10—तीन मंज़िल जाने का इरादा करके घर से निकली, लेकिन घर ही से यह भी नीयत है कि फ़लाने गांव[2] में पन्द्रह दिन ठहरूंगी, तो मुसाफ़िर नहीं रही। रास्ते भर पूरी नमाज़ें पढ़े, फिर अगर उस गांव में पहुंच कर पूरे पन्द्रह दिन ठहरना हुआ, तब भी मुसाफ़िर न बनेगी।

मस्अला 11—तीन मंज़िल जाने का इरादा था, लेकिन पहली मंज़िल या दूसरी मंज़िल पर अपना घर पड़ेगा, तब भी मुसाफ़िर नहीं हुई।

मस्अला 12—चार मंज़िल जाने की नीयत से चली, लेकिन पहली दो मंज़िलें हैज़ की हालत में गुज़रीं, तब भी वह मुसाफ़िर नहीं है। अब नहा-धोकर पूरी चार रक्अतें पढ़े। हां, हैज़ से पाक होने के बाद भी

---

1. यानी क़ियाम की हालत में, बजाय चार के छः पढ़े।

2. बशर्ते कि वह गांव उसके शहर से तीन मंज़िल से कम फ़ासले पर हो

वह जगह अगर तीन मंज़िल हो या चलते वक़्त पाक थी, रास्ते में हैज़ आ गया हो, तो वह मुसाफ़िर है, नमाज़ मुसाफ़िरों की तरह पढ़।

मस्अला 13—नमाज़ पढ़ते-पढ़ते नमाज़ के अंदर ही पन्द्रह दिन ठहरने की नीयत हो गई, तो मुसाफ़िर नहीं रही। यह नमाज़ भी पूरी पढ़े।

मस्अला 14—चार दिन के लिए रास्ते में कहीं ठहरना पड़ा, लेकिन कुछ ऐसी बातें हो जाती हैं, रोज़ यह नीयत होती है कि कल परसों चली जाऊंगी, लेकिन जाना नहीं होता। इसी तरह पन्द्रह या बीस दिन या एक महीने या इससे भी ज़्यादा रहना हो गया, लकिन पूरे पन्द्रह दिन रहने की कभी नीयत नहीं हुई, तब भी मुसाफ़िर रहेगी, चाहे जितने दिन इसी तरह गुज़र जायें।

मस्अला 15—तीन मंज़िल जाने का इरादा करके चली, फिर कुछ दूर जाकर किसी वजह से इरादा बदल गया और घर लौट आई तो जब से घर लौटने का इरादा हुआ है, तभी से मुसाफ़िर नहीं रही।

मस्अला 16—कोई अपने ख़ाविंद के साथ रहे। रास्ते में जितना वह ठहरेगा, उतना ही यह ठहरेगी। बग़ैर उसके ज़्यादा नहीं ठहर सकती, तो ऐसी हालत में शौहर की नीयत का एतबार है। अगर शौहर का इरादा पन्द्रह दिन ठहरने का हो तो औरत भी मुसाफ़िर नहीं रही, चाहे ठहरने की नीयत करे या न करे और मर्द का इरादा कम ठहरने का हो, तो औरत भी मुसाफ़िर है।

मस्अला 17—तीन मंज़िल चल के कहीं पहुंची अगर वह अपना घर है, तो मुसाफ़िर नहीं रही, चाहे कम रहे या ज़्यादा और अगर अपना घर नहीं है, तो अगर पंद्रह दिन ठहरने की नीयत हो, तब तो मुसाफ़िर नहीं रही। अब नमाज़ें पूरी-पूरी पढ़े और अगर न अपना घर है, न पन्द्रह दिन ठहरने की नीयत है, तो वहां पहुंच कर भी मुसाफ़िर रहगी। चार रक्अत फ़र्ज़ की दो रक्अतें पढ़ती रहे।

मस्अला 18—रास्ते में कई जगह ठहरने का इरादा है। दस दिन यहां, पांच दिन वहां, बारह दिन वहां, लेकिन पूरे पन्द्रह दिन कहीं ठहरने का इरादा नहीं, तब भी मुसाफ़िर रहेगी।

मस्अला 19—किसी ने अपना शहर बिल्कुल छोड़ दिया किसी दूसरी जगह अपना घर बना लिया और वहीं रहने-सहने लगी। अब पहले शहर से और पहले घर से कोई मतलब नहीं रहा, तो अब वह शहर और

परदेस दोनों बराबर हैं, तो अगर सफ़र करते वक़्त रास्ते में वह पहला शहर पड़े और दो–चार दिन वहां रहना हो, तो मुसाफ़िर रहेगी। नमाज़ें सफ़र की तरह पढ़ेगी।

मस्अला 20—अगर किसी की नमाज़ें सफ़र में क़ज़ा हो गईं तो घर पहुंच कर भी जुहर अस्र, इशा की दो ही रक्अतें क़ज़ा पढ़े और अगर सफ़र से पहले जुहर की नमाज़ क़ज़ा हो गई तो सफ़र की हालत में चार रक्अतें उसकी क़ज़ा पढ़े।

मस्अला 21—ब्याह के बाद औरत अगर मुस्तक़िल तौर पर अपनी ससुराल रहने लगी, तो उसका असली घर ससुराल है, तो अगर तीन मंज़िल चलकर मायके गई और पन्द्रह दिन ठहरने की नीयत नहीं है, तो मुसाफ़िर रहेगी। सफ़र के क़ायदे से नमाज़, रोज़ा अदा करे और अगर वहां का रहना हमेशा के लिए दिल में नहीं ठाना, तो जो वतन पहले से असली था, वही अब भी असली रहेगा।

मस्अला 22—नदी में नाव चल रही है और नमाज़ का वक़्त आ गया, तो उसी नाव पर नमाज़ पढ़ ले। अगर खड़े होकर पढ़ने में सिर घूमे तो बैठकर पढ़े।

मस्अला 23—रेल पर नमाज़ पढ़ने का भी यही हुक्म है कि चलती रेल पर नमाज़ पढ़ना दुरुस्त है और अगर खड़े होकर पढ़ने से सिर घूमे या गिरने का डर है, तो बैठ कर पढ़े।

मस्अला 24—नमाज़ पढ़ते में रेल फिर गई और क़िब्ला दूसरी ओर हो गया, तो नमाज़ ही में घूम जाये और क़िब्ले की ओर मुंह कर ले।

मस्अला 25—अगर तीन मंज़िल जाना हो, तो जब तक मर्दों में से कोई अपन महरम या शौहर साथ न हो, उस वक़्त तक सफ़र करना दुरुस्त नहीं है। बे महरम के साथ सफ़र करना बड़ा गुनाह है। और अगर एक मंज़िल या दो मंज़िल जाना हो, तब भी बे महरम के साथ जाना बेहतर नहीं। हदीस में इससे सख़्ती से मना किया गया है।

मस्अला 26—जिस महरम को खुदा और रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का डर न हो और शरीअत की पाबन्दी न करता हो, ऐसे महरम के साथ भी सफ़र करना दुरुस्त नहीं है।

मस्अला 27—इक्का या बहली पर जा रही है और नमाज़ का वक़्त आ गया तो बहली से उतर कर किसी अलग जगह पर खड़ी होकर नमाज़ पढ़ ले। इसी तरह अगर बहली पर वुज़ू न कर सके, तो उतर कर

किसी आड़ में वुज़ू कर ले। अगर बुर्क़ा पास न हो, तो चादर वग़ैरह में ख़ूब लिपट कर उतरे और नमाज़ पढ़े। ऐसा गहरा पर्दा, जिसमें नमाज़ क़ज़ा हो जाये, हराम है। हर बात में शरीअत की बात को आगे रखे। पर्दे की भी वही हद रखे, जो शरीअत ने बतलाई है। शरीअत की हद से आगे बढ़ना और ख़ुदा से ज़र्दरू होना बड़ी बेवक़ूफ़ी और नादानी है। हां, बे ज़रूरत पर्दे में कमी करना बेग़ैरती और गुनाह है।

मस्अला 28—अगर ऐसी बीमार है कि बैठ कर नमाज़ पढ़ना दुरूस्त है, तब भी चलती बहली पर नमाज़ पढ़ना दुरूस्त नहीं है। और अगर बहली ठहरा ली, लेकिन जुवा बैलों के कंधो पर रखा हुआ है, तब भी उस पर नमाज़ पढ़ना दुरूस्त नहीं है। बैल अलग करके नमाज़ पढ़नी चाहिए। इक्के का भी यही हुक्म है कि जब तक घोड़ा खोल कर अलग न कर दिया जाये, उस वक़्त तक उस पर नमाज़ पढ़ना दुरूस्त नहीं है।

मस्अला 29—अगर किसी को बैठकर नमाज़ पढ़ना दुरूस्त हो, तो पालकी और मियाने पर भी नमाज़ पढ़ना दुरूस्त है, लेकिन पालकी जिस वक़्त कहारों के कंधों पर हो, उस वक़्त पढ़ना दुरूस्त नहीं। ज़मीन पर रखवा ले, तब पढ़े।

मस्अला 30—अगर ऊंट से या बहली से उतरने में जान या माल का अंदेशा है, तो बिना उतरे भी नमाज़ दुरूस्त है।

घर में मौत हो जाने का बयान

मस्अला 1—जब आदमी मरने लगे, तो चित लिटा दो। उसके पैर क़िब्ले की तरफ़ कर दो और सर ऊंचा कर दो मुंह ताकि क़िब्ले की तरफ़ हो जाये और उस के पास बैठकर ज़ोर–ज़ोर से कलमा पढ़ो ताकि तुमको पढ़ते सुनकर ख़ुद भी कलमा पढ़ने लगे और उसको कलमा पढ़ने का हुक्म न करो, क्योंकि वह वक़्त बड़ा कठिन है न जाने उसके मुंह से क्या निकल जाये।

मस्अला 2—जब वह एक बार कलमा पढ़ ले, तो चुप ही रहो। यह कोशिश न करो कि बराबर कलमा जारी रहे और पढ़ते–पढ़ते दम निकले, क्योंकि मतलब तो सिर्फ़ इतना है कि सबसे आख़िरी बात, जो उसके मुंह से निकले, कलमा होना चाहिए, इसकी ज़रूरत नहीं कि सांस टूटने तक कलमा बराबर जारी रहे। हां, अगर कलमा पढ़ लेने के बाद फिर कोई दुनिया की

बात–चीत करे तो फिर कलमा पढ़ने लगो। जब वह पढ़ ले तो फिर चुप रहो।

मस्अला 3—जब सांस उखड़ जाये और जल्दी–जल्दी चलने लगे और टांगे ढीली पड़ जायें कि खड़ी न हो सके और नाक टेढ़ी हो जाये और कंपटियां बैठ जायें, तो समझो उसकी मौत आ गई। उस वक़्त कलमा ज़ोर–ज़ोर से पढ़ना शुरू करो।

मस्अला 4—सूरः यासीन पढ़ने से मौत की सख़्ती कम होती है। उसके सिरहाने या और कहीं उसके पास बैठ कर पढ़ दो या किसी से पढ़वा दो।

मस्अला 5—उस वक़्त कोई ऐसी बात न करो कि उसका दिल दुनिया में लगा रहे, क्योंकि यह वक़्त दुनिया से जुदाई और अल्लाह तआला के दरबार में हाज़िरी का वक़्त है, ऐसे काम करो और ऐसी बातें करो कि दुनिया से दिल फिर कर अल्लाह तआला की तरफ़ मायल हो जाये कि मुर्दे की भलाई इसी में है। ऐसे वक़्त बाल–बच्चों को सामने लाना और ऐसी बातें करना कि उसका दिल उसमें लग जाये और उसकी मुहब्बत दिल में समा जाये, बड़ी बुरी बात है। दुनिया की मुहब्बत लेकर रूख़्सत हुई, तो अल्लाह की पनाह ! बुरी मौत मरी।

मस्अला 6—मरते वक़्त अगर उसके मुंह से, खुदा न करे, कोई कुफ्र की बात निकल जाये, तो इस का ख़्याल न करो, न इसकी चर्चा करो, बल्कि यह समझो कि मौत की सख़्ती से अक़्ल ठिकाने नहीं रही, इस वजह से ऐसा हुआ और अक़्ल जाते रहने के वक़्त जो कुछ हो सब माफ़ है और अल्लाह तआला से उसकी बख़्शिश की दुआ करती रहो।

मस्अला 7—जब मर जाये तो सब अंग दुरूस्त करो और किसी कपड़े से उसका मुंह इस तर्कीब से बांधो कि कपड़ा ठोढ़ी के नीचे से निकाल कर उसके दोनों सिरे सिर पर से ले जाओ और गिरह लगा दो, ताकि मुंह फैल न जाये और आंखें बंद कर दो और पैर के दोनों अंगूठे मिलाकर बांध दो ताकि टांगे फैलने न पायें, फिर चादर उढ़ा दो और नहलाने और कफ़नाने में जहां तक हो सके, जल्दी करो।

मस्अला 8—मुंह वगै़रह बन्द करते वक़्त यह दुआ पढ़ो—

बिस्मिल्लाहि व अला मिल्लति रसूलिल्लाहि० بِسْمِ اللّٰهِ وَعَلٰى مِلَّةِ رَسُوْلِ اللّٰهِ

मस्अला 9—मर जाने के बाद उसके पास लोबान वगै़रह कुछ

खुश्बू लगा दी जाये और हैज़ व निफ़ास वाली औरत, जिसको नहाने की ज़रूरत हो, उसके पास न रहे।

मस्अला 10—मर जाने के बाद जब तक उसको गुस्ल न दिया जाये, उसके पास कुरआन मजीद पढ़ना दुरूस्त नहीं।

नहलाने का बयान

मस्अला 1—जब कफ़न–दफ़न का सब सामान हो जाये और नहलाना चाहो तो पहले किसी तख़्त या बड़े तख़्ते को लोबान या अगरबत्ती वग़ैरह खुश्बूदार चीज़ की धूनी दे दो, तीन बार या पांच बार या सात बार चारों तरफ़ धूनी देकर मुर्दे को उस पर लिटा दो और कपड़े उतार लो और कोई कपड़ा नाफ़ से लेकर ज़ानू तक डाल दो कि इतना बदन छिपा रहे।

मस्अला 2—अगर नहाने की कोई जगह अलग है कि पानी कहीं अलग बह जायेगा, तो ख़ैर, नहीं तो तख़्त के नीचे गढ़ा खुदवा लो कि सारा पानी उसी में जमा रहे। अगर गढ़ा न खुदवाया और पानी सारे घर में फैला, तब भी कोई गुनाह नहीं। कहने का मतलब सिर्फ़ इतना है कि आने जाने में किसी को तक्लीफ़ न हो और कोई फिसल कर न गिर पड़े।

मस्अला 3—नहलाने का तरीक़ा यह है कि पहले मुर्दे को इस्तिंजा करा दो, लेकिन उसकी रानों और इस्तिंजे की जगह अपना हाथ मत लगाओ और उस पर निगाह भी न डालो, बल्कि अपने हाथ में कोई कपड़ा लपेट लो और जो कपड़ा नाफ़ से लेकर ज़ानू तक पड़ा है, उसके अंदर–अंदर धुलाओ फिर उसको वुज़ू कराओ, लेकिन न कुल्ली कराओ, न नाक में पानी डालो, न गट्टे तक हाथ धुलाओ, पहले मुंह धुलाओ, फिर हाथ कुहनी सहित, फिर सिर का मसह, फिर दोनों पैर और तीन बार रूई तर करके दांतों और मसोढ़ों पर फेर दी जाये और नाक के दोनों सूराख़ों में फेर दी जाये, तो भी जायज़ है। और अगर मुर्दा नहाने की ज़रूरत में या हैज़ व निफ़ास में मर जाये, तो इस तरह से मुंह और नाक में पानी पहुंचाना ज़रूरी है और नाक और मुंह और कानों में रूई भर दो ताकि वुज़ू कराते और नहलाते वक़्त पानी न जाने पाये। जब वुज़ू करा चुका तो सिर को गुले ख़ैरू से या किसी और चीज़ से , जिससे साफ़ हो जाये जैसे बेसन या खली से मल कर धोये और साफ़ करे, फिर मुर्दे को बायीं करवट पर लिटा कर बेरी के पत्ते डाल कर पकाये हुए हल्के गरम पानी को तीन बार सिर से पैर तक

डाले, यहां तक कि बायीं करवट तक पहुंच जाये, फिर दाहिनी करवट पर लिटा दे और इसी तरह सिर से पैर तक तीन बार इतना पानी डाले कि दाहिनी करवट तक पहुंच जाये, इसके बाद मुर्दे को अपने बदन की टेक पर थोड़ा बिठा दे और उसके पेट को धीरे-धीरे मले और दबा दे और कुछ पाख़ाना निकले, तो उसको पोंछ कर धो डाले और गुस्ल में उसके निकलने से कुछ नुक़्सान नहीं आया, अब न दोहराओ। इसके बाद फिर उसको बायीं करवट पर लिटा दे और कपूर पड़ा हुआ पानी सिर से पैर तक तीन बार डाले, फिर सारा बदन किसी कपड़े से पोंछकर कफ़्ना दो।

मस्अला 4—अगर बेरी के पत्ते को डालकर पकाया हुआ पानी न हो तो यही हल्का गरम पानी काफ़ी है। इसी से उसी तरह तीन बार नहला दे और बहुत तेज़ गरम पानी से मुर्दे को न नहलाओ और नहलाने का यह तरीक़ा जो बयान हुआ है सुन्नत है। अगर कोई इस तरह तीन बार न नहलाये, बल्कि एक बार सारे बदन को धो डाले, तब भी फ़र्ज़ अदा हो गया।

मस्अला 5—जब मुर्दे को कफ़न पर रखो तो सिर पर इत्र लगा दो। अगर मर्द हो तो दाढ़ी पर भी इत्र लगा दो, फिर माथा और नाक और दोनों हथेली और दोनों घुटनों और दोनों पांवों पर काफ़ूर मल दो। कुछ लोग कफ़न में इत्र लगाते हैं और इत्र की फुरेरी कान में रख देते हैं यह सब जिहालत है। जितना शरीअत में आया है, उससे ज़्यादा मत करो।

मस्अला 6—बालों में कंघी न करो, नाख़ून न काटो और न कहीं के बाल काटो। सब इसी तरह रहने दो।

मस्अला 7—अगर कोई मर्द मर गया और मर्दों में कोई नहलाने वाला नहीं है, तो बीवी के अलावा और किसी औरत को गुस्ल देना जायज़ नहीं है, चाहे महरम ही क्यों न हो। अगर बीवी भी न हो, तो उस को तयम्मुम करा दो, लेकिन उसके बदन में हाथ न लगाओ, बल्कि अपने हाथ में पहले दस्ताने पहन लो, तब तयम्मुम कराओ।

मस्अला 8—किसी का ख़ाविंद मर गया तो उसकी बीवी को उसका नहलाना और कफ़्नाना दुरुस्त है और अगर बीवी मर जाये तो ख़ाविंद का बदन छूना और हाथ लगाना दुरुस्त नहीं, हां, देख सकता है और कपड़े के ऊपर से हाथ लगाना भी दुरुस्त है।

मस्अला 9—जो औरत हैज़ या निफ़ास से हो, वह मुर्दे को न नहलाये कि यह मकरूह और मना है।

मस्अला 10—बेहतर यह है कि जिसका रिश्ता ज़्यादा क़रीब हो, वह नहलाये, अगर वह न नहला सके, तो कोई दीनदार नेक औरत नहलाये।

मस्अला 11—अगर नहलाने में कोई ऐब देखे तो किसी से न कहे, अगर ख़ुदा–न–ख़्वास्ता मरने से उसका चेहरा बिगड़ गया और काला हो गया, तो यह भी न कहे और बिल्कुल इसकी चर्चा न करे कि सब नाजायज़ है। हां, अगर वह खुल्लम खुल्ला कोई गुनाह करती हो, जैसे नाचती थी या गाने–बजाने का पेशा करती थी, या रंडी थी, तो ऐसी बातें कह देना दुरूस्त है कि और लोग ऐसी बाचों से बचें और तौबा करें।

कफ़्नाने का बयान

मस्अला 1—औरत[1] को पांच कपड़ों में कफ़्नाना दुरूस्त है— एक कुर्त्ता दूसरे इज़ार, तीसरे सिर बंद, चौथे चादर, पांचवे सीना बंद। इज़ार सिर से लेकर पांव तक होना चाहिए और चादर उससे एक हाथ बड़ी हो और कुर्ता गले से लेकर पांव तक हो, लेकिन उसमें कली न हो, न आस्तीन, और सिर बन्द तीन हाथ लम्बा और सीना बन्द छातियों से लेकर रानों तक चौड़ा और इतना लम्बा हो कि बंद हो जाये।

मस्अला 2—अगर कोई पांच कपड़ों में न कफ़्नाये, बल्कि तीन कपड़े कफ़न में दे—एक इज़ार दूसरे चादर, तीसरे सिर बन्द, तो यह भी दुरूस्त है और इतना कफ़न भी काफ़ी है और तीन कपड़ों से कम देना मकरूह और बुरा है। हां, अगर कोई मजबूरी या लाचारी हो तो कम देना भी दुरूस्त है।

मस्अला 3—सीना बंद अगर छातियों से लेकर नाफ़ तक हो, तब भी दुरूस्त है, लेकिन रानों तक होना ज़्यादा अच्छा है।

मस्अला 4—पहले कफ़न को तीन बार या पांच बार या सात बार लोबान वग़ैरह की धूनी दे दो, तब उसमें मुर्दे को कफ़्नाओ।

मस्अला 5—कफ़्नाने का तरीक़ा यह है कि पहले चादर बिछाओ, फिर इज़ार, उसके ऊपर कुर्त्ता, फिर मुर्दे को उस पर ले जाकर पहले कुर्त्ता

---

1. मर्द के लिए सिर्फ़ तीन कपड़े सुन्नत हैं—इज़ार, कुर्ता, चादर।

पहनाओ, और सिर के बालों को दो हिस्सा करके कुर्ते के ऊपर सीने पर डाल दो। एक हिस्सा दाहिनी तरफ़ और एक बायीं तरफ़। इसके बाद सिर बंद सिर पर और बालों पर डाल दो, उसको न बांधो, न लपेटो फिर इज़ार बंद लपेट दो, पहले बायीं तरफ़ लपेट दो, फिर दाहिनी तरफ़, उसके बाद सीना बन्द बांध दो, फिर चादर लपेटो, पहले बायीं तरफ़, फिर दाहिनी तरफ़ फिर किसी बज्जी से पैर और सिर की तरफ़ कफ़न बांध दो और एक बंद से कमर के पास भी बांध दो कि रास्ते में कहीं खुल न पड़े।

मस्अला 6—सीना बन्द को अगर सिर बन्द के बाद इज़ार लपेटने से पहले ही बांध दिया तो यह भी जायज़ है और सब कफ़्नों के ऊपर से बांधे तो भी दुरुस्त है।

मस्अला 7—जब कफ़्ना चुको तो रुख़्सत करो कि मर्द लोग नमाज़ पढ़कर दफ़्ना दें।

मस्अला 8—अगर औरतें जनाज़े की नमाज़ पढ़ लें तो भी जायज़ है। लेकिन चूंकि ऐसा मौक़ा कभी नहीं होता, इसलिए हम नमाज़ जनाज़ा और दफ़्नाने के मस्अले बयान नहीं करते।

मस्अला 9—कफ़न में क़ब्र में अहदनामा या अपने पीर का शजरा या और कोई दुआ रखना दुरुस्त नहीं। इसी तरह कफ़न पर या सीना पर काफ़ूर से या रोशनाई से कलमे वग़ैरह या कोई और दुआ लिखना भी दुरुस्त नहीं। हां, काबा शरीफ़ का ग़िलाफ़ या अपने पीर का रूमाल वग़ैरह कोई कपड़ा बरकत के लिए रख देना दुरुस्त है।

मस्अला 10—जो बच्चा ज़िंदा पैदा हुआ, फिर थोड़ी ही देर में मर गया या पैदा होने के तुरन्त बाद ही मर गया, तो वह भी इसी क़ायदे से नहला दिया जाये और कफ़्ना के नमाज़ पढ़ी जाये, फिर दफ़्न कर दिया जाये और उसका नाम भी कुछ रखा जाये।

मस्अला 11—जो लड़का मां के पेट से मरा ही पैदा हुआ और पैदा होते वक़्त ज़िंदगी की कोई निशानी नहीं पाई गई, उसको भी इसी तरह नहलाओ, लेकिन क़ायदे के मुताबिक़ कफ़न न दो, बल्कि किसी एक कपड़े में लपेट कर दफ़्न कर दो और नाम उसका भी कुछ न कुछ रख देना चाहिए।

मस्अला 12—अगर हमल गिर जाये, तो अगर बच्चे के हाथ—पांव, मुंह—नाक वग़ैरह अंग कुछ न बने हों, तो न नहलाये और न कफ़्नाये, कुछ भी न करे, बल्कि किसी कपड़े में लपेट कर एक गढ़ा खोदकर गाड़ दो और अगर उस बच्चे के कुछ अंग बन गये तो उसका वही हुक्म है, जो मुर्दा बच्चा

पैदा होने का है यानी नाम रखा जाये और नहला दिया जाये, लेकिन क़ायदे के मुताबिक़ कफ़न न दिया जाये, न नमाज़ पढ़ी जाये बल्कि कपड़े में लपेट कर दफ़्न कर दिया जाये।

मस्अला 13—लड़के का सिर्फ़ सिर निकला, उस वक़्त वह ज़िंदा था, फिर मर गया, तो इसका वही हुक्म है, जो मुर्दा पैदा होने का हुक्म है, हां, अगर ज़्यादा हिस्सा निकल आया, उसके बाद मरा तो ऐसा समझेंगे कि ज़िंदा पैदा हुआ और अगर सिर की तरफ़ से पैदा हुआ, तो सीने तक निकलने में समझेंगे कि ज़्यादा हिस्सा निकल आया और अगर उलटा पैदा हुआ तो नाफ़ तक निकलना चाहिए।

मस्अला 14—अगर छोटी लड़की मर जाये, जो अभी जवान नहीं हुई, लेकिन जवानी के क़रीब पहुंच गई है, तो उसके कफ़न के भी वही पांच कपड़े सुन्नत हैं, जो जवान औरत के लिए हैं। अगर पांच कपड़े न दो, तीन ही कपड़े दो, तब भी काफ़ी है कि जो हुक्म सयानी औरत का है, वही कुंवारी और छोटी लड़की का भी हुक्म है, मगर सयानी के लिए वह हुक्म ताकीद के साथ है और कम उम्र के लिए बेहतर है।

मस्अला 15—जो लड़की बहुत छोटी हो, जवानी के क़रीब भी न हुई हो, उसके लिए भी बेहतर यही है कि पांच कपड़े दिये जायें और दो कपड़े देना भी दुरुस्त है—एक इज़ार, एक चादर

मस्अला 16—अगर कोई लड़का मर जाये और उसके नहलाने और कफ़्नाने की तुमको ज़रूरत पड़े तो, इसी तर्कीब से नहला दो, जो ऊपर बयान हो चुकी और कफ़्नाने का भी वही तरीक़ा है, जो तुम को मालूम हुआ। बस इतना ही फ़र्क़ है कि औरत का कफ़न पांच कपड़े हैं और मर्द का कफ़न तीन कपड़े एक चादर, एक इज़ार, एक कुर्ता।

मस्अला 17—मर्द के कफ़न में अगर दो ही कपड़े हों यानी चादर और इज़ार हो और कुर्ता न हो, तब भी कुछ हरज नहीं। दो कपड़े भी काफ़ी हैं और दो से कम देना मकरूह है, लेकिन अगर कोई मजबूरी हो तो मकरूह भी नहीं।

मस्अला 18—जो चादर जनाज़े के ऊपर यानी चारपाई पर डाली जाती है, वह कफ़न में शामिल नहीं है। कफ़न सिर्फ़ उतना ही है, जो हमने बयान किया।

मस्अला 19—जिस शहर में कोई मरे, वहीं उसका कफ़न दफ़न दिया जाये दूसरी जगह ले जाना बेहतर नहीं है। हां, अगर कोई जगह

कोस–आधा कोस दूर हो तो, तो वहां ले जाने में कोई हरज नहीं है।

हैज़ और इस्तिहाज़ा का बयान

(अगर पढ़ाने वाला मर्द हो तो इन मस्‌अलों को खुद न पढ़ाये, या तो अपनी बीवी के वास्ते से समझाये या पढ़ने वाली को हिदायत कर दे कि इन मस्‌अलों का अपने आप देख ले और अगर पढ़ने वाला कम उम्र लड़का हो, उसको भी न पढ़ाये, बल्कि हिदायत कर दें कि बाद को देख लेगा।)

मस्‌अला 1—हर महीने में आगे की राह से जो मामूली ख़ून आता है, उसको हैज़ (माहवारी) कहते हैं।

मस्‌अला 2—कम से कम हैज़ की मुद्दत तीन दिन, तीन रात है और ज़्यादा से ज़्यादा दस दिन, दस रात है। किसी को तीन दिन, तीन रात से कम ख़ून आया, तो वह हैज़ नहीं है, बल्कि इस्तिहाज़ा है कि किसी बीमारी की वजह से ऐसा हो गया है और अगर दस दिन से ज़्यादा ख़ून आया है, तो जितने दिस दिन से ज़्यादा आया है, वह भी इस्तिहाज़ा है।

मस्‌अला 3—अगर तीन दिन तो हो गये, लेकिन तीर रातें नहीं हुईं, जैसे जुमा की सुबह से ख़ून आया और इतवार को शाम के वक़्त मग़्रिब के बाद बंद हो गया, तब भी यह हैज़ नहीं इस्तिहाज़ा है। अगर तीन दिन–रात से ज़रा भी कम हो तो वह हैज़ नहीं, जैसे जुमा को सूरज निकलते वक़्त ख़ून आया और पीर के दिन सूरज निकलने से ज़रा पहले बंद हो गया, तो वह हैज़ नहीं, इस्तिहाज़ा है।

मस्‌अला 4—हैज़ की मुद्दत के अंदर लाल, पीला, मटियाला, काला जो रंग आये, सब हैज़ है। जब तक गद्दी बिल्कुल सफ़ेद न दिखाई दे और जब गद्दी बिल्कुल सफ़ेद रहे, जैसी कि रखी गई थी, तो अब हैज़ से पाक हो गई।

मस्‌अला 5—नौ वर्ष से पहले और पचपन वर्ष बाद किसी को हैज़ नहीं आता, इसलिए नौ वर्ष से छोटी लड़की को, जो ख़ून आये, वह हैज़ नहीं है, बल्कि इस्तिहाज़ा है और अगर पचपन वर्ष के बाद कुछ निकले, तो अगर ख़ून ख़ूब लाल या काला हो, तो हैज़ है। और अगर पीला या हरा या मटियाला रंग हो, तो हैज़ नहीं, बल्कि इस्तिहाज़ा है, हां, अगर उस औरत को इस उम्र से पहले भी पीला या हरा या मटियाला रंग आता हो, तो पचपन वर्ष के बाद भी ये रंग हैज़ समझे जायेंगे और अगर आदत के

ख़िलाफ़ ऐसा हुआ, तो हैज़ नहीं, बल्कि इस्तिहाज़ा है।

मस्अला 6—किसी को हमेशा तीन या चार दिन ख़ून आता था, फिर किसी महीने में ज़्यादा आ गया, लेकिन दस दिन से ज़्यादा नहीं आया, वह सब हैज़ है और अगर दस दिन से भी बढ़ गया तो जितने दिन पहले से आदत के हैं, उतना तो हैज़ है, बाक़ी सब इस्तिहाज़ा है। इसकी मिसाल यह है कि किसी को हमेशा तीन दिन हैज़ आने की आदत है, लेकिन किसी महीने में नौ दिन या दस दिन–रात ख़ून आया, तो वह सब हैज़ है और अगर दस दिन–रात से एक लम्हे के लिए भी ज़्यादा ख़ून आये, तो वही तीन दिन हैज़ के हैं, और बाक़ी दिनों का सब इस्तिहाज़ा है। इन दिनों की नमाज़ें क़ज़ा पढ़ना वाजिब है।

मस्अला 7—एक औरत है, जिसकी कोई आदत मुक़र्रर नहीं है, कभी चार दिन ख़ून आता है, कभी सात दिन। इसी तरह बदलता रहता है, कभी दस दिन भी आ जाता है, तो यह सब हैज़ हैं। ऐसी औरत को अगर कभी दस दिन–रात ख़ून आये तो देखो कि इससे पहले महीने मे कितने दिन हैज़ आया था, बस उतने ही दिन हैज़ के हैं और बाक़ी सब इस्तिहाज़ा है।

मस्अला 8—किसी को हमेशा चार दिन हैज़ आता था, फिर एक महीने में पांच दिन ख़ून आया इसके बाद दूसरे महीने में पंद्रह दिन ख़ून आया, तो इन पंद्रह दिनों में से पांच दिन हैज़ के हैं और दस दिन इस्तिहाज़ा है और पहली आदत के एतबार न करेंगे और यह समझेंगे कि आदत बदल गई और पांच दिन की आदत हो गई।

मस्अला 9—किसी को दस दिन से ज़्यादा ख़ून आया और उसको अपनी पहली आदत बिल्कुल याद नहीं कि पहले महीने में कितने दिन ख़ून आया था, तो उसके मस्अले बहुत बारीक है जिनका समझना मुश्किल है और ऐसा मौक़ा भी कम आता है, इसलिए हम इसका हुक्म बयान नहीं करते। अगर कभी ज़रूरत पड़े, तो किसी बड़े आलिम से पूछ लेना चाहिए और किसी ऐसे–वैसे मामूली मौलवी से हरगिज़ न पूछे।

मस्अला 10—किसी लड़की ने पहले–पहल ख़ून देखा, तो अगर दस दिन या उससे कुछ कम आये, हैज़ है और जो दस दिन से ज़्यादा आये, तो पूरे दस दिन हैज़ है, अगर जितना ज़्यादा हो, वह सब इस्तिहाज़ा है।

मस्अला 11—किसी ने पहले–पहल ख़ून देखा और वह किसी तरह बंद न हुआ, कई महीने तक बराबर आता रहा, तो जिस दिन ख़ून आया है, उस दिन से लेकर दस दिन–रात हैज़ है, इसके बाद बीस दिन

इस्तिहाज़ा है। इसी तरह बराबर दस दिन हैज़ और बीस दिन इस्तिहाज़ा समझा जायेगा।

मस्अला 12—दो हैज़ के दर्मियान में पाक रहने की मुद्दत कम से कम पंद्रह दिन है और ज़्यादा की कोई हद नहीं। सो अगर किसी वजह से किसी को हैज़ आना बंद हो जाये, तो जितने महीने तक ख़ून न आयेगा, पाक रहेगी।

मस्अला 13—अगर किसी को तीन दिन, तीन रात ख़ून आया, फिर पंद्रह दिन तक पाक रही, फिर तीन दिन–रात ख़ून आया, तो तीन दिन पहले के और तीन दिन ये, जो पंद्रह दिन के बाद के हैं, हैज़ के हैं और बीच में पंद्रह दिन पाकी का ज़माना है।

मस्अला 14—और अगर एक या दो दिन ख़ून आया, फिर पंद्रह दिन पाक रही, फिर एक या दो दिन ख़ून आया, तो बीच में पंद्रह दिन तो पाकी का ज़माना ही है, इधर–उधर एक या दो दिन जो ख़ून आया है, वह भी हैज़ नहीं, इस्तिहाज़ा है।

मस्अला 15—अगर एक दिन या कई दिन ख़ून आया, फिर पंद्रह दिन से कम पाक रही है, उसका कुछ एतबार नहीं है, बल्कि यों समझेंगे कि गोया अव्वल से आख़िर तक बराबर ख़ून जारी रहा, सो जितने दिन हैज़ आने की आदत हो, उतने दिन तो हैज़ के हैं और बाक़ी सब इस्तिहाज़ा है। मिसाल इसकी यह है कि किसी को हर महीने की पहली और दूसरी और तीसरी तारीख़ हैज़ आने का मामूल है फिर किसी महीने में ऐसा हुआ कि पहली तारीख़ को ख़ून आया, फिर चौदह दिन पाक रही, फिर एक दिन ख़ून आया, तो ऐसा समझेंगे की सोलह दिन गोया बराबर ख़ून आया किया तो उसमें से तीन दिन शुरू के तो हैज़ के हैं और तेरह दिन इस्तिहाज़ा है और अगर चौथी–पांचवी–छठी तारीख़ हैज़ की आदत थी, तो ये ही तारीख़ें हैज़ की हैं और तीन दिन शुरू के और दस दिन बाद के इस्तिहाज़ा के हैं और अगर इसकी कुछ आदत न हो, बल्कि पहले पहल ख़ून आया हो, तो दस दिन हैज़ है और छः दिन इस्तिहाज़ा है।

मस्अला 16—हमल के ज़माने में जो ख़ून आये, वह भी हैज़ नहीं, बल्कि इस्तिहाज़ा है, चाहे जितने दिन आये।

मस्अला 17—बच्चा पैदा होने के वक़्त बच्चा निकलने से पहले जो ख़ून आये, वह भी इस्तिहाज़ा है, बल्कि जब तक बच्चा आधे से ज़्यादा न निकल आये, तब तक जो ख़ून आयेगा, उसको इस्तिहाज़ा ही कहेंगे।

हैज़ के हुक्मों का बयान

मस्अला 1—हैज़ के ज़माने में नमाज़ पढ़ना और रोज़ा रखना ठीक नहीं, इतना फ़र्क़ है कि नमाज़ तो बिल्कुल माफ़ हो जाती है, पाक होने के बाद भी इसकी क़ज़ा वाजिब नहीं होती, लेकिन रोज़ा माफ़ नहीं होता, पाक होने के बाद क़ज़ा रखने पड़ेंगे।

मस्अला 2—अगर फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ने में हैज़ आ गया, तो वह नमाज़ भी माफ़ हो गई। पाक होने के बाद उसकी क़ज़ा न पढ़ और अगर नफ़्ल या सुन्नत में हैज़ आ गया, तो उसकी क़ज़ा पढ़नी पढ़ेगी और अगर आधे रोज़े के बाद हैज़ आया, तो वह रोज़ा टूट गया। जब पाक हो, तो क़ज़ा रखे। और अगर नफ़्ल रोज़े में हैज़ आ जाये तो उसकी भी क़ज़ा रखे।

मस्अला 3—अगर नमाज़ के आख़िरी वक़्त में हैज़ आया और अभी नमाज़ नहीं पढ़ी है, तब भी माफ़ हो गई।

मस्अला 4—हैज़ के ज़माने में मर्द के पास रहना यानी सोहबत करना, दुरूस्त नहीं और सोहबत के अलावा और सब बातें दुरूस्त हैं यानी साथ खाना-पीना, लेटना वग़ैरह दुरूस्त है।

मस्अला 5—किसी की आदत पांच दिन की या नौ दिन की थी, तो जितने दिन की आदत हो, उतने ही दिन ख़ून आया, फिर बंद हो गया, तो जब तक नहा न ले, तब तक सोहबत करना दुरूस्त नहीं और अगर गुस्ल न करे तो जब एक नमाज़ का वक़्त गुज़ार जाये कि एक नमाज़ की क़ज़ा उसके ज़िम्मे वाजिब हो जाये, तब सोहबत दुरूस्त है, इससे पहले दुरूस्त नहीं।

मस्अला 6—अगर आदत पांच दिन की थी और ख़ून चार ही दिन आकर बंद हो गया, तो नहा कर नमाज़ पढ़ना वाजिब है, लेकिन जब तक पांच दिन पूरे न हो लें, तब तक सोहबत करना दुरूस्त नहीं है कि शायद फिर ख़ून आ जाये।

मस्अला 7—और अगर दस दिन-रात हैज़ आया, तो जब से ख़ून बंद हो जाये, उसी वक़्त से सोहबत करना दुरूस्त है, चाहे नहा चुकी हो या अभी न नहायी हो।

मस्अला 8—अगर एक या दो दिन ख़ून आकर बंद हो गया, तो नहाना वाजिब नहीं है, वुज़ू करके नमाज़ पढ़े, लेकिन अभी सोहबत करना दुरूस्त नहीं है। अगर पंद्रह दिन गुज़रने से पहले ख़ून आ जाये तो अब

मालूम होगा कि वह हैज़ का ज़माना था। हिसाब से जितने दिन हैज़ के हों, उनको हैज़ समझे और अब गुस्ल करके नमाज़ पढ़े और अगर पूरे पंद्रह दिन बीच में गुज़र गये और ख़ून नहीं आया तो मालूम हुआ कि वह इस्तिहाज़ा था, सो एक दिन या दो दिन ख़ून आने की वजह से जो नमाज़ें नहीं पढ़ीं, अब उनकी क़ज़ा पढ़नी चाहिए।

मस्अला 9—तीन दिन हैज़ आने की आदत है, लेकिन किसी महीने में ऐसा हुआ कि तीन दिन पूरे हो चुके और अभी ख़ून बंद नहीं हुआ, तो अभी गुस्ल न करे, न नमाज़ पढ़े। अगर पूरे दस दिन-रात या उस से कम में ख़ून बंद हो जाये, तो इन सब दिनों की नमाज़ें माफ़ हैं, कुछ क़ज़ा न पढ़ना पड़ेगी और यों कहेंगे कि आदत बदल गई, इसलिए ये सब दिन हैज़ के होंगे और अगर ग्यारहवें दिन भी ख़ून आया, तो मालूम हुआ कि हैज़ के सिर्फ़ तीन ही दिन थे, यह सब इस्तिहाज़ा है। पस ग्यारहवें दिन नहाये और सात दिन की नमाज़ें क़ज़ा पढ़े और अब नमाज़ें न छोड़े।

मस्अला 10—अगर दस दिन से कम हैज़ आया और ऐसे वक़्त ख़ून बंद हुआ कि नमाज़ का वक़्त बिल्कुल तंग है कि जल्दी और फ़ुरती से नहा-धो डाले, तो नहाने के बाद बिल्कुल ज़रा-सा वक़्त बचेगा, जिसमें सिर्फ़ एक बार अल्लाहु अक्बर कह कर नीयत बांध सकती है, इससे ज़्यादा कुछ नहीं पढ़ सकती, तब भी उस वक़्त की नमाज़ वाजिब हो जायेगी और क़ज़ा पढ़नी पड़ेगी और अगर इससे भी कम वक़्त हो, तो वह नमाज़ माफ़ है, उसकी क़ज़ा पढ़नी वाजिब नहीं।

मस्अला 11—और अगर पूरे दस दिन-रात हैज़ आया और ऐसे वक़्त बंद हुआ कि बिल्कुल ज़रा-सा बस इतना वक़्त है कि एक बार अल्लाहु अक्बर कह सकती है, इससे ज़्यादा कुछ नहीं कह सकती और नहाने की भी गुंजाइश नहीं, तो भी नमाज़ वाजिब हो जाती है, उसकी क़ज़ा पढ़नी चाहिए।

मस्अला 12—अगर रमज़ान शरीफ़ में दिन को पाक हुई, तो अब पाक होने के बाद कुछ खाना-पीना दुरूस्त नहीं है। शाम तक रोज़ेदारों की तरह से रहना वाजिब है, लेकिन यह दिन रोज़े में शुमार न होगा, बल्कि इसकी भी क़ज़ा रखनी पड़ेगी।

मस्अला 13—और रात को पाक हुई और पूरे दस दिन रात हैज़ आया है, तो अगर इतनी ज़रा सी रात बाक़ी हो, जिसमें एक बार अल्लाहु

अक्बर भी न कह सके, तब भी सुबह का रोज़ा वाजिब है और अगर दस दिन से कम हैज़ आया है, तो अगर इतनी रात बाक़ी हो कि फुरती से गुस्ल कर लेगी, लेकिन गुस्ल के बाद एक बार भी अल्लाहु अक्बर न कह पायेगी, तो भी सुबह का रोज़ा वाजिब है। अगर इतनी रात तो थी, लेकिन गुस्ल नहीं किया तो रोज़ा न तोड़े, बल्कि रोज़े की नीयत कर ले और सुबह को नहा ले और जो इससे भी कम रात हो यानी गुस्ल भी न कर सके, तो सुबह का रोज़ा जायज़ नहीं है, लेकिन दिन को कुछ खाना–पीना भी दुरुस्त नहीं है, बल्कि सारी दिन रोज़ेदारी की तरह रहे, फिर उसकी क़ज़ा रखे।

मस्अला 14—जब ख़ून सूराख़ से बाहर की खाल में निकल आये, तब से हैज़ शुरू हो जाता है, उस ख़ाल से बाहर चाहे निकले या न निकले, इसका कुछ एतबार नहीं है, तो अगर कोई सूराख़ के अंदर रूई वग़ैरह रख ले, जिस से ख़ून बाहर न निकलने पाये, तो जब तक सूराख़ के अंदर ही अंदर ख़ून रहे और बाहर वाली रूई वग़ैरह पर ख़ून का धब्बा न आये, तब तक हैज़ का हुक्म न लगायेंगे, जब ख़ून का धब्बा बाहर वाली खाल में आ जाये या रूई वग़ैरह को ख़ींचकर बाहर निकाल ले, तब से हैज़ का हिसाब होगा।

मस्अला 15—पाक औरत के फ़ुर्ज के अंदरूनी हिस्से में गद्दी रख ली थी, जब सुबह हुई, तो उस पर ख़ून का धब्बा देखा, तो जिस वक़्त से धब्बा देखा है, उसी वक़्त से हैज़ का हुक्म लगा देंगे।

इस्तिहाज़ा और माज़ूर के हुक्मों का बयान

मस्अला 1—इस्तिहाज़ा का हुक्म ऐसा है जैसे किसी की नक्सीर फूटे और बंद न हो, ऐसी औरत नमाज़ भी पढ़े और रोज़ा भी रखे, क़ज़ा न करनी चाहिए और उससे सोहबत करना भी दुरुस्त है।

मस्अला 2—जिसको इस्तिहाज़ा हो या ऐसी नक्सीर फूटी हो कि किसी तरह बन्द नहीं होती या कोई ऐसा ज़ख़्म है कि बराबर रिसना रहता है कोई घड़ी बहना बन्द नहीं होता या पेशाब की बीमारी है कि हर वक़्त

1. शरीअत में माज़ूर. उसे कहते हैं, जो किसी शरई उज़्र (बहाना) की वजह से कोई ज़रूरी काम न कर सके।

क़तरा आता रहता है, इतना वक़्त नहीं मिलता कि तहरात[1] से नमाज़ पढ़ सके, तो ऐसे शख़्स को माज़ूर कहते हैं। इसका हुक्म यह है कि हर नमाज़ के वक़्त वुज़ू कर लिया करे, जब तक वह वक़्त रहेगा, तब तक उस का वुज़ू बाक़ी रहेगा। हां, जिस बीमारी में वह मुब्तला है, उसके सिवा अगर कोई बात ऐसी पाई जाये, जिससे वुज़ू टूट जाता है तो वुज़ू जाता रहेगा और फिर से करना पड़ेगा। उसकी मिसाल यह है कि एक औरत को इस्तिहाज़ा हुआ और उसने जुहर के वक़्त वुज़ू कर लिया तो जब तक जुहर का वक़्त रहेगा, इस्तिहाज़ा के ख़ून की वजह से उसका वुज़ू न टूटेगा। हां, अगर पाख़ाना–पेशाब गई या सूई चुभ गई, उससे ख़ून निकल पड़ा तो वुज़ू जाता रहा, फिर वुज़ू करे। जब यह वक़्त चला गया, दूसरी नमाज़ का वक़्त आ गया, तो अब दूसरे वक़्त दूसरा वुज़ू करना चाहिए। इसी तरह हर नमाज़ के वक़्त वुज़ू कर लिया करे और इस वुज़ू से फ़र्ज़, नफ़्ल जो नमाज़ चाहे, पढ़े।

मस्अला 3—अगर फ़ज्र के वक़्त वुज़ू किया तो सूरज निकलने के बाद उस वुज़ू से नमाज़ नहीं पढ़ सकती, दूसरा वुज़ू करना चाहिए और अब सूरज निकलने के बाद के वुज़ू से जुहर की नमाज़ पढ़ना दुरूस्त है, जुहर के वक़्त नया वुज़ू करने की ज़रूरत नहीं है। जब असर का वक़्त आयेगा, तब वुज़ू करना पड़ेगा। हां, अगर किसी और वजह से वुज़ू टूट जाये, तो यह और बात है।

मस्अला 4—किसी के ऐसा घाव था कि हर दम बहा करता था, उसने वुज़ू किया, फिर दूसरा घाव पैदा हो गया और बहने लगा, तो वुज़ू टूट गया, फिर से वुज़ू करे।

मस्अला 5—आदमी माज़ूर जब बनता है और यह हुक्म उस वक़्त लगाते हैं कि पूरा एक वक़्त इसी तरह गुज़र जाये कि ख़ून बराबर बहा करे और इतना भी वक़्त न मिले कि उस वक़्त की नमाज़ तहारत से पढ़ सके। अगर इतना वक़्त मिल गया कि उसमें तहारत से नमाज़ पढ़ सकती है, तो उसको माज़ूर न कहेंगे और जो हुक्म अभी बयान हुआ है, उस पर न लगायेंगे। हां, जब पूरा एक वक़्त इसी तरह गुज़र गया कि उसको तहारत से नमाज़ पढ़ने का मौक़ा नहीं मिला, तो वह माज़ूर हो गई। अब इसका वही हुक्म है कि हर वक़्त नया वुज़ू कर लिया करे, फिर जब दूसरा वक़्त आये

1. पाकी।

उसमें हर वक़्त ख़ून का बहना शर्त नहीं है, बल्कि वक़्त भर में अगर एक बार भी ख़ून आ जाया करे और सारे वक़्त बंद रहे, तो भी माज़ूर बनी रहेगी। हां, अगर इसके बाद एक पूरा वक़्त ऐसा गुज़ार जाये, जिसमें ख़ून बिल्कुल न आये, तो अब माज़ूर नहीं रही। अब इसका हुक्म यह है कि जितनी बार ख़ून निकले, वुज़ू टूट जायेगा, ख़ूब अच्छी तरह समझ लो।

मस्अला 6—जुहर का वक़्त कुछ हो लिया था, तब घाव वग़ैरह का ख़ून बहना शुरू हुआ, तो आख़िरी वक़्त तक का इंतिज़ार करे। अगर बन्द हो जाये, तो ख़ैर, नहीं तो वुज़ू करके नमाज़ पढ़ ले। फिर अगर असर के पूरे वक़्त में इसी तरह बहा कि नमाज़ पढ़ने की फ़ुर्सत न मिली, तो अब असर का वक़्त गुज़रने के बाद माज़ूर होने का हुक्म लगा देंगे और अगर असा के वक़्त के अंदर ही अंदर बन्द हो गया, तो वह माज़ूर नहीं है, जो नमाज़ें इतने वक़्त में पढ़ीं हैं, वे सब दुरुस्त नहीं हुईं, फिर से पढ़े।

मस्अला 7—ऐसी माज़ूर औरत ने पेशाब-पाख़ाना या हवा के निकलने की वजह से वुज़ू किया और जिस वक़्त वुज़ू किया था, उस वक़्त ख़ून बन्द था, जब वुज़ू कर चुकी, तो ख़ून आया, तो इस ख़ून के निकलने से वुज़ू टूट जायेगा, हां, जो वुज़ू इस्तिहाज़ा के सबब किया है, ख़ास वह वुज़ू इस्तिहाज़ा की वजह से नहीं टूटता।

मस्अला 8—अगर यह ख़ून वग़ैरह कपड़े पर लग जाये, तो देखो, अगर ऐसा हो कि नमाज़ ख़त्म करने से पहले ही फिर लग जायेगा, तो उसका धोना वाजिब नहीं है और अगर यह मालूम हो कि इतनी जल्दी न भरेगा, बल्कि नमाज़ तहारत से अदा हो जायेगी, तो धो डालना वाजिब है, अगर एक रूपए के बराबर हो, तो बे धोये नमाज़ न होगी।

निफ़ास का बयान

मस्अला 1—बच्चा पैदा होने के बाद आगे की राह से जो ख़ून आता है, उसको निफ़ास कहते हैं। ज़्यादा से ज़्यादा निफ़ास के चालीस दिन है और कम की कोई हद नहीं। अगर किसी को एक-आधी घड़ी ख़ून आकर बंद हो जाये, तो वह भी निफ़ास है।

मस्अला 2—अगर बच्चा पैदा होने के बाद किसी को बिल्कुल ख़ून न आये तब भी जनने के बाद नहाना वाजिब है।

मस्अला 3—आधे से ज़्यादा बच्चा निकल आया, लेकिन अभी पूरा

नहीं निकला, उस वक़्त जो ख़ून आये, वह भी निफ़ास है। अगर आधे से कम निकला था, उस वक़्त ख़ून निकला, तो वह इस्तिहाज़ा है। अगर होश व हवास बाक़ी हों, तो उस वक़्त भी नमाज़ पढ़े, नहीं तो गुनाहगार होगी। न हो सके तो इशारे ही से पढ़े, क़ज़ा न करे। लेकिन अगर नमाज़ पढ़ने से बच्चे के ज़ाया हो जाने का डर हो, तो नमाज़ न पढ़े।

मस्अला 4—किसी का हमल गिर गया, तो बच्चे का एक–आध अंग बन गया हो, तो गिरने के बाद जो ख़ून आये, वह भी निफ़ास है। अगर बिल्कुल नहीं बना, बस गोश्त ही गोश्त है, तो यह निफ़ास नहीं। पस, अगर वह ख़ून हैज़ बन सके, तो हैज़ है और अगर हैज़ भी न बन सके, मिसाल के तौर पर तीन दिन से कम आये या पाकी का ज़माना अभी पूरे पंद्रह दिन नहीं हुआ, तो वह इस्तिहाज़ा है।

मस्अला 5—अगर ख़ून चालीस दिन से बढ़ गया, तो अगर पहले–पहल यही बच्चा था, तो चालीस दिन निफ़ास के हैं और जितना ज़्यादा आया है, वह इस्तिहाज़ा है। पस चालीस दिन के बाद नहा डाले और नमाज़ पढ़ना शुरू करे। ख़ून बंद होने का इंतिज़ार न करे और अगर यह पहला बच्चा नहीं, बल्कि इससे पहले जन चुकी है और उसकी आदत मालूम है कि इतने दिन निफ़ास आता है, तो जितने दिन निफ़ास की आदत हो, उतने दिन निफ़ास के हैं और जो इससे ज़्यादा है, वह इस्तिहाज़ा है।

मस्अला 6—किसी की आदत तीस दिन निफ़ास आने की है, लेकिन तीस दिन गुज़र गये और अभी ख़ून बंद नहीं हुआ, तो अभी न नहाये। अगर पूर चालीस दिन पर ख़ून बंद हो गया, तो यह सब निफ़ास है और अगर चालीस दिन से ज़्यादा हो जाये, तो सिर्फ़ तीस दिन निफ़ास के हैं और बाक़ी सब इस्तिहाज़ा है। इसलिए अब तुरंत गुस्ल कर डाले और दस दिन की नमाज़ें क़ज़ा करे।

मस्अला 7—अगर चालीस दिन से पहले निफ़ास का ख़ून बंद हो जाये, तो तुरन्त गुस्ल करके नमाज़ पढ़ना शुरू करे और अगर गुस्ल नुक़्सान करे, तो तयम्मुम करके नमाज़ शुरू करे, हरगिज़ कोई नमाज़ क़ज़ा न होने दे।

मस्अला 8—निफ़ास में भी नमाज़ बिल्कुल माफ़ है और रोज़ा माफ़ नहीं, बल्कि उसकी क़ज़ा रखनी चाहिए और रोज़ा व नमाज़ और सोहबत करने के यहां भी वही मस्अले हैं, जो ऊपर बयान हो चुके हैं।

मस्अला 9—अगर छः महीने अंदर–अंदर आगे–पीछे दो बच्चे हों,

तो निफ़ास की मुद्दत पहले बच्चे से ली जायेगी। अगर दूसरा बच्चा दस–बीस दिन या दो एक महीने के बाद हो, तो दूसरे बच्चे से निफ़ास का हिसाब न करेंगे।

निफ़ास और हैज़ वग़ैरह के हुक्मों का बयान

मस्अला 1—जो औरत हैज़ से हो या निफ़ास से हो और जिस पर नहाना वाजिब हो, उसको मस्जिद में जाना और काबा शरीफ़ का तवाफ़[1] करना और कलाम मजीद का पढ़ना और कलाम मजीद का छूना दुरूस्त नहीं। हां, कलाम मजीद जुज़दान[2] में या रूमाल में लपेटा हो या उस पर कपड़े वग़ैरह की चोली चढ़ी हुई हो और जिल्द के साथ सिली हुई न हो, बल्कि अलग हो कि उतारने से अलग हो सके, तो इस हाल में क़ुरआन मजीद का छूना और उठाना दुरूस्त है।

मस्अला 2—जिसका वुज़ू न हो, उसको भी कलाम मजीद का छूना दुरूस्त नहीं, हां, ज़ुबानी पढ़ना दुरूस्त है।

मस्अला 3—जिस रूपये या पैसे में या तश्तरी में या तावीज़ में या किसी और चीज़ पर क़ुरआन शरीफ़ की कोई आयत लिखी हो, उसको भी छूना इन लोगों के लिए दुरूस्त नहीं। हां, अगर किसी थैली या बर्तन वग़ैरह में रखे हों, तो उस थैली और बर्तन को छूना और उठाना दुरूस्त है।

मस्अला 4—कुरते के दामन और दोपट्टे के आंचल से भी क़ुरआन मजीद का पकड़ना और उठाना दुरूस्त नहीं, हां अगर बदन से अलग कोई कपड़ा हो, जैसे रूमाल वग़ैरह, उससे पकड़ कर उठाना जायज़ है।

मस्अला 5—अगर पूरी आयत न पढ़े, बल्कि आयत का ज़रा सा लफ़्ज़ या आधी आयत पढ़े, तो दुरूस्त है, लेकिन वह आधी आयत इतनी न हो कि किसी छोटी सी आयत के बराबर हो जाये।

मस्अला 6—अगर अल्हम्दु की पूरी सूरः दुआ की नीयत से पढ़े या और दुआएं, जो क़ुरआन करीम में अच्छी हैं, उनको दुआ की नीयत से

---

1. चारों तरफ़ घूमना, हज की एक ख़ास रस्म,
2. वह कपड़ा, जिसमें क़ुरआन मजीद लपेट कर रखा जाये।

पढ़े, तिलावत के इरादे से न पढ़े, तो दुरूस्त है, इसमें कुछ गुनाह नहीं है जैसे यह दुआ—

رَبَّنَا اٰتِنَا فِی الدُّنْیَا حَسَنَۃً وَّفِی الْاٰخِرَۃِ حَسَنَۃً وَّقِنَا عَذَابَ النَّارِ

रब्बना आतिना फ़िद्दुन्या ह सनतंव्व फ़िल् आख़िरति ह सनतंव्व क़िना अज़ाबन्नारि०

"हमारे रब : हमें दुनिया में भी भलाई दे और आख़िरत में भी भलाई दे और हमें आग के अज़ाब से बचा।"

और यह दुआ—

رَبَّنَا لَا تُؤَاخِذْنَآ اِنْ نَّسِیْنَآ اَوْ اَخْطَاْنَا رَبَّنَا وَلَا تَحْمِلْ عَلَیْنَآ اِصْرًا كَمَا حَمَلْتَہٗ عَلَى الَّذِیْنَ مِنْ قَبْلِنَا رَبَّنَا وَلَا تُحَمِّلْنَا مَا لَا طَاقَۃَ لَنَا بِہٖ وَاعْفُ عَنَّا وَاغْفِرْ لَنَا وَارْحَمْنَا اَنْتَ مَوْلٰىنَا فَانْصُرْنَا عَلَى الْقَوْمِ الْكٰفِرِیْنَ

रब्बना ला तुआख़िज़्ना इन् नसीनाऔ अख़तअ्ना रब्बना वला तह्मिल अलैना इस्रन कमा हमल्तहू अलल्लज़ीन मिन क़ब्लिना रब्बना व ला तुहम्मिल्ना मा ला ताक़त लना बिही वअ् फ़ु अन्ना वग़्फ़िर लना वर्हम्ना अन्तमौलाना फ़न्सुर्ना अलल् क़ौमिल काफ़िरीन०

'हमारे रब ! हम से अगर भूल या कोई खता हो जाये, तो हमें पकड़ना नहीं। हमारे रब ! हम पर वह बोझ न डाल, जैसा कि हमसे पहले के लोगों पर डाला था। हमारे रब ! हम पर बोझ न डाल, हम में उसे सहारने की ताक़त नहीं है, हम से दरगुज़ार फ़रमा, हमें बख़्श दे, हम पर रहम फ़रमा, तू ही हमारा मौला (मालिक) है, हमें काफ़िर क़ौम के मुक़ाबले में ग़ालिब फ़रमा।

या और कोई दुआ जो क़ुरआन शरीफ़ में आयी हो। दुआ की नीयत से सबका पढ़ना दुरूस्त है।

मस्अला 7—दुआ–ए–क़ुनूत[1] का पढ़ना भी दुरूस्त है।

मस्अला 8—अगर कोई औरत लड़कियों को क़ुरआन शरीफ़

1. वह दुआ जो वित्र की नमाज़ में पढ़ी जाती है, इसका बयान आगे आयेगा।

पढ़ाती हो, तो ऐसी हालत में हिज्जे[1] लगवाना दुरूस्त है रवां पढ़ाते वक़्त पूरी आयत न पढ़े, बल्कि एक–एक, दो–दो लफ़्ज़ के बाद सांस तोड़ दे और काट–काट कर आयत को रवां कहलाये।

मस्अला 9—कलमा और दरूद शरीफ़ पढ़ना, अल्लाह तआला का नाम लेना, इस्तग़फ़ार पढ़ना (यानी अस्तग़्फ़िरूल्लाह कहना) या और कोई वज़ीफ़ा पढ़ना जैसे

لَاحَوْلَ وَلَا قُوَّةَ اِلَّا بِاللّٰهِ الْعَلِيِّ الْعَظِيْمِ

ला हौल व ला क़ूवत इल्ला बिल्लाहिल् अ़लीमिल अज़ीम०

'नहीं है कोई ग़लबा और ताक़त, मगर उस बुज़ुर्ग व बरतर ख़ुदा के लिए।'

पढ़ना मना नहीं है, यह सब दुरूस्त है।

मस्अला 10—हैज़ के ज़माने में मुस्तहब है कि नमाज़ के वक़्त वुज़ू करके किसी पाक जगह थोड़ी देर बैठ कर कुछ अल्लाह–अल्लाह कर लिया करे, ताकि नमाज़ की आदत छूट न जाये और पाक होने के बाद नमाज़ से जी घबराये नहीं।

मस्अला 11—किसी को नहाने की ज़रूरत थी और अभी नहाने न पायी थी कि हैज़ आ गया, तो अब उस पर नहाना वाजिब नहीं, बल्कि जब हैज़ से पाक हो, तब नहाये। एक ही ग़ुस्ल दोनों बातों की तरफ़ से हो जायेगा।

नजासत के पाक करने का बयान (पृ० 70)

मस्अला 17—बदन में या कपड़े में मनी लग कर सूख गयी हो ता खुरच कर ख़ूब मल डालने से पाक हो जायेगा और अगर अभी सूखी न हो, तो सिर्फ़ धोने से पाक होगा, लेकिन अगर किसी ने पेशाब कर के इस्तिंजा नहीं किया था, ऐसे वक़्त मनी निकली, तो वह मलने से पाक न होगा। उसको धोना चाहिए।

नमाज़ का बयान (पृ० 76)

मस्अला 1—किसी के लड़का पैदा हो रहा है, लेकिन अभी सब

1. उच्चारण करना।

नहीं निकला, कुछ बाहर निकला है और कुछ नहीं निकला, ऐसे वक़्त भी अगर होश व हवास बाक़ी हों तो नमाज़ पढ़ना फ़र्ज़ है। क़ज़ा कर देना दुरूस्त नहीं। हां, अगर नमाज़ पढ़ने से बच्चे की जान का डर हो तो नमाज़ का क़ज़ा कर देना दुरूस्त है। लेकिन इन सब को फिर जल्दी क़ज़ा पढ़ लेना चाहिए।

जवान होने का बयान

मस्अला 1—जब किसी लड़की को हैज़ आ गया या अभी तक कोई हैज़ तो नहीं आया, लेकिन उके पेट रह गया या पेट भी नहीं रहा, लेकिन सपने में मर्द से सोहबत कराते देखा और उससे मज़ा आया और मनी निकल आयी, इन तीनों शक्लों में वह जवान हो गयी। रोज़ा–नमाज़ वग़ैरह शरीअत के सब हुक्म–अहकाम उस पर लगाये जायेंगे। अगर इन तीनों बातों में से कोई बात नहीं पायी गयी, लेकिन उसकी उम्र पूरे पंद्रह वर्ष की हो चुकी है, तब भी वह जवान समझी जायेगी और जो हुक्म जवानों पर लगाये जाते हैं, अब उस पर लगाये जायेंगे।

मस्अला 2—जवान होने को शरीअत में बालिग़ होना कहते हैं। नौ वर्ष से पहले कोई औरत जवान नहीं हो सकती। अगर उसको ख़ून भी आये तो वह हैज़ नहीं है, जिसका हुक्म ऊपर बयान हो चुका है।

(भाग-3)

बहिश्ती ज़ेवर

हज़रत मौलाना अशरफ़ अली थानवी (रह०)

www.idaraimpex.com

विषय सूची

क्या ? कहां ?

रोज़े का बयान

हदीस शरीफ़ में रोज़े का बड़ा सवाब आया है और अल्लाह तआला के नज़दीक रोज़ेदार का बड़ा दर्जा है। प्यारे नबी सल्ल० ने फ़रमाया है कि जिस ने रमज़ान के रोज़े सिर्फ़ अल्लाह तआला के वास्ते सवाब समझ कर रखे, तो उसके सब अगले-पिछले गुनाह बख़्श दिये जायेंगे। और प्यारे नबी सल्ल० ने फ़रमाया है कि रोज़ेदार के मुंह की बदबू अल्लाह तआला के नज़दीक मुश्क के खुश्बू से ज़्यादा प्यारी है। क़ियामत के दिन रोज़े का बहुत ज़्यादा सवाब मिलेगा।

रिवायत है कि रोज़ेदारों के वास्ते क़ियामत के दिन अर्श के तले दस्तरख़्वान चुना जायेगा। वे लोग उस पर बैठ कर खाना खायेंगे और सब लोग अभी हिसाब ही में फंसे होंगे। इस पर वे लोग कहेंगे कि ये लोग कैसे हैं कि खाना खा-पी रहे हैं और अभी हम हिसाब ही में फंसे हैं। उनको जवाब मिलेगा ये लोग कि रोज़े रखा करते थे और तुम लोग रोज़े नहीं रखते थे।

यह रोज़ा भी इस्लाम का बड़ा रुक्न (स्तून) है। जो कोई रमज़ान के रोज़े न रखेगा, बड़ा गुनाह होगा और उसका दीन (धर्म) कमज़ोर हो जायेगा।

मसअला 1—रमज़ान शरीफ़ के रोज़े हर मुसलमान पर, जो पागल

और ना–बालिग़ न हो, फ़र्ज़ हैं। जब तक कोई उज्र न हो, रोज़ा छोड़ना दुरुस्त नहीं है। और अगर कोई रोज़ा की नज़्र करे, तो नज़र कर लेने से रोज़ा फ़र्ज़ हो जाता है और क़ज़ा और कफ़्फ़ारा[1] के रोज़े भी फ़र्ज़ हैं। इस के अलावा और सब रोज़े नफ़्ल हैं, रखे तो सवाब है, न रखे तो गुनाह नहीं। हां, ईद और बक़रईद के दिन और बक़रईद के बाद तीन दिन रोज़ों का रखना हराम है।

मस्अला 2—जब से फ़ज़्र की नमाज़ का वक़्त शुरू होता है, उस वक़्त से लेकर सूरज डूबने तक रोज़े की नीयत से सब खाना–पीना छोड़ दे और मर्द के साथ सोये भी नहीं, शरअ में इसको रोज़ा कहते हैं।

मस्अला 3—ज़ुबान से नीयत करना और कुछ कहना ज़रूरी नहीं है, बल्कि दिल में यह ध्यान है कि आज मेरा रोज़ा है और दिन भर न कुछ खाया, न पीया, न हमबिस्तर हुई, तो उसका रोज़ा हो गया और अगर कोई ज़ुबान से कह दे कि या अल्लाह ! मैं तेरा कल रोज़ा रखूंगी या अरबी में कह दे—'व बिसौमिग़दिन नवैतु' तो भी कुछ हरज नहीं यह भी बेहतर है।

मस्अला 4—अगर किसी ने दिन भर न कुछ खाया और न पिया, सुबह से शाम तक भूखी–प्यासी रही, लेकिन दिल में रोज़े का इरादा न था, बल्कि भूख न लगी या किसी और वजह से कुछ खाने–पीने की नौबत नहीं आयी, तो उसका रोज़ा नहीं हुआ। अगर दिल में रोज़े का इरादा कर लेती तो रोज़ा हो जाता।

मस्अला 5—शरअ में रोज़े का वक़्त सुबहे सादिक़ से शुरू होता है, इसलिए जब तक यह सुबह न हो खाना–पीना वग़ैरह सब कुछ जायज़ है। कुछ औरतें पिछले वक़्त को सेहरी खा कर नीयत की दुआ पढ़कर लेटी रहती है और यह समझती हैं कि अब नीयत कर लेने के बाद कुछ खाना–पीना न चाहिए। यह ग़लत ख़्याल है। जब तक सुबह न हो, बराबर खाती पीती रहे, चाहे नीयत कर चुकी हो या अभी न की हो।

रमज़ान शरीफ़ के रोज़े का बयान

मस्अला 1—रमज़ान शरीफ़ के रोज़े की अगर रात को नीयत करे,

1. किसी शरई मजबूरी से जो रोज़े छूट जाएं, वे क़ज़ा कहलाते हैं और सज़ा (प्रायश्चित) के तौर पर जो रोज़े ज़रूरी होते हैं, वे कफ़्फ़ारा कहलाते हैं।

तो भी फ़र्ज़ अदा हो जाता है और अगर रात को रोज़ा रखने का इरादा न था बल्कि सुबह हो गयी, तब भी यह ही ख़्याल रहा कि मैं आज का रोज़ा न रखूंगी, फिर दिन चढ़े ख़्याल आ गया कि फ़र्ज़ छोड़ देना बुरी बात है, इसलिए अब रोज़े की नीयत कर ली, तब भी रोज़ा हो गया, लेकिन सुबह को खा-पी चुकी हो, तो अब नीयत नहीं कर सकती।

मस्अला 2—अगर कुछ खाया-पीया न हो, तो दिन के ठीक दोपहर से एक घंटा पहले रमज़ान शरीफ़ की नीयत कर लेना दुरूस्त है।

मस्अला 3—रमज़ान शरीफ़ के रोज़े में बस इतनी नीयत कर लेना काफ़ी है कि आज मेरा रोज़ा है या रात को इतना सोच ले कि कल मेरा रोज़ा है, बस इतनी नीयत से रमज़ान का रोज़ा अदा हो जायेगा। अगर नीयत में ख़ास यह बात न आयी हो कि रमज़ान शरीफ़ का रोज़ा है या फ़र्ज़ रोज़ा है, तब भी रोज़ा हो जायेगा।

मस्अला 4—रमज़ान के महीने में अगर किसी ने यह नीयत की कि मैं कल नफ़्ल का रोज़ा रखूंगी, रमज़ान का रोज़ा न रखूंगी, बल्कि उस रोज़े की फिर क़ज़ा रख लूंगी, तब भी रमज़ान ठीक होगा, नफ़्ली रोज़ा न होगा।

मस्अला 5—पिछले रमज़ान का रोज़ा क़ज़ा हो गया था और पूरा साल गुज़र गया, अब तक उसकी क़ज़ा नहीं रखी, फिर जब रमज़ान का महीना आ गया, तो उसी क़ज़ा की नीयत से रोज़ा रखा, तब भी रमज़ान ही का रोज़ा होगा और क़ज़ा का रोज़ा न होगा। क़ज़ा का रोज़ा रमज़ान के बाद रखे।

मस्अला 6—किसी ने नज़्र मानी थी कि अगर मेरा फ़्लान काम हो जाये, तो मैं अल्लाह तआला के दो रोज़े या एक रोज़ा रखूंगी, फिर जब रमज़ान का महीना आया, तो उसने उसी नज़्र के रोज़े रखने की नीयत की, रमज़ान के रोज़े की नीयत नहीं की, तब भी रमज़ान ही का रोज़ा हुआ, नज़्र का रोज़ा अदा नहीं हुआ। नज़्र के रोज़े रमज़ान के बाद फिर रखे। सब का खुलासा यह हुआ कि रमज़ान के महीने में जब किसी रोज़े की नीयत करेगी तो रमज़ान ही का रोज़ा होगा। कोई और रोज़ा सही न होगा।

मस्अला 7—शाबान की 16 वीं तारीख़ को अगर रमज़ान शरीफ़ का चांद निकल आये तो सुबह का रोज़ा रखो और अगर न निकले या आसमान पर अब्र हो और चांद न दिखायी दे, तो सुबह का रोज़ा न रखो। हदीस शरीफ़ में इसे मना किया गया है, बल्कि शाबान के तीस दिन पूरे

करके रमज़ान के रोज़े शुरू करे।

मस्अला 8—16 वीं तारीख़ को अब्र की वजह से रमज़ान शरीफ़ का चांद नहीं दिखायी दिया, तो सुबह को नफ़्ली रोज़ा भी न रखो, हां अगर ऐसा संयोग आया कि हमेशा सोम (पीर) और बृहस्पति (जुमेरात) या और किसी मुक़र्रर दिन का रोज़ा रखा करती थी और कल वही दिन है, तो नफ़्ल की नीयत से सुबह को रोज़ा रख लेना बेहतर है। फिर अगर कहीं से चांद की ख़बर आ गयी, तो इस नफ़्ल रोज़े से रमज़ान का फ़र्ज़ अदा हो गया। अब उस की क़ज़ा न रखे।

मस्अला 9—बदली की वजह से 16 वीं तारीख़ को रमज़ान का चांद दिखायी नहीं दिया, तो दोपहर से एक घंटा पहले तक कुछ न खाओ, न पियो। अगर कहीं से ख़बर आ जाये, तो अब रोज़े की नीयत कर लो और अगर ख़बर न आये, तो खाओ–पियो।

मस्अला 10—16 वीं तारीख़ को चांद नहीं हुआ, तो यह ख़्याल न करो कि कल का दिन रमज़ान का तो है नहीं, लाओ मेरे ज़िम्मे जो चार साल का एक रोज़ा क़ज़ा है, इस की क़ज़ा ही रख लूं या कोई नज़्र मानी थी, उस का रोज़ा रख लूं। उस दिन क़ज़ा का रोज़ा और कफ़्फ़ारे का रोज़ा और नज़्र का रोज़ा रखना भी मकरूह है, कोई रोज़ा न रखना चाहिए। अगर क़ज़ा या नज़्र का रोज़ा रख लिया फिर कहीं से चांद की ख़बर आ गयी, तो भी रमज़ान ही का रोज़ा अदा हो गया, क़ज़ा और नज़्र का रोज़ा फिर से रखे और अगर ख़बर नहीं आयी तो जिस रोज़े की नीयत की थी, वही अदा हो गया।

चांद देखने का बयान

मस्अला 1—अगर आसमान पर बादल है या गर्द है, इस वजह से रमज़ान का चांद नहीं आया, लेकिन एक दीनदार परहेज़गार सच्चे आदमी ने आकर गवाही दी कि मैंने रमज़ान का चांद देखा है, तो चांद का सबूत हो गया, चाहे वह मर्द हो या औरत।

मस्अला 2—अगर बदली की वजह से ईद का चांद न दिखायी दिया, तो एक आदमी की गवाही का एतबार नहीं है, चाहे जितना बड़ा एतबार वाला आदमी हो, बल्कि दो एतबार वाले और परहेज़गार मर्द या एक दीनदार मर्द और दो दीनदार औरतें अपने चांद की गवाही दें, तब चांद का

सबूत होगा, वरना अगर चार औरतें अपने चांद देखने की गवाही दें, तो भी क़ुबूल नहीं है।

मस्अला 3—जो आदमी दीन का पाबंद नहीं, बराबर गुनाह करता रहता है जैसे नमाज़ नहीं पढ़ता या रोज़ा नहीं रखता या झूठ बोला करता है या और कोई गुनाह करता है, शरीअत की पाबंदी नहीं करता, तो शरअ में उसकी बात का कुछ एतबार नहीं है, चाहे जितनी क़स्में खा कर बयान करे, बल्कि ऐसे अगर दो–तीन आदमी हों, उनका भी एतबार नहीं।

मस्अला 4—यह मशहूर बात है कि जिस दिन रजब की चौथी होती है, उस दिन रमज़ान की पहली होती है। शरीअत में इसका कोई एतबार नहीं है। अगर चांद न हो, तो रोज़ा न रखना चाहिए।

मस्अला 5—चांद देख कर यह कहना कि बहुत बड़ा है, कल का मालूम होता है, यह बुरी बात है। हदीस में आया है कि क़ियामत की निशानी है, जब क़ियामत नज़दीक होगी तो लोग ऐसा कहा करेंगे। खुलासा यह है कि चांद के बड़े–छोटे होने का भी एतबार न करो, न हिन्दुओं की इस बात का एतबार करो कि आज दूज है, आज ज़रूर चांद है, शरीअत से ये बेकार की बातें हैं।

मस्अला 6—अगर आसमान बिल्कुल साफ़ हो तो दो चार आदमियों के कहने और गवाही देने से भी चांद साबित न होगा, चांद रमज़ान का हो या ईद का। हां, अगर इतनी कसरत से लोग अपना चांद देखना बयान करें कि दिल गवाही देने लगे कि सबके सब बात बना कर नहीं आये, इतने लोगों का झूठा होना किसी तरह नहीं हो सकता, तब साबित होगा। शहर में यह ख़बर मशहूर है कि कल चांद हो गया बहुत लोगों ने देखा, बहुत ढूंढा, खोजा, लेकिन फिर भी कोई ऐसा आदमी नहीं मिला, जिसने खुद चांद देखा हो, तो ऐसी ख़बर का कुछ ऐतबार नहीं है।

मस्अला 7—किसी ने रमज़ान शरीफ़ का चांद अकेले देखा, अलावा उसके शहर भर में किसी ने नहीं देखा, लेकिन यह शरअ का पाबंद नहीं है, तो उसकी गवाही से शहर वाले तो रोज़ा न रखें, लेकिन वह खुद रोज़ा रखे और अगर उस अकेले देखने वाले ने तीस रोज़े पूरे कर लिए लेकिन अभी ईद का चांद नहीं दिखायी दिया, तो 31 वां रोज़ा रखे और शहर वालों के साथ ईद करे।

मस्अला 8—अगर किसी ने ईद का चांद अकेले देखा, इसेलिए उसकी गवाही का शरीअत ने एतबार नहीं किया, तो इस देखने वाले

आदमी को भी ईद करना दुरूस्त नहीं है। सुबह को रोजा रखे और अपने चांद देखने का एतबार न करे और रोज़ा न तोड़े।

क़ज़ा रोज़े का बयान

मस्अला 1—हैज़ की वजह से या और किसी वजह से जो रोज़े जाते रहे हों, रमज़ान के बाद जहां तक जल्दी हो सके उनकी क़ज़ा रख ले, देर न करे, बे—वजह क़ज़ा रखने में देर लगाना गुनाह है।

मस्अला 2—रोज़े की क़ज़ा में दिन—तारीख़ मुक़र्रर करके क़ज़ा की नीयत करना कि फ़लानी तारीख़ के रोज़े की क़ज़ा रखती हूं, यह ज़रूरी नहीं है, बल्कि जितने रोज़े क़ज़ा हों, उतने ही रोज़े रख लेने चाहिएं हां, अगर दो रमज़ान के कुछ—कुछ रोज़े क़ज़ा हो गये, इसलिए दोनों साल के रोज़ों की क़ज़ा है, तो साल का मुक़र्रर करना ज़रूरी है यानी इस तरह नीयत करे कि फ़लाने साल के रोज़े की क़ज़ा रखती हूं।

मस्अला 3—क़ज़ा रोज़े में रात से नीयत करना ज़रूरी है। अगर सुबह हो जाने के बाद नीयत की, तो क़ज़ा सही न होगी, बल्कि वह रोज़ा नफ़्ल हो गया, क़ज़ा का रोज़ा फिर से रखे।

मस्अला 4—कफ़्फ़ारे के रोज़े का भी यही हुक्म है कि रात से नीयत करना चाहिए, अगर सुबह होने के बाद नीयत की तो कफ़्फ़ारे का रोज़ा सही नहीं हुआ।

मस्अला 5—जितने रोज़े क़ज़ा हो गये हैं, चाहे सब को एक दम से रख ले, चाहे थोड़े—थोड़े करके रखे, दोनों बातें दुरूस्त हैं।

मस्अला 6—अगर रमज़ान के रोज़े अभी क़ज़ा नहीं रखे और दूसरा रमज़ान आ गया, तो ख़ैर अब रमज़ान के अदा रोज़े रखे और ईद के बाद क़ज़ा रखे, लेकिन इतनी देर करना बुरी बात है।

मस्अला 7—रमज़ान के महीने में दिन को बेहोश हो गयी और एक दिन से ज़्यादा बेहोश रही, तो सिर्फ़ दो दिन के रोज़े क़ज़ा रखे। जिस दिन बेहोश हुई, उस एक दिन की क़ज़ा वाजिब नहीं है, क्योंकि उस दिन का रोज़ा नीयत की वजह से दुरूस्त हो गया, हां, अगर उस दिन रोज़े से न थी या उस दिन हलक़ में कोई दवा चली गयी और वह हलक़ से उतर गयी, तो उस दिन की क़ज़ा भी वाजिब है।

मस्अला 8—और अगर रात को बेहाश हुई हो, तब भी, जिस रात

को बेहोश हुई, उस एक दिन की क़ज़ा वाजिब नहीं है, बाक़ी और जितने दिन बेहोश रही, सब की क़ज़ा वाजिब है। हां, अगर इस रात को सुबह का रोज़ा रखने की नीयत न थी या सुबह को कोई दवा हलक़ में डाली गई, तो इस दिन का रोज़ा भी क़ज़ा रखे।

मस्अला 9—अगर सारे रमज़ान भर बेहोश रहे, तब भी क़ज़ा रखना चाहिए। यह न समझे कि सब रोज़े माफ़ हो गये, हां अगर जुनून (पागलपन) हो गया और पूरे रमज़ान भर दीवाली रही, तो उस पर रमज़ान के किसी रोज़े की क़ज़ा वाजिब नहीं और अगर रमज़ान शरीफ़ के महीने में किसी दिन जुनून जाता रहा और अक़्ल ठिकाने हो गई, तो अब रोज़े रखने शुरू करे और जितने रोज़े जुनून में गये हैं, उनकी क़ज़ा भी रखे।

नज़्र के रोज़े का बयान

मस्अला 1—जब कोई नज़्र माने, तो उसका पूरा करना वाजिब है। अगर न रखेगी, तो गुनाहगार होगी।

मस्अला 2—नज़्र दो तरह की है। एक तो यह कि दिन–तारीख़ तै करके नज़्र मानी कि या अल्लाह ! अगर आज फ़्लां काम हो जाये, तो कल ही तेरा रोज़ा रखूंगी, या यों कहा कि अल्लाह ! अगर मेरी फ़्लानी मुराद पूरी हो जाये, तो परसों जुमा के दिन रोज़ा रखूंगी। ऐसी नज़्र में अगर रात से रोज़ा की नीयत करे, तो भी दुरूस्त है और अगर रात से नीयत न की, तो दोपहर से एक घंटा पहले नीयत करे, यह भी दुरूस्त है, नज़्र अदा हो जायेगी।

मस्अला 3—जुमा के दिन रोज़ा रखने की नज़्र मानी और जब जुमा आया, तो बस इतनी नीयत कर ली कि आज मेरा रोज़ा है। यह तै नहीं किया कि नज़्र का है या नफ़्ल का, सिर्फ़ नफ़्ल की नीयत कर ली, तब भी नज़्र का रोज़ा अदा हो गया, हां अगर उस जुमा को क़ज़ा रोज़ा रख लिया और नज़्र का रोज़ा रखना याद न रहा, या याद तो था, मगर जान–बूझकर क़ज़ा का रोज़ा रखा, तो नज़्र का रोज़ा अदा न होगा, बल्कि क़ज़ा का रोज़ा हो जायेगा, नज़्र का रोज़ा फिर रखो।

मस्अला 4—और दूसरी नज़्र यह है कि दिन–तारीख़ तै करके नज़्र नहीं मानी, बस इतना ही कहा कि या अल्लाह ! अगर मेरा फ़्लां काम हो जाये, तो एक रोज़ा रखूंगी या किसी का नाम नहीं लिया, वैसे ही कह

दिया कि पांच रोज़े रखूंगी, ऐसी नज़्र में रात से नीयत करना शर्त है, अगर सुबह हो जाने के बाद नीयत की तो नज़्र का रोज़ा नहीं हुआ, बल्कि वह रोज़ा नफ़्ल रोज़ा हो गया।

नफ़्ल रोज़े का बयान

मस्अला 1—नफ़्ल रोज़े की नीयत अगर यह तै करके करे कि मैं नफ़्ल का रोज़ा रखती हूं, तो भी सही है और अगर सिर्फ़ इतनी नीयत करे कि मैं रोज़ा रखती हूं, तब भी सही है।

मस्अला 2—दोपहर से एक घंटा पहले तक की नीयत कर लेना दुरुस्त है, तब अगर दस बजे दिन तक, मिसाल के तौर पर रोज़ा रखने का इरादा नहीं था, लेकिन अभी तक कुछ खाया-पिया नहीं, फिर जी में आ गया और रोज़ा रख लिया, तो भी दुरुस्त है।

मस्अला 3—रमज़ान शरीफ़ के महीने के सिवा, जिस दिन चाहे नफ़्ल का रोज़ा रखे, जितने ज़्यादा रखेगी, ज़्यादा सवाब पायेगी, हां, ईद के दिन और बक़रीद की दसवीं, ग्यारहवीं और बारहवें तेरहवीं—साल भर में सिर्फ़ पांच दिन रोज़े रखना हराम है, उस के सिवा सब रोज़े दुरुस्त हैं।

मस्अला 4—अगर कोई शख़्स ईद के दिन रोज़ा रखने की मन्नत माने, तब भी उस दिन का रोज़ा दुरुस्त नहीं, उसके बदले किसी और दिन रख ले।

मस्अला 5—अगर किसी ने यह मन्नत मानी कि मैं पूरे साल के रखूंगी, साल में किसी दिन का रोज़ा भी न छोड़ूंगी, तब भी ये पांच रोज़े न रखे, बाक़ी सब रखे, फिर उन पांचों रोज़ों की क़ज़ा रख ले।

मस्अला 6—नफ़्ल का रोज़ा नीयत करने से वाजिब हो जाता है, सो अगर सुबह को यह नीयत की आज मेरा रोज़ा है, फिर उसके बाद तोड़ दिया, तो अब उसकी क़ज़ा रखे।

मस्अला 7—किसी ने रात को इरादा किया कि मैं कल रोज़ा रखूंगी, लेकिन फिर सुबह होने से पहले इरादा बदल गया और रोज़ा नहीं रखा, तो क़ज़ा वाजिब नहीं।

मस्अला 8—बे शौहर की इजाज़त के नफ़्ल रोज़ा रखना दुरुस्त नहीं, अगर बे उसकी इजाज़त के रख लिया, तो उसके तोड़वाने से तोड़ देना दुरुस्त है। फिर जब वह कहे, तब उसकी क़ज़ा रखे।

मस्अला 9—किसी के घर मेहमान गई या किसी ने दावत कर दी और खाना न खाने से उसका जी बुरा होगा, दिल टूटेगा, तो उसके लिए नफ़्ली रोज़ा तोड़ देना दुरुस्त है और मेहमान की ख़ातिर से घर वाले को भी तोड़ देना दुरुस्त है।

मस्अला 10—किसी ने ईद के दिन नफ़्ली रोज़ा रख लिया और नीयत कर ली तब भी तोड़ दे और उसकी क़ज़ा रखना वाजिब नहीं।

मस्अला 11—मुहर्रम की दसवीं तारीख़ को रोज़ा रखना मुस्तहब है। हदीस शरीफ़ में आया है कि जो कोई यह रोज़ा रखे, उसके गुज़रे हुए एक साल के गुनाह माफ़ हो जाते हैं।

मस्अला 12—इसी तरह बक़रीद की नवीं तारीख़ को रोज़ा रखने का भी बड़ा सवाब है। इससे एक साल के अगले और एक साल के पिछले गुनाह माफ़ हो जाते हैं और अगर शुरू चांद से नवीं तक बराबर रोज़ा रखे, तो बहुत ही बेहतर है।

मस्अला 13—शबे बरात की पन्द्रहवीं और ईदुलफित्र के बाद के छः दिन नफ़्ल रोज़ा रखने का भी और नफ़्लों से ज़्यादा सवाब है।

मस्अला 14—अगर हर महीने की तेरहवीं–चौदहवीं और पंद्रहवीं तीन दिन का रोज़ा रख लिया करे, तो गोया उसने साल भर बराबर रोज़े रखे। हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ये तीन रोज़े रखा करते थे, ऐसे ही हर पीर और जुमेरात के दिन भी रोज़ा रखा करते थे। अगर कोई हिम्मत करे, तो उनका भी बहुत सवाब है।

जिन चीज़ों से रोज़ा नहीं टूटता और जिन चीज़ों से टूट जाता है और क़ज़ा या कफ़्फ़ारा लाज़िम आता है, उनका बयान

मस्अला 1—अगर रोज़ेदार भुलकर कुछ खा ले या पी ले या भूले से ख़ाविंद से हमबिस्तर हो जाये, तो उसका रोज़ा नहीं गया। अगर भूल कर पेट भर भी खा–पी ले, तब भी रोज़ा नहीं टूटता। अगर भूल कर कई बार खा–पी लिया, तब भी रोज़ा नहीं गया।

मस्अला 2—एक शख़्स को भूल कर कुछ खाते–पीते देखा, तो वह अगर इतना ताक़त वाला है कि रोज़े से ज़्यादा तक्लीफ़ नहीं होती, तो रोज़ा याद दिलाना वाजिब है और अगर कोई बे–ताक़त हो कि रोज़े से तक्लीफ़ होती है, तो उसको याद न दिलाये, खाने से।

मस्अला 3—दिन को सो गई और ऐसा सपना देखा, जिससे नहाने की ज़रूरत हो गई, तो रोज़ा नहीं टूटा।

मस्अला 4—दिन को सुर्मा लगाना, तेल लगाना, ख़ुश्बू सूंघना दुरूस्त है, इससे रोज़े में कुछ नुक़्सान नहीं आता, चाहे जिस वक़्त हो, बल्कि अगर सुर्मा लगाने के बाद थूक में या रेंट में सुर्मे का रंग दिखाई दे, तो भी रोज़ा नहीं गया, न मकरूह हुआ।

मस्अला 5—मर्द औरत का साथ लेटना, हाथ लगाना, प्यार कर लेना, यह सब दुरूस्त है, लेकिन अगर जवानी का इतना जोश हो कि इन बातों से सोहबत करने का डर हो, तो ऐसा न करना चाहिए, मकरूह है।

मस्अला 6—हलक़ के अंदर मक्खी चली गई या आप ही आप धुवां चला गया या गर्द व ग़ुबार चला गया, तो रोज़ा नहीं गया, हां, अगर जान–बूझकर ऐसा किया, तो रोज़ा जाता रहा।

मस्अला 7—लोबान वग़ैरह कोई धूनी सुलगायी, फिर उसको अपने पास रखकर सूंघा की तो रोज़ा जाता रहा। इसी तरह हुक़्क़ा पीने से भी रोज़ा जाता रहा, हां इस धुंए के सिवा इत्र, क्योड़ा, गुलाब फूल वग़ैरह और

ख़ुश्बू का सूंघना, जिसमें धुवां न हो, दुरुस्त है।

मस्अला 8—दांतों में गोश्त का रेशा अटका हुआ था या डली का दोहरा वग़ैरह कोई और चीज़ थी, उसको ख़िलाल से निकालकर खा गयी, लेकिन मुंह से बाहर नहीं निकाला या आप ही आप हलक़ में चली गयी, तो देखो अगर चने से कम है, तब तो रोज़ा नहीं गया और अगर चने के बराबर या उससे ज़्यादा हो तो जाता रहा, हां अगर मुंह से बाहर निकाल लिया या, फिर उसके बाद निगल गयी, तो हर हाल में रोज़ा टूट गया, चाहे वह चीज़ चने के बराबर हो या उससे भी कम हो, दोनों का एक ही हुक्म है।

मस्अला 9—थूक निगलने से रोज़ा नहीं जाता, चाहे जितना हो।

मस्अला 10—अगर पान खाकर ख़ूब कुल्ली-ग़रग़रा करके मुंह साफ़ कर लिया, लेकिन थूक की सुर्ख़ी नहीं गयी, तो इसका कुछ हरज नहीं, रोज़ा हो गया।

मस्अला 11—रात को नहाने की ज़रूरत हुई, मगर ग़ुस्ल नहीं किया, दिन को नहायी तब भी रोज़ा हो गया, बल्कि अगर दिन भर न नहाये, तब भी रोज़ा नहीं जाता, हां, इसका गुनाह अलग होगा।

मस्अला 12—नाक को इतने ज़ोर से सुड़क लिया कि हलक़ में चली गयी, तो रोज़ा नहीं टूटता। इसी तरह मुंह की राल सुड़क के निगल जाने से रोज़ा नहीं जाता।

मस्अला 13—मुंह में पान दबाकर सो गयी और सुबह हो जाने के बाद आंख खुली, तो रोज़ा नहीं हुआ, क़ज़ा रखे और कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं।

मस्अला 14—कुल्ली करते वक़्त हलक़ में पानी चला गया और रोज़ा याद था, तो रोज़ा जाता रहा। क़ज़ा वाजिब है, कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं।

मस्अला 15—अगर आप ही आप क़ै हो गयी, तो रोज़ा नहीं गया, चाहे थोड़ी सी क़ै हुई हो या ज़्यादा, हां अगर अपने अख़्तियार से क़ै की और मुंह भर क़ै हुई तो रोज़ा जाता रहा और अगर इससे थोड़ी हो, तो ख़ुद करने से भी नहीं गया।

मस्अला 16—थोड़ी-सी क़ै आयी, फिर आप ही आप हलक़ में लौट गयी, तब भी रोज़ा नहीं टूटा, हां, अगर जान-बूझकर लौटा लेती है, तो रोज़ा टूट जाता है।

मस्अला 17—किसी ने कंकरी या लोहे का टुकड़ा वग़ैरह कोई

ऐसी चीज़ खा ली, जिस को लोग नहीं खाया करते और उसको न कोई दवा के तौर पर खाता है, तो उसका रोज़ा जाता रहा। लेकिन उस पर कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं और अगर ऐसी चीज़ खायी हो या पी हो, जिसको लोग खाया करते हैं या कोई ऐसी चीज़ है कि यों तो नहीं खाते, लेकिन दवा के तौर पर ज़रूरत के वक़्त खाते हैं, तो भी रोज़ा जाता रहा और क़ज़ा व कफ़्फ़ारा दोनों वाजिब हैं।

मस्अला 18—अगर मर्द से हम–बिस्तर हुई, तब भी रोज़ा जाता रहा, उसकी क़ज़ा भी रखे और कफ़्फ़ारा भी दे। जब मर्द के पेशाब के मुक़ाम की सुपारी अंदर चली गयी, तो रोज़ा टूट गया, क़ज़ा व कफ़्फ़ारा वाजिब हो गये, चाहे मनी निकले या न निकले।

मस्अला 19—अगर मर्द ने पाख़ाने की जगह अपना अंग कर दिया और सुपारी अंदर चली गयी, तब भी मर्द और औरत दोनों का रोज़ा जाता रहा। क़ज़ा व कफ़्फ़ारा दोनों वाजिब हैं।

मस्अला 20—रोज़े के तोड़ने से कफ़्फ़ारा जभी लाज़िम आता है, जब कि रमज़ान शरीफ़ में रोज़ा तोड़ डाले और रमज़ान शरीफ़ के अलावा और किसी रोज़े के तोड़ने से कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं होता, चाहे जिस तरह तोड़े, अगरचे वह रमज़ान की क़ज़ा ही क्यों न हो। हां, अगर उस रोज़े की नीयत रात से न की हो या रोज़ा तोड़ने के बाद उसी दिन हैज़ आ गया हो, तो उसके तोड़ने से कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं।

मस्अला 21—किसी ने रोज़े में नारा लिया या कान में तेल डाला या जुल्लाब में अमल लिया और पीने की दवा नहीं पी, तब भी रोज़ा जाता रहा, लेकिन सिर्फ़ क़ज़ा वाजिब है और कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं, अगर कान में पानी डाला, तो नहीं गया।

मस्अला 22—रोज़े में पेशाब की जगह कोई दवा रखना या तेल वग़ैरह कोई चीज़ डालना दुरूस्त नहीं। अगर किसी ने दवा रख ली, तो रोज़ा[1] जाता रहा। क़ज़ा वाजिब है, कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं।

मस्अला 23—किसी ज़रूरत से दाई न पेशाब की जगह उंगली डाली या खुद उसने अपनी उंगली डाली, फिर सारी उंगली या थोड़ी सी उंगली निकालने के बाद फिर कर दी, तो रोज़ा जाता रहा, लेकिन कफ़्फ़ारा

---

1. ये हुक्म औरतों का है और मर्द अपने पेशाब की जगह के सूराख़ में तेल वग़ैरह डाले, तो रोज़ा नहीं टूटता।

वाजिब नहीं और अगर निकालने के बाद फिर नहीं की, तो रोज़ा नहीं गया। हां, अगर पहले ही से पानी वग़ैरह किसी चीज़ में उंगली भीगी हुई हो, तो पहली बार के करने में ही रोज़ा जाता रहेगा।

मस्अला 24—मुंह से ख़ून निकलता है, उसको थूक के साथ निगल गयी तो रोज़ा टूट गया, हां, अगर थूक से कम हो और ख़ून का मज़ा हलक़ में मालूम न हो तो रोज़ा नहीं टूटा।

मस्अला 25—अगर ज़ुबान से कोई चीज़ चख कर के थूक दी, तो रोज़ा नहीं टूटा, लेकिन बे ज़रूरत ऐसा करना मकरूह है। हां, अगर किसी का शौहर बड़ा बद–मिज़ाज हो और यह डर हो कि सालन में नमक–पानी दुरूस्त न हुआ, तो नाक में दम कर देगा, उसको नमक चख लेना दुरुस्त है और मकरूह नहीं।

मस्अला 26—अपने मुंह से चबा कर छोटे बच्चे को कोई चीज़ खिलाना मकरूह है, हां, अगर उसकी ज़रूरत पड़े और मजबूरी हो, तो मक्रूह नहीं।

मस्अला 27—कोयला चबा कर दांत मांझना और मंजन से दांत मांझना मक्रूह है और अगर इसमें से कुछ हलक़ में उतर जायेगा तो रोज़ा जाता रहेगा। और मिस्वाक से दांत साफ़ करना दुरूस्त है, चाहे सूखी मिस्वाक हो या ताज़ी, इसी वक़्त की तौड़ी हुई। अगर नीम की मिस्वाक है और उसका कड़वापन मुंह में मालूम होता है तब भी मक्रूह नहीं।

मस्अला 28—कोई औरत ग़ाफ़िल सो रही थी या बेहोश पड़ी थी, उससे किसी ने सोहबत की, तो रोज़ा जाता रहा, सिर्फ़ क़ज़ा वाजिब है कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं और मर्द पर कफ़्फ़ारा भी वाजिब है।

मस्अला 29—किसी ने भूले से कुछ खा लिया और यों समझी कि मेरा रोज़ा टूट गया। इस वजह से फिर जान–बूझकर कुछ खा लिया, तो अब रोज़ा जाता रहा, सिर्फ़ क़ज़ा वाजिब है, कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं।

मस्अला 30—अगर किसी को क़ै हुई और वह यह समझी कि मेरा रोज़ा टूट गया, इस विचार से फिर जान–बूझ कर कर खाना खाया और रोज़ा तोड़ दिया, तो भी क़ज़ा वाजिब है, कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं।

मस्अला 31—अगर सुर्मा लगाया या फ़स्द की या तेल डाला, फिर समझी कि मेरा रोज़ा टूट गया और फिर जान–बुझ कर खा लिया, तो क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों वाजिब हैं।

मस्अला 32—रमज़ान के महीने में अगर किसी का रोज़ा संयोग से

टूट गया तो रोज़ा टूटने के बाद भी दिन में कुछ खाना–पीना दुरूस्त नहीं है सारा दिन रोज़ेदारों की तरह रहना वाजिब है।

मस्अला 33—किसी ने रमज़ान में रोज़े की नीयत ही नहीं की, इसलिए खाती–पीती रही, उस पर कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं। कफ़्फ़ारा जब है, जब कि नीयत करके तोड़ दे।

सहरी खाने इफ़्तार और करने का बयान

मस्अला 1—सहरी खाना सुन्नत है और भूख न हो और खाना न खाये, तो कम से कम दो–तीन छोहारे ही खाले या कोई और चीज़ थोड़ी बहुत खा ले, कुछ न सही तो थोड़ा सा पानी ही पीले।

मस्अला 2—अगर किसी ने सहरी न खायी, उठ कर एक आध पान ही खा लिया तो भी सहरी खाने का सवाब मिल गया।

मस्अला 3—सहरी में जहां तक हो सके, देर करके खाना बेहतर है, लेकिन इतनी देर न करे कि सुबह होने लगे और रोज़े में सुबह पड़ जाये।

मस्अला 4—अगर सहरी बड़ी जल्दी खा ली, मगर उसके बाद पान–तम्बाकू, चाय–पान बड़ी देर तक खाती–पीती रही, जब सुबह होने में थोड़ी देर रह गयी, तब कुल्ली कर डाले, तब भी देर करके खाने का सवाब मिल गया और इसका भी वही हुक्म है, जो देर करके खाने का हुक्म है।

मस्अला 5—अगर रात को सहरी खाने के लिए आंख न खुली, सब के सब सो गये तो बे–सहरी खाये सुबह का रोज़ा रखो, सहरी छूट जाने से रोज़ा छोड़ देना बड़ी कम–हिम्मती की बात है और बड़ा गुनाह है।

मस्अला 6—जब तक सुबह न हो और फ़ज्र का वक़्त न आये, जिसका बयान नमाज़ों के वक़्तों में गुज़र चुका है, तब तक सहरी खाना दुरूस्त है, इसके बाद दुरूस्त नहीं।

मस्अला 7—किसी की आंख देर में खुली और यह ख़्याल हुआ कि अभी रात बाक़ी है, इस गुमान पर सहरी खा ली, फिर मालूम हुआ कि सुबह हो जाने के बाद सहरी खायी थी, तो रोज़ा नहीं हुआ, क़ज़ा रखे और कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं, लेकिन फिर भी कुछ खाये–पिये नहीं, रोज़ेदारों की तरह रहे। इसी तरह अगर सूरज डूबने के विचार से रोज़ा खोल लिया, फिर

सूरज निकल आया, तो रोज़ा जाता रहा। इसकी क़ज़ा करे, कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं। और अब जब तक सूरज न डूब जाये, कुछ खाना–पीना दुरुस्त नहीं।

मस्अला 8—इतनी देर हो गयी कि सुबह हो जाने का शुबहा पड़ गया तो अब खाना मकरूह है और अगर ऐसे वक़्त कुछ खा लिया या पानी पी लिया, तो बुरा किया और गुनाह हुआ। फिर अगर मालूम हो गया कि उस वक़्त सुबह हो गयी थी, तो उस रोज़े की क़ज़ा रखे और अगर कुछ न मालूम हुआ, शुबहा ही शुबहा रह जाये, तो क़ज़ा रखना वाजिब नहीं है, लेकिन एहतियात की बात यह है कि उसकी क़ज़ा रख ले।

मस्अला 9—मुस्तहब यह है कि जब सूरज यक़ीनी तौर पर डूब जाये, तो तुरंत रोज़ा खोल डाले, देर करके रोज़ा खोलना मक्रूह है।

मस्अला 10—बदली के दिन ज़रा देर करके रोज़ा खोले। जब ख़ूब यक़ीन हो जाये कि सूरज डूब गया होगा, तब इफ़्तार करे। और सिर्फ़ घड़ी–घड़ियाल वग़ैरह पर कुछ भरोसा न करो, जब तक कि तुम्हारा दिल न गवाही दे दे। क्योंकि घड़ी शायद कुछ ग़लत हो गयी हो, बल्कि अगर कोई अंज़ान भी कह दे, लेकिन अभी वक़्त होने में शुबहा है, तब भी रोज़ा खोलना दुरुस्त नहीं।

मस्अला 11—छोहारे से रोज़ा खोलना बेहतर है और कोई मीठी चीज़ हो उससे खोलें, वह भी न हो, तो पानी से इफ़्तार करें। कुछ औरतें और कुछ मर्द नमक की कंकरी से इफ़्तार करते हैं और इसमें सवाब समझते हैं यह ग़लत अक़ीदा है।

मस्अला 12—जब तक सूरज डूबने में शुबहा रहे, इफ़्तार करना जायज़ नहीं।

कफ़्फ़ारे का बयान

मस्अला 1—रमज़ान शरीफ़ के रोज़े तोड़ डालने का कफ़्फ़ारा यह है कि दो महीने बराबर लगातार रोज़े रखे, थोड़े–थोड़े करके रोज़े रखना दुरुस्त नहीं। अगर किसी वजह से बीच में दो एक रोज़े नहीं रखे तो अब फिर से दो महीने के रोज़े रखे। हां, जितने रोज़े हैज़ की वजह से जाते रहे हैं, वे माफ़ हैं। उनके छूट जाने से कफ़्फ़ारे में कुछ नुक़्सान नहीं, लेकिन पाक होने के तुरन्त बाद फिर रोज़े रखना शुरू कर दे और साठ

रोज़े पूरे कर ले।

मस्अला 2—निफ़ास की वजह से बीच में रोज़े छूट गये, पूरे रोज़े लगातार नहीं रख सके, तो भी कफ़्फ़ारा सही नहीं हुआ। सब रोज़े फिर से रखे।

मस्अला 3—अगर दुख बीमारी की वजह से बीच में कफ़्फ़ारे के कुछ रोज़े छूट गये, तो भी तंदुरूस्त होने के बाद फिर से रोज़े रखना शुरू कर दे।

मस्अला 4—अगर बीच में रमज़ान का महीना आ गया, तब भी कफ़्फ़ारा सही नहीं हुआ।

मस्अला 5—अगर किसी को रोज़े रखने की ताक़त न हो, तो साठ मिस्कीनों को सुबह–शाम पेट भर कर खाना खिला दे, जितना उनके पेट में समाये, ख़ूब तन के खा लें।[1]

मस्अला 6—इन मिस्कीनों में अगर कुछ बिल्कुल छोटे बच्चे हों, तो जायज़ नहीं, इन बच्चों के बदले और मिस्कीनों को फिर खिला दें।

मस्अला 7—अगर गेहूं की रोटी हो, तो रूखी–सूखी भी खिलाना दुरूस्त है, और अगर जौ, बाजरा, ज्वार वग़ैरह की रोटी हो, तो इसके साथ कुछ दाल वग़ैरह देना चाहिए, जिसके साथ रोटी खायें।

मस्अला 8—अगर खाना न खिलाये, बल्कि साठ मिस्कीनों को कच्चा अनाज दे दे, तो भी जायज़ है। हर एक मिस्कीन को इतना–इतना दे दे, जितना सदक़ा–ए–फ़ित्र (फ़ितरा) दिया जाता है, इसका ज़िक्र सदक़ा–ए–फ़ित्र के बाब में आयेगा। (इन–शा–अल्लाहु तआला)।

मस्अला 9—अगर इतने अनाज की क़ीमत दे दे, तो भी जायज़ है।

मस्अला 10—अगर किसी और से कह दिया कि तुम मेरी तरफ़ से कफ़्फ़ारा अदा कर दो और साठ मिस्कीनों को खाना खिला दो। और उसने इसकी तरफ़ से खाना खिला दिया या कच्चा अनाज दे दिया, तब भी कफ़्फ़ारा अदा हो गया और अगर बग़ैर उसके कहे किसी ने उसकी तरफ़ से दे दिया, तो कफ़्फ़ारा सही नहीं हुआ।

मस्अला 11—अगर एक ही मिस्कीन को साठ दिन तक सुबह व शाम खाना खिला दिया या साठ दिन तक कच्चा अनाज या क़ीमत देती

---

1. यानी कुछ भी भूख न रहे।

रही, तब भी कफ़्फ़ारा सही हो गया।

मस्अला 12—अगर साठ दिन तक लगातार खाना नहीं खिलाया, बल्कि बीच में नाग़ा हो गया, तो कुछ हरज नहीं, यह भी दुरूस्त है।

मस्अला 13—अगर साठ दिन का अनाज हिसाब करके एक फ़क़ीर को एक ही दिन दे दिया, तो दुरूस्त नहीं। इसी तरह एक ही फ़क़ीर को एक ही दिन अगर साठ बार करके दे दिया, तब भी एक ही दिन का अदा हुआ। एक कम साठ मिस्कीनों को फिर देना चाहिए। इसी तरह क़ीमत देने का भी हुक्म है यानी एक दिन में एक मिस्कीन को एक रोज़े के बदले से ज़्यादा देना दुरूस्त नहीं।

मस्अला 13—अगर किसी फ़क़ीर को सदक़ा-ए-फ़ित्र की मिक़्दार से कम दिया तो कफ़्फ़ारा सही नहीं हुआ।

मस्अला 14—अगर एक ही रमज़ान के दो या तीन रोज़े तोड़ डाले, तो एक ही कफ़्फ़ारा वाजिब है। हां, अगर ये दोनों रोज़े एक ही रमज़ान के न हों, तो अलग-अलग कफ़्फ़ारा देना पड़ेगा।

जिन वजहों से रोज़ा तोड़ देना जायज़ है

उनका बयान

मस्अला 1—अचानक ऐसी बीमारी पड़ गयी कि अगर रोज़ा न तोड़ेगी, तो जान पर बन जायेगी या बीमारी बहुत बढ़ जायेगी, तो रोज़ा तोड़ देना दुरूस्त है, जैसे अचानक पेट में ऐसा दर्द उठा कि बेताब हो गयी या सांप ने काट खाया तो दवा पी लेना और रोज़ा तोड़ देना दुरूस्त है। ऐसे ही अगर ऐसी प्यास लगे कि हलाकत का डर है, तो भी रोज़ा तोड़ डालना दुरूस्त है।

मस्अला 2—हामिला औरत को कोई ऐसी बात पेश आ गयी, जिससे अपनी जान का या बच्चे की जान का डर है, तो रोजा तोड़ डालना दुरूस्त है।

मस्अला 3—खाना पकाने की वजह से बेहद प्यास लग आयी और

इतनी बेताबी हो गयी कि अब जान का डर है, तो रोज़ा खोल डालना दुरूस्त है, लेकिन अगर खुद उसने जान–बूझकर इतना काम किया, जिससे ऐसी हालत हो गयी, तो गुनाहगार होगी।

जिन वजहों से रोज़ा रखना जायज़ है, उनका बयान

मस्अला 1—अगर ऐसी बीमार है कि रोज़ा नुक़्सान करता है और यह डर है कि अगर रोज़ा रखेगी तो बीमारी बढ़ जायेगी या देर में अच्छी होगी या जान बाक़ी न रहेगी, तो रोज़ा न रखे। जब अच्छी हो जाये तो उसकी क़ज़ा रख ले, लेकिन सिर्फ़ अपने दिल में ऐसा विचार कर लेने से रोज़ा छोड़ना दुरूस्त नहीं है, बल्कि अब कोई मुसलमान दीनदार हकीम डाक्टर कह दे कि रोज़ा तुम को नुक़्सान करेगा, तब छोड़ना चाहिए।

मस्अला 2—अगर हकीम या डाक्टर काफ़िर है या शरअ का पाबंद नहीं है, तो उसकी बात का एतबार नहीं, सिर्फ़ उसके कहने से रोज़ा न छोड़े।

मस्अला 3—अगर हकीम ने तो कुछ नहीं कहा, लेकिन ख़ुद तजुर्बेकार है और कुछ ऐसी निशानियां मालूम हुई, जिनकी वजह से दिल गवाही देता है कि रोज़ा नुक़्सान करेगा, तब भी रोज़ा न रखे। अगर खुद तजुर्बेकार न हो, और उसको बीमारी का कुछ हाल मालूम न हो, तो सिर्फ़ ख्याल का एतबार नहीं। अगर दीनदार हकीम के बतलाये बग़ैर और अपने तजुर्बे की ही बुनियाद पर रमज़ान का रोज़ा तोड़ेगी, तो कफ़्फ़ारा देना पड़ेगा और अगर रोज़ा न रखेगी तो गुनाहगार होगी।

मस्अला 4—अगर बीमारी से अच्छी हो गयी, लेकिन कमज़ोरी बाक़ी है और विचार है कि अगर रोज़ा रखा, तो फिर बीमार पड़ जायेगी, तब भी रोज़ा न रखना जायज़ है।

मस्अला 5—अगर कोई सफ़र में हो, तो उसको दुरूस्त है कि रोज़ा न रखे। फिर कभी क़ज़ा रख ले और सफ़र के मानी वही हैं, जिसका नमाज़

के बयान में ज़िक्र हो चुका है। यानी तीन मंज़िल जाने का इरादा हो।

मस्अला 6—सफ़र में अगर रोज़े से कोई तक्लीफ़ न हो, जैसे रेल पर सवार हैं और विचार है कि शाम तक घर पहुंच जाऊंगी या अपने साथ राहत व आराम का सामान मौजूद है, तो ऐसे वक़्त सफ़र में भी रोज़ा रख लेना बेहतर है और अगर रोज़ा न रखे, बल्कि क़ज़ा कर ले, तब भी कोई गुनाह नहीं, हां रमज़ान शरीफ़ के रोज़े की जो फ़ज़ीलत है, उससे महरूम रहेगी और अगर रास्ते में रोज़े की वजह से तक्लीफ़ और परेशानी हो तो ऐसे वक़्त रोज़ा न रखना बेहतर है।

मस्अला 7—अगर बीमारी से अच्छी नहीं हुई, उसी में मर गयी या अभी घर नहीं पहुंची, सफ़र ही में मर गयी, तो जितने रोज़े बीमारी की वजह से या सफ़र की वजह से छूटे हैं, आख़िरत में उनकी पकड़ न होगी, क्योंकि क़ज़ा रखने की मोहलत अभी उसको नहीं मिली थी।

मस्अला 8—अगर बीमारी में दस रोज़े गये थे, फिर पांच दिन अच्छी रही, लेकिन क़ज़ा रोज़े नहीं रखे, तो पांच रोज़े हैं, सिर्फ़ पांच रोज़ों की क़ज़ा न रखने पर पकड़ी जायेगी। अगर पूरे दस दिन अच्छी रही, तो पूरे दस दिन की पकड़ होगी। इसलिए ज़रूरी है कि जितने रोज़ों की पकड़ उस पर होने वाली है, उतने ही रोज़ों का फ़िदया देने के लिए कह मरे, जबकि उसके पास माल हो और फ़िदया का बयान आगे आता है।

मस्अला 9—इसी तरह अगर सफ़र में रोज़े छोड़ दिये थे, फिर घर पहुंचने के बाद मर गयी तो, जितने दिन घर में रही है, सिर्फ़ उतने ही दिन की पकड़ होगी। इसको भी चाहिए कि फ़िदया की वसीयत कर जाये। अगर रोज़े उससे ज़्यादा छूटे हों, तो उनकी पकड़ नहीं है।

मस्अला 10—अगर रास्ते में पंद्रह दिन रहने की नीयत से ठहर गयी, तो अब रोज़ा छोड़ना दुरुस्त नहीं, क्योंकि शरअ में वह अब मुसाफ़िर नहीं रही। हां, अगर पंद्रह दिन से कम ठहरने की नीयत हो तो रोज़ा न रखना दुरुस्त है।

मस्अला 11—हामिला औरत और दूध पिलाने वाली औरत को जब अपनी जान का या बच्चे की जान का डर हो, तो रोज़ा न रखे, फिर कभी क़ज़ा कर ले, लेकिन अगर शौहर मालदार है कि कोई अन्ना रखकर दूध पिलवा सकता है, तो दूध पिलवाने की वजह से मां का रोज़ा छोड़ना दुरुस्त नहीं है, हां अगर वह ऐसा लड़का है कि सिवाए अपनी मां के किसी और का दूध नहीं पीता, तो ऐसे वक़्त में मां को रोज़ा न रखना दुरुस्त है।

मस्अला 12—किसी अन्ना ने दूध पिलाने की नौकरी की, फिर रमज़ान आ गया, और रोज़े से बच्चे की जान का डर है, तो अन्ना को भी रोज़ा न रखना दुरूस्त हैं।

मस्अला 13—औरत को हैज़ आ गया या बच्चा पैदा हुआ और निफ़ास हो गया, तो हैज़ और निफ़ास रहने तक रोज़ा रखना दुरूस्त नहीं।

मस्अला 14—अगर रात को पाक हो गयी, तो अब सुबह को रोज़ा न छोड़े। अगर रात को न नहायी हो, तब भी रोज़ा रख ले और सुबह को नहा ले और अगर सुबह होने के बाद पाक हुई, तो अब पाक होने के बाद रोज़े की नीयत करना दुरूस्त नहीं, लेकिन कुछ खाना-पीना भी दुरूस्त नहीं है। अब दिन भर रोज़ेदारों की तरह रहना चाहिए।

मस्अला 15—इसी तरह अगर कोई दिन को मुसलमान हुई या दिन को जवान हुई, तो अब दिन भर खाना-पीना ठीक नहीं और अगर कुछ खा लिया, तो उस रोज़े की क़ज़ा रखना भी नयी मुसलमान और नयी जवान के ज़िम्मे वाजिब नहीं है।

मस्अला 16—सफ़र में रोज़ा रखने का इरादा था, लेकिन दोपहर से एक घंटा पहले ही अपने घर पहुंच गयी या ऐसे वक़्त में पंद्रह दिन रहने की नीयत से कहीं रह पड़ी और अब तक कुछ खाया-पीया नहीं है, तो अब रोज़े की नीयत कर ले।

फ़िदये का बयान

मस्अला 1—जिसको इतना बुढ़ापा हो गया हो कि रोज़ा रखने की ताक़त नहीं रही या इतनी बीमार है कि अब अच्छे होने की उम्मीद भी नहीं, न रोज़ा रखने की ताक़त है तो रोज़ा न रखे और हर रोज़े के बदले एक मिस्कीन को सदक़ा-ए-फ़ित्र के बराबर ग़ल्ला दे दे या सुबह-शाम पेट भर कर उसको खाना खिला दे, शरअ में इसको फ़िद्या कहते हैं। और ग़ल्ले के बदले में इस क़दर ग़ल्ले की क़ीमत दे दे, तब भी दुरूस्त है।

मस्अला 2—वह गेहूं अगर थोड़े-थोड़े करके कई मिस्कीनों को बांट दे, तो भी सही है।

मस्अला 3—फिर अगर कभी ताक़त आ गयी या बीमारी से अच्छी हो गयी तो सब रोज़े क़ज़ा करने पड़ेंगे और जो फ़िदया दिया है, उसका

सवाब अलग मिलेगा।

मस्अला 4—किसी के ज़िम्मे कई रोज़े कज़ा थे और मरते वक़्त वसीयत कर गयी कि मेरे रोज़ों के बदले फ़िद्या दे देना, तो उसके माल में से उसका वली फ़िद्या दे दे। और कफ़न–दफ़न और कर्ज़ अदा करके, जितना माल बचे, उसके एक तिहाई में से अगर एक फ़िद्या निकल आये, तो दे देना वाजिब होगा।

मस्अला 5—अगर उसने वसीयत नहीं की, मगर वली ने अपने माल में से फ़िद्या दे दिया, तब भी खुदा से उम्मीद रखे फिर शायद खुदा कुबूल कर ले और अब रोज़ों की पकड़ न करे। और बग़ैर वसीयत के खुद मुर्दा के माल में फ़िदया दे देना जायज़ नहीं है। इसी तरह अगर तिहाई माल से ज़्यादा हो जायें तो वसीयत के बावजूद भी ज़्यादा देना तमाम वारिसों की रज़ामंदी के बग़ैर जायज़ नहीं। हां, अगर सब वारिस खुशी से राज़ी हो जायें, तो दोनों शक्लों में फ़िद्या देना दुरुस्त है, लेकिन नाबालिग़ वारिस की इजाज़त का शरअ में कुछ एतबार नहीं है। बालिग़ वारिस अपना हिस्सा अलग करके उसमें से दे दे, तो दुरुस्त है।

मस्अला 6—अगर किसी की नमाज़ें कज़ा हो गयी हों और वसीयत करके मर गयी कि मेरी नमाज़ों के बदले में फ़िदया दे देना, इसका भी यही हुक्म है।

मस्अला 7—हर वक़्त की नमाज़ का उतना फ़िदया है, जितना एक रोज़े का फ़िदया है। इस हिसाब से रात–दिन के पांच फ़र्ज़ और एक वित्र से छः नमाज़ों की तरफ़ एक छटांक कम पौने ग्यारह सेर गेहूं, अस्सी रुपए[1] के सेर से दे, मगर एहतियात के तौर पर पूरे ग्यारह सेर दे दे।

मस्अला 8—किसी के ज़िम्मे ज़कात बाक़ी है, अभी अदा नहीं की, तो वसीयत कर जाने से उसका भी अदा करना वारिसों पर वाजिब है। अगर वसीयत नहीं की और वारिसों ने अपनी खुशी से दे दी तो ज़कात अदा नहीं हुई।

मस्अला 9—अगर मुर्दे की तरफ़ से कज़ा रोज़े रख ले उसकी तरफ़ से कज़ा नमाज़ पढ़ ले, तो यह दुरुस्त नहीं, यानी उसके ज़िम्मे से न उतरेंगे।

---

1. यानी अस्सी तोला।

मस्अला 10—बिला वजह रमज़ान का रोज़ा छोड़ देना दुरुस्त नहीं और बड़ा गुनाह है। यह न समझे कि इसके बदले एक रोज़ा क़ज़ा रख लूंगी, क्योंकि हदीस शरीफ़ में आया है कि रमज़ान के एक रोज़े के बदले में अगर साल भर बराबर रोज़ा रखती रहे, तब भी इतना सवाब न मिलेगा, जितना रमज़ान में एक रोज़े का सवाब मिलता।

मस्अला 11—अगर किसी ने बद–बख़्ती से रोज़ा न रखा, तो और लोगों के सामने न कुछ खाये, न पिये, न यह ज़ाहिर करे कि आज मेरा रोज़ा नहीं है, इसलिए कि गुनाह करके उसको ज़ाहिर करना भी गुनाह है और अगर सबसे कह देगी, तो दोहरा गुनाह होगा, एक तो रोज़ा न रखने का, दूसरा गुनाह ज़ाहिर करने का। यह जो मश्हूर है कि ख़ुदा की चोरी नहीं, तो बंदे की क्या चोरी, यह ग़लत बात है, बल्कि जो किसी मजबूरी से रोज़ा नहीं रखती, उसको भी मुनासिब है कि सब के सामने कुछ न खाये।

मस्अला 12—जब लड़का या लड़की रोज़ा रखने के लायक़ हो जायें, तो उनको भी रोज़े का हुक्म करे और जब दस बरस की उम्र हो जाये, तो मार कर रोज़ा रखवाये। अगर सारे रोज़े न रख सके, तो जितने रख सके, रखा दे।

मस्अला 13—अगर ना–बालिग़ लड़का या लड़की रोज़ा रख कर तोड़ डाले, तो उसकी क़ज़ा न रखवाये, हां अगर नमाज़ की नीयत करके तोड़ डाले, तो उसको दोहराये।

एतिकाफ़ का बयान

रमज़ान शरीफ़ की बीसवीं तारीख़ का दिन छिपने से तनिक पहले से रमज़ान की 29 या 30 तारीख़ यानी जिस दिन ईद का चांद नज़र आ जाये, उस तारीख़ के दिन छिपने तक अपने घर में[1], जहां नमाज़ पढ़ने की जगह मुक़र्रर करती है उस जगह पर पाबंदी से जमकर बैठना, इसको एतिकाफ़ कहते हैं। इसका बड़ा सवाब है। अगर एतिकाफ़ शुरू करे, तो सिर्फ़

---

1. और मर्दों के लिए ऐसी मस्जिदें दुरुस्त हैं, जिसमें पांचों वक़्त नमाज़ होती है।

पेशाब–पाख़ाना या खाने–पीने की मजबूरी हो तो वहां से उठना दुरुस्त है और अगर कोई खाना–पानी देने वाला हो, तो उसके लिए भी न उठे, हर वक़्त वहीं रहे और वहीं सोये और बेहतर यह है कि बेकार न बैठे, क़ुरआन शरीफ़ पढ़ती रहे, नफ़्लें और तस्बीहें, जो तौफ़ीक़ हो, उसमें लगी रहे और अगर हैज़ या निफ़ास आ जाये, तो एतिकाफ़ छोड़ दे, इसमें दुरुस्त नहीं और एतिकाफ़ में मर्द से हम–बिस्तर होना, लिपटना, चपटना भी दुरुस्त नहीं।

ज़कात का बयान

जिसके पास माल हो और उसकी ज़कात निकालती न हो, वह अल्लाह तआला के नज़दीक बड़ी गुनाहगार है, क़ियामत के दिन उस पर बड़ा अज़ाब होगा। अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया है, जिसके पास सोना–चांदी हो और वह उसकी ज़कात न देता हो, क़ियामत के दिन उसके लिए आग की तख़्तियां बनायी जायेगी, फिर उनको दोज़ख़ की आग में गर्म करके उसकी दोनों करवटें और माथा और पीठ दाग़ी जायेगी, और जब ठंडी हो जायेगी फिर गर्म कर ली जायेगी और नबी अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया है, जिसको अल्लाह तआला ने माल दिया और उसने ज़कात न अदा की, तो क़ियामत के दिन उसको बड़ा ज़हरीला गंजा सांप बनाया जायेगा और वह उसकी गरदन में लिपट जायेगा। फिर उसके दोनों जबड़े नोचेगा और कहेगा, मैं ही तेरा माल हूं, मैं ही तेरा ख़ज़ाना हूं। ख़ुदा की पनाह ! भला इतने अज़ाब को कौन सहार सकता है, थोड़ी सी लालच के बदले यह मुसीबत भुगतना बड़ी बेवक़ूफ़ी की बात है। ख़ुद ही की दी हुई दौलत को ख़ुदा ही की राह में न देना कितनी बे–जा बात है।

मस्अला 1—जिसके पास[1] साढ़े बावन तोला चांदी या साढ़े सात

1. और रूपये के हिसाब से 54–81 पैसे रत्ती भर चांदी और 12 आने 8 रत्ती भर सोना हो, इस हिसाब से मह्र हज़रत फ़ातिमा रज़ि० का लगभग एक सौ सैंतालीस रूपए हुए और यह सब हिसाब इस मश्हूर बात पर हैं कि मिस्क़ाल साढ़े चार माशा का है और ख़ुद जो हिसाब किया, उसमें कमीबेशी निकलती है, इसलिए अगर कोई एहतियात करना चाहे तो उसकी सूरत यह है ज़कात चालीस रूपए भर चांदी और पांच रत्ती कम छः रूपए भर

तोला सोना हो, एक साल तक बाक़ी रहे, तो साल गुज़रने पर उसकी ज़कात देना वाजिब है।

मस्अला 2—किसी के पास आठ तोला सोना चार महीने या छः महीने तक रहा, फिर वह कम हो गया और दो–तीन महीने के बाद फिर मिल गया, तब भी ज़कात देना वाजिब है। मतलब यह है कि जब साल के शुरू और आख़िर में मालदार हो जाये और साल के बीच में कुछ दिन इस मिक़्दार से कम रह जाये, तो भी ज़कात वाजिब होती है। बीच में थोड़े दिन कम हो जाने से ज़कात माफ़ नहीं होती, हां, अगर सब माल जाता रहे, इसके बाद फिर माल मिले, तो जबसे फिर मिला है, तब से माल का हिसाब किया जायेगा।

मस्अला 3—किसी के पास आठ–नौ तोला सोना था, लेकिन साल गुज़रने से पहले–पहले जाता रहा, पूरा साल गुज़रने नहीं पाया, तो ज़कात वाजिब नहीं।

मस्अला 4—किसी के पास दो सौ रूपये हैं और उतने ही रूपयों की वह क़र्ज़दार भी है, तो उस पर ज़कात वाजिब नहीं चाहे साल भर तक रहे, चाहे न रहे और अगर डेढ़ सौ की कर्ज़दार है, तो भी ज़कात वाजिब नहीं क्योंकि डेढ़ सौ रूपए जो क़र्ज़ में चले गये, सिर्फ़ पचास रूपये रह गए और पचास रूपये में ज़कात वाजिब नहीं होती।

मस्अला 5—अगर दो सौ रूपए पास हैं और अगए एक सौ रूपये की क़र्ज़दार है, तो एक सौ की ज़कात वाजिब है।

मस्अला 6—सोने–चांदी के ज़ेवर और बर्तन और सच्चा गोटा–ठप्पा सब पर ज़कात वाजिब है, चाहे पहनती रहती हो या बंद रखे हों और कभी न पहनती हो। मतलब यह है कि चांदी–साने की हर चीज़ पर ज़कात वाजिब है, हां, अगर इतनी मिक़्दार कम हो, जो ऊपर बयान हुई, तो ज़कात वाजिब न होगी।

सोने में दे दे और सदक़ा–ए–फ़ित्र में 80 रूपये के सेर से दो सेर गेहूं दे दे और नजासते ग़लीज़ा में सवा तीन माशा से बचे। और मह्रे फ़ातिमा रज़ि० में औरत को एहतियात इसमें है कि सौ रूपये से ज़्यादा न मांगे और याद रहे कि हमने सब वज़नों में लखनऊ के तोला–माशा का एतबार किया है, जिसके मुताबिक़ रूपया सिक्का अंग्रेज़ी साढ़े ग्यारह माशा का होता है, जिन शहरों में तोले का वज़न कम व बेश हो, वे इसी रूपये से हिसाब लगा लें।

मस्अला 7—सोना और चांदी अगर खरा न हो, बल्कि उसमें कुछ मैल हो, जैसे, चांदी में रांगा मिला हुआ है, तो देखो चांदी ज़्यादा है या रांगा। अगर चांदी ज़्यादा हो, तो इसका वही हुक्म है जो चांदी का हुक्म है यानी अगर इतनी मिक़्दार हो, जो ऊपर बयान हुई, तो ज़कात वाजिब है और अगर रांगा ज़्यादा है, तो उसको चांदी न समझेंगे, बल्कि रांगा समझेगे, तो जो हुक्म पीतल, तांबे, लोहे, रांगे वग़ैरह चीज़ों का होगा वही इसका भी हुक्म है।

मस्अला 8—किसी के पास न तो मिक़्दार सोने की है, न पूरी मिक़्दार चांदी की, बल्कि थोड़ा सोना है और थोड़ी चांदी, तो अगर दोनों की क़ीमत मिलाकर साढ़े बावन तोला चांदी के बराबर हो जाये या साढ़े सात तोला सोने के बराबर हो जाये, तो ज़कात वाजिब है और अगर दोनों चीज़ें इतनी थोड़ी-थोड़ी हैं कि दोनों की क़ीमत न इतनी चांदी के बराबर है और न इतने सोने के बराबर, तो ज़कात वाजिब नहीं और अगर सोने और चांदी दोनों की पूरी-पूरी मिक़्दार है तो क़ीमत लगाने की ज़रूरत नहीं।

मस्अला 9—मान लो कि किसी ज़माने में पचीस रूपए का एक तोला सोना मिलता है और एक रूपए की डेढ़ तोला चांदी मिलती है और किसी के पास दो तोला सोना और पांच रूपए ज़रूरत से ज़्यादा हैं और साल भर तक वह रह जाये, तो उस पर ज़कात वाजिब है, क्योंकि दो तोला सोना पचास रूपए का हुआ और पचास रूपए की चांदी पचहत्तर तोला हुई, तो दो तोला सोने की चांदी अगर ख़रीदोगी, तो पचहत्तर तोला मिलेगी और पांच रूपए तुम्हारे पास हैं, इस हिसाब से उतने मिक़्दार से बहुत ज़्यादा माल हो गया है, जितने पर ज़कात वाजिब होती है, हां, अगर सिर्फ़ दो तोला सोना हो, और उसके साथ रूपए और चांदी कुछ न हो तो ज़कात वाजिब न होगी।

मस्अला 10—एक रूपए की चांदी दो तोला मिलती है और किसी के पास सिर्फ़ 30 रू० हैं तो उस पर ज़कात वाजिब नहीं और यह हिसाब न लगायेंगे कि तीस रूपए की चांदी साठ तोला हुई, क्योंकि रूपया चांदी का होता है। और जब सिर्फ़ चांदी या सिर्फ़ सोना पास हो तो वज़न का एतबार है, क़ीमत का एतबार नहीं।

मस्अला 11—किसी के पास सौ रूपए ज़रूरत से ज़्यादा रखे थे फिर साल पूरा होने से पहले-पहले पचास रूपए और मिल गये, तो इन पचास रूपयों का हिसाब अलग न करेंगे, बल्कि उसी सौ रूपए के साथ

उसको मिला देंगे और जब उन सौ रूपयों का साल पूरा होगा, तो पूरे डेढ़ सौ की ज़कात वाजिब होगी और ऐसा समझेंगे कि पूरे डेढ़ सौ पर साल गुज़र आया।

मस्अला 12—किसी के पास सौ तोले चांदी रखी थी, फिर साल गुज़रने से पहले दो–चार तोला सोना आ गया या नौ–दस–तोला सोना मिल गया, तब भी इसका हिसाब अलग न किया जायेगा, बल्कि उस चांदी के साथ मिलाकर ज़कात का हिसाब होगा। पस जब इस चांदी का साल पूरा हो जायेगा, तो इस साल की ज़कात वाज़िब होगी।

मस्अला 13—सोने–चांदी के सिवा और जितनी चीज़ें हैं, जैसे लोहा, तांबा, पीतल, गिलट, रांगा, वग़ैरह, और इन चीज़ों के बने हुए बर्तन वग़ैरह और कपड़े–जूते और इसके अलावा कुछ सामान हो, इसका हुक्म यह है कि अगर इसको बेचती और व्यपार करती हो, तो देखो वह सामान कितना है, अगर इतना है कि इसकी क़ीमत साढ़े बावन तोला चांदी या साढ़े सात तोला सोने के बराबर है, तो जब साल गुज़र जाये तो व्यापार के इस साल में ज़कात वाजिब है और अगर इतना न हो, तो इसमें ज़कात वाजिब नहीं और अगर वह माल व्यपार के लिए नहीं है, तो इसमें ज़कात वाजिब नहीं है, चाहे जितना माल हो। अगर हज़ारों रूपए का माल हो तब भी ज़कात वाजिब नहीं।

मस्अला 14—घर का सामान जैसे, पतीली, देगची, देग या और बड़ी देग, पेनी, लगन और खाने–पीने के बर्तन और रहने–सहने का मकान और पहनने के कपड़े, सच्चे मोतियों के हार वग़ैरह, इन चीज़ों में ज़कात वाजिब नहीं, हां अगर यह व्यापार का माल हो, तो इस पर ज़कात वाजिब है। मतलब यह कि सोने–चांदी के अलावा और जितना माल–अस्बाब हो, अगर वह व्यापार का माल है, तो ज़कात वाजिब है। नहीं तो इसमें ज़कात वाजिब नहीं।

मस्अला 15—किसी के पास पांच–दस घर हैं, इन को किराये पर चलाती है, तो इन मकानों पर भी ज़कात वाजिब नहीं, चाहे जितनी क़ीमत के हों। ऐसे ही अगर किसी ने दो–चार सौ रूपए के बर्तन ख़रीद लिए और उनको किराए पर चलाती रहती है, तो इस पर भी ज़कात वाजिब नहीं। मतलब यह कि किराये पर चलाने से माल में ज़कात वाजिब नहीं होगी।

मस्अला 16—पहनने के धराऊ जोड़े, चाहे जितने ज़्यादा क़ीमती हों, उनमें ज़कात वाजिब नहीं, लेकिन अगर उनमें सच्चा काम है, और इतना

काम है कि अगर चांदी छुड़ायी जाये तो साढ़े बावन तोला या इससे ज़्यादा निकलेगी, तो इस चांदी पर ज़कात वाजिब है और अगर इतना न हो, तो ज़कात वाजिब नहीं।

मस्अला 17—किसी के पास कुछ चांदी या सोना है और कुछ व्यापार का माल है, तो सब को मिलाकर देखो, अगर उसकी क़ीमत साढ़े बावन तोला चांदी या साढ़े सात तोला सोने के बराबर हो जाये, तो ज़कात वाजिब है और अगर इतना न हो, तो ज़कात वाजिब नहीं।

मस्अला 18—व्यापार का माल वह कहलायेगा, जिसको इसी इरादे से मोल लिया हो कि उसका व्यापार करेंगे, तो अगर किसी ने अपने घर के ख़र्च के लिए या शादी वग़ैरह के ख़र्च के लिए चावल लिए, फिर इरादा हो गया कि लाओ इसका व्याएार कर लें, तो यह माल व्यापार का नहीं है, इस पर ज़कात वाजिब नहीं।

मस्अला 19—अगर किसी पर तुम्हारा क़र्ज़ आता हो, तो इस क़र्ज़ पर भी ज़कात वाजिब नहीं है, लेकिन क़र्ज़ की तीन क़िस्में हैं—

एक यह कि नक़द रूपया या सोना, चांदी किसी को क़र्ज़ दिया या व्यापार का माल बेचा, उसकी क़ीमत बाक़ी है और एक साल के बाद या दो तीन वर्ष के बाद वसूल हुआ तो अगर इतनी मिक़्दार हो, जितनी पर ज़कात वाजिब होती है, तो इन सब वर्षों की ज़कात देना वाजिब है, अगर इकट्ठे न वसूल हो, तो जब उसमें से ग्यारह रूपए मिलें, तब उनकी ज़कात वाजिब है, और अगर इससे कम मिले तो वाजिब नहीं, फिर जब ग्यारह रूपए और मिलें, तो उसकी ज़कात दे। इसी तरह देती रहे और जब दे, तो सब वर्षों की दे और अगर क़र्ज़ इससे कम हो, तो ज़कात वाजिब न होगी, हां, अगर उसके पास कुछ और माल भी हो, और दोनों मिला कर पूरी हो जाये, तो ज़कात वाजिब होगी।

मस्अला 20—और नक़द नहीं दिया, न व्यापार का माल बेचा है, बल्कि कोई और चीज़ बेची थी, जो व्यापार की न थी, जैसे पहनने के कपड़े बेच डाले या घर, गिरहस्ती का सामान बेच दिया, उसकी क़ीमत बाक़ी है और इतनी है, जितनी में ज़कात वाजिब होती है, फिर वह क़ीमत कई वर्षों के बाद वसूल हुई तो सब वर्षों की ज़कात देना वाजिब है और अगर सब एक बार करके न वसूल हो, बल्कि थोड़ा-थोड़ा करके मिले, तो जब तक चव्वन

---

1. देखिए मस्अला न० 1।

रूपए बारह आने न वसूल हों तब तक ज़कात वाजिब नहीं है, जब चव्वन रूपए, बारह आने मिल जाये, तो सब वर्षों की ज़कात देना वाजिब है।

मस्अला 21—तीसरी क़िस्म यह है कि शौहर के ज़िम्मे मह्र हो वह कई वर्ष के बाद मिला, तो उसकी ज़कात का हिसाब मिलने के दिन से होगा, पिछले वर्षों की ज़कात वाजिब नहीं, बल्कि अब उसके पास रखा है और उस पर साल गुज़र जाये तो ज़कात वाजिब होगी, नहीं तो ज़कात वाजिब नहीं।

मस्अला 22—अगर कोई मालदार आदमी, जिस पर ज़कात वाजिब है साल गुज़रने से पहले ही ज़कात दे दे और साल के पूरे होने का इंतिज़ार न करे तो भी जायज़ है और ज़कात हो जाती है और अगर मालदार नहीं है, बल्कि कहीं से माल मिलने की उम्मीद थी, इस उम्मीद पर ही माल मिलने से पहले ही ज़कात दे दी, तो यह ज़कात अदा नहीं होगी जब माल मिल जाये और उस पर साल गुज़र जाये, तो फिर ज़कात देना चाहिए।

मस्अला 23—मालदार आदमी अगर कई साल की ज़कात पेशगी दे दे, यह भी जायज़ है, लेकिन अगर किसी साल में माल बढ़ गया, तो बढ़ती की ज़कात फिर देनी पड़ेगी।

मस्अला 24—किसी के पास सौ रूपए ज़रूरत से ज़्यादा रखे हुए हैं और सौ रूपए कहीं और से मिलने की उम्मीद है, उसने पौने दो सौ रूपए की ज़कात साल पूरा होने से पहले ही पेशगी दे दी, यह भी दुरूस्त है, लेकिन अगर साल के ख़त्म होने पर रूपया निसाब से कम हो गया, तो ज़कात तो माफ़ हो गयी और वह दिया हुआ नफ़्ल सदक़ा हो गया।

मस्अला 25—किसी के माल पर सारा साल गुज़र गया, लेकिन अभी ज़कात नहीं निकली थी कि सारा माल चोरी हो गया और किसी तरह से जाता रहा, तो ज़कात भी माफ़ हो गयी, अगर खुद अपना माल किसी को दे दिया और किसी तरह अपने अख़्तियार से हलाक (ख़त्म) कर डाला, तो जितनी ज़कात वाजिब हुई, वह माफ़ हो नहीं हुई, बल्कि देनी पड़ेगी।

मस्अला 26—साल पूरा होने के बाद किसी ने अपना सारा माल ख़ैरात कर दिया, तब भी ज़कात माफ़ हो गयी।

मस्अला 27—किसी के पास दौ सौ रूपए थे, एक साल के बाद उसमें से एक सौ चोरी हो गए या एक सौ ख़ैरात कर दिए तो एक सौ की ज़कात माफ़ हो गयी सिर्फ़ एक सौ रूपए की ज़कात देनी पड़ेगी।

ज़कात अदा करने का बयान

मस्अला 1—जब माल पर पूरा साल गुज़र जाए, तो तुरंत ज़कात अदा कर दे। नेक काम में देर लगाना अच्छा नहीं कि शायद अचानक मौत आ जाये और यह पकड़ अपनी गरदन पर रह जाये। अगर साल गुज़रने पर ज़कात अदा नहीं की, यहां तक कि दूसरा साल भी गुज़र गया, तो गुनाहगार हुई, अब भी तौबा करके दोनों साल की ज़कात दे दे। मतलब यह है कि उम्र भर में कभी न कभी ज़रूर दे दे, बाक़ी न रखे।

मस्अला 2—जितना माल हैं, उसका चालीसवां हिस्सा ज़कात में देना वाजिब है। यानी सौ रूपए में ढाई रूपए और चालीस रूपए में एक रूपया।

मस्अला 3—जिस वक़्त ज़कात का रूपया किसी ग़रीब को दे, उस वक़्त अपने दिल में इतना ज़रूर ख़्याल कर ले कि मैं ज़कात में देती हूं। अगर यह नीयत नहीं की, यों ही दे दिया, तो ज़कात अदा नहीं हुई। फिर से देना चाहिए और यह जितना दिया, इसका सवाब अलग मिलेगा।

मस्अला 4—अगर फ़क़ीर को देते वक़्त यह नीयत नहीं की, तो जब तक वह माल फ़क़ीर के पास रहे, उस वक़्त तक यह नीयत कर लेना दुरूस्त है। अब नीयत कर लेने से भी ज़कात अदा हो जायेगी। हां, जब फ़क़ीर ने ख़र्च कर डाला, उस वक़्त नीयत करने का एतबार नहीं है। अब फिर से ज़कात दे।

मस्अला 5—किसी ने ज़कात की नीयत से दो रूपए निकाल कर अलग रख लिए कि जब कोई हक़दार मिलेगा, उस वक़्त दे दूंगी, फिर जब फ़क़ीर को दे दिया, उस वक़्त ज़कात की नीयत करना भूल गयी तो भी ज़कात अदा हो गयी, हां, अगर ज़कात की नीयत से निकालकर अलग न रखती तो अदा न होती।

मस्अला 6—किसी ने ज़कात के रूपए निकाले, तो अख़्तियार है चाहे एक ही को सब दे दे या थोड़ा–थोड़ा कई ग़रीबों को दे और चाहे उसी दिन सब दे दे या थोड़ा–थोड़ा करके कई महीने में दे।

मस्अला 7—बेहतर यह है कि एक ग़रीब को कम से कम इतना दे दे कि उस दिन के लिए काफ़ी हो जाये और किसी से मांगना न पड़े।

मस्अला 8—एक ही फ़क़ीर को उतना माल देना जितने माल के होने से ज़कात वाजिब होती है, मकरूह है, लेकिन अदा दे दिया तो ज़कात अदा हो गयी। और इससे कम देना जायज़ है, मक्रूह भी नहीं।

मस्अला 9—कोई औरत क़र्ज़ मांगने आयी और यह मालूम है कि वह तंगदस्त और ग़रीब है, कि कभी अदा न कर सकेगी या ऐसी ना–देहन्दहै कि क़र्ज़ लेकर कभी अदा नहीं करती, उसको क़र्ज़ के नाम से ज़कात का रूपया दे दिया और अपने दिल में सोच लिया कि मैं ज़कात देती हूं, तब भी ज़कात अदा हो गयी, चाहे, वह अपने दिल में यह ही समझे कि मुझे क़र्ज़ दिया है।

मस्अला 10—अगर किसी को इनाम के काम से कुछ दिया, मगर दिल में यह ही नीयत है कि मैं ज़कात देती हूं, तब भी ज़कात अदा हो गयी।

मस्अला 11—किसी ग़रीब आदमी पर तुम्हारे दस रूपए क़र्ज़ हैं और तुम्हारे माल की ज़कात भी दस रूपए या उससे ज़्यादा है। उसको अपना क़र्ज़ ज़कात की नीयत से माफ़ कर दिया, तो ज़कात अदा नहीं हुई, हां, उसको दस रूपए ज़कात की नीयत से दे, तो ज़कात अदा हो गयी। अब यही रूपया अपने क़र्ज़ में उससे ले लेना दुरूस्त है।

मस्अला 12—किसी के पास चांदी का इतना ज़ेवर है कि हिसाब से तीन तोला चांदी ज़कात की होती है और बाज़ार में तीन तोला चांदी दो रूपए को बिकती है, तो ज़कात में दो रूपए दे देना दुरूस्त नहीं, क्योंकि दो रूपए का वज़न तीन तोला नहीं होता और चांदी की ज़कात में जब चांदी दी जाये तो वज़न का एतबार होता है, क़ीमत का एतबार नहीं होता। हां, इस शक्ल में अगर दो रूपए का सोना ख़रीद करके दे दिया या दो रूपए के पैसे या दो रूपए का कपड़ा या और कोई चीज़ दे दी या खुद तीन तोला चांदी दे दे तो दुरूस्त है। ज़कात अदा हो जायेगी।

मस्अला 13—ज़कात का रूपया ख़ुद नहीं दिया, बल्कि किसी और को दिया कि तुम किसी और को दे देना। यह भी जायज़ है। अब वह शख़्स अगर देते वक़्त ज़कात की नीयत न भी करे, तब भी ज़कात अदा हो जायेगी।

मस्अला 14—किसी ग़रीब को देने के लिए तुमने दो रूपए किसी को दे दिए, लेकिन उसने ठीक वही दो रूपए फ़क़ीर को नहीं दिए जो तुमने दिए थे, बल्कि अपने पास से दो रूपए तुम्हारी तरफ़ से दे दिए और यह विचार किया कि वे रूपए मैं ले लूंगा, तब भी ज़कात अदा हो गयी, बशर्ते

कि तुम्हारे रूपये उसके पास मौजूद हों और अब वह शख़्स अपने दो रूपये के बदले में तुम्हारे वे दोनों रूपए ले ले, हां अगर तुम्हारे दिए हुए रूपए उसने पहले ख़र्च कर डाले, उसके बाद अपने रूपए ग़रीब को दिए, तो ज़कात अदा नहीं हुई या तुम्हारे रूपए उसके पास रखे तो हैं, लेकिन अपने रूपए देते वक़्त यह नीयत न की कि मैं वे रूपए ले लूंगा, तब भी ज़कात अदा नहीं हुई। अब वे दोनों रूपए फिर ज़कात में दे।

मस्‌अला 15—अगर तुमने रूपए नहीं दिए, लेकिन इतना कह दिया कि तुम हमारी तरफ़ से ज़कात देना, इसलिए तुम्हारी तरफ़ से ज़कात दे दी, तो अदा हो गयी और जितना उसने तुम्हारी तरफ़ से दिया है, अब तुम से ले ले।

मस्‌अला 16—अगर तुमने किसी से कुछ नहीं कहा, उसने बिला तुम्हारी इजाज़त के तुम्हारी तरफ़ से ज़कात दे दी तो ज़कात अदा नहीं हुई, अब अगर तुम मंज़ूर भी कर लो, तब भी ठीक नहीं और जितना तुम्हारी तरफ़ से दिया है, तुमसे वसूल करने का उसको हक़ नहीं।

मस्‌अला 17—तुमने एक शख़्स को अपनी ज़कात देने के लिए दो रूपए दिए, तो उसको अख़्तियार है, चाहे ख़ुद किसी ग़रीब को दे दे या किसी और के सुपुर्द कर दे कि तुम वे रूपए ज़कात में दे देना और नाम का बताना ज़रूरी नहीं है कि फ़लाने की तरफ़ से यह ज़कात देना और वह शख़्स दो रूपए अगर अपने किसी रिश्तेदार या मां–बाप को ग़रीब देखकर दे दे तो भी ठीक है, लेकिन अगर वह ख़ुद ग़रीब हो तो आप ही ले लेना ठीक नहीं। हां, अगर तुमने यह कह दिया हो कि जो चाहो करो और जिसे जी चाहे दे दो, तो आप भी ले लेना ठीक है।

पैदावार की ज़कात का बयान

मस्‌अला 1—कोई शहर ग़ैर–मुस्लिमों के क़ब्ज़े में था, वही लोग वहां रहते थे, फिर मुसलमान उन पर चढ़ आए और लड़कर वह शहर उसने छिन लिया, और वहां इस्लाम फैलाया और मुसलमान बादशाह ने उनसे लेकर शहर की सारी ज़मीन उन्हीं मुसलमानों को बांट दी, तो ऐसी ज़मीन को शरीअत में अशरी कहते हैं और अगर उस शहर के रहने वाले लोगों ने अपने ख़ुशी से इस्लाम क़ुबूल कर लिया, लड़ने की ज़रूरत नहीं पड़ी, तब भी उस शहर की सारी ज़मीन अश्री कहलायेगी और अरब के मुल्क की भी

सारी ज़मीन अश्री है।

मस्अला 2—अगर किसी के बाप-दादा से यही अश्री ज़मीन बराबर चली आती हो या किसी ऐसे मुसलमान से ख़रीदी, जिसके पास इसी तरह चली आती हो, ऐसी ज़मीन में कुछ पैदा हो, उसमें भी ज़कात वाजिब है और उसका तरीक़ा यह है कि अगर खेत को सींचना न पड़े, सिर्फ़ बारिश के पानी से पैदावार हो गयी या नदी और दरिया के किनारे पर तराई में कोई चीज़ बोई और बिना सींचे पैदा हो गयी, तो ऐसे खेत में जितना पैदा होता है, उसका दसवां हिस्सा ख़ैरात कर देना वाजिब है, यानी दस मन में एक मन और दस सेर में एक सेर और अगर एक खेत को सींचा यानी चरसा 12 पर चला कर के या किसी और तरीक़े से सींचा है, तो पैदावार का बीसवां ख़ैरात करे यानी बीस मन में एक मन और बीस सेर में एक सेर और यही हुक्म है बाग़ का। ऐसी ज़मीन में कितनी ही थोड़ी चीज़ पैदा हुई हो, बहरहाल यह सदक़ा-ख़ैरात करना वाजिब है, कम और ज़्यादा होने में कुछ फ़र्क़ नहीं है।

मस्अला 3—अनाज, साग, तरकारी, मेवा, फल, फूल, वग़ैरह, जो कुछ पैदा हो, सबका यही हुक्म है।

मस्अला 4—अश्री ज़मीन या पहाड़ या जंगल से अगर शहद निकाला तो उसमें भी यह सदक़ा वाजिब है।

मस्अला 5—किसी ने अपने घर के अन्दर कोई पेड़ लगाया या कोई चीज़ तरकारी की क़िस्म से या और कुछ बोया और उसमें फल आया, तो उसमें यह सदक़ा वाजिब नहीं है।

मस्अला 6—अगर अश्री ज़मीन कोई ग़ैर-मुस्लिम ख़रीद ले, तो वह अश्री नहीं रहती, फिर अगर उससे मुसलमान भी ख़रीद ले या किसी और तौर पर उसको मिल जाये, तब भी वह अश्री न होगी।

मस्अला 7—यह बात कि दसवां या बीसवां हिस्सा किसके ज़िम्मे है यानी ज़मीन के मालिक पर है या पैदावार के मालिक पर है, इसमें आलिमों में बड़ा इख़्तिलाफ़[1] है, मगर हम आसानी के वास्ते यही बतलाया करते हैं कि पैदावार वाले के ज़िम्मे है, सो अगर खेत ठेके पर हो, चाहे नक़द पर, या ग़ल्ले पर, तो किसान के ज़िम्मे होगा और अगर खेत बटाई पर हो, तो ज़मींदार और किसान दोनों अपने-अपने हिस्से का दें।

---

1. मतभेद।

जिन लोगों को ज़कात देना जायज़ है,

उनका बयान

मस्अला 1—जिसके पास साढ़े बावन तोला चांदी या साढ़े सात तोला सोना, या इतनी ही क़ीमत का व्यापार का माल हो, उसको शरीअत में मालदार कहते हैं। ऐसे शख़्स को ज़कात का पैसा देना दुरूस्त नहीं और उसको ज़कात का पैसा लेना और खाना भी हलाल नहीं। इसी तरह जिसके पास इतनी ही क़ीमत का कोई माल हो, जो व्यापार का माल तो नहीं, लेकिन ज़रूरत से ज़्यादा है, वह भी मालदार है। ऐसे शख़्स को भी ज़कात का पैसा देना दुरूस्त नहीं, चाहे ख़ुद इस क़िस्म के मालदार पर ज़कात वाजिब न हो।

मस्अला 2—और जिसके पास उतना माल नहीं, बल्कि थोड़ा माल है या कुछ भी नहीं यानी एक दिन के गुज़ारे के लिए भी नहीं, उसको ग़रीब कहते हैं। ऐसे लोगों को ज़कात का पैसा देना दुरूस्त है और इन लोगों को लेना भी दुरूस्त है।

मस्अला 3—बड़ी–बड़ी देगें और बड़े–बड़े फ़र्श–फ़रूश और शामियाने, जिनकी वर्षों में एक–आध बार कहीं शादी–ब्याह में ज़रूरत पड़ती है और रोज़–रोज़ उनकी ज़रूरत नहीं पड़ती, वे ज़रूरी सामानों में दाख़िल नहीं।

मस्अला 4—रहने का घर और पहनने के कपड़े और काम–काज के लिए नौकर–चाकर और घर की गिरहस्ती, जो अक्सर काम में रहती है, ये सब ज़रूरी सामान में दाख़िल हैं। इसके होने से मालदार नहीं होगी, चाहे जितनी क़ीमत हो, इसलिए इसको ज़कात का पैसा देना दुरूस्त है। इसी तरह पढ़े हुए आदमी के पास उसकी समझ और बर्ताव की किताबें भी ज़रूरी सामान में दाख़िल हैं।

मस्अला 5—किसी के पास दस पांच मकान हैं, जिनको किराये पर चलाती है और इसकी आमदनी से गुज़र करती है या एक–आध उसके हैं, जिसकी आमदनी आती है, लेकिन बाल–बच्चे और घर में खाने–पीने वाले

इतने ज़्यादा हैं कि अच्छी तरह बसर नहीं होती और तंगी रहती है और उसके पास कोई ऐसा माल भी नहीं, जिस पर ज़कात वाजिब हो, तो ऐसे शख़्स को भी ज़कात का पैसा देना दुरुस्त है।

मस्अला 6—किसी के पास हज़ार रूपये नक़द मौजूद हैं, लेकिन वह पूरे हज़ार रूपये का या उससे भी ज़्यादा का क़र्ज़दार है, तो उसको भी ज़कात का पैसा देना दुरुस्त है और अगर क़र्ज़ हज़ार रूपये से कम हो, तो देखो क़र्ज़ देकर कितने रूपये बचते हैं। अगर इतने बचें, जितने में ज़कात वाजिब होती है, तो उसको ज़कात का पैसा देना दुरुस्त नहीं और उससे कम बचा, तो देना दुरुस्त है।

मस्अला 7—एक शख़्स अपने घर का बड़ा मालदार है, लेकिन कहीं सफ़र में ऐसा संयोग आया कि उसके पास कुछ ख़र्च नहीं रहा, सारा माल चोरी हो गया या और कोई वजह ऐसी हुई कि अब घर तक पहुंचने का भी ख़र्च नहीं रहा, ऐसे शख़्स को भी ज़कात का पैसा देना दुरुस्त है। ऐसे ही अगर हाजी के पास रास्ते का ख़र्च चुक गया और उसके घर में बहुत माल व दौलत है, उसको भी देना दुरुस्त है।

मस्अला 8—ज़कात का पैसा किसी काफ़िर को देना दुरुस्त नहीं। मुसलमान ही को दे और ज़कात और उश्र और सदक़ा-ए-फ़ित्र और कफ़्फ़ारे के सिवा और ख़ैर-ख़ैरात काफ़िर को भी देना दुरुस्त है।

मस्अला 9—ज़कात के पैसे से मस्जिद बनवाना या किसी लावारिस मुर्दे कफ़न-दफ़्न कर देना, मुर्दे की तरफ़ से उसका क़र्ज़ अदा कर देना या किसी और नेक काम में लगा देना दुरुस्त नहीं। जब तक किसी हक़दार को न दिया जाये, ज़कात अदा न होगी।

मस्अला 10—अपनी ज़कात का पैसा अपने मां-बाप, दादी-दादा, नाना-नानी, परदादा वग़ैरह, जिन लोगों से यह पैदा हुई है, उनको देना दुरुस्त नहीं है। इसी तरह अपनी औलाद और पोते-पड़पोते, नाती वग़ैरह, जो लोग उसकी औलाद में दाख़िल हैं, उनको भी देना दुरुस्त नहीं। ऐसे ही बीवी अपने मियां को और मियां अपनी बीवी को ज़कात नहीं दे सकते।

मस्अला 11—उन रिश्तेदारों के अलावा और सबको ज़कात देना दुरुस्त है, जैसे बहन-भाई, भतीजी, भांजी, चचा, फूफी, ख़ाला, मामूं, सौतेली मां, सौतेला बाप, दादा, सास, ससुर, वग़ैरह सबको देना दुरुस्त है।

मस्अला 12—ना-बालिग़ लड़के का बाप अगर मालदार हो, तो

उसको ज़कात देना दुरूस्त नहीं और अगर लड़का या लड़के बालिग़ हो गये और खुद वह मालदार नहीं, लेकिन मां मालदार है, तो उनको देना दुरूस्त है।

मस्अला 13—अगर छोटे बच्चे का बाप तो मालदार नहीं, लेकिन मां मालदार है, तो उस बच्चे को ज़कात का पैसा देना दुरूस्त है।

मस्अला 14—सैयदों को और अल्वियों को, इसी तरह जो हज़रत अब्बास रज़ि० की या हज़रत जाफ़र रज़ि० की या हज़रत अक़ील रज़ि० या हज़रत हारिस बिन अब्दुल मुत्तलिब की औलाद में हों, उनको ज़कात का पैसा देना दुरूस्त नहीं। इसी तरह जो सदक़ा शरीअत से वाजिब हो, उसका देना भी दुरूस्त नहीं, जैसे नज़्र, कफ़्फ़ारा, उश्र, सदक़ा–ए–फ़ित्र और इसके सिवा और किसी सदक़े या ख़ैरात देना दुरूस्त है।

मस्अला 15—घर के नौकर–चाकर, ख़िदमतगार, मामा, दाई, खिलाई वग़ैरह को भी ज़कात का पैसा देना दुरूस्त है, लेकिन उनकी तंख़्वाह में हिसाब न करे, बल्कि तंख़्वाह से ज़्यादा इनआम–इक्राम के तौर पर दे दें और दिल में ज़कात देने की नीयत रखे, तो दुरूस्त है।

मस्अला 16—जिस लड़के को तुमने दूध पिलाया है, उसको और जिसने तुम को बचपन में दूध पिलाया है, उसको ज़कात का पैसा देना दुरूस्त है।

मस्अला 17—एक औरत का मह्र हज़ार रूपये है, लेकिन उसका शौहर बहुत ग़रीब है, अदा नहीं कर सकता, तो ऐसी औरत को भी ज़कात का पैसा देना दुरूस्त है। और अगर उसका शौहर अमीर है, लेकिन मह्र देता नहीं या उसने अपना मह्र माफ़ कर दिया तो भी ज़कात का पैसा देना दुरूस्त है। और अगर यह उम्मीद है कि जब मांगूगी, तो वह अदा कर देगा, कुछ देर न करेगा तो ऐसी औरत को ज़कात का पैसा देना दुरूस्त नहीं।

मस्अला 18—एक शख़्स को हक़दार समझ कर ज़कात दे दी फिर मालूम हुआ कि वह तो मालदार है या सैयद है या अंधेरी रात में किसी दे दिया, फिर मालूम हुआ कि वह तो मेरी मां थी, या मेरी लड़की थी, या और कोई ऐसा रिश्तेदार है, जिसको ज़कात देना दुरूस्त नहीं, तो इन सब शक्लों में ज़कात अदा हो गयी दोबारा अदा करना वाजिब नहीं। लेकिन लेने वालों को अगर मालूम हो जाये कि यह ज़कात का पैसा है और मैं ज़कात लेने का हक़दार नहीं हूं तो न ले और फेर दे। और अगर देने के बाद मालूम हो कि जिसको दिया है, वह काफ़िर है, तो ज़कात अदा नहीं हुई, फिर अदा करे।

मस्अला 19—अगर किसी पर शुबहा हो कि मालूम नहीं मालदार

है या मुहताज है, तो जब तक छान–बीन न हो जाये, उसको ज़कात न दे, अगर बे छान–बीन किये दे दिया, तो दिल ज़्यादा किधर जाता है। अगर दिल यह गवाही देता है कि वह फ़क़ीर है तो ज़कात अदा हो गयी, और अगर दिल में यह कहे कि वह मालदार है, तो ज़कात अदा नहीं हुई, फ़िर से दे, लेकिन अगर देने के बाद मालूम हो जाये कि वह ग़रीब है तो फिर से न दे, ज़कात अदा हो गयी।

मस्अला 20—ज़कात देने में और ज़कात के अलावा और सदक़ा ख़ैरात में, सबसे ज़्यादा अपने रिश्ते–नाते के लोगों का ख़्याल रखो कि पहले इन्हीं लोगों को दो, लेकिन इनसे यह बताओ की कि यह सदक़ा और ख़ैरात की चीज़ है ताकि वे बुरा न मानें। हदीस शरीफ़ में आया है कि रिश्तेदारों को ख़ैरात देने से दोहरा सवाब मिलता है—एक तो ख़ैरात का, दूसरे अपने अज़ीज़ों के साथ सुलूक व एहसान करने का। फिर जो कुछ इनसे बचे, वह और लोगों को दो।

मस्अला 21—एक शहर की ज़कात दूसरे शहर में भेजना मकरूह है, हां अगर दूसरे शहर में उसके रिश्तेदार रहते हैं, उनको भेज दिया या यहां वालों के हिसाब से वहां के लोग ज़्यादा मुहताज हैं, या वे लोग दीन के काम में लगे हैं, उनको भेज दिया, तो मकरूह नहीं कि दीन का इल्म सीखने वालों और दीनदार आलिमों को देना बड़ा सवाब है।

सदक़ा–ए–फ़ित्र का बयान

मस्अला 1—जो मुसलमान इतना मालदार हो कि उस पर ज़कात वाजिब हो या उस पर ज़कात वाजिब नहीं, लेकिन ज़रूरी सामानों से ज़्यादा इतनी क़ीमत का माल और सामान है, जितनी क़ीमत पर ज़कात वाजिब होती है, तो उस पर ईद के दिन सदक़ा[1] देना वाजिब है, चाहे वह व्यापार का माल हो या व्यापार का न हो और चाहे साल पूरा गुज़र चुका हो या न गुज़रा हो और इस सदक़ा को शरीअत में सदक़ा–ए–फ़ित्र कहते हैं।

मस्अला 2—किसी के पास रहने का बड़ा घर है कि अगर बेचा जाये तो हज़ार–पांच सौ का बिके और पहनने के बड़े–बड़े क़ीमती–क़ीमती

1. आम मुसलमानों में सदक़ा–ए–फ़ित्र को 'फ़ितरा' भी कहते हैं।

कपड़े हैं, मगर इनमें गोटा–लचका नहीं और ख़िदमतगार हैं, घर में हज़ार–पांच सौ का ज़रूरी सामान भी है, मगर ज़ेवर नहीं और वह सब काम में आया करता है, या कुछ सामान ज़रूरत से ज़्यादा भी है और कुछ गोटा लचका और ज़ेवर भी है, लेकिन वह इतना नहीं कि जितने पर ज़कात वाजिब होती है, तो ऐसे पर सदक़ा–ए–फ़ित्र वाजिब नहीं है।

मस्अला 3—किसी के दो घर हैं, एक में खुद रहती है और एक ख़ाली पड़ा है, या किराये पर दे दिया है, तो दूसरा मकान ज़रूरत से ज़्यादा है, मगर उसकी क़ीमत इतनी हो कि जितनी पर ज़कात वाजिब होती है, तो उस पर सदक़ा–ए–फ़ित्र वाजिब है और ऐसे को ज़कात का पैसा देना भी जायज़ नहीं, हां, अगर इसी पर उसका गुज़ारा हो, तो यह मकान भी ज़रूरी सामान में शामिल हो जायेगा और उस पर सदक़ा–ए–फ़ित्र वाजिब न होगा और ज़कात का पैसा लेना और देना भी दुरूस्त होगा। मतलब यह है कि जिसको ज़कात और सदक़े का पैसा लेना दुरूस्त है, उस पर सदक़ा–ए–फ़ित्र वाजिब नहीं और जिसको सदक़ा और ज़कात का लेना दुरूस्त नहीं, उस पर सदक़ा–फ़ित्र वाजिब है।

मस्अला 4—किसी के पास ज़रूरी सामान से ज़्यादा माल और सामान है, लेकिन वह क़र्ज़दार भी है, तो क़र्ज़ निकाल करके देखो क्या बचता है। अगर उतनी क़ीमत का सामान बचा रहे, जितने में ज़कात वाजिब होती है, तो सदक़ा–ए–फ़ित्र वाजिब है और उससे कम बचे, तो वाजिब नहीं।

मस्अला 5—ईद के दिन जिस वक़्त फ़ज्र का वक़्त आता है, उसी वक़्त यह सदक़ा वाजिब होता है, तो अगर कोई फ़ज्र का वक़्त आने से पहले ही मर गया, तो उस पर सदक़ा–ए–फ़ित्र वाजिब नहीं उसके माल में से न दिया जायेगा।

मस्अला 6—बेहतर यह है कि जिस वक़्त लोग नमाज़ क लिए ईदगाह में जाते हैं, उससे पहले ही सदक़ा दे दे। अगर पहले न दिया, तो ख़ैर बाद ही सही।

मस्अला 7—किसी ने सदक़ा–ए–फ़ित्र के दिन से पहले ही रमज़ान में दे दिया, तब भी अदा हो गया। अब दोबारा देना वाजिब नहीं।

मस्अला 8—अगर किसी ने ईद के दिन सदक़ा–ए–फ़ित्र नहीं दिया, तो माफ़ नहीं हुआ। अब किसी दिन दे देना चाहिए।

मस्अला 9—सदक़ा–ए–फ़ित्र सिर्फ़ अपनी तरफ़ से वाजिब है।

किसी और[1] की तरफ़ से करना वाजिब नहीं, न बच्चों की तरफ़ से, न मां–बाप की तरफ़ से, न शौहर की तरफ़ से, न किसी और की तरफ़ से।

मस्अला 10—अगर छोटे बच्चे के पास इतना माल हो कि जितने के होने से सद्क़ा वाजिब होता है, जैसे उसका कोई रिश्तेदार मर गया, उसके माल में से उसके बच्चे को हिस्सा मिला या किसी और तरह से बच्चे को माल मिल गया, तो उस बच्चे के माल में से सद्क़ा–फ़ित्र अदा करे लेकिन अगर वह बच्चा ईद के दिन सुबह होने के बाद पैदा हुआ हो तो उसकी तरफ़ से सद्क़ा–ए–फ़ित्र वाजिब नहीं है।

मस्अला 11—जिस ने किसी रमज़ान के रोज़े नहीं रखे, उस पर भी यह सद्क़ा वाजिब है और जिसने रोज़े रखे, उस पर भी वाजिब है, दोनों में कुछ फ़र्क़ नहीं।

मस्अला 12—सद्क़ा–ए–फ़ित्र में अगर गेहूं का आटा या गेहूं के सत्तू दे तो अस्सी रूपये के सेर यानी अंग्रेज़ी तौल से आधी छटांक ऊपर पौने दो सेर, बल्कि एहतियात तौर पर पूरे दो सेर या कुछ ज़्यादा दे देना चाहिए, क्योंकि ज़्यादा हो जाने में कुछ हरज नहीं, बल्कि बेहतर है और अगर जौ या जौ का आटा देते तो उसका दो गुना देना चाहिए।

मस्अला 13—अगर गेहूं और जौ के सिवा कोई और अनाज दिया, जैसे चना, ज्वार, तो इतना दे कि उसकी क़ीमत उतने गेहूं या उतने जौ के बराबर हो जाये, जितने ऊपर बयान हुए।

मस्अला 14—अगर गेहूं और जौ नहीं दिये, बल्कि उतने गेहूं और जौ की क़ीमत दे दी, तो यह सबसे बेहतर है।

मस्अला 15—अगर एक आदमी का सद्क़ा–ए–फ़ित्र एक ही फ़क़ीर को दे दे या थोड़ा–थोड़ा करके कई फ़क़ीरों को दे दे, दोनों बातें जायज़ हैं।

मस्अला 16—अगर कई आदमियों का सद्क़ा–ए–फ़ित्र एक ही फ़क़ीर को दे दिया यह भी ठीक है।

मस्अला 17—सद्क़ा–ए–फ़ित्र के हक़दार भी वही लोग हैं, जो

---

1. यह हुक्म औरतों का है और मर्द पर नाबालिग़ बच्चों की तरफ़ से देना भी वाजिब है, लेकिन अगर औलाद मालदार हो, तो बाप के ज़िम्मे वाजिब नहीं, बल्कि उन्हीं के माल में से दे और बालिग़ औलाद की तरफ़ से भी देना वाजिब नहीं, हां, अगर कोई लड़का पागल हो, तो उसकी तरफ़ से भी दे।

ज़कात के हक़दार हैं।

क़ुर्बानी का बयान

क़ुर्बानी करने का बड़ा सवाब है। अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया है कि क़ुर्बानी के दिनों में क़ुर्बानी से ज़्यादा कोई चीज़ अल्लाह तआला को पसंद नहीं। इन दिनों में यह नेक काम सब नेकियों से बढ़ कर है और क़ुर्बानी करते यानी ज़िब्ह करते वक़्त ख़ून की जो बूंद ज़मीन पर गिरती है, तो ज़मीन तक पहुंचने से पहले ही अल्लाह तआला के पास मक़्बूल हो जाता है, तो ख़ूब ख़ुशी से और ख़ूब दिल खोल कर क़ुर्बानी किया करो और हज़रत मुहम्मद सल्ल० ने फ़रमाया है कि क़ुर्बानी के जानवर के बदन पर जितने बाल होते हैं, हर-हर बाल के बदले में एक-एक नेकी लिखी जाती है। क्या ख़ूब ! भला सोचो तो कि इससे बढ़कर और क्या सवाब होगा कि क़ुर्बानी करने से हज़ारों-लाखों नेकियां मिल जाती हैं। भेड़ के बदन पर जितने बाल होते हैं, अगर कोई सुबह से शाम तक गिने, तब भी गिन न पाये, तो सोचो तो कितनी नेकियां हुई। बड़ी दीनदारी की बात तो यह है कि अगर किसी पर क़ुर्बानी करना वाजिब भी न हो, तो भी इतने बे-हिसाब सवाब के लालच में क़ुर्बानी कर देना चाहिए कि जब ये दिन चले गये, तो वह दौलत कह मयस्सर होगी और इतनी आसानी से इतनी नेकियां कैसे कमा सकेगी और अगर अल्लाह ने मालदार और अमीर बनाया हो, तो मुनासिब है कि जहां अपनी तरफ़ से क़ुर्बानी करे, तो रिश्तेदार मर गये हैं, जैसे मां-बाप वग़ैरह उनकी तरफ़ से भी क़ुर्बानी कर दे कि उनकी रूह को इतना बड़ा सवाब पहुंच जाये। हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तरफ़ से, आपकी बीवियों की तरफ़ से, अपने पीर वग़ैरह की तरफ़ से कर दे, नहीं तो कम से कम इतना ज़रूर करे कि अपनी तरफ़ से क़ुर्बानी करे, क्योंकि मालदार पर तो वाजिब है। जिस के पास माल व दौलत सब कुछ मौजूद है और क़ुर्बानी करना उस पर वाजिब है, फिर भी उसने क़ुर्बानी न की, उससे बढ़कर बद-क़िस्मत और महरूम और कौन होगा और गुनाह रहा, सो अलग। जब क़ुर्बानी का जानवर क़िब्ला रूख़ लिटा दे तो पहले यह दुआ करे।

إِنِّي وَجَّهْتُ وَجْهِيَ لِلَّذِي فَطَرَ السَّمٰوٰتِ وَالْأَرْضَ حَنِيفًا وَّمَا أَنَا مِنَ الْمُشْرِكِينَ ، إِنَّ

صَلٰوتِیْ وَنُسُکِیْ وَمَحْیَایَ وَمَمَاتِیْ لِلّٰہِ رَبِّ الْعٰلَمِیْنَ لَاشَرِیْکَ لَہٗ وَبِذٰلِکَ اُمِرْتُ اَنَا اَوَّلُ الْمُسْلِمِیْنَ ۔ اَللّٰھُمَّ مِنْکَ وَلَکَ

इन्नी वज्जहतु वज्हिय लिल्लज़ी फ़ तरस्समावाति वल्अर्ज़ि हनीफंव्व मा अना मिनल् मुश्रिकीन॰ इन्न सलाती व नुसुकी व मह्याय व ममाती लिल्लाहि रब्बिल् अलामीन ला शरीक लहू व बिज़ालिक उमिर्तु व अना अव्वलुल मुस्लिमीन अल्लाहुम्म मिन्क व ल क

फिर बिस्मिल्लाहि अल्लाहु अक्बर (بِسْمِ اللّٰہِ اَللّٰہُ اَکْبَرُ) कह कर ज़िब्ह करे और ज़िब्ह करने के बाद यह दुआ पढ़े—

اَللّٰھُمَّ تَقَبَّلْہُ مِنِّیْ کَمَا تَقَبَّلْتَ مِنْ حَبِیْبِکَ مُحَمَّدٍ وَّخَلِیْلِکَ اِبْرَاھِیْمَ عَلَیْھِمَا الصَّلٰوۃُ وَالسَّلَامُ

अल्लाहुम्म तक़ब्बल्हु मिन्नी कमा तक़ब्बलत मिन हबीबिक मुहम्मदिंव्व ख़लीलिक इब्राहीम अलैहिमस्सलातु वस्सलामु॰

मस्अला 1—जिस पर सद्क़ा–ए–फ़ित्र वाजिब है, उस पर बकरीद के दिनों में क़ुर्बानी करना भी वाजिब है और अगर इतना माल न हो, जितने के होने से सद्क़ा–ए–फ़ित्र वाजिब हो जाता है, तो उस पर क़ुर्बानी वाजिब नहीं, लेकिन फिर भी अगर कर दे, तो बहुत सवाब पाये।

मस्अला 2—मुसाफ़िर पर क़ुर्बानी करना वाजिब नहीं।

मस्अला 3—बक़रीद की दसवीं तारीख़ से लेकर बारहवीं तारीख़ की शाम तक क़ुर्बानी करने का वक़्त है, चाहे जिस दिन क़ुर्बानी करे लेकिन क़ुर्बानी का सबसे बेहतरीन दिन बक़रीद का दिन है, फिर ग्यारहवीं, फिर बारहवीं तारीख़।

मस्अला 4—बक़रीद की नमाज़ होने से पहले क़ुर्बानी करना दुरुस्त नहीं है। जब लोग नमाज़ पढ़ चुके, तब करें। हां अगर कोई किसी देहात में और गांव में रहती हो, तो वहां फ़ज्र की नमाज़ के बाद ही क़ुर्बानी कर देना दुरुस्त है। शहर के और क़स्बे के रहने वाले नमाज़ के बाद करें।

मस्अला 5—अगर कोई शहर की रहने वाली अपनी क़ुर्बानी का जानवर किसी गांव में भेज दे, तो उसकी क़ुर्बानी नमाज़ से पहले भी दुरुस्त है, चाहे वह शहर ही में मौजूद रहे, लेकिन जब क़ुर्बानी देहात में भेज दी, तो नमाज़ से पहले क़ुर्बानी करना दुरुस्त हो गया। ज़िब्ह होने के बाद उसको मंगवा ले और गोश्त खाये।

मस्अला 6—12 वीं तारीख़ तक सूरज डूबने से पहले–पहले क़ुर्बानी

करना दुरुस्त है। जब सूरज डूब गया तो अब क़ुर्बानी करना ठीक नहीं।

मस्अला 7—10 से तारीख़ से 12 वीं तारीख़ तक, जब जो चाहे कुर्बानी करे, चाहे दिन में, चाहे रात में, लेकिन रात को ज़िब्ह करना बेहतर नहीं कि शायद कोई रग न कटे और कुर्बानी ठीक न हो।

मस्अला 8—10 वीं 11 वीं तारीख़ सफ़र में थी, फिर 12 वीं तारीख़ को सूरज डूबने से पहले घर पहुंच गयी, य पंद्रह दिन कहीं ठहरने की नीयत कर ली, तो अब कुर्बानी करना वाजिब हो गया। इसी तरह अगर पहले माल न था, इसलिए कुर्बानी वाजिब न थी, फिर 12 वीं तारीख़ को सूरज डूबने से पहले माल मिल गया, तो कुर्बानी करना वाजिब है।

मस्अला 9—अपनी कुर्बानी को अपने हाथ से ज़िब्ह करना बेहतर है। अगर खुद ज़िब्ह करना न जानती हो, तो किसी और से ज़िब्ह करा लो और ज़िब्ह के वक़्त वहां जानवर के सामने खड़ी हो जाना बेहतर है। और अगर ऐसी जगह है कि पर्दे की वजह से सामने नहीं खड़ी हो सकती, तो भी ख़ैर कुछ हरज नहीं।

मस्अला 10—कुर्बानी करते वक़्त जुबान से नीयत पढ़ना और दुआ पढ़ना ज़रूरी नहीं है। अगर दिल में ख़्याल कर लिया कि मैं कुर्बानी करती हूं और जुबान से कुछ नहीं पढ़ा, सिर्फ़ 'बिस्मिल्लाहि अल्लाहु अक्बर' कह कर ज़िब्ह कर दिया, तो भी कुर्बानी ठीक हो गयी, लेकिन अगर याद हो तो दुआ पढ़ लेना बेहतर है, जो ऊपर बयान हुई।

मस्अला 11—कुर्बानी सिर्फ़ अपनी तरफ़ से करना वाजिब है। औलाद की तरफ़ से वाजिब नहीं, बल्कि अगर ना–बालिग़ औलाद मालदार भी हो, तब भी उसकी तरफ़ से करना वाजिब नहीं। न अपने माल में से न उसके माल में से। अगर किसी ने उसकी तरफ़ से कुर्बानी कर दी, तो नफ़्ल हो गयी, लेकिन अपने माल में से करे। उसके माल में से हरगिज़ न करे।

मस्अला 12—बकरा–बकरी, भेड़–दुंबा, गाय–बैल, भैंस–भैंसा, ऊंट–ऊंटनी, इतने जानवरों की कुर्बानी ठीक है, और किसी जानवर की कुर्बानी ठीक नहीं।

मस्अला 13—गाय, भैंस, ऊंट में अगर सात आदमी शरीक होकर कुर्बानी करें तो भी ठीक है, लेकिन शर्त यह है कि किसी को हिस्सा सातवें हिस्से से कम हो और सब की नीयत कुर्बानी करने की या अक़ीके[1] की हो,

1. मूंडन।

सिर्फ़ गोश्त खाने की नीयत न हो। अगर किसी का हिस्सा सातवें हिस्से से कम होगा तो किसी की क़ुर्बानी दुरूस्त न होगी, न उसकी भी, जिसका हिस्सा सातवें हिस्से से कम है।

मस्अला 14—अगर बड़े जानवर में सात आदमियों से कम लोग शरीक हुए, जैसे पांच आदमी शरीक हुए या छः आदमी हुए और किसी का हिस्सा सातवें हिस्से से कम नहीं, तब भी सब की क़ुर्बानी ठीक है और अगर आठ आदमी शरीक हो गये, तो किसी की क़ुर्बानी सही नहीं हुई।

मस्अला 15—क़ुर्बानी के वक़्त, किसी के जानवर (गाय) ख़रीदते वक़्त यह नीयत की कि अगर कोई और मिल गया, तो उस को भी इस गाय में शरीक कर लेंगे और साझे में क़ुर्बानी कर लेंगे, इसके बाद कुछ और लोग इस गाय में शरीक हो गये, तो यह ठीक है। और अगर ख़रीदते वक़्त उसकी नीयत शरीक करने की न थी, बल्कि पूरी गाय अपनी तरफ़ से क़ुर्बानी करने का इरादा था, तो अब उसमें किसी और का शरीक होना बेहतर तो नहीं है, लेकिन अगर किसी को शरीक कर लिया तो देखना चाहिए, जिसने शरीक किया है, वह अमीर है कि उस पर क़ुर्बानी वाजिब है, या ग़रीब है, जिस पर क़ुर्बानी वाजिब नहीं। अगर अमीर है तो ठीक है और अगर ग़रीब है, तो ठीक नहीं।

मस्अला 16—अगर क़ुर्बानी का जानवर कहीं गुम हो गया, इस लिए दूसरा ख़रीदा, फिय यह पहला भी मिल गया, अगर अमीर आदमी को ऐसा संयोग हो तो एक ही जानवर की क़ुर्बानी उस पर वाजिब है और अगर ग़रीब आदमी को ऐसा संयोग हुआ, तो दोनों जानवर की क़ुर्बानी उस पर वाजिब हो गयी।

मस्अला 17—सात आदमी गाय में शरीक हुए, तो गोश्त बांटते वक़्त अटकल से न बांटे, बल्कि ख़ूब ठीक–ठीक, तौल--तौल कर बांटें। नहीं तो अगर कोई हिस्सा कम या ज़्यादा रहेगा, तो सूद हो जायेगा और गुनाह होगा। हां, अगर गोश्त के साथ कल्ला, पाए और खाल को भी शरीक कर लिया, जिस तरफ़ कल्ला, पाए, या खाल हो, उस तरफ़ अगर गोश्त कम हो, तो ठीक है, चाहे जितना कम हो। जिस तरफ़ गोश्त ज़्यादा था, उस तरफ़ कल्ला पाए, शरीक किये तो भी सूद हो गया और गुनाह होगा।

मस्अला 18—साल भर से कम की बकरी ठीक नहीं। जब पूरे साल की हो, तब क़ुर्बानी ठीक है और ऊंट पांच वर्ष से कम का ठीक नहीं है। और दुंबा या भेड़ अगर इतना मोटा–ताज़ा हो कि साल भर का मालूम होता हो और साल भर वाले भेड़–दुम्बों में अगर छोड़ दो, तो कुछ फ़र्क़ न

मालूम होता हो, तो ऐसे वक़्त छः महीने के दुम्बे और भेड़ की भी क़ुर्बानी ठीक है। और अगर ऐसा न हो, तो साल भर का होना चाहिए।

मस्अला 19—जो जानवर अंधा हो, या काना हो या एक आंख की तिहाई रोशनी या इससे ज़्यादा जाती रही हो या एक कान तिहाई या तिहाई से ज़्यादा कट गया या तिहाई दुम या तिहाई से ज़्यादा कट गयी, तो उस जानवर की क़ुर्बानी ठीक नहीं।

मस्अला 20—जो जानवर इतना लंगड़ा है कि सिर्फ़ तीन पांव से चलता है, चौथा पांव रखा ही नहीं जाता या चौथा पांव रखता तो है, लेकिन उससे चल नहीं सकता, उसकी भी क़ुर्बानी ठीक नहीं और अगर चलते वक़्त वह पांव ज़मीन पर टेक कर चलता है और चलने में उसका सहारा लगता है, लेकिन लंगड़ा कर चलता है, तो उसकी क़ुर्बानी ठीक है।

मस्अला 21—इतना दुबला, बिल्कुल मरियल जानवर कि जिस की हड्डियों में बिल्कुल गूदा न रहा हो, उसकी क़ुर्बानी ठीक नहीं है और अगर इतना दुबला न हो तो दुबले होने से कुछ हरज नहीं, उसकी क़ुर्बानी ठीक है, लेकिन मोटे–ताज़े जानवर की क़ुर्बानी ज़्यादा बेहतर है।

मस्अला 22—जिस जानवर के बिल्कुल दांत न हों, उसकी क़ुर्बानी ठीक नहीं और अगर कुछ दांत गिर गये, लेकिन जितने गिरे हैं, उनसे ज़्यादा बाक़ी हैं, तो उसकी क़ुर्बानी ठीक है।

मस्अला 23—जिस जानवर के जन्म ही से कान नहीं हैं, उसकी क़ुर्बानी ठीक नहीं है और अगर कान तो हैं, लेकिन बिल्कुल ज़रा–ज़रा से, छोटे–छोटे हैं, तो उसकी क़ुर्बानी ठीक है।

मस्अला 24—जिस जानवर के पैदाइश ही से सींग नहीं हैं, या सींग तो थे लेकिन टूट गये, उसकी क़ुर्बानी ठीक है। हां, अगर बिल्कुल जड़ से टूट गये हों, तो क़ुर्बानी ठीक नहीं है।

मस्अला 25—ख़स्सी यानी बधिया बकरे और मेंढे की क़ुर्बानी ठीक है। जिस जानवर के ख़ारिश (खुजली) हो, उसकी भी क़ुर्बानी ठीक है। हां, अगर ख़ारिश की वजह से बिल्कुल दुबला हो गया हो, तो ठीक नहीं।

मस्अला 26—अगर जानवर क़ुर्बानी के लिए ख़रीद लिया तब कोई ऐसा ऐब पैदा हो गया, जिससे क़ुर्बानी ठीक नहीं, तो उसके बदले

दूसरा दूसरा जानवर ख़रीद करके क़ुर्बानी करे, हां अगर ग़रीब आदमी हो, जिस पर क़ुर्बानी करना वाजिब नहीं, तो उसके वास्ते ठीक है कि वह ही जानवर क़ुर्बानी कर दे।

मस्अला 27—क़ुर्बानी का गोश्त आप खाये और अपने रिश्ते–नाते के लोगों को दे दे और फ़क़ीरों–मुहताजों को ख़ैरात करे। ख़ैरात से तिहाई में कमी न करे। लेकिन अगर किसी ने थोड़ा ही गोश्त ख़ैरात किया, तो भी कोई गुनाह नहीं है।

मस्अला 28—क़ुर्बानी की खाल या तो यों ही ख़ैरात कर दे और या बेचकर उसकी क़ीमत ख़ैरात कर दे, वह क़ीमत ऐसे लोगों को दे, जिनको ज़कात का पैसा देना ठीक है और क़ीमत में जो पैसे मिले हैं, ठीक वही पैसे ख़ैरात करने चाहिए। अगर वे पैसे किसी काम में ख़र्च कर डाले और उतने ही पैसे अपने पास से दे दे, तो बुरी बात है, मगर अदा हो जाएंगे।

मस्अला 29—अगर खाल को अपने काम में लाये, जैसे उसकी छलनी बनवा ली या मशक या डोल या जानमाज़[1] बनवा ली, यह भी ठीक है।

मस्अला 30—कुछ गोश्त या चर्बी या छीछड़े क़साई को मज़दूरी में न दे, बल्कि मज़दूरी अपने पास से अलग दे।

मस्अला 31—क़ुर्बानी की रस्सी–झूल वग़ैरह सब चीज़ों ख़ैरात कर दे।

मस्अला 32—किसी पर क़ुर्बानी वाजिब नहीं थी, लेकिन उसने क़ुर्बानी की नीयत से जानवर ख़रीद लिए, तो अब उस जानवर की क़ुर्बानी वाजिब हो गयी।

मस्अला 33—किसी पर क़ुर्बानी वाजिब थी, लेकिन क़ुर्बानी के तीनों दिन गुज़र गये और उसने क़ुर्बानी नहीं की, तो एक बकरी या भेड़ की क़ीमत ख़ैरात कर दे और अगर बकरी ख़रीद ली थी, तो ठीक वही बकरी ख़ैरात कर दे।

मस्अला 34—जिसने क़ुर्बानी करने की मन्नत मानी, फिर वह काम पूरा हो गया, जिसके वास्ते मन्नत मानी थी, तो अब क़ुर्बानी करना वाजिब है, और चाहे मालदार हो या न हो और मन्नत की क़ुर्बानी का सब गोश्त

---

1. बिछा कर नमाज़ पढ़ने का कपड़ा या कोई और चीज़।

फ़क़ीरों को ख़ैरात कर दे, न आप खाये, न अमीरों को दे। जितना आप खाये हो या अमीरों को दिया हो, उतना फिर ख़ैरात करना पड़ेगा।

मस्अला 35—अगर अपनी खुशी से मुर्दे को सवाब पहुंचाने के लिए क़ुर्बानी करे, तो उसके गोश्त में से ख़ुद खाना-खिलाना या बांटना सब ठीक है, जिस तरह अपनी क़ुर्बानी का हुक्म है।

मस्अला 36—लेकिन अगर कोई मुर्दा वसीयत कर गया हो कि मेरे तर्के (छोड़े हुए माल) में से मेरी तरफ़ से क़ुर्बानी की जाये और उसकी वसीयत पर उसी के माल से क़ुर्बानी की गयी, तो उस क़ुर्बानी के तमाम गोश्त वग़ैरह का ख़ैरात कर देना वाजिब है।

मस्अला 37—अगर कोई शख़्स यहां मौजूद नहीं और दूसरे शख़्स ने उसकी तरफ़ से बग़ैर उसके हुक्म से क़ुर्बानी कर दी, तो यह क़ुर्बानी सही नहीं हुई और अगर किसी जानवर में ग़ायब[1] का हिस्सा बग़ैर उसके हुक्म के तज्वीज़ कर लिया, तो और हिस्सेदारों की क़ुर्बानी भी सही न होगी।

मस्अला 38—अगर कोई जानवर किसी को हिस्से पर दिया है, तो यह जानवर उस पालने वाले की मिल्कियत नहीं हुआ, बल्कि असल मलकिन का ही है। इसलिए अगर किसी ने उस पालने वाली से ख़रीदकर क़ुर्बानी कर दी, तो क़ुर्बानी नहीं हुई। अगर ऐसा जानवर ख़रीदना हो, तो असल मालिक से, जिसने हिस्से पर दिया है, ख़रीद लें।

मस्अला 39—अगर एक जानवर में कई आदमी शरीक हैं और वे सब गोश्त को आपस में नहीं बांट लेते, बल्कि इकट्ठे ही फ़क़ीरों और दोस्तों को बांटना या पकाकर खाना-खिलाना चाहें, तो भी जायज़ है। अगर बांटेगी तो उसमें बराबरी ज़रूरी है।

मस्अला 40—क़ुर्बानी की खाल की क़ीमत किसी को उजरत (बदले या मज़दूरी) में देना जायज़ नहीं, क्योंकि उसका ख़ैरात करना ज़रूरी है।

मस्अला 41—क़ुर्बानी का गोश्त काफ़िरों को भी देना जायज़ है, शर्त यह है कि उजरत में न दिया जाये।

मस्अला 42—अगर कोई जानवर गाभिन हो, तो उसकी क़ुर्बानी जायज़ है, फिर अगर बच्चा भी ज़िंदा निकले, तो उसको भी ज़िब्ह कर दें।

---

1. जो हाज़िर न हो, अन्य पुरुष।

अक़ीक़े[1] का बयान

मस्अला 1—जिसके कोई लड़का या लड़की पैदा हो, तो बेहतर है कि सातवें दिन उसका नाम रख दे और अक़ीक़ा कर दे। अक़ीक़ा कर देने से बच्चे की सब अला-बला दूर हो जाती है और आफ़तों से हिफ़ाज़त रहती है।

मस्अला 2—अक़ीक़े का तरीक़ा यह है कि अगर लड़का हो तो दो बकरी या दो भेड़ और लड़की हो तो एक बकरी या भेड ज़िब्ह करे या क़ुर्बानी की गाय में लड़के के वास्ते दो हिस्से और लड़की के वास्ते एक हिस्सा ले ले और सिर के बाल मुंडा दे और बाल के वज़न के बराबर चांदी या सोना, तोल कर ख़ैरात कर दे और लड़के के सिर में अगर दिल चाहे, ज़ाफ़रान लगा दे।

मस्अला 3—अगर सातवें दिन अक़ीक़ा न करे, तो जब करे सातवें दिन होने का ख़्याल करना बेहतर है और इसका तरीक़ा यह है कि जिस दिन बच्चा पैदा हो, उसके एक दिन पहले अक़ीक़ा कर दे यानी अगर जुमा को पैदा हुआ हो, तो जुमेरात को कर दे और अगर जुमेरात को पैदा हो तो बुध को करे। चाहे जब करे, हिसाब से सातवां दिन पड़ेगा।

मस्अला 4—यह क़ायदा है कि जिस वक़्त बच्चे के सिर पर उस्तरा रखा जाये और नाई मूंडना शुरू कर दे, तुरंत उसी वक़्त बकरी ज़िब्ह हो, यह बिल्कुल बेकार की राय है। शरीअत से सब जायज़ है, चाहे सिर मूंडने के बाद ज़िब्ह करे या ज़िब्ह करके तब सिर मुंडे। बे-वजह ऐसी बातें गढ़ लेना बुरी बात है।

मस्अला 5—जिस जानवर की क़ुर्बानी जायज़ नहीं, उसकी अक़ीक़ा भी ठीक नहीं और जिसकी क़ुर्बानी ठीक है, उसका अक़ीक़ा भी ठीक है।

मस्अला 6—अक़ीक़े का गोश्त चाहे कच्चा तक़्सीम करे, चाहे पका कर के बांटे, चाहे दावत करके खिलाये, सब ठीक है।

मस्अला 7—अक़ीक़े का गोश्त, बाप, दादा-दादी, नाना-नानी

---

1. मूंडन

वग़ैरह सब को खाना ठीक है

मसअला 8—अगर किसी को ज़्यादा ताक़त नहीं, इसलिए उसने लड़के की तरफ़ से एक ही बकरी का अक़ीक़ा किया, तो इसका भी कुछ हरज नहीं है, जायज़ है। और अगर बिल्कुल अक़ीक़ा ही न करे, तो भी कोई हरज नहीं।

हज का बयान

जिस शख़्स के पास ज़रूरत से ज़्यादा इतना ख़र्च हो कि सवारी पर औसत दर्जे के खान-पान के साथ चला जाये और हज करके चला आये, उसके ज़िम्मे हज फ़र्ज़ हो जाता है और हज की बड़ी बुज़ुर्गी आयी है। चुनांचे अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया है कि जो हज गुनाहों और ख़राबियों से पाक हो, उसका बदला, जन्नत के अलावा और कुछ नहीं। इसी तरह उमरा[1] पर भी बड़े सवाब का वायदा फ़रमाया गया है, चुनांचे हुज़ूर सल्ल० ने फ़रमाया है कि हज और उमरा दोनों गुनाहों को इस तरह दूर करते हैं, जैसे भट्ठी लोहे के मैल को दूर कर देती है और जिसके ज़िम्मे हज फ़र्ज़ हो और वह न करे, उसके लिए बड़ी धमकी आयी है। चुनांचे अल्लाह के रसूल सल्ल० ने फ़रमाया है कि जिस शख़्स के पास खाने-पीने और सवारी का इतना सामान हो, जिससे वह अल्लाह के घर (काबा शरीफ़) तक जा सके और फिर वह हज न करे तो वह यहूदी होकर मरे या ईसाई होकर मरे और ख़ुदा को इसकी परवाह नहीं और यह भी फ़रमाया है कि हज का छोड़ देना इस्लाम का तरीक़ा नहीं है।

मसअला 1—उम्र भर में एक बार हज करना फ़र्ज़ है और कई बार हज किया तो एक फ़र्ज़ हुआ और सब नफ़्ल हैं और उनका भी बहुत बड़ा सवाब है :

मसअला 2—अगर जवानी से पहले लड़कपन में कोई हज किया है, उसका कुछ एतबार नहीं है और अगर मालदार है, तो जवान होने के बाद

---

1. हज के दिनों के अलावा दूसरे दिन काबे के तवाफ़ (परिक्रमा) को उमरा कहते हैं।

फिर हज करना फ़र्ज़ है और जो हज लड़कपन में किया है, वह नफ़्ल है।

मस्‌अला 3—अंधी पर हज फ़र्ज़ नहीं, चाहे जितनी मालदार हो।

मस्‌अला 4—जब किसी पर हज फ़र्ज़ हो गया, तो तुरंत उसी साल हज करना वाजिब है, बिला मजबूरी के देर करना और यह सोचना कि अभी उम्र नहीं है, फिर किसी साल हज कर लेंगे, ठीक है, फिर दो–चार वर्ष के बाद भी हज कर लिया, तो अदा हो गया, लेकिन गुनाहगार हुई।

मस्‌अला 5—हज करने के लिए रास्ते में अपने शौहर का या किसी महरम का साथ होना भी ज़रूरी है। बग़ैर इसके हज के लिए जाना ठीक नहीं है। हां, अगर मक्के से इतनी दूर पर रहती हो कि उसके घर से मक्का तीन मंज़िल न हो, तो बे शौहर और महरम के साथ हुए भी जाना ठीक है।

मस्‌अला 6—अगर वह महरम ना–बालिग़ हो या ऐसा बद–दीन हो कि मां–बहन वग़ैरह से भी उस पर इत्मीनान नहीं, तो उसके साथ जाना ठीक नहीं।

मस्‌अला 7—जब कोई महरम, इत्मीनान के क़ाबिल, साथ जाने के लिए मिल जाये, तो अब हज हो जाने से शौहर का रोकना ठीक नहीं। अगर शौहर रोके भी, तो इसकी बात न माने और चली जाये।

मस्‌अला 8—जो लड़की कभी जवान नहीं हुई, लेकिन जवानी के क़रीब हो चुकी है, उसको भी बग़ैर शरई महरम के जाना ठीक नहीं और ग़ैर महरम के साथ जाना भी ठीक नहीं।

मस्‌अला 9—जो महरम उसको हज कराने के लिए ले जाये, उसका ख़र्च भी उसी पर वाजिब है। जो कुछ ख़र्च हो दे।

मस्‌अला 10—अगर सारी उम्र ऐसा महरम न मिला, जिसके साथ सफ़र करे, तो हज न करने का गुनाह न होगा, लेकिन मरते वक़्त यह वसीयत कर जाना वाजिब है कि मेरी तरफ़ से हज करा देना। मर जाने के बाद उसके वारिस उसी के माल में से किसी आदमी को ख़र्च देकर भेज दें कि वह जाकर मुर्दे की तरफ़ से हज कर आये। उसके ज़िम्मे का हज उतर जायेगा और हज को, जो दूसरे की तरफ़ से किया जाता है, हज्जे बदल कहते हैं।

मस्‌अला 11—अगर किसी के ज़िम्मे हज फ़र्ज़ था और उसने सुस्ती से देर कर दी, फिर वह अंधी हो गयी या ऐसी बीमारी हो गयी कि वह सफ़र

के क़ाबिल नहीं रही, तो उसको भी हज्जे बदल की वसीयत कर जाना चाहिए।

मस्अला 12—अगर वह इतना माल छोड़कर मरी हो कि क़र्ज़ वग़ैरह देकर तिहाई माल में से हज्जे बदल करा सकते हैं, तब तो वारिस पर उसकी वसीयत का पूरा करना और हज्जे बदल कराना वाजिब है और अगर माल थोड़ा है कि तिहाई में से हज्जे बदल नहीं हो सकता, ता उसका वली हज न कराये। हां, अगर ऐसा करे कि तिहाई माल मुर्दे का दे और जितना ज़्यादा लगे, वह खुद दे, वह हज्जे बदल करा सकता है। मतलब यह है कि मुर्दे के तिहाई माल से ज़्यादा न दे। हां, अगर उसके सब वारिस खुशी से तैयार हों, कि हम अपना हिस्सा न लेंगे, तुम हज्जे बदल करा दो, तो तिहाई माल से ज़्यादा लगा देना भी ठीक है, लेकिन ना–बालिग़ वारिसों की इजाज़त का शरीअत में कोई एतबार नहीं है, इसलिए उनका हिस्सा हरगिज़ न ले।

मस्अला 13—अगर वह हज्जे बदल की वसीयत करके मर गयी, लेकिन माल कम था इसलिए तिहाई माल में हज्जे बदल न होता और तिहाई से ज़्यादा वारिसों ने खुशी से मंज़ूर न किया, इसलिए हज न कराया गया, तो उस बेचारी पर कोई गुनाह नहीं।

मस्अला 14—सब वसीयतों का यही हुक्म है, तो अगर किसी के ज़िम्मे बहुत रोज़े या नमाज़ें बाक़ी थीं या ज़कात बाक़ी थी और वसीयत करके मर गयी, तो सिर्फ़ माल से यह सब कुछ किया जाये, तिहाई से ज़्यादा बग़ैर वारिसों की दिली रज़ामंदी के लगाना जायज़ नहीं और इसका बयान पहले भी आ चुका है।

मस्अला 15—बग़ैर वसीयत के उसके माल में हज्जे बदल करना ठीक नहीं है, हां, अगर सब वारिस खुशी से मंज़ूर कर लें, तो जायज़ है। और अल्लाह ने चाहा, तो फ़र्ज़ हज अदा हो जायेगा, मगर ना–बालिग़ की इजाज़त का कोई एतबार नहीं है।

मस्अला 16—अगर औरत इद्दत[1] में हो, तो इद्दत को छोड़कर हज को जाना ठीक नहीं।

मस्अला 17—जिसके पास मक्का आने–जाने का ख़र्च हो और

---

1. इद्दत उस मुद्दत को कहते हैं, जो एक औरत तलाक़ मिलने पर या शौहर के मर जाने पर गुज़ारती है।

मदीने का ख़र्च हो, उसके जिम्मे हज फ़र्ज़ होगा। कुछ लोग समझते हैं कि जब तक मदीने का भी ख़र्च न हो, जाना फ़र्ज़ नहीं। यह बिल्कुल ग़लत विचार है।

मस्अला 18—एहराम में औरत को मुंह ढंकने के लिए मुंह से कपड़ा लगाना ठीक नहीं। आजकल इस काम के लिए एक जालीदार पंखा बिकता है, इसको चेहरे पर बांध लिया जाये और आंखों के सामने जाली रहे, यह ठीक है।

मस्अला 19—हज के बाक़ी मस्अले हज किये बग़ैर न समझ में आ सकते हैं और न याद रह सकते हैं और जब हज को जाये, वहां मुअल्लिम (हज की शिक्षा देने वाले) लोग सब बतला देते हैं, इसलिए लिखने की ज़रूरत नहीं समझी, इसी तरह उमरे का तरीक़ा वहां जाकर मालूम हो जाता है।

मदीने की ज़ियारत का ज़िक्र

अगर गुंजाइश हो तो हज के बाद या हज से पहले मदीना—मुनव्वरा हाज़िर होकर अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के रौज़ा—ए—मुबारक और मस्जिदे नबुवी की ज़ियारत से बरकत हासिल करे। इसके बारे में रसूल सल्ल० ने फ़रमाया कि जिस शख़्स ने मेरी वफ़ात के बाद मेरी ज़ियारत की उसको वही बरकत मिलेगी, जैसे मेरी ज़िंदगी में किसी ने मेरी ज़ियारत की, और यह भी फ़रमाया है कि जो शख़्स ख़ाली हज करे और मेरी ज़ियारत को न आये, उसने मेरे साथ बड़ी बे—मुरव्वती की और इस मस्जिद[1] के हक़ में आप ने फ़रमाया है कि जो शख़्स इसमें एक नमाज़ पड़े, उसको पचास हज़ार नमाज़ के बराबर सवाब होगा। अल्लाह हम सबको वह दौलत नसीब करे और नेक काम की तौफ़ीक़ दे। आमीन या रब्बुल आलमीन।

---

1. मस्जिदे नुबुवी।

मन्नत मानने का बयान

मस्अला 1—किसी काम पर इबादत की बात की कोई मन्नत मानी, फिर वह काम पूरा हो गया, जिसके लिए मन्नत मानी थी, तो अब मन्नत का पूरा करना वाजिब है। अगर मन्नत न पूरा करेगी तो बहुत गुनाह होगा। लेकिन अगर कोई बेकार सी मन्नत हो, जिसका शरीअत में कुछ एतबार नहीं तो उसका पूरा करना वाजिब नहीं, जैसा कि हम आगे बयान करते हैं।

मस्अला 2—किसी ने कहा, या अल्लाह ! अगर मेरा फ़्लां काम हो जाए तो पांच रोज़े रखूंगी, तो जब काम हो जाएगा, पांच रोज़े रखने पड़ेंगे और अगर काम नहीं हुआ तो न रखे। अगर सिर्फ़ इतना ही कहा है कि पांच रोज़े रखूंगी तो अख़्तियार है चाहे पांचों रोज़े एकदम से लगातार रखे और चाहे एक–एक दो–दो कर पांच रोज़े पूरे करे दोनों बातें ठीक हैं और अगर नज़्र करते वक़्त यह कह दिया कि पांच रोज़े लगातार रखूंगी, या दिल में यह नीयत थी तो एक दम से रखने पड़ेंगे। अगर बीच में एक–आध छूट जाये तो फिर से रखे।

मस्अला 3—अगर यों कहा कि जुमा का रोज़ा रखूंगी या मुहर्रम की पहली तारीख़ से दसवीं तारीख़ तक रखूंगी तो ख़ास जुमे का रोज़ा रखना वाजिब नहीं और मुहर्रम की ख़ास इन ही तारीख़ों ही में रोज़ा रखना वाजिब नहीं, जब चाहे दस रोज़े रख ले, लेकिन दसों लगातार रखने पड़ेंगे, चाहे मुहर्रम में रखे या और किसी और महीने में सब जायज़ है। इसी तरह अगर यह कहा कि अगर मेरा यह काम हो जाये तो कल ही रोज़ा रखूंगी, तब भी अख़्तियार है, जब चाहे रखे।

मस्अला 4—किसी ने नज़्र करते वक़्त यों कहा कि मुहर्रम के महीने में रोज़े रखूंगी तो मुहर्रम के पूर महीने के रोज़े लगातार रखने पड़ेंगे, अगर बीच में किसी वजह से दस–पांच रोज़े छूट जाएं तो उसके बदले में इतने रोज़े रख और ले, सारे रोज़े न दोहराये और यह भी अख़्तियार है कि मुहर्रम के महीने में न रखे, किसी और महीने में रखे, लेकिन सब लगातार रखे।

मस्अला 5—किसी ने मन्नत मानी कि मेरी खोयी हुई चीज़ मिल जाये, तो मैं आठ रक्अत नमाज़ पढ़ूंगी, तो उसके मिल जाने पर आठ रक्अत नमाज़ पढ़नी पड़ेगी, चाहे एक दम से आठों रक्अतों की नीयत बाधं

ले या चार–चार की नीयत बांधे या दो–दो की सब अख़्तियार है और अगर चार रक्अत की मन्नत मानी तो चारों एक ही सलाम से पढ़नी होगी, अलग–अलग दो पढ़ने से नज़्र अदा न होगी।

मस्अला 6—किसी ने एक रक्अत पढ़ने की मन्नत मानी तो पूरी दो रक्अतें पढ़नी पड़ेंगी। अगर तीन की मन्नत की तो पूरी चार, पांच की मन्नत मानी तो पूरी छः पढ़े इसी तरह आगे का भी यही हुक्म है।

मस्अला 7—यों मन्नत मानी कि दस रूपये ख़ैरात करूंगी या एक रूपया ख़ैरात करूंगी, तो जितना कहा है करें अगर यों कहा है कि पचास रूपया ख़ैरात करूंगी, और उसके पास उस वक़्त सिर्फ़ दस रूपये हैं तो दस ही रूपये देने पड़ेंगे। हां, अगर दस रूपये के अलावा कुछ माल–अस्बाब भी है, तो उसकी क़ीमत भी लगा देंगे। इसकी मिसाल यह समझो कि दस रूपये नक़द हैं और सब माल–अस्बाब पंद्रह रूपये के हैं, ये सब पचीस रूपये हुये, तो सिर्फ़ पचीस रूपये ख़ैरात करना वाजिब है। इससे ज़्यादा वाजिब नहीं।

मस्अला 8—अगर यों मन्नत मानी कि दस मिस्कीन को खिलाऊंगी तो अगर दिल में कुछ ख़्याल है कि एक वक़्त या दो वक़्त खिलाऊंगी तब तो इसी तरह खिलाये। अगर कुछ ख़्याल नहीं तो दो वक़्त दस मिस्कीन खिलाये। अगर कच्चा अनाज दे तो इसमें भी यही बात है कि अगर दिल मे कुछ ख़्याल था कि हर एक को इतना–इतना दूंगी तो उसी क़दर दे और अगर कुछ ख़्याल नहीं था तो हर एक को इतना दे दे जितना हमने सदक़ा–ए–फ़ित्र में बयान किया है।

मस्अला 9—अगर यों कहा कि एक रूपये की रोटी फ़क़ीरों को बांटूंगी तो अख़्तियार है, चाहे एक रूपये की रोटी दे दे, चाहे एक रूपये की कोई और चीज़ दे या एक रूपया नक़द दे दे।

मस्अला 10—किसी ने यों कहा कि दस रूपये ख़ैरात करूंगी, हर फ़क़ीर को एक–एक रूपया, फिर दसों रूपये एक ही फ़क़ीर को दे दिये, तो भी जायज़ है, हर एक फ़क़ीर को एक–एक रूपया देना वाजिब नहीं। अगर दस रूपये बीस फ़क़ीरों को दे दिये तो भी जायज़ है और अगर यों कहा कि दस रूपये दस फ़क़ीरों पर ख़ैरात करूंगी तो भी अख़्तियार है, चाहे दस को दे दे, चाहे कम–ज़्यादा करे।

मस्अला 11—अगर यों कहा कि दस नमाज़ियों को खाना खिलाऊंगी या दस हाफ़िज़ों को खिलाऊंगी तो दस फ़क़ीरों को खिलाये, चाहे वे नमाज़ी

और हाफ़िज़ हों या न हों।

मस्अला 12—किसी ने कहा कि मक्का शरीफ़ में दस रूपये ख़ैरात करूंगी तो मक्का में ख़ैरात करना वाजिब नहीं, जहां चाहे ख़ैरात करे या यों कहा था कि जुमा के दिन ख़ैरात करूंगी, फ़लाने फ़क़ीर को दूंगी तो जुमा के दिन ख़ैरात करना और उसी फ़क़ीर को देना ठीक नहीं। इसी तरह अगर रूपया मुक़र्रर करे कि यही रूपया अल्लाह तआला की राह में दूंगी तो ठीक वही रूपया देना वाजिब नहीं, चाहे वह देदे या इतना ही और दे दे।

मस्अला 13—इसी तरह अगर मन्नत मानी कि जुमा को मस्जिद में नमाज़ पढूंगी या मक्का में नमाज़ पढूंगी तो भी अख़्तियार है, जहां चाहे, पढ़े।

मस्अला 14—किसी ने कहा अगर मेरा भाई अच्छा हो जाये तो एक बकरी ज़िब्ह करूंगी या यों कहा कि एक बकरी का गोश्त ख़ैरात करूंगी तो मन्नत हो गयी। अगर यों कहा कि क़ुर्बानी करूंगी तो क़ुर्बानी के दिनों में ज़िब्ह करना चाहिए और दोनों शक्लों में उसका गोश्त फ़क़ीरों के अलावा और किसी को देना और ख़ुद खाना ठीक नहीं, जितना ख़ुद खाये या अमीरों को दे, उतना फिर ख़ैरात करना पड़ेगा।

मस्अला 15—एक ख़ास बड़ा जानवर (जैसे गाय) क़ुर्बानी करने की मन्नत मानी, फिर वह जानवर नहीं मिला तो सात बकरियां कर दे।

मस्अला 16—यों मन्नत मानी थी कि जब मेरा भाई आये तो दस रूपए ख़ैरात करूंगी, फिर आने की ख़बर पायी और अपने से पहले ही रूपए ख़ैरात कर दिए, तो मन्नत पूरी नहीं हुई। आने के बाद फिर ख़ैरात करे।

मस्अला 17—अगर ऐसे काम के होने पर मन्नत मानी जिसके होने को चाहती हो और तमन्ना करती हो कि यह काम हो जाये जैसे यों कहे कि अगर मैं अच्छी हो जाऊंगी तो ऐसा करूं, अगर मेरा भाई ख़ैरियत से आ जाए तो ऐसा करूं, अगर मेरा बाप मुक़दमे से बरी हो जाए या नौकर हो जाए तो ऐसा करूं, जब वह काम हो जाए तो मन्नत पूरी कर ले और अगर इस तरह कहे कि अगर मैं तुझ से बोलूं तो दो रोज़े रखूं या यह कहा कि अगर आज मैं नमाज़ न पढूं तो एक रूपया ख़ैरात करूं, फिर उससे बोल ली या नमाज़

न पढ़ी तो अख़्तियार है कि चाहे क़सम का कफ़्फ़ारा दे दे और चाहे दो रोज़े रखे और एक रूपया ख़ैरात करे।

मस्अला 18—यह मन्नत मानी कि एक हज़ार बार दरूद शरीफ़ पढ़ूंगी, एक हज़ार बार कलमा पढ़ूंगी तो मन्नत हो गयी और पढ़ना वाजिब हो गया और अगर कहा कि हज़ार बार 'सुब्हानल्लाह–सुब्हानल्लाह' पढ़ूंगी या हज़ार बार लाहौल' पढ़ूंगी तो मन्नत नहीं हुई और पढ़ना वाजिब नहीं।

मस्अला 19—मन्नत मानी कि दस कलाम मजीद ख़त्म करूंगी या एक पारा पढ़ूंगी तो मन्नत हो गयी।

मस्अला 20—यह मन्नत मानी कि अगर फ़लां काम हो जाये, तो मीलाद शरीफ़ पढ़ूंगी तो मन्नत नहीं हुई या यह मन्नत की कि फ़लानी बात हो जाये तो फ़लाने मज़ार पर चादर चढ़ाऊंगी, यह भी मन्नत नहीं हुई या शाह अब्दुल हक़ का तोशा माना य सहमुनी या सैयद कबीर की गाय मानी या मस्जिद में गुलगुल चढ़ाने और अल्लाह मियां के ताक़ भरने की मन्नत मानी यह बड़े पीर के ग्यारहवीं की मन्नत मानी तो यह मन्नत सही नहीं हुई, उसका पूरा करना वाजिब नहीं।

मस्अला 21—मौला मुश्किल कुशा का रोज़ा, आसबी का कूंडा, ये सब बेकार की बातें हैं और मौला मुश्किल कुशा का रोज़ा मानना शिर्क है।

मस्अला 22—यह मन्नत मानी की फ़लां मस्जिद जो टूटी पड़ी है, उसको बनवा दूंगी या फ़ला पुल बंधवा दूंगी, तो यह मन्नत भी सही नहीं है, उसके ज़िम्मे कुछ वाजिब नहीं हुआ।

मस्अला 23—अगर यों कहा कि मेरा भाई अच्छा हो जाये तो नाच कराऊंगी या बाजा बजवाऊंगी तो यह मन्नत गुनाह है, अच्छे होने के बाद ऐसा करना जायज़ नहीं।

मस्अला 24—अल्लाह तआला के अलावा किसी और से मन्नत मानना, मिसाल के तौर पर यह कहना, ऐ बड़े पीर ! अगर मेरा काम हो जाए तो मैं तुम्हारी यह बात करूंगी या क़ब्रों और मज़ारों पर जाना या जहां जिन्न रहते हों, वहां जाये और दर्ख़्वास्त करना हराम और शिर्क है बल्कि उस मन्नत की चीज़ का खाना भी हराम है और क़ब्रों पर जाने से औरतों को हदीसों में मना भी किया गया है। प्यारे नबी सल्ल० ने ऐसी औरतों पर लानत फ़रमायी है।

क़सम खाने का बयान

मस्अला 1—बे-ज़रूरत बात-बात में क़सम खाना बुरी बात है। इसमें अल्लाह तआला के नाम की बड़ी-बे-अदबी होती है, जहां तक हो सके, सच्ची बात पर भी क़सम न खाना चाहिए।

मस्अला 2—जिसने अल्लाह तआला की क़सम खायी और यों कहा कि अल्लाह क़सम, ख़ुदा क़सम, ख़ुदा की इज़्ज़त व जलाल की क़सम, ख़ुदा की बुज़ुर्गी और बड़ाई की क़सम—तो क़सम हो गयी, अब उसके ख़िलाफ़ करना ठीक नहीं। अगर ख़ुदा का नाम नहीं लिया, सिर्फ़ इतना कह दिया, मैं क़सम खाती हूं कि फ़्ला काम न करूंगी, तब भी क़सम हो गयी।

मस्अला 3—अगर यों कहा कि ख़ुदा गवाह है, ख़ुदा गवाह है, ख़ुदा गवाह करके कहती हूं, ख़ुदा को हाज़िर व नाज़िर जान कर कहती हूं, तब भी क़सम हो गयी।

मस्अला 4—क़ुरआन मजीद की क़सम, कलाम मजीद की क़सम, कलामुल्लाह की क़सम खाकर कोई बात कही तो क़सम हो गयी और अगर कलाम मजीद को हाथ में लेकर या उस पर हाथ रख कर कोई बात कही, लेकिन क़सम नहीं खायी तो क़सम न हुई।

मस्अला 5—यों कहा कि अगर फ़्लाना काम करूं तो बे-ईमान समझा जाऊं, मरते वक़्त ईमान व नसीब हो, बे-ईमान हो जाऊं या इस तरह कहा कि अगर फ़्लां काम करूं तो मैं मुसलमान नहीं तो क़सम हो गयी, उसके ख़िलाफ़ करने से कफ़्फ़ारा देना पड़ेगा और ईमान न जाएगा।

मस्अला 6—अगर फ़्लाना काम करूं तो हाथ टूटें, दीदे फूटें कोढ़ी हो जाऊं, बदन फूट निकले, ख़ुदा का ग़ज़ब टूटे, आसमान फट पड़े, दाना दाना की मुहताज हो जाऊं, ख़ुदा की मार पड़े, ख़ुदा की फटकार पड़े अगर फ़्ला काम करूं तो सुअर खाऊं, मरते वक़्त कलमा नसीब न हो, क़ियामत के दिन ख़ुदा और अल्लाह के रसूल सल्ल० के सामने ज़र्दरू हूं—इन बातों से क़सम नहीं होती, उसके ख़िलाफ़ करने से कफ़्फ़ारा न देना पड़ेगा।

मस्अला 7—ख़ुदा के सिवा किसी और की क़सम खाने से क़सम

नहीं होती, जैसे रसूलुल्लाह की क़सम ! काबतुल्लाह की क़सम ! अपनी आंखों की क़सम ! अपनी जवानी की क़सम ! अपने हाथ–पैरों की क़सम ! अपने बाप की क़सम ! अपने बच्चे की क़सम ! अपने प्यारों की क़सम ! तुम्हारे सर की क़सम ! तुम्हारी जान की क़सम ! तुम्हारी क़सम ! अपनी क़सम !—इस तरह क़सम खा कर फिर उसके ख़िलाफ़ करे तो कफ़्फ़ारा न देना पड़ेगा, लेकिन अल्लाह तआला के सिवा किसी और की क़सम खाना बड़ा गुनाह है। हदीस शरीफ़ में इसे बहुत मना किया गया है। अल्लाह को छोड़ कर किसी की क़सम खाना शिर्क की बात है, इससे बहुत बचना चाहिए।

मस्अला 8—किसी ने कहा तेरे घर का खाना मुझ पर हराम या यों कहा, फ़लानी चीज़ मैंने अपने ऊपर हराम कर ली तो उसके कहने से वह चीज़ हराम नहीं हुई लेकिन यह क़सम हो गयी। अब अगर खायेगी, तो कफ़्फ़ारा देना पड़ेगा।

मस्अला 9—किसी दूसरे के क़सम दिलाने से क़सम नहीं होती जैसे किसी ने तुम से कहा, तुम्हें ख़ुदा की क़सम, यह काम ज़रूर करो, तो यह क़सम ,नहीं हुई, इसके ख़िलाफ़ करना दुरूस्त है।

मस्अला 10—क़सम खाकर उसके साथ ही 'इनशाअल्लाहु तआला' कह दिया जैसे कोई इस तरह कहे कि ख़ुदा की क़सम ! फ़्लां काम इनशाअल्लाहु तआला न करूंगी, क़सम नहीं हुई।

मस्अला 11—जो बात हो चुकी है, उस पर झूठी क़सम खाना बड़ा गुनाह है जैसे किसी ने नमाज़ नहीं पढ़ी और जब किसी ने पूछा तो कह दिया कि, ख़ुदा की क़सम। मैं नमाज़ पढ़ चुकी, या किसी से गिलास टूट गया और जब पूछा तो कह दिया, ख़ुदा की क़सम ! मैंने नहीं तोड़ा। जान–बूझ कर झूठी क़सम खा ली, तो उसके गुनाह की कोई हद नहीं और उसका कोई कफ़्फ़ारा नहीं। बस दिन–रात अल्लाह तआला से तौबा व इस्तग़्फ़ार करके अपना गुनाह माफ़ कराये। सिवाए इसके और कुछ नहीं हो सकता और अगर ग़लती से और धोखे में झूठी क़सम खा ली, जैसे किसी ने कहा, ख़ुदा की क़सम ! अभी फ़्लां आदमी नहीं आया और अपने दिल में यक़ीन के साथ समझती है कि सच्ची क़सम खा रही है, फिर मालूम हुआ कि उस वक़्त आ गया था, तो यह माफ़ है, इसमें गुनाह न होगा और कुछ कफ़्फ़ारा भी नहीं।

मस्अला 12—अगर ऐसी बात पर क़सम खायी जो अभी नहीं हुई,

बल्कि आगे होगी, जैसे कोई कहे, खुदा की क़सम ! आज पानी बरसेगा, खुदा की क़सम ! आज मेरा भाई आयेगा, फिर वह नहीं आया और पानी नहीं बरसा, तो कफ़्फ़ारा देना पड़ेगा।

मस्अला 13—किसी ने क़सम खायी कि खुदा की क़सम ! आज क़ुरआन ज़रूर पढ़ूंगी, तो अब क़ुरआन पढ़ना वाजिब हो गया, न पढ़ेगी तो गुनाह होगा और कफ़्फ़ारा देना पड़ेगा और अगर किसी ने क़सम खायी कि खुदा की क़सम ! आज मैं फ़लां काम करूंगी, तो अब वह काम करना दुरूस्त नहीं। अगर करेगी तो क़सम तोड़ने का कफ़्फ़ारा देना पड़ेगा।

मस्अला 14—किसी ने गुनाह करने की क़सम खायी कि खुदा की क़सम ! आज फ़लां की चीज़ चुरा लाऊंगी, खुदा की क़सम ! आज नमाज़ न पढ़ूंगी ! खुदा की क़सम ! अपने मां-बाप से न बोलूंगी, तो ऐसे वक़्त क़सम का तोड़ देना वाजिब है। तोड़कर कफ़्फ़ारा दे दे, नहीं तो गुनाह होगा।

मस्अला 15—किसी ने क़सम खायी कि आज मैं फ़लां चीज़ न खाऊंगी, फिर भूले से खाली और क़सम याद न रही या किसी ने ज़बरदस्ती मुंह चीर कर खिला दी, तब भी कफ़्फ़ारा है।

मस्अला 16—गुस्से में क़सम खायी कि तुझ को कभी एक कौड़ी न दूंगी, फिर एक पैसा या रूपया दे दिया, तब भी क़सम टूट गयी कफ़्फ़ारा दे।

क़सम के कफ़्फ़ारे का बयान

मस्अला 1—अगर किसी ने क़सम तोड़ दी तो उसका कफ़्फ़ारा यह है कि दस मुहताजों को दो वक़्त खिलाये या कच्चा अनाज दे दे, और हर फ़क़ीर को अंग्रेज़ी तौल से आधी छटांक ऊपर पौने दो सेर गेहूं देना चाहिए, बल्कि सावधानी के तौर पर पूरे दो सेर दे दे और जौ दे तो उससे दो गुना दे, बाक़ी और सब तरीक़ा फ़क़ीर को खिलाने का वही है, जो रोज़े के कफ़्फ़ारे में बयान हो चुका है या दस फ़क़ीरों को कपड़ा पहना दे। हर फ़क़ीर को इतना-इतना बड़ा कपड़ा दे, जिससे बदन का ज़्यादा हिस्सा ढक जाये जैसे चादर या बड़ा लंबा कुरता दे दिया तो कफ़्फ़ारा अदा हो गया, लेकिन वह कपड़ा बहुत पुराना न होना चाहिए। अगर हर फ़क़ीर को सिर्फ़ एक-एक पाजामा दे दिया तो कफ़्फ़ारा अदा नहीं हुआ। और अगर लुंगी के साथ कुरता भी हो तो अदा हो गया। इन दोनों बातों में अख़्तियार है चाहे कपड़े दे और चाहे खाना खिलाये। हर तरह कफ़्फ़ारा अदा हो गया और यह हुक्म

जो बयान हुआ, जब है कि मर्द को कपड़ा दे और अगर किसी ग़रीब औरत को कपड़ा दे दिया तो इतना बड़ा कपड़ा होना चाहिए कि सारा बदन ढक जाये और उससे नमाज़ पढ़ सके। इससे कम होगा तो कफ़्फ़ारा अदा न होगा।

मस्अला 2—अगर कोई ऐसी ग़रीब हो कि न तो खाना खिला सकती है और न कपड़ा दे सकती है, तो लगातार तीन रोज़े रखे। अगर अलग-अलग करके तीन रोज़े पूरे करे तो कफ़्फ़ारा अदा नहीं हुआ। तीनों लगातार रखना चाहिए। अगर दो रोज़े रखने के बाद बीच में किसी वजह से एक रोज़ा छूट गया तो अब फिर से तीनों रखे।

मस्अला 3—क़सम तोड़ने से पहले ही कफ़्फ़ारा अदा कर दिया, इसके बाद क़सम तोड़ दी, तो कफ़्फ़ारा सही नहीं हुआ। अब क़सम तोड़ने के बाद फिर कफ़्फ़ारा देना चाहिए और जो कुछ फ़क़ीरों को दे चुकी है, उसको फिर लेना दुरूस्त नहीं।

मस्अला 4—किसी ने कई बार क़सम खायी जैसे एक बार कहा, खुदा की क़सम ! फ़लां काम न करूंगी, इसके बाद फिर कहा, खुदा की क़सम ! फ़लां काम न करूंगी, उसी दिन या उसके दूसरे-तीसरे दिन मतलब यह कि इसी तरह कई बार कहा या यों कहा, खुदा की क़सम ! अल्लाह की क़सम ! क़ुरआन पाक की क़सम ! फ़लां काम ज़रूर करूंगी, फिर वह क़सम तोड़ दी, तो इन सब क़समों का एक ही कफ़्फ़ारा दे दे।

मस्अला 5—किसी के ज़िम्मे क़समों के बहुत से कफ़्फ़ारे जमा हो गये तो मशहूर क़ौल के मुताबिक़ हर एक का जुदा-जुदा कफ़्फ़ारा देना चाहिए। ज़िंदगी में न दे तो मरते वक़्त वसीयत करना वाजिब है।

मस्अला 6—कफ़्फ़ारे में उन्हीं मिस्कीनों को कपड़ा देना ठीक है, जिनको ज़कात देना दुरूस्त है।

घर में जाने की क़सम खाने का बयान

मस्अला 1—किसी ने क़सम खायी कि कभी तेरे घर न जाऊंगी फिर उसके दरवाज़े की ड्योढ़ी पर खड़ी हो गयी या दरवाज़े के छज्जे के नीचे खड़ी हो गयी, अन्दर नहीं गयी तो क़सम नहीं टूटी और अगर दरवाज़े के अंदर चली गयी तो क़सम टूट गयी।

मस्अला 2—किसी ने क़सम खायी कि उस घर में न जाऊंगी, फिर

जब वह घर गिर कर बिल्कुल खंडहर हो गया, तो उसमें गयी, तो भी क़सम टूट गयी और अगर बिल्कुल मैदान हो गया, ज़मीन बराबर हो गयी और घर का निशान बिल्कुल मिट गया या उसका खेत बन गया या मस्जिद बनायी गयी या बाग़ बना लिया गया, तब उसमें गई तो क़सम नहीं टूटी।

मस्अला 3—क़सम खायी कि उस घर में न जाऊंगी, फिर जब वह गिर गया और फिर से बनवा लिया गया, तब उसमें गयी तो क़सम टूट गयी।

मस्अला 4—किसी ने क़सम खायी कि तेरे घर न जाऊंगी, फिर कोठा फांद का आयी और छत पर खड़ी हो गयी तो क़सम टूट गयी भले ही नीचे न उतरे।

मस्अला 5—किसी ने घर में बैठे हुए क़सम खायी कि अब यहां कभी नहीं आऊंगी, इसके बाद थोड़ी देर बैठी रही तो क़सम नहीं टूटी, चाहे जितने दिन वहां बैठी रही। जब बाहर जाकर फिर आयेगी तब क़सम टूटेगी। और अगर क़सम खायी कि यह कपड़ा न पहनूंगी, यह कह कर तुरंत उतार डाला तो क़सम नहीं टूटी और अगर तुरंत नहीं उतारा कुछ देर पहने रही तो क़सम टूट गयी।

मस्अला 6—क़सम खायी कि इस घर में न रहूंगी, इसके बाद तुरंत इस घर से सामान उठाना, ले जाना, इंतिज़ाम करना शुरू कर दिया तो क़सम नहीं टूटी और अगर तुरंत नहीं शुरू किया, कुछ देर ठहर गयी, तो क़सम टूट गयी।

मस्अला 7—क़सम खायी कि अब तेरे घर में क़दम नहीं रखूंगी, तो मतलब यह है कि न आऊंगी। अगर म्याने पर सवार होकर आयी और घर में उसी म्याने पर बैठी रही, क़दम ज़मीन पर न रखे, तब भी क़सम टूट गयी।

मस्अला 8—किसी ने क़सम खाकर कहा, तेरे घर कभी न कभी ज़रूर आऊंगी, फिर आने का मौक़ा नहीं हुआ, तो जब तक ज़िंदा है, क़सम नहीं टूटी, मरते वक़्त क़सम टूट जायेगी। उसको चाहिए, उस वक़्त वसीयत कर जाए कि मेरे माल में से क़सम का कफ़्फ़ारा दे देना।

मस्अला 9—क़सम खायी कि फ़्लां के घर न जाऊंगी, तो जिस घर में वह रहती हो, वहां न जाना चाहिए, चाहे ख़ुद उसी का घर हो या किराए पर रहती हो या मांग लिया हो और बे-किराया दिए रहती हो।

मस्अला 10—क़सम खायी कि तेरे यहां कभी न आऊंगी, फिर किसी से कहा कि तू मुझे गोद में लेकर वहां पहुंचा दे, इसलिए उसने गोद में लेकर वहां पहुंचा दिया, तब भी क़सम टूट गयी, हां अगर उसने नहीं कहा, बग़ैर उसके कहे किसी ने उसको लाद कर वहां पहुंचा दिया तो क़सम नहीं टूटी। इसी तरह अगर क़सम खायी कि इस घर से कभी न निकलूंगी, फिर किसी से कहा कि मुझको लाद कर निकाल ले चल और वह ले गया तो क़सम टूट गयी और अगर बग़ैर कहे लाद कर ले गया तो क़सम नहीं टूटी।

खाने–पीने की क़सम खाने का बयान

मस्अला 1—क़सम खायी कि यह दूध न पियूंगी, फिर वही दूध जमा कर दही बना लिया तो उसके खाने से क़सम न टूटेगी।

मस्अला 2—बकरी का बच्चा पला हुआ था, उस पर क़सम खायी और कहा कि इस बच्चे का गोश्त न खाऊंगी। फिर वह बढ़ कर पूरी बकरी हो गयी, तब उसका गोश्त खाया, तब भी क़सम टूट गयी।

मस्अला 3—क़सम खायी कि गोश्त न खाऊंगी फिर मछली खायी या कलेजी या ओझ, तो क़सम न टूटी।

मस्अला 4—क़सम खायी कि यह गेहूं न खाऊंगी, फिर उसको पिसवा कर रोटी खायी तो क़सम नहीं टूटी और अगर खुद गेहूं उबाल कर खा लिए या भुनवा कर चबाये तो क़सम टूट गयी। हां अगर यह मतलब लिया हो कि उनके आटे की कोई चीज़ भी न खाऊंगी तो हर चीज़ के खाने से क़सम टूट जायेगी।

मस्अला 5—अगर यह क़सम खायी कि यह आटा न खाऊंगी तो उसकी रोटी खाने से क़सम टूट जायेगी और अगर उसका लपटा या हलवा या कुछ और पका कर खाया, तब भी क़सम टूट गयी और अगर वैसे ही कच्चा आटा फांक गयी तो क़सम नहीं टूटी।

मस्अला 6—क़सम खायी कि रोटी न खाऊंगी तो उस देश में जिन चीज़ों की रोटी खायी जाती है, न खाना चाहिए, नहीं तो क़सम टूट जाएगी।

मस्अला 7—क़सम खायी कि सिरी न खाऊंगी तो चिड़िया, बटेर,

मुर्ग़ वग़ैरह का सिर खाने से क़सम न टूटेगी। अगर बकरी या गाय की सिरी खायी तो क़सम टूट गयी।

मस्अला 8—क़सम खायी कि मेवा न खाऊंगी तो अनार, सेब, अंगूर, छोहारा, बादाम, अख़रोट, किशमिश, मुनक़्क़ा, खजूर खाने से क़सम टूट जायेगी और अगर ख़रबूज़ा, तरबूज़ और ककड़ी, खीरा, आम, खाये तो क़सम नहीं टूटी।

न बोलने की क़सम खाने का बयान

मस्अला 1—क़सम खायी कि फ़लां औरत से न बोलूंगी फिर जब वह सोती थी उस वक़्त सोते में उससे कुछ कहा और उसकी आवाज़ से वह जाग पड़ी, तो क़सम टूट गयी।

मस्अला 2—क़सम खायी कि बग़ैर मां की इजाज़त फ़लां से न बोलूंगी। फिर मां ने इजाज़त दे दी लेकिन इजाज़त की ख़बर भी उसको नहीं मिली थी कि उससे बोल दी और बोलने के बाद मालूम हुआ कि मां ने इजाज़त दे दी थी, तब भी क़सम टूट गयी।

मस्अला 3—क़सम खायी कि उस लड़की से कभी न बोलूंगी, फिर जब वह जवान हो गयी या बुढ़िया हो गयी तब बोली, तो भी क़सम टूट गयी।

मस्अला 4—क़सम खायी कि कभी तेरा मुंह न देखूंगी तो मतलब यह है कि तुझसे मुलाक़ात न करूंगी, मेल–जोल न रखूंगी। अगर कहीं दूर से शक्ल देख ली, क़सम नहीं टूटी।

बेचने और मोल लेने की क़सम खाने का बयान

मस्अला 1—क़सम खायी कि फ़लां चीज़ मैं न ख़रीदूंगी फिर किसी से कह दिया कि तुम मुझे ख़रीद दो, उसने मोल ले दिया तो क़सम नहीं टूटी। इसी तरह अगर यह क़सम खायी कि मैं अपनी फ़लां

चीज़ न बेचूंगी, फिर ख़ुद नहीं बेचा, दूसरे से कह दिया तुम बेच दो। उसने बेच दिया तो क़सम नहीं टूटी। इसी तरह किराए पर लेने का हुक्म है। अगर क़सम खायी कि मैं यह मकान किराए पर न लूंगी फिर किसी के ज़रिए से किराए पर ले लिया तो क़सम नहीं टूटी। हां अगर क़सम खाने का यही मतलब था कि न तो ख़ुद वह काम करूंगी, न किसी दूसरे के ज़रिए से कराऊंगी, तो दूसरे आदमी के कर देने से भी क़सम टूट जाएगी। ग़रज़ यह कि जो मतलब होगा, उसी के मुताबिक़ सब हुक्म लगाए जाएंगे, या यह कि क़सम खाने वाली औरत परदानशीन या अमीरज़ादी है कि ख़ुद अपने हाथ से नहीं बेचती, न ही ख़रीदती है, तो इसी सूरत में अगर यह काम दूसरे से कह कर कराये तब भी क़सम टूट जाएगी।

मस्अला 2—क़सम खायी कि मैं अपने इस लड़के को न मारूंगी, फिर किसी और से कह कर पिटवा दिया, तो क़सम नहीं टूटी।

रोज़े–नमाज की क़सम खाने का बयान

मस्अला 1—किसी ने बेवक़ूफ़ी से क़सम खायी कि मैं रोज़ा न रखूंगी, फिर रोज़े की नीयत कर ली तो दम भर गुज़रने से भी क़सम टूट गयी। पूरे दिन इंतिज़ार न करना पड़ेगा। अगर थोड़ी देर बाद रोज़ा तोड़ देगी, तब भी क़सम तोड़ने का कफ़्फ़ारा देना पड़ेगा। अगर यों कहा कि एक रोज़ा भी न रखूंगी तो रोज़ा ख़त्म होने के वक़्त क़सम टूटेगी, जब तक पूरा दिन न गुज़रे और रोज़ा खोलने का वक़्त न आये, तब तक क़सम न टूटेगी। अगर वक़्त आने से पहले ही रोज़ा तोड़ डाला, तो क़सम नहीं टूटी।

मस्अला 2—क़सम खायी कि मैं नमाज़ न पढूंगी फिर शमर्दिा हुई और नमाज़ पढ़ने खड़ी हुई तो जब पहली रक्अत का सज्दा किया, उस वक़्त क़सम टूट गयी और सज्दा करने से पहले क़सम नहीं टूटी। अगर एक रक्अत पढ़कर नमाज़ तोड़ दे, तब भी क़सम टूट गयी और याद रखो कि ऐसी क़समें खाना बड़ा गुनाह है। अगर ऐसी बेवक़ूफ़ी हो गयी तो उसको तुरन्त तोड़ डाले और कफ़्फ़ारा अदा करे।

कपड़े वग़ैरह की क़सम खाने का बयान

मस्अला 1—क़सम खायी कि इस क़ालीन पर न लेटूंगी, फिर क़ालीन बिछा कर उसके ऊपर चादर लगायी और लेटी तो क़सम टूट गयी और अगर उस क़ालीन के ऊपर एक और क़ालीन या कोई दरी बिछाली, उसके ऊपर लेटी तो क़सम नहीं टूटी।

मस्अला 2—क़सम खाई कि ज़मीन पर न बैठूंगी, फिर ज़मीन पर बोरी, कपड़ा या चटाई–टाट वग़ैरह बिछा कर बैठ गई तो क़सम नहीं टूटी और अगर दोपट्टा जो ओढ़े हुए है, उसी का आंचल बिछा कर बैठ गई तो क़सम टूट गई, हां, अगर दोपट्टा उतार कर बिछा लिया, तब बैठी तो क़सम नहीं टूटी।

मस्अला 3—क़सम खाई इस चारपाई या इस तख़्त पर न बैठूंगी, फिर उस पर दरी या क़ालीन वग़ैरह बिछा कर बैठ गई तो क़सम टूट गई और अगर उस चारपाई पर एक और चारपाई बिछाई और तख़्त के ऊपर एक और तख़्त बिछा लिया, फिर ऊपर वाली चारपाई और तख़्त पर बैठी तो क़सम नहीं टूटी।

मस्अला 4—क़सम खाई कि फ़्लां को कभी न नहलाऊंगी फिर उसके मर जाने के बाद नहलाया तो क़सम टूट गई।

मस्अला 5—शौहर ने क़सम खाई कि तुझ को कभी न मारूंगा, फिर उसने चोटिया पकड़ कर घसीटा या गला घोंट दिया या ज़ोर से काट खाया तो क़सम टूट गई। और जो दिल्लगी और प्यार में काटा हो तो क़सम नहीं टूटी।

मस्अला 6—क़सम खाई कि फ़्लां को ज़रूर मारुंगी और वह इसके कहने से पहले ही मर चुकी है तो अगर उसका मरना मालूम न था इस वजह से क़सम खाई तो क़सम न टूटेगी और अगर जान–बूझकर क़सम खाई तो क़सम खाते ही क़सम टूट गई।

मस्अला 7—अगर किसी ने किसी बात के करने की क़सम खाई, जैसे यों कहा, खुदा की क़सम ! अनार ज़रूर खाऊंगी तो उम्र भर में एक बार खा लेना काफ़ी है और अगर किसी बात के न करने की क़सम खाई, जैसे यों कहा कि खुदा की क़सम ! अनार न खाऊंगी, तो हमेशा के लिए छोड़ना पड़ेगा। जब कभी खायेगी तो क़सम टूट जाएगी।

हां, अगर ऐसा हो कि घर में अनार–अंगूर वग़ैरह हों और ख़ास इन अनारों के लिए कहा कि न खाऊंगी तो यह और बात है वह न खाये, उसके सिवा और मंगाकर खाये तो कुछ हरज नहीं।

दीन (धर्म) से फिर जाने का बयान

मस्अला 1—अगर ख़ुदा–न–ख़्वास्ता कोई अपने ईमान और दीन से फिर गई, तीन दिन की मोहलत दी जाएगी और जो उसको शुबहा पड़ा, उस शुबहे का जवाब दिया जायेगा। अगर इतनी मुद्दत में मुसलमान हो गई तो ख़ैर, नहीं तो हमेशा[1] के लिए क़ैद कर देंगे, जब तौबा करेगी तो छोड़ेंगे।

मस्अला 2—जब किसी ने कुफ़्र का कलमा ज़ुबान से निकाला तो ईमान जाता रहा और जितनी नेकियां और इबादत उसने की थी, सब बेकार गई। निकाह टूट गया और फ़र्ज़ हज कर चुकी है तो वह भी बर्बाद गया। अब अगर तौबा करके मुसलमान हो गई तो अपना निकाह फिर से पढ़ाये और फिर दूसरा हज[2] करे।

मस्अला 3—इसी तरह अगर किसी का मियां—तौबा–तौबा—बे–दीन हो जाए तो भी निकाह जाता रहा। अब वह जब तक तौबा न करके फिर से निकाह न करे, औरत उससे कुछ वास्ता न रखे। अगर कोई मामला मियां–बीवी का–सा हो, तो भी गुनाह होगा और अगर ज़बरदस्ती करे तो उसको सबसे ज़ाहिर कर दे, शर्माये नहीं। दीन की बात में क्या शर्म।

मस्अला 4—जब कुफ़्र का कलमा ज़ुबान से निकाला ईमान जाता रहा। अगर हंसी–दिल्लगी में कुफ़्र की बात कहे और दिल में न हो, तब भी यही हुक्म है जैसे किसी ने कहा कि क्या ख़ुदा की इतनी क़ुदरत नहीं जो फ़लां काम कर दे, उसका जवाब दिया, हां नहीं है, उसके कहने से काफ़िर हो गई।

मस्अला 5—किसी ने कहा, उठो, नमाज़ पढ़ो। जवाब दिया, कौन उठक बैठक करे या किसी ने रोज़ा रखने को कहा तो जवाब दिया, कौन

---

1. यह हुक्म सिर्फ़ औरतों के लिए है, और अगर ख़ुदा–न–ख़्वास्ता मर्द बे–ईमान हो जाये तो तीन दिन के अंदर गरदन मार दी जायेगी।
2. जब कि दोबारा मुसलमान होने के बाद मालदार हो और इतना माल हो कि जिस पर हज फ़र्ज़ होता है।

भूखा मरे या कहा रोज़ा रखे जिसके घर खाना न हो, यह सब कुफ़्र है।

मस्अला 6—इसको कोई गुनाह करते देखकर किसी ने कहा, खुदा से नहीं डरती। जवाब दिया, हां, नहीं डरती तो काफ़िर हो गयी।

मस्अला 7—किसी को बुरा काम करते देखकर कहा, क्या तू मुसलमान नहीं है जो ऐसी बात करती है। जवाब दिया, हां नहीं, तो काफ़िर हो गयी। अगर हंसी में कहा, तब भी यही हुक्म है।

मस्अला 8—किसी ने नमाज़ पढ़नी शुरू की। संयोग कि उस पर कोई मुसीबत पड़ गयी। उसने कहा कि यह सब नमाज़ ही की नहूसत है, तो काफ़िर हो गयी।

मस्अला 9—किसी काफ़िर की कोई बात अच्छी मालूम हुई, इसलिए तमन्ना करके कहा कि हम भी काफ़िर होते तो अच्छा था कि हम भी ऐसा करते, तो काफ़िर हो गयी।

मस्अला 10—किसी का लड़का मर गया। उसने यों कहा, या अल्लाह ! यह जुल्म मुझ पर क्यों किया, मुझे क्यों सताया, तो इसके कहने से काफ़िर हो गयी।

मस्अला 11—किसी ने यों कहा कि अगर खुदा भी मुझ से कहे तो यह काम न करूं या यों कहा कि जिब्रील भी अगर आयें तो उनका कहा न मानूं तो काफ़िर हो गयी।

मस्अला 12—किसी ने कहा कि मैं ऐसा काम करती हूं कि खुदा भी नहीं जानता तो काफ़िर हो गयी।

मस्अला 13—जब अल्लाह तआला को या उसके रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को कुछ हक़ीर (तुच्छ, छोटा) जाना या शरीअत की बात को बुरा जाना, ऐब निकाला, कुफ़्र की बात पसंद की, इन सब बातों से ईमान जाता रहता है और कुफ़्र की इन बातों को, जिनसे ईमान जाता रहता है हमने पहले हिस्से में सब अक़ीदों के बयान करने के बाद भी बयान किया है। वहां से देख लेना चाहिए और अपने ईमान संभालने में बहुत सावधानी रखनी चाहिए। अल्लाह तआला हम सबका ईमान ठीक रखे और ईमान पर ही ख़ात्मा करे। आमीन।

ज़िब्ह करने का बयान

मस्अला 1—ज़िब्ह करने का तरीक़ा यह है कि जानवर का मुंह क़िब्ले की तरफ़ करके तेज़ छुरी हाथ में लेकर 'बिस्मिल्लाहि, अल्लाहु अक्बर कह के उसके गले को काटे, यहां तक कि चार नसें कट जाएं— एक नरख़रा जिससे सांस लेता है। दूसरी वह नस, जिससे दाना–पानी जाता है और दो शह रगें (ख़ास नसें) जो नरख़रे के दायें बायें होती है। अगर इन चार में से तीन ही नसें कटीं, तब भी ज़िब्ह दुरूस्त हैं, उसका खाना हलाल है। अगर दो ही नसें कटीं तो वह जानवर मुर्दार हो गया, उसका खाना दुरूस्त नहीं।

मस्अला 2—ज़िब्ह के वक़्त बिस्मिल्लाह जान–बूझकर कर नहीं कहा, तो वह मुर्दार है और उसका खाना हराम है और अगर भूल जाए तो खाना दुरूस्त है।

मस्अला 3—मुर्दार छुरी से ज़िब्ह करना मकरूह है और मना है। उसमें जानवर को बहुत तक्लीफ़ होती है। इसी तरह ठंडा होने से पहले उसकी खाल खींचना, हाथ–पांव तोड़ना–काटना और इन चारों नसों के कट जाने के बाद भी गला काटे जाना, यह सब मकरूह है।

मस्अला 4—ज़िब्ह करते में मुर्ग़ी का गला कट गया, तो उसका खाना ठीक है, मकरूह भी नहीं, हां, इतना ज़्यादा ज़िब्ह कर देना, यह बात मकरूह है, मुर्ग़ी मकरूह नहीं हुई।

मस्अला 5—मुसलमान का ज़िब्ह करना बहरहाल ठीक है, चाहे औरत ज़िब्ह करे या मर्द, चाहे पाक हो या ना–पाक, हर हाल में उसका ज़िब्ह किया हुआ जानवर खाना हलाल है और काफ़िर का ज़िब्ह किया हुआ जानवर खाना हराम है।

मस्अला 6—जो चीज़ धारदार हो जैसे धारदार पत्थर, गन्ने या बांस का छिल्का। सबसे ज़िब्ह करना ठीक है।

हलाल व हराम चीज़ों का बयान

मस्अला 1—जो जानवर और परिंदे शिकार करके खाते–पीते

रहते हैं या उनका खाना सिर्फ़ गन्दगी है, उनका खाना जायज़ नहीं, जैसे शेर, भेड़िया, गीदड़, बिल्ली, कुत्ता, बंदर, शिक्रा, बाज़, गिध वग़ैरह और जो ऐसे न हों, जैसे तोता, मैना, फाख़्ता, चिड़ा, बटेर, मुर्ग़ाबी, कबूतर, नीलगाय, हिरन, बत्तख, ख़रगोश वग़ैरह सब जानवर जायज़ हैं।

मस्अला 2—बिज्जू, गोह, कछुवा, भिड़, ख़च्चर, गधा, गधी का गोश्त खाना और गधी का दुध पीना ठीक नहीं। घोड़े का खाना जायज़ है लेकिन बेहतर नहीं। दरियायी जानवरों में से सिर्फ़ मछली हलाल है, बाक़ी सब हराम है।

मस्अला 3—मछली और टिड्डी बग़ैर ज़िब्ह किये भी खाना ठीक है। इसके सिवा और कोई जानदार बग़ैर ज़िब्ह किये खाना ठीक नहीं। जब कोई चीज़ मर गयी तो हराम हो गयी।

मस्अला 4—जो मछली मर कर पानी के ऊपर उलटी तैरने लगे, उसका खाना ठीक नहीं।

मस्अला 5—ओझड़ी खाना हलाल है, न हराम है, न मकरूह है।

मस्अला 6—किसी चीज़ में चीटियां मर गयीं तो बग़ैर निकाले खाना जायज़ नहीं, अगर एक आध हलक़ में चली गयी तो मुर्दार खाने का गुनाह हुआ। कुछ बच्चे, बल्कि बड़े भी गूलर के अंदर के भुंगे सहित गूलर खा जाते हैं और यों समझते हैं कि इसके खाने से आंखें नहीं आतीं, वह हराम है। मुर्दार खाने का गुनाह होता है।

मस्अला 7—गोश्त हिन्दू बेचता और यों कहता है कि मैंने मुसलमान से ज़िब्ह कराया है, उससे मोल लेकर खाना ठीक नहीं, हां जिस वक़्त से मुसलमान ने ज़िब्ह किया है, अगर उसी वक़्त से कोई मुसलमान बराबर बैठा देख रहा है, या वह जाने लगा तो दूसरा उसकी जगह बैठ गया, तब ठीक है।

मस्अला 8—जो मुर्ग़ी गंदगी खाती फिरती हो, उसको तीन दिन बंद रखकर ज़िब्ह करना चाहिए, बग़ैर बंद किये खाना मकरूह है।

नशे की चीज़ों का बयान

मस्अला 1—जितनी शराबें हैं, सब हराम और नजिस हैं, ताड़ी का भी यही हुक्म है। दवा के लिए भी इनका खाना–पीना ठीक नहीं बल्कि जिस दवा में ऐसी चीज़ पड़ी हो, उसका लगाना भी ठीक नहीं।

मस्अला 2—शराब के सिवा और जितने नशे हैं, जैसे अफ़ीम, जायफल, ज़ाफ़रान, वग़ैरह, उनका यह हुक्म है कि दवा के लिए इतनी मिक़्दार खा लेना ठीक है कि बिल्कुल नशा न आये और उस दवा का लगाना भी ठीक है, जिसमें ये चीज़ें नहीं हों और इतना खाना कि नशा हो जाए, हराम है।

मस्अला 3—ताड़ी और शराब के सिरका का खाना ठीक है।

मस्अला 4—कुछ औरतें बच्चों को अफ़ीम दे कर लिटा देती हैं कि नशे में पड़े रहें, रोयें–धोयें नहीं, यह हराम है।

चांदी–सोने के बर्तनों का बयान

मस्अला 1—सोने–चांदी के बर्तन में खाना–पीना जायज़ नहीं, बल्कि इन चीज़ों का किसी तरह भी इस्तेमाल करना ठीक नहीं, जैसे सोने–चांदी के चमचे में खाना–पीना, ख़िलाल से दांत साफ़ करना, गुलाब पोश से गुलाब छिड़कना, सुर्मादानी या सलाई से सुर्मा लगाना, इत्रदान से इत्र लगाना, खासदान में पान रखना, इनकी प्याली से तेल लगाना, जिस पलंग के पाए चांदी के हों, उन पर लेटना–बैठना, चांदी–सोने की आरसी में मुंह देखना, यह सब हराम है, हां आरसी का इस्तेमाल ज़ीनत के लिए ठीक है, मगर मुंह कभी न देखे। मतलब यह कि इनकी चीज़ों का किसी तरह भी इस्तेमाल ठीक नहीं।

लिबास और परदे का बयान

मस्अला 1—छोटे लड़कों को कड़े–हंसुली वग़ैरह का ज़ेवर और रेशमी कपड़ा पहनाना, मख़मल पहनाना जायज़ नहीं। इसी तरह रेशमी और चांदी–सोने का तावीज़ बना कर पहनाना और कुसुम और ज़ाफ़रान का रंगा हुआ कपड़ा पहनाना ठीक नहीं, मतलब यह कि जो चीज़ें मर्दों को हराम हैं, वह लड़कों को भी न पहनाना चाहिए, हां अगर किसी कपड़े का बाना सूती हो और ताना रेशमी हो, तो ऐसा कपड़ा लड़कों को पहनना जायज़ है। इसी

तरह अगर किसी मख़मल का रूवां[1] मख़मल का न हो, वह भी ठीक है और यह सब मर्दों को भी ठीक है और गोटा-लचका लगाकर कपड़े पहनना भी ठीक है, लेकिन वह लचका चार उंगली से ज़्यादा चौड़ा न होना चाहिए।

मस्अला 2—सच्ची कामदार टोपी या कोई और कपड़ा लड़कों को उस वक़्त जायज़ है, जब बहुत घना काम न हो। अगर इतना ज़्यादा काम है कि ज़रा दूर से देखने से सब काम काम मालूम होता है कपड़ा बिल्कुल नहीं दिखायी देता, तो उसका पहनाना जायज़ नहीं। यही हाल रेशम के काम का है कि अगर इतना घना हो तो लड़कों को पहनाना जायज़ नहीं।

मस्अला 3—बहुत बारीक कपड़ा जैसे मलमल, जाली, चिक, आबेरवां, इनका पहनना और नंगे रहना दोनों बराबर हैं। हदीस शरीफ़ में आया है, बहुतेरी कपड़ा पहनने वालियां क़ियामत के दिन नंगी समझी जायेंगी और कुरता, दोपट्टा बारीक हों, यह और भी ग़ज़ब है।

मस्अला 4—मर्दाना जूता पहनना और मरदानी शक्ल बनाना जायज़ नहीं। हुज़ूर सल्ल० ने ऐसी औरतों पर लानत फ़रमायी है।

मस्अला 5—औरतों को ज़ेवर पहनना जायज़ है, लेकिन ज़्यादा न पहनना बेहतर है, जिसने दुनिया में न पहना, उसको आख़िरत में बहुत मिलेगा और बजता ज़ेवर पहनना ठीक नहीं जैसे झांझ, छागल, पाज़ेब वग़ैरह और बजता ज़ेवर छोटी लड़की को पहनाना भी जायज़ नहीं। चांदी-सोने के अलावा और किसी चीज़ का ज़ेवर पहनना भी ठीक है जैसे पीतल, गिलट, रांगा वग़ैरह, मगर अंगूठी सोने-चांदी के अलावा और किसी चीज़[1] की ठीक नहीं।

मस्अला 6—औरत को सारा बदन सर से पैर तक छिपाए रखने का हुक्म है, ग़ैर-महरम के सामने खोलना ठीक है, हां बूढ़ी औरत को सिर्फ़ मुंह और हथेली और टख़ने के नीचे पैर तक खोलना ठीक है, बाक़ी और बदन का खुलना किसी तरह ठीक नहीं। माथे पर से अक्सर दोपट्टा सरक जाता है और इसी तरह ग़ैर-महरम के सामने आ जाती हैं, यह जायज़ नहीं। ग़ैर महरम के सामने एक बाल भी न खोलना चाहिए बल्कि जो बाल कंघी में टूटे हैं और कटे हुये नाखुन भी किसी ऐसी जगह डाले कि किसी ग़ैर-महरम

---

1. मर्दों को चांदी के सिवा किसी और चीज़ की अगूंठी भी दुरूस्त नहीं, न सोना, न कोई चीज़ सिर्फ़ चादी की जायज़ है, बशर्ते कि साढ़े चार माशा से कम हो।

की निगाह न पड़े, नहीं तो गुनाहगार होगी। इसी तरह अपने किसी बदन को यानी हाथ–पैर वग़ैरह किसी अंग को ना–महरम मर्द के बदन से लगाना भी ठीक नहीं है।

मस्अला 7—जवान औरत को ग़ैर मर्द के सामने अपना मुंह खोलना दुरूस्त नहीं, न ऐसी जगह खड़ी हो, जहां कहीं दूसरा न देख सके। इससे मालूम हो गया कि नई दुल्हन की मुंह दिखाई की जो रस्म है कि कुंबे के सारे मर्द आकर मुंह देखते हैं, यह हरगिज़ जायज़ नहीं और बड़ा गुनाह है।

मस्अला 8—अपने महरम के सामने मुंह और सीना और सर और बाहें और पिंडली खुल जाए तो कुछ गुनाह नहीं और पेट और पीठ और रान उनके सामने भी न खोलना चाहिए।

मस्अला 9—नाफ़ से लेकर ज़ानू के नीचे तक किसी औरत के सामने भी खोलना दुरूस्त नहीं, यानी कुछ औरतें नंगी सामने नहाती हैं, यह बड़ी बे–ग़ैरती और नाजायज़ बात है। छठी–छिल्ले में नगी करके नहलाना और उस पर मजबूर करना हरगिज़ दुरूस्त नहीं। नाफ़ से ज़ानू तक हरगिज़ बदन को नंगा न करना चाहिए।

मस्अला 10—अगर कोई मजबूरी हो तो ज़रूरत के मुताबिक़ अपना बदन दिखला देना दुरूस्त हैं जैसे रान में फोड़ा है तो सिर्फ़ फोड़े की जगह खोलो, ज़्यादा हरगिज़ न खोलो। इसकी सूरत यह है कि पुराना पाजामा या चादर पहन लो और फोड़े की जगह काट दो या फाड़ दो, उसको डाक्टर देख ले, लेकिन डाक्टर के सिवा और किसी का देखना जायज़ नहीं, न किसी मर्द को, न औरत को। हां अगर नाफ़ और ज़ानू के दर्मियान न हो, कहीं और जगह हो तो औरत को दिखलाना दुरूस्त है। इसी तरह अमल लेते वक़्त ज़रूरत के मुताबिक़ उतना ही खोलना दुरूस्त है, ज़्यादा खोलना दुरूस्त नहीं। यही हुक्म दाई–जनाई का है कि ज़रूरत के वक़्त उसके सामने बदन खोलना दुरूस्त है, लेकिन जितनी ज़रूरत है, उससे ज़्यादा खोलना दुरूस्त नहीं। बच्चा पैदा होने के वक़्त या कोई दवा लेते वक़्त सिर्फ़ उतना ही बदन खोलना चाहिए, बिल्कुल नंगी हो जाना जायज़ नहीं। इसकी शक्ल यह है कि कोई चादर वग़ैरह बंधवा दी जाए और ज़रूरत के मुताबिक़ सिर्फ़ दाई के सामने बदन खोल दिया जाए। रानें वग़ैरह न खुलने पाएं और दाई के सिवा किसी और का बदन देखना दुरूस्त नहीं, बिल्कुल नंगा कर देना और सारी औरतों का सामने बैठकर देखना बिल्कुल हराम है। हज़रत मुहम्मद सल्ल० ने फ़रमाया है कि सत्तर देखने वाली और

दिखाने वाली दोनों पर ख़ुदा की लानत हो। इस क़िस्म के मस्अलों का बहुत ख़्याल रखना चाहिए।

मस्अला 11—हमल वग़ैरह के ज़माने में अगर दाई से पेट मलवाना हो तो नाफ़ के नीचे का बदन खोलना दुरूस्त नहीं, दोपट्टा वग़ैरह डाल लेना चाहिए। बे–ज़रूरत दाई को भी दिखाना जायज़ नहीं। यह जो रस्म है कि पेट मलते वक़्त दाई भी देखती है और दूसरी घर वाली मां–बहन वग़ैरह भी देखती हैं यह जायज़ नहीं।

मस्अला 12—जितने बदन का देखना जायज़ नहीं, वहां हाथ लगाना भी जायज़ नहीं। इसीलिए नहाते वक़्त अगर बदन भी न खोले, तब भी नाइन वग़ैरह से रानें मलवाना दुरूस्त नहीं, चाहे कपड़े के अंदर हाथ डाल कर मले, हां, अगर नाइन अपने हाथ में केसा पहनकर कपड़े के अंदर हाथ डाल कर मले, तो जायज़ है।

मस्अला 13—काफ़िर औरतें जैसे अहीरिन, तंबोलिन, तेलिन, कोलिन, धोबिन, भंगिन, चमारिन वग़ैरह जो घरों में आ जाती हैं, इनका हुक्म यह है कि जितना पर्दा ना–महरम मर्द से है, उतना ही उन औरतों से भी वाजिब है, सिवाए मुंह और गट्टे तक हाथ और टख़ने तक पैर के किसी एक बाल का खोलना भी दुरूस्त नहीं। इस मस्अले को ख़ूब याद रखो। सब औरतें इसके ख़िलाफ़ करती हैं, मतलब यह है कि सर, सारा हाथ और पिंडली उनके सामने मत खोलो और इससे यह भी समझ लो कि अगर दाई–जनाई हिन्दू या मेम हो तो बच्चा पैदा होने की जगह उसको दिखलाना दुरूस्त है और सर वग़ैरह और अंग उसके सामने खोलना दुरूस्त नहीं।

मस्अला 14—अपने शौहर से किसी जगह का परदा नहीं है, तुमको उसके सामने और उसको तुम्हारे सामने सारे बदन का खोलना दुरूस्त है, मगर बे–ज़रूरत ऐसा करना अच्छा नहीं।

मस्अला 15—जिस तरह ख़ुद मर्दों के सामने आना और बदन खोलना दुरूस्त नहीं, उसी तरह से ताक–झांक के मर्दों को देखना भी दुरूस्त नहीं। औरतें यों समझती हैं कि मर्द हमको न देखें, हम उनको देख लें तो कुछ नहीं, यब बिल्कुल ग़लत है। किवाड़ की दराज़ से या कोठे पर से मर्दों को देखना, दूल्हा के सामने आ जाना या किसी तरह दूल्हा को देखना यह सब ना जायज़ है।

मस्अला 16—ना महरम के साथ अकेली जगह बैठना, लेटना

दुरूस्त नहीं, चाहे दोनों अलग–अलग और कुछ दूरी पर हों, तब भी जायज़ नहीं।

मस्अला 17—अपने पीर के सामने आना ऐसा ही है जैसे किसी ग़ैर महरम के सामने आना, इसलिए यह भी जायज़ नहीं। इस तरह से लयपालक लड़का बिल्कुल ग़ैर होता है। लड़का बनाने से सचमुच लड़का नहीं बन जाता, सब को उससे वही बर्ताव करना चाहिए, जो बिल्कुल ग़ैरों के साथ किया जाता है। इसी तरह जो ना महरम रिश्तेदार हैं, जैसे देवर जेठ, बहनोई, ननदोई, चचेरे, फुफेरे और ममेरे भाई वग़ैरह, ये सब शरीअत से ग़ैर हैं, सबसे गहरा परदा होना चाहिए।

मस्अला 18—हिजड़े, ख़ोजे, अंधे के सामने आना भी जायज़ नहीं।

मस्अला 19—कुछ औरतें मनिहार से चूड़ियां पहनती हैं, यह बड़ी बेहूदा बात है, बल्कि जो औरतें बाहर फिरती हैं, उनको भी उससे चूड़ियां पहनना जायज़ नहीं।

कुछ और मस्अले

मस्अला 1—हर हफ़्ते नहा–धोकर नाफ़ से नीचे और बग़ल वग़ैरह के बाल दूर करके बदन को साफ़–सुथरा करना मुस्तहब है। हर हफ़्ते न हो तो पंद्रहवें दिन सही, ज़्यादा से ज़्यादा चालीस दिन, इससे ज़्यादा की इजाज़त नहीं। अगर चालीस दिन गुज़र गये और बाल साफ़ न किये तो गुनाह हुआ।

मस्अला 2—अपने मां–बाप शौहर वग़ैरह का नाम लेकर पुकारना मक्रूह और मना है क्योंकि इसमें बे–अदबी है, लेकिन ज़रूरत के वक़्त जिस तरह मां–बाप का नाम लेना ठीक है, उसी तरह शौहर का नाम लेना भी दुरूस्त है। इसी तरह उठते–बैठते, बात–चीत, हर बात में अदब का ध्यान रखना चाहिए।

मस्अला 3—किसी जानदार चीज़ को आग से जलाना ठीक नहीं, जैसे भिड़ों को फूंकना, खटमल वग़ैरह पकड़कर आग में डाल देना यह सब ना–जायज़ है। हां, अगर मजबूरी हो कि बग़ैर फूंके काम न चले तो भिड़ों को फूंक देना या चारपाई से खौलता पानी डाल देना ठीक है।

मस्अला 4—किसी बात की शर्त बांधना जायज़ नहीं जैसे कोई कहे सेर भर मिठाई खा जाओ तो हम एक रूपया देंगे। अगर न खा सकते

हो तो एक रूपया तुमसे ले लेंगे। ग़रज़ जब दोनों तरफ़ से शर्त हो तो जायज़ नहीं, हां, अगर एक ही तरफ़ से हो तो दुरूस्त है।

मस्अला 5—जब कोई दो आदमी चुपके-चुपके बातें करते हों तो, उनके पास न जाना चाहिए। छिप के उनको सुनना बड़ा गुनाह है। हदीस शरीफ़ में आया है, जो कोई दूसरों की बात की तरफ़ कान लगाये और उनको ना-पसंद हो तो क़ियामत के दिन उसके कान में गर्म सीसा डाला जायेगा। इससे मालूम हुआ कि ब्याह-शादी में दूल्हा-दुल्हन की बातें सुनना-देखना बहुत बड़ा गुनाह है।

मस्अला 6—शौहर के साथ जो बातें हुई हों, जो कुछ मामला पेश आया हो, किसी और से कहना बड़ा गुनाह है। हदीस शरीफ़ में आया है कि इन भेदों के बतलाने वाले पर सबसे ज़्यादा अल्लाह तआला का गुस्सा और ग़ज़ब नाज़िल होता है।

मस्अला 7—इस तरह किसी के साथ हंसी और चुहल करना कि उसको ना-गवार हो और तकलीफ़ हो, दुरूस्त नहीं। आदमी वहीं तक गुदगुदाये, जहां तक हंसी आये।

मस्अला 8—मुसीबत के वक़्त मौत की तमन्ना करना अपने को कोसना दुरूस्त नहीं।

मस्अला 9—पचीसी, चौसर, ताश वग़ैरह खेलना दुरूस्त नहीं है और अगर बाज़ी बढ़कर खेले जो यह खुला जुआ और हराम है।

मस्अला 10—जब लड़का-लड़की दस वर्ष के हो जाएं तो लड़कों को मां-बाप, भाई-बहन वग़ैरह के पास और लड़कियों को भाई और बाप के पास लिटाना दुरूस्त नहीं, हां लड़का अगर बाप के पास और लड़की मां के पास लेटे तो जायज़ है।

मस्अला 11—जब किसी को छींक आये तो 'अल-हम्दुलिल्लाह' कह लेना बेहतर है और जब अल-हम्दुलिल्लाह कह लिया तो सुनने वाले को उसके जवाब में यर्हमुकल्लाह कहना वाजिब है, न कहेगी तो गुनाहगार होगी। और यह भी ख़्याल रखो कि अगर छींकने वाली औरत या लड़की है तो क पर इ की मात्रा लगाओ और अगर मर्द या लड़का है तो ऐसा ही रहने दो। फिर छींकने वाली इसके जवाब में कहे—'यग़्फ़िरूल्लाहु लना व लकुम', लेकिन छींकने वाली के ज़िम्मे यह जवाब वाजिब नहीं बल्कि बेहतर है।

मस्अला 12—छींक के बाद 'अल-हम्दुलिल्लाह' कहते कई आदमियों ने सुना तो सब को यर्हमुकल्लाह' कहना वाजिब नहीं कि उनमें से एक कह

दे तो सबकी तरफ़ से अदा हो जायेगा, लेकिन अगर किसी ने जवाब न दिया तो सब गुनाहगार होंगे।

मस्अला 13—अगर कोई बार–बार छींके और 'अल–हम्दुलिल्लाह कहे तो सिर्फ़ तीन बार यर्हमुकल्लाह कहना वाजिब है, इसके बाद वाजिब नहीं।

मस्अला 14—जब कोई हुज़ूर सल्ल० का मुबारक नाम ले या पढ़े या सुने तो दरूद शरीफ़ पढ़ना वाजिब हो जाता है। अगर न पढ़ा तो गुनाह हुआ, लेकिन अगर एक ही जगह कई बार नाम लिया तो हर बार दरूद शरीफ़ पढ़ना वाजिब नहीं। एक बार हो पढ़ लेना काफ़ी है, हां, अगर जगह बदल जाने के बाद फिर नाम लिया या सुना तो फिर दरूद पढ़ना वाजिब हो गया।

मस्अला 15—बच्चों की बाबरी वग़ैरह बनवाना जायज़ नहीं या तो सारा सर मुंडवा दो या सारे सिर पर बाल रखवाओ।

मस्अला 16—इत्र वग़ैरह किसी ख़ुश्बू में अपने कपड़े बसाना, इस तरह कि ग़ैर मर्दों तक उसकी खुश्बू जाये, दुरूस्त नहीं।

मस्अला 17—नाजायज़ लिबास का सी कर देना भी जायज़ नहीं, जैसे शौहर ऐसा कपड़ा सिलवादे जो उसको पहनना जायज़ नहीं, तो उज़्र कर दे, इसी तरह दर्ज़िन सिलाई पर ऐसा कपड़ा न सिले।

मस्अला 18—झूठे क़िस्से, बे–सनद हदीसें जो जाहिलों ने किताबों में लिख दी हैं और ऊंची किताबों में उनका कहीं सबूत नहीं, जैसे नूर नामा वग़ैरह और इश्क़ व आशिक़ी की किताबें देखना और पढ़ना जायज़ नहीं। इसी तरह ग़ज़ल और क़सीदों की किताबें ख़ास कर आजकल के नावल औरतों को हरगिज़ न देखने चाहिए। इनका ख़रीदना भी जायज़ नहीं। अगर अपनी लड़कियों के पास देखो तो जला दो।

मस्अला 19—औरतों में भी 'अस्सलामु अलैकुम' और मुसाफ़ा करना सुन्नत है, इसको रिवाज देना चाहिए, आपस में किया करो।

मस्अला 20—जहां तुम मेहमान जाओ, किसी फ़क़ीर वग़ैरह को रोटी खाना मत दो। बग़ैर उसके पूछे, इजाज़त लिए देना गुनाह है।

कोई चीज़ पड़ी पाने का बयान

मस्अला 1—कहीं रास्ते-गली में, बीबियों में, महफ़िल में या अपने यहां कोई मेहमान दारी हुई थी, या वाज़ कहलवाया था, सबके जाने के बाद कुछ मिला या और कहीं कोई चीज़ पड़ी पायी, तो उसको खुद ले लेना ठीक नहीं, हराम है, अगर उठाये तो इस नीयत से उठाये कि उसके मालिक को खोज करके दे दूंगी।

मस्अला 2—अगर कोई चीज़ पाये और उसको न उठाया, तो कोई गुनाह नहीं, लेकिन अगर यह डर हो कि अगर मैं न उठाऊंगी तो कोई और ले लेगा और जिसकी चीज़ है, उसको न मिलेगी, तो उसका उठा लेना और मालिक को पहुंचा देना वाजिब है।

मस्अला 3—जब किसी ने पडी हुई चीज़ उठायी तो अब मालिक का खोजना और खोज करके दे देना उसके ज़िम्मे होगा। अब अगर फिर वहीं डाल दिया या उठा कर अपने घर लायी, लेकिन मालिक को नहीं खोजा तो गुनाहगार हुई, चाहे ऐसी जगह पड़ी हो कि उठाना उसके ज़िम्मे वाजिब नहीं था यानी किसी हिफ़ाज़त की जगह पड़ी थी कि ख़त्म होने का डर नहीं था या ऐसी जगह हो कि उठा लेना वाजिब है। दोनों का यही हुक्म है। उठा लेने के बाद मालिक को खोज करके पहुंचाना वाजिब हो जाता है, फिर कहीं डाल देना जायज़ नहीं।

मस्अला 4—महफ़िलों में और मर्दों–औरतों के जमाव–जमघट में ख़ूब पुकार कर खोजें अगर मर्दों में खुद न जा सके तो अपने मियां वग़ैरह किसी और से पुकारवाये और ख़ूब मश्हूर करा दे, हमने एक चीज़ पायी है, जिसकी हो, आकर हम से ले ले, लेकिन यह ठीक पता न दे कि क्या चीज़ पायी है ताकि कोई धोखा–देही करके न ले ले, हां, कुछ गोल–मोल अधूरा पता बतला देना चाहिए, जैसे यह कि एक ज़ेवर है या एक कपड़ा है, या एक बटुवा है जिसमें कुछ नक़द है, अगर कोई आये तो अपनी चीज़ का ठीक–ठीक पता दे तो उसके हवाले कर देना चाहिए।

मस्अला 5—बहुत ख़ोजने और मश्हूर करने के बाद जब बिल्कुल निराशा हो जाये कि अब इसका कोई वारिस न मिलेगा तो उस चीज़ को ख़ैरात कर दे, अपने पास न रखे। हां अगर वह खुद ग़रीब व मुहताज हो तो खुद ही अपने काम में लाये, लेकिन ख़ैरात करने के बाद अगर उसका

मालिक आ गया तो उसके दाम ले सकता है और अगर ख़ैरात करने को मंज़ूर कर लिया तो उसको ख़ैरात का सवाब मिल जायेगा।

मस्अला 6—पालतू कबूतर, तोता, मैना या और कोई चिड़िया उसके घर पर गिर पड़ी और उसने उसको पकड़ लिया तो मालिक को खोज करके पहुंचाना वाजिब हो गया, खुद ले लेना हराम है।

मस्अला 7—बाग़ में आम या अमरूद वग़ैरह पड़े हैं तो उनको बे–इजाज़त उठाना और खाना हराम है, हां अगर कोई ऐसी कम–क़ीमत चीज़ है कि ऐसी चीज़ को कोई नहीं खोजता और न उसके लेने–खाने से कोई बुरा मानता है, उसको ख़र्च में लाना दुरूस्त है, जैसे राह में एक बेर पड़ा मिला या एक मुट्ठी चने के बूंटे मिले।

मस्अला 8—किसी मकान या जंगल में ख़ज़ाना या कुछ गड़ा हुआ माल निकल आया तो इसका भी वही हुक्म है जो पड़ी हुई चीज़ का है, खुद ले लेना जायज़ नहीं, खोज की कोशिश करने के बाद अगर मालिक[1] का पता न चले तो उसको ख़ैरात कर दे और ग़रीब हो तो खुद भी ले सकती है।

वक़्फ़ का बयान

मस्अला 1—अपनी कोई जायदाद जैसे मकान, बाग़, गांव वग़ैरह खुदा की राह में फ़क़ीरों, ग़रीबों, मिस्कीनों के लिए वक़्फ़ कर दिया कि इस गांव की तमाम आमदनी मुहताजों पर ख़र्च कर दी जाए या बाग़ के सब फल–फूल ग़रीबों को दे दिए जाएं, इस मकान में मिस्कीन लोग रहा करें, किसी और के काम न आये तो इसका बड़ा सवाब है। जितने नेक काम हैं, मरने से बद हो जाते हैं, लेकिन यह ऐसा नेक काम है कि जब तक फ़क़ीरों को राहत और नफ़ा मिलता रहेगा, बराबर आमाल नामे में सवाब लिखा जाएगा।

मस्अला 2—अगर कोई अपनी चीज़ वक़्फ़ कर दे तो किसी नेक–बख़्त और ईमानदार आदमी के सुपुर्द कर दे कि वह उसकी देख–भाल

---

1. मगर चाहे ख़ुद ले या दूसरे का ख़ैरात करे, अगर मालिक आकर उस ख़ैरात करने पर या उसके रख लेने को राज़ी न हो तो उसको अपने पास से वह चीज़ देनी पड़ेगी।

करे कि जिस काम के लिए वक़्फ़ किया है, उसी में ख़र्च हुआ करे, कहीं बे-जा ख़र्च न होने पायें।

मस्अला 3—जिस चीज़ को वक़्फ़ कर दिया, अब वह चीज़ उसकी नहीं रही, अल्लाह तआला की हो गयी, अब उसको बेचना, किसी को देना दुरूस्त नहीं, अब उसमें कोई आदमी अपना दख़ल नहीं दे सकता। जिस बात के लिए वक़्फ़ है, वही काम उससे लिया जायेगा और कुछ नहीं हो सकता।

मस्अला 4—मस्जिद की कोई चीज़ जैसे ईंट, चूना, गारा, लकड़ी पत्थर वग़ैरह कोई चीज़ अपने काम में लाना दुरूस्त नहीं, चाहे कितनी ही बेकार हो गयी हो लेकिन घर के काम में न लाना चाहिए बल्कि उसको बेच कर मस्जिद ही के ख़र्च में लगा देना चाहिए।

मस्अला 5—वक़्फ़ में यह शर्त ठहरा लेना भी दुरूस्त है कि जब तक मैं ज़िंदा हूं, इस वक़्फ़ की आमदनी चाहे सब की सब या इसकी तिहाई अपने ख़र्च में लाया करूंगी, फिर मेरे बाद फ़्ला नेक जगह ख़र्च हुआ करे। अगर यों कह लिया तो उतनी आमदनी उसको ले लेना जायज़ है और हलाल है और यह बड़ा आसान तरीक़ा है कि इसमें अपने आपको भी किसी तरह की तक्लीफ़ और तंगी होने का डर नहीं और जायदाद भी वक़्फ़ हो गयी। इयी तरह अगर यों शर्त कर दे कि इसकी आमदनी से मेरी औलाद को इतना दे दिया जाया करे फिर जो बचे, वह इस नेक जगह में ख़र्च हो जाये, यह भी दुरूस्त है और औलाद को इतना दे दिया जाए।

(भाग-4)

बहिश्ती ज़ेवर

हज़रत मौलाना अशरफ़ अली थानवी (रह०)

विषय सूची

निकाह का बयान

मस्अला 1— निकाह भी अल्लाह अल्लाह तआला की बड़ी नेमत है। दुनिया और दीन दोनों के काम इससे दुरुस्त हो जाते हैं और इसमें बहुत से फ़ायदे और बे–इंतिहा मस्लहतें हैं। आदमी गुनाह से बचता है, दिल ठिकाने हो जाता है, नीयत ख़राब और डांवाडोल नहीं होने पाती और बड़ी बात यह है कि फ़ायदा का फ़ायदा और सवाब को सवाब, क्योंकि मियां–बीवी का पास बैठकर मुहब्बत–प्यार की बातें करना, हंसी–दिल्लगी में दिल बहलाना, नफ़्ल नमाज़ों से भी बेहतर है।

मस्अला 2—निकाह सिर्फ़ दो शब्दों में बंध जाता है जैसे किसी ने गवाहों के सामने कहा, मैंने अपनी लड़की का विवाह तुम्हारे साथ किया। उसने कहा, मैंने क़ुबूल किया, पस निकाह बंध गया और दोनों मियां–बीवी हो गये। हां, अगर उसकी कई लड़कियां हों, तो सिर्फ़ इतना कहने से निकाह न होगा, बल्कि नाम लेकर यों कहे कि मैंने अपनी कुदसिया का निकाह तुम्हारो साथ किया। वह कहे मैंने क़ुबूल किया।

मस्अला 3—किसी ने कहा अपनी फ़लानी लड़की का निकाह मेरे साथ कर दो। उसने कहा, मैंने इसका निकाह तुम्हारे साथ कर दिया तो निकाह हो गया, चाहे फिर वह यों कहे कि मैंने क़ुबूल किया या न कहे,

निकाह हो गया।

मसअला 4—अगर खुद औरत वहां मौजूद हो और इशारे करके यों कह दे कि मैंने इसका निकाह तुम्हारे साथ किया, वह कहे मैंने क़ुबूल किया, तब भी निकाह हो गया, नाम लेने की ज़रूरत नहीं और अगर वह खुद मौजूद न हो तो इसका भी नाम ले और इसके बाप का भी नाम ले, इतने ज़ोर से कि गवाह लोग सुन लेवें और अगर बाप को भी लोग न जानते हों और सिर्फ़ बाप के नाम लेने से मालूम न हो कि किसका निकाह किया जाता है तो दादा का नाम लेना भी ज़रूरी है। मतलब यह है कि ऐसा पता बताना चाहिए कि सुनने वाले समझ लें कि फ़लानी का निकाह हो रहा है।

मसअला 5—निकाह होने के लिए यह भी शर्त है कि कम से कम दो मर्दों के या एक मर्द और दो औरतों के सामने किया जाये और वे लोग अपने कानों से निकाह होते और वे दोनों लफ़्ज़ कहते सुनें तब निकाह हो गया। अगर अकेले में एक ने कहा, मैंने अपनी लड़की का निकाह तुम्हारे साथ किया। दूसरे ने कहा मैंने क़ुबूल किया, तो निकाह नहीं हुआ। इसी तरह अगर सिर्फ़ एक आदमी के सामने निकाह किया, तब भी नहीं हुआ।

मसअला 6—अगर मर्द कोई नहीं, सिर्फ़ औरतें ही औरतें हों, तब भी निकाह दुरूस्त नहीं है दस–बारह क्यों न हों। दो औरतों के साथ एक मर्द होना चाहिए।

मसअला 7—अगर दो मर्द तो हैं लेकिन मुसलमान नहीं, तो भी निकाह नहीं हुआ। इसी तरह अगर मुसलमान तो हैं लेकिन वे दोनों या उनमें से अभी एक जवान नहीं हुआ, तब भी दुरूस्त नहीं। इसी तरह अगर एक मर्द और दो औरतों के सामने निकाह हुआ, लेकिन वे औरतें अभी जवान नहीं हुई या उनमें अभी एक जवान नहीं हुई है, तब भी निकाह सही नहीं हुआ।

मसअला 8—बेहतर यह है कि बड़े मजमे में निकाह किया जाए, जैसे नमाज़े जुमा के बाद जामा मस्जिद में या और कहीं ताकि निकाह को आम तौर से लोग जान जाएं और छिप–छिपा के निकाह न करे। लेकिन अगर कोई ऐसी ज़रूरत पड़ गयी कि बहुत आदमी न जा सकें, तो कम से कम दो मर्द या एक दो औरतें ज़रूर मौजूद हों जो अपने कानों से निकाह होते सुनें।

मसअला 9—अगर मर्द भी जवान है और औरत भी जवान है तो वे दोनों अपना निकाह खुद कर सकते हैं। दो गवाह के सामने एक कह दे कि

मैंने अपना निकाह तेरे से किया। दूसरा कहे मैंने कुबूल किया, बस निकाह हो गया।

मस्अला 10—अगर किसी ने अपना निकाह ख़ुद नहीं किया, बल्कि किसी से कह दिया कि तुम मेरा निकाह किसी से कर दो या यों कहा कि मेरा निकाह फ़लाने से कर दो और उसके दो गवाहों के सामने कर दिया तब भी निकाह हो गया। अब अगर वह इंकार भी करे, तब भी कुछ नहीं हो सकता।

जिन लोगों से निकाह करना हराम है,

उनका बयान

मस्अला 1—अपनी औलाद के साथ और पोते–परपोते और नवासे वग़ैरह के साथ निकाह दुरूस्त नहीं और बाप–दादा, पर दादा, नाना पर नाना, वग़ैरह से भी दुरूस्त नहीं।

मस्अला 2—अपने भाई और मामूं और चचा और भतीजे और भांजे के साथ निकाह दुरूस्त नहीं और शरअ में भाई वह है जो एक मां–बाप से हो या उन दोनों का बाप एक हो और मां दो हों या उन दोनों की मां एक हो और बाप दो हों। ये सब भाई हैं और जिसका बाप भी अलग हो और मां भी अलग हो, वह भाई नहीं, उससे निकाह दुरूस्त है।

मस्अला 3—दामाद के साथ भी निकाह दुरूस्त नहीं है चाहे लड़की की रूख़्सती हो चुकी हो और दोनों मियां–बीवी एक साथ रहे हों या अभी रूख़्सती न हुई हो, हर तरह निकाह हराम है।

मस्अला 4—किसी का बाप मर गया हो और मां ने दूसरा निकाह किया लेकिन मां अभी उसके पास रहने न पायी थी कि मर गयी या उसने तलाक़ दे दी तो उस सौतेले बाप से निकाह करना दुरूस्त है। हां अगर मां उसके पास रह चुकी हो तो इससे निकाह दुरूस्त नहीं।

मस्अला 5—सौतेली औलाद से निकाह दुरूस्त नहीं यानी एक मर्द की कई बीवियां हैं तो सौत की औलाद से किसी तरह निकाह दुरूस्त नहीं, चाहे अपने मियां के पास रह चुकी हो या न रही हो, हर तरह निकाह हराम है।

मस्‌अला 6—ससुर और ससुर के बाप–दादा के साथ भी निकाह दुरूस्त नहीं।

मस्‌अला 7—जब तक अपनी बहन निकाह में रहे, तब तक निकाह बहनोई से दुरूस्त नहीं, हां अगर बहन मर गयी या उसने छोड़ दिया और इद्दत पूरी हो चुकी हो तो अब बहनोई से निकाह दुरूस्त है और तलाक़ की इद्दत पूरी होने से पहले निकाह दुरूस्त नहीं।

मस्‌अला 8—अगर दोनों बहनों ने एक ही मर्द से निकाह किया तो जिसका निकाह पहले हुआ वह सही है जिसका बाद में किया गया वह नहीं हुआ।

मस्‌अला 9—एक औरत का निकाह एक मर्द से हुआ तो अब जब तक वह औरत उसके निकाह में रहे, तो उसकी फूफी और उसकी ख़ाला और भांजी और भतीजी का निकाह उस मर्द से नहीं हो सकता।

मस्‌अला 10—जिन दो औरतों में ऐसा रिश्ता हो कि अगर इन दोनों में कोई मर्द हो तो आपस में दोनों का निकाह न हो सकता, ऐसी दो औरतें एक साथ एक मर्द के निकाह में नहीं रह सकतीं। जब एक मर जाए या तलाक़ मिल जाए और इद्दत गुज़र जाये तब दूसरी औरत उस मर्द से निकाह करे।

मस्‌अला 11—एक औरत है और उसकी सौतेली लड़की है। ये दोनों एक साथ अगर किसी मर्द से निकाह कर लें तो दुरूस्त है।

मस्‌अला 12—लय–पालक का शरअ में कुछ एतबार नहीं। लड़का बनाने से सचमुच वह लड़का नहीं हो जाता, इसलिए लय–पालक से निकाह कर लेना दुरूस्त है।

मस्‌अला 13—सगा मामू नहीं है, बल्कि किसी रिश्ते से मामूं लगता है तो उससे निकाह दुरूस्त है। इसी तरह अगर किसी दूर के रिश्ते से चचा या भांजा या भतीजा होता हो, उससे भी निकाह दुरूस्त है। ऐसे अगर अपना भाई नहीं है बल्कि चचाज़ाद भाई है या मामूंज़ाद, फूफी ज़ाद ख़ालाज़ाद भाई है, उससे भी निकाह दुरूस्त है।

मस्‌अला 14—इसी तरह दो बहनें अगर सगी न हों, मामूंज़ाद चचाज़ाद या फूफीज़ाद या ख़ालाज़ाद बहनें हों तो एक साथ ही एक मर्द से निकाह कर सकती हैं। ऐसी बहन के रहने में भी बहनोई से निकाह दुरूस्त है, यही हाल फूफी और ख़ाला वग़ैरह का है। अगर कोई दूर का रिश्ता निकलता हो तो फूफी भतीजी और ख़ाला–भांजी का एक साथ ही एक मर्द

से निकाह दुरूस्त है।

मस्अला 15—जितने रिश्ते नसब के एतबार से हराम हैं वे रिश्ते दूध पीने के ऐतबार से भी हराम हैं यानी दूध पिलाने वाली के शौहर से निकाह दुरूस्त नहीं, क्योंकि वह उसका बाप हुआ और दूध शरीकी भाई से निकाह दुरूस्त नहीं, जिसको उसने दूध पिलाया है, उससे और उसकी औलाद से निकाह दुरूस्त नहीं, क्योंकि वह उसकी औलाद हुई। दूध के हिसाब से मामूं भांजा, चचा, भतीजा सबसे निकाह हराम है।

मस्अला 16—दूध शरीकी दो बहनें हों तो वे दोनों एक साथ एक मर्द के निकाह में नहीं रह सकतीं। ग़रज़ यह कि जो हुक्म ऊपर बयान हो चुका है, दूध के रिश्तों में भी वह ही हुक्म है।

मस्अला 17—किसी मर्द ने किसी औरत से निकाह किया तो अब उस औरत की मां और उस औरत की औलाद को उस मर्द से निकाह दुरूस्त नहीं।

मस्अला 18—किसी औरत ने जवानी की ख़्वाहिश के साथ बद-नीयती से किसी मर्द को हाथ लगाया तो अब उस औरत की मां और औलाद को उस मर्द से निकाह करना जायज़ नहीं। इसी तरह अगर मर्द ने किसी औरत को हाथ लगाया तो वह मर्द उसकी मां और औलाद पर हराम हो गयी।

मस्अला 19—रात को अपनी बीवी को जगाने के लिए उठा, मगर ग़लती से लड़की पर हाथ पड़ गया या सास पर हाथ पड़ गया और बीवी समझकर जवानी की ख़्वाहिश के साथ उसको हाथ लगाया, तो अब वह मर्द अपनी बीवी पर हमेशा के लिए हराम हो गया। अब कोई शक्ल जायज़ होने की नहीं है और ज़रूरी है कि यह मर्द उस औरत को तलाक़ दे दे।

मस्अला 20—किसी लड़के ने अपनी सौतेली मां पर बद-नीयती से हाथ डाल दिया तो अब वह औरत अपने शौहर पर बिल्कुल हराम हो गयी। अब किसी सूरत से हलाल नहीं हो सकती और अगर उस सौतेली मां ने सौतेले लड़के के साथ ऐसा किया, तब भी यही हुक्म है।

मस्अला 21—मुसलमान औरत का निकाह मुसलमान के सिवा किसी और मज़हब वाले मर्द से दुरूस्त नहीं।

मस्अला 22—किसी औरत के मियां ने तलाक़ दे दी या वह मर गया। जब तक तलाक़ की इद्दत या मरने की इद्दत पूरी न हो चुके, तब तक दूसरे मर्द से निकाह करना दुरूस्त नहीं है।

मस्अला 23—जिस औरत का निकाह किसी मर्द से हो चुका हो

तो अब बे-तलाक लिए और इद्दत पूरी किये दूसरे से निकाह करना दुरुस्त नहीं।

मस्अला 24—जिस औरत के शौहर न हो और उसको बदकारी से हमल हो, उसका निकाह भी दुरुस्त है, लेकिन बच्चा पैदा होने से पहले सोहबत करना दुरुस्त नहीं। हां, जिसने ज़िना किया था, अगर उसी से निकाह हो तो सोहबत भी ठीक है।

मस्अला 25—जिस मर्द के निकाह में चार औरतें हों, अब उससे पांचवीं औरत का निकाह दुरुस्त नहीं और उन चार में से अगर उसने एक को तलाक दे दी तो जब तक तलाक़ की इद्दत पूरी न हो चुके, कोई और औरत उससे निकाह नहीं कर सकती।

मस्अला 26—सुन्नी लड़की का निकाह शीआ मर्द के साथ बहुत से आलिमों के फ़तवे से दुरुस्त नहीं।

वली का बयान

लड़की और लड़के के निकाह करने का जिसको अख़्तियार होता है, उसको वली कहते हैं।

मस्अला 1—लड़की और लड़के का वली सबसे पहले उसका बाप है। अगर बाप न हो तो दादा, वह न हो तो परदादा। अगर ये लोग कोई न हों तो सगा भाई। अगर सगा भाई न हो तो सौतेला यानी बाप शरीक भाई, फिर भतीजा, फिर भतीजे का लड़का, फिर भतीजे का पोता। ये लोग न हों तो सगा चचा, फिर सौतेला चचा यानी बाप का सौतेला भाई, फिर सगो चचा का लड़का, फिर उसका पोता, फिर सौतेले चचा और उसके लड़के, पोते, पड़पोते वग़ैरह। ये कोई न हों तो बाप का चचा, फिर उसकी औलाद। अगर बाप का चचा और उसके लड़के, पोते-पड़-पोते कोई न हों तो दादा का चचा, फिर उसके लड़के, फिर पोते, फिर पड़-पोते वग़ैरह। यह कोई न हो तो मां वली है, फिर दादी, फिर नानी, फिर सगी बहन, फिर सौतेली बहन, जो बाप शरीक हो, फिर जो भाई-बहन मां शरीक हों, फिर फूफी, फिर मामूं, फिर ख़ाला वग़ैरह।

मस्अला 2—ना-बालिग़ शख़्स किसी का वली नहीं हो सकता और काफ़िर किसी मुसलमान का वली नहीं हो सकता और मजनून-पागल भी किसी का वली नहीं है।

मस्अला 3—बालिग़ यानी जवान औरत आज़ाद है चाहे निकाह करे चाहे न करे और जिसके साथ चाहे करे कोई आदमी उस पर ज़बरदस्ती नहीं कर सकता। अगर वह ख़ुद अपना निकाह किसी से करे तो निकाह हो जायेगा। चाहे वली को ख़बर हो या न हो और वली चाहे ख़ुश हो या न हो, हर तरह निकाह दुरुस्त हैं हां, बे-मेल वाले और अपने से कम ज़ात वाले से निकाह कर लिया और वली ख़श है, फ़तवा इस पर है कि निकाह दुरुस्त न होगा और अगर निकाह तो अपने मेल ही में किया, लेकिन जितना मह्र उस ददिहाली ख़ानदान में बांधा जाता है, जिसको शरीअत में मह्र मिस्ल कहते हैं उससे बहुत कम पर निकाह कर लिया, तो इन सूरतों में निकाह हो तो गया, लेकिन उसका वली उस निकाह को तोड़वा सकता है, मुसलमान हाकिम के पास फ़रियाद कर सकता है। यह निकाह तोड़ दे लेकिन इस फ़रियाद का हक़ उस वली को है जिसका ज़िक्र मां से पहले आया है यानी बाप से लेकर दादा के चचा के बेटों-पोतों तक।

मस्अला 4—किसी वली ने जवान लड़की का निकाह उसके पूछे और इजाज़त लिए बग़ैर कर दिया तो वह निकाह उसकी इजाज़त पर है। अगर वह लड़की इजाज़त दे तो निकाह हो गया और अगर वह राज़ी न हो और इजाज़त न दे तो नहीं हुआ और इजाज़त का तरीक़ा आगे आता है।

मस्अला 5—जवान कुंवारी लड़की से वली ने आकर कहा कि मैं तुम्हारा निकाह फ़लाने के साथ किये देता हूं उस पर वह चुप हो रही या मुस्करा दी या रोने लगी तो बस यही इजाज़त है। अब वह वली निकाह कर दे तो सही हो जायेगा या कर चुका था तो सही हो गया। यह बात नहीं कि जब जुबान से कहे तब ही इजाज़त समझी जाये। जो लोग ज़बरदस्ती करके जुबान से क़ुबूल कराते हैं, बुरा करते हैं।

मस्अला 6—वली ने इजाज़त लेते वक़्त शौहर का नाम नहीं लिया न उसको पहले से मालूम था तो ऐसे वक़्त चुप रहने से रज़ामंदी साबित होगी और इजाज़त न समझेंगे, बल्कि नाम व निशान बतलाना ज़रूरी है, कि लड़की इतना समझ जाये कि यह फ़लां शख़्स है। इसी तरह अगर यह नहीं बतलाया और मह्रे मिस्ल के बहुत कम पर निकाह पढ़ दिया तो औरत की इजाज़त के बग़ैर निकाह न होगा, इसलिए क़ायदे के मुताबिक़ फिर इजाज़त लेनी चाहिए।

मस्अला 7—अगर वह लड़की कुंवारी नहीं है, बल्कि एक निकाह पहले हो चुका है, यह दूसरा निकाह है, उससे उसके वली ने इजाज़त ली

और पूछा तो सिर्फ़ चुप रहने से इजाज़त न होगी, बल्कि ज़ुबान से कहना चाहिए। अगर उसने ज़ुबान से नहीं कहा, सिर्फ़ चुप रहने की वजह से वली ने निकाह कर दिया, तो निकाह रूका रहा, बाद में अगर वह ज़ुबान से मंज़ूर कर ले तो निकाह हो गया और अगर मंज़ूर न करे तो नहीं हुआ।

मस्अला 8—बाप के होते हुए चचा या भाई वग़ैरह किसी और वली ने कुंवारी लड़की से इजाज़त मांगी, तो सिर्फ़ चुप रहने से इजाज़त न होगी, बल्कि ज़ुबान से इजाज़त दे, तब इजाज़त होगी हां, अगर बाप ही ने उनको इजाज़त लेने के लिए भेजा हो तो सिर्फ़ चुप रहने से इजाज़त हो जायेगी। मतलब यह है कि जो वली सब से क़रीब हो और शरअ में उसी को पूछने का हक़ हो, जब वह खुद या उसका भेजा हुआ आदमी इजाज़त ले, तब चुप रहने से इजाज़त होगी और अगर हक़ था दादा का और पूछा भाई न या हक़ था भाई का और पूछा चचा ने तो ऐसे वक़्त चुप रहने से इजाज़त न होगी।

मस्अला 9—वली ने बे—पूछे बे—इजाज़त लिए निकाह कर दिया, फिर निकाह के बाद खुद वली ने या उसके भेजे हुए आदमी ने आकर ख़बर दी कि तुम्हारा निकाह फ़्लां के साथ कर दिया गय, तो इस सूरत में भी चुप रहने से इजाज़त हो जायेगी और निकाह सही हो जायेगा और अगर किसी और ने ख़बर दी तो अगर वह ख़बर देने वाला नेक और भरोसे के क़ाबिल है या दो आदमी हैं, तब भी चुप रहने से निकाह सही हो जायेगा और अगर ख़बर देने वाला एक आदमी और भरोसे के क़ाबिल नहीं है, तो सिर्फ़ चुप रहने से निकाह सही न होगा, बल्कि रूका रहेगा, जब ज़ुबान से इजाज़त दे दे या कोई और ऐसी बात पायी जाये जिससे इजाज़त समझ ली जाये, तब निकाह सही होगा।

मस्अला 10—जिस शक्ल में ज़ुबान से कहना ज़रूरी हो और ज़ुबान से औरत ने न कहा, लेकिन जब मियां उसके पास आया, तो सोहबत से इंकार नहीं किया तब भी निकाह दुरूस्त हो गया।

मस्अला 11—यही हुक्म लड़के का है कि अगर जवान हो तो उस पर ज़बरदस्ती नहीं कर सकते और वली बग़ैर उसकी इजाज़त के निकाह नहीं कर सकता। अगर बे—पूछे निकाह कर देगा तो इजाज़त पर लटका रहेगा। अगर इजाज़त दे दी तो हो गया, नहीं तो नहीं हुआ। हां, इतना अंतर है कि लड़के के सिर्फ़ चुप रहने से इजाज़त नहीं होती, ज़ुबान से

कहना और बोलना चाहिए।

मस्अला 12—अगर लड़की या लड़का ना–बालिग़ हो तो वह ख़ुद–मुख़्तार नहीं है। बग़ैर वली के उसका निकाह दुरुस्त नहीं होता। अगर उसने बग़ैर वली के निकाह कर लिया या किसी और ने कर दिया तो वली की इजाज़त पर रुका रहेगा। अगर वली इजाज़त देगा तो निकाह होगा, नहीं तो न होगा और वली को उसके निकाह करने, न करने का पूरा अधिकार है, जिससे चाहे कर दे। ना–बालिग़ लड़के और लड़कियां इस निकाह के वक़्त रद्द नहीं कर सकते, चाहे वह ना–बालिग़ लड़की कुंवारी हो या पहले कोई निकाह हो चुका हो और रुख़्सती भी हो चुकी हो, दोनों का एक हुक्म है।

मस्अला 13—ना–बालिग़ लड़की या लड़के का निकाह अगर बाप ने या दादा ने किया है, तो जवान होने के बाद भी इस निकाह को रद्द नहीं कर सकते चाहे अपने मेल में किया हो या बे–मेल, कम ज़ात वाले से कर दिया हो और चाहे मह्रे मिस्ल पर निकाह किया हो या उससे बहुत कम पर निकाह कर दिया हो। हर तरह निकाह सही है और जवान होने के बाद भी वे कुछ नहीं कर सकते।

मस्अला 14—अगर बाप–दादा के अलावा किसी और वली ने निकाह किया है और जिसके साथ निकाह किया है वह लड़का ज़ात में बराबर दर्जे का भी है और मह्र भी मह्रे मिस्ल मुक़र्रर किया है, इस शक्ल में उस वक़्त तो निकाह सही हो जायेगा, लेकिन जवान होने के बाद उनको अख़्तियार है, चाहे इस निकाह को बाक़ी रखें, चाहे मुसलमान हाकिम के पास नालिश करके तोड़ डालें और अगर उस वली ने लड़की का निकाह कम ज़ात वाले मर्द से कर दिया या मह्रे मिस्ल से बहुत कम पर निकाह कर दिया है या लड़के का निकाह जिस औरत से किया है, उसका मह्र उस औरत के मह्रे मिस्ल से बहुत ज़्यादा मुक़र्रर कर दिया तो वह निकाह नहीं हुआ।

मस्अला 15—बाप और दादा के सिवा किसी और ने निकाह कर दिया था, उस लड़की को अपने निकाह के हो जाने की ख़बर थी, फिर जवान हो गई और अब तक उसके मियां ने उससे सोहबत नहीं की थी तो जिस वक़्त जवान हुई है, तुरंत उसी वक़्त अपनी नाराज़ी ज़ाहिर कर दे कि मैं राज़ी नहीं हूं या यों कहे कि इस निकाह को बाक़ी रखना नहीं चाहती, चाहे उस जगह कोई और हो चाहे न हो, बल्कि बिल्कुल अकेली बैठी हो, हर

हाल में कहना चाहिए। लेकिन सिर्फ़ इससे निकाह न टूटेगा। शरई हाकिम के पास जाए, वह निकाह तोड़ दे, तब टूटेगा। जवान होने के बाद अगर एक दम[1] एक लहज़ा (क्षरग) भी चुप रहेगी तो अब निकाह तोड़ डालने का अख़्तियार न रहेगा और अगर उसको अपने निकाह की ख़बर न थी, जवान होने के बाद ख़बर पहुंची, तो जिस वक़्त ख़बर मिली है, फ़ौरन उस वक़्त निकाह करे, एक लहज़ा भी चुप रहेगी तो निकाह तोड़ डालने का अख़्तियार जाता रहेगा।

मस्अला 16—और अगर उसका मियां सोहबत कर चुका, तब जवान हुई, तो फ़ौरन जवान होते ही और ख़बर पाते ही इंकार करना ज़रूरी नहीं है, बल्कि जब तक उसकी रज़ामंदी का हाल मालूम न होगा, तब तक क़ुबूल करना न करने का हक़ बाक़ी है, चाहे जितना ज़माना गुज़र जाये, हां, जब उसने साफ़ ज़ुबान से कह दिया कि मैं मंज़ूर करती हूं या कोई और बात पायी गयी, जिससे रज़ामंदी साबित हुई, जैसे अपने मियां के साथ तंहाई में मियां–बीवी की तरह रही, तो अब अख़्तियार जाता रहा और निकाह लाज़िम हो गया।

मस्अला 17—नियम से जिस वली को ना–बालिग़ लड़की के निकाह करने का हक़ है, वह परदेस में है और इतनी दूर है कि अगर उसका इंतिज़ार करें और उससे मश्विरा लें तो मौक़ा हाथ से जाता रहेगा और पैग़ाम देने वाला इंतिज़ार न करेगा और फिर ऐसी जगह मुश्किल से मिलेगी, तो ऐसी सूरत में इसके बाद वाला वली भी निकाह कर सकता है। अगर उसने बग़ैर उसके पूछे निकाह कर दिया तो निकाह हो गया और इतनी दूर न हो तो बग़ैर उसकी राय लिए दूसरे वली को निकाह न करना चाहिए। अगर करेगा तो उसी वली की इजाज़त पर रुका रहेगा, जब वह इजाज़त देगा, तब सही होगा।

मस्अला 18—इस तरह अगर हक़दार वली के होते हुए दूसरे वली ने ना–बालिग़ का निकाह कर दिया, जैसे हक़ तो था बाप का और निकाह कर दिया दादा ने और बाप से बिल्कुल राय नहीं ली तो वह निकाह बाप की इजाज़त पर रुका रहेगा या हक़ तो था भाई का और निकाह कर दिया

---

1. यह हुक्म लड़कियों का है और अगर लड़का जवान है, तो तुरन्त इक़रार करना ज़रूरी नहीं, बल्कि जब तक रज़ामंदी न मालूम हो, तब तक क़ुबूल करने न करने का अख़्तियार बाक़ी रहता है।

चचा ने तो भाई की इजाज़त पर रूका रहेगा।

मस्अला 19—कोई औरत पागल हो गयी और अक़्ल जाती रही और उसका जवान लड़का भी मौजूद है और बाप भी है, उसका निकाह करना अगर मंज़ूर हो तो उसका वली लड़का है, क्योंकि वली होने में लड़का बाप से भी पहले है।

कौन–कौन लोग अपने मेल और अपने बराबर के हैं और कौन–कौन बराबर के नहीं

मस्अला 1—शरीअत में इसका बड़ा ख़्याल किया गया है कि बे–मेल और बे–जोड़ निकाह न किया जाये यानी लड़की का निकाह किसी ऐसे मर्द के साथ मत करो जो उसके बराबर दर्जे का और उसकी टक्कर का नहीं।

मस्अला 2—बराबरी कई क़िस्म की होती है, एक तो नसब में बराबर होना, दूसरे मुसलमान होने में, तीसरे दीनदारी में, चौथे माल में, पांचवे पेशे में।

मस्अला 3—नसब में बराबरी तो यह है कि शेख़ और सैयद, अंसारी और अलवी, ये सब एक दूसरे के बराबर हैं यानी अगरचे सैयदों का रूत्बा औरों से बढ़कर है, लेकिन अगर सैय्यद की लड़की शेख़ के यहां ब्याह गयी तो यह न कहेंगे कि अपने मेल में निकाह नहीं हुआ, बल्कि यह भी मेल ही है।

मस्अला 4—नसब में एतबार बाप का है, मां का कुछ एतबार नहीं। अगर बाप सैय्यद है तो लड़का भी सैय्यद है और अगर बाप शेख़ है तो लड़का भी शेख है, मां चाहे जैसी हो। अगर किसी सैयद ने कोई बाहर की औरत घर में डाल ली और उसमें निकाह कर लिया तो लड़के सैयद हुए और दर्जे में सब सैयदों के बराबर हैं। हां, यह और बात है कि जिसके मां–बाप दोनों ऊंचे ख़ानदान के हों, उसकी ज़्यादा इज़्ज़त है, लेकिन शरीअत में सब एक ही मेल के कहलायेंगे।

मस्अला 5—मुग़ल पठान सब एक क़ौम हैं और शेखों–सैयदों के

टक्कर के नहीं। अगर शेख़ या सैयद की लड़की उनके यहां ब्याह आयी तो कहेंगे कि बे–मेल और घट कर निकाह हुआ।

मस्अला 6—मुसलमान होने में बराबरी का एतबार सिर्फ़ मुग़ल वग़ैरह और क़ौमों में है, शेख़ों, सैयदों, अल्वियों, अंसारियों में इस का कुछ एतबार नहीं है। जो आदमी खुद मुसलमान हो गया और उसका बाप काफ़िर था, वह शख़्स उस औरत के बराबर का नहीं, जो खुद भी मुसलमान है और उसका बाप भी मुसलमान था और जो आदमी खुद मुसलमान है और उसका बाप भी मुसलमान है लेकिन उसका दादा मुसलमान नहीं है वह उस औरत के बराबर का नहीं जिसका दादा भी मुसलमान है।

मस्अला 7—जिसके बाप–दादा दोनों मुसलमान हों, लेकिन पर दादा मुसलमान न हो, तो वह शख़्स उस औरत के बराबर समझा जायेगा, जिसकी कई पुश्तें मुसलमान हों। मतलब यह है कि दादा तक होने में बराबरी का एतबार है, इसके बाद पर–दादा और लक़ड़–दादा में बराबरी ज़रूरी नहीं है।

मस्अला 8—दीनदारी में बराबरी का यह मलतब है कि ऐसा आदमी जो दीन का पाबंद नहीं, लुच्चा, शुहदा, शराबी, बद–कार आदमी है, यह नेक, परहेज़गार दीनदार औरत के बराबर का न समझा जायेगा।

मस्अला 9—माल में बराबरी का मतलब यह है कि बिल्कुल ग़रीब, मुहताज, मालदार औरत के बराबर का नहीं है और अगर वह बिल्कुल ग़रीब नहीं बल्कि जितना मह्र पहली रात को देने का दस्तूर है, वह और खाने–पीने का ख़र्च देने का अहल है, तो अपने मेल और बराबर का है, चाहे सारा मह्र न दे सके और वह ज़रूरी नहीं कि जितने मालदार लड़की वाले हैं, लड़का भी उतना ही मालदार हो या उसके क़रीब–क़रीब मालदार हो।

मस्अला 10—पेशे में बराबरी यह है कि जुलाहे, दर्ज़ियों के मेल और जोड़ के नहीं। इसी तरह नाई, धोबी, वग़ैरह भी दर्ज़ी के बराबर नहीं।

मस्अला 11—दीवाना, पागल आदमी होशियार समझदार औरत के मेल का नहीं।

मह्र का बयान

मस्अला 1—निकाह में चाहे मह्र का कुछ ज़िक्र करे चाहे न करे, हर हाल में निकाह हो जायेगा, लेकिन मह्र देना पड़ेगा, बल्कि अगर कोई

यह शर्त कर ले कि हम मह्र न देंगे, बे–मह्र का निकाह करते हैं, तब भी मह्र देना पड़ेगा।

मस्अला 2—कम से कम मह्र की मात्रा लगभग पौने तीन रूपये भर चांदी है और ज़्यादा की कोई हद नहीं, चाहे जितना मुक़र्रर करे, लेकिन मह्र का बहुत बढ़ाना अच्छा नहीं। सो अगर किसी ने सिर्फ़ एक रूपये भर चांदी या एक रूपया या एक अठन्नी मह्र मुक़र्रर करके निकाह किया, तब भी पौने तीन रूपए भर चांदी देनी पड़ेगी। शरीअत में इससे कम मह्र नहीं हो सकता। और अगर रुख़्सती से पहले ही तलाक़ दे दे तो उसका आधा दे दे।

मस्अला 3—किसी ने दस रूपए या बीस रूपए या सौ या हज़ार रूपए अपनी हैसियत के मुताबिक़ कुछ मह्र मुक़र्रर किया और अपनी बीवी को रुख़्सत करा लिया और उससे सोहबत की या सोहबत तो नहीं की लेकिन अकेले में मियां–बीवी किसी ऐसी जगह रहे जहां सोहबत करने से रोकने वाली और मना करने वाली कोई बात न थी तो पूरा मह्र जितना मुक़र्रर किया है अदा करना वाजिब है और अगर यह कोई बात नहीं हुई थी कि लड़का या लड़की मर गयी, तब भी पूरा मह्र देना वाजिब है और अगर यह कोई बात नहीं हुई और मर्द ने तलाक़ दे दी तो आधा मह्र देना वाजिब है। मतलब यह हुआ कि मियां–बीवी में अगर वैसी तंहाई हो गयी जिसका ऊपर ज़िक्र हुआ या दोनों में से कोई मर गया तो पूरा मह्र वाजिब हो गया और अगर वैसी तंहाई और यकजाई होने से पहले ही तलाक़ हो गयी तो आधा मह्र वाजिब हुआ।

मस्अला 4—अगर दोनों में से कोई बीमार था या रमज़ान का रोज़ा रखे हुए था या हज का एहराम बांधे हुए था या औरत को माहवारी थी या वहां कोई झांकता ताकता था, ऐसी हालत में दोनों की तनहाई और यकजाई हुई तो ऐसी तंहाई का एतबार नहीं है, इससे पूरा मह्र वाजिब नहीं हुआ। अगर तलाक़ मिल जाये तो आधा मह्र पाने की हक़दार है, हां, अगर रमज़ान का रोज़ा न था, बल्कि क़ज़ा या नफ़्ल या नज़्र का रोज़ा दोनों में से कोई रखे हुए था, ऐसी हालत में तंहाई में रही तो पूरा मह्र पाने की हक़दार है, शौहर का पूरा मह्र वाजिब हो गया।

मस्अला 5—शौहर नामर्द है, लेकिन दोनों मियां–बीवी में वैसी तंहाई हो चुकी है, तब भी पूरा मह्र पायेगी, इसी तरह अगर हिजड़े ने निकाह कर लिया, फिर तंहाई और यकजाई के बाद तलाक़ दे दी, तब भी पूरा मह्र

पायेगी।

मस्अला 6—मियां–बीवी तंहाई में रहे लेकिन लड़की इतनी छोटी है कि सोहबत के क़ाबिल नहीं या लड़का बहुत छोटा है कि सोहबत नहीं कर सकता है, तो इस तंहाई से भी पूरा मह्र वाजिब नहीं हुआ।

मस्अला 7—अगर निकाह के वक़्त मह्र का बिल्कुल ज़िक्र ही न किया गया कि कितना है या इस शर्त पर निकाह किया कि बग़ैर मह्र के निकाह करता हूं, कुछ मह्र न दूंगा, फिर दोनों में से कोई मर गया या वैसी तंहाई और यकजाई हो गयी जो शरीअत में एतबार के क़ाबिल है, तब भी मह्र दिलाया जायेगा। इस शक्ल में मह्रे मिस्ल देना होगा और अगर इस सूरत में वैसी तंहाई से पहले मर्द ने तलाक़ दे दी तो मह्र पाने की हक़दार नहीं है, बल्कि सिर्फ़ एक जोड़ा मर्द पर वाजिब है, न देगा तो गुनाहगार होगा।

मस्अला 8—जोड़े में सिर्फ़ चार कपड़े मर्द पर वाजिब हैं, एक कुर्ता एक सरबंद यानी ओढ़नी, एक पजामा या साड़ी, जिस चीज़ की रस्म हो, एक बड़ी चादर जिसमें सिर से पैर तक लिपट सके, इसके सिवा और कोई कपड़ा वाजिब नहीं।

मस्अला 9—मर्द की जैसी हैसियत हो, वैसे कपड़ा देना चाहिए अगर मामूली ग़रीब आदमी हो तो सूती कपड़े और अगर बहुत ग़रीब नहीं, लेकिन बहुत अमीर भी नहीं तो टसर के और बहुत बड़ा अमीर हो तो अच्छे रेशमी कपड़ा देना चाहिए लेकिन हर हाल में ख़्याल रहे कि उस जोड़े की क़ीमत मह्र के मिस्ल के आधे से न बढ़े और एक रुपया छ: आने यानी एक रुपया एक चवन्नी और एक दुवन्नी भर चांदी के जितने दाम हों, उससे कम क़ीमत भी न हो, यानी बहुत क़ीमती कपड़े जिनकी क़ीमत मह्रे मिस्ल के आधे से बढ़ जाए, मर्द पर वाजिब नहीं। यों अपनी ख़ुशी से अगर वह बहुत क़ीमती और ज़्यादा बढ़िया कपड़े दे दे, तो और बात है।

मस्अला 10—निकाह के वक़्त तो कुछ मुक़र्रर नहीं किया गया, लेकिन निकाह के बाद मियां–बीवी दोनों ने अपनी ख़ुशी से कुछ मुक़र्रर कर लिया तो अब मह्रे मिस्ल न दिलाया जायेगा, बल्कि दोनों ने अपनी ख़ुशी से जितना मुक़र्रर कर लिया है, नहीं दिलाया जायेगा। हां, अगर वैसी तंहाई व यकजाई होने से पहले ही तलाक़ मिल गयी तो इस सूरत में मह्र पाने की हक़दार नहीं है, बल्कि सिर्फ़ वही कपड़े का जोड़ा मिलेगा जिसका ऊपर बयान हो चुका है।

मस्अला 11—सौ रुपए हजार रुपए अपनी हैसियत के मुताबिक

मह्र मुक़र्रर किया, फिर शौहर ने अपनी खुशी से कुछ मह्र और बढ़ा दिया और कहा कि हम सौ रूपए की जगह डेढ़ सौ रूपए दे देंगे तो जितने रूपये ज़्यादा देने को कहे हैं, वे भी वाजिब हो गये, न देगा तो गुनाहगार होगा। अगर वैसी तनहाई या यकजाई से पहले तलाक़ मिल गयी तो किस क़दर असल मह्र था, उसी का आधा दिया जायेगा, जितना बाद में बढ़ाया था, उसको नहीं गिनेंगे। इसी तरह औरत ने अपनी खुशी व रज़ामंदी से अगर कुछ मह्र माफ़ कर दिया तो जितना माफ़ किया है उतना माफ़ हो गया और अगर पूरा माफ़ कर दिया तो पूरा मह्र माफ़ हो गया। अब उसके पाने की हक़दार नहीं है।

मस्अला 12—अगर शौहर ने कुछ दबाव डाल कर, धमका कर परेशान करके माफ़ करा लिया तो इस माफ़ कराने से माफ़ नहीं हुआ। अब उसके ज़िम्मे अदा करना वाजिब है।

मस्अला 13—मह्र में रूपया–पैसा, सोना–चांदी कुछ मुक़र्रर नहीं किया, बल्कि कोई गांव या कोई बाग़ या कुछ ज़मीन मुक़र्रर हुई तो यह भी दुरूस्त है, जो बाग़ मुक़र्रर किया है, वही देना पड़ेगा।

मस्अला 14—मह्र में कोई घोड़ा या हाथी या और जानवर मुक़र्रर किया, लेकिन यह न मुक़र्रर न किया कि फ़लां घोड़ा दूंगा, यह भी दुरूस्त है, एक मंझोला घोड़ा, जो न बहुत बढ़िया हो, न बहुत घटिया, देना चाहिए या उसकी क़ीमत दे। हां, अगर सिर्फ़ इतना ही कहा कि एक जानवर दे दूंगा और यह नहीं बतलाया कि कौन सा जानवर देगा तो यह मह्र मुक़र्रर करना सही नहीं हुआ। मह्रे मिस्ल देना पड़ेगा।

मस्अला 15—किसी ने बे–क़ायदा निकाह कर लिया था, इसलिए मियां–बीवी में जुदाई करा दी गयी जैसे किसी ने छिपा के अपना निकाह कर लिया, दो गवाहों के सामने नहीं किया, या दो गवाह तो थे, लेकिन बहरे थे, उन्होंने वे लफ़्ज़ नहीं सुने थे, जिनसे निकाह बंधता है, या किसी के मियां ने तलाक़ दे दी थी या मर गया था, और अभी इद्दत पूरी नहीं होने पायी कि उसने दूसरा निकाह कर लिया या कोई और ऐसी ही बे–क़ायदा बात हुई इसलिए दोनों में जुदाई करा दी गयी, लेकिन अभी मर्द से सोहबत नहीं की है तो कुछ मह्र नहीं मिलेगा बल्कि अगर वैसी तंहाई में एक जगह रहे–सहे भी हों, तब भी मह्र न मिलेगा, हां अगर सोहबत कर चुका हो तो मह्रे मिस्ल दिलाया जायेगा, लेकिन अगर कुछ मह्र निकाह के वक़्त ठहराया गया था और मह्रे मिस्ल उससे ज़्यादा है, तो वही ठहराया हुआ मह्र मिलेगा, मह्र

मिस्ल न मिलेगा।

मस्अला 16—किसी ने अपनी बीवी समझ कर ग़लती से किसी ग़ैर–औरत से सोहबत कर ली तो उसको भी मह्र मिस्ल देना पड़ेगा और सोहबत को ज़िना नहीं कहेंगे, न कुछ गुनाह होगा, बल्कि अगर पेट रह गया तो उस लड़के का नसब भी ठीक है, उसके नसब में कुछ धब्बा नहीं है और उसको हरामी कहना दुरुस्त नहीं है और जब मालूम हो गया कि यह मेरी औरत न थी, तो अब उस औरत से अलग रहे। अब सोहबत करना दुरुस्त नहीं और उस औरत को इद्दत बैठना वाजिब है। अब बग़ैर इद्दत पूरी किए अपने मियां के पास रहना और मियां का सोहबत करना दुरुस्त नहीं और इद्दत का बयान आगे आयेगा इन्शाअल्लाह !

मस्अला 17—जहां कहीं पहली ही रात को सब मह्र देने का रिवाज हो, वहां पहले ही दिन सारा मह्र ले लेने का औरत को अख़्तियार है। अगर पहले ही दिन न मांगा तो जब मांगे तब मर्द को देना वाजिब है, देर नहीं कर सकता।

मस्अला 18—हिन्दुस्तान में रिवाज है कि मह्र का लेन–देन तलाक के बाद या मर जाने के बाद होता है कि जब तलाक़ मिल जाती है तब मह्र का दावा करती है या मर्द मर गया और कुछ माल छोड़ गया तो उस माल में से ले लेती है और अगर औरत मर गयी तो उसके वारिस मह्र के दावेदार होते हैं और जब तक मियां–बीवी साथ रहते हैं, तब तक न कोई देता है, न वह मांगती है, तो ऐसी जगह इस रिवाज की वजह से तलाक़ मिलने से पहले मह्र का दावा नहीं कर सकती, हां, पहली रात को जितने मह्र की पेशगी देने का रिवाज है, उतना मह्र पहले देना वाजिब है। हां, अगर किसी क़ौम में यह रिवाज न हो, तो उसका यह हुक्म न होगा।

मस्अला 19—जितने मह्र के पेशगी देने की रस्म है अगर उतना मह्र पेशगी न दिया तो औरत को अख़्तियार है कि जब तक उतना मह्र न पाये, तब तक मर्द को साथ न सोने दे और एक बाद सोहबत कर चुका है, तब अख़्तियार है कि अब दूसरी बार या तीसरी बार क़ाबू न होने दे। और अगर अपने साथ परदेस ले जाना चाहे तो इतना मह्र लिए बग़ैर परदेस न जाये। इसी तरह अगर औरत इस हालत में अपने किसी महरम रिश्तेदार के साथ परदेस चली जाये या मर्द के घर से अपने मायके चली जाये तो मर्द उसको रोक नहीं सकता और जब इतना मह्र दे दिया तो अब शौहर की इजाज़त के बग़ैर कुछ नहीं कर सकती, मरज़ी पाये, बग़ैर कहीं जाना–आना जायज़ नहीं शौहर का

जहां जी चाहे उसे ले जाये, जाने से इंकार करना दुरूस्त नहीं।

मस्अला 20—मह्र की नीयत से शौहर ने कुछ दिया तो जितना दिया है, उतना मह्र अदा हो गया। देते वक़्त औरत से यह बतलाना ज़रूरी नहीं कि मैं मह्र दे रहा हूं।

मस्अला 21—मर्द ने कुछ दिया, लेकिन औरत तो कहती है कि यह चीज़ तुमने मुझको यों ही दी, मह्र में नहीं दी और मर्द कहता है कि यह मैंने मह्र में दिया है तो मर्द ही की बात का एतबार किया जायेगा हां, अगर खाने–पीने की कोई चीज़ थी तो उसको मह्र में न समझेंगे और मर्द की इस बात पर एतबार न करेंगे।

मह्रे मिसल का बयान

ख़ानदानी मह्र यानी मह्र मिस्ल का मतलब यह है कि उस औरत के बाप के घराने में से कोई दूसरी औरत देखो कि उस के मिस्ल (समान) हो यानी अगर यह कम उम्र है तो वह भी निकाह के वक़्त कम उम्र हो। अगर यह सुन्दर है तो वह भी सुन्दर हो। इसका निकाह कुंवारेपन में हुआ और उसका निकाह भी कुंवारेपन में हुआ हो। निकाह के वक़्त जितनी मालदार यह है उतनी ही वह भी थी। जिस देश की यह रहने वाली है, उस देश की वह भी है। अगर यह दीनदार होशियार सलीक़ेदार पढ़ी–लिखी है, तो वह भी ऐसी ही हो। मतलब यह है कि जिस वक़्त उसका निकाह हुआ है, उस वक़्त इन बातों में वह भी इसी की मिस्ल थी, जिसका अब निकाह हुआ तो जो मह्र उसका मुक़र्रर हुआ था, वही उसका मह्रे मिस्ल है।

मस्अला 1—बाप के घराने की औरतों से मुराद जैसी उसकी बहनें, फूफी, चचेरी बहनें वग़ैरह यानी उसकी ददिहाली लड़कियां। मह्रे मिस्ल के दीखने में मां का मह्र न देखेंगे। हां, अगर मां भी, बाप ही के घराने में से हो जैसे बाप ने अपने चचा की लड़की से निकाह कर लिया था, तो उसका मह्र भी मह्रे मिस्ल कहा जायेगा।

काफ़िरों के निकाह का बयान

मस्अला 1—काफ़िर लोग अपने–अपने मज़हब के एतबार से जिस तरीक़े से निकाह करते हों, शरीअत उसको भी भरोसे के क़ाबिल समझती

है। अगर वे दोनों साथ मुसलमान हो जायें तो अब निकाह दोहराने की कुछ ज़रूरत बाक़ी नहीं रहती, निकाह अब भी बाक़ी है।

मस्अला 2—अगर दोनों में से एक मुसलमान हो गया, दूसरा नहीं हुआ तो निकाह जाता रहा। अब मियां—बीवी की तरह रहना ठीक नहीं।

मस्अला 3—अगर औरत मुसलमान हो गयी और मर्द मुसलमान नहीं हुआ तो अब जब तक पूरी तीन माहवारी न आये, तब तक मर्द से निकाह दुरूस्त नहीं।

बीवियों में बराबरी करने का बयान

मस्अला 1—जिस के कई बीवियां हों तो मर्द पर वाजिब है कि सबको बराबर रखे, जितना एक औरत को दिया है, दूसरी भी उतने की दावेदार हो सकती है, चाहे दोनों कुंवारी हों या दोनों ब्याही हों या एक तो कुंवारी है और दूसरी ब्याही ब्याह लाया, सबका एक हुक्म है। अगर एक के पास एक रात रहा तो दूसरो के पास भी एक रात रहे। जितना माल—ज़ेवर—कपड़े इसको दिए, उतने ही की दूसरी औरत भी दावेदार है।

मस्अला 2—जिसका नया निकाह हुआ और जो पुरानी हो चुकी, दोनों का हक़ बराबर है, कुछ फ़र्क़ नहीं।

मस्अला 3—बराबरी सिर्फ़ रात के रहने में है, दिन के रहने में बराबरी होना ज़रूरी नहीं। अगर दिन में एक के पास ज़्यादा रहा और दूसरी के पास कम रहा तो कुछ हरज नहीं और रात में बराबरी वाजिब है। अगर एक के पास मग़्रिब के बाद ही आ गया और दूसरी के पास इशा के बाद आ गया तो गुनाह होगा, हां, जो आदमी रात को नौकरी में लगा रहता हो और दिन को घर में रहता हो जैसे चौकीदार—पहरेदार, उसके लिए दिन को बराबरी का हुक्म है।

मस्अला 4—सोहबत करने में बराबरी करना वाजिब नहीं है। अगर इसकी बारी में सोहबत की है तो दूसरी की बारी में भी करे, यह ज़रूरी नहीं।

मस्अला 5—मर्द चाहे बीमार है, चाहे तन्दुरूस्त, बहरहाल रहने में बराबरी करे।

मस्अला 6—एक औरत से ज़्यादा मुहब्बत है, दूसरी से कम तो इसमें कुछ गुनाह नहीं, क्योंकि मन अपने वश में नहीं होता।

मस्अला 7—सफ़र में जाते वक़्त बराबरी वाजिब नहीं, जिस को जी चाहे, साथ ले जाये और बेहतर यह है कि नाम निकाल ले, जिसका नाम निकले, उसको ले जाये ताकि कोई अपने जी में ना खुश न हो।

दूध पीने और पिलाने का बयान

मस्अला 1—जब बच्चा पैदा हो तो मां पर दूध पिलाना वाजिब है, हां, अगर बाप मालदार हो और कोई अन्ना खोज सके तो दूध न पिलाने में कुछ गुनाह भी नहीं।

मस्अला 2—किसी और के लड़के को बिना मियां की इजाज़त के दूध पिलाना दुरूस्त नहीं। हां, अगर कोई बच्चा भूख के मारे तड़पता हो और उसके ख़त्म हो जाने का डर हो, तो ऐसे वक़्त बे-इजाज़त भी दूध पिलाये।

मस्अला 3—ज़्यादा से ज़्यादा दूध पिलाने की मुद्दत दो साल है। दो साल के बाद दूध पिलाना हराम है, बिल्कुल दुरूस्त नहीं।

मस्अला 4—अगर बच्चा खाने-पीने लगा, तो इस वजह से दो वर्ष से पहले ही दूध छुड़ा दिया, तब भी कुछ हरज नहीं।

मस्अला 5—जब बच्चे ने किसी औरत का दूध पिया तो वह औरत उसकी मां बन गयी और उस अन्ना का शौहर जिसके बच्चे का यह दूध है, उस बच्चे का बाप हो गया और उसकी औलाद दूध-शरीकी भाई-बहन हो गये और निकाह हराम हो गया। और जो-जो रिश्ते नसब के एतबार से हराम हैं वे रिश्ते दूध के एतबार से भी हराम हो जाते हैं लेकिन बहुत से आलिमों के फ़तवे में यह हुक्म जभी है कि बच्चे ने दूध पीने की मुद्दत में दूध पिया हो और जब बच्चा दो वर्ष का हो चुका, उसके बाद किसी औरत का दूध पिया तो उसे पीने का कुछ भरोसा नहीं और दूध पिलाने वाली न मां बनी, न उसकी औलाद उसके भाई बहन हुए, इसलिए अगर आपस में निकाह कर दें तो दुरूस्त है, लेकिन इमाम आज़म जो बहुत बड़े इमाम हैं, वे फ़रमाते हैं कि अगर ढाई वर्ष के अंदर-अंदर भी दूध पिया हो तब भी निकाह दुरूस्त नहीं, हां अगर ढाई वर्ष के बाद दूध पिया हो तो बिल्कुल एतबार नहीं है, बे-खटके सबके नज़दीक निकाह दुरूस्त है।

मस्अला 6—जब बच्चे के हलक़ में दूध चला गया तो सब रिश्ते, जो हमने ऊपर लिखे हैं, हराम हो गये, चाहे थोड़ा दूध पिलाया हो या बहुत, इसका कुछ एतबार नहीं।

मस्अला 7—अगर बच्चे ने छाती से दूध नहीं पिया, बल्कि उसने अपना दूध निकाल कर उसके हलक़ में डाल दिया, तो इससे भी वे सब रिश्ते हराम हो गये। इसी तरह अगर बच्चे की नाक में दूध डाल दिया, तो भी सब रिश्ते हराम हो गये और अगर कान में डाला तो इसका कुछ एतबार नहीं।

मस्अला 8—अगर औरत का दूध पानी में या किसी दवा में मिलाकर बच्चे को पिलाया तो देखो कि दूध ज़्यादा है या पानी या दोनों बराबर। अगर दूध ज़्यादा हो या दोनों बराबर हों, तो जिस औरत का दूध है, वह मां हो गयी और सब रिश्ते हराम हो गये और अगर पानी या दवा ज़्यादा है तो इसका कुछ एतबार नहीं, औरत मां नहीं बनी।

मस्अला 9—औरत का दूध, बकरी या गाय के दूध में मिल गया और बच्चे ने पी लिया तो देखो ज़्यादा कौन–सा है। अगर औरत का ज़्यादा हो या दोनों बराबर हों तो सब हराम हो गये और जिस औरत का दूध है, यह बच्चा उसी की औलाद बन गया और अगर बकरी का या गाय का दूध ज़्यादा है तो इसका कुछ एतबार नहीं। ऐसा समझेंगे कि मानो उसने पिया ही नहीं।

मस्अला 10—अगर किसी कुंवारी लड़की के दूध उतर आया या उसको किसी बच्चे ने पी लिया तो उससे भी सब रिश्ते हराम हो गये।

मस्अला 11—मुर्दा औरत का दूध दूह कर किसी बच्चे को पिला दिया, तो इससे भी सब रिश्ते हराम हो गये।

मस्अला 12—दो लड़कों ने एक बकरी का या एक गाय का दूध पिया तो उससे कुछ नहीं होता। वे भाई–बहन नहीं हुए।

मस्अला 13—जवान मर्द ने अपनी बीवी का दूध पी लिया तो वह हराम नहीं हुई, हां बहुत गुनाह हुआ, क्योंकि दो वर्ष के बाद दूध पीना बिल्कुल हराम है।

मस्अला 14—एक लड़का एक लड़की है, दोनों ने एक ही औरत का दूध पिया है तो इनमें निकाह नहीं हो सकता, चाहे एक ही ज़माने

में पिया हो, या एक ने पहले, दूसरे ने कई वर्ष के बाद, दोनों का एक ही हुक्म है।

मस्अला 15—एक लड़की ने बाक़र की बीवी का दूध पिया तो उस लड़की का निकाह न बाक़र से हो सकता है, न उसके बाप–दादा के साथ, न बाक़र की औलाद के साथ, बल्कि बाक़र की जो औलाद दूसरी बीवी से है उससे भी दुरुस्त नहीं।

मस्अला 16—अब्बास ने ख़दीजा का दूध पिया और ख़दीजा के शौहर क़ादिर की एक दूसरी बीवी ज़ैनब थी जिसको तलाक़ मिल चुकी है, तो अब ज़ैनब भी अब्बास से निकाह नहीं कर सकती, क्योंकि अब्बास ज़ैनब के मियां की औलाद है। और मियां की औलाद से निकाह दुरुस्त नहीं। इसी तरह अब्बास अपनी औरत को छोड़ दे तो वह औरत क़ादिर के साथ निकाह नहीं कर सकती, क्योंकि ये दोनों फूफी–भतीजे हुए, चाहे वह क़ादिर की सगी बहन हो या दूध–शरीक बहन हो, हां अब्बास से क़ादिर निकाह कर सकता है।

मस्अला 17—अब्बास की एक बहन साजिदा है। साजिदा ने एक औरत का दूध पिया, लेकिन अब्बास ने नहीं पिया तो इस दूध पिलाने वाली औरत का निकाह अब्बास से हो सकता है।

मस्अला 18—अब्बास के लड़के ने ज़ाहिदा का दूध पिया तो ज़ाहिदा का निकाह अब्बास के साथ हो सकता है।

मस्अला 19—क़ादिर और ज़ाकिर दो भाई हैं और ज़ाकिर की एक दूध शरीकी बहन है तो क़ादिर के साथ उसका निकाह हो सकता है, हां ज़ाकिर के साथ नहीं हो सकता। ख़ूब अच्छी तरह समझ लो, चूंकि इस क़िस्म के मस्अले मुश्किल हैं कि कम समझ में आते हैं, इसलिए हम ज़्यादा नहीं लिखते। जब कभी ज़रूरत पड़े, किसी समझदार बड़े आलिम से समझ लेना चाहिए।

मस्अला 20—किसी मर्द का किसी औरत से रिश्ता लगा, फिर एक औरत आयी और उसने कहा कि मैंने तो इन दोनों को दूध पिलाया है और सिवाए इस औरत के कोई और इस दूध के पीने को बयान नहीं करता तो सिर्फ़ इस औरत के कहने से दूध का रिश्ता साबित न होगा। इन दोनों का निकाह दुरुस्त है, बल्कि जब दो एतबार के क़ाबिल और दीनदार मर्द या एक दीनदार मर्द और दो दीनदार औरतें दूध पीने की गवाही दें तब इस रिश्ते का सबूत होगा। अब अलबत्ता निकाह

हराम हो गया है। ऐसी गवाही के बग़ैर सबूत न होगा लेकिन अगर सिर्फ़ एक मर्द या एक औरत के कहने से या दो तीन औरतों के कहने से दिल गवाही देने लगे कि ये सच कहती होंगी, ज़रूरी ऐसा ही हुआ होगा तो ऐसे वक़्त निकाह न करना चाहिए कि ख़ामख़्वाह शक में पड़ने से क्या फ़ायदा। अगर किसी ने कर लिया तब भी ख़ैर हो गया।

मस्अला 21—औरत का दूध किसी दवा में डालना जायज़ नहीं और अगर डाल दिया तो अब उसका खाना और लगाना नाजायज़ और हराम है। इसी तरह दवा के लिए आंख में या कान में दूध डालना भी जायज़ नहीं। मतलब यह कि औरत के दूध से किसी तरह का फ़ायदा उठाना और उसको अपने काम में लाना दुरूस्त नहीं।

तलाक़ का बयान

मस्अला 1—जो शौहर जवान हो चुका हो और दीवाना और पागल हो, उसके तलाक़ देने से तलाक़ पड़ जायेगी और जो लड़का अभी जवान नहीं हुआ और दीवाना–पागल जिसकी अक्ल ठीक नहीं, उन दोनों के तलाक़ देने से तलाक़ नहीं पड़ती।

मस्अला 2—सोते हुए आदमी के मुंह से निकला कि तुझको तलाक़ है या यों कह दिया कि मेरी बीवी को तलाक़, तो इस बड़बड़ाने से तलाक़ न पड़ेगी।

मस्अला 3—किसी ने ज़बरदस्ती किसी से तलाक़ दिलाई बहुत मारा–कूटा, धमकाया कि तलाक़ दे दे, नहीं तो तुझे मार डालूंगा। इस मजबूरी से उसने तलाक़ दे दी तब भी तलाक़ पड़ गयी।

मस्अला 4—किसी ने शराब वग़ैरह के नशे में अपनी बीवी को तलाक़ दी, जब होश आया तो शर्मिंदा हुआ, तब भी तलाक़ पड़ गयी। इसी तरह गुस्से में तलाक़ देने से भी तलाक़ पड़ जाती है।

मस्अला 5—शौहर के सिवा किसी और को तलाक़ देने का अख़्तियार नहीं है। हां, अगर शौहर ने कह दिया कि तू उसको तलाक़ दे दे तो वह भी दे सकता है।

तलाक़ देने का बयान

मस्अला 1—तलाक़ देने का अख़्तियार सिर्फ़ मर्द को है। जब मर्द ने तलाक़ दे दी तो पड़ गयी, औरत का इसमें कुछ बस नहीं, चाहे मंज़ूर करे या न करे। हर तरह तलाक़ हो गयी और औरत अपने मर्द को तलाक़ नहीं दे सकती।

मस्अला 2—मर्द को सिर्फ़ तीन तलाक़ देने का अख़्तियार है। उससे ज़्यादा का अख़्तियार नहीं, तो अगर चार–पांच तलाक़ दे दे, तब भी तीन ही तलाक़ें हुईं।

मस्अला 3—जब मर्द ने जुबान से कह दिया कि मैंने अपनी बीवी को तलाक़ दे दी और इतने ज़ोर से कहा कि ख़ुद इन लफ़्ज़ों को सुन लिया, बस इतना कहते ही तलाक़ पड़ गयी चाहे किसी के सामने कहे चाहे तंहाई में और चाहे बीवी सुने या न सुने, हर हाल में तलाक़ हो गयी।

मस्अला 4—तलाक़ तीन क़िस्म की है—एक तो ऐसी तलाक़ जिसमें निकाह बिल्कुल टूट जाता है। अब निकाह किए बग़ैर उस मर्द के पास रहना जायज़ नहीं। अगर फिर उसी के पास रहना चाहे और मर्द भी उसके रखने पर राज़ी हो तो फिर से निकाह करना पड़ेगा। ऐसी तलाक़ को बाइन तलाक़ कहते हैं।

दूसरी वह जिसमें निकाह ऐसा टूटा कि दुबारा निकाह करना भी चाहें तो किसी दूसरे से पहले निकाह करना पड़ेगा और जब वहां तलाक़ हो जाये तब इद्दत के बाद उससे निक़ाह हो सकेगा। ऐसी तलाक़ को मुग़ल्लज़ा कहते हैं।

तीसरी वह, जिसमें निकाह अभी नहीं टूटा। साफ़ लफ़्ज़ों में एक या दो तलाक़ देने के बाद ही अगर मर्द शर्मिंदा हुआ तो फिर से निकाह करना ज़रूरी नहीं। बिना निकाह के भी उसको रख सकता है फिर मियां–बीवी की तरह रहने लगे तो दुरुस्त है। हां अगर मर्द तलाक़ देकर उस पर जमा रहा और उससे नहीं फिरा, तो जब तलाक़ की इद्दत गुज़र जायेगी, तब निकाह टूट जायेगा, और औरत जुदा हो जाएगी और जब तक इद्दत न गुज़रेगी, तब तक रखने, न रखने दोनों बातों का अख़्तियार है। ऐसी तलाक़ को रज्अी तलाक़ कहते हैं। हां, अगर तीन तलाक़ दे दे तो अब अख़्तियार नहीं।

मस्अला 5—तलाक़ देने की दो क़िस्में हैं। एक तो यह कि साफ़–साफ़ लफ़्ज़ों में कह दिया कि मैंने तुझको तलाक़ दी या यों कहा मैंने अपनी बीवी को तलाक़ दी, मतलब यह कि ऐसी साफ़ बात कह दे जिसमें तलाक़ देने के सिवा कोई और मतलब नहीं निकल सकता, ऐसी तलाक़ को सरीह कहते हैं।

दूसरी क़िस्म यह है कि साफ़–साफ़ लफ़्ज़ नहीं, बल्कि ऐसे गोल–मोल लफ़्ज़ कहे जिसमें तलाक़ का मतलब भी बन सकता है और तलाक़ के सिवा और दूसरे माने भी निकल सकते हैं जैसे कोई कहे कि मैंने तुझको दूर कर दिया तो इसका एक मतलब तो यह है कि मैंने तुझको तलाक़ दे दी, दूसरा मतलब यह हो सकता है कि तलाक़ तो नहीं दी, लेकिन तुझको अपने पास नहीं रखूंगा, हमेशा अपनी मैके में पड़ी रहे, तेरी ख़बर न लूंगा। या यों कहे मुझ से तुझ से कुछ वास्ता नहीं, मुझ से तुझ से कुछ मतलब नहीं, तू मुझ से जुदा हो गयी, मैंने तुझको अलग कर दिया, जुदा कर दिया, मेरे घर से चली जा, निकल जा, हट जा, दूर हो, अपने मां–बाप के सर जा के बैठ, अपने घर जा, मेरा–तेरा निबाह न होगा। इसी तरह के और लफ़्ज़ जिनमें दोनों लफ़्ज़ निकल सकते हैं, ऐसे तलाक़ को कनाया कहते हैं।

मस्अला 6—सरीह तलाक़ का बयान–अगर साफ़–साफ़ लफ़्ज़ों में तलाक़ दे, तो ज़ुबान से निकलते ही तलाक़ पड़ गयी, चाहे तलाक़ देने की नीयत हो, चाहे न हो, बल्कि हंसी–दिल्लगी से कहा हो, हर तरह तलाक़ हो गयी और साफ़ लफ़्ज़ों में तलाक़ देने से तीसरी तलाक़ पड़ती है यानी इद्दत के ख़त्म होने तक उसके रखने–न रखने का अख़्तियार है और एक बार कहने से एक ही तलाक़ पड़ेगी, न दो पड़ेंगी, न तीन। हां, अगर तीन बार कहे या यों कहे कि तुझको तीन तलाक़ दीं तो तीन तलाक़ पड़ीं।

मस्अला 7—किसी ने एक तलाक़ दी तो जब तक औरत इद्दत में रहे, तब तक दूसरी तलाक़ और तीसरी तलाक़ और देने का अख़्तियार रहता है, अगर देगा तो पड़ जायेगी।

मस्अला 8—किसी ने यों कहा कि तुझको तलाक़ दे दूंगा, तो इससे तलाक़ नहीं हुई। इसी तरह अगर किसी बात पर यों कहा कि अगर फ़लाना काम करेगी तो तलाक़ दे दूंगा, तब भी तलाक़ नहीं हुई, चाहे वह काम करे या न करे। हां, अगर यों कह दे अगर फ़लां काम करेगी तो तलाक़ है, तो उसके करने से तलाक़ पड़ जायेगी।

मस्अला 9—किसी ने तलाक़ देकर उसके साथ इन्शाअल्लाह भी

कह दिया तो तलाक़ नहीं पड़ी। इसी तरह अगर यों कहा, अगर ख़ुदा चाहे तो तुझ को तलाक़, इससे भी किसी क़िस्म की तलाक़ नहीं पड़ती। हां, अगर तलाक़ देकर ज़रा ठहर गया फिर इन्शाअल्लाह कहा तो तलाक़ पड़ गयी।

मस्अला 10—किसी ने अपनी बीवी को तलाक़िन कहके पुकारा, तब भी तलाक़ पड़ गयी चाहे हंसी में कहा हो।

मस्अला 11—किसी ने कहा जब तू लखनऊ जाये तो तुझको तलाक़ है, तो जब तक लखनऊ न जायेगी, तलाक़ न पड़ेगी, जब वहां जायेगी, तब पड़ेगी।

मस्अला 12—कनाए का बयान—और अगर साफ़–साफ़ तलाक़ नहीं दी, बल्कि गोल–मोल लफ़्ज़ कहे और इशारे–कनाए से तालक़ दी तो इन लफ़्ज़ों के कहने के वक़्त अगर तलाक़ देने की नीयत की तो तलाक़ हो गयी और अव्वल क़िस्म की यानी बाइन हुई, अब बे–निकाह किए नहीं रख सकता। अगर तलाक़ की नीयत न थी, बल्कि दूसरे के माने के एतबार से कहा था तो तलाक़ नहीं हुई, हां, अगर क़रीने से मालूम हो जाए कि तलाक़ ही देने की नीयत थी, अब वह झूठ बकता है, तो अब औरत उसके पास न रहे और यही समझे कि मुझे तलाक़ मिल गयी जैसे बीवी ने गुस्से में कहा कि मेरा–तेरा निबाह न होगा, मुझको तलाक़ दे दे उसने कहा, अच्छा, मैंने छोड़ दिया तो यहां औरत यहीं समझे कि मुझे तलाक़ दे दी।

मस्अला 13—किसी ने तीन बार कहा—तलाक़, तलाक़ तलाक़, तो तीनों तलाक़ें पड़ गयीं या गोल लफ़्ज़ों में तीन बार कहा तब भी तीन पड़ गयीं, लेकिन नीयत ही एक तलाक़ की है, सिर्फ़ मज़बूती के लिए तीन बार कहा था कि बात ख़ूब पक्की हो जाये तो एक ही तलाक़ हुई लेकिन औरत को उसके दिल का हाल तो मालूम नहीं, इसलिए समझे कि तीन तलाक़ें मिल गयीं।

रूख़सती से पहले तलाक़ हो जाने का बयान

मस्अला 1—अभी मियां के पास न जाने पायी थी कि उसने तलाक़ दे दी या रूख़सती तो हो गयी, लेकिन अभी मियां–बीवी में वैसी तंहाई नहीं होने पायी जिसका शरीअत में एतबार है, जिसका बयान मह्र के बाब में आ चुका है, तंहाई होने से पहले ही तलाक़ दे दी तो तलाक़ें बाइन पड़ी, चाहे साफ़ लफ़्ज़ों में दी हो य गोल लफ़्ज़ों में ऐसी औरत को जब

तलाक़ दी जाये तो पहली ही क़िस्म की यानी बाइन तलाक़ पड़ती है और ऐसी औरत के लिए तलाक़ की इद्दत भी कुछ नहीं है। तलाक़ मिलने के बाद फ़ौरन दूसरे मर्द से निकाह कर सकती है और ऐसी औरत को एक तलाक़ देने के बाद अब दूसरी-तीसरी तलाक़ भी देने का अख़्तियार नहीं, अगर देगा तो न पड़ेगी। अगर पहली ही बार यों कह दे तुमको दो तलाक़ या तीन तलाक़, तो जितनी दी हैं सब पड़ गयीं और यों कहा तुम को तलाक़ है, तलाक़ है, तलाक़ है, तब भी ऐसी औरत को एक ही तलाक़ पड़ेगी।

मस्अला 2—ऐसी औरत से यों कहा कि अगर फ़्लां काम करे तो तलाक़ है, तलाक़ है, तलाक़ है, और उसने वह काम कर लिया तो उसके करते ही तीनों तलाक़ें पड़ गयीं।

मस्अला 3—और अगर मियां-बीवी में तंहाई व यकजाई हो चुकी है, सोहबत चाहे हो चुकी हो या अभी न हुई हो, ऐसी औरत को साफ़ साफ़ लफ़्ज़ों में तलाक़ देने से तलाक़े रज्अी पड़ती है, जिसमें निकाह किये बिना भी रख लेने का अख़्तियार होता है और गोल लफ़्ज़ों में बाइन तलाक़ पड़ती है और इद्दत में बैठना पड़ेगा। बग़ैर इद्दत पूरे किये दूसरे से निकाह नहीं कर सकती। और इद्दत के अंदर उसका मर्द दूसरी और तीसरी तलाक़ भी दे सकता है।

तीन तलाक़ देने का बयान

मस्अला 1—किसी ने अपनी औरत को तीन तलाक़ें दे दीं तो अब वह औरत बिल्कुल उस मर्द के लिए हराम हो गयी, अब फिर से निकाह करे तब भी औरत को उस मर्द के पास रहना हराम है और यह निकाह नहीं हुआ चाहे साफ़ लफ़्ज़ों में तीन तलाक़ें दी हों या गोल लफ़्ज़ों में, सबका एक हुक्म है। अब अगर फिर उसी मर्द के पास रहना चाहे और निकाह करना चाहे तो उसकी सिर्फ़ एक शक्ल है, वह यह कि पहले किसी और मर्द से निकाह करके हमबिस्तर हो। फिर जब वह दूसरा मर्द मर जाये या तलाक़ दे दे तो इद्दत पूरी करके पहले मर्द से निकाह कर सकती है। दूसरा ख़ाविंद किए बिना पहले ख़ाविंद से निकाह नहीं कर सकती है। अगर दूसरा ख़ाविंद किया, लेकिन, अभी वह सोहबत न करने पाया था कि मर गया या सोहबत करने से पहले ही तलाक़ दे दी तो इसका कुछ एतबार नहीं। पहले मर्द से

निकाह जब ही हो सकता है कि दूसरे मर्द ने सोहबत भी की हो। इसके बग़ैर पहले मर्द से निकाह दुरूस्त नहीं। ख़ूब समझ लो।

मस्अला 2—तीन तलाक़ें एक दम से दे दीं, जैसे यों कह दिया तुमको तीन तलाक़ या यों कहा तुमको तलाक़ है, तलाक़ है, तलाक़ है या अलग करके तीन तलाक़ें दीं, जैसे एक आज दीं, एक कल, एक परसों या एक इस महीने में, एक दूसरे महीने में, एक तीसरे महीने में यानी इद्दत के अंदर-अंदर तीनों तलाक़ें दे दीं, सबका एक हुक्म है और साफ़ लफ़्ज़ों में तलाक़ देकर फिर रोक रखने का अख़्तियार उस वक़्त होता है जब तीन तलाक़ें न दे, सिर्फ़ एक या दो दे। जब तीन तलाक़ें दे दीं तो अब कुछ नहीं हो सकता।

मस्अला 3—किसी ने अपनी औरत को एक तलाक़ रज्अी दी, फिर मियां राज़ी हो गया और रोक रखा, फिर दो चार वर्ष में किसी बात पर ग़ुस्सा आया तो एक तलाक़ रज्अी और दे दी, जिसमें रोक रखने का अख़्तियार होता है। फिर जब ग़ुस्सा उतरा तो रोक रखा, और नहीं छोड़ा। ये दो तलाक़ें हो चुकीं। अब इसके बाद अगर कभी एक तलाक़ और देगा तो तीन पूरी हो जायेंगी और इसका वही हुक्म होगा जो हमने अभी बयान किया कि दूसरा ख़ाविंद किये बग़ैर उस मर्द से निकाह नहीं हो सकता। इसी तरह अगर किसी ने तलाक़े बाइन दी, जिसमें रोक रखने का अख़्तियार नहीं होता, निकाह टूट जाता है, फिर शर्मिंदा हुआ और मियां-बीवी ने राज़ी होकर फिर से निकाह पढ़वा लिया । कुछ ज़माने बाद फिर ग़ुस्सा आया और एक तलाक़े बाइन दी और ग़ुस्सा उतारने के बाद फिर निकाह पढ़वा लिया। ये दो तलाक़ें हुईं। अब तीसरी बार तलाक़ देगा तो फिर वही हुक्म है कि ख़ाविंद किये बग़ैर उससे निकाह नहीं कर सकती।

मस्अला 4—अगर दूसरे मर्द से इस शर्त पर निकाह हुआ कि सोहबत करके छोड़ देगा तो इस इक़रार लेने का कुछ एतबार नहीं। उसको अख़्तियार है चाहे छोड़े या न छोड़े और जब भी चाहे छोड़े। यह इक़रार करके विवाह करना बहुत गुनाह और हराम है। अल्लाह तआला की तरफ़ से लानत होती है, लेकिन निकाह हो जाता है। तो अगर इस निकाह के बाद दूसरे ख़ाविंद ने सोहबत करके छोड़ दिया या मर गया तो पहले ख़ाविंद के लिए हलाल हो जाएगी।

किसी शर्त पर तलाक़ देने का बयान

मस्अला 1—निकाह करने से पहले किसी औरत को कहा अगर मैं तुझ से निकाह करूं तो तुझ को तलाक़ है। तो जब उस औरत से निकाह करेगा, तो निकाह करते ही तलाक़े बाइन पड़ जाएगी। निकाह किये बग़ैर अब उसको नहीं रख सकता। अगर यों कहा हो अगर तुझसे निकाह करूं तो तुझ पर दो तलाक़ तो दो तलाक़ बाइन पड़ गयीं और अगर तीन तलाक़ को कहा तो तीनों पड़ गयीं और अब तलाक़े मुग़ल्लज़ा हो गयी।

मस्अला 2—निकाह होते ही जब उस पर तलाक़ पड़ गयी तो उसने उसी औरत से फिर निकाह कर लिया तो अब दूसरे निकाह करने से तलाक़ न पड़ेगी। हां अगर यों कहा, जितनी बार तुझसे निकाह करूं हर बार तुझको तलाक़ है, तो जब निकाह करेगी, हर बार तलाक़ पड़ जाया करेगी, अब उस औरत को रखने की कोई शक्ल नहीं। दूसरा ख़ाविंद करके अगर उस मर्द से निकाह करेगी, जब भी तलाक़ पड़ जायेगी।

मस्अला 3—किसी ने कहा, जिस औरत से निकाह करूं, उसको तलाक़, तो जिससे निकाह करेगा, उस पर तलाक़ पड़ जाएगी। हां, तलाक़ पड़ने के बाद अगर फिर उसी औरत से निकाह कर लिया तो तलाक़ नहीं पड़ी।

मस्अला 4—किसी ग़ैर औरत से, जिससे अभी निकाह नहीं किया है, इस तरह कहा कि अगर तू फ़्लां काम करे तो तुमको तलाक़, इस का कुछ एतबार नहीं। अगर उससे निकाह कर लिया और निकाह के बाद उसने वही काम किया तब भी तलाक़ नहीं पड़ी क्योंकि ग़ैर औरत को तलाक़ देने की यही सूरत है कि यों कहे, अगर तुमसे निकाह करूं तो तलाक़, किसी और तरह तलाक़ नहीं पड़ सकती।

मस्अला 5—और अगर अपनी बीवी से कहा तू फ़्लां काम करे तो तुझको तलाक़, अगर तू मेरे पास से जाये तो तुझको तलाक़, अगर तू उस घर में जाये तो तुझको तलाक़ या किसी बात के होने पर तलाक़ दो तो तब वह काम करेगी तलाक़ पड़ जाएगी और न करेगी तो न पड़ेगी और तलाक़ रज्ई पड़ेगी जिसमें बिना निकाह भी रोक रखने का अख़्तियार

होता है। हां, अगर कोई गोल लफ़्ज़ कहता, जैसे यों कहे अगर तू फ़लां काम करे तो तुझसे वास्ता नहीं, तो जब वह काम करेगी, तब तलाक़ बाइन पड़ेगी, बशर्ते कि मर्द ने उस लफ़्ज़ के कहते वक़्त तलाक़ की नीयत की हो।

मस्अला 6—अगर यों कहा, अगर तू फ़लां काम करे तो तुझको दो तलाक़ या तीन तलाक़, तो जितने तलाक़ कहे उतनी पड़ेंगी।

मस्अला 7—अपनी बीवी से कहा था अगर तू उस घर में जाये तो तुझ को तलाक़ और वह चली गयी और तलाक़ पड़ गयी। कि इद्दत के अंदर–अंदर उसने रोक रखा या फिर से निकाह कर लिया तो अब फिर घर में जाने से तलाक़ न पड़ेगी। हां अगर यों कहा, जितनी बार उस में जाये हर बार तुझको तलाक़ या यों कहा, जब कभी तू घर में जाये, हर बार तुझको तलाक़, तो इस शक्ल में इद्दत के अंदर या फिर निकाह कर लेने के बाद दूसरी बार घर में जाने से दूसरी तलाक़ हो गयी, फिर इद्दत के अंदर या तीसरे निकाह के बाद अगर तीसरी बार घर में जाएगी तो तलाक़ पड़ जाएगी। अब तीन तलाक़ के बाद उससे निकाह ठीक नहीं। हां, अगर दूसरा ख़ाविंद करके फिर उसी मर्द से निकाह कर ले तो अब उस घर में जाने से तलाक़ न पड़ेगी।

मस्अला 8—किसी ने अपनी औरत से कहा कि अगर तू फ़लां काम करेगी, तो तुझको तलाक़। अभी उसने वह काम नहीं किया था कि उसने अपनी तरफ़ से एक और तलाक़ दे दी और छोड़ दिया और कुछ मुद्दत बाद फिर उसी औरत से निकाह किया और उस निकाह के बाद उसने वही काम किया तो फिर तलाक़ पड़ गयी, हां अगर तलाक़ पड़ने और इद्दत गुज़र जाने के बाद उस निकाह से पहले उसने वही काम कर लिया हो तो अब उस निकाह के बाद उस काम के करने से तलाक़ न पड़ेगी और अगर तलाक़ पाने के बाद इद्दत के अंदर उसने वही काम किया हो तब भी दूसरी तलाक़ पड़ गयी।

मस्अला 9—किसी ने अपनी औरत को कहा अगर तुझको हैज़ आये तो तुझको तलाक़। इसके बाद उसने ख़ून देखा तो अभी से तलाक़ का हुक्म न लगायेंगे। जब पूरे तीन दिन–रात ख़ून आता रहे तो तीन दिन–रात के बाद यह हुक्म लगा देंगे कि जिस वक़्त से ख़ून आया है, उसी वक़्त से तलाक़ पड़ गयी थी और अगर यों कहा हो कि जब तुझको

एक हैज़ आए तो तुझको तलाक़, तो हैज़ के ख़त्म होने पर तलाक़ पड़ गयी।

मस्अला 10—अगर किसी ने बीवी से कहा अगर तू रोज़ा रखे तो तुझको तलाक़, तो रोज़ा रखते ही तुरंत तलाक़ पड़ गयी। हां, अगर यों कहा अगर तू एक रोज़ा रखे या दिन भर का रोज़ा रखे तो तुझको तलाक़, तो रोज़े के ख़त्म पर तलाक़ पड़ेगी। अगर रोज़ा तोड़ डाले तो तलाक़ नहीं पड़ेगी।

मस्अला 11—औरत ने घर से बाहर जाने का इरादा किया। मर्द ने कहा, अभी मत जाओ। औरत न मानी, इस पर मर्द ने कहा, अगर तू बाहर जाए तो तुझको तलाक़ तो इसका हुक्म यह है कि अगर अभी बाहर जायेगी तो तलाक़ पड़ेगी और अगर अभी न गयी, कुछ देर में गयी तो तलाक़ न पड़ेगी, क्योंकि इसका मतलब यही था कि अभी न जाओ, फिर जाना। यह मतलब नहीं कि उम्र भर कभी न जाना।

मस्अला 12—किसी ने यों कहा कि जिस दिन तुझसे निकाह करूं तुझको तलाक़। फिर रात के वक़्त किया, तब तलाक़ पड़ गयी क्योंकि बोल–चाल में इसका मतलब यह है कि जिस वक़्त तुझसे निकाह करूंगा तुझको तलाक़।

बीमार के तलाक़ देने का बयान

मस्अला 1—बीमारी की हालत में किसी ने अपनी औरत को तलाक़ दे दी, फिर औरत की इद्दत अभी ख़त्म न होने पायी थी कि इसी बामारी में मर गया तो शौहर के माल में से बीवी का जितना हिस्सा होता है, उतना उस औरत को भी मिलेगा चाहे एक तलाक़ दी हो या दो तीन और चाहे चार तलाक़े रज्औ दी हो या बाइन, सबका एक ही हुक्म है। और अगर इद्दत ख़त्म हो चुकी थी, तब वह मरा तो हिस्सा न पायेगी। इसी तरह अगर मर्द उसी बीमारी में न मरा, बल्कि उससे अच्छा हो गया था, फिर बीमार हुआ और मर गया तब भी हिस्सा न पायेगी, चाहे इद्दत ख़त्म हो चुकी हो या न ख़त्म हुई हो।

मस्अला 2—औरत ने तलाक़ मांगी थी, इसलिए मर्द[1] ने तलाक़

---

1. चाहे खुद या औरत के मांगने से और चाहे उसने रज्औ मांगी हो या बाइन मांगी हो।

दे दी, तब भी औरत हिस्सा पाने की हक़दार नहीं, चाहे इद्दत के अंदर मरे या इद्दत के बाद दोनों का एक हुक्म है। हां, अगर तलाक़े रज्अी दी हो और इद्दत के अंदर मरे तो हिस्सा पायेगी।

मस्अला 3—बीमारी की हालत में औरत से कहा, अगर तू घर से बाहर जाए तो तुझको बाइन तलाक़ है, फिर औरत घर से बाहर गयी और तलाक़ बाइन पढ़ गयी तो इस सूरत में हिस्सा न पायेगी कि ऐसा काम खुद क्यों किया जिस से तलाक़ पड़ी और और यों कहा, अगर तू खाना खाये तो तुझको तलाक़े बाइन है, ऐसी सूरत में अगर वह इद्दत के अंदर मर जायेगा तो औरत को हिस्सा मिलेगा, क्योंकि औरत के अख़्तियार से तलाक़ नहीं पड़ी। खाना खाना और नमाज़ पढ़ना ज़रूरी है, उसको कैसे छोड़ती और अगर तलाक़े रज्अी दी हो तो पहली सूरत में भी इद्दत के अंदर-अंदर मरने से हिस्सा पायेगी। मतलब यह कि तलाक़े रज्अी में बहराल हिस्सा मिलता है, बस शर्त यह है कि इद्दत के अंदर मरा हो।

मस्अला 4—किसी भले-चंगे आदमी ने कहा जब तू घर से बाहर निकले तो तुझको तलाक़े बाइन है फिर वह जिस वक़्त घर से बाहर निकली, उस वक़्त वह बीमार था और इसी बीमारी में इद्दत के अंदर मर गया, तब भी हिस्सा न पायेगी।

मस्अला 5—तंदुरुस्ती के ज़माने में कहा, जब तेरा बाप परदेस से आये तो तुझको बाइन तलाक़। जब वह परदेस से आया, उस वक़्त मर्द बीमार था और उसी बीमारी में वह मर गया तो हिस्सा न पायेगी और अगर बीमारी की हालत में यह कहा हो और इसी में इद्दतक के अंदर मर गया तो हिस्सा पायेगी।

तलाक़े रज्अी में रज्अत कर लेने यानी रोक रखने का बयान

मस्अला 1—जब किसी ने रज्अी एक तलाक़ या दो तलाक़ें दीं तो इद्दत ख़त्म करने से पहले-पहले मर्द को अख़्तियार है कि उसको रोक रखे, फिर से निकाह करने की ज़रूरत नहीं और औरत चाहे राज़ी हो,

चाहे राज़ी न हो, उसको कुछ अख़्तियार नहीं है और अगर तीन तलाक़ दे दीं तो इसका हुक्म ऊपर बयान हो चुका, उसमें यह अख़्तियार नहीं है।

मस्अला 2—रज्अत करने यानी रोक रखने का तरीक़ा यह है कि या तो साफ़–साफ़ ज़ुबान से कह दे कि मैं तुझको फिर रख लेता हूं, तुझको न छोडूंगा या यों कह दे कि मैं अपने निकाह में तुझको रूजूअ करता हूं या औरत से नहीं कहा किसी और से कहा कि मैंने अपनी बीवी को फिर रख लिया और तलाक़ से बाज़ आया। बस इतना कह देने से वह फिर उसकी बीवी हो गयी या ज़ुबान से तो कुछ नहीं कहा, लेकिन उससे सोहबत कर ली, उसका बोसा लिया, प्यार किया या जवानी की ख़्वाहिश के साथ उसको हाथ लगाया तो इन सब सूरतों में फिर वह उसकी बीवी हो गई, फिर से निकाह करने की ज़रूरत नहीं हैं।

मस्अला 3—जब औरत का रोक रखना मंज़ूर हो तो बेहतर है कि दो चार लोगों को गवाह बना ले कि शायद झगड़ा पड़े तो कोई मुकर न सके। अगर किसी को गवाह न बनाया, तंहाई में ऐसा कर लिया तब भी सही है, मतलब तो हासिल हो ही गया।

मस्अला 4—अगर औरत की इद्दत गुज़र चुकी, तब ऐसा करना चाहा तो कुछ नहीं हो सकता। अब अगर औरत मंज़ूर कर ले और राज़ी हो, तो फिर से निकाह करना पड़ेगा। निकाह किये बग़ैर नहीं रख सकता। अगर वह रखे भी तो औरत का उसके पास रहना दुरूस्त नहीं।

मस्अला 5—जिस औरत को हैज़ आता हो, उसके लिए तलाक़ की इद्दत तीन हैज़ हैं। जब तीन हैज़ पूरे हो चुके तो इद्दत गुज़र चुकी। जब यह बात मालूम हो गई तो अब समझो अगर तीसरा हैज़ पूरे दस दिन आया है तब तो जिस वक़्त ख़ून बंद हुआ और दस दिन पूरे हुए उस वक़्त इद्दत ख़त्म हो गई और रोक रखने का अख़्तियार जो मर्द को था, जाता रहा, चाहे औरत नहा चुकी हो, चाहे अभी न नहाई हो, इसका कुछ एतबार नहीं। और अगर तीसरा हैज़ दस दिन से कम आया और ख़ून बंद हो गया लेकिन अभी औरत ने गुस्ल नहीं किया और न कोई नमाज़ उसके ऊपर वाजिब हुई तो अब भी मर्द का अख़्तियार बाक़ी है। अब भी अपने इरादे से रूकेगा, तो फिर उसकी बीवी बन जाएगी। हां, अगर ख़ून बंद होने पर उसने नहा लिया या नहाया तो नहीं, लेकिन नमाज़ का वक़्त गुज़र गया यानी एक नमाज़ की क़ज़ा उसके ज़िम्मे वाजिब हो गई, इन दोनों सूरतों में मर्द का अख़्तियार जाता रहा। अब निकाह किए बग़ैर नहीं रख सकता।

मस्अला 6—जिस औरत से अभी सोहबत न की हो, न तंहाई हुई हो, उसको तलाक़ देने से रोक रखने का अख़्तियार नहीं रहता, क्योंकि जो तलाक़ दी जाए तो बाइन ही पड़ती है जैसा ऊपर बयान हो चुका। ख़ूब याद रखो।

मस्अला 7—अगर दोनों एक तंहाई में तो रहे, लेकिन मर्द कहता है मैंने सोहबत नहीं की, फिर इक़रार के बाद तलाक़ दे दी तो अब तलाक़ से बाज़ आने का अख़्तियार उसको नहीं।

मस्अला 8—जिस औरत को एक या दो तलाक़े रज्अी मिली हों, जिसमें मर्द को तलाक़ से बाज़ आने का अख़्तियार होता है, ऐसी औरत को मुनासिब है कि ख़ूब बनाव-सिंगार करके रहा करे कि शायद मर्द का जी कभी उसकी तरफ़ झुक पड़े और रज्अत करे और मर्द का इरादा अगर बाज़ आने का न हो तो उसको मुनासिब है कि जब घर में आये तो खांस-खंखार कर आये कि वह अपना बदन अगर कुछ खुला हो तो ढक ले और किसी बे-मौक़ा जगह पर निगाह न पड़े और जब इद्दत पूरी हो चुके तो औरत कहीं और जाकर रहे।

मस्अला 9—अगर अभी रज्अत न की हो तो उस औरत को अपने साथ सफ़र में ले जाना जायज़ नहीं और उस औरत को उसके साथ जाना भी दुरूस्त नहीं।

मस्अला 10—जिस औरत को एक या दो तलाक़ बाइन दे दी, जिसमें रोक रखने का अख़्तियार नहीं होता, उसका हुक्म यह है कि अगर किसी और मर्द से निकाह करना चाहे तो इद्दत के बाद निकाह करे। इद्दत के अंदर निकाह दुरूस्त नहीं और खुद उसी से निकाह करना मंज़ूर हो तो इद्दत के अंदर भी हो सकता है।

बीवी के पास न जाने की क़सम खाने का बयान

मस्अला 1—जिसने क़सम खाई और यों कह दिया, ख़ुदा की क़सम ! अब सोहबत न करूंगा ! ख़ुदा की क़सम ! तुझसे कभी सोहबत न

करूंगा ! क़सम खाता हूं कि तुझसे सोहबत न करूंगा या और किसी तरह कहा तो उसका हुक्म यह है कि अगर उसने सोहबत न की तो चार महीने गुज़रने पर औरत पर तलाक़े बाइन पड़ जाएगी। अब निकाह किए बग़ैर मियां–बीवी की तरह नहीं रह सकते और अगर चार महीने के अन्दर ही अन्दर उसने अपनी क़सम तोड़ डाली और सोहबत कर ली तो तलाक़ न पड़ेगी हां, क़सम तोड़ने का कफ़्फ़ारा देना पड़ेगा। ऐसी क़सम खाने को शरीअत में ईला कहते हैं।

मस्अला 2—हमेशा के लिए सोहबत न करने की क़सम नहीं खाई बल्कि सिर्फ़ चार महीने की क़सम खाई और यों कहा, ख़ुदा की क़सम ! चार माह तक तुझसे से सोहबत न करूंगा, तो इससे भी ईला हो गया, इसका भी यही हुक्म है, अगर चार महीने तक सोहबत न करेगा तो तलाक़ बाइन पड़ जायेगी और अगर चार महीने से पहले सोहबत कर ले तो क़सम का कफ़्फ़ारा दे और क़सम के कफ़्फ़ारे का बयान ऊपर गुज़र चुका है।

मस्अला 3—अगर चार महीने से कम के लिए क़सम खाई तो इसका कुछ एतबार नहीं, इससे ईला न होगा। चार महीने से एक दिन भी कम करके क़सम खाये तब भी ईला न होगा, हां, जितने दिन की क़सम खाई है उतने दिन से पहले–पहले सोहबत न कर लेगा तो क़सम तोड़ने का कफ़्फ़ारा देना पड़ेगा। और अगर सोहबत न की तो औरत को तलाक़ न पड़ेगी और क़सम भी पूरी रहेगी।

मस्अला 4—किसी ने सिर्फ़ चार महीने के लिए क़सम खाई फिर अपनी क़सम नहीं तोड़ी, इसलिए चार महीने के बाद तलाक़ पड़ गई और तलाक़ के बाद फिर उसी मर्द से निकाह हो गया तो अब इस निकाह के बाद अगर चार महीने से सोहबत न करे तो कुछ हरज नहीं, अब कुछ न होगा। और हमेशा के लिए क़सम खाली जैसे यों कह दिया कि क़सम खाता हूं कि अब तुझसे सोहबत न करूंगा या यों कहां, ख़ुदा की क़सम तुझसे सोहबत न करूंगा। फिर अपनी क़सम नहीं तोड़ी और चार महीने के बाद तलाक़ पड़ गई, इसके बाद फिर उसी से निकाह कर लिया और निकाह के बाद फिर चार महीने तक सोहबत नहीं की तो अब दूसरी तलाक़ पड़ गई। अगर तीसरी बार फिर उसी से निकाह कर लिया तो इसका भी यही हुक्म है कि इस निकाह के बाद भी अगर चार महीने तक सोहबत न करेगा तो तीसरी तलाक़ पड़ जायेगी और अब बग़ैर दूसरा

ख़ाविंद किए उससे भी निकाह न हो सकेगा, हां, दूसरे या तीसरे निकाह के बाद सोहबत कर लेता तो क़सम टूट जाती अब कभी तलाक़ न पड़ती, हां, क़सम तोड़ने का कफ़्फ़ारा देना पड़ता।

मस्अला 5—अगर इसी तरह आगे–पीछे तीनों निकाहों में तीन तलाक़ें पड़ गई, इसके बाद औरत ने दूसरा ख़ाविंद कर लिया। जब उसने छोड़ दिया तो इद्दत ख़त्म करके फिर उसी मर्द से निकाह कर लिया और उसने फिर सोहबत नहीं की तो अब तलाक़ न पड़ेगी, चाहे जब तक सोहबत न करे, लेकिन जब कभी सोहबत करेगा क़सम का कफ़्फ़ारा देना पड़ेगा, क्योंकि क़सम तो यह खाई थी कि कभी सोहबत न करूंगा, वह क़सम टूट गई।

मस्अला 6—अगर औरत को तलाक़े बाइन दे दी फिर उससे सोहबत न करने की क़सम खा ली तो ईला नहीं हुआ। अब फिर से निकाह करने के बाद अगर सोहबत न करे तो तलाक़ नहीं पड़ेगी, लेकिन जब सोहबत करेगा तो क़सम तोड़ने का कफ़्फ़ारा देना पड़ेगा और अगर तलाक़े रज्अी देने के बाद इद्दत के अन्दर ऐसी क़सम खा ली तो ईला हो गया। अब अगर रज्अत करे और सोहबत न करे तो चार महीने के बाद तलाक़ पड़ जायेगी और अगर सोहबत करे तो क़सम का कफ़्फ़ारा दे।

मस्अला 7—ख़ुदा की क़सम नहीं खाई बल्कि यों कहा अगर तुमसे सोहबत करूं तो तुझको तलाक़ है तब भी ईला हो गया, सोहबत करेगा तो रज्अी तलाक़ पड़ जाएगी और क़सम का कफ़्फ़ारा इस शक्ल में न देना पड़ेगा और अगर सोहबत न की तो चार माह के बाद तलाक़े बाइन पड़ जायेगी और अगर यों कहा, अगर तुझसे सोहबत करूं तो मेरे ज़िम्मे एक हज है या एक रोज़ा है या एक रूपए की ख़ैरात है या एक क़ुर्बानी है तो इन सब सूरतों में भी ईला हो गया। अगर सोहबत करेगा तो जो बात कही है वह करनी पड़ेगी और कफ़्फ़ारा देना पड़ेगा और अगर सोहबत न की तो चार महीने बाद तलाक़ पड़ जायेगी।

ख़ुलअ़ का बयान

मस्अला 1—अगर मियां–बीवी में किसी तरह निबाह न हो सके और मर्द तलाक़ भी न देता हो तो औरत को जायज़ है कि कुछ माल देकर या अपना मह्र देकर अपने मर्द से कहे कि इतना रूपया लेकर मेरी

जान छोड़ दे या यों कहे कि जो मेरा मह्र तेरे ज़िम्मे है, उसके बदले में मेरी जान छोड़ दे। उसके जवाब में मर्द कहे, मैंने छोड़ दी तो उससे औरत पर एक बाइन पड़ गई, रोक रखने का अख़्तियार मर्द को नहीं है, हां, अगर मर्द ने उसी जगह बैठे–बैठे जवाब नहीं दिया, बल्कि उठ खड़ा हुआ या मर्द तो नहीं उठा, औरत उठ खड़ी हुई, तब मर्द ने कहा, अच्छा मैंने छोड़ दी तो इससे कुछ नहीं हुआ। जवाब व सवाल दोनों एक की जगह होने चाहिए। इस तरह जान छुड़ाने को शरीअत में **खुलअ** कहते हैं

मस्अला 2—मर्द ने कहा मैंने तुझसे खुलअ किया। औरत ने कहा, मैंने क़ुबूल किया, तो खुलअ हो गया, हां, अगर औरत ने उसी जगह जवाब न दिया हो, वहां से खड़ी हो गई हो या औरत ने क़ुबूल ही नहीं किया हो तो कुछ नहीं हुआ लेकिन अगर औरत अपनी जगह बैठी रही और मर्द यह कह उठ खड़ा हुआ और औरत ने उसके उठने के बाद क़ुबूल कर लिया तब भी ख़ुलअ हो गया।

मस्अला 3—मर्द ने सिर्फ़ इतना कहा, मैंने तुझसे ख़ुलअ किया और औरत ने कुबूल कर लिया और रूपए–पैसे का ज़िक्र न मर्द ने किया और न औरत ने, तब भी जो हक़ मर्द का औरत पर है और जो हक़ औरत का मर्द पर है, सब माफ़ हुआ। अगर मर्द के ज़िम्मे मह्र बाक़ी हो, तो वह भी माफ़ हो गया और अगर औरत पा चुकी है तो ख़ैर, अब उसका फेरना वाजिब नहीं, हां, इद्दत के ख़त्म होने तक रोटी–कपड़ा और रहने का घर देना पड़ेगा। हां, अगर औरत ने कह दिया हो कि इद्दत का रोटी–कपड़ा और रहने का घर भी तुझसे न लूंगी तो वह भी माफ़ हो गया।

मस्अला 4—और अगर इसके साथ कुछमाल का भी ज़िक्र कर दिया जैसे यों कहा, सौ रूपये के बदले में मैंने तुझसे खुलअ किया, फिर औरत ने क़ुबूल कर लिया तो ख़ुलअ हो गया। अब औरत के ज़िम्मे सौ रूपये देने वाजिब हो गये। अपना मह्र पा चुकी हो तब भी सौ रूपये देने पड़ेंगे और अगर मह्र अभी न पाया हो तब भी देने पड़ेंगे और मह्र भी न मिलेगा, क्योंकि वह ब–वजह खुलअ माफ़ हो गया।

मस्अला 5—ख़ुलअ में अगर मर्द का क़ुसूर हो तो मर्द का रूपया और माल लेना, जो मह्र मर्द के ज़िम्मे है उसके बदले में ख़ुलअ करना बड़ा गुनाह और हराम है। अगर कुछ माल ले लिया तो उसको अपने ख़र्च में लाना भी हराम है और अगर औरत ही का क़ुसूर हो तो जितना मह्र दिया

है उससे ज़्यादा माल न लेना चाहिए तो भी ख़ैर बे–जा तो हुआ लेकिन कुछ गुनाह नहीं हुआ।

मस्अला 6—औरत खुलअ करने पर तैयार न थी। मर्द ने उस पर ज़बरदस्ती की और ख़ुलअ करने पर मजबूर किया यानी मार–पीट कर, धमका कर खुलअ किया तो तलाक़ पड़ गयी लेकिन माल औरत पर वाजिब नहीं हुआ और अगर मर्द के ज़िम्मे मह्र बाक़ी हो तो वह भी माफ़ नहीं हुआ।

मस्अला 7—ये सब बातें उस वक़्त हैं जब ख़ुलअ का लफ़्ज़ कहा हो या यों कहा हो, सौ रूपए या हज़ार रूपए के बदले में मेरी जान छोड़ दे या यों कहा मेरे मह्र के बदले में मुझको छोड़ दे और अगर इस तरह नहीं कहा बल्कि तलाक़ का लफ़्ज़ कहा जैसे यों कहा सौ रूपए के बदले में मुझे तलाक़ दे दे तो उसको खुलअ न कहेंगे। अगर मर्द ने उस माल के बदले में तलाक़ दे दी तो एक तलाक़ बाइन पड़ जाएगी और इसमें कोई हक़ माफ़ नहीं हुआ, न वे हक़ माफ़ हुए जो मर्द के ऊपर हैं, न वे जो औरत पर हैं। मर्द ने अगर मह्र न दिया हो, तो वह भी माफ़ नहीं हुआ, औरत उसकी दोवदार हो सकती है और मर्द ये सौ रूपए औरत से ले लेगा।

मस्अला 8—मर्द ने कहा मैंने सौ रूपए के बदले में तलाक़ दे दी तो औरत के क़ुबूल करने पर रूका रहेगा। अगर न क़ुबूल करे तो न पड़ेगी और अगर क़ुबूल करे तो एक तलाक़ बाइन पड़ गयी, लेकिन अगर जगह बदल जाने के बाद क़ुबूल किया तो तलाक़ नहीं पड़ी।

मस्अला 9—औरत ने कहा, मुझे तलाक़ दे दो ! मर्द ने कहा, तू अपना मह्र वग़ैरह अपने सब हक़ माफ़ कर दे तो तलाक़ दे दूं। इस पर औरत ने कहा, अच्छा मैंने माफ़ किया। इसके बाद मर्द ने तलाक़ नहीं दी तो कुछ माफ़ नहीं हुआ और अगर उस मज्लिस में तलाक़ दे दी तो माफ़ हो गया।

मस्अला 10—औरत ने कहा तीन सौ रूपए के बदले में मझको तलाक़ दे दे। इस बात पर मर्द न एक ही तलाक़ दी तो सिर्फ़ एक सौ रूपए मर्द को मिलेंगे और अगर दो तलाक़ें दी हों तो दो सौ और अगर तीनों दे दीं तो पूरे तीन सौ रूपए औरत से दिलाए जाएंगे और अब सूरतों में तलाक़े बाइन पड़ेगी, क्योंकि माल के बदले है।

मस्अला 11—ना–बालिग़ लड़का और दीवान पागल आदमी अपनी बीवी से खुलअ नहीं कर सकता।

बीवी को मां के बराबर कहने का बयान

मस्अला 1—किसी ने अपनी बीवी से कहा कि तू मेरी मां के बराबर है या यों कहा तू मेरे लिए मां के बराबर है, तू मेरे हिसाब में मां के बराबर है, अब तू मेरे नज़दीक मां जैसी है, मां की तरह है, तो देखो इसका मतलब क्या है। अगर यह मतलब लिया कि इज़्ज़त में, बुज़ुर्गी में, मां के बराबर है या यह मतलब लिया कि तू बिल्कुल बुढ़िया है, उम्र में मेरी मां के बराबर है, तब तो इस कहने से कुछ नहीं हुआ। इसी तरह अगर इसके कहते वक़्त कुछ नीयत नहीं की और कोई मतलब नहीं लिया, यों ही बक दिया, तब भी कुछ हरज नहीं हुआ और अगर इस कहने से तलाक़ देने और छोड़ने की नीयत है तो उसको एक तलाक़े बाइन पड़ गई और अगर तलाक़ देने की भी नीयत नहीं थी और औरत छोड़ने का इरादा भी नहीं था, बल्कि मतलब सिर्फ़ इतना है कि अगर्चे तू मेरी बीवी है, अपने निकाह से मुझे अलग नहीं करता, लेकिन अब तुझसे सोहबत कभी नहीं करूंगा। तुझसे सोहबत करने को अपने ऊपर हराम कर लिया, बस रोटी कपड़ा ले और पड़ी रह। मतलब यह है कि उसके छोड़ने की नीयत नहीं, सिर्फ़ सोहबत करने को अपने ऊपर हराम कर लिया है, इसको शरीअत में 'ज़िहार' कहते हैं। इसका हुक्म यह है कि वह औरत रहेगी तो उसी के निकाह में, लेकिन मर्द जब तक उसका कफ़्फ़ारा न अदा कर दे तब तक सोहबत करना या जवानी की ख़्वाहिश के साथ हाथ लगाना, चूमना, प्यार करना, हराम है, जब तक कफ़्फ़ारा न देगा, तब तक वह औरत हराम रहेगी चाहे जितने वर्ष गुज़र जाएं। जब मर्द कफ़्फ़ारा न देगा, तब तक वह औरत हराम रहेगी चाहे जितने वर्ष गुज़र जाएं। जब मर्द कफ़्फ़ारा दे दे तो मियां–बीवी की तरह रहें, निकाह करने की ज़रूरत नहीं और इसका कफ़्फ़ारा इसी तरह दिया जाता है, जिस तरह रोज़ा तोड़ने का कफ़्फ़ारा दिया जाता है।

मस्अला 2—अगर कफ़्फ़ारा देने से पहले ही सोहबत कर ली, तो बहुत गुनाह हुआ। अल्लाह तआला से तौबा करे और अब पक्का इरादा करे कि कफ़्फ़ारा दिए बग़ैर फिर कभी सोहबत न करूंगा और औरत को चाहिए कि जब तक मर्द कफ़्फ़ारा न दे तब तक उसको अपने पास आने न दे।

मस्अला 3—अगर बहन के बराबर या बेटी या फूफी या और

किसी ऐसी औरत के बराबर कहा, जिसके साथ निकाह हमेशा हराम होता है, तो उसका भी यही हुक्म है।

मस्अला 4—किसी ने कहा तू मेरे लिए सूअर के बराबर है तो अगर तलाक़ देने या छोड़ने की नीयत थी तो तलाक़ पड़ गई और अगर ज़िहार की नीयत थी यानी यह मतलब लिया कि तलाक़ तो नहीं देता लेकिन सोहबत करने को अपने ऊपर हराम किये लेता हूं तो कुछ नहीं हुआ। इसी तरह अगर कुछ नीयत न की हो तब भी कुछ नहीं हुआ।

मस्अला 5—अगर ज़िहार में चार महीने या इससे ज़्यादा मुद्दत तक सोहबत न की और कफ़्फ़ारा न दिया तो तलाक़ नहीं पड़ी, इससे ईला नहीं होता।

मस्अला 6—जब तक कफ़्फ़ारा न दे, तब तक देखना, बात–चीत करना हराम नहीं, हां पेशाब की जगह को देखना दुरूस्त नहीं।

मस्अला 7—अगर हमेशा के लिए ज़िहार नहीं किया, बल्कि कुछ मुद्दत मुक़र्रर कर दी जैसे यों कहे साल भर के लिए या चार महीने के लिए तू मेरे लिए मां के बराबर है, तो जितनी मुद्दत मुक़र्रर की है, उतनी मुद्दत तक ज़िहार रहेगा। अगर उस मुद्दत के अंदर सोहबत करना चाहे तो कफ़्फ़ारा दे और अगर इस मुद्दत के बाद सोहबत करे तो कुछ न देना पड़ेगा। औरत हलाल हो जायेगी।

मस्अला 8—ज़िहार में भी अगर फ़ौरन इनशाअल्लाह कह दिया तो कुछ नहीं हुआ।

मस्अला 9—ना–बालिग़ लड़का और दीवाना पागल आदमी ज़िहार नहीं कर सकता, अगर करेगा, तो कुछ न होगा। इसी तरह अगर काई ग़ैर औरत से ज़िहार करे, जिससे अभी निकाह नहीं किया है तो भी कुछ नहीं हुआ। अब उससे निकाह करना दुरूस्त है।

मस्अला 10—ज़िहार का लफ़्ज़ अगर कई बार कहे जैसे दो बार या तीन बार भी कहा कि तू मेरे लिए मां के बराबर है तो जितनी बार कहा है, उतने कफ़्फ़ारे देने पड़ेंगे, हां, दूसरी–तीसरी बार कहने से ख़ूब मज़बूत और पक्के हो जाने की नीयत की हो, नये सिरे से ज़िहार करने का इरादा न हो तो एक ही कफ़्फ़ारा दे।

मस्अला 11—अगर कई औरतों से ऐसा कहा तो जितनी बीवियां हों, उतने ही कफ़्फ़ारे दे।

मस्अला 12—अगर बराबर का लफ़्ज़ नहीं कहा, न 'मिस्ल' 'जैसे'

और 'तरह' का लफ़्ज़ कहा बल्कि यों कहा तू मेरी मां है या यों कहा, तू मेरी बहन है तो इससे कुछ नहीं हुआ। औरत हराम नहीं हुई, लेकिन ऐसा कहना बुरा और गुनाह है। इसी तरह पुकारते वक़्त यों कहना मेरी बहन फ़लां काम करो, यह भी बुरा है, मगर इससे कुछ नहीं होगा।

मस्‌अला 13—किसी ने यों कहा अगर तुझको रखूं तो मां को रखूं या यों कहा अगर तुझसे सोहबत करूं तो गोया मां से करूं, इससे कुछ नहीं हुआ।

मस्‌अला 14—अगर यों कहा तू मेरे लिए मां की तरह हराम है तो अगर तलाक़ देने की नीयत हो तो तलाक़ पड़ेगी और अगर ज़िहार की नीयत हो या कुछ नीयत न की हो तो ज़िहार हो जायेगा, कफ़्फ़ारा देकर सोहबत करना दुरूस्त है।

ज़िहार के कफ़्फ़ारे का बयान

मस्‌अला 1—ज़िहार का कफ़्फ़ारा उसी तरह है जिस तरह रोज़ा–तोड़ने का कफ़्फ़ारा है। दोनों में कुछ फ़र्क़ नहीं। वहां हमने ख़ूब खोल–खोल के बयान किया है, वही निकाल कर देख लो। अब यहां कुछ ज़रूरी बातें जो वहां बयान नहीं हुई हम यहां बयान करते हैं।

मस्‌अला 2—अगर ताक़त हो तो मर्द साठ रोज़े लगातार रखे, बीच में कोई छूटने न पाये और जब तक रोज़े ख़त्म न हो चुके, तब तक औरत से सोहबत न करे। अगर रोज़े ख़त्म होने से पहले उसी औरत से सोहबत कर ली तो अब सब रोज़े फिर से रखे चाहे दिन को उस औरत से सोहबत की हो या रात को और चाहे जान–बूझकर ऐसा किया हो या भूले से, सबका एक ही हुक्म है।

मस्‌अला 3—अगर शुरू महीना यानी पहली तारीख़ से रोज़े रखने शुरू किये तो पूरे दो महीने रोज़े रख ले चाहे पूरे साठ दिन हों और तीस–तीस दिन का महीना हो या इससे कम दिन हों, दोनों तरह कफ़्फ़ारा अदा हो जाएगा और अगर पहली तारीख़ से रोज़े रखने न शुरू किये तो पूरे साठ दिन रोज़े रखे।

मस्‌अला 4—अगर कफ़्फ़ारा रोज़े से अदा कर रहा था और कफ़्फ़ारा पूरा होने से पहले दिन को या रात को भूले से सोहबत कर ली तो कफ़्फ़ारा दोहराना पड़ेगा।

मस्अला 5—और अगर रोज़े की ताक़त न हो तो साठ फ़क़ीरों को दो वक़्त खाना खिलाये या कच्चा अनाज दे दे। अगर सब फ़क़ीरों को अभी खाना नहीं खिला चुका था कि बीच में सोहबत करली तो गुनाह तो हुआ मगर इस शक्ल में कफ़्फ़ारा दोहराना न पड़ेगा और खाना खिलाने की सब वही सूरत है जो वहां बयान हो चुकी है।

मस्अला 6—किसी के ज़िम्मे ज़िहार के दो कफ़्फ़ारे थे। उसने साठ मिस्कीनों को चार–चार गेहूं दे दिये और यह समझा कि हर कफ़्फ़ारे से दो सेर देता हूं, इसलिए दोनों कफ़्फ़ारे अदा हो गये, तब भी एक ही कफ़्फ़ारा अदा हुआ। दूसरा कफ़्फ़ारा फिर दे और अगर एक कफ़्फ़ारा रोज़ा तोड़ने का था, दूसरा ज़िहार का, उसमें ऐसा किया तो दोनों अदा हो गये।

लिआन का बयान

जब कोई अपनी बीवी को ज़िना की तोहमत लगा दे या जो लड़का पैदा हो, उसको कहे कि यह मेरा लड़का नहीं, न जाने किसका है, तो इसका हुक्म यह है कि औरत क़ाज़ी और शरअी हाकिम के पास फ़रियाद करे तो हाकिम दोनों से क़सम ले, पहले शौहर से इस तरह कहलाये, मैं खुदा को गवाह कर के कहता हूं कि जो तोहमत मैंने उसको लगायी है, उसमें सच्चा हूं, चार बार इसी तरह शोहर कहे, फिर पांचवीं बार कहे अगर मैं झूठा हूं तो मुझ पर खुदा की लानत हो। जब मर्द पांचवी बार कह चुके तो औरत चार बार इसी तरह कहे मैं खुदा को गवाह करके कहती हूं कि इसने जो तोहमत मुझको लगायी है, इस तोहमत लगाने में यह झूठा है और पांचवी बार कहे, अगर इस तोहमत लगाने में यह सच्चा हो तो मुझ पर ख़ुदा का ग़ज़ब टूटे। जब दोनों क़सम खा लें तो हाकिम दोनों में जुदाई करा देगा और तलाक़ बाइन पड़ जाएगी जब यह लड़का बाप का न कहा जाएगा, मां के हवाले कर दिया जायेगा। इस क़समा–क़समी को शरीअत में लिआन कहते हैं।

मियां के ला–पता होने का बयान

जिसका शौहर बिल्कुल ला–पता हो गया, मालूम नहीं कि ज़िंदा है या मर गया है तो वह औरत दूसरा निकाह नहीं कर सकती बल्कि

इन्तिज़ार करती रहे कि शायद आ जाए। जब इन्तिज़ार करते-करते इतनी मुद्दत गुज़र जाए कि शौहर की उम्र नव्वे वर्ष की हो जाए तो अब हुक्म लगा देंगे कि वह मर गया होगा, सो अगर वह अभी जवान हो और निकाह करना चाहे तो शौहर की उम्र नव्वे वर्ष की होने के बाद इद्दत पूरी करके निकाह कर सकती है, मगर शर्त यह है कि उस ला-पता मर्द के मरने का हुक्म किसी शरई हाकिम ने लगाया हो।

इद्दत का बयान

जब किसी का मियां तलाक़ दे दे या खुलअ व ईला वग़ैरह किसी और तरह से निकाह टूट जाये या शौहर मर जाये तो इन तमाम शक्लों में थोड़ी मुद्दत तक औरत को एक घर में रहना पड़ता है। जब तक यह मुद्दत ख़त्म न हो चुके तब तक और कहीं नहीं जा सकती, न किसी और मर्द से अपना निकाह कर सकती है। जब वह मुद्दत पूरी हो जाए तो जी चाहे, करे। इस मुद्दत गुज़ारने को इद्दत कहते हैं।

मस्अला 2—अगर मियां ने तलाक़ दे दी तो तीन हैज़ आने तक शौहर ही के घर, जिसमें तलाक़ मिली है, वहीं बैठी रहे, उस घर से बाहर न निकले, न दिन को, न रात को, न किसी दूसरे से निकाह करे। जब पूरे तीन हैज़ ख़त्म हो गये तो इद्दत पूरी हो गयी, अब जहां जी चाहे जाए, मर्द ने चाहे एक ही तलाक़ दी हो या दो तलाक़ें दी हों और तलाक़ें बाइन दी हो या रज्ई, सबका एक हुक्म है।

मस्अला 3—अगर छोटी लड़की को तलाक़ मिल गयी जिस को अभी हैज़ नहीं आता या इतनी बुढ़िया है कि अब हैज़ आना बन्द हो गया है, तो इन दोनों की इद्दत तीन महीने है। तीन महीने बैठी रहे, इसके बाद अख़्तियार है, जो जी चाहे, करे।

मस्अला 4—किसी लड़की को तलाक़ मिल गयी। उसने महीनों के हिसाब से इद्दत शुरू की, फिर इद्दत के अन्दर ही एक-दो महीने का हैज़ आ गया तो अब पूरे तीन हैज़ आने तक बैठी रहे, जब तक तीन हैज़ पूरे न हों, इद्दत न ख़त्म होगी।

मस्अला 5—अगर किसी को पेट है और उसी ज़माने में तलाक़ मिल गयी तो बच्चा पैदा होने तक बैठी रहे, यही इसकी इद्दत है। जब बच्चा पैदा हो गया इद्दत ख़त्म हो गयी। तलाक़ मिलने के बाद थोड़ी

ही देर में अगर बच्चा पैदा हो गया तब भी इद्दत ख़त्म हो गयी।

मस्अला 6—अगर किसी ने हैज़ के ज़माने में तलाक़ दी तो जिस हैज़ में तलाक़ दी है, उस हैज़ का कुछ एतबार नहीं है, उसको छोड़ कर तीन हैज़ और पूरे करे।

मस्अला 7—तलाक़ की इद्दत उसी औरत पर है जिसको सोहबत के बाद तलाक़ मिली हो या सोहबत तो अभी नहीं हुई मगर मियां–बीवी में तनहाई व यकजाई हो चुकी है तब तलाक़ मिली, चाहे वैसी तंहाई हुई हो जिससे पूरा मह्र दिलाया जाता है या वैसी तंहाई हुई जिससे पूरा मह्र वाजिब नहीं होता, बहरहाल इद्दत बैठना वाजिब है और अगर अभी बिल्कुल किसी क़िस्म की तंहाई न होने पायी थी कि तलाक़ मिल गयी तो ऐसी औरत पर इद्दत नहीं, जैसा कि ऊपर आ चुका है।

मस्अला 8—ग़ैर औरत को अपनी बीवी समझकर धोखे से सोहबत कर ली, फिर मालूम हुआ कि यह बीवी न थी, तो उस औरत को भी इद्दत बैठना होगा। जब तक इद्दत ख़त्म न हो चुके तब तक अपने शौहर को भी सोहबत न करने दे, नहीं तो दोनों पर गुनाह होगा। उसकी इद्दत भी यही है जो अभी बयान हुई। अगर उसी दिन पेट रह गया तो बच्चा होने तक इन्तिज़ार करे और इद्दत बैठे और यह बच्चा हरामी नहीं है, इसका नसब ठीक है, जिसने धोखे से सोहबत की है उसी का लड़का है।

मस्अला 9—किसी ने बे–क़ायदा निकाह कर लिया, जैसे किसी औरत से निकाह किया था, फिर मालूम हुआ कि उसका शौहर अभी ज़िंदा है और उसने अभी तलाक़ नहीं दी या मालूम हुआ कि उस मर्द व औरत ने बचपन में एक औरत का दूध पिया है, इसका हुक्म यह है कि अगर मर्द ने उससे सोहबत कर ली, फिर हाल खुलने के बाद जुदाई हो गयी, तो भी इद्दत बैठना पड़ेगा। जिस वक़्त से मर्द ने तौबा करके जुदाई अपनायी, उसी वक़्त से इद्दत शुरू हो गयी और अगर अभी सोहबत न होने पायी तो इद्दत वाजिब नहीं, बल्कि ऐसी औरत से ख़ून तनहाई न यकजाई भी हो चुकी हो, तब भी इद्दत वाजिब नहीं, इद्दत जब ही है कि सोहबत हो चुकी हो।

मस्अला 10—इद्दत के अंदर खाना–कपड़ा उसी मर्द के ज़िम्मे वाजिब है जिसने तलाक़ दी और इसका बयान अच्छी तरह आगे आता है।

मस्अला 11—किसी ने अपनी औरत को तलाक़े बाइन दी या तीन तलाकें दे दीं फिर इद्दत के अंदर धोखे से उससे सोहबत कर ली। अब उस धोखे की सोहबत की वजह से एक इद्दत और वाजिब हो गयी। अब तीन हैज़ और पूरे करे। जब तीन हैज़ और गुज़र जाएंगे तो दोनों इद्दतें ख़त्म हो जाएंगी।

मस्अला 12—मर्द ने तलाक़े बाइन दे दी और जिस घर में इद्दत बैठी है, उसी में वह भी रहती है, तो ख़ूब अच्छी तरह परदा बांध कर आड़ करे।

मौत की इद्दत का बयान

मस्अला 1—किसी का शौहर मर गया तो वह चार महीने और दस दिन तक इद्दत बैठे। शौहर के मरते वक़्त जिस घर में रहा करती थी, उसी घर में रहना चाहिए, बाहर निकलना दुरुस्त नहीं। हां, अगर कोई ग़रीब औरत है, जिसके पास गुज़ारे के मुताबिक़ ख़र्च नहीं, उसने खाना पकाने वग़ैरह की नौकरी कर ली, उसको जाना और निकलना दुरुस्त है, लेकिन रात को अपने ही घर में रहा करे, चाहे सोहबत हो चुकी हो या न हुई हो और चाहे हैज़ आता हो या न आता हो, सबका एक हुक्म है कि चार महीने दस दिन इद्दत बैठना चाहिए, हां, अगर वह औरत पेट से थी, इस हालत में शौहर मरा तो बच्चा पैदा होने तक इद्दत बैठे। अब महीनों का कुछ एतबार नहीं है, अगर मरने से दो चार घड़ी बाद बच्चा पैदा हो गया तब भी इद्दत ख़त्म हो गयी।

मस्अला 2—घर भर में जहां जी चाहे, रहे। यह जो दस्तूर है कि ख़ास एक जगह मुक़र्रर करके रहती है कि ग़म खायी हुई की चारपाई और ख़ुद वह वहां से टलने नहीं पाती, यह बिल्कुल बेकार की बात है, इसको छोड़ देना चाहिए।

मस्अला 3—शौहर ना–बालिग़ बच्चा था और जब वह मरा तो उसको पेट था तब भी उसकी इद्दत बच्चा पैदा होने तक है, लेकिन यह लड़का हरामी है, शौहर को न कहा जायेगा।

मस्अला 4—अगर किसी को मियां चांद की पहली तारीख़ को मरा और औरत को हमल नहीं, तो चांद के हिसाब से चार महीने दस दिन पूरे करे और अगर पहली तारीख़ को नहीं मरा है तो हर महीना तीस तीस

का लगा कर चार महीने दस दिन पूरे करना चाहिये और तलाक़ की इद्दत भी यही हुक्म है। अगर हैज़ नहीं आता, न पेट है और न चांद की पहली तारीख़ को तलाक़ मिल गयी तो चांद के हिसाब से तीन महीने पूरे कर ले चाहे 29 का चांद हो या 30 का और अगर पहली तारीख़ को तलाक़ नहीं मिली है तो हर महीने तीस–तीस दिन का लगाकर तीन महीने पूरे कर ले।

मस्अला 5—किसी ने बे–क़ायदा निकाह किया था जैसे बे–गवाहों के निकाह कर लिया या बहनोई से निकाह हो गया और उसकी बहन अब तक उसके निकाह में है, फिर वह शौहर मर गया तो ऐसी औरत जिसका निकाह सही नहीं हुआ, मर्द के मरने से चार महीने दस दिन इद्दत न बैठे बल्कि तीन हैज़ तक इद्दत बैठे। हैज़ न आता हो तो तीन महीने और हमल से हो तो बच्चा होने तक बैठे।

मस्अला 6—किसी ने अपनी बीमारी में तलाक़े बाइन दे दी और तलाक़ की इद्दत अभी पूरी न होने पायी थी कि वह मर गया तो देखो तलाक़ की इद्दत बैठने से ज़्यादा दिन लगेंगे या मौत की इद्दत पूरी करने में। जिस इद्दत में ज़्यादा दिन लगेंगे वह इद्दत पूरी करे और अगर बीमारी में तलाक़े रज्अी दी है और अभी इद्दत तलाक़ की न गुज़री थी कि शौहर मर गया तो उस औरत पर वफ़ात की इद्दत ज़रूरी है।

मस्अला 7—किसी का मियां मर गया मगर उसकी ख़बर न मिली। चार महीने दस दिन गुज़र चुकने के बाद ख़बर आयी तो उसकी इद्दत पूरी हो चुकी। जब से ख़बर मिली है, तब से इद्दत बैठना ज़रूरी नहीं। इसी तरह अगर शौहर ने तलाक़ दे दी मगर उसको न मालूम हुआ, बहुत दिनों के बाद ख़बर मिली, जितनी इद्दत उसके ज़िम्मे वाजिब थी, वह ख़बर मिलने से पहले ही गुज़र चुकी तो उसकी भी इद्दत पूरी हो गयी, अब इद्दत बैठना वाजिब नहीं।

मस्अला 8—किसी काम के लिए घर से कहीं बाहर गयीं थी या अपनी पड़ोसिन के घर गयी थी कि इतने में उसका शौहर मर गया, तो अब फ़ौरन वहां से चली आये और जिस घर में रहती थी वहां रहे।

मस्अला 9—मरने की इद्दत में औरत को रोटी–कपड़ा न दिलाया जाएगा, अपने पास से ख़र्च करे।

मस्अला 10—कुछ जगहों का तरीक़ा है कि मियां के मरने के बाद साल भर तक इद्दत के तौर पर बैठी रहती है यह बिल्कुल हराम है।

सोग करने का बयान

मस्अला 1—जिस औरत को तलाक़े रज्अी मिली है, उसकी इद्दत तो सिर्फ़ यही है कि इतनी मुद्दत तक घर से बाहर न निकले, न किसी और मर्द से निकाह करे। उसको बनाव-सिंगार दुरूस्त है और जिसको तीन तलाक़ें मिल गयीं या एक तलाक़ बाइन मिली या और किसी तरह निकाह टूट गया या मर्द मर गया, इन सब शक्लों में हुक्म यह है कि जब तक इद्दत में रहे, तब तक न तो घर से बाहर निकले, न अपना दूसरा निकाह करे, न कुछ बनाव-सिंगार करे, सब बातें उस पर हराम हैं। इस सिंगार न करने और मैले-कुचैले रहने को लोग सोग कहते हैं।

मस्अला 2—तब तक इद्दत ख़त्म न हो, तब तक ख़ुशबू लगाना, कपड़े बसाना, गहना-ज़ेवर पहनना, फूल पहनना, सुर्मा लगाना, पान खा कर मुंह लाल करना, मिस्सी मलना, सर में तेल डालना, कंधी करना, मेंहदी लगाना, अच्छे कपड़े पहनना, रेशमी और रंगे हुए बहारदार कपड़े पहनना ये सब बातें हराम हैं। हां, अगर बहारदार न हों तो दुरूस्त है, चाहे जैसा रंग हो। मतलब यह है कि ज़ीनत का कपड़ा न हो।

मस्अला 3—सिर में दर्द होने की वजह से तेल डालने की ज़रूरत पड़े तो जिसमें ख़ुश्बू न हो, वह तेल डालना दुरूस्त है। इसी तरह दवा के लिए सुर्मा लगाना भी ज़रूरत के वक़्त दुरूस्त है, लेकिन रात को लगाये और दिन को पोंछ डाले और सिर मलना और नहाना भी दुरूस्त है। ज़रूरत के वक़्त कंघी करना भी दुरूस्त है, जैसे किसी ने सिर मला या जूं पड़ गयी, लेकिन पट्टी न झुकाये, न बारीक कंघी से कंघी करे, जिसमें बाल चिकने हो जाते हैं, बल्कि मोटे दंदाने वाली कंघी करे कि ख़ूबसूरती न आने पाये।

मस्अला 4—सोग करना उसी औरत पर वाजिब है जो बालिग़ हो, ना बालिग़ लड़की पर वाजिब नहीं, उसको ये सब बातें दुरूस्त हैं। हां घर से निकलना और दूसरा निकाह करना उसको भी दुरूस्त नहीं।

मस्अला 5—जिस का निकाह सही नहीं हुआ था, बे क़ायदा हो गया था, वह तोड़ दिया गया या मर्द मर गया तो ऐसी औरत पर भी सोग करना वाजिब नहीं।

मस्अला 6—शौहर के अलावा किसी और के मरने पर सोग

करना दुरूस्त नहीं, हां, अगर शौहर मना करे तो अपने अज़ीज़ और रिश्तेदार के मरने पर भी तीन दिन तक बनाव-सिंगार छोड़ देना दुरूस्त है, इससे ज़्यादा बिल्कुल हराम है और अगर मना करे तो तीन दिन भी न छोड़े।

रोटी-कपड़े का बयान

मस्अला 1—बीवी का रोटी-कपड़ा मर्द के ज़िम्मे वाजिब है। औरत चाहे कितनी ही मालदार हो, मगर ख़र्च मर्द ही के ज़िम्मे है और रहने के लिए घर देना भी मर्द ही के ज़िम्मे है।

मस्अला 2—निकाह हो गया, लेकिन रूख़्सती नहीं हुई, तब भी रोटी-कपड़े की दावेदार हो सकती है, लेकिन अगर मर्द ने रूख़्सती करना चाहा, फिर भी रूख़सती नहीं हुई, तो रोटी-कपड़ा पाने की हक़दार नहीं।

मस्अला 3—बीवी बहुत छोटी है कि सोहबत के क़ाबिल नहीं तो अगर मर्द ने काम-काज के लिए या अपना मन बहलाने के लिए उसको अपने घर रख लिया, तो उसका रोटी कपड़ा मर्द के ज़िम्मे वाजिब है और अगर न रखा और मैके भेज दिया तो वाजिब नहीं और अगर शौहर छोटा, ना-बालिग़ हो लेकिन औरत बड़ी है तो रोटी-कपड़ा मिलेगा।

मस्अला 4—जितना मह्र पहले देने का दस्तूर है, वह मर्द ने नहीं दिया, इसलिए वह मर्द के घर नहीं जाती तो उसको रोटी-कपड़ा दिलाया जाएगा और यों ही बे-वजह मर्द के घर न जाती हो तो रोटी-कपड़ा पाने की हक़दार नहीं है। जब से जाएगी, तब से दिलाया जाएगा।

मस्अला 5—जितने ज़माने तक शौहर की इजाज़त से अपने मां-बाप के घर रहे, उतने ज़माने का रोटी कपड़ा भी मर्द से ले सकती है।

मस्अला 6—औरत बीमार पड़ गयी तो बीमारी के ज़माने का रोटी-कपड़ा पाने की हक़दार है, चाहे मर्द के घर बीमार पड़े, या अपने मैके में लेकिन अगर बीमारी की हालत में मर्द ने बुलाया फिर भी नहीं आयी तो अब उसके पाने की हक़दार नहीं रही और बीमारी की हालत में

सिर्फ़ रोटी–कपड़े का ख़र्च मिलेगा, दवा–इलाज, हकीम–डाक्टर का ख़र्च मर्द के ज़िम्मे वाजिब नहीं, अपने पास से ख़र्च करे। अगर मर्द दे, उसका एहसान है।

मस्अला 7—औरत हज करने गयी तो इतने ज़माने का रोटी–कपड़ा मर्द के ज़िम्मे नहीं, हां, अगर शौहर भी साथ हो तो उस ज़माने का ख़र्च भी मिलेगा, लेकिन रोटी–कपड़े का जितना ख़र्च घर से मिलता था, उतना ही पाने की हक़दार है, जो कुछ ज़्यादा लगे अपने पास से लगाये और रेल और जहाज़ वग़ैरह का किराया भी मर्द के ज़िम्मे है।

मस्अला 8—रोटी–कपड़े में दोनों की रियायत की जायेगी। अगर दोनों मालदार हों तो अमीरों की तरह का खाना–कपड़ा मिलेगा और अगर दोनों ग़रीब हों तो ग़रीबों की तरह और मर्द ग़रीब हो और औरत अमीर और औरत ग़रीब है और मर्द अमीर तो ऐसा रोटी–कपड़ा दे कि अमीरी से कम हो और ग़रीबी से बढ़ा हुआ।

मस्अला 9—औरत अगर बीमार है कि घर का कारोबार नहीं कर सकती या ऐसे बड़े घर की है कि अपने हाथ से पीसने–कूटने, खाना पकाने का काम नहीं करती, बल्कि ऐब समझती है तो पका–पकाया खाना दिया जाएगा और अगर दोनों में से कोई बात न हो तो घर का सब काम–काज अपने हाथ से करना वाजिब है–यह काम खुद करे, मर्द के ज़िम्मे सिर्फ़ इतना है कि चूल्हा–चक्की, कच्चा अनाज, लकड़ी, खाने–पीने के बर्तन ला दे, वह अपने हाथ से पकाये–खाये।

मस्अला 10—तेल, कंघी, साबुन, खली, वुज़ू और नहाने–धोने का पानी मर्द के ज़िम्मे है और सुर्मा–मिस्सी, पान–तंबाकू मर्द के ज़िम्मे नहीं, धोबी की तंख़्वाह मर्द के ज़िम्मे नहीं, अपने हाथ से धोए और पहने और अगर मर्द दे दे, उसका एहसान है।

मस्अला 11—दाई–जनाई की मज़दूरी उस पर है जिस ने बुलवाया। मर्द ने बुलवाया हो तो मर्द पर और औरत ने बुलवाया हो तो उस पर और जो बे–बुलाए आ गई तो मर्द पर।

मस्अला 12—रोटी कपड़े का ख़र्च एक साल का या इससे कुछ कम–ज़्यादा पेशगी दे दिया तो अब इसमें से कुछ लौटा नहीं सकता।

रहने के लिए घर मिलने का बयान

मस्अला 1—मर्द पर यह भी वाजिब है कि बीवी के रहने के लिए कोई ऐसी जगह दे जिसमें शौहर का कोई रिश्तेदार न रहता हो, बिल्कुल ख़ाली हो, ताकि मियां–बीवी बिल्कुल बे–तकल्लुफ़ी से रह सकें, हां, अगर औरत ख़ुद सबके साथ रहना पसंद करे तो साझे के घर में भी रखना दुरूस्त है।

मस्अला 2—घर में से एक जगह औरत को अलग कर दे कि वह अपना माल व असबाब हिफ़ाज़त से रखे और ख़ुद उसमें रहे–सहे और उसका ताला–कुंजी अपने पास रखे, किसी और को उसमें दाख़िल न होने दे, सिर्फ़ औरत ही के क़ब्ज़े में रहे, तो बस हक़ अदा हो गया। औरत को इससे ज़्यादा का दावा नहीं हो सकता और यह नहीं कह सकती कि पूरा घर मेरे लिए अलग कर दो।

मस्अला 3—जिस तरह औरत को अख़्तियार है कि अपने लिए कोई अलग घर मांगे, जिसमें मर्द का कोई रिश्तेदार न रहने पाये, सिर्फ़ औरत ही के क़ब्ज़े में रहे, उसी तरह मर्द को अख़्तियार है कि जिस घर में औरत रहती है, वहां उसके रिश्तेदारों को न आने दे, न मां को, न बाप को, न भाई को, न किसी और रिश्तेदार को।

मस्अला 4—औरत अपने मां–बाप को देखने के लिए हफ़्ते में एक बार जा सकती है और मां–बाप के सिवा और रिश्तेदार के लिए साल भर में एक बार, इससे ज़्यादा का अख़्तियार नहीं। इसी तरह उसके मां–बाप भी हफ़्ते में सिर्फ़ एक बार यहां आ सकते हैं। मर्द को अख़्तियार है कि इससे ज़्यादा जल्दी–जल्दी न आने दे। और मां–बाप के सिवा और रिश्तेदार साल भर में सिर्फ़ एक बार आ सकते हैं, इससे ज़्यादा आने का अख़्तियार नहीं, लेकिन मर्द को अख़्तियार है कि ज़्यादा देर न ठहरने दे, न मां–बाप को, न किसी और को और जानना चाहिए कि रिश्तेदारों से मतलब वे रिश्तेदार हैं जिनसे विवाह हमेशा के लिए हराम है और जो ऐसे न हों, वे शरीअत में ग़ैर बराबर हैं।

मस्अला 5—अगर बाप बहुत बीमार है और उसकी कोई ख़बर लेने वाला नहीं तो ज़रूरत के मुताबिक़ वहां रोज़ जाया करे। अगर बाप बे–दीन काफ़िर हो, तब भी यही हुक्म है, बल्कि अगर शौहर मना भी करे

तब भी जाना चाहिए लेकिन शौहर के मना करने पर जाने से रोटी–कपड़े का हक़ न रहेगा।

मस्अला 6—ग़ैर लोगों के घर न जाना चाहिए, अगर ब्याह, शादी वग़ैरह की कोई महफ़िल हो और शौहर इजाज़त भी दे दे तो भी जाना दुरूस्त नहीं। शौहर इजाज़त देगा तो वह भी गुनाहगार होगा, बल्कि महफ़िल के ज़माने में अपने महरम रिश्तेदार के यहां भी जाना दुरूस्त नहीं।

मस्अला 7—जिस औरत को तलाक़ मिल गई वह भी इद्दत तक रोटी–कपड़ा और रहने का घर पाने की हक़दार है। हां, जिसका ख़ाविंद मर गया हो, उसको रोटी–कपड़ा और घर मिलने का हक़ नहीं, हां, उसको मीरास सब चीज़ों में मिलेगी।

मस्अला 8—अगर निकाह औरत ही की वजह से टूटा, जैसे सौतेले लड़के से फंस गई या जवानी की ख़्वाहिश में सिर्फ़ हाथ लगाया, कुछ और नहीं हुआ, इसलिए मर्द ने तलाक़ दे दी या वह बद–दीन काफ़िर हो गई, इस्लाम से फिर गई, इसलिए निकाह टूट गया तो इन सब शक्लों में इद्दत के अंदर उसको रोटी–कपड़ा न मिलेगा, हां, रहने को घर मिलेगा। हां अगर वह खुद ही चली जाए तो और बात है, फिर न दिया जाएगा।

लड़के के हलाली होने का बयान

मस्अला 1—जब किसी शौहर वाली औरत के औलाद होगी, तो वह उसी शौहर की कहलाएगी, किसी शुबहा पर यह कहना कि यह लड़का उसके मियां का नहीं है, बल्कि फ़्लां का है, दुरूस्त नहीं और इस लड़के को हरामी कहना भी दुरूस्त नहीं और अगर इस्लाम की हुकूमत हो तो ऐसे कहने वाले को कोड़े मारे जाए।

मस्अला 2—हमल की मुद्दत कम से कम छः महीने है और ज़्यादा से ज़्यादा दो वर्ष यानी कम से कम छः महीने का लड़का पेट में रहता है, फिर पैदा होता है, छः महीने से पहले नहीं पैदा होता और ज़्यादा से ज़्यादा दो वर्ष पेट में रह सकता है, इससे ज़्यादा पेट में नहीं रह सकता।

मस्अला 3—शरीअत को क़ायदा है कि जब तक हो सके तब तक लड़के को हरामी न कहेंगे। जब बिल्कुल मजबूर हो जाये तब हरामी

होने का हुक्म लगायेंगे और औरत को गुनाहगार ठहरायेंगे।

मस्अला 4—किसी ने अपनी बीवी को तलाक़े रज्‌अी दे दी, फिर दो वर्ष से कम में उससे कोई लड़का पैदा हुआ, तो लड़का उसी शौहर का है, उसको हरामी कहना दुरुस्त नहीं। शरीअत में उसका नसब ठीक है। अगर दो वर्ष से एक दिन भी कम हो तब भी यही हुक्म है। ऐसा समझेंगे कि तलाक़ से पहले का पेट है और दो वर्ष तक बच्चा पेट में रहा और अब बच्चा होने के बाद इसकी इद्दत ख़त्म हो गई और निकाह से अलग हुई। हां, अगर वह औरत इस जनने से पहले खुद का इक़रार कर चुकी हो कि मेरी इद्दत ख़त्म हो गयी तो मजबूरी है, अब यह लड़का हरामी है, बल्कि ऐसी औरत के अगर दो वर्ष के बाद लड़का हुआ और अभी तक औरत ने अपनी इद्दत ख़त्म होने का इक़रार नहीं किया है, तब भी वह लड़का उसी शौहर का है, चाहे जितने वर्ष में हुआ हो। और ऐसा समझेंगे कि तलाक़ दे देने के बाद इद्दत में सोहबत की थी और तलाक़ में बाज़ आ गया था, इसलिए वह औरत अब लड़का पैदा होने के बाद भी उसी की बीवी है और निकाह दोनों का नहीं टूटा। अगर मर्द का लड़का न हो तो वह कह दे, मेरा लड़का नहीं है और जब इन्कार करेगा तो लिआन का हुक्म होगा।

मस्अला 5—अगर तलाक़े बाइन दे दी तो इसका हुक्म यह है कि अगर दो वर्ष के अंदर–अंदर लड़का पैदा हो, तब तो उसी मर्द का होगा और अगर दो वर्ष के बाद हो तो वह हरामी है, हां, अगर दो वर्ष के बाद पैदा होने पर भी मर्द दावा करे कि यह लड़का मेरा है तो हरामी न होगा और ऐसा समझेंगे कि इद्दत के अंदर धोखे से सोहबत कर ली होगी, इससे पेट रह गया।

मस्अला 6—अगर नाबालिग़ लड़की को तलाक़ मिल गयी जो अभी जवान तो नहीं हुई, लेकिन जवानी के क़रीब–क़रीब हो गयी है, फिर तलाक़ के बाद पूरे नौ महीने में लड़का पैदा हो तो वह हरामी है और अगर नौ महीने से कम में पैदा हुआ तो शौहर का है, हां, वह लड़की इद्दत के अंदर ही यानी तीन महीने से पहले इक़रार कर ले कि मुझको पेट है तो वह लड़का हरामी न होगा, दो वर्ष के अन्दर–अन्दर पैदा होने से बाप का कहलायेगा।

मस्अला 7—किसी का शौहर मर गया तो मरने के वक़्त से अगर दो वर्ष के अन्दर लड़का पैदा हो तो वह हरामी नहीं बल्कि शौहर का

लड़का है, हां, अगर वह औरत अपनी इद्दत ख़त्म होने का इक़रार कर चुकी हो तो मजबूरी है। अब हरामी कहा जाएगा और अगर दो वर्ष के बाद पैदा हुआ तो अब भी हरामी है।

तंबीह—इन मस्अलों से मालूम हुआ कि जाहिल लोगों की जो आदमी है कि अगर किसी के मरे पीछे नौ महीने से एक दो महीना भी ज़्यादा गुज़र कर लड़का पैदा हुआ तो उस औरत को बद-कार समझते हैं, यह बड़ा गुनाह है।

मस्अला 8—निकाह के बाद छः महीने से कम में लड़का पैदा हो तो वह हरामी है। अगर पूरे छः महीने या इससे ज़्यादा मुद्दत में हुआ हो तो वह शौहर का है, उस पर भी शुबहा करना गुनाह है। हां, अगर शौहर इंकार करे और कहे कि मेरा नहीं है, तो लिआन का हुक्म होगा।

मस्अला 9—निकाह हो गया लेकिन अभी रूख़्सती नहीं हुई थी कि लड़का पैदा हो गया तो वह लड़का शौहर ही से है, हरामी नहीं और उसका हरामी कहना दुरूस्त नहीं। अगर शौहर का न हो तो इंकार करे और इन्कार पर लिआन का हुक्म होगा।

मस्अला 10—मियां परदेस में है और मुद्दत हो गयी, वर्षों गुज़र गये कि घर नहीं आया और यहां लड़का पैदा हो गया, तब भी वह हरामी नहीं, उसी शौहर का है, हां, अगर वह ख़बर पाकर इन्कार करेगा तो लिआन का हुक्म होगा।

औलाद की परवरिश का बयान

मस्अला 1—मियां-बीवी में जुदाई हो गयी और तलाक़ मिल गयी और गोद में बच्चा है तो उसकी परवरिश का हक़ मां को है, बाप उसको नहीं छीन सकता, लेकिन लड़के का सारा ख़र्च बाप ही को देना पड़ेगा। अगर मां खुद परवरिश न करे, बाप के हवाले कर दे, तो बाप को लेना पड़ेगा, औरत को ज़बरदस्ती नहीं दे सकता।

मस्अला 2—अगर मां न हो या है लेकिन उसने बच्चे को लेने से इंकार कर दिया तो परवरिश का हक़ नानी और पर नानी को है। उनके बाद दादी और पर दादी। ये भी न हों तो सगी बहनों का हक़ है कि वे अपने भाई की परवरिश करें। सगी बहनें न हों तो सौतेली, बहनें, मगर जो बहने ऐसी हों कि उनकी और उस बच्चे की मां एक हो, वे पहले हैं और

जो बहनें ऐसी हों कि उनका और उस बच्चे का बाप एक है, वे पीछे हैं, फिर ख़ाला और फिर फूफी।

मस्अला 3—अगर मां ने किसी ऐसे मर्द से निकाह कर लिया जो बच्चे का महरम रिश्तेदार नहीं होता, यानी उस रिश्ते में हमेशा के लिए निकाह हराम नहीं होता, तो अब उस बच्चे की परवरिश का हक़ नहीं रहा। हां, अगर उसी बच्चे के किसी रिश्तेदार से निकाह किया, जिसमें निकाह दुरुस्त नहीं होता जैसे उसके चचा से निकाह कर लिया या ऐसा ही कोई और रिश्ता हो तो मां का हक़ बाक़ी है। मां के सिवा कोई और औरत जैसे बहन, ख़ाला वग़ैरह ग़ैर मर्द से निकाह कर ले, उसका भी यही हुक्म है कि अब उस बच्चे की परवरिश का हक़ नहीं रहा।

मस्अला 4—ग़ैर मर्द से निकाह कर लेने की वजह से हक़ जाता रहा था, लेकिन फिर उस मर्द ने छोड़ दिया या मर गया तो अब फिर उसका हक़ लौट आयेगा और बच्चा उसके हवाले कर दिया जाएगा।

मस्अला 5—बच्चे के रिश्तेदारों में से अगर कोई औरत बच्चे की परवरिश के लिए न मिले तो अब बाप सबसे ज़्यादा हक़दार है, फिर दादा वग़ैरह उसी तरतीब से, जो हम निकाह के वली के बयान में ज़िक्र कर चुके हैं। लेकिन अगर ना–महरम रिश्तेदार हो और लड़के को उसे देने में आगे चल कर किसी ख़राबी का डर हो, तो इस शक्ल में ऐसे शख़्स के सुपुर्द करेंगे जहां तरह तरह इत्मीनान है।

मस्अला 6—लड़का जब सात वर्ष का न हो, तब तक उसकी परवरिश का हक़ रहता है। जब सात वर्ष का हो गया, तो अब बाप उसको ज़बरदस्ती ले सकता है और लड़की की परवरिश का हक़ नौ वर्ष तक रहता है। जब नौ वर्ष की हो गयी तो बाप ले सकता है, अब उसको रोकने का हक़ नहीं।

बेचने और मोल लेने का बयान

मस्अला 1—जब एक शख़्स ने कहा, मैंने यह चीज़ इतने दामों पर बेच दी और दूसरे ने कहा, मैंने ले ली तो वह चीज़ बिक गयी और जिसने मोल लिया है, वही उसकी मालिक बन गयी। अब अगर वह चाहे कि मैं न बेचूं, अपने पास ही रहने दू या यह चाहे कि मैं न ख़रीदूं तो कुछ नहीं हो सकता, उसको देना पड़ेगा और इसको लेना पड़ेगा और इस बिक जाने को बैअ कहते हैं।

मस्अला 2—एक ने कहा, मैंने यह चीज़ दो पैसे को तुम्हारे हाथ बेची। दूसरी ने कहा, मुझे मंज़ूर है या यों कहा, मैं इतने दामों पर राज़ी हूं अच्छा मैंने ले लिया, तो इन सब बातों से वह चीज़ बिक गयी अब तो न बेचने वाली को यह अख़्तियार है कि न दे और न लेने वाली को यह अख़्तियार है कि न ख़रीदे, लेकिन यह हुक्म उस वक़्त है कि दोनों तरफ़ से यह बात–चीत एक ही जगह बैठे–बैठे हुई हो। अगर एक ने कहा, मैंने यह चीज़ चार पैसे को तुम्हारे हाथ बेची और वह दूसरी चार पैसे का नाम सुन कर कुछ नहीं बोली, उठ खड़ी हुई या किसी और से सलाह लेने चली गयी या और किसी काम को चली गयी और जगह बदल गयी, तब उसने कहा, अच्छा मैंने चार पैसे की ख़रीद ली, तो अभी वह चीज़ नहीं बिकी। हां, अगर इसके बाद वह बेचने वाली कुंजड़िन वग़ैरह यों कह दे कि मैंने दे दी या यों कहे, अच्छा ले लो अल–बत्ता बिक जाएगी। इसी तरह वह कुंजड़िन उठ खड़ी हुई या किसी काम को चली गयी, तब दूसरी ने कहा, मैंने ले लिया, तब भी वह चीज़ नहीं बिकी। मतलब यह कि जब एक ही जगह दोनों तरफ़ से बात–चीत होगी तब वह चीज़ बिकेगी।

मस्अला 3—किसी ने कहा, यह चीज़ एक पैसे की दे दो, उसने कहा, मैंने दे दी, इससे बैअ नहीं हुई, हां, इसके बाद अगर मोल लेने वाली ने फिर कह दिया कि मैंने लेली तो बिक गयी।

मस्अला 4—किसी ने कहा यह चीज़ एक पैसा को मैंने ले ली, उसने कहा, ले लो, तो बैअ हो गयी।

मस्अला 5—किसी ने किसी चीज़ के दाम चुका कर इतने दाम उसके हाथ पर रखे और वह चीज़ उठा ली और उसने ख़ुशी से दाम ले लिए, फिर न तो उसने ज़ुबान से कहा कि मैंने इतने दामों पर यह चीज़ बेची और न उसने कहा मैंने ख़रीदी, तो इस लेन–देन हो जाने से भी चीज़ बिक जाती है और बैअ दुरुस्त हो जाती है।

मस्अला 6—कोई कुंजड़िन अमरूद बेचने आयी। बे–पूछे–गछे बड़े–बड़े चार अमरूद उसके टोकरे से निकाले और एक पैसा उसके हाथ पर रख दिया और उसने ख़ुशी से पैसा ले लिया तो बैअ हो गयी चाहे ज़ुबान से किसी ने कुछ कहा हो, चाहे न कहा हो।

मस्अला 7—किसी ने मोतियों की एक लड़ी को कहा, यह लड़ी दस पैसे को तुम्हारे हाथ बेची। उस पर ख़रीदने वाली ने कहा, इसमें से पांच मोती मैंने ले लिए या यों कहा, आधे मोती मैंने ख़रीद लिए, तो जब

तक वह बेचने वाली उस पर राज़ी न हो, बैअ न होगी, क्योंकि उसने पूरी लड़ी का मोल किया है, तो जब तक वह राज़ी न हो, लेने वाली को यह अख़्तियार नहीं है कि उसमें से कुछ ले और कुछ न ले। अगर ले तो पूरी लड़ी लेनी पड़ेगी, हां, अल–बत्ता अगर उसने यह कह दिया हो कि हर मोती एक–एक पैसा को। इस पर उसने कहा, इसमें से पांच मोती मैंने ख़रीदे तो पांच मोती बिक गये।

मस्‌अला 8—किसी के पास चार चीज़ें हैं–बिजली, बाली, बुंदे, पत्त। उसने कहा, यह सब मैंने चार आने को बेचा, तो उसकी मंज़ूरी के बग़ैर यह अख़्तियार नहीं है कि कुछ चीज़ें ले और कुछ चीज़ें छोड़ दें, क्योंकि वह सबको साथ मिला कर बेचना चाहती है। हां, अगर हर चीज़ की क़ीमत अलग–अलग बतलाये तो उसमें से एक–आध चीज़ भी ख़रीद सकती है।

मस्‌अला 9—बेचने और मोल लेने में यह भी ज़रूरी है कि जो सौदा ख़रीदे, हर तरह से उसको साफ़ कर ले, कोई बात ऐसी गोल–मोल न रखे, जिससे झगड़ा–बखेड़ा पड़े, इसी तरह क़ीमत भी साफ़–साफ़ मुक़र्रर और तै हो जाना चाहिए। अगर इन दोनों में से एक चीज़ भी अच्छी तरह मालूम और तै न होगी तो बैअ सही न होगी।

मस्‌अला 10—किसी ने रूपए की या पैसे की कोई चीज़ ख़रीदी। अब वह कहती है, पहले तुम रूपया दो, तब मैं चीज़ दूंगी। वह कहती है, पहले तू चीज़ दे, तब मैं रूपया दूं तो पहले उससे दाम दिलवाये जाएंगे। जब यह दाम दे दे तब उससे वह चीज़ दिलवा देंगे। दाम के वसूल पाने तक उस चीज़ के न देने का उसको अख़्तियार है और अगर दोनों तरफ़ एक सी चीज़ है, जैसे दोनों तरफ़ दाम हैं या दोनों तरफ़ सौदा है जैसे रूपया के पैसे लेने लगें या कपड़े के बदले कपड़ा लेने लगें और दोनों में यही झगड़ा आ पड़े तो दोनों से कहा जाएगा कि तुम उसके हाथ पर रखो और वह तुम्हारे हाथ पर रखे।

क़ीमत के मालूम होने का बयान

मस्‌अला 1—किसी ने मुट्ठी बंद करके कहा कि जितने दाम हमारे हाथ में हैं, उतने की फ़लां चीज़ दे दो और मालूम नहीं कि हाथ में क्या है, रूपया है या पैसा है, अशर्फ़ी है और एक है या दो तो, ऐसी बैअ दुरुस्त

नहीं।

मस्अला 2—किसी शहर में दो क़िस्म के पैसे चलते हैं तो यह भी बतला दें कि फ़लां पैसे के बदले में यह चीज़ लेती हूं। अगर किसी ने यह नहीं बतलाया, सिर्फ़ इतना ही कह दिया कि मैंने यह चीज़ एक पैसे को बेची। उसने कहा मैंने लेली तो देखो वहां किस पैसे का ज़्यादा रिवाज है, जिस पैसे का रिवाज ज़्यादा हो, वही पैसा देना पड़ेगा। अगर दोनों का रिवाज बराबर-बराबर हो तो बैअ दुरूस्त नहीं रही, बल्कि फ़ासिद और ख़राब हो गयी।

मस्अला 3—किसी के हाथ में कुछ पैसे हैं और उसने मुट्ठी खोल कर दिखला दिया कि इतने पैसों की यह चीज़ दे दो और उसने वे पैसे हाथ में देख लिए और वह चीज़ दे दी, लेकिन यह नहीं मालूम हुआ कि कितने आने हाथ में हैं, तब भी बैअ दुरूस्त है। इसी तरह अगर पैसों की ढेरी सामने बिछौने पर रखी हो, उसका भी यही हुक्म है कि अगर बेचने वाली इतने दामों की चीज़ बेच डाले और यह न जाने कि कितने आने हैं तो बैअ दुरूस्त है। मतलब यह है कि जब अपनी आंख से देख लो कि इतने पैसे हैं, तो ऐसे वक़्त उसकी मिक़्दार बतलाना ज़रूरी नहीं है और अगर उसने आंख से नहीं देखा है तो ऐसे वक़्त मिक़्दार का बतलाना ज़रूरी है, जैसे यों कहे दस आने को यह चीज़ हमने ली। अगर इस सूरत में उसकी मिक़्दार मुक़र्रर तै नहीं की तो बैअ ख़राब हो गयी।

मस्अला 4—किसी ने यों कहा आप ये चीज़ ले लें क़ीमत तै करने की क्या ज़रूरत है, जो दाम होंगे आपसे वाजिबी ले लिए जाएंगे। मैं भला आपसे ज़्यादा लूंगी या यह कहा कि आप यह चीज़ ले लें, मैं अपने घर पूछ कर जो कुछ क़ीमत होगी, फिर बतला दूंगी या यों कहा कि इसी मेल की यह चीज़ फ़्लानी ने ली है, जो दाम उन्होंने दिए हैं, वही दाम आप भी दी जिएगा या इस तरह कहा, जो आपका जी चाहे दे दीजिएगा, मैं हरगिज़ इंकार न करूंगी, जो कुछ दे दोगी ले लूंगी या इस तरह कहा बाज़ार से पुछवा लो, जो उसकी क़ीमत हो वह दे देना या यों कहा फ़्लानी को दिखला के जो क़ीमत वह कह दे तुम दे देना, तो इन सब शक्लों में बैअ फ़ासिद (ख़राब) है हां, अगर उसी जगह क़ीमत साफ़ मालूम हो गयी और जिस गड़बड़ की वजह से बैअ फ़ासिद हुई थी, वह गड़बड़ जाती रही तो बैअ दुरूस्त हो जाएगी और अगर जगह बदल जाने के बाद मामला साफ़ हुआ तो पहली बैअ फ़ासिद रही, हां इस साफ़ होने के बाद फिर नये

सिरे से बैअ कर सकती है।

मस्अला 5—कोई दुकानदार मुक़र्रर है। जिस चीज़ की ज़रूरत पड़ती है, उसकी दुकान से आ जाती है, आज सेर पर सुपारी मंगा ली, कल दो सेर कत्था आ गया, किसी दिन पाव भर नारियल वग़ैरह ले लिया और क़ीमत कुछ नहीं पुछवायी और यों समझों कि जब हिसाब होगा तो जो कुछ निकलेगा दे दिया जाएगा, यह दुरूस्त है, इसी तरह अत्तार की दुकान से दवा का नुस्ख़ा बंधवा मंगवाया और क़ीमत नहीं पूछी और ख़्याल किया कि तंदुरूस्त होने के बाद जो कुछ दाम होंगे, दे दिए जाएंगे, यह भी दुरूस्त है।

मस्अला 6—किसी के हाथ में एक रूपया या पैसा है, उसने कहा कि इस रूपए की यह चीज़ हमने ली, तो अख़्तियार है चाहे वही रूपया दे चाहे उसके बदले कोई और रूपया दे, मगर यह दूसरा खोटा न हो।

मस्अला 7—किसी ने एक रूपया का कुछ ख़रीदा तो अख़्तियार है चाहे रूपया दे दे चाहे दो अठन्नियां दे दे और चाहे चार चवन्नियां दे दे और चाहे आठ दुवन्नियां दे दे, बेचने वाली उसके लेने से इंकार नहीं कर सकती। हां, अगर एक रूपये के पैसे दे तो बेचने वाली को अख़्तियार है, चाहे ले, चाहे न ले। अगर वह पैसे लेने पर राज़ी न हो तो रूपया ही देना पड़ेगा।

मस्अला 8—किसी ने कोई क़लमदान या संदूक़चा बेचा उसकी कुंजी भी बिक गयी। कुंजी के दाम अलग नहीं ले सकती। और न कुंजी को अपने पास रख सकती है।

सौदा मालूम होने का बयान

मस्अला 1—अनाज–ग़ल्ला वग़ैरह सब चीज़ों में अख़्तियार है चाहे तौल के हिसाब से ले और यों कह दे कि एक रूपए के बीस सेर गेहूं मैंने ख़रीदे और चाहे यों ही मोल करके ले ले और यों कह दे कि गेहूं की यह ढेरी मैंने एक रूपए की ख़रीदी। फिर उस ढेरी में चाहे जितने गेहूं निकलें सब उसी के हैं।

मस्अला 2—कडे, आम, अमरूद, नारंगी वग़ैरह में भी अख़्तियार है कि गिनती के हिसाब से ले या वैसे ही ढेर का मोल करके ले ले। अगर एक टोकरी के सब आम दो आने के ख़रीद लिए और गिनती उसकी कुछ मालूम नहीं, कितने हैं बैअ दुरूस्त है और सब आम उसी के हैं, चाहे कम

निकलें, चाहे ज़्यादा।

मस्अला 3—कोई औरत बेर वग़ैरह कोई चीज़ बेचने आई, उसने कहा कि एक पैसे को इस ईंट के बराबर तौल दे और वह भी इस ईंट के बराबर तौल देने पर राज़ी हो गई और उस ईंट का वज़न किसी को मालूम नहीं कि कितनी भारी निकलेगी तो यह बैअ भी दुरूस्त है।

मस्अला 4—आम का या अमरूद, नारंगी वग़ैरह का पूरा टोकरा एक रूपए को इस शर्त पर ख़रीदा कि इसमें चार सौ आम हैं, फिर गिने गये तो इसमें तीन सौ निकले। लेने वाली को अख़्तियार है चाहे ले, चाहे न ले, अगर लेगी तो पूरा एक रूपया न देना पड़ेगा बल्कि एक संकड़े के दाम करके सिर्फ़ बारह आने दे और अगर साढ़े तीन सौ निकले तो चौदह आने दे। मतलब यह है कि जितने आम कम हों, उतने दाम भी कम हो जाएंगे और अगर इस टोकरे में चार सौ से ज़्यादा आम हों तो जितने ज़्यादा हैं, वे बेचने वाली के हैं, उसको चार सौ से ज़्यादा लेने का हक़ नहीं है। हां, अगर पूरा टोकरा ख़रीद लिया और यह कुछ मुक़र्रर नहीं किया कि इसमें कितने आम हैं तो जो कुछ निकले सब उसी का है, चाहे कम निकले, चाहे ज़्यादा।

मस्अला 5—बनारसी दोपट्टा या चिकन का दोपट्टा या पलंगपोश या इज़ारबंद वग़ैरह कोई ऐसा कपड़ा ख़रीदा कि अगर इसमें से कुछ फाड़ लें तो निकम्मा और ख़राब हो जाएगा और ख़रीदते वक़्त यह शर्त कर ली थी कि यह दोपट्टा तीन गज़ का है। फिर जब नापा तो कुछ कम निकला तो जितना कम निकला है उसके बदले में दाम कम न होंगे, बल्कि जितने दाम तै हुए हैं, वे पूरे देने पड़ेंगे हां, कम निकलने की वजह से बस इतनी रियायत की जाएगी कि दोनों तरफ़ से पक्की बैअ हो जाने पर भी उसको अख़्तियार है चाहे ले चाहे न ले और कुछ ज़्यादा निकला तो वह भी उसी का है और उसके बदले में दाम कुछ ज़्यादा न देना पड़ेंगे।

मस्अला 6—किसी ने रात को दो रेशमी इज़ारबंद एक रूपए के लिए। जब सुबह को देखा तो मालूम हुआ कि एक उस में सूती है तो दोनों बैअ जायज़ नहीं हुई, न रेशमी की, न सूती की। इसी तरह अगर दो अंगूठियां शर्त करके ख़रीदीं कि दोनों का नग फ़िरोज़े का है, फिर मालूम हुआ कि एक में फ़िरोज़ा नहीं है, कुछ और है तो दोनों की बैअ नाजायज़ है। अब अगर उनमें से एक का या दोनों का लेना मंज़ूर हो तो उसकी तरकीब यह है कि फिर बात–चीत करके ख़रीदे।

उधार लेने का बयान

मस्अला 1—किसी ने अगर कोई सौदा उधार ख़रीदा तो यह भी दुरूस्त है लेकिन इतनी बात ज़रूरी है कि कुछ मुद्दत मुक़र्रर करके कह दे कि पंद्रह दिन में या महीने भर में या चार महीने में तुम्हारे दाम अदा कर दूंगी। अगर कुछ मुद्दत मुक़र्रर नहीं की, सिर्फ़ इतना कह दिया कि अभी दाम नहीं है, फिर दे दूंगी तो बैअ फ़ासिद हो गयी और अगर ख़रीदने के अन्दर यह शर्त नहीं लगायी, ख़रीद कर कह दिया कि मैं फिर दे दूंगी तो कुछ डर नहीं और अगर न ख़रीदने के अंदर कुछ कहा, न ख़रीद कर कुछ कहा, तब भी बैअ दुरूस्त होगी और इन दोनों शक्लों में उस चीज़ के दाम अभी देना पड़ेंगे। हां, अगर बेचने वाली कुछ दिन की मोहलत दे दे तो और बात है, लेकिन अगर मोहलत न दे और अभी मांगे तो देना पड़ेंगे।

मस्अला 2—किसी ने ख़रीदते वक़्त यों कहा कि फ़्लां चीज़ हमको दे दो जब ख़र्च आयेगा तब दाम ले लेना या यों कहा जब मेरा भाई आएगा तब दे दूंगी या यों कहा जब खेती कटेगी तब दे दूंगी या उसने इस तरह कहा बीबी, तुम ले लो, जब जी चाहे दाम दे देना तो बैअ फ़ासिद हो गयी, बल्कि कुछ न कुछ मुद्दत मुक़र्रर करके लेना चाहिए और ख़रीद कर ऐसी बात कह दी तो बैअ हो गयी और सौदे वाली को अख़्तियार है कि अभी दाम मांग ले लेकिन सिर्फ़ खेती कटने के मस्अले में, इस सरूत में खेती कटने से पहले नहीं मांग सकती।

मस्अला 3—नक़द दामों पर एक रूपये के बीस सरे गेहूं बिकते हैं, अगर किसी से उधार लेने की वजह से उसने एक रूपये के पंद्रह सेर दिये तो यह बैअ दुरूस्त है, मगर उसी वक़्त मालूम हो जाना चाहिए कि उधार मोल लेगी।

मस्अला 4—यह हुक्म उस वक़्त है जबकि ख़रीदार के अव्वल पूछ लिया हो कि नक़द लोगे या उधार। अगर उसने कहा नक़द, तो बीस सेर दे दिये और अगर मामला इस तरह किया कि ख़रीदार से यों कहा कि अगर नक़द लोगे तो एक रूपये के 20 सेर होंगे और उधार लोगे तो पंद्रह सेर होंगे, यह जायज़ नहीं।

मस्अला 5—एक महीने के वायदे पर कोई चीज़ ख़रीदी, फिर

एक महीना हो चुका, तब कह–सुनकर कुछ और मुद्दत बढ़वाली कि पंद्रह दिन की मोहलत और दे दो तो तुम्हारे दाम अदा कर दूं और वह बेचने वाली भी उस पर राज़ी हो गई तो पंद्रह दिन की मोहलत और मिल गई और अगर वह राज़ी न हो तो अभी दाम मांग सकती है।

मस्अला 6—जब अपने पास दाम मौजूद हों तो नाहक़ किसी को टालना कि आज नहीं कल आना, इस वक़्त नहीं, उस वक़्त आना, अभी रूपया तोड़वाया नहीं, जब तोड़वाया जाएगा, तब दाम मिलेंगे, ये सब बातें हराम है। जब वह मांगे उसी वक़्त रूपया तुड़वाकर दाम दे देना चाहिए, हां, अगर उधार ख़रीदा है, तो जितने दिन कि वायदे पर ख़रीदा है, उतने दिन के बाद देना वाजिब होगा। अब वायदा पूरा होने के बाद टालना और दौड़ाना जायज़ नहीं है, लेकिन अगर सचमुच उसके पास है ही नहीं, न कहीं से बंदोबस्त कर सकती है तो मजबूरी है। जब आये उस वक़्त न टाले।

फेर देने की शर्त कर लेने का बयान

और इसको शरअ में ख़ियारे शर्त कहते हैं

मस्अला 1—ख़रीदते वक़्त यों कह दिया कि एक दिन या दो दिन या तीन दिन तक हमको लेने–न लेने का अख़्तियार है, जी चाहेगा, लेंगे नहीं तो फेर देंगे, यह दुरूस्त है। जितने दिन का इक़रार किया है, उतने दिन तक फेर देने का अख़्तियार है, चाहे ले, चाहे फेर दे।

मस्अला 2—किसी ने कहा था कि तीन दिन तक मुझको लेने, न लेने का अख़्तियार है, फिर तीन दिन गुज़र गये और उसने जवाब कुछ नहीं दिया, न वह चीज़ फेरी, तो अब वह चीज़ लेनी पड़ेगी। फेरने का अख़्तियार नहीं रहा, हां अगर वह रियायत करके फेर ले तो ख़ैर फेर दे, बिना रज़ामंदी के नहीं फेर सकती है।

मस्अला 3—तीन दिन से ज़्यादा की शर्त करना दुरूस्त नहीं है। अगर किसी ने चार पांच दिन की शर्त की तो देखो तीन दिन के अन्दर उसने कुछ जवाब दिया या नहीं। अगर तीन दिन के अन्दर उसने फेर दिया तो बैअ फिर गयी और अगर कह दिया कि मैंने ले लिया तो बैअ

दुरूस्त हो गई और अगर तीन दिन गुज़र गये और कुछ हाल मालूम न हुआ कि लेगी या न लेगी तो बैअ फ़ासिद हो गयी।

मस्अला 4—इसी तरह बेचने वाली भी कह सकती है कि तीन दिन तक मुझको अख़्तियार है, अगर चाहूंगी तो तीन दिन के अन्दर फेर लूंगी, तो यह भी जायज़ है।

मस्अला 5—ख़रीदते वक़्त कह दिया था कि तीन दिन तक मुझे फेर देने का अख़्तियार है, फिर दूसरे दिन आई और कह दिया कि मैंने तो वह चीज़ ले ली, अब न फेरूंगी तो अब वह अख़्तियार जाता रहा, अब नहीं फेर सकती, बल्कि अपने ही घर में आकर कह दिया मैंने यह चीज़ ले ली, अब न फेरूंगी, तब भी वह अख़्तियार जाता रहा और जब बैअ का तोड़ना और फेरना मंज़ूर हो तो बेचने वाली के सामने तोड़ना चाहिए, उसके पीठ पीछे तोड़ना दुरूस्त नहीं।

मस्अला 6—किसी ने कहा कि तीन दिन तक मेरी मां को अख़्तियार है, अगर कहेगा तो ले लूंगी, नहीं तो फेर दूंगी तो यह भी दुरूस्त है, अब तीन दिन के अंदर वह या उसकी मां फेर सकती है और अगर खुद वह या उसकी मां कह दे कि मैंने ले ली, अब न फेरूंगी, तो अब फेरने का अख़्तियार नहीं रहा।

मस्अला 7—दो या तीन थान लिए और कहा कि तीन दिन तक हमको अख़्तियार है कि इसमें से जो पसन्द होगा, एक थान दस रूपये को लेंगे तो यह दुरूस्त है, तीन दिन के अन्दर उसमें से एक थान पसंद कर ले। चार पांच थान अगर लिए और अगर कहा कि इसमें से एक पसंद कर लेंगे तो यह बैअ़ फ़ासिद है।

मस्अला 8—किसी ने तीन दिन तक फेर देने की शर्त ठहरा ली थी, फिर वह चीज़ अपने घर बरतना शुरू कर दी जैसे ओढ़ने की चीज़ थी तो ओढ़ने लगी या पहनने की चीज़ थी, उसको पहन लिया या बिछाने की चीज़ थी उसको बिछाने लगी तो अब फेर देने का अख़्तियार नहीं रहा।

मस्अला 9—हां, अगर इस्तेमाल सिर्फ़ देखने के वास्ते हुआ है तो फेर देने का हक़ है, जैसे सिला हुआ कुरता या चादर या दरी ख़रीदी तो यह देखने के लिये कि कुरता ठीक भी आता है या नहीं, एक बार पहन कर देखा और फ़ौरन उतार दिया या चादर की लंबाई–चौड़ाई ओढ़ कर देखी या दरी की लंबाई–चौड़ाई बिछा कर देखी, तो भी फेर देने का हक़ हासिल है।

अनदेखी चीज़ के ख़रीदने का बयान

मस्अला 1—किसी ने कोई चीज़ बिना देखे हुये ख़रीद ली तो यह बैअ दुरूस्त हे, लेकिन जब देखे तो उसको अख़्तियार है, पसंद हो तो रखे, नहीं तो फेर दे, अगरचे इसमें कोई ऐब भी न हो और जैसी ठहरायी थी, वैसी ही हो, तब भी रखने-न रखने का अख़्तियार है।

मस्अला 2—किसी ने बिना देखे अपनी चीज़ बेच डाली तो इस बेचने वाली को देखने के बाद फेर लेने का अख़्तियार नहीं। देखने के बाद अख़्तियार सिर्फ़ लेने वाली को होता है।

मस्अला 3—कोई कुंजड़िन मटर की फलियां बेचने को लायी, उसमें ऊपर तो अच्छी-अच्छी थीं, उनको देख कर पूरा टोकरा ले लिया, लेकिन नीचे ख़राब निकलीं, तो अब भी उसको फेर देने का अख़्तियार है। हां, अगर सब फलियां एक जैसी हों तो थोड़ी सी फलियां देख लेना काफ़ी है, चाहे सब फलियां देखे, चाहे न देखे, फेरने का अख़्तियार न रहेगा।

मस्अला 4—अमरूद या नारंगी वग़ैरह कोई ऐसी चीज़ ख़रीदी कि सब बराबर नहीं हुआ करतीं, तो जब तक सब न देखे तब तक अख़्तियार रहता है। थोड़े के देख लेने से अख़्तियार नहीं जाता।

मस्अला 5—अगर कोई खाने-पीने की चीज़ ख़रीदी तो उसमें सिर्फ़ देख लेने का एतबार न किया जाएगा, बल्कि चखना भी चाहिए। अगर चखने के बाद ना पसन्द ठहरे तो फेर देने का अख़्तियार है।

मस्अला 6—बहुत ज़माना हो चुका कि कोई चीज़ देखी थी, अब आज उसको ख़रीद लिया, लेकिन अभी देखा नही, फिर जब घर ला कर देखा तो जैसी देखी थी, बिल्कुल वैसा ही उसको पाया। तो अब देखने के बाद फेर देने का अख़्तियार नहीं है, हां अगर इतने दिनों में कुछ फ़र्क़ हो गया तो देखने के बाद उसके लेने-न लेने का अख़्तियार होगा।

सौदे में ऐब निकल आने का बयान

मस्अला 1—जब कोई चीज़ बेचे तो वाजिब है जो कुछ उसमें ऐब

व ख़राबी हो, सब बतला दें। न बतलाना और धोखा देकर बेच डालना हराम है।

मस्अला 2—जब ख़रीद चुकी हो देखा कि उसमें कोई ऐब है, जैसे थान को चूहों ने कतर डाला है या दोशाले में कीड़ा लग गया है या और कोई ऐब निकल आया तो अब उस ख़रीदने वाली को अख़्तियार है, चाहे रख ले और ले ले, चाहे फेर दे लेकिन अगर रख ले तो पूरे दाम देना पड़ेंगे। इस ऐब के बदले में कुछ दाम काट लेना दुरूस्त नहीं, हां, अगर दाम की कमी पर वह बेचने वाली भी राज़ी हो जाए तो कम कर के देना दुरूस्त है।

मस्अला 3—किसी ने कोई थान ख़रीद कर रखा था कि किसी लड़के ने उसका एक कोना फाड़ डाला या कैंची से कतर डाला, उसके बाद देखा कि वह अन्दर से ख़राब है, जगह–जगह चूहे कतर गये हैं, तो अब उसको नहीं फेर सकती, क्योंकि एक और ऐब तो उसके घर ही में हो गया है, हां, उस ऐब के बदले में जो कि बेचने वाली के घर का है, दाम कम कर दिए जाएं। लोगों को दिखाया जाये, जो वे तजवीज़ करें, उतना कम कर दो।

मस्अला 4—इसी तरह अगर कपड़ा काट चुकी तब ऐब मालूम हुआ तब भी फेर नहीं सकती, हां दाम कम कर दिए जाएंगे। लेकिन अगर बेचने वाली कहे कि मेरा कटा हुआ दे दो और अपने सब दाम ले लो, मैं दाम कम नहीं करती, तो उसको यह अख़्तियार हासिल है, ख़रीदने वाली इंकार नहीं कर सकती और अगर काट कर सी भी लिया था, फिर ऐब हुआ तो ऐब के बदले दाम कम कर दिए जाएंगे। और बेचने वाली इस सूरत में अपना कपड़ा नहीं ले सकती और अगर उस ख़रीदने वाली ने वह कपड़ा बेच डाला या अपने ना–बालिग़ बच्चे को पहनाने की नीयत से काट डाला, बशर्ते कि बिल्कुल उसके दे डालने की नीयत हो और फिर उसमें ऐब निकाला, तो अब दाम कम नहीं किए जाएंगे और अगर बालिग़ औलाद की नीयत से काटा था और फिर ऐब निकला तो अब दाम कम कर दिए जाएंगे।

मस्अला 5—किसी ने एक अंडा एक पैसे के हिसाब से कुछ अंड़े ख़रीदे, जब तोड़े तो सब गंदे निकले तो सारे दाम फेर ले सकती है और ऐसा समझेंगे कि गोया उसने बिल्कुल ख़रीदे ही नहीं और अगर कुछ गंदे निकले, कुछ अच्छे, तो गंदों के दाम फेर सकती है और अगर किसी ने

बीस–पच्चीस अंडों के इकट्ठे दाम लगा कर ख़रीद लिए कि ये सब अंडे पांच आने को मैंने लिए तो देखो कितने ख़राब निकले। अगर सौ में पांच छः ख़राब निकले तो इसका कुछ एतबार नहीं और अगर ज़्यादा ख़राब निकले तो ख़राब के दाम हिसाब से फेर ले।

मस्अला 6—खीरा, ककड़ी, ख़रबूज़ा'–तरबूज़, लौकी, बादाम, अख़रोट वग़ैरह कुछ ख़रीदे, जब तोड़े तो अंदर से बिल्कुल ख़राब निकले तो देखो कि काम में आ सकते हैं या बिल्कुल निकम्मे और फेंक देने के क़ाबिल हैं। अगर बिल्कुल ख़राब और निकम्मे हों तब तो यह बैअ बिल्कुल सही नहीं हुई, अपने दाम फेर ले और अगर किसी काम में आ सकते हों तो जितने दाम बाज़ार में लगेंगे, उतने दिए जाएंगे, पूरी क़ीमत न दी जाएगी।

मस्अला 7—अगर सौ बादाम में चार ही पांच ख़राब निकले तो कुछ एतबार नहीं और अगर ज़्यादा ख़राब निकले तो जितने ख़राब हैं उनके दाम काट लेने का अख़्तियार है।

मस्अला 8—एक रूपये के पन्द्रह सेर गेहूं ख़रीदे या एक रूपये का डेढ़ सेर घी लिया, उसमें से कुछ तो अच्छा निकला और कुछ ख़राब निकला तो यह दुरूस्त नहीं है कि अच्छा–अच्छा ले और ख़राब–ख़राब वापस फेर दे, बल्कि अगर ले तो सब लेना पड़ेगा और फेर दे तो सब फेरे, हां, अगर बेचने वाली ख़ुद राज़ी हो जाये कि अच्छा–अच्छा ले लो और जितना ख़राब है, वह फेर दो ऐसा करना दुरूस्त है, उसकी मरज़ी के बग़ैर नहीं कर सकती।

मस्अला 9—ऐब निकलने के वक़्त फेर देने का अख़्तियार उसी वक़्त है जबकि ऐबदार चीज़ के लेने पर किसी तरह रज़ामंदी साबित न होती हो और अगर उसी के लेने पर राज़ी हो जाये तो अब उसका फेरना जायज़ नहीं, हां, बेचने वाली ख़ुशी से फेर ले तो फेरना दुरूस्त है। जैसे किसी ने एक बकरी या गाय वग़ैरह कोई चीज़ ख़रीदी। जब घर आयी तो मालूम हुआ कि यह बीमार है या इसके बदन में कहीं ज़ख़्म है, तो अगर देखने के बाद अपनी रज़ामंदी ज़ाहिर करे कि ख़ैर हमने ऐबदार ही ले ली तो अब फेरने का अख़्तियार नहीं रहा और अगर ज़ुबान से नहीं कहा लेकिन ऐसे काम किए जिससे रज़ामंदी मालूम होती है जैसे उसकी दवा–इलाज करने लगी, तब भी फेरने का अख़्तियार नहीं रहा।

मस्अला 10—बकरी का गोश्त ख़रीदा, फिर मालूम हुआ कि भेड़ का गोश्त है तो फेर सकती है।

मस्अला 11—मोतियों का हार या कोई और ज़ेवर ख़रीदा और किसी वक़्त उसको पहन लिया या जूता ख़रीदा और पहने-पहने चलने फिरने लगी तो अब ऐब की वजह से फेरने का अख़्तियार नहीं रहा। हां, अगर इस वजह से पहना हो कि पांवों में देखूं आता है या नहीं और पैर को चलने में कुछ तक्लीफ़ तो नहीं होती तो इस आज़माइश के लिये ज़रा देर के पहनने से कुछ हरज नहीं, अब भी फेर सकती है। इसी तरह कोई चारपाई या तख़्त ख़रीदा और किसी ज़रूरत से उसको बिछा कर बैठी या तख़्त पर नमाज़ पढ़ी और इस्तेमाल करने लगी तो अब फेरने का अख़्तियार नहीं रहा। इसी तरह और सब चीज़ों को समझ लो, अगर उससे काम लेने लगे तो फेरने का अख़्तियार नहीं रहता।

मस्अला 12—बेचते वक़्त उसने कह दिया कि ख़ूब देख-भाल लो अगर उसमें कुछ ऐब निकले या ख़राब हो तो मैं ज़िम्मेदार नहीं। इस कहने पर भी उसने ले लिया तो अब चाहे जितने ऐब उसमें निकलें, फेरने का अख़्तियार नहीं है और इसी तरह बेचना भी दुरुस्त है। इस कह देने के बाद ऐब बतलाना वाजिब नहीं है।

झूठी और ग़लत बैअ वग़ैरह का बयान

मस्अला 1—जो बैअ शरीअत में बिल्कुल ही एतबार के क़ाबिल न हो और झूठी हो और ऐसा समझें कि उसने बिल्कुल ख़रीदा ही नहीं और उसने बेचा ही नहीं, उसको बातिल (झूठी) कहते हैं। इसका हुक्म यह है कि ख़रीदने वाली उसकी मालिक नहीं हुई, वह चीज़ अब तक उसी बेचने वाली के मिल्क में है, इसलिये ख़रीदने वाली को न तो उसका खाना जायज़, न किसी को देना जायज़ है। किसी तरह से अपने काम में लाना दुरुस्त नहीं और जो बैअ हो तो गयी हो, लेकिन उसमें कुछ ख़राबी आ गयी है, उसको फ़ासिद (ग़लत) बैअ कहते हैं। इसका हुक्म यह है कि जब तक ख़रीदने वाली के क़ब्ज़े में न आ जाये, तब तक वह ख़रीदी हुई चीज़ उसके मिल्क में नहीं आती और जब क़ब्ज़ा कर लिया तो मिल्क में तो आ गई लेकिन हलाल-पाक नहीं है, इसलिये उसको खाना-पीना या किसी और तरह से अपने काम में लाना दुरुस्त नहीं, बल्कि ऐसी बैअ का तोड़ देना वाजिब है। लेना हो तो फिर से बैअ करें और मोल लें। अगर यह बैअ नहीं तोड़ी बल्कि किसी और के हाथ वह चीज़ बेच डाली तो गुनाह हुआ

और दूसरी ख़रीदने वाली के लिये उसका खाना-पीना और इस्तेमाल करना जायज़ है और यह दूसरी बैअ दुरूस्त हो गई। अगर नफ़ा लेकर बचा हो तो नफ़ा का ख़ैरात कर देना वाजिब है अपने काम में लाना दुरूस्त नहीं।

मस्अला 2—ज़मींदारों के यहां यह जो रस्म है कि तालाब बेच देते हैं, यह बैअ झूठ है। तालाब के अंदर जितनी मछलियां होती हैं, जब तक शिकार करके पकड़ी न जाए तब तक उनका कोई मालिक नहीं है। शिकार करके जो कोई पकड़े वही मालिक बन जाता है। जब यह बात समझ में आ गयी तो अब समझो कि जब ज़मींदार उनका मालिक ही नहीं तो बेचना कैसे दुरूस्त होगा। हां अगर ज़मींदार खुद मछलियां पकड़ कर बेचा करे, तो दुरूस्त हैं। अगर किसी और से पकड़वा देंगे तो वही मालिक बन जाएगा। ज़मींदार का उस पकड़ी हुई मछली में कुछ हक़ नहीं है, इसी तरह मछलियों के पकड़ने से लोगों को मना करना भी दुरूस्त नहीं है।

मस्अला 3—किसी ज़मीन में अपने आप कोई घास उगी, न उसने लगाया, उन उसको पानी देकर सींचा, तो यह घास भी किसी की मिल्क नहीं है, जिसका जी चाहे काट ले जाये, न उसका बेचना दुरूस्त है और न काटने से क़िसी को मना करना दुरूस्त है। हां, अगर पानी देकर सींचा और ख़िदमत की हो तो उसकी मिल्क हो जाएगी, अब बेचना भी जायज़ है और लोगों को मना करना भी दुरूस्त है।

मस्अला 4—जानवर के पेट में जो बच्चा है, पैदा होने से पहले उस बच्चे का बेचना भी ग़लत है और अगर पूरा जानवर बेच दिया तो दुरूस्त है लेकिन अगर यों कह दिया कि मैं यह बकरी बेचती हूं लेकिन इसके पेट का बच्चा नहीं बेचती हूं, जब बच्चा पैदा हो तो वह मेरा है, तो यह बैअ ग़लत है।

मस्अला 5—जानवर के थन में जो दूध भरा है, दूहने से पहले उसका बेचना ग़लत है, पहले दूध दूहले तब बेचें। इसी तरह भेड़-दुंबा के बाल जब तक काट न लें तब तक बालों का बेचना नाजायज़ और ग़लत है।

मस्अला 6—जो धरनि या लकड़ी मकान या छत में लगी हुई है, खोदने या निकालने से पहले उसका बेचना दुरूस्त नहीं है।

मस्अला 7—आदमी के बाल और हड्डी वग़ैरह किसी चीज़ का बेचना नाजायज़ और ग़लत है और इन चीज़ों का अपने काम में लाना और बरतना भी दुरूस्त नहीं है।

मस्अला 8—अलावा सुअर के दूसरे मुरदार की हड्डी और बाल और सींग पाक हैं, उनसे काम लेना भी जायज़ है और बेचना भी जायज़ है।

मस्अला 9—तुमने एक बकरी या और कोई चीज़ किसी से पांच रूपये की मोल ली और उस बकरी पर क़ब्ज़ा कर लिया और अपने घर मंगा कर बंधवायी, लेकिन अभी दाम नहीं दिए, फिर इत्तिफ़ाक़ से उसके दाम न दे सकी या अब उसका रखना मंज़ूर न हो, इसलिए तुमने कहा कि यही बकरी चार रूपये में ले जाओ, एक रूपया हम तुमको और देंगे। यह बेचना और लेना जायज़ नहीं। जब तक उसको रूपया न दे चुके, उस वक़्त तक कम दामों पर उसके हाथ बेचना दुरूस्त नहीं है।

मस्अला 10—किसी ने इस शर्त पर अपना मकान बेचा कि एक महीने तक हम न देंगे, बल्कि खुद इसमें रहेंगे, या यह शर्त ठहराई कि इतने रूपये तुम हम को क़र्ज़ दे दो या कपड़ा इस शर्त पर ख़रीदा कि तुम ही काट कर सी देना या यह शर्त की कि हमारे घर तक पहुंचा देना या और कोई ऐसी शर्त मुक़र्रर की जो शरीअत से बेकार और नाजायज़ है, तो यह सब ग़लत बैअ है।

मस्अला 11—यह शर्त करके एक गाय ख़रीदी कि यह चार सेर दूध देती है तो बैअ ग़लत हुई, हां, अगर कुछ मिक़्दार नहीं मुक़र्रर की, सिर्फ़ यह शर्त की है कि यह गाय बहुत दुधारी है तो यह बैअ जायज़ है।

मस्अला 12—मिट्टी या चीनी के खिलौने यानी तस्वीरें बच्चों के लिए ख़रीदे तो यह बैअ ग़लत है। शरीअत में इन खिलौने की क़ीमत नहीं, इसलिए इसके कुछ दाम न दिलाये जायेंगे। अगर कोई तोड़ दे, तो कुछ जुर्माना भी न देना पड़ेगा।

मस्अला 13—कुछ अनाज, घी, तेल वग़ैरह रूपया के दस सेर या और कुछ भाव तै करके ख़रीदा तो देखो कि इस बैअ के बाद उसने तुम्हारे या तुम्हारे भेजे हुए आदमी के सामने तौल कर दिया है या तुम्हारे और तुम्हारे भेजे हुए आदमी के सामने नहीं तौला बल्कि कहा, तुम जाओ, हम तौल कर घर भेजे देते हैं या पहले से अलग तौला हुआ रखा था, उसने इसी तरह उठा दिया, फिर नहीं तौला, ये तीन शक्लें हुई—पहली शक्ल का हुक्म यह है कि घर में लाकर अब उसका तौलना ज़रूरी नहीं है। तौले बग़ैर भी उसका खाना–पीना–बेचना वग़ैरह सब सही है और दूसरी और तीसरी शक्ल का हुक्म यह है कि जब तक खुद न तौल ले,

तब तक उसका खाना-पीना-बेचना वग़ैरह कुछ दुरूस्त नहीं। अगर बे-तौले बेच दिया, तो यह बैअ ख़राब हो गई, फिर अगर तौल भी ले, तब भी यह बैअ दुरूस्त नहीं हुई।

मस्अला 14—बेचने से पहले उसने तौल कर तुमको दिखाया, इसके बाद तुमने ख़रीद लिया और फिर दोबारा उसने नहीं तौला तो इस सूरत में भी ख़रीदने वाली को फिर तौलना ज़रूरी है। बग़ैर तौले खाना और बेचना दुरूस्त नहीं और न बेचने से पहले, अगरचे उसने तौल कर दिखा दिया है, लेकिन इसका कुछ एतबार नहीं।

मस्अला 15—ज़मीन और गांव और मकान वग़ैरह के अलावा और जितनी चीज़ें हैं उनके ख़रीदने के बाद जब तक क़ब्ज़ा न करे तब तक बेचना दुरूस्त नहीं।

मस्अला 16—अगर बकरी या कोई और चीज़ ख़रीदी। कुछ दिन के बाद एक और शख़्स आया और कहा कि यह बकरी तो मेरी है, किसी ने यों ही पकड़ कर बेच दी, उसकी नहीं थी तो अगर वह अपना दावा क़ाज़ी के यहां दो गवाहों से साबित कर दे तो काज़ी के फ़ैसले के बाद बकरी उसी को देनी पड़ेगी और बकरी के दाम उससे कुछ नहीं ले सकते, बल्कि जब बेचने वाला मिले तो उससे अपने दाम वसूल करो, इस आदमी से कुछ नहीं ले सकते।

मस्अला 17—कोई मुर्ग़ी या बकरी या गाय वग़ैरह मर गई तो उसकी बैअ हराम और ग़लत है, बल्कि उस मरी हुई चीज़ को भंगी या चमार को खाने के लिए देना भी जायज़ नहीं, हां, चमार-भंगियों से फेंकने के लिए उठवा दिया, फिर उन्होंने खा लिया तो तुम पर कुछ इलज़ाम नहीं और उसकी खाल निकलवा कर ठीक कर लेने और बना लेने के बाद बेचना और अपने काम में लाना ठीक है, जैसा कि पहले भाग में हमने बयान किया है, वहां देख लो।

मस्अला 18—जब एक ने मोल-तोल करके एक दाम ठहराये और वह बेचने वाला इतने दामों पर राज़ी भी उस वक़्त किसी दूसरे का दाम बढ़ा कर खुद ले लेना जायज़ नहीं, इसी तरह यों कहना भी दुरूस्त नहीं कि तुम इससे न लो। ऐसी चीज़ मैं तुमको इससे कम दामों पर दे दूंगी।

मस्अला 19—एक कुंजड़िन ने तुमको पैसे के चार अमरूद दिए, फिर किसी ने ज़्यादा तकरार कर के पैसे के पांच लिये तो अब तुमको

इससे एक अमरूद और लेने का हक़ नहीं। ज़बरदस्ती करके लेना ज़ुल्म और हराम है जिससे जो कुछ तै हो, बस उतना ही लेने का अख़्तियार है।

मस्अला 20—कोई शख़्स कुछ बेचता है, लेकिन तुम्हारे हाथ बेचने पर राज़ी नहीं होता तो उससे ज़बरदस्ती लेकर दाम दे देना जायज़ नहीं, क्योंकि वह अपनी चीज़ का मालिक है चाहे बेचे या न बेचे और जिस के हाथ चाहे बेचे। पुलिस वाले अक्सर ज़बरदस्ती ले लेते हैं, यह बिल्कुल हराम है। अगर किसी का मियां पुलिस में नौकर हो तो ऐसे मौक़े पर मियां से पूछ लिया करे, यों ही न बरत ले।

मस्अला 21—टके के सेर भर आलू लिये, उसके बाद तीन चार आलू ज़बरदस्ती और ले लिए, यह ठीक नहीं, हां अगर वह ख़ुद अपनी ख़ुशी से कुछ और दे दे तो उसका लेना जायज़ है। इसी तरह जो दाम तै कर लिए हैं, चीज़ के लेने के बाद अब उससे कम दाम देना ठीक नहीं, हां वह अगर अपनी ख़ुशी से कुछ कम कर दे तो कम भी दे सकती है।

मस्अला 22—जिसके घर में शहद का छत्ता लगा है वही मालिक है, किसी ग़ैर का उसको तोड़ना और लेना ठीक नहीं और अगर उसके घर में किसी परिंदे ने बच्चे दिये तो वह घर वाली की मिल्क नहीं, बल्कि जो पकड़े उसी के हैं, लेकिन बच्चों को पकड़ना और सताना दुरुस्त नहीं है।

असली बहिश्ती ज़ेवर का चौथा
हिस्सा ख़त्म हुआ।

(भाग-5)

बहिश्ती ज़ेवर

हज़रत मौलाना अशरफ़ अली थानवी (रह०)

विषय सूची

क्या ? कहां ?

नफ़ा लेकर या दाम के दाम बेचने का बयान

मस्अला 1—एक चीज़ हमने एक रूपए को ख़रीदी थी, तो अब अपनी चीज़ का हमको अख़्तियार है चाहे एक ही रूपए को बेच डालें और चाहे दस–बीस रूपए को बेचें, इसमें कोई गुनाह नहीं, लेकिन अगर मामला इस तरह तै हुआ कि उसने कहा, एक आना रूपया नफ़ा लेकर हमारे हाथ बेच डालो, इस पर तुमने कहा, अच्छा हमने रूपया पीछे एक आने नफ़ा पर बेचा तो अब इकन्नी रूपए से ज़्यादा नफ़ा लेना जायज़ नहीं, या यों ठहरा जितने को ख़रीदा है, उस पर चार आना नफ़ा ले लो, अब भी ठीक–ठीक दाम बतला देना वाजिब है और चार आने से ज़्यादा नफ़ा लेना दुरूस्त नहीं। इसी तरह अगर तुमने कहाकि यह चीज़ हम तुमको ख़रीद के दामों पर देंगे, कुछ नफ़ा न लेंगे, तो अब कुछ नफ़ा लेना दुरूस्त नहीं, ख़रीद ही के दाम ठीक–ठीक बतला देना वाजिब है।

मस्अला 2—किसी सौदे का यों मोल किया कि इकन्नी रूपए के नफ़ा पर बेच डालो, उसने कहा अच्छा, मैंने उतने ही नफ़ा पर बेचा या तुमने कहा कि जितने को लिया है, उतने ही दाम पर बेच डालो। उसने कहा अच्छा, तुम वही दे दो, नफ़ा कुछ न देना, लेकिन उसने यह भी नहीं बतलाया कि यह चीज़ कितने की ख़रीदी तो देखो अगर उसी जगह उठने से पहले वह अपनी ख़रीद के दाम बतला दे, तब तो यह बैअ सही है और

अगर उसी जगह न बतलाये, यो कहे कि आप ले जाइए, हिसाब देखकर बतलाया जायेगा या और कुछ कहा तो वह बैअ सही नहीं है।

मस्अला 3—लेने के बाद अगर मालूम हुआ कि उसने चालाकी से अपनी ख़रीद ग़लत बतलायी है और नफ़ा वायदे से ज़्यादा लिया है तो ख़रीदने वाली को दाम कम देने का अख़्तियार नहीं है, बल्कि अगर ख़रीदना मंज़ूर है तो वही दाम देने पड़ेंगे, जितने को उसने बेचा है। हां, यह अख़्तियार है कि अगर लेना मंज़ूर न हो तो फेर दे और अगर ख़रीद के दाम पर बेच देने का वायदा था और यह वायदा था कि हम नफ़ा न लेंगे, फिर उसने अपनी ख़रीद ग़लत और ज़्यादा बतलायी तो जितना ज़्यादा बतलाया है, उसके लेने का हक़ नहीं है, लेने वाली को अख़्तियार है कि सिर्फ़ ख़रीद के दाम दे और जो ज़्यादा है, वह न दे।

मस्अला 4—कोई चीज़ तुमने उधार ख़रीदी, तो अब जब तक दूसरे ख़रीदार को यह न बतला दो कि भाई यह चीज़ हमने उधार ली है, उस वक़्त तक उसको नफ़ा पर बेचना या ख़रीद के दाम पर बेचना ना-जायज़ है, बल्कि बतला दे कि यह चीज़ मैंने उधार ख़रीदी थी, फिर इस तरह नफ़ा लेकर या दाम के दाम पर बेचना दुरुस्त है, हां अगर ख़रीद के दामों का कुछ ज़िक्र न करे, फिर चाहे जितने दाम पर बेचना दुरुस्त है, हां अगर ख़रीद के दामों का कुछ ज़िक्र न करे, फिर चाहे जितने दाम पर बेच दे, तो दुरुस्त है।

मस्अला 5—एक कपड़ा एक रूपए का ख़रीदा, फिर चार आना देकर उसको रंगवाया या उसको धुलवाया या सिलवाया तो अब ऐसा समझेंगे कि सवा रूपए को उसने मोल लिया। इसलिए अब सवा रूपए उसकी असली क़ीमत बता करके नफ़ा लेना दुरुस्त है, पर यों न कहे कि सवा रूपए को मैंने लिया है, बल्कि यों कहे कि सवा रूपए में यह चीज़ मुझको पड़ी है ताकि झूठ न होने पाये।

मस्अला 6—एक बकरी चार रूपए को मोल ली फिर महीने भर तक रही और एक रूपया उसके खिलाने-पिलाने में लग गये, तो अब पांच रूपए उसकी असली क़ीमत ज़ाहिर करके नफ़ा लेना दुरुस्त है। हां, अगर वह दूध देती हो तो जितना दूध दिया है, उतना घटा देना पड़ेगा। मिसाल के तौर पर अगर महीने भर में आठ आने का दूध दिया है तो अब उसकी असली क़ीमत साढ़े चार रूपए ज़ाहिर करे और यों कहे कि साढ़े चार में मुझको पड़ी और चूंकि औरतों को इस क़िस्म की ज़रूरत ज़्यादा

नहीं पड़ती, इसलिए हम और मस्अले नहीं बयान करते।

सूदी लेन–देन का बयान

सूदी लेन–देन का बड़ा भारी गुनाह है, क़ुरआन मजीद और हदीस शरीफ़ में इसकी बड़ी बुराई और इससे बचने की बड़ी भारी ताकीद आयी है। प्यारे नबी सल्ल० ने सूद देने वाले और बीच में पड़ के सूद दिलाने वाले, सूदी पुरूनोट लिखने वाले, गवाह वग़ैरह सब पर लानत फ़रमायी है और फ़रमाया है कि सूद देने वाला और लेने वाला गुनाह में दोनों बराबर हैं इसलिए इससे बचना चाहिए, इसके मस्अले बहुत नाज़ुक हैं। ज़रा–ज़रा सी बात में सूद का गुनाह हो जाता है और अनजान लोगों को पता भी नहीं लगता कि क्या गुनाह हुआ। हम ज़रूरी–ज़रूरी मस्अले यहां बयान करते हैं। लेन–देन के वक़्त हमेशा इनका ख़्याल रखा करो।

मस्अला 1—हिन्दुस्तान के रिवाज से सब चीज़ें चार क़िस्म की हैं। एक तो खुद सोना–चांदी या उनकी बनी हुई चीज़। दूसरे इसके सिवा और वे चीज़ें तौल कर बिकती हैं जैसे अनाज, गल्ला, लोहा, तांबा, रूई, तरकारी वग़ैरह। तीसरे वे चीज़ें जो गज़ से नाप कर बिकती हैं जैसे कपड़ा, चौथा वह जो गिनती के हिसाब से बिकती हैं जैसे अंडे, आम, अमरूद, नारंगी, बकरी, गाया, घोड़ा, वग़ैरह, इन सब चीज़ों का हुक्म अलग–अलग समझ लो।

चांदी–सोने और उसकी चीज़ों का बयान

मस्अला 2—चांदी–सोने की नई शक्लें हैं—एक तो यह कि चांदी को चांदी से और सोने को सोने से ख़रीदा जैसे एक रूपए की चांदी ख़रीदना मंज़ूर है या आठ आने की चांदी ख़रीदी और दाम में अठन्नी की या अशर्फ़ी से सोना ख़रीदा, मतलब यह कि दोनों तरफ़ एक ही क़िस्म की चीज़ है तो ऐसे वक़्त दो बातें वाजिब हैं। एक यह कि दोनों तरफ़ की चांदी या दोनों तरफ़ का सोना बराबर हो। दूसरे यह कि जुदा होने से पहले ही पहले दोनों तरफ़ से लेन–देन हो जाए, कुछ उधार बाक़ी न रहे। अगर इन बातों में से किसी बात के ख़िलाफ़ किया हो तो सूद हो गया, जैसे एक रूपए की चांदी तुमने ली तो वज़न में एक रूपए के बराबर लेना

चाहिए। अगर रूपए भर से कम ली या उससे ज़्यादा ली तो यह सूद हो गया। इसी तरह अगर तुमने रूपया दे दिया लेकिन उसने चांदी अभी नहीं ली, थोड़ी देर में तुमसे अलग होकर देने का वायदा किया या इसी तरह तुमने अभी रूपया नहीं दिया चांदी उधार ले ली तो यह भी सूद है।

मस्अला 3—दूसरी सूरत यह है कि दोनों तरफ़ एक क़िस्म की चीज़ नहीं बल्कि एक तरफ़ चांदी और एक तरफ़ सोना है, इसका हुक्म यह है कि वज़न का बराबर होना ज़रूरी नहीं, एक रूपए का चाहे कितना सोना मिले जायज़ है। इसी तरह एक अशर्फ़ी की चाहे जितनी चांदी मिले जायज़ है, लेकिन जुदा होने से पहले ही पहले लेन–देन हो जाना, कुछ उधार न रहना, यहां भी वाजिब है, जैसा कि अभी बयान हुआ है।

मस्अला 4—बाज़ार में चांदी का भाव बहुत तेज़ है यानी अठारह आने की रूपए भर चांदी मिलती है, रूपए भर कोई नहीं देता, चांदी का ज़ेवर बहुत अच्छा बना हुआ है और दस रूपए भर उसका वज़न है, पर बारह से कम में नहीं मिलता तो सूद से बचने का तरीक़ा यह है कि रूपए से न ख़रीदो, बल्कि पैसों से ख़रीदो और अगर ज़्यादा लेना हो तो अशर्फ़ियों से ख़रीदो यानी अठारह आने पैसों के बदले में रूपया भर चांदी ले लो या कुछ रेज़गारी यानी एक रूपए से कम और कुछ पैसे देकर ख़रीद लो, तो गुनाह न होगा लेकिन एक रूपया नक़द और दो आने पैसे न देना चाहिए, नहीं तो सूद हो जाएगा। इसी तरह अगर आठ रूपए भर चांदी नौ रूपए में लेना मंज़ूर है तो सात रूपए और दो रूपए के पैसे दे दो, सात रूपए के बदले में सात रूपए भर चांदी हो गयी, बाक़ी सब चांदी इन पैसों के बदले में आ गयी। अगर दो रूपए के पैसे न दो तो कम से कम अठारह आने के पैसे ज़रूर देने चाहिए, सात रूपए और चौदह आने की रेज़गारी और अठारह आने के पैसे दिए तो चांदी के मुक़ाबले में तो उसी के बराबर चांदी आयी, जो कुछ बची, वह सब पैसों के बदले में हो गयी। अगर आठ रूपए और एक रूपए के पैसे दोगी तो गुनाह से न बच सकोगी, क्योंकि आठ रूपए के बदले में आठ रूपए भर चांदी होनी चाहिए, फिर ये पैसे कैसे, इसलिए सूद हो गया, मतलब यह कि इतनी बात हमेशा ख़्याल रखो कि जितनी चांदी ली है तो इससे कम चांदी दो और बाक़ी पैसे दो। अगर पांच रूपए भर चांदी ली है तो पूरे पांच रूपए न दो। दस रूपए भर चांदी ली तो पूरे दस रूपए न दो, कम दो, बाक़ी पैसे शामिल कर दो तो सूद न होगा और यह भी याद रखो कि इस तरह हरगिज़ सूद

न तै करो कि नौ रूपए की इतनी चांदी दे दो बल्कि यों कहो कि सात रूपए और दो रूपए के पैसों के बदले में यह चांदी दे दो और अगर इस तरह कहा तो फिर सूद हो गया, ख़ूब समझ लो।

मस्अला 5—और अगर दोनों लेन-देन वाले राज़ी हो जाएं तो एक आसान बात यह है कि जिस तरफ़ चांदी वज़न में कम हो, उस तरफ़ पैसे शामिल होने चाहिएं।

मस्अला 6—और एक इससे ज़्यादा आसान बात यह है कि दोनों आदमी जितने चाहें रूपए रखें और जितनी चाहें चांदी रखें, मगर दोनों आदमी एक पैसा भी शमिल कर दें और यों कह दें कि हम इस चांदी और इस पैसे को इस रूपये और इस पैसे के बदल लेते हैं तो सारे बखेड़ों से बच जाओगी।

मस्अला 7—अगर चांदी सस्ती है और एक रूपये की डेढ़ रूपए भर मिलती है, रूपये की रूपये भर लेने में नुक़्सान है तो उसके लेने और सूद से बचने की यह शक्ल है कि दामों में कुछ न कुछ पैसे ज़रूर मिला दो। कम से कम दो ही आने या एक आना या एक पैसा ही सही, जैसे दस रूपयें की चांदी, पंद्रह रूपये भर ख़रीदी तो नौ रूपये और एक रूपये के पैसे दे दो या दो ही आने के पैसे दे दो। बाक़ी रूपये और रेज़गारी दे दो तो ऐसा समझेंगे कि चांदी के बदले में उसके बराबर चांदी ली, बाक़ी सब चांदी इन पैसों के बदले में है, इस तरह गुनाह न होगा और वह बात यहां भी ज़रूर ख़्याल रखो कि यों न कहो कि इस रूपये की चांदी दे दो बल्कि यों कहो कि नौ रूपये और एक रूपये के पैसों के बदले में यह चांदी दे दो, मतलब यह कि जितने पैसे शामिल करना मंज़ूर है, मामला करते वक़्त उनको साफ़ कह भी दो, वरना सूद से बचाव न होगा।

मस्अला 8—खोटी और ख़राब चांदी देकर अच्छी चांदी लेना है और अच्छी चांदी उसके बराबर नहीं मिल सकती तो यों कहो कि यह ख़राब चांदी पहले बेच डालो, जो दाम मिलें उनकी अच्छी चांदी ख़रीद लो और बेचने और ख़रीदने में उसी क़ायदे का ख़्याल रखो जो ऊपर बयान हुआ, या यहां भी दोनों आदमी एक-एक पैसा शामिल करके बेच लो, ख़रीद लो।

मस्अला 9—औरतें अगर बज़ार से सच्चा गोटा-ठप्प-लचका ख़रीदती हैं, उसमें भी इन ही मस्अलों का ख़्याल रखो, क्योंकि वह भी चांदी है और रूपया चांदी का उसके बदले दिया जाता है। यहां भी

आसान बात वही है कि दोनों तरफ़ एक–एक पैसा मिला दिया जाए।

मस्अला 10—अगर चांदी या सोने की बनी हुई चीज़ ख़रीदी है, जिस में सिर्फ़ चांदी ही चांदी है या सिर्फ़ सोना है, कोई और चीज़ नहीं है तो उसका भी यही हुक्म है कि अगर सोने की चीज़ चांदी या रूपयों से ख़रीदे या चांदी की चीज़ अशर्फ़ियों से ख़रीदे तो वज़न में चाहे जितने हो जायज़ है, सिर्फ़ इतना ख़्याल रखे कि उसी वक़्त लेन–देन हो जाये, किसी के ज़िम्मे कुछ बाक़ी न रहे और अगर चांदी की चीज़ रूपयों से और सोने की चीज़ अशर्फ़ियों से ख़रीदे तो वज़न में बराबर होना वाजिब है, अगर किसी तरफ़ कुछ कमी–बेशी हो तो उसी तरीक़े से ख़रीदो जो ऊपर बयान हुई।

मस्अला 11—अगर कोई चीज़ ऐसी है कि चांदी के अलावा इसमें कुछ और भी लगा हुआ है मिसाल के तौर पर जोशन के अंदर लाख भरी हुई है ओर लौंगों पर नग जड़े हैं, अंगूठियों पर नगीनें रखे हैं या जोशनों में लाख तो नहीं है, लेकिन तागों में गुंधे हुए हैं, इन चीज़ों को रूपयों से ख़रीदा तो देखो इस चीज़ में कितनी चांदी है, वज़न में उतने ही रूपयों के बराबर है जितने को तुमने ख़रीदा है या उससे कम है या उससे ज़्यादा। अगर रूपयों की चांदी से उस चीज़ की चांदी यक़ीनन कम हो तो यह मामला जायज़ है और अगर बराबर या ज़्यादा हो तो सूद हो गया और उससे बचने का वही तरीक़ा है जो ऊपर बयान हुई कि दाम की चांदी उस ज़ेवर की चांदी से कम रखो और बाक़ी पैसे शामिल कर दो और उसी वक़्त लेन–देन का हो जाना इस सब मस्अलों में भी शर्त है।

मस्अला 12—अपनी अंगूठी से किसी की अंगूठी बदल ली तो देखो अगर दोनों पर नग लगा हो तब तो बहरहाल यह बदल लेना जायज़ है चाहे दोनों की चांदी बराबर हो या कम या ज़्यादा सब ठीक है, हां, हाथ के हाथ होना ज़रूरी है और अगर दोनों सादी यानी बग़ैर नग की हों तो बराबर होना शर्त है अगर ज़रा भी कमी–बेशी हो गयी तो सूद हो जाएगा। अगर एक पर नग है और दूसरी सादी, तो अगर सादी में ज़्यादा चांदी हो तो यह बदलना जायज़ है, वरना हराम और सूद है, इसी तरह अगर उसी वक़्त दोनों तरफ़ से लेन–देन न हुआ, एक ने तो अभी दे दी, दूसरी ने कहा कि बहन मैं ज़रा देर में दे दूंगी, तो यहां भी सूद हो गया।

मस्अला 13—जिन मस्अलों में उसी वक़्त लेन–देन होना शर्त है, उसका मतलब यह है कि दोनों के जुदा और अलग होने से पहले ही पहले लेन–देन हो जाए, अगर एक आदमी दूसरे से अलग हो गया, उसके

बाद लेने–देन हुआ, तो उसका एतबार नहीं। यह भी सूद में दाख़िल है। मिसाल के तौर पर तुम ने दस रूपए की चांदी या सोना या चांदी–सोने की कोई चीज़ सुनार से ख़रीदी तो तुमको चाहिए कि रूपया उसी वक़्त दे दो और उसको चाहिए कि वह चीज़ उसी वक़्त दे दे। अगर सुनार चांदी अपने साथ नहीं लाया और यों कहा कि मैं घर जाकर अभी भेज दूंगा तो यह जायज़ नहीं, बल्कि उसको चाहिए कि यहीं मंगवा दे और उसके मंगाने तक लेने वाला भी वहां से न हिले, न उसको अपने पास से अलग होने दे। अगर उसने कहा तुम मेरे साथ चलो, घर पहुंच कर दे दूंगा, तो जहां–जहां वह जाए, बराबर उसके साथ रहना चाहिये। अगर वह अंदर चला गया और किसी तरह अलग हो गया तो गुनाह हुआ और वह बैअ नाजायज़ हो गयी, अब फिर से मामला करें।

मस्अला 14—ख़रीदने के बाद तुम घर में रूपए लेने आए या वह कहीं पेशाब वग़ैरह के लिये चला गया या अपनी दुकान के अंदर ही किसी काम को गया और एक दूसरे से अलग हो गया तो यह नाजायज़ और सूदी मामला हो गया।

मस्अला 15—अगर तुम्हारे पास इस वक़्त रूपया न हो और उधर लेना चाहो तो उसका उपाय यह है कि जितने दाम तुमको देना चाहिए उतने रूपए उससे क़र्ज़ लेकर उस ख़रीदी हुई चीज़ के दाम बेबाक़ कर दो। क़र्ज़ का अदा करना तुम्हारे ज़िम्मे रह जायेगा, उसको जब चाहे देना।

मस्अला 16—एक कामदार दोपट्टा या टोपी वग़ैरह दस रूपये की ख़रीदी तो देखों उसमें कितने रूपये भर चांदी निकलेगी। जितने रूपये भर चांदी उसमें ही उतने रूपए उसी वक़्त पास रहने देना। वाजिब हैं। बाक़ी रूपया जब चाहो दो यही हुक्म जड़ाऊ ज़ेवर वग़ैरह की ख़रीद का है। मिसाल के तौर पर पांच रूपए का ज़ेवर ख़रीदा और उसमें दो रूपए भर चांदी है, तो दो रूपए उसी वक़्त दे दो, बाक़ी जब चाहे देना।

मस्अला 17—एक रूपया या कई रूपए के पैसे लिये या पैसे देकर रूपया लिया तो उसका यह हुक्म है कि दोनो तरफ़ से लेन–देन होना ज़रूरी नहीं है बल्कि एक तरफ़ से हो जाना काफ़ी है। मिसाल के तौर पर तुमने रूपया तो उसी वक़्त दे दिया लेकिन उसने पैसे ज़रा देर के बाद दिए या उसने पैसे उसी वक़्त दे दिए, तुमने रूपया अलग होने के बाद दिया, यह दुरूस्त है, हां अगर पैसों के साथ कुछ रेज़गारी भी ली हो

तो उसका लेन–देन दोनों तरफ़ से उसी वक़्त हो जाना चाहिए कि यह रूपया दे दे और वह रेज़गारी दे दे लेकिन याद रखो कि पैसों का यह हुक्म उसी वक़्त है, जब दुकानदार के पास पैसे हैं तो सही, लेकिन वह किसी वजह से नहीं दे सकता या घर पर थे वहां जाकर लायेगा तब देगा और अगर पैसे नहीं थे, यों कहा जब सौदा बिकें और पैसे आयें तो ले लेना या कुछ पैसे अभी दे दिए और बाक़ी के बारे में कहा, जब बिक्री हो और पैसे आए तो ले लेना यह दुरूस्त नहीं और चूंकि अक्सर पैसों के मौजूद न होने ही से यह उधार होता है, इसलिए मुनासिब यही है कि बिल्कुल पैसे उधार के न छोड़े और अगर कभी ऐसी ज़रूरत पड़े तो यों करो कि जितने पैसे मौजूद हैं वह क़र्ज़ ले लो और रूपया अमानत रख दो, जब सब पैसे दे उस वक़्त बैअ कर लेना।

मस्अला 18—अगर अशर्फ़ी देकर रूपए लिये तो दोनों तरफ़ से लेन–देन सामने रहते–रहते हो जाना वाजिब है।

मस्अला 19—चांदी–सोने की चीज़ रूपयों या अशर्फ़ियों से ख़रीदी और यह शर्त कर ली कि एक दिन तक हम को लेने–न लेने का अख़्तियार है तो यह जायज़ नहीं, ऐसे मामले में यह इक़रार न करना चाहिए।

जो चीज़ें तौल कर बिकती हैं, उनका बयान

मस्अला 1—जब उन चीज़ों का हुक्म सुनो जो तौल कर बिकती हैं जैसे अनाज, मांस, लोहा, तांबा, तरकारी, नमक वग़ैरह—इस क़िस्म की चीज़ों में से अगर एक चीज़ को उसी क़िस्म की चीज़ से बेचना और बदलना चाहो, मिसाल के तौर पर गेहूं देकर दूसरे गेहूं लिए या एक धान देकर दूसरे धान लिए या आटे के बदले आटा या इसी तरह कोई और चीज़ ली, मतलब यह कि दोनों तरफ़ एक ही क़िस्म की चीज़ हो तो उसमें भी इन दोनों बातों का ख़्याल रखना वाजिब है। एक तो यह कि दोनों तरफ़ बिल्कुल बराबर हो, ज़रा भी किसी तरफ़ कमी–बेशी न हो, वरना सूद हो जायेगा। दूसरी यह कि उसी वक़्त हाथ के हाथ दोनों तरफ़ से क़ब्ज़ा और लेन–देन हो जाए। अगर क़ब्ज़ा न हो तो कम से कम इतना ज़रूर हो कि दोनों गेहूं अलग–अलग कर के दिखाओ, तुम अपने गेहूं तौल कर अलग रख दो कि देखो ये रखे हैं, जब तुम्हारा जी चाहे, ले जाना। इसी तरह वह भी अपने गेहूं तौल कर रख दे कि ये तुम्हारे अलग रखे हैं,

जब चाहे ले जाना। अगर यह भी न किया और एक दूसरे से अलग हो गयी, तो सूद का गुनाह होगा।

मस्अला 2—ख़राब गेहूं देकर अच्छे गेहूं लेना मंज़ूर है या बुरा आटा देकर अच्छा आटा लेना है, इसलिए इसके बराबर कोई नहीं देता, तो सूद से बचने का तरीक़ा यह है कि इस गेहूं या आटे वग़ैरह को पैसों से बेच दो कि हम ने इतना आटा दो आने को बेचा। फिर इसी दो आने के बदले अच्छे ले लो, या जायज़ है।

मस्अला 3—और अगर ऐसी चीज़ों में जो तौल कर बिकती हैं, एक तरह की चीज़ न हो जैसे गेहूं देकर धान लिए या जौ या चना या ज्वार या नमक या गोश्त, तरकारी वग़ैरह कोई और चीज़ ली, मतलब यह है कि इधर और चीज़ है और उधर और चीज़, दोनों तरफ़ एक चीज़ नहीं तो इस शक्ल में दोनों का वज़न बराबर होना वाजिब नहीं। सेर भर गेहूं दे कर चाहे दस सेर धान वग़ैरह ले लो या छटांक भर लो तो सब जायज़ है, हां, दूसरी बात यहां भी वाजिब है कि सामने रहते–रहते दोनों तरफ़ से लेन–देन हो जाए या कम से कम इतना हो कि दोनों की चीज़ें अलग–अलग करके रख दी जाएं, अगर ऐसा न किया तो सूद का गुनाह होगा।

मस्अला 4—सेर भर चने के बदले में कुंजड़िन से कोई तरकारी ली, फिर चने निकालने के लिए अंदर कोठरी में गयी, वहां से अलग हो गयी तो यह हराम और ना जायज़ है, अब फिर से मामला करे।

मस्अला 5—अगर इस क़िस्म की चीज़ जौ तौल कर बिकती है, रूपया–पैसा से ख़रीदी या कपड़े वग़ैरह किसी ऐसी चीज़ से बदली है जो तौल कर नहीं बिकती, बल्कि गज़ से नाप कर बिकती है या गिनती से बिकती है, जैसे एक थान कपड़ा देकर गेहूं वग़ैरह लिए या गेहूं चने देकर अमरूद, नारंगी, नाशपाती, अंडे ऐसी चीजें लीं जो गिन कर बिकती हैं, मतलब यह कि एक तरफ़ ऐसी चीज़ है जो तौल कर बिकती है और दूसरी तरफ़ गिनती से या गज़ से नाप कर बिकने वाली चीज़ है तो इस सूरत में इन दोनों में से कोई बात भी वाजिब नहीं। एक पैसे के चाहे जितने गेहूं, आटा, तरकारी ख़रीदे, इसी तरह कपड़ा देकर चाहे कितना अनाज ले ले, गेहूं–चने वग़ैरह देकर चाहे जितने अमरूद नारंगी वग़ैरह ले और चाहे उसी वक़्त उसी जगह रहते–रहते लेन–देन हो जाए, चाहे अलग होने के बाद, हर तरह यह मामला दुरूस्त है।

मस्अला 6—एक तरफ़ छना हुआ आटा है, दूसरी तरफ़ बग़ैर

छना है या एक तरफ़ मोटा है, दूसरी तरफ़ बारीक़, तो बदलते वक़्त उन दोनों का बराबर होना भी वाजिब है, कमी–ज़्यादती जायज़ नहीं। अगर ज़रूरत पड़े तो उसका तरीक़ा वही है जो बयान हुआ और अगर एक तरफ़ गेहूं का आटा है, दूसरी तरफ़ चने का ज्वार वग़ैरह का तो अब वज़न में दोनों का बराबर होना वाजिब नहीं, मगर वह दूसरी बात बहरहाल वाजिब है कि हाथ के हाथ लेन–देन हो जाए।

मस्अला 7—गेहूं को आटे से बदलना किसी तरह दुरूस्त नहीं, चाहे सेर भर आटा देकर सेर ही भर गेहूं हो, चाहे कुछ कम या ज़्यादा हो, बहरहाल ना जायज़ है, हां, अगर गेहूं देकर गेहूं का आटा नहीं लिया, बल्कि चने वग़ैरह किसी और चीज़ का आटा लिया तो जायज़ है, मगर हाथ के हाथ हो।

मस्अला 8—सरसों देकर सरसों का तेल लिया या तिल देकर तिल्ली का तेल लिया तो देखो अगर यह तेल जो तुमने लिया है, यक़ीनन इससे ज़्यादा है जो इस सरसों और तिल में निकलेगा तो यह बदलना हाथ के हाथ के सही है और अगर इसके बराबर या कम हो या शुबहा और शक हो कि शायद इससे ज़्यादा न हो, दुरूस्त नहीं, बल्कि सूद है।

मस्अला 9—गाय का गोश्त देकर बकरी का गोश्त लिया तो दोनों का बराबर होना वाजिब नहीं, कमी–बेशी जायज़ मगर हाथ के हाथ हो।

मस्अला 10—अपना लोटा देकर दूसरे का लोटा लिया या लोटे को पतीली वग़ैरह किसी और बर्तन से बदला तो वज़न में दोनों का बराबर होना और हाथ के हाथ होना शर्त है, अगर ज़रा भी कमी–बेशी हुई तो सूद हो गया, क्योंकि दोनों चीज़ें तांबे की हैं, इसलिए वे एक ही क़िस्म की समझी जाएंगी। इसी तरह अगर वज़न में बराबर हो, हाथ के हाथ न हुई तब भी सूद हुआ, हां अगर एक तरफ़ तांबे का बर्तन हो, दूसरी तरफ़ लोहे का या पीतल वग़ैरह का, तो वज़न की कमी–बेशी जायज़ है, मगर हाथ के हाथ हो।

मस्अला 11—किसी से सेर भर गेहूं उधार लिये और यों कहा कि हमारे पास गेहूं तो हैं नहीं, हम इसके बदले दो सेर चने दे देंगे तो जायज़ नहीं, क्यांकि इसका मतलब तो यह हुआ कि गेहूं को चने से बदलती है, और बदलते वक़्त ऐसी चीज़ों का उसी वक़्त लेन–देन हो जाना चाहिये, कुछ उधार न रहना चाहिये। अगर कभी ऐसी ज़रूरत पड़े

तो यों करे कि गेहूं उधार ले जाये। उस वक़्त यह न कहे कि इसके बदले हम चने देंगे, बल्कि किसी दूसरे वक़्त चने ला कर कहे, बहन ! इस गेहूं के बदले तुम यह चने ले लो, यह जायज़ है।

मस्अला 12—ये जितने मस्अले बयान हुए, सब में उसी वक़्त सामने रहते–रहते लेन–देन हो जाना या कम से कम उसी वक़्त सामने दोनों चीज़ें अलग–अलग रख देना शर्त है। अगर ऐसा न किय तो सूदी मामला हुआ।

मस्अला 13—जो चीज़ें तोल कर नहीं बिकतीं, बल्कि गज़ से नाप कर या गिन कर बिकती है, उनका हुक्म यह है कि अगर एक ही क़िस्म की चीज़ देकर उसी क़िस्म की चीज़ लो जैसे अमरूद लेकर दूसरे अमरूद लिए या नारंगी देकर नारंगी ली, या कपड़ा देकर दूसरा वैसा ही कपड़ा लिया, तो बराबर होना शर्त नहीं, कमी–बेशी जायज़ है, लेकिन उसी वक़्त लेन–देन हो जाना वाजिब है और अगर इधर और चीज़ है और दूसरी तरफ़ और चीज़, जैसे अमरूद देकर नारंगी ली, गेहूं देकर अमरूद लिए या तन्ज़ेब देकर लट्ठा या गाढ़ा लिया तो बहरहला जायज़ है, न तो दोनों का बराबर होना वाजिब है और न उसी वक़्त लेन देन होना वाजिब है।

मस्अला 14—सब का ख़ुलासा यह हुआ कि चांदी–सोने के अलावा अगर दोनों तरफ़ एक ही चीज़ हो और वह चीज़ तौल कर बिकती हो जैसे गेहूं के बदले गेहूं और चने के बदले चना वग़ैरह, तब भी वज़न में बराबर होना भी वाजिब है और उसी वक़्त सामने रहते–रहते लेन–देन हो जाना भी वाजिब है और अगर दोनों तरफ़ एक ही चीज़ है लेकिन तौल कर नहीं बिकती, जैसे अमरूद देकर अमरूद और नारंगी देकर नारंगी या कपड़ा देकर वैसा ही कपड़ा लिया या इधर से और चीज़ है और उधर से और चीज़ है, लेकिन दोनों तौल कर बिकती हैं जैसे गेहूं के बदले चना, चने के बदले ज्वार लेना, इन दोनों शक्लों में वज़न कर बराबर होना वाजिब नहीं, कमी–बेशी जायज़ है और हां, उसी वक़्त लेन देन होना वाजिब है और जहां दोनों बातें न हों यानी दोनों तरफ़ एक ही चीज़ नहीं, इस तरफ़ कुछ और है, और उस तरफ़ कुछ और और वे दोनों वज़न के हिसाब से भी नहीं बिकतीं, वहां कमी–बेशी भी जायज़ है और उसी वक़्त लेन–देन करना भी वाजिब नहीं, जैसे अमरूद देकर नारंगी लेना। ख़ूब समझ लो।

मस्अला 15—चीनी का एक बर्तन दूसरे चीनी के बर्तन से बदल लिया या चीनी को तमाम चीनी से बदला, तो इसमें बराबरी जायज़ नहीं,

बल्कि एक के बदले दो ले, तब भी जायज़ है। इसी तरह एक सूई देकर दो सूइयां या तीन चार लेना भी जायज़ है, लेकिन अगर दोनों तरफ़ चीनी या दोनों तरफ़ ताम चीनी हो उस वक़्त सामने रहते–रहते लेन–देन हो जाना चाहिए और अगर क़िस्म बदल जाए, जैसे चीनी से ताम चीनी बदली तो यह भी वाजिब नहीं।

मस्अला 16—तुम्हारे पास तुम्हारी पड़ोसिन आयी कि तुमने जो सेर भर आटा पकाया है, वह रोटी हमको दे दो, हमारे घर मेहमान आ गये हैं और यह सेर भर आटा या गेहूं ले लो। इस वक़्त रोटी दे दो, फिर हमसे आटा या गेहूं ले लेना, यह दुरूस्त है।

मस्अला 17—अगर नौकर से कोई चीज़ मंगाओ तो उसको ख़ूब समझाओ कि इस चीज़ को इस तरह ख़रीद कर लाना, कभी ऐसा न हो कि वह बे–क़ायदा ख़रीद लाये, जिसमें सूद हो जाए, फिर तुम और सब बाल–बच्चे उसको खायें और हराम खाना खाने के बवाल में गिरफ़्तार हों और जिसको तुम खिलाओ, जैसे मियां को, मेहमान को, सबका गुनाह तुम्हारे ऊपर पड़े।

बैअ सलम का बयान

मस्अला 1—फ़सल के कटने के बाद किसी को दस रूपए दिये और यों कहा कि दो महीने या तीन महीने के बाद फ़लां महीने में फ़लां तारीख़ में हम तुमसे इन दस रूपए के गेहूं लेंगे और भाव उसी वक़्त तै कर लिया कि रूपए के पंद्रह सेर या रूपयों के बीस सेर के हिसाब से लेंगे, तो यह बैअ दुरूस्त है। जिस महीने का वायदा हुआ है, उस महीने में उसको उसी भाव गेहूं देना पड़ेंगे, चाहे बाज़ार में महंगा बिके, चाहे सस्ता। बाज़ार के भाव का कुछ एतबार नहीं है।

इस बैअ को बैअ सलम कहते हैं।

इसके जायज़ होने की कई शर्तें हैं, इनको ख़ूब ग़ौर से समझो।

अव्वल शर्त यह है कि गेहूं वग़ैरह की हालत ख़ूब साफ़–साफ़ ऐसी तरह बतला दे कि लेते वक़्त दोनों में झगड़ा पड़े, जैसे कह दे कि फ़लां क़िस्म का गेहूं देना, बहुत पतला न हो, न पाला मारा हुआ हो, अच्छा हो, ख़राब न हो, उसमें कोई और चीज़ चने–मटर वग़ैरह न मिले हों, ख़ूब सूखे हों, गीले नहीं। मतलब यह कि जिस क़िस्म की चीज़ लेना हो, वैसी बतला

देनी चाहिये ताकि उस वक़्त बखेड़ा न हो। अगर उस वक़्त सिर्फ़ इतना कह दिया कि दस रूपए का गेहूं दे देना, तो नाजायज़ हुआ या यों कहा कि दस रूपये के धान दे देना या चावल दे देना, उसकी क़िस्म कुछ नहीं बताई, यह सब जायज़ है।

दूसरी शर्त यह है कि भाव भी उसी वक़्त करे, रूपये के पंद्रह सेर या बीस सेर के हिसाब से लेंगे। अगर यों कहा कि उस वक़्त जो बाज़ार का भाव हो, उस हिसाब से हमको देना या उससे दो सेर ज़्यादा देना तो यह जायज़ नहीं। बाज़ार के भाव का कुछ एतबार न करो। उस वक़्त अपने लेने का भाव तै कर लो। वक़्त आने पर उसी मुक़र्रर किए हुए भाव से ले लो।

तीसीर शर्त यह है कि जितने रूपये के लेंगे हों, उसी वक़्त बतला दो कि हम दस रूपए या बीस रूपए के गेहूं लगे। अगर यह नहीं बतलाया यों ही गोल–मोल कह दिया कि थोड़े रूपए के हम भी लेंगे तो सही नहीं।

चौथी शर्त यह है कि उसी वक़्त उसी जगह रहते–रहते सब रूपये दे। अगर मामला करने के बाद अलग होकर फिर रूपया दिया तो वह मामला ग़लत हो गया। अब फिर से करना चाहिये। इसी तरह अगर पांच रूपए तो उसी वक़्त दे दिए और पांच रूपए दूसरे वक़्त दिए तो पांच रूपए में बैअ सलम बाक़ी रही और पांच रूपए में ग़लत हो गई।

पांचवीं शर्त यह है कि अपने लेने की मुद्दत कम से कम एक महीना मुक़र्रर करे कि एक महीने के बाद फ़लानी तारीख़ को हम गेहूं लेंगे। महीने से कम मुद्दत मुक़र्रर करना सही नहीं और ज़्यादा चाहे जितनी मुक़र्रर करे, जायज़ है, लेकिन दिन, तारीख़, महीना सब मुक़र्रर कर दे ताकि बखेड़ा न पड़े कि वह कहे मैं अभी न दूंगा, तुम कहो नहीं आज ही दो, इसलिए पहले ही सब तै कर लो। अगर दिन–तारीख़ महीना मुक़र्रर न किया, बल्कि यों कहा कि जब फ़सल कटेगी, तब दे देना तो यह सही नहीं।

छठी शर्त यह है कि यह भी मुक़र्रर करे कि फ़्लां जगह वह गेहूं देना यानी इसी शहर में या किसी दूसरे शहर में जहां लेना हो, वहां पहुंचाने के लिए कह दे या यों कह दे कि हमारे घर पहुंचा देना। मतलब यह है कि जो मंज़ूर हो, साफ़ बतला दे। अगर यह नहीं बतलाया तो सही नहीं, हां, अगर कोई हल्की चीज़ हो, जिसके लाने और ले जाने में कुछ मज़दूरी नहीं लगती जैसे मुश्क ख़रीदा या सच्चे मोती या और कुछ, तो लेने की जगह बतलाना ज़रूरी नहीं, जहां यह मिले उसको दे दे। अगर इन शर्तों के मुताबिक़ किया तो बैअ सलम ठीक है, वरना ठीक नहीं।

मस्अला 2—गेहूं वग़ैरह ग़ल्ला के अलावा और जो चीज़ें ऐसी हों कि उनकी हालत बयान करके मुक़र्रर कर दी जाये कि लेते वक़्त कुछ झगड़ा होने का डर न रहे, उनका बैअ सलम भी ठीक है जैसे अंडे, ईंटें कपड़ा, मगर सब बातें तै करके कि इतनी बड़ी ईंट हो, इतनी लम्बी, इतनी चौड़ी, कपड़ा सूती हो, इतना बारीक़ हो, इतना मौटा हो, देसी हो या विलायती हो, मतलब यह है कि सब बातें बतला देना चाहिएं, कुछ झोल बाक़ी न रहे।

मस्अला 3—रूपये की पांच गठरी या पांच ख़ांची के हिसाब से भूसा बैअ सलम के तौर पर लिया, तो यह ठीक नहीं, क्योंकि गठरी और ख़ांची के मिक़्दार में बड़ा फ़र्क़ होता है, हां, अगर किसी तरह से सब कुछ मुक़र्रर और तै कर ले या वज़न के हिसाब से बैअ करे तो ठीक है।

मस्अला 4—बैअ सलम के सही होने की यह शर्त है कि जिस वक़्त मामला किया है, उस वक़्त से लेकर लेने और वसूल पाने के ज़माने तक वह चीज़ बाज़ार में मिलती रहे, नायाब (अभाव) न हो। अगर इस बीच वह चीज़ बिल्कुल नायाब हो जाए कि इस मुल्क में बाज़ारों में न मिले, तो दूसरी जगह से बहुत मुसीबत झेलकर मंगवा सके, तो बैअ ग़लत हो गई।

मस्अला 5—मामला करते वक़्त यह शर्त कर दी कि फ़स्ल के कटने पर हम फ़लां महीने में नये गेहूं लेंगे या फ़लां खेत के गेहूं लेंगे तो यह सही नहीं, इसलिये यह शर्त न करना चाहिये। फिर मुक़र्रर वक़्त पर उसको अख़्तियार है कि चाहे नये दे या पुराने, हां अगर नये गेहूं कट चुके हों तो नये की शर्त करना भी ठीक है।

मस्अला 6—तुमने दस रूपये के गेहूं का मामला किया था, वह मुद्दत बीत गई बल्कि ज़्यादा हो गई, मगर उसने अब तक गेहूं नहीं दिए, न देने की उम्मीद है, तो अब यह कहना जायज़ नहीं कि अच्छा तुम गेहूं न दो, बल्कि उसके बदले इतने चने या धान या इतनी फ़लां चीज़ दे दो। गेहूं के बदले किसी और चीज़ को लेना जायज़ नहीं या उसको कुछ मुहलत दे दो और मुहलत के बाद गेहूं लो या अपना रूपया वापस ले लो। इसी तरह अगर बैअ सलम को तुम दोनों ने तोड़ दिया कि हम वह मामला तोड़ते हैं, गेहूं न लेंगे, रूपया वापस दे दो, या तुमने नहीं तोड़ा, बल्कि वह मामला खुद ही टूट गया जैसे वह चीज़ नायाब हो गई, कहीं नहीं मिलती, तो इस शक्ल में तुमको सिर्फ़ रूपये लेने का अख़्तियार है, इस रूपये के बदले उससे कोई और चीज़ लेना दुरूस्त नहीं। पहले रूपये ले लो, लेने

के बाद उससे जो चीज़ चाहो ख़रीदो।

क़र्ज़ लेने का बयान

मस्अला 1—जो चीज़ ऐसी हो कि उसी तरह की चीज़ तुम दे सकती हो, उसका क़र्ज़ लेना दुरूस्त है जैसे अनाज, अंडे, गोश्त वग़ैरह और जो चीज़ ऐसी हो कि उसी तरह की चीज़ देना मुश्किल है तो उसका क़र्ज़ लेना ठीक नहीं, जैसे अमरूद, नारंगी, बकरी, मुर्ग़ी वग़ैरह।

मस्अला 2—जिस ज़माने में रूपये के दस सेर गेहूं मिलते थे, उस वक़्त तुमने पांच सेर गेहूं क़र्ज़ लिये, फिर गेहूं सस्ते हो गये और रूपये के बीस सेर मिलने लगे तो तुमको वही पांच सेर गेहूं देना पड़ेंगे। इसी तरह अगर महंगे हो गये तब भी जितने लिये हैं उतने ही देने पड़ेंगे।

मस्अला 3—जैसे गेहूं तुमने दिये थे, उसने उससे अच्छे गेहूं अदा किये तो उनका लेना जायज़ है, यह सूद नहीं मगर क़र्ज़ लेने के वक़्त यह कहना ठीक नहीं हम इससे अच्छे लेंगे, हां, वज़न में ज़्यादा न होना चाहिये। अगर तुमने दिये हुये गेहूं से ज़्यादा लिये तो यह नाजायज़ हो गया। ख़ूब ठीक–ठीक तौल कर लेना चाहिये, लेकिन अगर थोड़ा झुकता तौल दिया तो कुछ डर नहीं।

मस्अला 4—किसी से कुछ रूपया या ग़ल्ला इस वायदे पर क़र्ज़ लिया कि एक महीने या पंद्रह दिन के बाद हम अदा कर देंगे और उसने मंज़ूर कर लिया तब भी यह मुद्दत का बयान करना बेकार बल्कि ना–जायज़ है। अगर उसको इस मुद्दत से पहले ज़रूरत पड़े और तुमसे मांगे या बे–ज़रूरत मांगे तो तुमको उसी वक़्त देना पड़ेगा।

मस्अला 5—तुमने दो सेर गेहूं या आटा वग़ैरह कुछ क़र्ज़ लिया, जब इसने मांगा तो तुमने कहा, बहन ! गेहूं तो नहीं हैं, इसके बदले तुम दो आने के पैसे ले लो। उसने कहा, अच्छा, तो ये पैसे उसी वक़्त सामने रहते–रहते दे देना चाहिये। अगर पैसे निकालने अन्दर गई और उसके पास से अलग हो गई तो वह मामला ग़लत हो गया अब फिर से कहना चाहिये कि तुम उस उधार के बदले दो आने ले लो।

मस्अला 6—एक रूपये के पैसे क़र्ज़ लिए, फिर पैसे महंगे हो गये और रूपये के साढ़े पंद्रह आने चले गये तो अब सोलह आने देना वाजिब नहीं बल्कि उसके बदले रूपया दे देना चाहिये। वह यों नहीं कह सकती

कि मैं रूपया नहीं लेती, पैस लिये थे, वही लाओ।

मस्अला 7—घरों में तरीक़ा है कि दूसरे घर से इस वक़्त दस–पांच रोटी क़र्ज़ मंगायी, फिर जब अपने घर तक गई, गिन कर भेज दी, ठीक है।

किसी की ज़िम्मेदारी लेने का बयान

मस्अला 1—नईमा के ज़िम्मे किसी के रूपये या पैसे आते थे, तुमने उसकी ज़िम्मेदारी कर ली कि अगर यह न देगी तो मुझसे ले लेना या यों कहा कि मैं उसकी ज़िम्मेदार हूं, देनदार हूं या और कोई ऐसा लफ़्ज़ कहा कि जिससे ज़िम्मेदारी मालूम हुई और उस हक़दार ने तुम्हारी ज़िम्मेदारी भी मंज़ूर कर ली, तो अब उसकी अदाएगी तुम्हारे ज़िम्मे वाजिब हो गई। अगर नईमा न दे तो तुमको देना पड़ेंगे और उस हक़दार को अख़्तियार है कि जिससे चाहे तक़ाज़ा करे चाहे तुमसे, चाहे नईमा से। अब जब तक नईमा अपना क़र्ज़ अदा न कर दे या माफ़ न कराये, तब तक बराबर तुम ज़िम्मेदार होगी, हां अगर वह हक़दार तुम्हारी ज़िम्मेदारी माफ़ कर दे और कह दे कि अब तुमसे कुछ मतलब नहीं, हम तुमसे तक़ाज़ा न करेंगे, तो अब तुम्हारी ज़िम्मेदारी नहीं रही। अगर तुम्हारी ज़िम्मेदारी के वक़्त ही उस हक़दार ने मंज़ूर नहीं किया और कहा, तुम्हारी जिम्मेदारी का हमें एतबार नहीं या और कुछ कहा तो ज़िम्मेदार नहीं हुई।

मस्अला 2—तुमने किसी की ज़िम्मेदारी कर ली थी और उसके पास रूपये अभी न थे, इसलिए तुमको देना पड़े तो अगर तुमने उस क़र्ज़दार के कहने से ज़िम्मदारी की है, तब तो जितना तुमने हक़दार को दिया है, इस क़र्ज़दार से ले सकती हो और अगर तुमने अपनी खुशी से ज़िम्मेदारी की है तो देखो, तुम्हारी ज़िम्मेदारी को पहले किसने मंज़ूर किया है—उस क़र्ज़दार ने या हक़दार ने। अगर पहले क़र्ज़दार ने मंज़ूर किया तब तो ऐसा ही समझेंगे कि तुमने उसके कहने से ज़िम्मेदारी की, इसलिए अपना रूपया उससे ले सकती हो और अगर पहले हक़दार ने मंज़ूर कर लिया तो जो कुछ तुमने दिया है, क़र्ज़दार से लेने का हक़ नहीं बल्कि उसके साथ तुम्हारी तरफ़ से एहसान समझा जायेगा कि वैसे ही उसका क़र्ज़ तुमने अदा कर दिया। वह खुद दे दे तो और बात है।

मस्अला 3—अगर हक़दार ने क़र्ज़दार को महीने भर या पंद्रह दिन वग़ैरह की मोहलत दे दी तो अब इतने दिन ज़िम्मेदारी करने वाली

से भी तक़ाज़ा नहीं कर सकता।

मस्अला 4—और अगर तुमने अपने पास से देने की ज़िम्मेदारी नहीं की थी बल्कि उस क़र्ज़दार का रूपया तुम्हारे पास अमानत रखा था, इसलिए तुमने कहा था कि हमारे पास उस शख़्स की अमानत रखी है, हम उसमें से दे देंगे, फिर वह रूपया चोरी हो गया या और किसी तरह जाता रहा तो अब तुम्हारी ज़िम्मेदारी नहीं रही न अब तुम पर इसका देना वाजिब है और न वह हक़दार तुमसे तक़ाज़ा कर सकता है।

मस्अला 5—कहीं जाने के लिए तुमने कोई यक्का या बहेली किराये पर ली और उस बहेली वाली की किसी ने ज़िम्मेदारी कर ली कि अगर यह न ले गया तो मैं अपनी बहेली दे दूंगा तो यह ज़िम्मेदारी ठीक है। अगर वह न दे तो उस ज़िम्मेदार को देनी पड़ेगी।

मस्अला 6—तुमने अपनी चीज़ किसी को दी कि जाओ, उसको बेच आओ। वह बेच आया लेकिन दाम नहीं लाया और कहा कि दाम कहीं नहीं जा सकते, दाम का मैं ज़िम्मेदार हूं, उससे न मिले तो मुझसे ले लेना, तो यह ज़िम्मेदारी सही नहीं।

मस्अला 7—किसी ने कहा कि अपनी मुर्ग़ी इसमें बंद रहने दो, अगर बिल्ली ले जाये तो मेरा ज़िम्मा, मुझसे ले लेना, यह ज़िम्मेदारी सही नहीं।

मस्अला 8—ना–बालिग़ लड़का या लड़का अगर किसी की ज़िम्मेदारी करे तो वह ज़िम्मेदारी सही नहीं।

अपना क़र्ज़ दूसरे पर उतार देने का बयान

मस्अला 1—शफ़ीआ का तुम्हारे ज़िम्मे कुछ क़र्ज़ है और राबिआ तुम्हारी क़र्ज़दार है। शफ़ीआ ने तुमसे तक़ाज़ा किया। तुमने कहा कि राबिआ हमारी क़र्ज़दार है। तुम अपना क़र्ज़ उसी से ले लो, हमसे न मांगो। अगर उसी वक़्त शफ़ीआ यह बात मंज़ूर कर ले और राबिआ भी इस पर राज़ी हो जाए तो शफ़ीआ का क़र्ज़ तुम्हारे ज़िम्मे से उतर गया, अब शफ़ीआ तुमसे बिल्कुल तक़ाज़ा नहीं कर सकती, बल्कि उसी राबिआ से मांगे, चाहे जब मिले और जितना क़र्ज़ तुमने शफ़ीआ को दिलाया है, उतना अब तुम राबिआ से नहीं ले सकतीं, हां अगर राबिआ इससे ज़्यादा की क़र्ज़दार है तो जो कुछ ज़्यादा है, वह ले सकती है। फिर अगर राबिया

ने शफ़ीआ को दे दिया, तब तो ख़ैर और अगर न दिया और मर गई तो जो कुछ माल व अस्बाब छोड़ा है, वह बेच कर शफ़ीआ को दिलाएंगे और अगर उसने कुछ माल नहीं छोड़ा, जिससे क़र्ज़ा दिलाएं या अपनी ज़िंदगी में ही मुकर गई और क़सम खाली कि तुम्हारे क़र्ज़ से मुझको कुछ वास्ता नहीं और गवाह भी नहीं हैं, अब इस सूरत में फिर शफ़ीआ तुमसे तक़ाज़ा कर सकती है और अपना क़र्ज़ तुमसे ले सकती है और अगर तुम्हारे कहने पर शफ़ीआ राबिआ से लेना मंज़ूर न करे या राबिआ उसको देने पर राज़ी न हो तो क़र्ज़ तुमसे नहीं उतरा।

मस्अला 2—राबिआ तुम्हारी क़र्ज़दार न थी, तुमने यों ही अपना क़र्ज़ा उस पर उतार दिया और राबिआ ने मान लिया और शफ़ीआ ने भी क़ुबूल व मंज़ूर कर लिया, तब भी तुम्हारे ज़िम्मे से शफ़ीआ का क़र्ज़ उतर कर राबिआ के ज़िम्मे हो गया, इसलिए इसका भी वही हुक्म है जो अभी बयान हुआ और जितना रूपया राबिआ को देना पड़ेगा, देने के बाद तुमसे ले ले और देने से पहले ही लेने का हक़ नहीं है।

मस्अला 3—अबर राबिआ के पास तुम्हारे रूपये अमानत रखे थे, इसलिये तुमने अपना क़र्ज़ा राबिआ पर उतार दिया, फिर वे रूपये किसी तरह बर्बाद हो गये, तो अब राबिआ ज़िम्मेदार नहीं रही, बल्कि अब शफ़ीआ तुम ही से तक़ाज़ा करेगी और तुम ही से लेगी। अब राबिआ से मांगने और लेने का हक़ नही रहा।

मस्अला 4—राबिआ पर क़र्ज़ उतार देने के बाद, अगर तुम ही वह क़र्ज़ अदा कर दो और शफ़ीआ को दे दो तो यह भी सही है। शफ़ीआ यह नहीं कह सकती कि मैं तुमसे न लूंगी, बल्कि मैं तो राबिआ से ही लूंगी।

किसी को वकील कर देने का बयान

मस्अला 1—जिस काम को आदमी खुद कर सकता है, उसमें यह भी अख़्तियार है कि किसी और से कह दे तुम हमारा यह काम कर दो जैसे बेचना, मोल लेना, किराये पर लेना–देना, निकाह करना वग़ैरह जैसे मामा को बाज़ार सौदा लेने भेज दिया या मामा के ज़रिये से कोई चीज़ बिकवायी या यक्का–बहेली किराये पर मंगवाया और जिससे काम कराया है, शरीअत में उसको वकील कहते हैं जैसे मामा को या किसी नौकर को सौदा लेने भेजा तो वह तुम्हारा वकील कहलाएगा।

मस्अला 2—तुमने मामा से मांस मंगवाया, वह उधार ले आई, तो वह मांस वाला तुमसे दाम का तक़ाज़ा नहीं कर सकता। उसी मामा से तक़ाज़ा करे और मामा तुमसे तक़ाज़ा करेगी। इसी तरह अगर कोई चीज़—तुमने मामा से बिकवायी तो उस लेने वाले से तुमको तक़ाज़ा करने और दाम के वसूल करने का हक़ नहीं है। उसने जिससे चीज़ पाई है उसको दाम भी देगा और अगर वह खुद तुमको दाम दे दे तब भी जायज़ है। मतलब यह है कि अगर वह तुमको न दे तो तुम ज़बरदस्ती नहीं कर सकतीं।

मस्अला 3—तुमने नौकर से कोई चीज़ मंगवायी, वह ले आया तो उसको अख़्तियार है कि जब तक तुमसे दाम न ले, तब तक वह चीज़ तुमको न दे चाहे उसने अपने पास से दाम दे दिए हों या अभी न दिए हों, दोनों का एक हुक्म है, हां अगर वह दस–पांच दिन के वायदे पर अधार लाया हो तो जितने दिन का वायदा कर आया है, उससे पहले दाम नहीं मांग सकता।

मस्अला 4—तुमने सेर भर मांस मंगवाया था, वह डेढ़ सेर उठा लाया तो पूरा डेढ़ सेर लेना वाजिब नहीं। अगर तुम न लो तो आधा सेर उसको लेना पड़ेगा।

मस्अला 5—तुमने किसी से कहा कि फ़्लां बकरी जो फ़्लां के यहां है उसको जाकर दो रूपए में ले आओ तो अब वह वकील वह बकरी खुद अपने लिए नहीं ख़रीद सकता। मतलब यह है कि जो चीज़ ख़ास तुम तै करके बतला दो, उस वक़्त उसको अपने लिए ख़रीदना ठीक नहीं, हां, जो दाम तुमने बतलाये हैं, उससे ज़्यादा में ख़रीद लिया तो अपने लिए ख़रीदना ठीक है और अगर तुमने कुछ दाम न बतलाये तो किसी तरह अपने लिए नहीं ख़रीद सकता।

मस्अला 6—अगर तुमने कोई ख़ास बकरी नहीं बतलायी, बस इतना कहा कि एक बकरी की ज़रूरत है, हमको ख़रीद दो तो वह अपने लिए भी ख़रीद सकता है, जो बकरी चाहे तुम्हारे लिए ख़रीदे और जो बकरी चाहे अपने लिए ख़रीदे। अगर खुद लेने की नीयत से ख़रीदे तो उसकी हुई और अगर तुम्हारे देने की नीयत से ख़रीदे तो तुम्हारी हुई और अगर तुम्हारे दिए हुए दामों से ख़रीदे तो भी तुम्हारी हुई, चाहे जिस नीयत से ख़रीदे।

मस्अला 7—तुम्हारे लिए उसने बकरी ख़रीदी, फिर अभी तुमको देने न पाया था कि बकरी मर गयी, तो इस बकरी के दाम तुमको देने

पड़ेंगे। अगर तुम कहोगी कि तू ने अपने लिए ख़रीदी थी, हमारे लिए नहीं ख़रीदी तो अगर तुम पहले उसको दाम दे चुकी हो तो तुम्हारे गये और अगर तुमने दाम नहीं दिए और अब वह दाम मांगता है तो तुम अगर क़सम खा जाओ कि तूने अपने लिए ख़रीदी थी तो उसकी बकरी गयी और अगर क़सम न खा सको तो उसकी बात का एतबार करो।

मस्अला 8—अगर नौकर या मामा कोई चीज़ महंगी ख़रीद लायी, अगर थोड़ा फ़र्क़ है, तब तो तुमको लेना पड़ेगा और दाम देने पड़ेंगे और अगर बहुत ज़्यादा महंगा ले आयी कि इतने दाम कोई नहीं लगा सकता तो उसका लेना वाजिब नहीं। अगर न ली तो उसको लेना पड़ेगा।

मस्अला 9—तुमने किसी की कोई चीज़ बेचने को दी तो उसको यह जायज़ नहीं कि खुद ले ले और दाम तुमको दे दे। इसी तरह तुमने कुछ मंगवाया कि फ़लां चीज़ ख़रीद लाओ तो वह अपनी चीज़ तुमको नहीं दे सकता और अगर अपनी चीज़ देना या खुद लेना मंज़ूर हो तो साफ़–साफ़ कह दे कि यह चीज़ मैं लेता हूं मुझको दे दो या यों कह दो कि यह मेरी चीज़ तुम ले लो और इतने दाम दे दो, बग़ैर बतलाये हुए ऐसा करना जायज़ नहीं।

मस्अला 10—तुमने मामा से बकरी का मांस मंगवाया, वह बड़े का मांस ले आयी। तुमको अख़्तियार है चाहे लो चाहे न लो। इसी तरह तुमने आलू मंगवाये, वह भिंडियां ले आयी या कुछ और ले आयी तो उसका लेना ज़रूरी नहीं। अगर तुम इन्कार करो तो उसको लेना पड़ेगा।

मस्अला 11—तुमने एक पैसे की चीज़ मंगवायी, वह दो पैसे की ले आयी तो तुमको अख़्तियार है कि एक ही पैसे के मुताबिक़ लो और एक पैसे की जो ज़्यादा लायी, वह उसी के सर डालो।

मस्अला 12—तुमने दो आदमियों को भेजा कि जाओ फ़लां चीज़ ख़रीद लाओ तो ख़रीदते वक़्त दोनों को मौजूद रहना चाहिए, सिर्फ़ एक आदमी को ख़रीदना जायज़ नहीं। अगर एक ही आदमी ख़रीदे तो वह बैअ रुक जाएगी। जब तुम मंज़ूर कर लोगी तो सही हो जाएगी।

मस्अला 13—तुमने किसी से कहा कि हमें एक गाय या बकरी या और कुछ कहा कि फ़लां चीज़ ख़रीद कर ला दो, उसने ख़ुद नहीं ख़रीदा बल्कि किसी और से कह दिया। उसने ख़रीदा तो उसका लेना तुम्हारे ज़िम्मे वाजिब नहीं, चाहे लो, चाहे न लो, दोनों अख़्तियार है। हां, अगर वह खुद तुम्हारे लिए ख़रीदे तो तुमको लेना पड़ेगा।

वकील हटा देने का बयान

वकील को हटा देने का तुम को हर वक़्त अख़्तियार है, जैसे तुमने किसी से कहा था कि हमको एक बकरी की ज़रूरत है, कहीं मिल जाए तो ले लेना, फिर मना कर दिया कि अब न लेना, तो अब उसको लेने का अख़्तियार नहीं। अगर लेगा तो उसी के सर पड़ेगी, तुम को न लेनी पड़ेगी।

मस्अला 1—अगर ख़ुद उसको नहीं मना किया, बल्कि ख़त लिखकर भेजा या आदमी भेजकर इत्तिला कर दी कि अब न लेना, तब भी वह हट गया और अगर तुमने इत्तिला नहीं दी, किसी और आदमी ने अपने तौर पर उसको कह दिया कि तुमको फ़्लां ने हटा दिया है, अब न ख़रीदना, तो अगर दो आदमियों ने इत्तिला दी हो या एक ही ने इत्तिला दी, अगर वह एतबार के क़ाबिल और शरीअत का पाबंद है तो हटा दिया गया और अगर ऐसा न हो तो अभी हटा नहीं, अगर वह ख़रीद ले तो तुम को लेना पड़ेगा।

मुज़ारबत का बयान यानी एक का रूपया, एक का काम

मस्अला 1—तुमने तिजारत के लिए किसी को रूपए दिए कि इससे तिजारत करो, जो कुछ नफ़ा होगा वह हम तुम बांट लेंगे, यह जायज़ है, इसको मुज़ारबत कहते हैं, लेकिन इसकी कई शर्तें हैं। अगर इन शर्तों के मुताबिक़ हो तो सही है, नहीं तो नाजायज़ और ग़लत है—

एक तो जितना रूपया देना हो, वह बतला दो और उसको तिजारत के लिए दे भी दो, अपने पास न रखो। अगर रूपया उसके हवाले न किया, अपने ही पास रखा तो यह मामला ग़लत है।

दूसरे यह कि नफ़ा बांटने की शक्ल तै कर लो और बतला दो कि तुमको कितना मिलेगा और उनको कितना। अगर यह बात तै न हुई बस

इतना ही कहा कि नफ़ा हम–तुम दोनों बांट लेंगे, तो यह ग़लत है।

तीसरे यह कि नफ़ा बांटने को इस तरह तै न करो कि जितना नफ़ा हो उसमें से दस रुपये हमारे, बाक़ी तुम्हारे या दस रुपये तुम्हारे बाक़ी हमारे, मतलब यह कि कुछ ख़ास रक़म तै न करो, इतनी हमारी या इतनी तुम्हारी, बल्कि यों तै करो कि आधा हमारा आधा तुम्हारा या एक हिस्सा इसका, दो हिस्से उसके या एक हिस्सा एक का बाक़ी तीन हिस्से दूसरे के, मतलब यह कि नफ़ा की तक़्सीम हिस्सों के एतबार से करना चाहिए, नहीं तो ग़लत हो जाएगा। अगर कुछ नफ़ा होगा, तब तो वह काम करने वाला उसमें से अपना हिस्सा पायेगा और अगर कुछ नफ़ा न हुआ तो कुछ न पायेगा। अगर यह शर्त कर ली कि अगर नफ़ा न हुआ तब भी हम तुमको असल मामले में इतना दे देंगे, तो यह मामला ग़लत है। इसी तरह अगर यह शर्त कर ली कि अगर नुक़्सान होगा तो इस काम के करने वाले के ज़िम्मे पड़ेगा या दोनों के ज़िम्मे होगा, यह भी ग़लत है, बल्कि हुक्म यह है कि जो कुछ नुक़्सान हो वह मालिक के ज़िम्मे है, उसी का रुपया है।

मस्अला 2—जब तक उसके पास रुपया मौजूद हो और उसने सामान न ख़रीदा हो, तब तक तो तुमको उसको रोक देने और रुपया वापस ले लेने का अख़्तियार है और जब वह माल ख़रीद चुका तो अब रूकवाने का अख़्तियार नहीं है।

मस्अला 3—अगर यह शर्त कर ली कि तुम्हारे साथ काम करेंगे या हमारा फ़्लां आदमी तुम्हारे साथ काम करेगा, तो यह ग़लत है।

मस्अला 4—इसका यह हुक्म है कि अगर वह मामला सही हुआ है, कोई बेकार की शर्त नहीं लगायी है, तो नफ़ा में दोनों शरीक हैं, जिस तरह तै किया हो बांट लें और कुछ नफ़ा न हो या नुक़्सान हो तो उस आदमी को कुछ न मिलेगा और नुक़्सान का जुर्माना उसको न देना पड़ेगा और अगर वह मामला ख़राब हो गया तो फिर वह कारिंदा नफ़ा में शरीक नहीं है, बल्कि वह नौकर की तरह है। यह देखो कि ऐसा आदमी अगर नौकर रखा जाए तो कितनी तंख़्वाह देनी पड़ेगी, बस इतनी ही तंख़्वाह उसको मिलेगी, नफ़ा हो, तब भी, न हो, तब भी, बहरहाल तख़्वाह पायेगा और नफ़ा सब मालिक का है, लेकिन अगर तंख़्वाह ज़्यादा बैठती है और जो नफ़ा ठहरा था अगर उसके हिसाब से दें तो कम बैठता है तो इस शक्ल में तख़्वाह न देंगे, बल्कि नफ़ा बांट लेंगे।

तंबीह—चूंकि इस क़िस्म के मस्अलों की औरतों को बहुत कम

ज़रूरत पड़ती है, इसलिए हम ज़्यादा नहीं लिखते। जब कभी ऐसा मामला हुआ करे, उसकी हर एक बात को किसी मौलवी से पूछ लिया करो ताकि गुनाह न हो।

अमानत रखने और खाने का बयान

मस्अला 1—किसी ने कोई चीज़ तुम्हारे पास अमानत रखायी और तुमने ले ली तो अब उसकी हिफ़ाज़त करना तुम पर वाजिब हो गया और अगर हिफ़ाज़त में कोताही की और वह चीज़ ख़राब हो गयी तो उसका जुर्माना यानी दंड देना पड़ेगा, हां, अगर हिफ़ाज़त में कोताही नहीं हुई, फिर भी किसी वजह से जाती रही, जैसे चोरी हो गयी या घर में आग लग गयी तो उसमें जल गयी तो उसका जुर्माना वह नहीं ले सकती, बल्कि अमानत रखते वक़्त यह मान लिया कि अगर जाती रही तो मैं ज़िम्मेदार हूं, मुझसे दाम लेना, तब भी उसको जुर्माना लेने का अख़्तियार नहीं, यों तुम अपनी खुशी से दे दो वह और बात है।

मस्अला 2—किसी ने कहा मैं ज़रा काम से जाती हूं, मेरी चीज़ रख लो, तुमने कहा अच्छा रख दो या तुम नहीं बोलीं, वह तुम्हारे पास रख कर चली गयी तो अमानत हो गयी, हां, अगर तुमने साफ़ कह दिया कि मैं नहीं जानती और किसी के पास रख दो या और कुछ कह के इंकार कर दिया फिर भी वह रख कर चली गयी तो अब वह चीज़ तुम्हारी अमानत में नहीं है, हां अगर उसके चले जाने के बाद तुमने उठाकर रख लिया तो अब अमानत हो जाएगी।

मस्अला 3—कई औरतें बैठी थीं, उनके सुपुर्द करके चली गयी, तो सब पर उस चीज़ की हिफ़ाज़त वाजिब है। अगर वे छोड़ कर चली गयीं और वह चीज़ जाती रही. तो जुर्माना देना पड़ेगा और सब साथ नहीं उठीं, एक–एक करके उठीं तो जो सबसे आख़िर में रह गयी, उसके ज़िम्मे हिफ़ाज़त हो गयी। अब वह अगर चली गयी और चीज़ जाती रही तो उसी से जुर्माना लिया जायेगा।

मस्अला 4—जिसके पास कोई अमानत हो, उसको अख़्तियार है कि चाहे ख़ुद अपने पास हिफ़ाज़त से रखे या अपनी मां–बहन, अपने शौहर वग़ैरह किसी ऐसे रिश्तेदार के पास रख दे कि एक ही घर में उसके साथ रहते हों, जिनके पास अपनी चीज़ भी ज़रूरत के वक़्त रख

देती हो, लेकिन अगर कोई ईमानदार न हो, तो उसके पास रखना दुरूस्त नहीं। अगर जान–बूझ कर ऐसे ग़ैर–एतबारी आदमी के पास रख दिया तो ख़राब हो जाने पर जुर्माना देना पड़ेगा और ऐसे रिश्तेदार के सिवा किसी और के पास भी परायी अमानत का रखना मालिक की इजाज़त के बग़ैर रखना दुरूस्त नहीं, चाहे वह बिल्कुल ग़ैर हो या कोई रिश्तेदार भी लगता हो। अगर औरों के पास रख दिया तो भी बर्बाद हो जाने पर जुर्माना देना पड़ेगा। हां, वह ग़ैर ऐसा शख़्स है कि यह अपनी चीज़ें भी उसके पास रखती है तो दुरूस्त है।

मस्अला 5—किसी ने कोई चीज़ रखायी और तुम भूल गयी, उसी वहीं छोड़ कर चली गयीं तो जाते रहने पर जुर्माना देना पड़ेगा या कोठरी–संदूक़चा वग़ैरह का ताला खोल कर तुम चली गयीं और वहां ऐरे–ग़ैरे सब जमा हैं और वह चीज़ ऐसी है कि बिना ताला लगाये उसकी हिफ़ाज़त नहीं हो सकती, तब भी बर्बाद हो जाने से जुर्माना देना पड़ेगा।

मस्अला 6—घर में आग लग गयी तो ऐसे वक़्त ग़ैर के पास भी परायी अमानत रख देना जायज़ है, लेकिन जब वह मजबूरी जाती रहे, तो फ़ौरन ले लेना चाहिए। अगर वापस न लोगी तो जुर्माना देना पड़ेगा। इसी तरह मरते वक़्त अगर कोई अपने घर का आदमी मौजूद न हो तो पड़ोसी के सुपुर्द कर देना दुरूस्त है।

मस्अला 7—अगर किसी ने कुछ रूपए अमानत रखवाये तो ठीक इन्हीं रूपयों–पैसों का हिफ़ाज़त से रखना वाजिब है, न तो अपने रूपयों में उनका मिलाना जायज़ है और न उनका ख़र्च करना जायज़ है। यह न समझो कि रूपया–पैसा सब बराबर, लाओ इसको ख़र्च कर डालें, जब मांगेगी तो अपना रूपया दे देंगे, हां, अगर उसने इजाज़त दे दी हो तो ऐसे वक़्त में ख़र्च करना दुरूस्त है, लेकिन उसका हुक्म यह है कि अगर वही रूपया तुम अलग रहने दो, तब वह रूपया अमानत समझा जाएगा। अगर जाता रहा तो जुर्माना न देना पड़ेगा और अगर तुमने इजाज़त लेकर उसे ख़र्च कर दिया तो वह तुम्हारे ज़िम्मे क़र्ज़ हो गया, अमानत नहीं रहा, इसलिए अब बहरहाल तुमको देना होगा। अगर ख़र्च करने के बाद तुमने उतना ही रूपया उसके नाम से अलग करके रख दिया तब भी वह अमानत नहीं, वह तुम्हारा ही रूपया है। अगर चोरी हो गया तो तुम्हारा गया, उसको फिर देना होगा, मतलब यह कि ख़र्च करने के बाद जब तक उसको अदा न कर दोगी, तब तक तुम्हारे ज़िम्मे रहेगा।

मस्अला 8—सौ रूपये किसी ने तुम्हारे पास अमानत रखाये, इसमें से पचास तुमने इजाज़त लेकर ख़र्च कर डाले तो पचास रूपये तुम्हारे ज़िम्मे क़र्ज़ हो गये और पचास अमानत हैं। अब जब तुम्हारे पास रूपये हों तो अपने पास के पचास रूपये इस अमानत के पचास रूपयों में न मिलाओ। अगर उसमें मिला दोगी तो वे भी अमानत न रहेंगे। ये पूरे सौ रूपये तुम्हारे ज़िम्मे क़र्ज़ हो जाएंगे। अगर जाते रहे तो पूरे सौ देने पड़ेंगे, क्योंकि अमानत का रूपया अपने रूपयों में मिला देने से अमानत नहीं रहता, बल्कि क़र्ज़ हो जाता है और हर हाल में देना पड़ता है।

मस्अला 9—तुमने इजाज़त लेकर उसके सौ रूपये अपने सौ रूपयों में मिला दिए तो वे सब रूपए दोनों की शिर्कत में हो गये। अगर चोरी हो जाएं तो दोनों का हो गया, कुछ न देना पड़ेगा और अगर उसमें से कुछ चोरी हो गया, कुछ रह गया, तब भी आधा उसका गया, आधा इसका गया और अगर सौ एक के हों दो सौ एक के, तो उसके हिस्से के मुताबिक़ उसका जाएगा। मिसाल के तौर पर अबर बारह रूपये जाते रहे हों तो चार रूपए एक सौ रूपए वाले के गये और आठ सौ रूपये दो सौ वाले के गये। यह हुक्म उसी वक़्त है जब इजाज़त से मिलाए हों और अगर बग़ैर इजाज़त के अपने रूपयों में मिला दिया हो तो इसका वही हुक्म है जो बयान हो चुका कि अमानत का रूपया बग़ैर इजाज़त अपने रूपए में मिला लेने से क़र्ज़ हो जाता है, इसलिए अब वह रूपया अमानत नहीं रहा। जो कुछ गया तुम्हार गया, उसका रूपया उसको बहरहाल देना पड़ेगा।

मस्अला 10—किसी ने बकरी या गाय, वग़ैरह अमानत रखायी तो उसका दूध पीना या किसी और तरह उससे काम लेना दुरूस्त नहीं, हां, इजाज़त से यह सब जायज़ हो जाता है, बग़ैर इजाज़त जितना दूध लिया है, उसके दाम देने पड़ेंगे।

मस्अला 11—किसी ने एक कपड़ा या ज़ेवर या चारपाई वग़ैरह रखायी, उसकी बग़ैर इजाज़त उसका बरतना ठीक नहीं। अगर उसने बग़ैर इजाज़त कपड़ा या ज़ेवर वग़ैरह पहना या चारपाई पर लेटी–बैठी और उसके बरतने के ज़माने में वह कपड़ा फट गया या चोर ले गया या ज़ेवर–चारपाई वग़ैरह टूट गयी या चोरी हो गयी तो जुर्माना देना पड़ेगा, हां, अगर तौबा करके फिर उसी तरह हिफ़ाज़त से रख दिया, फिर किसी और तरह बर्बाद हुआ तो जुर्माना देना पड़ेगा।

मस्अला 12—संदूक़ में से अमानत का कपड़ा निकाला कि शाम

को यही पहन कर फ़लां जगह जाऊंगी, फिर पहनने से पहले ही वह जाता रहा, तो भी जुर्माना देना पड़ेगा।

मस्अला 13—अमानत की गाय या बकरी बीमार पड़ गयी, तुमने उसकी दवा की। उस दवा से वह मर गयी तो जुर्माना देना पड़ेगा। अगर दवा न की और वह मर गयी तो जुर्माना न देना पड़ेगा।

मस्अला 14—किसी ने अमानत रखने को रूपया दिया, तुमने बटवे में डाल लिया या इज़ारबंद में बांध लिया लेकिन डालते वक़्त वह रूपया इज़ारबंद में, बटवे में नहीं पड़ा, बल्कि नीचे गिर गया, मगर तुम यहीं समझीं कि मैंने बटवे में रख दिया, तो जुर्माना न देना पड़ेगा।

मस्अला 15—जब वह अपनी अमानत मांगे तो तुरन्त उसको दे देना वाजिब है। बिनी किसी मजबूरी के न देना और देर करना जायज़ नहीं। अगर किसी ने अपनी अमानत मांगी, तुमने कहा, बहन ! इस वक़्त हाथ ख़ाली नहीं, कल ले लेना। उसने कहा, अच्छा कल सही, तब तो ख़ैर कुछ हरज नहीं और अगर वह कल के लेने पर राज़ी न हुई और न देने से ख़फ़ा होकर चली गयी, तो अब वह चीज़ अमानत नहीं रही, अब अगर जाती रहेगी तो तुमको जुर्माना देना पड़ेगा।

मस्अला 16—किसी ने अपना आदमी अमानत मांगने के लिए भेजा, तुमको अख़्तियार है कि उस आदमी को न दो और कहला भेजो कि वह खुद ही आकर अपनी चीज़ ले जाए, हम किसी और को न देंगे और अगर तुमने उसको सच्चा समझ कर दिया और फिर मालिक ने कहा कि मैंने उसको न भेजा था, तुमने क्यों दिया तो वह तुमसे ले सकती है और तुम उस आदमी से वह चीज़ लौटा सकती हो और अगर उसके पास से वह जाती रही हो तो तुम उससे दाम नहीं ले सकती हो और मालिक तुमसे दाम लेगा।

मांगे की चीज़ का बयान

मस्अला 1—किसी से कपड़ा या ज़ेवर या चारपाई या बर्तन वग़ैरह कोई चीज़ कुछ दिन के लिए मांग ली कि ज़रूरत निकल जाने के बाद दे जाएगी तो उसका हुक्म भी अमानत की तरह है। अब उसको अच्छी तरह हिफ़ाज़त से रखना वाजिब है। अगर बावजूद हिफ़ाज़त के जाती रही तो जिसकी चीज़ है, उसको जुर्माना लेने का हक़ नहीं है, बल्कि

अगर तुमने इक़रार कर लिया हो कि अगर जाएगी तो हमसे दाम लेना, तब भी जुर्माना लेना दुरूस्त नहीं, हां, हिफ़ाज़त न की, इस वजह से जाती रही तो जुर्माना देना पड़ेगा और मालिक को हर वक़्त अख़्तियार है, जब चाहे अपनी चीज़ ले ले, तुमको इन्कार करना ठीक नहीं। अगर मांगने पर न दी तो फिर बर्बाद हो जाने पर जुर्माना देना पड़ेगा।

मस्अला 2—जिस तरह बरतने की इजाज़त मालिक ने दी हो, उसी तरह बरतना जायज़ है, उसके ख़िलाफ़ करना ठीक नहीं। अगर ख़िलाफ़ करेगी तो जाते रहने पर जुर्माना देना पड़ेगा, जैसे किसी ने ओढ़ने को दोपट्टा दिया, यह उसको बिछा कर लेटी, इसलिए वह ख़राब हो गया या चारपाई पर इतने आदमी लद गये कि वह टूट गयी या शीशे का बर्तन आग पर रख दिया, वह टूट गया या कुछ ऐसी ख़िलाफ़ बात की तो जुर्माना देना पड़ेगा। इसी तरह अगर चीज़ मांग लायी और यह बद-नीयती की कि अब उसको लौटा कर न दूंगी, बल्कि हड़प कर जाऊंगी, तब भी जुर्माना देना पड़ेगा।

मस्अला 3—एक या दो दिन के लिए कोई चीज़ मंगवायी तो अब एक दो दिन के बाद फेर देना ज़रूरी है, जितने दिन के वायदे पर लाई थी, इतने ही दिन के बाद अगर फेरेगी तो जाती रहने पर जुर्माना देना पड़ेगा।

मस्अला 4—जो चीज़ मांग ली है तो यह देखना चाहिए कि मालिक ने ज़ुबान से साफ़ कह दिया कि चाहे ख़ुद बरतो, चाहे दूसरे को दो, मांगने वाली को दुरूस्त है कि दूसरे को भी बरतने के लिए दे दे। इसी तरह अगर उसने साफ़ तो नहीं कहा, मगर उससे मेल-जोल ऐसा है कि उसको यक़ीन है कि हर तरह इसकी इजाज़त है, तब भी यही हुक्म है और अगर मालिक ने साफ़ मना कर दिया कि देखो तुम ख़ुद बरतना, किसी और को मत देना, इस सूरत में किसी तरह दुरूस्त नहीं कि दूसरे बरतने के लिए दी जाए। और अगर मांगने वाली ने यह कहकर मंगायी कि मैं तो बरतूंगी और मालिक ने दूसरे के बरतने से न मना किया और न साफ़ इजाज़त दी तो उस चीज़ को देखो कैसी है। अगर वह ऐसी है कि सब बरतने वाले उसको एक ही तरह बरता करते हैं बरतने में फ़र्क़ नहीं होता, तो ख़ुद भी बरतना दुरूस्त है और दूसरों को बरतने के लिए देना दुरूस्त है और अगर वह चीज़ ऐसी है कि सब बरतने वाले उसको एक तरह नहीं बरता करते बल्कि कोई अच्छी तरह बरतता है, कोई बुरी तरह,

तो ऐसी चीज़ तुम दूसरे को बरतने के वास्ते नहीं दे सकते। इसी तरह अगर यह कह कर मंगाई है कि हमारा फ़लां रिश्तेदार या मुलाक़ाती बरतेगा और मालिक ने तुम्हारे न बरतने का ज़िक्र नहीं किया, तो इस सूरत में भी यही हुक्म है कि पहली क़िस्म की चीज़ को तुम भी बरत सकती हो और दूसरी क़िस्म की चीज़ को तुम न बरत सकोगी, सिर्फ़ वही बरतेगा जिसके बरतने के नाम से मंगायी है और अगर तुमने यों ही मंगा भेजी, न अपने बरतने के नाम लिया, न दूसरे के बरतने का और मालिक ने भी कुछ नहीं कहा तो इसका हुक्म यह है कि पहली क़िस्म की चीज़ को तुम भी बरत सकती हो और दूसरे को भी बरतने के लिए दे सकती हो और दूसरी क़िस्म की चीज़ में हुक्म यह है कि अगर तुमने बरतना शुरू कर दिया तब तो बरतने के वास्ते नहीं दे सकती और अगर दूसरे से बरतवा लिया तो तुम नहीं बरत सकतीं, ख़ूब समझ लो।

मस्अला 5—मां–बाप का वग़ैरह किसी छोटे ना–बालिग़ की चीज़ का मांगे देना जायज़ नहीं है। अगर वह चीज़ जाती रही तो जुर्माना देना पड़ेगा। इसी तरह अगर ख़ुद ना–बालिग़ अपनी चीज़ दे दे तो उसका लेना भी जायज़ नहीं है।

मस्अला 6—किसी से कोई मांग कर लायी गयी, फिर वह मालिक मर गया तो अब मरने के बाद वह मांगे की चीज़ नहीं रही, अब उससे काम लेना दुरुस्त नहीं। इसी तरह वह मांगने वाली मर गयी तो उसके वारिसों को उससे नफ़ा उठाना ठीक नहीं।

हिबा यानी किसी को कुछ दे देने का बयान

मस्अला 1—तुमने किसी को कोई चीज़ दे दी और उसने मंज़ूर कर लिया या मुंह से कुछ नहीं कहा बल्कि तुमने उसके हाथ पर रख दिया और उसने ले लिया तो अब वह चीज़ उसी की हो गयी अब तुम्हारी नहीं रही, बल्कि वही उसकी मालिक है, इसको शरीअत में हिबा कहते हैं। लेकिन इसकी कई शर्तें हैं—

एक तो उसके हवाले कर देना और उसका क़ब्ज़ा कर लेना है। अगर तुमने कहा कि यह चीज़ हमने तुमको दे दी, उसने कहा हमने ले ली, लेकिन अभी तुमने उसके हवाले नहीं किया तो यह देना सही नहीं हुआ। अभी तक वह चीज़ तुम्हारी ही मिल्क में है, हां, अगर उस चीज़ पर अपना

क़ब्ज़ा कर लिया तो अब क़ब्ज़ा कर लेने के बाद उसकी मालिक बनी।

मस्अला 2—तुमने वही चीज़ उसके सामने इस तरह रख दी कि अगर वह उठाना चाहे तो ले सके और यह दिया कि लो। उसकी ले तो उसके पास रख देने से भी वह मालिक बन गयी। ऐसा समझेंगे कि उसने उठा लिये और क़ब्ज़ा कर लिया।

मस्अला 3—बंद संदूक में कुछ कपड़े दे दिये लेकिन उसकी कुंजी नहीं दी तो वह क़ब्ज़ा नहीं हुआ, जब कुंजी देगी तब क़ब्ज़ा होगा, उस वक़्त उसकी मालिक बनेगी।

मस्अला 4—किसी बोतल में तेल रखा है या और कुछ रखा है, तुमने वह बोतल किसी को दे दी लेकिन तेल नहीं दिया, तो यह देना सही नहीं। अगर वह क़ब्ज़ा कर ले तो भी उसकी मालिक न होगी। जब अपना तेल निकाल के दोगी, तब वह मालिक होगी और अगर तेल किसी को दे दिया मगर बोतल नहीं दी और उसने बोतल सहित ले लिया कि हम ख़ाली करके फिर दे देंगे तो यह तेल का देना सही है, क़ब्ज़ा कर लेने के बाद मालिक बन जायेगी, मतलब यह कि जब बर्तन वग़ैरह कोई चीज़ दो तो ख़ाली कर देना शर्त है। बग़ैर ख़ाली किये देना सही नहीं है। इसी तरह अगर किसी ने मकान दिया तो अपना सारा माल अस्बाब निकाल के, खुद भी इस घर से निकल कर देना चाहिये। अगर किसी को आधी या तिहाई या चौथाई चीज़ दो, पूरी चीज़ न दो तो उसका हुक्म यह है कि देखो वह किस क़िस्म की चीज़ है, आधी बांट देने के बाद भी काम की रहेगी या न रहेगी। अगर बांट देने के बाद भी काम की न रहे जैसे चक्की कि अगर बीच से तोड़ के दे दो, पीसने के काम की न रहेगी और जैसे चौकी, पलंग, पतीली, लोटा, कटोरा, प्याला संदूक़ और जानवर वग़ैरह, ऐसी चीज़ों को बग़ैर बांटे भी आधी तिहाई जो कुछ देना मंज़ूर हो जायज़ है। अगर वह क़ब्ज़ा करे तो जितना हिस्सा तुमने दिया है, उसकी मालिक बन गयी और वह चीज़ साझे में हो गयी और अगर वह चीज़ ऐसी है कि बांट देने के बाद भी काम की रहेगी जैसे ज़मीन, घर, कपड़े का थान, जलाने की लकड़ी, अनाज, ग़ल्ला, दूध, दही वग़ैरह तो बिना बांटे उनका देना सही है। अगर तुमने किसी से कहा, हमने उस बर्तन का आधा घी तुमको दे दिया और वह कहे हमने ले लिया तो यह देना सही नहीं हुआ, बल्कि अगर वह बर्तन पर क़ब्ज़ा भी कर ले तब भी उसकी मालिक नहीं हुई, अभी सारा घी तुम्हारा ही है, हां इसके बाद अगर उसमें का आधा घी

अलग करके उसके हवाले कर दो तो अब उसकी मालिक हो जाएगी।

मस्अला 5—एक थान या एक मकान या बाग़ वग़ैरह दो आदमियों ने मिल कर आधा-आधा ख़रीदा, तो जब तक बांट न लो, तब तक अपना आधा हिस्सा किसी को देना सही नहीं।

मस्अला 6—आठ आने या बारह आने पैसे दो आदमियों को दिये कि तुम दोनों आधे-आधे ले लो, यह सही नहीं, बल्कि आधे-आधे बांट करके देना चाहिये, हां अगर दोनों फ़क़ीर हों तो बांटने की ज़रूरत नहीं और अगर एक रूपया या एक पैसा दो आदमियों को दिया तो यह देना सही है।

मस्अला 7—बकरी या गाय वग़ैरह के पेट में बच्चा है, तो पैदा होने से पहले ही उसका दे देना सही नहीं है बल्कि पैदा होने के बाद अगर वह क़ब्ज़ा भी कर ले तब भी मालिक नहीं हुई। अगर देना हो तो पैदा होने के बाद फिर दे दे।

मस्अला 8—किसी ने बकरी दी और कहा कि इसके पेट में जो बच्चा है, उसको हम नहीं देते, वह हमारा ही है तो बकरी और बच्चा दोनों उसी के हो गये। पैदा होने के बाद बच्चे के लेने का अख़्तियार नहीं है।

मस्अला 9—तुम्हारी कोई चीज़ किसी के पास अमानत रखी है, तुमने उसी को दे दी, तो इस शक्ल में सिर्फ़ इतना कह देने से कि मैंने ले ली उसकी मालिक हो जाएगी, अब जाकर दोबारा उस पर क़ब्ज़ा करना शर्त नहीं है, क्योंकि वह चीज़ तो उसके पास है ही।

मस्अला 10—ना-बालिग़ लड़का या लड़की अपनी चीज़ किसी को दे दे तो उसका देना सही नहीं है और उसकी चीज़ लेना भी नाजायज़ है, इस मस्अले को ख़ूब याद रखो, बहुत लोग इसमें मुब्तला हैं।

बच्चों को देने का बयान

मस्अला 1—ख़त्न वग़ैरह या किसी जश्न में छोटे-छोटे बच्चों को, जो कुछ दिया जाता है, उससे ख़ास बच्चे को देना नहीं होता, बल्कि मां बाप को देना होता है, इसलिये वह सब न्यौता बच्चे की जायदाद नहीं, बल्कि मां-बाप उसके मालिक हैं जो चाहे, करें। हां अगर कोई आदमी ख़ास बच्चे ही को कोई चीज़ दे तो फिर वही बच्चा उसका मालिक है।

अगर बच्चा समझदार है तो खुद उसी का क़ब्ज़ा कर लेना काफ़ी है, जब क़ब्ज़ा कर लिया तो मालिक हो गया। अगर बच्चा क़ब्ज़ा न करे या क़ब्ज़ा करने के लायक़ न हो तो अगर बाप हो तो उसके क़ब्ज़ा कर लेने से और अगर बाप न हो तो दादा के क़ब्ज़ा कर लेने से बच्चा मालिक हो जाएगा। अगर बाप–दादा मौजूद न हों तो वह बच्चा जिसकी परवरिश में है, उसको क़ब्ज़ा करना चाहिये और बाप–दादा के होते मां–दादी–नानी वग़ैरह और किसी के क़ब्ज़े का एतबार नहीं है।

मस्अला 2—अगर बाप उसके न होने के वक़्त दादा अपने बेटे–पोते को कोई चीज़ देना चाहे तो बस इतना कह देने से हिबा सही हो जाएगा कि मैंने उसको यह चीज़ दे दी और अगर बाप–दादा न हों, उस वक़्त मां–भाई वग़ैरह भी अगर उसको कुछ देना चाहें, और वह बच्चा उन की परवरिश में भी हो, उनके इस कह देने से भी वह बच्चा मालिक हो गया, किसी के क़ब्ज़ा करने की ज़रूरत नहीं है।

मस्अला 3—जो चीज़ हो अपनी सब औलाद को बराबर देना चाहिये। लड़का–लड़की सबको बराबर दे। अगर कभी किसी को कुछ ज़्यादा दे दिया, तो भी ख़ैर कुछ हरज नहीं, लेकिन जिसे कम दिया, उसको नुक़्सान पहुंचाने का इरादा न हो, नहीं तो कम देना दुरूस्त नहीं है।

मस्अला 4—जो चीज़ ना–बालिग़ की मिल्कियत हो, उसका यह हुक्म है कि उसी बच्चे ही के काम में लगाना चाहिये, किसी को अपने काम में लाना जायज़ नहीं। खुद मां–बाप भी अपने काम में न लायें, न किसी और बच्चे के काम में लायें।

मस्अला 5—अगर ज़ाहिर में बच्चे को दिया, मगर यक़ीनन मालूम हैं कि मंज़ूर तो मां–बाप ही को देना है, मगर उस चीज़ को छोटा समझ कर बच्चे ही के नाम से दे दिया तो मां–बाप की मिल्कियत है, वे जो चाहें करें, फिर उसमें भी देख लें, अगर मां के रिश्तेदारों ने दिया है तो मां का हैं और अगर बाप के रिश्तेदारों ने दिया है तो बाप का है।

मस्अला 6—अपने ना–बालिग़ लड़के के लिये कपड़े बनवाए तो वह मालिक हो गया या बालिग़ लड़की के लिये ज़ेवर–गहना बनवाया तो वह लड़की उसकी मालिक हो गयी। अब इन कपड़ों का या उस ज़ेवर का किसी और लड़के या लड़की को देना दुरूस्त नहीं, जिसके लिए बनवाये हैं, उसी को दे, हां अगर बनाने के वक़्त साफ़ कह दिया कि यह मेरी ही चीज़ है, मांगे के तौर पर देता हूं तो बनवाने वाले की रहेगी। अक्सर

दस्तूर है कि बड़ी बहनें कभी–कभी छोटी ना–बालिग़ बहनों से या ख़ुद मां अपनी लड़की से दोपट्टा वग़ैरह मांग लेती है तो उनकी चीज़ का ज़रा देर के लिये मांग लेना भी दुरूस्त नहीं।

मस्अला 7—जिस तरह ख़ुद बच्चा अपनी चीज़ किसी को दे नहीं सकता, उसी तरह मां–बाप को भी ना–बालिग़ औलाद की चीज़ देने का अख़्तियार नहीं। अगर मां–बाप उसकी चीज़ किसी को बिल्कुल दे दें या थोड़ी देर या कुछ दिन के लिये मांगे का दें तो उसका लेना दुरूस्त नहीं। हां अगर मां–बाप के न होने की वजह से निहायत जरूरत हो और वह चीज़ कहीं और से उनको न मिल सके तो मजबूरी और लाचारी के वक़्त अपनी औलाद की चीज़ का लेना दुरूस्त है।

मस्अला 8—बाप–मां वग़ैरह को बच्चे का माल किसी को क़र्ज़ देना भी सही नहीं, बल्कि खुद क़र्ज़ लेना भी सही नहीं, ख़ूब याद रखो।

देकर फेर लेने का बयान

मस्अला 1—कुछ देकर फेर लेना बड़ा गुनाह है, लेकिन कोई वापस ले ले और जिसको दी थी, वह अपनी खुशी से दे भी दे तो अब फिर उसकी मालिक बन जाएगी मगर कुछ बातें ऐसी हैं जिनसे फेर लेने का बिल्कुल अख़्तियार नहीं रहता, जैसे तुमने किसी को बकरी दी, उसने खिला–पिला कर ख़ूब मोटा–ताज़ा किया, तो फेर लेने का अख़्तियार नहीं है या किसी को ज़मीन दी, उसने घर बनवाया या बाग़ लगाया तो अब फेर लेने का अख़्तियार नहीं या कपड़ा देने के बाद उसने कपड़े को सी लिया या रंग लिया या धुलवाया, तो अब फेर लेने का अख़्तियार नहीं।

मस्अला 2—तुमने किसी को बकरी दी, उसके दो एक बच्चे हुए, तो फेर लेने का अख़्तियार बाक़ी है, लेकिन अगर फेर ले तो सिर्फ़ बकरी फिर सकती है, वह बच्चा नहीं ले सकती।

मस्अला 3—देने के बाद अगर देने वाला या लेने वाला मर जाये तो भी फेर लेने का अख़्तियार नहीं रहता।

मस्अला 4—तुमको किसी ने कोई चीज़ दी, फिर उसके बदले में तुमने भी कोई चीज़ उसको दे दी और कह दिया कि लो बहन, इसके बदले तुम यह ले लो तो बदला देने के बाद अब उसको फेर लेने का अख़्तियार नहीं है, हां अगर तुमने यह नहीं कहा कि हम यह इसके बदले

में देते हैं, तो वह अपनी चीज़ फेर सकती है और तुम अपनी चीज़ भी फेर सकती हो।

मस्अला 5—बीवी ने अपने मियां को या मियां ने अपनी बीवी को कुछ दिया, तो उसके फेर लेने का अख़्तियार नहीं है। इसी तरह अगर किसी ने ऐसे रिश्तेदार को कुछ दिया, जिससे निकाह हमेशा के लिए हराम है और वह रिश्ता ख़ून का है जैसे भाई–बहन, भतीजा, भांजा वग़ैरह तो उससे फेर लेने का अख़्तियार नहीं है और अगर रिश्ता तो है, लेकिन निकाह हराम नहीं है, जैसे चचेरा, फुफेरा बहन–भाई वग़ैरह या निकाह तो हराम है, लेकिन नसब (ख़ानदान) के एतबार से रिश्तेदारी नहीं, यानी वह रिश्ता ख़ून का नहीं, बल्कि दूध का रिश्ता या और कोई रिश्ता है जैसे दूध शरीक भाई बहन वग़ैरह या दामाद–सास ससुर वग़ैरह, तो उन सबसे फेर लेने का अख़्तियार रहता है।

मस्अला 6—जितनी सूरतों में फेर लेने का अख़्तियार है, उसका मतलब यह है कि अगर वह भी फेर देने पर राज़ी हो जाए, तो उस वक़्त फेर लेने का अख़्तियार है जैसे ऊपर आ चुका है, लेकिन गुनाह इसमें भी है और अगर वह राज़ी न हो और न फेरे तो क़ाज़ी के फ़ैसले के अलावा ज़बरदस्ती फेर लेने का अख़्तियार नहीं और अगर ज़बरदस्ती बग़ैर फ़ैसले के फेर लिया, तो यह मालिक न होगा।

मस्अला 7—जो कुछ हिबा कर देने के हुक्म–अह्काम बयान हुए हैं, अक्सर ख़ुदा की राह में ख़ैरात देने के भी वही हुक्म हैं, मिसाल के तौर पर बग़ैर क़ब्ज़ा किये फ़क़ीर की मिल्क में चीज़ नहीं जाती और जिस चीज़ को बांट देने के बाद देना शर्त है, उसका यहां बांटने के बाद ही देना शर्त है। जिस चीज़ का खाली कर के देना ज़रूरी है, हां, यहां भी ख़ाली कर के देना ज़रूरी है, हां दो बातों का फ़र्क़ है। एक हिबा में राज़ी–ख़ुशी से फेर लेने का अख़्तियार रहता है और यहां फेर लेने का अख़्तियार नहीं रहता। दूसरे आठ–दस आने पैसे या आठ–दस रूपये अगर फ़क़ीरों को दे दो कि कि तुम दोनों बांट लेना, तो यह भी दुरुस्त है और हिबा में इस तरह दुरुस्त नहीं होता।

मस्अला 8—किसी फ़क़ीर को पैसे देने लगो, मगर धोखे से अठन्नी चली गयी तो उसके फेर लेने का अख़्तियार नहीं।

किराये पर लेने का बयान

मस्अला 1—जब तुमने महीने भर के लिए घर किराये पर लिया

और अपने क़ब्ज़े में कर लिया तो महीने के बाद किराया देना पड़ेगा, चाहे उसमें रहने का मौक़ा मिला हो या ख़ाली पड़ा रहा हो, किराया बहराल वाजिब है।

मस्अला 2—दरज़ी कपड़ा सी कर या रंगरेज़ रंगकर या धोबी कपड़ा धोकर लाया तो उसको अख़्तियार है कि जब तक तुमसे उसकी मज़दूरी न ले ले तब तक तुमको कपड़ा न दे। बग़ैर मज़दूरी दिये उससे ज़बरदस्ती लेना दुरूस्त नहीं और अगर किसी मज़दूर से ग़ल्ले का एक बोरा एक आना के पैसे के वायदे पर उठवाया तो अपनी मज़दूरी मांगने के लिए तुम्हारा ग़ल्ला नहीं रोक सकता, क्योंकि वहां से लाने की वजह से ग़ल्ले में कोई बात पैदा नहीं होती और पहली सूरत में एक नयी बात कपड़े में पैदा हो गयी।

मस्अला 3—अगर किसी ने यह शर्त कर ली कि मेरा कपड़ा तुम्हीं सीना या तुम ही रंगना या तुम ही धोना तो उसको दूसरे से धुलवाना दुरूस्त नहीं और अगर यह शर्त नहीं की तो किसी और से भी वह काम करा सकती है।

ग़लत इजारे[1] का बयान

मस्अला 1—अगर मकान किराये पर लेते वक़्त कुछ मुद्दत बयान नहीं की कि कितने दिन के लिए एक रूपया दिया है या किराया नहीं तै किया, यों ही ले लिया या शर्त कर ली कि जो कुछ उसमें गिर–पड़ जाएगा, वह भी हम अपने पास से बनवा दिया करेंगे या किसी को घर इस वायदे पर दिया कि उसकी मरम्मत करा दिया करे और उसका यही किराया है, यह सब ग़लत इजारा है और अगर यों कह दे कि तुम इस घर में रहो और इसकी मरम्मत करा दिया करो, किराया कुछ नहीं, तो वह रियायत और जायज़ है।

मस्अला 2—किसी ने यह कह कर मकान किराये पर लिया कि दो रूपये महीने किराया दिया करेंगे तो एक ही महीना के लिए इजारा सही हुआ। महीना के बाद मालिक को उसमें से उठा देने का अख़्तियार

---

1. इजारा किराया या मज़दूरी को कहते हैं।

है। फिर जब तुम दूसरे महीने में तुम रह पड़े तो एक महीना का इजारा और सही हो गया। इसी तरह हर महीने में नया इजारा होता रहेगा। हां, अगर यह भी कह दिया कि चार महीने या छः महीने रहूंगा, तो जितनी मुद्दत बतलायी है, उतनी मुद्दत तक इजारा सही हुआ, इससे पहले मालिक तुम को नहीं उठा सकता।

मस्अला 3—पीसने के लिये किसी को गेहूं दिये और कहा, इसी में से पाव भर आटा पिसाई ले लेना या खेत कटवाया और कहा कि इसी में से इतना ग़ल्ला मज़दूरी ले लेना, यह सब ग़लत है।

मस्अला 4—ग़लत इजारे का हुक्म यह है कि जो कुछ तै हुआ, वह न दिलाया जाएगा, बल्कि उतने काम के लिए जितनी मज़दूरी की रस्म है या ऐसे घर के लिए जितने किराये की रस्म हो, वह दिलाया जाएगा, लेकिन अगर रस्म ज़्यादा है और तैं कम हुआ था, तो फिर रस्म के मुताबिक़ न दिया जाएगा, बल्कि पाएगा जो तै हुआ है। मतलब यह है कि जो काम हो उसके पाने का हक़दार है।

मस्अला 5—गाने-बजाने, नाचने, बन्दर नचाने वग़ैरह जैसी जितनी बेहूदा बातें हैं, उनका इजारा सही नहीं, बिल्कुल ग़लत है, इसलिए कुछ न दिलाया जाएगा।

मस्अला 6—किसी हाफ़िज़ को नौकर रखा कि इतने दिन तक फ़लां की क़ब्र पर पढ़ा करो और सवाब बख़्शा करो, यह सही नहीं, ग़लत है। न पढ़ने वालों को सवाब मिलेगा, न मुर्दे को और यह कुछ तंख़्वाह पाने का हक़दार नहीं है।

मस्अला 7—पढ़ने के लिए कोई किताब किराये पर ली, तो यह सही नहीं है, बल्कि ग़लत है।

मस्अला 8—यह रस्म है कि बकरी, गाय, भैंस के गाभिन कराने में जिसका बकरा, बैल, भैंसा होता है, वह गाभिन कराई लेता है, यह बिल्कुल हराम है।

मस्अला 9—बकरी, गाय और भैंस को दूध पीने के लिये किराये पर लेना दुरुस्त नहीं।

मस्अला 10—जानवर को अधिया पर देना दुरुस्त नहीं, या यों कहना कि मुर्गियां या बकरियां ले जाओ और अच्छी तरह पालो-पोसो, जो कुछ बच्चे हों, आधे तुम्हारे, आधे हमारे, यह दुरुस्त नहीं।

मस्अला 11—घर सजाने के लिए झाड़–फ़ानूस वग़ैरह किराये पर लेना दुरूस्त नहीं, अगर लाया भी तो देने वाला किराया पाने का हक़दार नहीं। हां, अगर झाड़–फ़ानूस जलाने के लिए लाया हो, तो दुरूस्त है।

मस्अला 12—कोई इक्का–बहली किराये पर की तो मामूल से ज़्यादा बहुत आदमियों का लद जाना दुरूस्त नहीं। इसी तरह डोली में कहारों की इजाज़त के बग़ैर दो–दो का बैठ जाना दुरूस्त नहीं है।

मस्अला 13—कोई चीज़ खो गयी, उसने कहा जो कोई हमारी चीज़ बताये कि कहां है, उसको एक पैसा देंगे, तो अगर कोई बतला दे, तब भी पैसा पाने की हक़दार नहीं है, क्योंकि यह इजारा सही नहीं हुआ और अगर किसी ख़ास आदमी से कहा कि अगर तू बतला दे तो पैसा दूंगी तो अगर उसने अपनी जगह बैठे–बैठे या खड़े–खड़े बतला दिया तो कुछ न पायेगी और अगर कुछ चल के बतला दिया तो पैसा–धेला, जो कुछ वायदा था, मिलेगा।

जुर्माना लेने का बयान

मस्अला 1—रंगरेज़ धोबी, दर्ज़ी वग़ैरह किसी पशेवर से कोई काम कराया तो वह चीज़ जो उसको दी है, उसके पास अमानत है, अगर चोरी हो जाये या किसी और तरह बिला–इरादा ये मजबूरी से बर्बाद हो जाए, तो उससे जुर्माना लेना ठीक नहीं, हां अगर उसने इस तरह कुंदी की कि कपड़ा फट गया या अच्छा रेशमी कपड़ा भट्टी पर चढ़ा दिया, वह ख़राब हो गया तो उसका जुर्माना लेना जायज़ है। इसी तरह जो कपड़ा उसने बदल दिया, तो उसका जुर्माना लेना भी दुरूस्त है और अगर कपड़ा खो गया हो और वह कहता है, मालूम नहीं क्या हुआ, कहां गया, उसका जुर्माना भी लेना दुरूस्त है और अगर वह कहे कि मेरे यहां चोरी हो गयी, उसमें जाता रहा, तो जुर्माना लेना दुरूस्त नहीं।

मस्अला 2—किसी मज़दूर को घी, तेल वग़ैरह घर पहुंचाने को कहा, उससे रास्ते में गिर पड़ा, तो उसका जुर्माना लेना जायज़ है।

मस्अला 3—और जो पेशेवर नहीं, बल्कि ख़ास तुम्हारे ही काम के लिये है, जैसे नौकर–चाकर या वह मज़दूर, जिसको तुमने एक या दो चार दिन के लिये रखा है, उसके हाथ से, जो कुछ जाता रहे, उसका तावान लेना जायज़ नहीं, हां अगर खुद जान–बूझकर नुक़्सान कर दे तो

जुर्माना लेना दुरूस्त है।

मस्अला 4—लड़का खिलाने पर जो नौकर है, उसकी कोताही से अगर बच्चे का ज़ेवर या और कुछ जाता रहे तो उसका जुर्माना लेना दुरूस्त नहीं है।

इजारा के तोड़ देने का बयान

मस्अला 1—कोई घर किराये पर लिया, वह बहुत टपकता है या कुछ हिस्सा उसका गिर पड़ा या और कोई ऐसा ऐब निकल आया जिससे अब रहना कठिन है, तो इजारे का तोड़ना दुरूस्त है और अगर बिल्कुल ही गिर पड़ा है तो खुद ही इजारा टूट गया, तुम्हारे तोड़ने और मालिक के राज़ी होने की ज़रूरत नहीं रही।

मस्अला 2—जब किराये पर लेने वाले और देने वाले में से कोई मर जाए तो इजारा टूट जाता है।

मस्अला 3—अगर कोई ऐसा उज़्र पैदा हो जाए कि किराए को तोड़ना पड़े तो मजबूरी के अन्दर तोड़ देना सही है, जैसे कहीं जाने के लिए बहली का किराया किया, फिर राय बदल गयी, अब जाने का इरादा नहीं रहा, तो इजारा तोड़ देना सही है।

मस्अला 4–यह जो रस्म है कि किराया तै करके उसको कुछ बयान दे देते हैं, अगर जाना हो तो फिर उसको पूरा किराया देते हैं और वह बयाना उस किराये में से काट लिया जाता है और जो जाना न हो तो बयाना हज़म कर लेता है, वापस नहीं देता, यह दुरूस्त नहीं है, बल्कि उसको वापस देना चाहिए।

इजाज़त के बग़ैर किसी की चीज़ ले लेने का बयान

मस्अला 1—किसी की चीज़ ज़बरदस्ती से ले लेना या पीठ पीछे उसकी बग़ैर इजाज़त के ले लेना बड़ा गुनाह है। कुछ औरतें अपने शौहर या और किसी रिश्तेदार की चीज़ बे–इजाज़त ले लेती हैं, यह भी दुरूस्त

नहीं है और जो चीज़ बे–इजाज़त ले ली तो अगर वह चीज़ अभी मौजूद हो तो ठीक वही चीज़ फेर देनी चाहिए और अगर ख़र्च हो गयी हो तो उसका हुक्म यह है कि अगर ऐसी चीज़ थी कि उसके जैसी बाज़ार में मिल सकती है जैसे गल्ला, घी, तेल, रूपया–पैसा तो जैसी चीज़ें ली हैं, वैसी मांग कर देना वाजिब है और अगर ऐसी कोई चीज़ लेकर बर्बाद कर दी उसके जैसा मिलना कठिन है तो उसकी क़ीमत देनी पड़ेगी, जैसे मुर्ग़ी, बकरी, अमरूद, नारंगी, नाशपाती वग़ैरह।

मस्अला 2—पुरानी चारपाई का एक आध पाया टूट गया या पट्टी या चूल टूट गयी या और कोई चीज़ ली थी, वह खराब होने से जितना उसका नुक़्सान हुआ हो, देना पड़ेगा।

मस्अला 3—पराये रूपये से बे–इजाज़त व्यापार किया तो उससे जो नफ़ा हुआ, उसका लेना दुरूस्त नहीं, बल्कि असल रूपये मालिक को वापस दे और जो कुछ नफ़ा हो, उसको ऐसे लोगों में ख़ैरात कर दे जो बहुत मुहताज हों।

मस्अला 4—किसी का कपड़ा फाड़ डाला तो अगर थोड़ा फटा है, तब तो जितना नुक़्सान हुआ है, उतना ही जुर्माना दिला देंगे और अगर ऐसा फाड़ डाला कि अब उस काम का नहीं रहा, जिस काम के लिए पहला था, जैसे दोपट्टा ऐसे फाड़ डाला कि अब दोपट्टे के क़ाबिल नहीं रहा, हां, कुर्तियां बन सकती हैं, तो यह कपड़ा उसी फाड़ने वाले को दे दे और सारी क़ीमत उस से भर ले।

मस्अला 5—किसी का नग लेकर अंगूठी पर रख लिया तो अब उसकी क़ीमत देनी पड़ेगी। अंगूठी तोड़ कर, नग निकलवा कर देना वाजिब नहीं।

मस्अला 6—किसी का कपड़ा लेकर रंग लिया, तो उसको अख़्तियार है, चाहे रंगा–रंगाया कपड़ा ले ले और रंगने से जितने दाम बढ़ गये हैं उतने दाम दे दे और चाहे अपने कपड़े के दाम ले ले और कपड़ा उसी के पास रहने दे।

मस्अला 7—जुर्माना देने के बाद फिर अगर वह चीज़ मिल गयी तो देखना चाहिए कि जुर्माना अगर मालिक के बतलाने के मुताबिक़ दिया है तो अब उसका फेरना वाजिब नहीं, वह उसकी हो गयी और अगर उसके बतलाने से कम दिया तो उसका जुर्माना फेर कर अपनी चीज़ ले सकती है।

मस्अला 8—परायी बकरी या गाय घर में चली आयी तो उसका

दूध दूहना हराम है, जितना दूध लेगी, उसके दाम देने पड़ेंगे।

मस्अला 9—सूई, धागा, कपड़े की चिट, पान–तम्बाकू, कत्था, डली कोई चीज़ बिना इजाज़त लेना ठीक नहीं, जो लिया है उसके दाम देना वाजिब है, या उससे कह के माफ़ करा लें, नहीं तो क़ियामत में देना पड़ेगा।

मस्अला 10—शौहर अगर अपने लिए कोई कपड़ा लाया। काटते वक़्त उसमें से बचा या चुरा कर रखा और उसको नहीं बताया, यह भी जायज़ नहीं, जो कुछ लेना है, कह कर लो और इजाज़त न दे तो न लो।

साझेदारी का बयान

मस्अला 1—एक आदमी मर गया और उसने कुछ माल छोड़ा तो उसका सारा माल हक़दारों के साझे में है। जब तक सबसे इजाज़त न ले ले, तब तक उसको अपने काम में कोई नहीं ला सकती। अगर लायेगी और फ़ायदा उठायेगी तो गुनाह होगा।

मस्अला 2—दो बीबियों ने मिलकर कुछ बर्तन ख़रीदे तो वे बर्तन दोनों के साझे में हैं। बग़ैर उस दूसरी की इजाज़त लिए अकेले एक को बरतना और काम में लाना या बेच डालना दुरूस्त नहीं।

मस्अला 3—दो बीबियों ने अपने–अपने पैसे मिलाकर साझे में अमरूद, नारंगी, बेर, आम, जामुन, ककड़ी, खीरे, ख़रबूज़े वग़ैरह कोई चीज़ मोल मंगायी, और जब वह चीज़ बाज़ार से आयी तो उस वक़्त उनमें से एक है और एक कहीं गई हुई है, तो यह न करो कि आधा खुद ले लो और आधा उसका हिस्सा निकाल कर रख दो, कि जब वह आयेगी, तो अपना हिस्सा ले लेगी। जब तक दोनों हिस्सेदार मौजूद न हों, हिस्सा बांटना दुरूस्त नहीं है और बग़ैर उसके आये, अपना हिस्सा अलग करके खा गई तो बहुत गुनाह हुआ। हां, अगर गेहूं या और कोई ग़ल्ला साझे में मंगाया और अपना हिस्सो बांटकर रख दिया और दूसरी का उसके आने के वक़्त उसको दे दिया, यह ठीक है, लेकिन इस सूरत में दूसरी के हिस्से में उसको दे देने से पहले कुछ चोरी वग़ैरह हो गयी, तो वह नुक़सान दोनों आदमियों का समझा जाएगा। वह उस हिस्से में साझी हो जायेगी।

मस्अला 4—सौ–सौ रूपये मिलाकर दो आदमियों ने व्यापार किया, इक़रार किया कि जो कुछ नफ़ा हो, आधा हमारा आधा तुम्हारा, तो सही है, और अगर कहा, दो हिस्से हमारे और एक हिस्सा तुम्हारा, तो यह

भी सही है, चाहे रूपया दोनों का बराबर लगा हो, या कम-ज़्यादा लगा हो, सब ठीक है।

मस्अला 5—अभी कुछ माल नहीं ख़रीदा था कि वह सब रूपया चोरी हो गया या दोनों का रूपया अभी अलग-अलग रखा था, और दोनों में से एक का रूपया चोरी हो गया तो साझेदारी जाती रही, फिर से शरीक हों तब व्यापार करे।

मस्अला 6—दो आदमियों ने साझा किया और कहा कि सौ रूपए हमारे और सौ रूपए अपने मिलाकर तुम कपड़े का व्यापार करो। और नफ़ा आधा-आधा बांट लेंगे, फिर दोनों में से एक ने कुछ कपड़ा ख़रीद लिया, फिर दूसरे के पूरे सौ चोरी हो गये, तो जितना माल ख़रीदा है, वह दोनों के साझे में है, इसलिए आधी क़ीमत उससे ले सकता है।

मस्अला 7—व्यापार में यह शर्त ठहरायी कि नफ़ा में दस रूपये या पंद्रह रूपये हमारे हैं, बाक़ी जो नफ़ा हो, सब तुम्हारा है, तो यह ठीक नहीं।

मस्अला 8—व्यापार के माल में कुछ चोरी हो गया तो दोनों का नुक़्सान हो हुआ। यह नहीं है कि जो नुक़्सान हो, वह सब एक ही के सिर पर पड़े। अगर यह इक़रार कर लिया कि जो नुक़्सान हो तो सब हमारे ज़िम्मे है और जो नफ़ा हो, वह आधा-आधा बांट लो तो यह भी दुरूस्त नहीं।

मस्अला 9—जब साझा नाजायज़ हो गया तो अब नफ़ा बांटने में क़ौल व इक़रार का कुछ एतबार नहीं, बल्कि अगर दोनों का माल बराबर है तो नफ़ा भी बराबर-बराबर मिलेगा और अगर बराबर न हो तो जिसका माल ज़्यादा है उसको नफ़ा भी उसी हिसाब से मिलेगा, चाहे जो कुछ इक़रार किया हो। इक़रार का उस वक़्त एतबार होता है जब साझेदारी सही हो और ना-जायज़ न होने पाये।

मस्अला 10—दो औरतों ने साझा किया कि इधर-उधर से कुछ सीना-पिरोना आये, तो हम-तुम दोनों मिलकर सिया करेंगे और जो कुछ सिलाई मिलेगी, आधी-आधी बांट लिया करेंगे और यह साझेदारी ठीक है और अगर यह इक़रार कर लिया कि चार आने या आठ आने हमारे, बाक़ी सब तुम्हारे, तो यह ठीक नहीं।

मस्अला 11—उन दोनों में से एक औरत ने कोई कपड़ा सीने के लिए लिया तो दूसरी यह नहीं कह सकती कि यह कपड़ा तुमने क्यों लिया

है, तो तुम ही सिलो, बल्कि दोनों के ज़िम्मे उसका सिलना वाजिब हो गया। यह न सी सके तो वह सी दे या दोनों मिलकर सीएं। मतलब यह है कि सीने से इंकार नहीं कर सकती।

मस्अला 12—जिसका कपड़ा था, वह मांगने के लिए आयी और जिसने लिया था, वह इस वक़्त नहीं है, बल्कि दूसरी औरत है तो उस दूसरी औरत से भी तक़ाज़ा करना दुरुस्त है। वह औरत यह नहीं कह सकती कि मुझसे क्या मतलब, जिसको दिया हो, उससे मांगो।

मस्अला 13—इसी तरह हर औरत उस कपड़े की मज़दूरी और सिलाई मांग सकती है जिसने कपड़ा दिया था, वह यह बात नहीं कह सकती कि मैं तुमको सिलाई न दूंगी, बल्कि जिसको कपड़ा दिया था, उसी को सिलाई दूंगा, जब दोनों साझे में काम करती हैं तो हर औरत सिलाई का तक़ाज़ा कर सकती है। इन दोनों में से जिसको सिलाई दे देगी, उसके ज़िम्मे से अदा हो जाएगी।

मस्अला 14—दो औरतों ने साझे में काम किया कि आओ दोनों मिलकर जंगल से लकड़ियां चुन लाएं या कंडे चुन लायें, तो यह शिर्कत सही नहीं। जो चीज़ जिसके हाथ में आये वही उसकी मालिक है, इसमें साझा नहीं है।

मस्अला 15—एक ने दूसरी से कहा कि यह हमारे अंडे अपनी मुर्ग़ी के नीचे रख लो, बच्चे निकलें तो दोनों आदमी आधे-आधे बांट लेंगे यह ठीक नहीं है।

साझे की चीज़ बांटने का बयान

मस्अला 1—दो आदमियों ने मिलकर बाज़ार से गेहूं मंगवाये, तो अब बांटते वक़्त दोनों का मौजूद होना ज़रूरी नहीं है। दूसरा हिस्सेदार मौजूद न हो, तब भी ठीक-ठीक तौल के उसका हिस्सा अलग करके अपना हिस्सा अलग कर लेना ठीक है, जब अपना हिस्सा अलग कर लिया तो खाओ-पीओ, किसी को दे दो, जो चाहो करो, सब जायज़ है। इसी तरह घी-तेल अंडे वग़ैरह का भी हुक्म है। मतलब यह है कि जो चीज़ ऐसी हो कि उसमें कुछ फ़र्क़ न होता हो, जैसे अंडे-अंडे सब बराबर हैं, या गेहूं के दो हिस्से किये तो जैसा यह हिस्सा, वैसा वह हिस्सा, दोनों बराबर। ऐसी सब चीज़ों का यही हुक्म है कि दूसरे के न होने के वक़्त भी

हिस्सा बांट कर लेना दुरूस्त है, लेकिन अगर दूसरी ने अपना हिस्सा नहीं लिया था कि किसी तरह जाता रहा, तो वह नुक़्सान दोनों का होगा, जैसे साझेदारी में बयान हुआ और जिन चीज़ों में फ़र्क़ हुआ करता है जैसे अमरूद, नारंगी वग़ैरह, उनका हुक्म यह है कि जब तक दोनों हिस्सेदार मौजूद न हों, हिस्सा बांटकर लेना दुरूस्त नहीं है।

मस्अला 2—दो लड़कियों ने मिलकर आम, अमरूद, नारंगी वग़ैरह कुछ मंगवाया और एक कहीं चली गई, तो अब उसमें से खाना ठीक नहीं। जब वह आ जाए उसके सामने अपना हिस्सा अलग करो, तब खाओ, नहीं तो बहुत गुनाह होगा।

मस्अला 3—दो ने मिलकर चने भुनवाये तो सिर्फ़ अंदाज़े से बांट लेना ठीक नहीं, बल्कि ख़ूब ठीक–ठाक तौल कर आधा–आधा करना चाहिए। अगर किसी तरफ़ कमी–बेशी हो जाएगी तो सूद हो जाएगा।

गिरवी रखने का बयान

मस्अला 1—तुमने किसी से दस रूपये क़र्ज़ लिये और एतबार के लिए अपनी कोई चीज़ उसके पास रख दी कि तुझे एतबार न हो तो मेरी यह चीज़ अपने पास रख ले, जब रूपया अदा कर दूं तो अपनी चीज़ ले लूंगी, यह जायज़ है। इसी को गिरवी कहते हैं, लेकिन सूद देना किसी तरह दुरूस्त नहीं, जैसा कि आजकल महाजन सूद लेकर गिरवी रखते हैं, यह ठीक नहीं। सूद लेना और देना दोनों हराम हैं

मस्अला 2—जब तुमने कोई चीज़ गिरवी रख दी, तो अब बग़ैर क़र्ज़ अदा किए अपनी चीज़ के मांगने और ले लेने का हक़ नहीं है।

मस्अला 3—जो चीज़ तुम्हारे पास किसी ने गिरवी रखी तो, अब उस चीज़ को काम में लाना, उससे किसी तरह का नफ़ा उठाना, ऐसे बाग़ का फल खाना, ऐसी ज़मीन का ग़ल्ला या रूपया लेकर खाना, ऐसे घर में रहना, कुछ ठीक नहीं है।

मस्अला 4—अगर बकरी, गाय वग़ैरह गिरवी हो तो उसका दूध, बच्चा वग़ैरह जो कुछ हो, वह भी मालिक के पास भेजे, जिसके पास गिरवी है, उसको लेना ठीक नहीं। दूध को बेचकर दाम को भी गिरवी में शामिल कर दे, जब तुम्हारा क़र्ज़ अदा कर दे तो गिरवी की चीज़ और यह दाम दूध के सब वापस कर दो और खिलाई के दाम काट लो।

मस्अला 5—अगर तुमने अपना कुछ रूपया अदा कर दिया, तब भी गिरवी की चीज़ नहीं ले सकती। जब सब रूपया अदा कर दोगी तब वह चीज़ फिर मिलेगी।

मस्अला 6—अगर तुमने दस रूपये क़र्ज़ लिये और दस ही रूपये की चीज़ या पंद्रह-बीस रूपये की चीज़ गिरवी कर दी और वह चीज़ उसके पास से जाती रही, तो अब न तो वह तुमसे अपना क़र्ज़ ले सकता है और न तुम उससे अपनी गिरवी की चीज़ के दाम वापस ले सकती हो। तुम्हारी चीज़ गयी और उसका रूपया गया और अगर पांच ही रूपये की चीज़ गिरवी रखी और वह जाती रही तो पांच रूपये तुमको देना पड़ेंगे, पांच रूपये मुजरा हो गए।

वसीयत का बयान

मस्अला 1—यह कहना कि मेरे मरने के बाद मेरा इतना माल फ़्लां आदमी को या फ़्लां काम में दे देना, यह वसीयत है, चाहे तन्दुरूस्ती में कहे, चाहे बीमारी में, फिर चाहे उस बीमारी में मर जाए या तन्दुरूस्त हो जाए और जो खुद अपने हाथ से कहीं दे दे, किसी को क़र्ज़ा माफ़ कर दे तो उसका हुक्म यह है कि तन्दुरूस्ती में हर तरह ठीक है और इसी तरह जिस बीमारी से चंगी हो जाये, उसमें भी दुरूस्त है और जिस बीमारी में मर जाए, वह वसीयत है, जिसका हुक्म आगे आता है।

मस्अला 2—अगर किसी के ज़िम्मे नमाज़ें या रोज़ें या ज़कात या क़सम व रोज़ा वग़ैरह का कफ़्फ़ारा बाक़ी रह गया हो और इतना माल भी मौजूद हो तो मरते वक़्त उसके लिए वसीयत कर जाना ज़रूरी और वाजिब है। इसी तरह अगर किसी का कुछ क़र्ज़ हो या कोई अमानत उसके पास रखी हो उसकी वसीयत कर देना भी वाजिब है, न करेगी तो गुनाहगार होगी और अगर कुछ रिश्तेदार ग़रीब हों, जिनको शरअ से कुछ मीरास न पहुंचती हो और उसके पास बहुत माल व दौलत है तो उनको कुछ दिला देना और वसीयत करना मुस्तहब[1] है और बाक़ी लोगों के लिए वसीयत करने, न करने का अख़्तियार है।

मस्अला 3—मरने के बाद मुर्दे के माल में से पहले तो उसके

1. पसंदीदा काम को शरीअत में मुस्तहब कहते हैं

कफ़न–दफ़न का सामान करे, फिर जो कुछ बचे, उससे क़र्ज़ अदा कर दे। अगर मुर्दे को सारा माल क़र्ज़ अदा करने में लग जाए तो सारा माल क़र्ज़ में लगा देंगे, वारिसों को कुछ न मिलेगा, इसलिए क़र्ज़ अदा करने की वसीयत पर बहरहाल अमल करेंगे। अगर सब माल इस वसीयत की वजह से ख़र्च हो जाए, तब भी कुछ परवाह नहीं, बल्कि अगर वसीयत भी न कर जाये, तब भी क़र्ज़ पहले अदा करेंगे और क़र्ज़ के सिवा और चीज़ों की वसीयत का अख़्तियार सिर्फ़ तिहाई माल में होता है यानी जितना माल छोड़ा है, उसकी तिहाई में से अगर वसीयत पूरी हो जाए, जैसे कफ़न–दफ़न और क़र्ज़ में लगा कर तीन सौ रूपये बचे और सौ रूपए में सब वसीयतें पूर हो जाएं तब तो वसीयत को पूरी करेंगे और तिहाई माल से ज़्यादा लगाना वारिसों के ज़िम्मे वाजिब नहीं। तिहाई में से जितनी वसीयतें पूरी हो जायें, उसको पूरा करे, बाक़ी छोड़ दे, हां, अगर सब वारिस ख़ुशी से राज़ी हो जाएं कि हम अपना–अपना हिस्सा न लेंगे, वे तुम उसकी वसीयत में लगा दो, उस वक़्त तिहाई से ज़्यादा भी वसीयत में लगाना जायज़ है, लेकिन ना–बालिग़ों की इजाज़त का बिल्कुल एतबार नहीं है। वे अगर इजाज़त भी दें तब भी उनका हिस्सा ख़र्च करना दुरूस्त नहीं।

मस्अला 4—जिस आदमी को मीरास में माल मिलने वाला हो, जैसे बाप–मां, शौहर–बेटा वग़ैरह, उसके लिए वसीयत करना सही नहीं और जिस रिश्तेदार का उसके माल में कुछ हिस्सा न हो या रिश्तेदार ही न हो, कोई ग़ैर हो, उसके लिए वसीतय करना ठीक है, लेकिन तिहाई माल से ज़्यादा दिलाने का अख़्तियार नहीं। अगर किसी ने अपने वारिस को वसीयत कर दी कि मेरे बाद उसकी फ़लानी चीज़ दे देना या इतना माल दे देना, तो उस वसीयत के पाने का उसको कुछ हक़ नहीं है, हां, अगर और सब वारिस राज़ी हो जायें तो दे देना जायज़ है। इसी तरह अगर किसी को तिहाई से ज़्यादा वसीयत कर जाए तो उसका भी यही हुक्म है। अगर सब वारिस ख़ुशी के साथ राज़ी हो जाएं तो तिहाई से ज़्यादा मिलेगा, वरना सिर्फ़ तिहाई माल मिलेगा और ना–बालिग़ों की इजाज़त का किसी सूरत में एतबार नहीं है, हर जगह इसका ख़्याल रखो, हम बार–बार कहां तक लिखें।[1]

मस्अला 5—अगरचे तिहाई माल में वसीयत कर जाने का अख़्तियार है लेकिन बेहतर यह है कि पूरी तिहाई की वसीयत न करे, कम की

---

1. लोग इसमें बड़ी असावधानी दिखाते हैं, इसीलिए ज़्यादा ताक़ीद के लिए बार–बार कहा जाता है, ताकि ख़ूब सावधानी दिखाई जाए।

वसीयत करे, बल्कि अगर बहुत ज़्यादा मालदार न हो, तो वसीयत ही न करे, वारिसों के लिए छोड़ दे कि अच्छी तरह बसर करें, क्योंकि अपने वारिसों को आराम में छोड़ जाने पर सवाब भी मिलता है, हां, अगर ज़रूरी वसीयत हो तो, जैसे नमाज़–रोज़े का फ़िद्या तो उसकी वसीयत बहरहाल कर जाए वरना गुनाहगार होगी।

मस्‌अला 6—किसी ने कहा, मेरे बाद मेरे माल में से सौ रुपये ख़ैरात कर देना तो देखो कफ़न–दफ़न और क़र्ज़ अदा कर देने के बाद कितना माल बचा है। अगर तीन सौ या उससे ज़्यादा हो तो पूरे सौ रुपये देना चाहिएं और जो कम हो तो सिर्फ़ तिहाई देना वाजिब है। हां, अगर सब वारिस बिला किसी दबाव के मंज़ूर कर लें तो और बात है।

मस्‌अला 7—अगर किसी का कोई वारिस न हो तो उसको पूरे साल की वसीयत कर देना भी ठीक है और अगर सिर्फ़ बीवी हो तो तीन चौथाई की वसीयत ठीक है। इसी तरह अगर किसी के सिर्फ़ मियां है तो आधे माल की वसीयत दुरुस्त है।

मस्‌अला 8—ना–बालिग़ के वसीतय करना ठीक नहीं।

मस्‌अला 9—यह वसीयत की कि मेरे जनाज़े की नमाज़ फ़्लां आदमी पढ़े, फ़्लां शहर में यह फ़्लां की क़ब्र के पास मुझको दफ़नाना, फ़्लाने कपड़े का कफ़न देना, मेरी क़ब्र पक्की बना देना, क़ब्र पर कुब्बा बना देना, क़ब्र पर कोई हाफ़िज़ बिठा देना कि कुरआन मजीद पढ़–पढ़कर बख़्शा करे, तो इसका पूरा करना ज़रूरी नहीं, बल्कि तीन वसीयतें आख़िर की बिल्कुल जायज़ नहीं, पूरा करने वाला गुनाहगार होगा।

मस्‌अला 10—अगर कोई वसीयत करके अपनी वसीयत से लौट जाए यानी कह दे कि अब मुझे ऐसा मंज़ूर नहीं, इस वसीयत का एतबार न करना, तो वह वसीयत बातिल (ग़लत) हो गयी।

मस्‌अला 11—जिस तरह तिहाई माल से ज़्यादा की वसीयत कर जाना दुरुस्त नहीं, उसी तरह बीमारी की हालत में अपने माल को तिहाई से ज़्यादा, अलावा अपने ज़रूरी ख़र्च, खाने–पीने, दवा–दारू वग़ैरह के, ख़र्च करना भी दुरुस्त नहीं। अगर तिहाई से ज़्यादा दे दिया, तो वारिसों की इजाज़त के बग़ैर यह देना सही नहीं हुआ। जितना तिहाई से ज़्यादा है, वारिसों को उसके लेने का अख़्तियार है और अगर नाबालिग़ इजाज़त दें, तब भी एतबार नहीं और वारिस को तिहाई के अंदर भी सब वारिसों की इजाज़त के बग़ैर लेना दुरुस्त नहीं और यह हुक्म जब है कि अपनी

ज़िंदगी में देकर क़ब्ज़ा भी करा दिया हो और अगर दे तो दिया, लेकिन क़ब्ज़ा अभी नहीं हुआ तो मरने के बाद कह देना बिल्कुल ही ग़लत है, उसको कुछ न मिलेगा, वह सब वारिसों का हक़ है और यही हुक्म है बीमारी की हालत में खुद की राह में देने, नेक काम में लगाने का। मतलब यह है कि तिहाई से ज़्यादा किसी तरह ख़र्च करना जायज़ नहीं।

मस्अला 12—बीमार के पास पूछना करने कुछ लोग आ गये और कुछ दिन यहीं लग गये कि यहीं रहते और उसके माल से खाते-पीते हैं तो अगर रोगी की सेवा के लिए उनके रहने की ज़रूरत हो, तो ख़ैर कुछ हरज नहीं और अगर ज़रूरत न हो, तो उनकी ख़ातिर बात में भी तिहाई से ज़्यादा लगाना जायज़ नहीं और अगर ज़रूरत भी न हो और वे लोग वारिस हों तो तिहाई से कम भी बिल्कुल जायज़ नहीं यानी उसको उसके माल में से खाना जायज़ नहीं। हां, अगर सब वारिस ख़ुशी से इजाज़त दे दें तो जायज़ है।

मस्अला 13—ऐसी बीमारी की हालत में, जिसमें बीमार मर जाए, अपना क़र्ज़ माफ़ करने का भी अख़्तियार नहीं है। अगर किसी वारिस पर क़र्ज़ आता था, उसको माफ़ किया तो माफ़ नहीं हुआ, अगर सब वारिस यह माफ़ी मंज़ूर करें और बालिग हों तब माफ़ होगा और किसी ग़ैर को माफ़ कर दिया तो तिहाई माल से जितना ज़्यादा होगा, माफ़ न होगा। अक्सर रस्म है कि बीवी मरते वक़्त अपना मह्र माफ़ कर देती हैं, यह माफ़ करना सही नहीं।

मस्अला 14—हमल की हालत में दर्द शुरू हो जाने के बाद अगर किसी को कुछ दे या मह्र वग़ैरह माफ़ करे, तो इसका भी वही हुक्म है जो मरते वक़्त देने-लेने का है यानी अगर खुदा न करे, इसमें मर जाये तब तो यह वसीयत वारिस के लिए कुछ जायज़ नहीं और ग़ैर के लिए तिहाई से ज़्यादा देने और माफ़ करने का अख़्तियार नहीं। हां, अगर ख़ैरियत से बच्चा हो गया, तो वह लेना-देना और माफ़ करना सही हो गया।

मस्अला 15—मर जाने के बाद उसके माल में से कफ़न-दफ़न करो, जो कुछ बचे तो सबसे पहले उसका क़र्ज़ अदा करना चाहिए, वसीयत की हो या न की हो, क़र्ज़ का अदा करना बहरहाल पहले नम्बर पर है। बीवी का मह्र भी क़र्ज़ में दाख़िल है। अगर क़र्ज़ न हो और क़र्ज़ से कुछ बच रहे तो यह देखना चाहिए, कुछ वसीयत तो नहीं है। अगर कोई वसीयत की है तो तिहाई में वह जारी होगी और अगर नहीं की या

वसीयत से जो बचा है, वह सब वारिसों को हक़ है। शरअ में जिन–जिन का हिस्सा हो, किसी आलिम से पूछ कर दे देना चाहिए। यह जो रस्म है कि जो जिसके हाथ लगा, ले भागा, बड़ा गुनाह है। यहां न दोगी तो क़ियामत में देना पड़ेगा, जहां रूपये के बदले नेकियां देनी पड़ेंगी। इस तरह लड़कियों का हिस्सा भी ज़रूर देना चाहिए, शरअ से इनका भी हक़ है।

मस्अला 16—मुर्दे के माल में से लोगों की मेहमानदारी, आने वालों की ख़ातिर–बात, खिलाना–पिलाना, सद्क़ा, ख़ैरात वग़ैरह कुछ करना जायज़ नहीं है, इसी तरह मरने के बाद से दफ़न तक जो कुछ अनाज वग़ैरह फ़क़ीरों को दिया जाता है, मुर्दा के माल में से उसका देना भी हराम है। मुर्दे को हरगिज़ कुछ सवाब नहीं पहुंचता, बल्कि सवाब समझना सख़्त गुनाह है, क्योंकि अब यह माल सब वारिसों का होगा। परायों का हक़ मार कर देना ऐहा ही है जैसे ग़ैर का माल चुरा कर देना। सब माल वारिसों को बांट देना चाहिए, उनको अख़्तियार है कि अपने–अपने हिस्से में से चाहे शरअ के मुताबिक़ कुछ करें, या न करें, बल्कि वारिसों से इस ख़र्च करने और ख़ैरात करने की इजाज़त भी न लेना चाहिए, क्योंकि इजाज़त लेने से सिर्फ़ ऊपरी मन से इजाज़त देते हैं कि इजाज़त न देने में बदनामी होगी। ऐसी इजाज़त का कुछ एतबार नहीं।

मस्अला 17—इस तरह यह जो रस्म है कि उसके इस्तेमाल किये कपड़े ख़ैरात कर दिए जाते हैं, यह भी वारिसों की बग़ैर इजाज़त के हरगिज़ जायज़ नहीं। अगर वारिसों में कोई ना–बालिग़ हो तो इजाज़त देने पर भी जायज़ नहीं, पहले माल बांट लो, तब बालिग़ लोग अपने हिस्से में से जो चाहे दें, बिना बांटे हरगिज़ न देना चाहिए।

नोट—मौलवी अहमद अली साहब, जिनका ज़िक्र पहले हिस्से के शुरू में है, यहां तक के मज़्मून को तर्तीब दे चुके थे और कुछ फुटकर काग़ज़ लिख चुके थे कि 20 ज़िलहिज्जा 1381 हि० को शहर क़न्नौज में अपनी ससुराल में इंतिक़ाल कर गये। इसलिए दुआ करो कि अल्लाह तआला उनकी मग़्फ़िरत फ़रमाये और उनको जन्नत में बड़े दर्जे बख़्शे। अब आगे जो मज़्मून रह गये हैं, अल्लाह तआला के फ़ज़्ल व करम के भरोसे पर लिखे जाते हैं। पूरा करना उनका काम है।[1]

---

1. इसके बाद 'कुरआन मजीद को अच्छी तरह संवार कर सही पढ़ने का बयान' है, हिन्दी लिपि में सही न लिखे जा सकने की वजह से छोड़ दिये गये।

—अनुवादक

शौहर के हक़ों का बयान

अल्लाह तआला ने शौहर का बड़ा हक़ बनाया है और बहुत बुज़ुर्गी दी है। शौहर का राज़ी रखना और ख़ुश रखना बड़ी इबादत है और उसका ना–खुश और नाराज़ करना बहुत गुनाह है। प्यारे नबी सल्ल० ने फ़रमाया है कि जो औरत पांच वक़्त की नमाज़ पढ़ती रहे और रमज़ान के महीने के रोज़े रखे और अपनी आबरू को बचाये रहे यानी पाक दामन रहे और अपने शौहर की ताबेदारी और फ़रमांबरदारी करती रहे, सो उसको अख़्तियार है, जिस दरवाज़े से चाहे जन्नत में चली जाए।

मतलब यह है कि जन्नत के आठ दरवाज़ों में से, जिस दरवाज़े से उसका जी चाहे, जन्नत में बे–खटके चली जाए और हज़रत मुहम्मद सल्ल० ने फ़रमाया है कि जिसकी मौत ऐसी हालत पर आये कि उसका शौहर उससे राज़ी है तो वह जन्नती है।

प्यारे नबी सल्ल० ने फ़रमाया कि अगर मैं खुदा के सिवा किसी और को सज्दा करने के लिए कहता तो औरत को ज़रूर हुक्म देता कि अपने मियां को सज्दा किया करे। अगर मर्द अपनी औरत को हुक्म दे कि इस पहाड़ के पत्थर उठा कर उस पहाड़ तक ले जाए और उस पहाड़ से उठा कर तीसरे पहाड़ तक ले जाए तो उसको यही करना चाहिए था।

प्यारे नबी सल्ल० ने फ़रमाया है कि जब कोई मर्द अपनी बीवी को अपने काम के लिए बुलाए तो ज़रूर उसके पास आए। अगर चूल्हे पर बैठी हो, तब भी चली आए। मतलब यह है कि चाहे जितने ज़रूरी काम पर बैठी हो, सब छोड़–छाड़ कर चली आए और आपने यह भी फ़रमाया है कि किसी मर्द ने अपनी औरत को अपने पास लेटने के लिए बुलाया और वह न आयी, फिर वह इसी तरह गुस्से से लेटा रहा तो सुबह तक उस औरत पर सारे फ़रिश्ते लानत करते रहते हैं।

प्यारे नबी सल्ल० ने यह भी फ़रमाया है कि दुनिया में जब कोई औरत अपने मियां को सताती है तो जो हूर क़ियामत में उसकी बीवी बनेगी, यों कहती है, तेरा खुदा नाश करे, तू उसको मत सता, यह तो तेरे पास मेहमान है। थोड़े ही दिनों में तुझको छोड़कर हमारे पास चला आयेगा। प्यारे नबी सल्ल० ने यह भी फ़रमाया है कि तीन तरह के आदमी ऐसे हैं, जिनकी न तो नमाज़ क़ुबूल होती है, न कोई और नेकी मंज़ूर होती

है—एक तो वह लौंडी–गुलाम, जो अपने मालिक से भाग जाए, दूसरे वह औरत जिसका शौहर इससे ना खुश हो, तीसरे वह जो नशे में मस्त हो।

किसी ने प्यारे नबी सल्ल० से पूछा कि ऐ अल्लाह के रसूल सल्ल०! सबसे अच्छी औरत कौन है ? तो आपने फ़रमाया, वह औरत कि जब उसका मियां उसकी तरफ़ देखे, तो खुश कर दे और जब कुछ कहे, तो कहना माने और अपनी जान व माल में कुछ उसके खिलाफ़ न करे, जो उसको ना–गवार हो। एक हक़ मर्द का यह है कि उसके पास होते हुए, बग़ैर उसकी इजाज़त के नफ़्ल रोज़े न रखा करे और बग़ैर उसकी इजाज़त के नफ़्ल नमाज़ न पढ़ें। एक हक़ उसका यह है कि अपनी सूरत बिगाड़ कर मैली–कुचैली न रहा करे, बल्कि बनाव–सिंगार से रहा करे, यहां तक कि अगर मर्द के कहने पर औरत सिंगार न करे तो मर्द को मारने का अख़्तियार है। एक हक़ यह है कि बग़ैर मियां की इजाज़त के घर से बाहर कहीं न जाए, न रिश्तेदार–नातेदार के घर, न किसी ग़ैर के घर।

मियां के साथ निबाह करने का तरीक़ा

यह ख़ूब समझ लो कि मियां–बीवी का ऐसा वास्ता है कि सारी उम्र उसी में बसर करना है। अगर दोनों का दिल मिला हुआ रहा तो उस से बढ़ कर कोई नेमत नहीं, अगर—खुदा न करे—दिलों में फ़र्क़ आ गया, तो इससे बढ़कर कोई मुसीबत नहीं। इसलिए जहां तक हो सके, मियां का दिल हाथ में लिए रहो और उसकी आंख के इशारे पर चला करो। अगर वह हुक्म करे कि रात भर हाथ बांधी खड़ी रहो तो दुनिया और आख़िरत की भलाई इसी में है कि दुनिया की थोड़ी सी तक्लीफ़ गवारा करके आख़िरत की भलाई और सुर्ख़ रूई हासिल करो। किसी वक़्त कोई बात ऐसी न करो जो उसके मिज़ाज के ख़िलाफ़ हो। अगर वह दिन को रात बतलाये तो तुम भी दिन को रात कहने लगो। कम समझी और अंजाम न सोचने की वजह से कुछ औरतें ऐसी बात कर बैठती हैं, जिससे मर्द के दिल में मैल आ जाता है, कहीं बे मौक़ा ज़ुबान चला दी, कोई बात ताने–मेहने की कह डाली, गुस्से में जली–कटी बातें कह दीं कि ख़ामख़ाही सुनकर, बुरा लगे, फिर जब उसका दिल फिर गया तो रोती–फिरती हैं। यह ख़ूब समझ लो कि दिल पर मैल आ जाने के बाद अगर दो चार दिन में कह–सुनकर तुमने मना भी लिया, तब भी वह बात नहीं रहती जो पहले

थी, फिर हज़ार बातें बनाओ, माफ़ी–तलाफ़ी चाहो, लेकिन जैसा पहले दिन साफ़ था, अब मुहब्बत नहीं रहती। जब कोई बात होती है, तो यही ख़्याल आ जाता है कि यह वही है, जिसने फ़लाने–फ़लाने दिन ऐसा कहा था, इसलिए अपने शौहर के साथ ख़ूब सोच–समझ कर रहना चाहिए कि खुदा और रसूल सल्ल की खुशी भी हासिल हो और तुम्हारी दुनिया और आख़िरत दोनों दुरुस्त हो जाएं। समझदार बीवियों को कुछ बतलाने की तो कोई ज़रूरत नहीं है, वे खुद ही हर बात के भले–बुरे को देख लेंगी, लेकिन फिर भी हम कुछ ज़रूरत बातें बयान करते हैं, जिससे तुम उनको ख़ूब समझ लोगी, तो और बातें भी इसी से मालूम हो जाएंगी। शौहर की हैसियत से ज़्यादा ख़र्च न मांगो, जो कुछ जुड़े मिले, अपना घर समझ कर चटनी–रोटी खाकर बसर करो। अगर कभी कोई ज़ेवर या कपड़ा पसंद आया हो तो अगर शौहर के पास ख़र्च न हो, तो उसकी फ़रमाइश न करो। न उसके मिलने पर हसरत करो, बिल्कुल मुंह से न निकालो, खुद सोचे कि अगर तुमने कहा, तो वह अपने दिल में कहेगा कि उसको हमारा कुछ ख़्याल नहीं, ठीक ऐसी बे–मौक़ा फ़रमाइश करती है, बल्कि अगर मियां अमीर हो, तब भी जहां तक हो सके खुद कभी किसी बात की फ़रमाइश ही न करो, हां, अगर वह खुद पूछे कि तुम्हारे वास्ते क्या लायें तो ख़ैर बतला दो कि फ़रमाइश करने से आदमी नज़रों से घट जाता है और उसकी बात हेठी हो जाती हो। किसी बात पर ज़िद और हठ न करो। अगर कोई बात तुम्हारे ख़िलाफ़ भी हो तो उस वक़्त जाने दो, फिर किसी दूसरे वक़्त मुनासिब तरीक़ से तै कर लेना। अगर मियां के यहां तक्लीफ़ से गुज़रे तो कभी जुबान पर न लाओ और हमेशा खुशी ज़ाहिर करती रहो कि मर्द को रंज न पहुंचे और तुम्हारे इस निबाह से उसका दिल बस तुम्हारी मुट्ठी में हो जाए। अगर तुम्हारे लिए कोई चीज़ लाये, तो पसंद न आये या न आये, हमेशा उस पर खुशी ज़ाहिर करो, यह न कहो कि यह चीज़ बुरी है, हमें पसंद नहीं है, इससे उसका दिल थोड़ा हो जाएगा और फिर कभी कुछ लाने को न चाहेगा और अगर उसकी तारीफ़ करके खुशी से ले लोगी तो दिल और बढ़ेगा और फिर उससे ज़्यादा चीज़ ला देगा।

कभी गुस्से में आकर ख़ाविंद की ना–शुक्री न करो और यों न कहने लगों कि मुए उजड़े घर में आकर मैंने देख लिया, बस सारी उम्र मुसीबत और तक्लीफ़ ही से कटी। मैया–बाबा ने मेरी क़िस्मत फोड़ दी कि मुझे

ऐसी बला में फंसा दिया, ऐसी आग में झोंक दिया, ऐसी बातों से दिल में जगह नहीं रहती।

हदीस शरीफ़ में आया है कि हज़रत रसूल सल्ल० ने फ़रमाया है कि मैंने दोज़ख़ में औरतें बहुत देखीं। किसी ने पूछा, ऐ अल्लाह के रसूल सल्ल० ! दोज़ख़ में औरतें क्यों ज़्यादा हो जाएंगी, तो प्यारे नबी सल्ल० ने फ़रमाया कि ये औरों पर लानत किया करती हैं और अपने ख़ाविंद की ना–शुक्री बहुत किया करती हैं। तो ख़्याल करो, यह ना–शुक्र कितनी बुरी चीज़ है। और किसी पर लानत करना या यों कहना, फ़लानी पर ख़ुदा की मार, ख़ुदा की फिटकार, फ़लानी का लानती चेहरा है, मुंह पर लानत बरस रही है, ये सब बातें बहुत बुरी हैं।

शौहर को किसी पर ग़ुस्सा आ गया तो ऐसी बात मत कहो कि ग़ुस्सा और ज़्यादा हो जाए, हर वक़्त मिज़ाज देख कर बात करो। अगर देखो कि इस वक़्त हंसी–दिल्लगी से ख़ुश हैं, तो हंसी–दिल्लगी करो और नहीं तो हंसी न करो। जैसा मिज़ाज देखो, वैसी बात करो। किसी बात पर तुमसे ख़फ़ा होकर रूठ गया तो तुम भी गाल फुला कर न बैठी रहो, बल्कि ख़ुशामद करके, माफ़ी–तलाफ़ी करके, हाथ जोड़ के, जिस तरह बने, उसको मना लो, चाहे तुम्हारा क़ुसूर न हो, शौहर ही का क़ुसूर हो, तब भी तुम हरगिज़ न रूठो और हाथ जोड़ कर क़ुसूर माफ़ कराने को अपनी इज़्ज़त समझो और ख़ूब समझ लो कि मियां–बीवी का मिलाप सिर्फ़ मुहब्बत से नहीं होता, बल्कि मुहब्बत के साथ मियां का अदब भी करना ज़रूरी है। मियां को अपने बराबर दर्जे में समझना बड़ी ग़लती है। मियां से हरगिज़ कभी कोई काम मत लो। अगर वह मुहब्बत में आकर कभी हाथ–पैर सिर दबाने लगे तो तुम न करने दो। भला सोचो कि अगर तुम्हारा बाप ऐसा करे तो क्या तुमको गवारा होगा ? फिर शौहर का रुत्बा तो उससे भी ज़्यादा है।

उठने–बैठने में, बात–चीत में, मतलब यह कि हर बात में अदब–तमीज़ को ध्यान में रखो और अगर ख़ुद तुम्हारा ही क़ुसूर हो तो ऐसे वक़्त ऐंठकर अलग बैठना तो और भी पूरी बेवक़ूफ़ी और नादानी है। ऐसी बातों से दिल कट जाता है।

जब परदेस से आए तो मिज़ाज पूछो, ख़ैरियत मालूम करो कि वहां किस तरह रहे, तक्लीफ़ तो नहीं हुई। हाथ–पांव पकड़ लो कि तुम थक गये होंगे। भूखा हो तो रोटी–पानी का इन्तिज़ाम करो। गर्मी का मौसम हो

तो पंखा झल कर ठंडा करो। मतलब यह है कि उसकी राहत व आराम की बातें करो। रूपये-पैसे की बात हरगिज़ न करने लगो कि हमारे वास्ते क्या लाये, कितना ख़र्च लाये, ख़र्च का बटवा कहां है ? देखें कितना है। जब वह खुद दे तो ले लो, यह हिसाब न पूछो कि तंख़्वाह तो बहुत है, इतने महीने में बस इतना ही लाये, तुम बहुत ख़र्च कर डालते हो, काहे में उठाया, क्या कर डाला ? कभी खुशी के वक़्त सलीक़े के साथ, बातों-बातों में पूछ लो तो ख़ैर, इसका कुछ हरज नहीं। अगर उसके मां-बाप ज़िंदा हों और रूपया-पैसा सब उन्हीं को दे दे, तुम्हारे हाथ पर न रखे, तो कुछ बुरा न मानो, बल्कि अगर तुमको दे दे तो भी अक्लमंदी की बात यह है कि तुम अपने हाथ में न लो और यह कहो कि उन्हीं को दो ताकि उनका दिल मैला न हो और तुमको बुरा न कहें कि बहू ने लड़के को अपने ही फंदे में कर लिया। जब तक सास-ससुर ज़िंदा रहें, उनकी ख़िदमत को, उनके ताबेदारी को फ़र्ज़ जानो और इसी में अपनी इज़्ज़त समझो और सास-ननदों से बिगाड़ हो जाने की यही जड़ है। खुद सोचो कि मां-बाप ने उसे पाला-पोसा और अब बुढ़ापे में इस आसरे पर उसकी शादी की कि हमको आराम मिले और जब बहू आयी तो डोली उतारते ही यह फ़िक्र करने लगी कि मियां आज ही मां-बाप को छोड़ दें, तो फिर जब मां को मालूम होता है कि यह बेटे को हमसे छुड़ाती है, तो फ़साद फैलता है, कुंबे के साथ मिल-जुल कर रहो, अपना मामला शुरू से अदब लिहाज़ का रखो, छोटों पर मेहरबानी, बड़ों को अदब किया करो।

अपना कोई काम दूसरों के ज़िम्मे न रखो और अपनी कोई चीज़ पड़ी न रहने दो कि फ़लानी उसको उठा लेगी। जो काम सास-ननदें करती हैं, तुम उसके करने में शर्म न करो। तुम खुद बे-कहे उनसे ले लो और कर दो। इससे उनके दिलों में तुम्हारी मुहब्बत पैदा हो जाएगी।

जब दो आदमी चुपके-चुपके बातें करते हों, तो उनसे अलग हो जाओ। और उसकी टोह मत लगाओ कि आपस में क्या बातें होती हैं और ख़ामख़ाह यह भी न ख़्याल करो कि कुछ हमारी ही बातें होती होंगी।

यह भी ज़रूर ख़्याल रखो कि ससुराल में बे-दिली से न रहो। अगरचे नया घर, नये लोग होने की वजह से जी न लगे, लेकिन जी को समझाना चाहिए, न कि वहां रोने बैठ गयीं और जब देखो तो बैठी रो रही हैं। जाते देर नहीं होती और आने का तक़ाज़ा शुरू कर दिया।

बात-चीत में ख़्याल रखो। न तो आप ही आप इतनी बक-बक

करो, जो बुरी लगे, इन इतनी कम कि मन्नत–ख़ुशामद के बाद भी न बोलो कि यह बुरा है और घमंड समझा जाता है।

अगर ससुराल में कोई बात बुरी लगे तो मैके में आकर चुग़ली न खाओ। ससुराल की ज़रा–ज़रा सी बात आकर मां से कहना और माओं का खोद–खोद का पूछना बड़ी बुरी बात है, इसी से लड़ाइयां पड़ती हैं और झगड़े खड़े होते हैं, इसके सिवा और कोई फ़ायदा नहीं होता।

शौहर की चीज़ों को ख़ूब सलीक़े और तमीज़ से रखो। रहने का कमरा ख़ूब साफ़ रखो, गंदा न रहे। बिस्तर मैला–कुचैला न हो, शिकन निकाल डालो। तकिया मैला हो गया हो, तो गिलाफ़ बदल डालो, न हो तो सी डालो। जब खुद उसके कहने पर तुमने किया तो इसमें क्या बात रही। लुत्फ़ तो इसी में है कि बे–कहे सब चीज़ें ठीक कर दो।

जो चीज़ें तुम्हारे पास रखी हों, उनको हिफ़ाज़त से रखो। कपड़े हों तो तह करके रखो यों ही मलगोंज के न डालो, कहीं इधर–उधर न डालो, क़रीने से रखा। कभी किसी काम में हीला–हवाला न करो, न कभी झूठी बातें बनाओ कि इससे एतबार जाता रहता है, फिर सच्ची बात का भी यक़ीन नहीं आता।

अगर गुस्से में कभी कुछ बुरा–भला कहे तो तुम बरदाश्त करो और बिल्कुल जवाब न दो। वह चाहे जो कुछ कहे, तुम चुपकी बैठी रहो। गुस्सा उतारने के बाद देखना कि खुद शर्मिंदा होगा और तुमसे कितना खुश रहेगा और फिर कभी इनशाअल्लाह तुम पर गुस्सा न करेगा और अगर तुम भी बोल उठीं तो बात बढ़ जाएगी, फिर नहीं मालूम, कहां तक नौबत पहुंचे।

ज़रा–ज़रा से शुबहे पर तोहमत न लगाओ कि तुम फ़लानी के साथ बहुत हंसा करते हो, वहां ज़्यादा जाया करते हो, वहां बैठे क्या करते हो कि इसमें मर्द अगर बे–क़ुसूर हुआ तो तुम ही सोचो कि उसको कितना बुरा लगेगा और अगर सचमुच उसकी आदत ही ख़राब है तो यह ख़्याल करो कि तुम्हारे गुस्सा करने और बकने–झकने से, कोई दबाव डाल कर, ज़बरदस्ती से करने से तुम्हारा, ही नुक़सान है। अपनी तरफ़ से दिल मैला करना हो तो करा लो। इन बातों से कहीं आदत छटती है। आदत छुड़ाना ही तो अक़्लमंदी से रहो। तंहाई में चुपके से समझाओ–बुझाओ। अगर समझाने–बुझाने और तंहाई में शर्म दिलाने से भी आदत न छूटे तो ख़ैर सब्र करके बैठी रहो, लोगों के सामने गाती मत फिरो और उसको रूसवा मत करो, न गर्म होकर उसको नीचा दिखाना चाहो कि इसमें चिढ़ होती

है और गुस्से में आकर ज़्यादा करने लगता है। अगर तुम गुस्सा करोगी और लोगों के सामने बक-झक कर रूसवा करोगी, तो जितना तुमसे बोलता था, उतना भी न बोलेगा, फिर उस वक़्त रोती फिरोगी और यह खूब याद रखो कि मर्दों को खुदा ने शेर बनाया है, दबाव और ज़बरदस्ती से हरगिज़ क़ाबू में नहीं आ सकते। उनको क़ाबू में करने का बहुत आसान तरीक़ा खुशामद और ताबेदारी है, उन पर गुस्सा और गर्मी करके दबाव डालना बड़ी ग़लती और नादानी है, अगरचे इसका अंजाम अभी समझ में नहीं आता, लेकिन फ़साद की जड़ पकड़ गयी तो कभी न कभी ज़रूर इसका ख़राब नतीजा पैदा होगा। लखनऊ में एक बीवी के मियां बड़े बद-चलन हैं। दिन-रात बाहर ही बाज़ारी औरतों के पास रहा करते हैं, घर में बिल्कुल नहीं आते और ख़ास बात यह है कि वह बाज़ारी फ़रमाइशें करते हैं कि आज पुलाव पके, आज फ़्लानी चीज़ पके और वह बेचारी दम नहीं मारती। जो कुछ मियां कहला भेजते हैं, रोज़ाना खाना बाहर भेज देती हैं और कभी कुछ सांस नहीं लेती हैं। देखो सारे लोग उस बीवी को कैसी वाह-वाह करते हैं और खुदा के यहां उसको जो रूत्बा मिलेगा, वह अलग रहा और जिस दिन मियां को अल्लाह तआला ने हिदायत दी और बद-चलनी छोड़ दी, उसी दिन से बस बीवी के गुलाम हो ही जाएंगे।

बच्चों को पालने-पोसने का तरीक़ा

जानना चाहिए कि यह बात बड़े ध्यान देने की है कि बचपन में जो भली-बुरी आदत पड़ जाती है, वह उम्र भर नहीं जाती, इसलिए बचपन से जवान होने तक इन बातों का तर्तीब से ज़िक्र किया जाता है—

1. नेक बख़्त दीनदार औरतों का दूध पिलाएं, दूध का बड़ा असर होता है।

2. औरत की आदत है कि बच्चों को कहीं सिपाही से डराती हैं, कहीं और डरावनी चीज़ों से, यह बुरी बात है। इससे बच्चे का दिल कमज़ोर हो जाता है।

3. उसके दूध पिलाने के लिए और खाना खिलाने के लिए वक़्त तै कर लो कि वह तन्दुरूस्त रहे।

4. उसको साफ़-सुथरा रखो कि इससे तन्दुरूस्ती रहती है।

5. उसका बहुत बनाव-सिगार मत करो।

6. अगर लड़का हो तो उसके सिर पर बाल मत बढ़ाओ।

7. अगर लड़की है, उसको जब तक पर्दे में बैठने लायक़ न हो जाए, ज़ेवर मत पहनाओ। इससे एक तो उसकी जान का ख़तरा है, दूसरे बचपन ही से ज़ेवर का शौक़ दिल में होना अच्छा नहीं।

8. बच्चों के हाथों ग़रीबों को खाना–कपड़ा पैसा और ऐसी चीज़ें दिलवाया करो। इसी तरह खाने–पीने की चीज़ें, उनके भाई बहनों को या और बच्चों का बंटवारा करो, ताकि उनको दान करने की आदत हो, मगर यह याद रखो कि तुम अपनी चीज़ें उनके हाथ से दिलवाया करो। खुद जो चीज़ शुरू से उन ही की हो, उसका दिलवाना किसी को दुरूस्त नहीं।

9.ज़्यादा खाने वालों की बुराई उसके सामने किया करो, मगर किसी का नाम लेकर नहीं, बल्कि इस तरह कि जो कोई बहुत खाता है, लोग उसको हब्शी कहते हैं, उसको बैल जानते हैं।

10. अगर लड़का हो, सफ़ेद कपड़े से लगा व उसमें पैदा करो और रंगीन और तकल्लुफ़ के कपड़े से उसको नफ़रत दिलाओ कि ऐसे कपड़े लड़कियां पहनती हैं, तुम माशाअल्लाह मर्द हो। हमेशा उसके सामने ऐसी बातें किया करो।

11. अगर लड़की हो, जब भी मांग–चोटी और बहुत तकल्लुफ़ के कपड़ों की उसको आदत मत डालो।

12. उसकी सब ज़िदें पूरी मत करो कि इससे मिज़ाज बिगड़ जाता है।

13. चिल्ला कर बोलने से रोको, ख़ास कर अगर लड़की हो तो चिल्लाने पर ख़ूब डांटो, वरना बड़ी होकर वही आदत हो जाएगी।

14. जिन बच्चों की आदतें ख़राब हैं या पढ़ने–लिखने से भागते हैं, या तकल्लुफ़ के खाने के या कपड़े के आदी हैं, उनके पास बैठने से, उन के साथ खेलने से उनको बचाओ।

15. इन बातों से उनको घिन दिलाती रही—ग़ुस्सा, झूठ बोलना, किसी को देखकर जलना या लालच करना, चोरी करना, चुग़ली करना, अपनी बात की पच करना, ख़ामख़ाह इसको बनाना, बे–फ़ायदा बहुत बातें करना, बे–बात हंसना, धोखा देना, भली–बुरी बात न सोचना और जब इन बातों में से कोई बात हो जाए, तुरन्त उसको रोको, उस पर तंबीह करो।

16. अगर कोई चीज़ तोड़–फोड़ दे या किसी को मार बैठे, मुनासिब

सज़ा दो, ताकि फिर ऐसा न करे। ऐसी बातों में प्यार–दुलार हमेशा बच्चे को खो देता है।

17. बहुत सवेरे मत सोने दो।

18. सवेरे जागने की आदत डालो।

19. जब सात वर्ष की उम्र हो जाए, नमाज़ की आदत डालो।

20. जब स्कूल (मक्तब) में जाने के क़ाबिल हो जाए, सबसे पहले क़ुरआन मजीद पढ़वाओ।

21. जहां तक हो सके, दीनदार उस्ताद से पढ़वाओ।

22. स्कूल जाने में कभी रियायत न करो।

23. किसी–किसी वक़्त उनको भले लोगों के क़िस्से सुनाया करो।

24. उनको ऐसी किताबें मत देखने दो, जिनमें आशिक़ी–माशूक़ी की बातें या शरअ के ख़िलाफ़ मज़मून या और बेहूदा क़िस्से या ग़ज़लें वग़ैरह हों।

25. ऐसी किताबें पढ़वाओ, जिन में दीन की ज़रूरी कारिवाई आ जाए।

26. स्कूल से आने के बाद किसी क़दर दिल बहलाने के लिए उसको खेलने की इजाज़त दो ताकि उसकी तबीयत फीकी न हो जाए, लेकिन खेल ऐसा हो, जिसमें गुनाह न हो चोट लगने का डर न हो।

27. आतशबाज़ी या बाजा या फ़िज़ूल चीज़ें मोल लेने के लिए पैसे मत दो।

28. खेल–तमाशे दिखाने की आदत मत डालो।

29. औलाद को ज़रूर कोई ऐसा हुनर सिखला दो, जिससे ज़रूरत और मुसीबत के वक़्त चार पैसे हासिल कर के अपना और अपने बच्चों का गुज़ारा ,कर सके।

30. लड़कियों को इतना लिखना–पढ़ना सिखला दो कि ज़रूरी ख़त और घर का हिसाब–किताब लिख सकें।

31. बच्चों को आदत डालो कि अपने हाथ से काम किया करें। अपाहिज और सुस्त न हो जाएं। उनको कहो कि रात को बिछौना अपने हाथ से बिछाएं। सुबह को सवेरे उठ कर तह करके सावधानी से रख दें। कपड़ों की गठरी अपने इंतिज़ाम में रखें। उघड़ा–फटा ख़ुद सी लिया करें। कपड़े चाहे मैले हों, चाहे उजले हों, ऐसी जगह रखें, जहां कीड़े या चूहे का डर न हो। धोबिन को ख़ुद गिन कर दें और लिख लें और गिनकर

पड़ताल करें।

32. लड़कियों को ताकीद करो कि जो ज़ेवर तुम्हारे बदन पर है, रात को सोने से पहले और सुबह को जब उठो, देख–भाल लिया करो।

33. लड़कियों से कहो कि जो काम खाने–पकाने, सोने, पिरोने, कपड़े रंगने, चीज़ बनाने का घर में हुआ करे, उसमें ग़ौर करके देखा करो कि किस तरह हो रहा है।

34. जब बच्चे से कोई बात ख़ूबी की ज़ाहिर हो, उस पर शाबाशी दो, प्यार करो, बल्कि उसको कुछ इनाम दो, ताकि उसका दिल बढ़ और जब उसकी कोई बुरी बात देखो, पहले तो उसको अकेले में समझाओ कि देखो, बुरी बात है, देखने वाले दिल में क्या कहते होंगे और जिस–जिस को ख़बर होगी, वह दिल में क्या कहेगा, ख़बरदार, फिर मत करना, अच्छे लड़के ऐसा नहीं करते और फिर वही काम करे तो मुनासिब सज़ा दो।

35. मां को चाहिए कि बच्चे को बाप से डराती रहे।

36. बच्चे को कोई काम छिपा कर मत करने दो, खेल हो या खाना हो या कोई और काम हो। जो काम छिपा कर करता है, समझ जाओ कि वह उसको बुरा समझता है, सो अगर वह बुरा है, तो उससे छुड़वाओ और अगर अच्छा है जैसे खाना–पीना, तो उससे कहो कि सबके सामने खाये– पिये।

37. कोई काम मेहनत का उसके ज़िम्मे मुक़र्रर कर दो, जिससे सेहत और हिम्मत रहे, सुस्ती न आने पाये, जैसे लड़कों के लिए डंड, मुगदर करना, एक–आध मील चलना और लड़कियों के लिए चक्की या चर्ख़ा चलाना ज़रूरी है। इसमें यह भी फ़ायदा है कि इन कामों को ऐब न समझेंगे।

38. चलने में ताकीद करो कि बहुत जल्दी न चले, निगाह ऊपर उठा कर न चले।

39. उसको नरमी अपनाने की आदत डालो, ज़ुबान से, चाल से, बर्ताव से, शेख़ी न बघारने पाये, यहां तक कि अपने साथी बच्चों में बैठ कर अपने कपड़े, मकान या ख़ानदान या किताब व क़लम–दावात, तख़्ती तक की तारीफ़ न करने पाये।

40. कभी–कभी उसको दो–चार पैसे दे दिया करो कि अपने मर्ज़ी के मुताबिक़ ख़र्च किया करो, मगर उसको यह आदत डालो कि कोई चीज़ तुमसे छिपा कर न ख़रीदे।

41. उसको खाने का तरीक़ा और महफ़िल में उठने–बैठने का तरीक़ा सिखाओ, थोड़ा–थोड़ा हम लिख देते हैं।

खाने का तरीक़ा

दाहिने हाथ से खाओ। शुरू में बिस्मिल्लाह पढ़ लो। अपने सामने से खाओ, औरों से पहले मत खाओ। खाने को घूर कर मत देखो। खाने वालों की तरफ़ मत देखो। बहुत जल्दी-जल्दी मत खाओ। ख़ूब चबाकर खाओ, जब तक एक-एक कौर न निगल लो, दूसरा कौर मुंह में मत रखो। शोरबा वग़ैरह कपड़े पर टपकने न पाये। उंगलियां ज़रूरत से ज़्यादा सनने न पायें।

महफ़िल में उठने-बैठने का तरीक़ा

जिससे मिलो, अदब से मिलो। नर्मी से बोलो। महफ़िल में थूको नहीं। वहां नाक मत साफ़ करो। अगर ऐसी ज़रूरत हो तो वहां से अलग चली जाओ। वहां अगर जम्हाई या छींक आ जाये, मुंह पर हाथ रखो। आवाज़ पस्त करो। किसी की तरफ़ पांव मत करो। ठोढ़ी के नीचे हाथ दे कर मत बैठो। उंगलियां मत चटख़ाओ। बे-ज़रूरत बार-बार किसी की तरफ़ मत देखो। अदब से बैठी रहो। बहुत मत बोलो। बात-बात पर क़सम मत खाओ, जहां तक मुम्किन हो, खुद कलाम मत शुरू करो। जब दूसरा आदमी बात करे, ख़ूब ध्यान से सुनो ताकि उसका दिन न बुझे, हां, अगर गुनाह की बात हो, मत सुनो या तो मना कर दो या वहां से उठ जाओ। जब तक कोई आदमी बात पूरी न करे, बीच में मत बोलो। जब कोई आये और महफ़िल में जगह न हो, ज़रा अपनी जगह से खिसक जाओ, मिल-मिलकर बैठ जाओ कि जगह हो जाए। जब किसी से मिलो या रुख़्सत होने लगी तो 'अस्सलामु अलैकुम' कहो और जवाब में 'व अलैकम अस्सलाम' कहो और तरह-तरह के लफ़्ज़ मत कहो।

हुकूक़ का बयान

मां–बाप के हुकूक़—1. इनको तक्लीफ़ न पहुंचाओ, भले ही इनकी तरफ़ से कुछ ज़्यादती हो।

2. जुबान से बर्ताव से, इनकी इज़्ज़त करो।

3. जायज़ कामों में इनका कहा मानो।

4. अगर इनको ज़रूरत हो, माल से इनकी ख़िदमत करो, भले ही वे काफ़िर हों। मां–बाप के मरने के बाद उनके ये हुकूक़ हैं :—

1. इनके लिए मग़्फ़िरत और रहमत की दुआ करता रहे। नफ़्ल इबादतों और ख़ैरात का सवाब उनको पहुंचाता रहे।

2. उनके मिलने वालो के साथ एहसान और ख़िदमत से अच्छी तरह पेश आये।

3. उनके ज़िम्मे जो क़र्ज़ हो, या किसी जायज़ काम की वसीयत कर गए हैं, और अल्लाह तआला ने क़ुदरत (सामर्थ्य) दी हो, उसको अदा करे।

4. उनके मरने के बाद शरअ के ख़िलाफ़ रोने–चिल्लाने से बचे, वरना उनकी रूह को तक्लीफ़ होगी और दादा–दादी और नाना–नानी का हुक्म शरीअत में मां–बाप जैसा है। उनके हुकूक़ भी मां–बाप जैसे समझने चाहिए। इसी तरह खाला और मामूं, मां की तरह और चचा–फूफी बाप की तरह है, जैसा कि हदीस के इशारे से मालूम होता है।

अन्ना के हुकूक़—ये हैं :—

1. इसके साथ अदब से पेश आना।

2. अगर उसके माल की ज़रूरत हो और अपनी गुंजाइश हो, तो उसका ख़्याल करना।

सौतेली मां—चूंकि बाप का दोस्त है और बाप के दोस्त के साथ एहसान करने का हुक्म आया है, इसलिए सोतेली मां के भी कुछ हुकूक़ हैं, जैसा अभी ज़िक्र किया गया।

बड़ा भाई—हदीस के मुताबिक़ बाप जैसा है, इसलिए मालूम हुआ कि छोटा भाई औलाद जैसा है, पस उनके आपस में वैसे ही हुकूक़ होंगे

---

1. हक का बहुवचन

जैसे मां–बाप और औलाद के हैं। इसी तरह बड़ी बहन और छोटी बहन को समझ लेना चाहिए।

रिश्तेदारों को हुक़ूक़—1. अपने सगे अगर मुहताज हों और खाने–कमाने की क़ुदरत न रखते हों, तो गुंजाइश के मुताबिक़ उनके ज़रूरी ख़र्च की ख़बरगीरी रखो।

2. कभी–कभी उनसे मिलते रहे।

3. उनसे ताल्लुक़ ख़त्म न करे, बल्कि अगर कुछ भी उनसे तकलीफ़ भी पहुंचे तो सब बेहतर है।

ससुराली रिश्ते का ज़िक्र भी अल्लाह तआला ने क़ुरआन मजीद में फ़रमाया है। इससे मालूम हुआ कि सास और ससुर और साले और बहनोई और दामाद और बहू और बीवी की पहली औलाद और इसी तरह मियां की पहली औलाद का भी कुछ हक़ होता है, इसलिए इन रिश्तों में भी रियायत एहसान व अख़्लाक़ को औरों से ज़्यादा रखना चाहिए।

आम मुसलमानों के हुक़ूक़—1. मुसलमान मुसलमान की ग़लती को माफ़ करे।

2. उसके रोने पर दया करे।
3. उसके ऐब को ढंके।
4. उसके उज़्र को क़ुबूल करे।
5. उसकी तक्लीफ़ को दूर करे।
6. हमेशा उसका भला चाहे।
7. उसकी मुहब्बत निबाहे।
8. उसके अह्द का ख़्याल रखे।
9. बीमार हो तो पूछे।
10. मर जाये तो दुआ करे।
11. उसकी दावत क़ुबूल करे।
12. उसका तोहफ़ा क़ुबूल करे।
13. उसके एहसान के बदले एहसान करे।
14. उसकी नेमत का शुक्र अदा करे।
15. ज़रूरत के वक़्त उसकी मदद करे।
16. उसके बाल–बच्चों की हिफ़ाज़त करे।
17. उसका काम कर दिया करे।
18. उसकी बात को सुने।

19. उसकी सिफ़ारिश क़ुबूल करे।

20. उसको मुराद से ना उम्मीद न करे।

21. वह छींककर अल्हम्दु लिल्लाह कहे तो जवाब में यर्ह मुकल्लाह कहे।

22. उसकी गुम हुई चीज़ अगर मिल जाए तो उसके पास पहुंचा दे।

23. उसके सलाम का जवाब दे।

24. नर्मी और अच्छे अख़्लाक़ के साथ उससे बात चीत करे।

25. उसके साथ एहसान करे।

26. अगर वह उसके भरोसे पर क़सम खा बैठे तो उसको पूरा करे।

27. अगर उस पर कोई ज़ुल्म करता हो तो उसकी मदद करे। अगर वह किसी पर ज़ुल्म करता हो, रोक दे।

28. उसके साथ मुहब्बत करे, दुश्मनी न करे।

29. उसको रूसवा न करे।

30. जो बात अपने लिए पसंद करे, उसके लिए भी पसंद करे।

31. मुलाक़ात के वक़्त उसको सलाम करे और मर्द से मर्द और औरत से औरत मुसाफ़ा भी करे, तो और बेहतर है।

32. अगर आपस में, कभी रंजिश हो जाए तो तीन दिन से बातचीत छोड़े नहीं।

33. उस पर बद–गुमानी न करे।

34. उससे जले नहीं न बैर–भाव रखे।

35. उसको अच्छी बात बतलाये, बुरी बात से मना करे।

36. छोटों पर रहम, बड़ों का अदब करे।

37. दो मुसलमानों में मन मुटाव हो जाये, उनकी आपस में सुलह करा दे।

38. उसकी ग़ीबत न करे।

39. उसको किसी तरह का नुक़सान न पहुंचाये, न माल में, न आबरू में।

40. उसको उठा कर उसकी जगह न बैठे।

पड़ोसी के हुक़ूक़—1. उसके साथ एहसान और रियायत से पेश आये।

2.उसकी बीवी–बच्चों की आबरू की हिफ़ाज़त करे।

3. कभी–कभी उसके घर तोहफ़ा वग़ैरह भेजते रहे, ख़ास कर जब

कि वह उपवास का मारा हो, तो ज़रूर थोड़ा बहुत खाना उसको दे।

4. उसको तक्लीफ़ न दे। हल्की-हल्की बातों में उससे न उलझे और जैसे शहर में पड़ोसी होता है, इसी तरह सफ़र में भी होता है, यानी सफ़र का साथी, जो घर से साथ हुआ हो या रास्ते में संयोग से उस का साथ हो गया हो, उसका हक़ भी पड़ोसी जैसा ही है। उसके हुक़ूक़ का ख़ुलासा यह है कि उसके आराम को अपने आराम से बड़ा रखे। कुछ आदमी रेल या बहली में दूसरी सवारियों के साथ बहुत आपा-धापी करते हैं, यह बहुत बुरी बात है।

इसी तरह जो दूसरों का मुहताज हो—जैसे यतीम और बेवा या बेकार और बूढ़ा या मिस्कीन व बीमार और हाथ-पांव से मजबूर या मुसाफ़िर या भिखारी, उन लोगों के हुक़ूक़ ज़्यादा हैं—

1. इन लोगों की ख़िदमत माल से करना।

2. इन लोगों का काम अपने हाथ से कर देना।

3. इन लोगों का दिल रखना, तसल्ली करना, इनकी ज़रूरत और मांग को रद्द न करना।

कुछ ऐसे हुक़ूक़ जो सिर्फ़ आदमी होने की वजह से हैं चाहे वे मुसलमान न हों। वे इस तरह है :—

1. बे-ख़ता किसी को जान या माल की तक्लीफ़ न दे।

2. बे-वजह शरअी किसी के साथ बद-ज़ुबानी न करे।

3. और किसी को मुसीबत और उपवास और रोग में फंसा देखे, उसकी मदद करे, खाना-पीना दे दे, दवा-दारू कर दे।

4. जिस सूरत में शरीअत ने सज़ा की इजाज़त दी है, उसमें ज़ुल्म व ज़्यादती न करे।

जानवरों के हुक़ूक़—1. जिस जानवर से कोई फ़ायदा मुताल्लिक़ न हो, उसको क़ैद न करें, ख़ास तौर से बच्चों को घोंसलों से निकाल लाना और उनके मां-बाप को परेशान करना बड़ा ज़ुल्म है।

2. जो जानवर खाने के क़ाबिल हैं, उनको भी सिर्फ़ दिल बहलाने के तौर पर क़त्ल न करे।

3. जो जानवर अपने काम में हैं, उनके खाने-पीने और आराम व ख़िदमत का पूरे तौर से इन्तिज़ाम करे। उनकी ताक़त से ज़्यादा उनसे काम न ले, उनको हद से ज़्यादा न मारे।

4. जिन जानवरों को ज़िब्ह करना हो या तकलीफ़ पहुंचाने वाला होने की वजह से क़त्ल करना हो, तेज़ औज़ार से जल्दी काम तमाम कर दो उसको तड़पाये नहीं, भूखा–प्यासा रख कर जान न ले।

ज़रूरी बात

अगर किसी आदमी के हक़ में कुछ कमी हो गयी हो, तो उनमें जो हक़ अदा करने के क़ाबिल हों, अदा करे, या माफ़ कराये, मिसाल के तौर पर किसी का क़र्ज़ रह गया था या किसी की ख़ियानत वग़ैरह की थी और जो सिर्फ़ माफ़ कराने के क़ाबिल हों, उनको सिर्फ़ माफ़ कराये, जैसे ग़ीबत वग़ैरह की थी या मारा था और अगर किसी वजह से हक़दारों से न माफ़ करा सकता है, न अदा कर सकता है तो उन लोगों के लिए हमेशा बख़्शिश की दुआ करता रहे। अजब नहीं कि अल्लाह तआला क़ियामत के दिन उन लोगों को राज़ी कर के माफ़ करा दें, अगर इसके बाद भी जब मौक़ा अदा करने का या माफ़ कराने का हो, उस वक़्त उसमें बे–परवाही न करे और जो हुक़ूक़ ख़ुद उसके औरों के ज़िम्मे रह गये हों, जिनसे वसूली की उम्मीद हो, नर्मी के साथ उनसे वसूल करें और जिनसे उम्मीद न हो या वे हुक़ूक़ वसूल करने के क़ाबिल न हों जैसे ग़ीबत वग़ैरह, सो अगर्चे क़ियामत में उनके बदले में नेकियों के मिलने की उम्मीद है, मगर माफ़ कर देने में और ज़्यादा सवाब आया है, इससे बिल्कुल माफ़ कर देना ज़्यादा बेहतर है, ख़ासकर जब कोई आदमी मन्नत–ख़ुशामद करके माफ़ी चाहे।

कुछ मस्अले, जो बाद में याद आये

मस्अला 1—जहां हराम चीज़ ज़्यादा हो, बे पूछे खाना वहां दुरुस्त नहीं, अगर पूछने से यह मालूम हो जाए कि यह ख़ास चीज़ हलाल की है, तो अगर बतलाने वाला नेक और दीनदार है तो बे–खटके उस पर अमल दुरुस्त है और अगर वह बुरा आदमी है या उसका हाल नहीं मालूम कि अच्छा है, या बुरा तो उसका हुक्म यह है कि अगर दिल यही गवाही दे कि यह आदमी सच्चा है तो अमल दुरुस्त है और जो दिल गवाही न दे तो अमत दुरुस्त नहीं। जैसे आमों के आने से पहले किसी ने फ़सल बेच डाली तो उसको तुम पढ़ चुके हो कि हराम हैं, तो बस्ती में इसका रिवाज ज़्यादा

है और फलने के बाद पका है, वह दुरूस्त है और बे-पूंछे खाना दुरूस्त है।

मस्अला 2—बीमारी को बुरा कहना मना है।

मस्अला 3—अगर कोई काफ़िर औरत तुम्हारे पास ख़ुशी से मुसलमान होने आये और उसके मुसलमान करने में किसी झगड़े-फ़साद का डर न हो तो मुसलमान कर लो और तरीक़ा मुसलमान करने का यह है कि उससे कहलवाओ— لَا اِلٰہَ اِلَّا اللّٰہُ مُحَمَّدٌ رَّسُوْلُ اللّٰہِ

लाइलाह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह

यानी कोई पूजने के लायक़ नहीं, सिवाए अल्लाह के और मुहम्मद सल्ल० सच्चे भेजे हुए (रसूल) हैं अल्लाह के और सच्चा जानती हूं मैं सब पैग़म्बरों को और खुदा की सब किताबों को और मानती हूं फ़रिश्तों को और क़ियामत को और तक़्दीर को। मैंने छोड़ दिया अपना पहला दीन और क़ुबूल किया मैंने इस्लाम और मैं पांचों वक़्त की नमाज़ पढ़ा करूंगी और रमज़ान के रोज़े रखा करूंगी और अगर माल हुआ तो ज़कात दूंगी। अगर ज़्यादा ख़र्च न होगा तो हज करूंगी और अल्लाह और रसूल सल्ल० के सब हुक्म बजा लाऊंगी और जितनी चीज़ों से अल्लाह और रसूल सल्ल० ने मना किया है, सबसे बची रहूंगी। 'ऐ अल्लाह, मुझको दीन व ईमान पर साबित रखियों और दीन के कामों में मेरी मदद कीजियो। फिर जितने मौजूद हों सब अल्लाह से दुआ करें कि ऐ अल्लाह ! इसके इस्लाम को क़ुबूल कर और हमको भी इस्लाम पर क़ायम रख और ईमान पर ख़ात्मा कर।

मस्अला 4—लगाई बुझाई मत करो।

मस्अला 5—सुनी हुई बात का एतबार मत करो।

मस्अला 6—कुछ औरतें यह समझती हैं कि नापाक कपड़ा धोकर जब तक सूख न जाये, वह पाक नहीं होता और उससे नमाज़ दुरूस्त नहीं, यह बिल्कुल ग़लत है। कुछ औरतें इस मस्अले के न जानने की वजह से नमाज़ क़ज़ा कर देती हैं और फिर वक़्त निकले पीछे कौन पढ़ता है। ऐसा मत समझो, गीले से भी बे-तकल्लुफ़ नमाज़ दुरूस्त है।

मस्अला 7—कुछ औरतों का एतबार है कि जिसके आठवां बच्चा पैदा हो तो उसको एक चर्खा देना चाहिये, वरना बच्चे पर ख़तरा है, यह सिर्फ़ बकवास है, तौबा करनी चाहिए।

मस्अला 8—कुछ औरतें चेचक को कोई भूत-आसेब समझती हैं और इस वजह से इस घर में बहुत बखेड़े-से करती हैं, ये सब बेकार बातें हैं,

तौबा करनी चाहिए।

मस्अला 9—जिस कपड़े में से बांहें या सिर के बाल या गरदन झलकती हो, उससे नमाज़ नहीं होती।

मस्अला 10—जो फ़क़ीर मेहनत–मज़दूरी कर सकता हो और फिर भीख मांगने का पेशा अख़्तियार कर ले, उसको भीख देना दुरूस्त नहीं।

मस्अला 11—रेल के सफ़र में अगर पानी न मिले तो तयम्मुम करके नमाज़ पढ़ो। नमाज़ क़ज़ा मत करो।

मस्अला 12—कुछ औरतें ग़रीब मज़दूरों से परदा नहीं करतीं, बड़ा गुनाह है।

मस्अला 13—परायी चीज़ चाहे कैसी ही हल्के दामों की हो, अगर मालिक की इजाज़त के बग़ैर हरगिज़ मत बरतो और जब बरतो उसको छोड़कर मत उठ जाओ, मालिक के सुपुर्द कर दो कि देखो बहन, तुम्हारी क़ैंची या सूई रखी है।

मस्अला 14—रेल की सवारी में किराए का और महसूल का सामान ले जाने का क़ायदा रेल वालों की तरफ़ से मुक़र्रर है। इसके ख़िलाफ़ करना या धोखा देना या असल बात को छिपाना दुरूस्त नहीं, जैसे वहां यह क़ायदा है कि जो मुसाफ़िर सबसे सस्ते दर्जे में सफ़र करे जिसको तीसरा दर्जा (और अब दूसरा) कहते हैं, उसको नाश्ते का खाना और ओढ़ना–बिछौना और इन चीज़ों के अलावा 25 सेर बोझ का अस्बाब ले जाने की इजाज़त है,[1] इस पर महसूल नहीं पड़ता, सिर्फ़ अपना किराया देना पड़ता है और अगर थोड़ा सा भी इससे बढ़ जाये तो उसको रेल पर तुलवा कर जितने महसूल का वहां क़ायदा है, देना चाहिए और यह पचीस उस सेर से है जो सेर अस्सी रूपये के बराबर होता है, अब अगर कोई आदमी 26 सेर या 27 सेर अस्बाब भी बे–तुलवाये साथ ले जाये, चाहे रेल वाले उसको न टोकें मगर वह अल्लाह तआला के नज़दीक गुनाहगार होगा। और कुछ यों करते हैं कि अस्बाब तुलने से तीस सेर निकला। बाबू ने कहा हम बीस सेर लिख देंगे, हमको इतना घूस दो, इसमें दो गुनाह होंगे। एक तो ज़्यादा सामान ले जाना और महसूल का न देना, दूसरा घूस देना।

इसी तरह वहां यह क़ायदा है कि जो बच्चा तीन वर्ष से कम हो, उसका किराया माफ़ है और जो पूरे तीन साल का हो, उसका किराया है और फिर बारह वर्ष से कम आधा है। जब पूरे बारह वर्ष का हो, तब पूरा हो,

---

1. अब सब मिलाकर 36 किलाग्राम तक का इजाज़त है।

तो अगर किसी के पास तीन वर्ष का बच्चा हो और वह बे-किराया दिए हुए ले जाएगा तीन वर्ष से कम का उसको बतला दे, तो उसको गुनाह होगा। इसी तरह अगर बारह वर्ष के बच्चे को कम बतलाकर आधे किराये में ले जाना चाहें तो उसको भी गुनाह होगा और इन सब सूरतों में क़ियामत के दिन बजाए पैसों-रूपयों के नेकियां देनी पड़ेंगी, या इन रेल वालों के गुनाह उसके सिर पर धरे जायेंगे।

मस्अला 15—आज जो अंग्रेज़ी बहुत पढ़ते हैं और उसमें कुछ बातें ऐसी-ऐसी लिखी हैं जो दीन व ईमान के खिलाफ़ हैं और दीन का इल्म उन पढ़ने वालों को होता नहीं, इसलिए बहुत लड़के ऐसे हो जाते है कि उनके दिल में ईमान नहीं रहता और मुंह से भी ऐसी बातें कह डालते हैं, जिन से ईमान जाता रहता है। अगर ऐसे लड़कों से कोई मुसलमान लड़की ब्याह गयी, शरअ से वह निकाह नहीं होता, और जब निकाह ही नहीं होता तो सारी उम्र बुरा काम होता है, उसका वबाल मां-बाप पर दुनिया में भी पड़ेगा और आख़िरत में भी अज़ाब का बहुत डर है इसलिए, जरूरी है कि अपनी लड़की ब्याहने के वक़्त जिस तरह दामाद के हसब-नसब घर-बार की खोज करते हैं, इससे ज़्यादा उसकी छानबीन कर लिया करे कि वह दीनदार भी है या नहीं। अगर दीनदारी न मालूम हो तो हरगिज़ लड़की न दें। ग़रीब दीनदार हज़ार दर्जे बेहतर है, बद-दीन अमीर से और एक बात यह भी देखी है कि जो आदमी दीनदार नहीं होता, वह बीवी का हक़ भी नहीं समझता और उससे लगाव भी नहीं रखता, बल्कि कहीं-कहीं तो यह हाल है कि कौड़ी-पैसा से भी तंग रखता है। फिर जब चैन न नसीब हुआ तो निरी अमीरी के नाम को लेकर क्या चाटेंगे।

मस्अला 16—यह जो मशहूर है कि क़ुतुब (ध्रुव) तारा की तरफ़ पांव न करे, बिल्कुल ग़लत है। इस तारे का शरअ में कोई अदब नहीं ।

मस्अला 17—इसी तरह यह जो मशहूर है कि रात के वक़्त पेड़ सोया करते हैं, यह भी बिल्कुल ग़लत है।

मस्अला 18—इसी तरह यह जो मशहूर है कि चारपाई पर नमाज़ पढ़ने से बन्दर हो जाता है, बिल्कुल बेकार बात है। अगर चारपाई ख़ूब कसी हुई हो, उस पर नमाज़ दुरूस्त है। अगर वह नापाक हो, तो कोई पाक कपड़ा उस पर बिछा ले लेकिन बे-ज़रूरत उस पर नमाज़ पढ़ने से ख़ामख़ाह गुल-शोर होता है।

मस्अला 19—इसी तरह यह मशहूर है कि पहली उम्मतों के कुछ लोग बंदर हो गये थे, ये बन्दर उन्हीं की नस्ल के हैं, यह भी ग़लत है।

हदीस शरीफ़ में आया है कि वे बंदर सब मर गये थे, उनकी नस्ल नहीं चली और यह जानवर बन्दर पहले से था, यह नहीं कि बन्दर उन्हीं से शुरू हुए।

मस्अला 20—क़ुरआन मजीद में जो ग़लती निकले, उसको तुरंत सही कर लो या सही करा लो, नहीं तो फिर याद का भरोसा नहीं, हमेशा ग़लत पढ़ा करोगी, जिससे गुनाहगार होगी।

मस्अला 21—यह क़ायदा है कि अगर क़ुरआन मजीद किसी के हाथ से गिर पड़े, तो उसके बराबर अनाज तौल कर देती हैं, यह कोई शरीअत का हुक्म नहीं है। पहले बुज़ुर्गों ने शायद तंबीह के वास्ते यह क़ायदा मुक़र्रर किया होगा ताकि आगे को ज़्यादा ख़्याल रहे। सच तो यह है कि बड़ी अच्छी मसलहत है, लेकिन क़ुरआन मजीद को बे–ज़रूरत तराज़ू के पल्ले में रखना यह भी अदब के ख़िलाफ़ है, इसलिए अगर अनाज देना हो तो वैसे ही जितनी हिम्मत हो दे दे, क़ुरआन मजीद को न तौले।

मस्अला 22—कुछ औरतें ऐसा करती हैं कि डोले में बैठने के वक़्त ज़ाहिर करती हैं कि एक सवारी है और बैठ लेती हैं दो–दो, यह धोखा और हराम है, हां, कहारों से कह दे, अगर वे ख़ुशी से उठा लें, तो कुछ हरज नहीं, वरना उन पर ज़बरदस्ती नहीं।

मस्अला 23—अक्सर औरतें एक सन्दूक़ सिर पर लिए फिरा करती हैं। इस संदूक़ में तरह–तरह के नक़्शे और तस्वीरें बनी हुई हैं और सन्दूक़ के तख़्ते में उनके देखने के वास्ते आईना लगा हुआ होता है। पैसा–दो पैसा लेकर दिखाती फिरती है, तो जिस सन्दूक़ में जानदार चीज़ की एक भी तस्वीर हो, उसकी सैर करना मना है। इसी तरह कुछ लड़के तस्वीरदार नक़्शे ख़रीद कर रात को लालटेन सामने रख कर इन तस्वीरों को सैट कराते हैं वह भी मना है, इसी तरह कुछ आदमी घरों में अपने वे बाजे ला कर सब को सुनाया करते हैं, जिसमें हर चीज़ की आवाज़ बन्द हो जाती है तो याद रखो कि जिस आवाज़ का वैसे सुनना मना है, इस बाजे में भी मना है जैसे गाना–बजाना और कुछ उसमें क़ुरआन पढ़ना बन्द कर देते हैं तो क़ुरआन मजीद सुनना तो बहुत अच्छी बात है, मगर उसमें बन्द करने का मतलब सिर्फ़ खेल–तमाश होता है, इसलिए यह भी मना है। लड़कियों और औरतों को ऐसी चीज़ों का लालच न करना चाहिए।

मस्अला 24—कुछ ऐसा करते हैं कि खोटा रूपया जब उनके पास नहीं चलता तो धोखा देकर किसी को दे देते हैं या रात को उसी तरह चला देते हैं, यह बड़ा गुनाह है। जिसने वह रूपया तुमको दिया है, उसी को दे

दो, चाहे उसको बता कर दो, चाहे किसी तर्कीब से दे दो, सब दुरूस्त है, मगर यह उस वक़्त दुरूस्त है, जब ख़ूब मालूम हो कि फ़लाने के पास से आया है और अगर ज़रा भी शक है तो दुरूस्त नहीं। और अगर किसी आदमी को बता कर दो, वह खुशी से ले ले, तब भी दुरूस्त है।

मस्अला 25—जो मस्अला अच्छी तरह याद न हो, किसी को मत बतलाओ।

मस्अला 26—कभी एक आदमी आंखें बन्द किए हुए लेटा रहता है और दो आदमी उसको सोता जानकर आपस में कोई बात छिपा कर करने लगते हैं। अगर उसको मालूम हो जाए कि यह आदमी सोता नहीं है, तो वे बात हरगिज़ न करें, ऐसे मौक़े में उस लेटने वाले को वाजिब है कि बोल पड़े और उनकी बातें धोखे से न सुने नहीं तो गुनाह होगा।

मस्अला 27—कुछ बड़ी बूढ़ियों की, बल्कि कुछ जवानों की भी आदत है कि मन्नत मानती हैं कि अगर मेरी फ़लानी मुराद पूरी हो जाए, तो मस्जिद में जाकर सलाम करूं या मस्जिद का ताक़ भरूं, फिर मस्जिद में जाकर अपनी मन्नत पूरी करती हैं, सो याद रखो, औरतों का मस्जिद में जाना अच्छा नहीं, न जवान को, न बूढ़ी को। कुछ न कुछ बे-पर्दगी ज़रूरी होती है। अल्लाह का सलाम यही है कि कुछ नफ़्लें पढ़ लो, दिल से, जुबान से शुक्र अदा करा लो, सो यह घर में मुम्किन है और ताक़ भरना यही है कि जो तौफ़ीक़ हो, मुहताजों को बांट दो, सो यह भी घर में हो सकता है।

मस्अला 28—नोट कम या ज़्यादा पर बेचना दुरूस्त नहीं, जैसे पांच रूपये का नोट हो तो पौने पांच या सवा पांच के बदले बेचना दुरूस्त नहीं और ख़ैर कमी में तो कुछ मजबूरी भी है, अगरचे गुनाहगार होगा। मगर ज़्यादा बेचने में कोई लाचारी भी नहीं या कमी पर ख़रीदने में, यह तो ज़्यादा बड़ा और गुनाह है।

मस्अला 29—किसी का ख़त पढ़ना उसकी इजाज़त के बग़ैर दुरूस्त नहीं।

मस्अला 30—कंघी में जो बाल निकले, उनको वैसे ही मत फेंक दिया करो, न दीवार पर रख दिया करो, जिसको ना-महरम लोग देखें। इन बालों का भी पर्दा है, बल्कि लकड़ी वग़ैरह से कोरी ज़मीन कुरेद कर उसमें दबा दिया करो।

मस्अला 31—जिस मज़मून को जुबान से बयान करना गुनाह है,

उसका ख़त में लिखना भी गुनाह है, जैसे किसी की ग़ीबत, शिकायत, अपनी अपनी बड़ाई वग़ैरह।

मस्अला 32—तार की ख़बर में कई तरह का शुबहा है, इसलिए चांद वग़ैरह की ख़बर में उसका एतबार नहीं।

मस्अला 33—ताऊन (प्लेग) की जगह से दूसरे शहर को यह समझ कर भाग जाना कि हम भागने से बच जाएंगे, मना है और जो इसी जगह सब्र से क़ायम रहे, उसको शहादत का दर्जा मिलता है।

मस्अला 34—कुछ लोगों की आदत है कि किसी लड़के या मामा से कह दिया कि मस्जिद में जाकर वहीं के लोटे में पानी लेकर सब नमाज़ियों से दम करा लेते आना, फ़्ला बीमार को पिला देंगे या क़ुरआन ख़त्म होने के वक़्त पानी में दम करा कर बरकत के वास्ते लेते आना। याद रखो कि मस्जिद का लोटा अपने बर्ताव में लाना मना है, अपने घर से कोई बर्तन देना चाहिए।

मस्अला 35—जाहिलों में मशहूर है कि एक हाथ में पानी और एक हाथ में आग लेकर चलना मनहूस है या यह मशहूर है कि मियां—बीवी एक बर्तन में दूध न खायें, नहीं तो भाई—बहन हो जाएंगे या एक पीर के मुरीद न हों, नहीं तो भाई—बहन हो जाएंगे या यह मशहूर है कि मुरीदनी से निकाह दुरूस्त नहीं या यह मशहूर है कि क़ैंची न बजाओ, आपस में लड़ाई हो जाएगी या दो आदिमयों के बीच में से आग लेकर मत निकलो, नहीं तो इनमें लड़ाई हो जाएगी या घर में घुंगचियां मत रहने दो, नहीं तो घर में लड़ाई होगी या दो आदमी एक कंघी न करें, नहीं तो दोनों में लड़ाई हो जाएगी, या दिन को कहानियां मत कहो, नहीं तो मुसाफ़िर रास्ता भूल जाएंगे। ये सब बेकार की बातें हैं। ऐसा एतक़ाद (विश्वास) रखना बहुत गुनाह है।

मस्अला 36—किसी को हरामज़ादी या कुतिया की जनी या सुअर की बच्ची या और कोई ऐसी बात मत कहो, जिससे उसके मां—बाप को गाली लगे। इन बेचारों ने तुम्हारी क्या ख़ता की है और खुद क़ुसूर वार को भी क़ुसूर से ज़्यादा मत बुरा कहो।

मस्अला 37—तम्बाकू खाना या हुक़्क़ा पीना यों ही बे—ज़रूरत मकरूह है और अगर कोई मजबूरी हो तो कुछ डर नहीं, मगर नमाज़ के वक़्त मुंह को ख़ूब साफ़ कर ले, चाहे मिस्वाक से या धनिया चबा कर या जिस तरह हो सके। अगर नमाज़ में मुंह के अन्दर बदबू रहे तो फ़रिश्तों को

तक्लीफ़ होती है, इस वास्ते मना है।

मस्अला 38—अफ़ीम अगर इलाज के लिए किसी और दवा में इतनी सी मिला कर खाली जाए, जिससे नशा बिल्कुल न हो, तो दुरूस्त है, मगर जैसे कुछ औरतें बच्चों को दे देती हैं कि नशे की ग़फ़लत में पड़े रहें, रोएं नहीं, यह ठीक नहीं।

मस्अला 39—अक्सर औरतें क़ुरआन मजीद पढ़ने में अगर उनके मियां का नाम आ जाए, तो उसको छोड़ देती हैं, या चुपके से कह लेती हैं, यह बेकार बात है। क़ुरआन मजीद पढ़ने में क्या शर्म।

मस्अला 40—स्यानी लड़की को जवान मर्द से क़ुरआन या किताब पढ़वाना न चाहिए।

मस्अला 41—लिखे हुए काग़ज़ का अदब ज़रूरी है, वैसे ही न फेंक देना चाहिए। जो ख़त रद्दी हो जाए या पंसारी की दुक़ान से दवा काग़ज़ में बंधी हुई आए और वह दवा से ख़ाली कर लिया जाए तो ऐसे काग़ज़ों को या तो कहीं हिफ़ाज़त से रख लिया करो या फिर उनको आग में जला दिया करो। इसी तरह जो लिखा हुआ काग़ज़ रास्ते में पड़ा हुआ मिले और किसी के काम के न हो, उसको भी उठा कर रख दिया करो या जला दिया करो।

मस्अला 42—दस्तरख़्वान में जो रोटी के टुकड़े रह जाते हैं, उनको ऐसी वैसी जगह मत झाड़ा करो, बल्कि किसी अलाहिदा जगह जहां पांव के नीचे न आये, झाड़ दिया करो।

मस्अला 43—अगर कोई ख़त लिख रहा हो तो पास मिलकर, बैठकर उसका ख़त पढ़ना मना है।

मस्अला 44—अगर किसी को नीचे के आधे धड़ में घाव या दाने हों और पानी पहुंचने से नुक़्सान हो और उसको नहाने की ज़रूरत हो और नहाने में उसको बचा न सके, तो तयम्मुम करना दुरूस्त है।

मस्अला 45—जाहिलों में मशहूर है कि तस्बहीह फेरना इस तरह सीधा है और इस तरह उलटा है, यह सब बेकार की बात है। असल मतलब गिनने से है, जिस तरह चाहे फेरो।

मस्अला 46—दरूद शरीफ़ वुज़ू के बग़ैर पढ़ना भी दुरूस्त है।

मस्अला 47—लड़के का कान या नाक छेदना मना है।

मस्अला 48—बुरा नाम रखना मना है। अच्छा नाम रखे, या तो नबियों के नाम पर रखे य अल्लाह के नामों में से किसी नाम पर लफ़्ज़

'अब्द' (दास) बढ़ा दे, जैसे अब्दुल्लाह, अब्दुर्रहमान, अब्दुलबारी, अब्दुलकुद्दूस, अब्दुल जब्बार, अब्दुल् फ़त्ताह या और और कोई नाम किसी आलिम से रखवा ले।

मस्अला 49—जाहिल औरतों में मशहूर है कि नमाज़ पढ़ कर जा–नमाज़ को उलट दो, नहीं तो उस पर शैतान नमाज़ पढ़ता है, यह बात बिल्कुल ग़लत है।

मस्अला 50—जाहिल समझते हैं कि औरत अगर ज़च्चा ख़ाने से मर जाये, तो भुतनी हो जाती है, यह बिल्कुल ग़लत अक़ीदा है, बल्कि हदीस शरीफ़ में आया है कि ऐसी औरत शहीद होती है।

मस्अला 51—जाहिल समझते हैं कि औरत मर जाए तो उसका ख़ाविंद जनाज़े का पाया भी न पकड़े, यह बिल्कुल ग़लत है, बल्कि अगर वह मुंह भी देख ले तो कुछ डर नहीं।

मस्अला 52—अगर औरत के पेट में बच्चा ज़िंदा मालूम हो तो उसका पेट फाड़ कर निकाल लेना चाहिए। एक जगह लोगों ने ऐसी जिहालत की कि उस औरत को नहलाते वक़्त बच्चा पैदा होने की निशानियां मालूम हुईं तो औरतों ने कहा, जल्दी करो, नहीं मालूम क्या हो जाएगा। ग़रज़ उसको जल्दी कफ़्ना कर ले गये। जब क़ब्र में रखा तो कफ़न के अन्दर बच्चे के गिरने की हरकत मालूम हुई। अफ़सोस है कि किसी ने कफ़न खोलकर भी न देखा। तुरन्त क़ब्र पर तख़्ते रख कर मिट्टी डाल दी। अफ़सोस है कि औरतों में भी और मर्दों में भी कैसी जिहालत आ गई है। या सारी ख़राबी दीन का इल्म न होने की वजह से है।

मस्अला 53—यह जाहिलों में मशहूर है कि ख़ाविंद अगर नामर्द हो, तो उससे निकाह ही दुरूस्त नहीं होता और बीवी उससे पर्दा करे। यह बिल्कुल ग़लत बात है।

मस्अला 54—फ़ाल खोलना, नाम निकालना, चाहे बधनी पर, चाहे जूती पर, या और किसी तरह, बहुत गुनाह है।

मस्अला 55—औरतों में 'अस्सलामु अलैकुम' कहने और मुसाफ़ा करने का रिवाज नहीं है। ये दोनों बातें सवाब की हैं, इनको फैलाना चाहिए।

मस्अला 56—जहां मेहमान जाये, किसी फ़क़ीर को रोटी का टुकड़ा मत दो।

मस्अला 57—कुछ जाहिलों का तरीक़ा है, जिस दिन घर से बोने

के वास्ते अनाज निकलता है, उस दिन दाने नहीं भुनाते। ऐसा एनक़ाद गुनाह है, छोड़ना चाहिए।

कुछ मस्अले और[1]

मस्अला 1—हर जानवर का पित्ता उसके पेशाब के बराबर नापाक है और जुगाली में जो निकलता है, व उसके पाख़ाने के बराबर नापाक है।

मस्अला 2—क़ुरआन मजीद और सिपारे जब इतने फटे पुराने हो जाएं कि उनमें पढ़ा ना जा सके या इतना ज़्यादा ग़लत लिखे हुए हों कि उनका सही करना मुश्किल हो, तो उनको एक पाक कपड़े में लपेट कर ऐसी जगह दफ़न कर दो कि जो पैरों तले न आये या इस तरह दफ़न करे उसके ऊपर मिट्टी न पड़े यानी या तो बग़ली क़ब्र की तरह खोदे और बग़ल में दफ़न कर दे या उस पर किसी तख़्ते वग़ैरह को रख कर मिट्टी डाल दे।

इस हिस्से के पढ़ाने का तरीक़ा

1. इस हिस्से में मामलों के बहुत ज़रूरी मस्अले बयान किये गये हैं। चूंकि मामलों के अक्सर मस्अलों में अ–सावधानी करने से बंदों के हक़ के पूरा न करने की पकड़ हो जाती है और रोज़ी हराम हो जाती है, जिसके खाने से नेक कामों में सुस्ती और बुरे कामों में लगाव पैदा होता है। इस वास्ते इन मस्अलों के समझने की और इनके मुताबिक़ अमल कराने की बड़ी कोशीश करनी चाहिए।

2. मस्अलों को तख़्ती पर लिखवाना, और जो मस्अले समझ से बाहर हों, उन पर निशान बनवा कर छुड़ा देना और क़ाबलियत बढ़ जाने के बाद उनको समझा देना और पढ़ने वालियों का इम्तिहान लेना वग़ैरह ये सब बातें यहां भी पहले हिस्सों की तरह हैं।

हिदायत—घर में जो लोग अनपढ़ हों, उनको भी ये मस्अले सुना–सुना कर समझा दिया करें।

---

1. अब जो मस्अले आ रहे हैं, मौलवी मुहम्मद रशीद साहब रह० मुदर्रिसया मदरसा जामिउल उलूम, कानपुर के बढ़ाये हुए हैं।

(भाग-6)

बहिश्ती ज़ेवर

हज़रत मौलाना अशरफ़ अली थानवी (रह०)

विषय सूची

(इसमें बुरी रस्मों का बयान है और इनमें कई बाब[1] हैं। पहला बाब उन रस्मों के बयान में है, जिनको करने वाले भी गुनाह समझते हैं, मगर हल्का जानते है, इसमें कई बातों का बयान है—ब्याह–शादी में नाच–बाजे का होना, आतशबाज़ी छोड़ना, बच्चों की बाबरी रखना, तस्वीर रखना, कुत्ता पालना—हम हर एक को अलग–अलग बयान करते हैं।)

नाच का बयान

शादियों में दो तरह के नाच होते हैं। एक तो रंडी वग़ैरह का नाच जो मर्दाने में कराया जाता है, दूसरा वह नाच, जो ख़ास औरतों की महफ़िल में होता है कि कोई डोमनी, मीरासिन नाचती है और कूल्हे वग़ैरह मटका चटका कर तमाशा करती है। ये दोनों हराम और ना–जायज़ हैं।

रंडी के नाच में जो–जो गुनाह और ख़राबियां हैं, उनको सब जानते हैं कि ना–महरम औरत को सब मर्द देखते हैं, यह आंख का ज़िना है। उसके बोलने और गाने की आवाज़ सुनते हैं, यह कान का ज़िना है। उससे बातें करते हैं, यह ज़ुबान का ज़िना है। उसकी ओर मन का झुकाव होता है, यह दिल–का ज़िना है। जो ज़्यादा बे–हया हैं, उसको हाथ भी लगाते

1. अध्याय।

हैं, यहा हाथ का ज़िना है। उसकी ओर चलकर जाते हैं, यह पांव का ज़िना है। कुछ बदकारी भी करते हैं, तो यह असल ज़िना है।

हदीस शरीफ़ में यह मज़्मून साफ़–साफ़ आ गया है कि जिस तरह बद–कारी ज़िना है, उसी तरह आंख से देखना, कान से सुनना, पांव से चलना वग़ैरह इन सब बातों से ज़िना का गुनाह होता है। फिर गुनाह को खुल्लम खुल्ला करना, शरीअत में और भी बुरा है।

हदीस शरीफ़ में यह मज़्मून आया है कि जब किसी क़ौम में बे–हयाई और गंदगी इतनी फैल जाए कि लोग खुल्लम खुल्ला करने लगें, तो ज़रूर उनमें प्लेग और ऐसी बीमारियां फैल पड़ती हैं कि उनके बुज़ुर्गों में कभी नहीं हुईं।

अब समझो कि जब यह नाच ऐसी बुरी चीज़ है तो कुछ आदमी, तो शादी के मौक़े पर इसका सामान करते हैं या दूसरी तरफ़ वालों पर तक़ाज़ा करते हैं, ये लोग कितने गुनाहगार होते हैं, बल्कि यह महफ़िल कराने वाला, जितने आदमियों को गुनाह की तरफ़ बुलाता है, जितना अलग–अलग सबको गुनाह होता है, वह सब मिलाकर उस अकेले को उतना ही गुनाह होगा, जैसे मान लो कि मज्लिस में सौ आदमी आये, तो जितना गुनाह हर–हर आदमी को हुआ, वह सब उस अकेले को हुआ यानी मज्लिस करने वाले को पूरे सौ आदमियों का गुनाह हुआ, बल्कि उसकी देखा–देखी, जो कोई, जब कभी ऐसा जल्सा करेगा, उसका गुनाह भी उसको होगा, बल्कि उसके मरने के बाद भी, जब तक उसका बुनियाद डाला हुआ सिलसिला चलेगा, उस वक़्त तक बराबर उसके नामा–ए–आमाल में गुनाह बढ़ता रहेगा। फिर उस मज्लिस में बाजा–गाजा भी बे–धड़क बजाया जाता है जैसे तबला, सारंगी वग़ैरह, यह भी एक गुनाह हुआ।

प्यारे नबी सल्ल० ने फ़रमाया है कि मुझको मेरे पालनहार ने इन बाजों को मिटाने का हुक्म दिया है। ख़्याल करने की बात है कि जिसके मिटाने के लिए प्यारे नबी सल्ल० तशरीफ़ लायें, उसके रौनक़ देने वाले के गुनाह का क्या ठिकाना।

दुनिया का नुक़्सान इसमें औरतों के लिए यह है कि कभी उनके शौहर या दूल्हा की तबीयत नाचने वाली पर आ जाती है और अपनी बीवी से दिल हट जाता है। यह सारी उम्र रोती है, फिर ग़ज़ब यह है कि इसको नाम और इज़्ज़त बढ़ाने की वजह समझती हैं और इसके न होने को ज़िल्लत और शादी की बे–रौनक़ी जानती हैं और गुनाह पर घमंड करना

और गुनाह न करने को बे–इज़्ज़ती समझना, इससे ईमान चला जाता है तो यह देखो कितना बड़ा गुनाह है।

कुछ लोग कहते है कि लड़की वाला नहीं मानता, बहुत मजबूर करता है, उनसे पूछना चाहिए कि लड़की वाला अगर यह ज़ोर डाले कि पश्वास पहन कर तुम खुद नाचो, तो क्या लड़की लेने के लिए तुम खुद नाचोगे या गुस्सा से भरकर मरने–मारने को तैयार हो जाओगे और लड़की न मिलने की कुछ परवाह न करोगे।

पस मुसलमानों का फ़र्ज़ है कि शरीअत ने जिसको हराम किया है, उससे उतनी ही नफ़रत होनी चाहिए, जितनी अपनी तबियत के ख़िलाफ़ कामों से होती है, तो जैसे इसमें शादी होने की कुछ परवाह नहीं है, तो उसी तरह शरीअत के ख़िलाफ़ के कामों में साफ़ जवाब दे देना चाहिए कि चाहे शादी करो, चाहे न करो, हम हरगिज़ नाच न होने देंगे। इसी तरह उसमें शरीक भी न होना चाहिए, न देखना चाहिए।

अब रह गया वह नाच, जो औरतों में होता है, उसको भी ऐसा ही समझना चाहिए, चाहे उसमें ढोल वग़ैरह किसी क़िस्म का बाजा हो या न हो, हर तरह का ना–जायज़ है। किताबों में बंदरों के नाच–तमाशों तक को मना लिखा है, तो आदमियों को नचाना किस तरह बुरा न होगा। फिर यह कि कभी घर के मर्दों की भी नज़र पड़ती है और उसमें वही ख़राबियां होती हैं, जिनका अभी बयान हुआ और कभी यह नाचने वाली गाती भी है और घर से बाहर मर्दों के कान में आवाज़ पहुंचती है। जब मर्दों को औरतों का गाना सुनना गुनाह है, तो जो औरत इस गुनाह की वजह बनी, वह भी गुनाहगार होगी।

कुछ औरतें उस नाचने वाली के सिर पर टोपी रख देती हैं और मर्दों की शक्ल या रूप बनाना हराम है, तो इस गुनाह की तज्वीज़ करने वाली भी गुनाहगार होगी और अगर बाजा उसके साथ हो तो बाजे की बुराई अभी हम लिख चुके है।

इसी तरह गाना है, चूंकि अक्सर गाने वाली जवान, अच्छी आवाज़ वाली, इश्क़ व मुहब्बत के मज़्बून याद रखने वाली खोजी जाती है, और अक्सर उसकी आवाज़ ग़ैर–मर्दों के कान में पहुंचती है और इस गुनाह की वजह घर की औरतें होती हैं और कभी–कमी ऐसे मज़मूनों के शेरों से कुछ औरतों के दिल भी ख़राब हो जाते हैं, फिर रात–रात भर यह सिलसिला रहता है, बहुत सी औरतों की नमाज़ें सुबह की रह जाती हैं, इसलिए यह

भी मना है। मतलब यह है कि हर क़िस्म का नाच और राग–बाजा, जो आजकल हुआ करता है, सब गुनाह है।

कुत्ता पालने और तस्वीरों के रखने का बयान

प्यारे रसूल सल्ल० ने इर्शाद फ़रमाया है कि (रहमत के) फ़रिश्ते उस घर में दाख़िल नहीं होते, जिस घर में कुत्ता या तस्वीर हो और नबी सल्ल० ने फ़रमाया कि सबसे ज़्यादा अज़ाब अल्लाह तआला के नज़दीक तस्वीर बनाने वाले को होगा। हज़रत मुहम्मद सल्ल० ने यह भी फ़रमाया है कि जो कोई इन तीन मक़्सदों के अलावा किसी और वजह से कुत्ता पाले––यानी मवेशियों की हिफ़ाज़त, खेत की हिफ़ाज़त और शिकार के सिवा किसी और फ़ायदे के लिए कुत्ता पाले, उसके सवाब में हर दिन एक–एक क़ीरात घटता रहेगा। दूसरी हदीस में है कि अल्लाह मियां के यहां का क़ीरात उहद के पहाड़ के बराबर होता है।

इन हदीसों से तस्वीरें बनाना, तस्वीर रखना, कुत्ता पालना, सबका हराम होना मालूम होता है, इसलिए इन बातों से बहुत बचना चाहिये। इससे मालूम हुआ कि कुछ लड़कियां या औरतें जो तस्वीरदार गुड़ियां बनाती हैं, ऐसी गुड़ियां बज़ार से मंगाती हैं और मिट्टी या मिठाई के खिलौने बच्चों के लिए मंगा देती हैं, ये सब मना हैं, अपने बच्चों को इससे रोकना चाहिए और ऐसे खिलौने तोड़ देना चाहिए और ऐसी गुड़ियां जला देनी चाहिए, इसी तरह कुछ लड़के कुत्तों के बच्चे पाला करते हैं, मां–बाप को चाहिए कि उनको रोकें, न मानें तो सख़्ती करें।

आतशबाज़ी का बयान

शब–बरात में या शादी में अनार–पटाख़े और आतशबाज़ी छुड़ाने में कई गुनाह हैं––

1. अव्वल तो यह कि पैसा फिज़ूल बर्बाद होता है। कुरआन शरीफ़ में माल उड़ाने वालों को शैतान का भाई फ़रमाया है और एक आयत में फ़रमाया है कि माल फ़िज़ूल उड़ाने वालों को अल्लाह तआला नहीं चाहते

यानी उनसे दुःखी हैं।

2. दूसरे हाथ-पांव के जलने का डर या मकान में आग लग जाने का भय है और अपनी जान या माल को ऐसी हलाकत और ख़तरे में डालना खुद शरअ में बुरा है।

3. तीसरे अक्सर लिखे हुए कागज़ आतशबाज़ी के काम में लाये जाते हैं। खुद हर्फ़ भी अदब की चीज़ है। इस तरह के कामों में उनको लाना मना है, बल्कि कुछ कागज़ों पर कुरआन की आयतें या हदीसें या नबियों के नाम लिखे हुए होते हैं। बतलाओ तो सही, इनके साथ बे-अदबी करने की कितनी बड़ी मुसीबत है, तो तुम अपने बच्चों को इन कामों के लिए कभी पैसे मत दो।

शतरंज, ताश, गंजफ़ा, चौसर, कंकव्वे का बयान

हदीसों में शतरंज को बहुत मना किया गया है और ताश, गंजफ़ा, चौसर, वग़ैरह भी शतरंज जैसे ही हैं, इसलिए सब मना हैं और फिर इनमें मन इतना लगता है कि इनका खेलने वाला किसी और काम का नहीं रहता और ऐसे आदमी के दीन और दुनिया के बहुत से कामों में ख़लल पड़ता है, तो जो काम ऐसा हो, वह बुरा क्यों न होगा ? यही हाल कंकव्वे का समझो कि यही ख़राबियां इसमें भी हैं, बल्कि कुछ लड़के पीछे छतों से गिर कर मर गये हैं। मतलब यह है कि तुमको ख़ूब मज़बूत रहना चाहिए और हरगिज़ अपने बच्चों को ऐसे खेल मत खेलने दो, न उनको पैसे दो।

बच्चों की बाबरी रखाने का यानी बीच में से सिर खुलवाने का बयान

हदीस शरीफ़ में आया है कि मना फ़रमाया है अल्लाह के रसूल सल्ल० ने क़ज़अ से और क़ज़अ के मानी अरबी में यह हैं कि कहीं से सिर

मुंडाये और कहीं से छोड़ दे।

दूसरा बाब उन रस्मों के बयान में, जिनको लोग जायज़ समझते हैं

जितनी रस्में दुनिया में आने के वक़्त से मरते दम तक की जाती हैं, उनमें से अक्सर बल्कि तमाम रस्में उसी क़िस्म से हैं, जो बड़े–बड़े समझदार और अक़्लमंद लोगों में बड़े तूफ़ान की तरह फैल रही हैं, जिनके बारे में लोगों का यह ख़्याल है कि इसमें गुनाह की कौन–सी बात है। मर्द और औरतें जमा होती हैं, कुछ खाना–पिलाना होता है, कुछ देना–दिलाना होता है, कुछ नाच नहीं, रंग नहीं, राग–बाजा नहीं, फिर इसमें शरअ के ख़िलाफ़ होने की क्या बात है, जिससे रोका जाए। इस ग़लत ख़्याल की वजह सिर्फ़ यह हुई कि आम रस्म व रिवाज हो जाने की वजह से अक़्ल पर पर्दे पड़ गये हैं। इसलिए इन रस्मों के अन्दर जो ख़राबियां और बारीक बुराइयां हैं, वहां तक अक़्ल की पहुंच नहीं हुई, जैसे कोई नादान बच्चा मिठाई का मज़ा और रंग देखकर समझता है कि यह तो बड़ी अच्छी चीज़ है और इसके नुक़्सान और ख़राबियों पर नज़र नहीं करता, जो उसके खाने से पैदा होंगी, जिनको मां–बाप समझते हैं और इसी की वजह से इसको रोकते हैं, और वह बच्चा इन भलाई चाहने वालों को अपना दुश्मन समझता है। हालांकि इन रस्मों में जो ख़राबियां हैं, वे ऐसी नाज़ुक, बारीक और छिपी हुई भी नहीं, बल्कि हर आदमी इन रस्मों की वजह से परेशान और तंग है और हर आदमी चाहता है कि अगर ये रस्में न होतीं तो बड़ा अच्छा होता, लेकिन रिवाज पड़ जाने की वजह से सब खुशी–खुशी करते हैं और यह किसी की भी हिम्मत नहीं होती कि सबको एकदम से छोड़ दें, बल्कि ख़ास बात यह है कि समझाओ तो उल्टे ना–ख़ुश होते हैं, मतलब यह कि हम हर–हर रस्म की ख़राबियां तुम्हें समझाये देते हैं ताकि इन बेकार की रस्मों का गुनाह होना समझ में आ जाए और भारत की यह बला दूर होकर ख़त्म हो जाए। हर मुसलमान मर्द व औरत को लाज़िम है कि इन बस बेहूदा रस्मों के मिटाने पर हिम्मत बांधे और दिल व जान से कोशिश करे कि एक रस्म भी बाक़ी न रहे और जिस

तरह हज़रत सल्ल० के मुबारक ज़माने में सादगी के सीधे–सीदे तौर पर काम हुआ करते थे, उसके मुताबिक़ अब फिर होने लगे। जो बीबियां और मर्द ये कोशिश करेंगे, उनको बड़ा सवाब मिलेगा। हदीस शरीफ़ में आया है कि सुन्नत का तरीक़ा मिट जाने के बाद जो कोई ज़िंदा कर देता है, उसको सौ शहीदों का सवाब मिलता है, चूंकि सारी रस्में तुम्हारे मुताल्लिक़ हैं, इसलिए अगर तुम ज़रा भी कोशिश करोगी तो बड़ी जल्दी असर होगा, इन्शाअल्लाह तआला।

बच्चा पैदा होने की रस्मों का बयान

1.यह ज़रूरी समझा जाता है कि जहां तक हो सके, पहला बच्चा बाप ही के घर होना चाहिए, जिससे कभी–कभी पैदाइश के क़रीब औरत को भेजने में यह भी ध्यान नहीं रहता कि यह सफ़र के क़ाबिल है या नहीं, जिससे कभी बीमारी भी हो जाती है। हमल को नुक़्सान पहुंच जाता है। मिज़ाज में ऐसी तब्दीली और थकन हो जाती है कि ज़च्चा–बच्चा को मुद्दत तक भुगतना पड़ता है, बल्कि तजुर्बेकार लोग कहते हैं कि अक्सर बीमारियां बच्चों को हमल के ज़माने की बे–एहतियातियों से होती हैं। मतलब यह है कि दो जानों का नुक़्सान इसमें पेश आता है, फिर यह कि एक ग़ैर–ज़रूरी बात की इतनी पाबंदी कि किसी तरह टलने ही न पाये, अपनी तरफ़ से एक नयी शरीअत बनाना है, ख़ास तौर से जबकि उसके साथ यह भी अक़ीदा हो कि उसके ख़िलाफ़ करने से कोई नहूसत होगी या हमारी बदनामी होगी। मनहूस मानने का अक़ीदा तो बिल्कुल ही शिर्क है, क्योंकि नफ़ा पहुंचाने वाला सिर्फ़ अल्लाह है कि जब किसी चीज़ को मनहूस समझा और यह जाना कि इससे नुक़्सान होगा, तो यह शिर्क हो गया। इसीलिए हदीस शरीफ़ में आया है कि बुरा शकुन लेना कोई चीज़ नहीं, और एक हदीस में आया है कि टोना–टोटका शिर्क है और बद–नामी का डर करना घमंड की वजह से होता है और घमंड का हराम होना साफ़–साफ़ क़ुरआन मजीद और हदीस शरीफ़ में ज़िक्र हुआ है और अक्सर ख़राबियां और परेशानियां भी इसी वजह से गले का हार हो गयी हैं।

2. कहीं–कहीं पैदा होने से पहले छाज यानी सूप या छलनी में कुछ अनाज और सवा रुपया 'मुश्किलकुशा' के नाम का रखा जाता है, यह खुला हुआ शिर्क है और वहीं यह दस्तूर है कि जब औरत पहले–पहल हामिला

होती है, तो कभी पांचवें महीने, कभी सातवें महीने, कभी नवें महीने गोद भरी जाती है यानी सात क़िस्म के मेवे एक पोटली में बांधकर हामिला औरत की गोद में रखती हैं और पंजीरी और गुलगुले पकाकर रतजगा करती हैं और जिसका पहला बच्चा ज़ाया हो जाता है, उसके लिए यह रस्म नहीं होती। यह भी ख़ामख़ाह की पाबंदी और शकुन है, जिसकी बुराई जगह-जगह पढ़ चुकी हो और कहीं ज़च्चे के पास तलवार या छुरी बुलाओं से हिफ़ाज़त के लिए रख देती हैं, यह भी सिर्फ़ टोटका और शिर्क की बात है।

3. पैदा होने के बाद घर वालों के साथ कुंबे की औरतें भी न्यौते के तौर पर कुछ जमा करके दाई को देती हैं और हाथ में नहीं, बल्कि ठीकरे में डालती हैं। भला यह देने का कौन सा मुनासिब तरीक़ा है कि हाथ को छोड़कर ठीकरे में डाला जाए और अगर ठीकरे में न डालें, हाथ ही में दें, तब भी ध्यान देने की बात है कि उन देने वालियों का मक़सद और नीयत क्या है। जिस वक़्त यह रस्म ईजाद हुई होगी, उस वक़्त की तो ख़बर नहीं, क्या मसलहत हो, शायद खुशी की वजह से हो कि सब रिश्तेदारों का दिल खुश हुआ हो और इनाम के तौर पर कुछ न कुछ दे दिया हो, मगर अब तो यक़ीनी बात है कि खुशी हो न हो, दिल चाहे न चाहे, देना ही पड़ता है। कुंबे की कुछ औरतें बहुत ग़रीब होती हैं, इनको भी बुलावे पर बुलावा भेज कर बुलाया जाता है। अगर न जाएं तो उम्र भर शिकायत रहे और अगर जाएं तो अठन्नी या चवन्नी का इंतिज़ाम करके ले जाएं, नहीं तो बीबीयों में बड़ी ज़िल्लत और शर्मिंदगी हो। मतलब यह कि जाओ और ज़बरदस्ती देकर आओ। यह कैसा अंधेर है कि घर बुलाकर लूटा जाता है खुशी की जगह कुछ को तो पूरा बोझ सहना पड़ता है। खुद ही इंसाफ़ करो कि यह कैसा है और इस तरह माल का ख़र्च करना और लने वाली को या घर वालों को इस लेन-देन की वजह बनना कहां जायज़ है, क्योंकि देने वाले की नीयत तो सिर्फ़ अपनी बड़ाई और नेक नामी है, जिसके बारे में हदीस शरीफ़ में आया है कि जो कोई शोहरत का कपड़ा पहने, क़ियामत में अल्लाह तआला उसको ज़िल्लत का कपड़ा पहनाएंगे यानी जो कपड़ा ख़ास शोहरत और नाम के लिए पहना जाए, उस पर यह अज़ाब होगा तो मालूम हुआ शोहरत और नाम के लिए कोई काम करना जायज़ नहीं। यहां तो ख़ास यही नीयत होती है कि देखने वाले कहेंगे कि फ़लानी ने इतना दिया, वरना ताना देंगे, नाम रखेंगे कि फ़लानी ऐसी कंजूस है, जिससे एक टका भी न दिया गया, ख़ाली-खूली आकर ठूंठ सी बैठ गयी, ऐसे आने ही की क्या

ज़रूरत थी। देने वालो को तो गुनाह हुआ। अब लेने वाली को सुनिए।

हदीस शरीफ़ में आया है किसी मुसलमान का माल उसकी दिली खुशी के बग़ैर हलाल नहीं, सो जब किसी ने दिल मसोस कर दिया, तो लेने वाली को गुनाह हुआ। अगर देने वाली खाती–पीती और मालदार है और उस पर भी नहीं हुई, मगर मतलब तो उसका भी वही शेख़ी और फ़ख़्र करना है, जिसके बारे में हदीस शरीफ़ में आया है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने उन लोगों की दावत क़ुबूल करने से मना फ़रमाया है, जो फ़ख़्र के लिए खाना खिलाएं। मतलब यह है कि ऐसे का खाना खाना, या इसकी कोई चीज़ लेना भी मना है। मतलब यह कि लेने वाली भी गुनाह से न बची, अब घर वालों को देखो, वही लोग बुला–बुलाकर इन गुनाहों की वजह हुए, तो वे भी गुनाहगार हुए। मतलब यह कि अच्छा न्यौता हुआ कि सबको गुनाह में न्यौता दिया और इस न्यौते की रस्म, जो अक्सर तक़रीबों में अदा की जाती है, उसमें इन ख़राबियों के सिवा एक और भी ख़राबी है, वह यह कि जो कुछ न्यौता आता है, सब अपने ज़िम्मे क़र्ज़ हो जाता है और क़र्ज़ को बे–ज़रूरत लेना मना है, फिर क़र्ज़ का यह हुक्म है कि जब कभी अपने पास हो, अदा कर देना ज़रूरी है और यहां इंतिज़ार करना पड़ता है कि उसके यहां भी जब कभी कोई काम हो तब अदा किया जाए और अगर कोई आदमी न्यौते का बदला एक–आध दिन के बाद ही देने लगे तो हरगिज़ कोई क़ुबूल न करे, यह दूसरा गुनाह हुआ। और क़र्ज़ का हुक्म यह है कि गुंजाइश हो तो अदा कर दो, न पास हो, न दो। जब होगा दे दिया जाएगा। यहां यह हाल है कि पास हो या न हो, क़र्ज़ दाम लेकर गिरवी रखकर हज़ार चिंता करके लाओ और ज़रूर दो, लेकिन तीनों हुक्मों में शरीअत का विरोध हुआ, इसलिए न्यौते की रस्म जिसका आजकल दस्तूर है, जायज़ नहीं है। न किसी का कुछ लो और न दो। देखो तो कि इसमें खुदा और उसके रसूल सल्ल० के खुशी के सिवा राहत व आराम कितना बड़ा है। इसी तरह बच्चे के कान में अज़ान देने के वक़्त गुड़ या बताशे के बांटने का पाबंद हो जाना बिल्कुल शरअ की हद से निकलना है।

4. फिर नाइन गोद में कुछ अनाज डालकर सारे कुंबे में बच्चे का सलाम कहने जाती है और वहां सब औरतें उसको अनाज देती हैं, इसमें भी वही विचार और नीयतें हैं, जो अभी ऊपर बयान हुई, इसलिए उसको भी छोड़ना चाहिए।

5. घर पर सब कमीनों को हक़ दिया जाता है, जिनको छत्तीस कहते

हैं, उनमें कुछ लोग ख़िदमतगुज़ार हैं। उनको तो हक़ समझ कर या इनाम समझ कर दिया जाए तो कोई हरज नहीं, बल्कि बेहतर है। मगर यह ज़रूर है कि अपनी कुदरत (सामर्थ्य) का ध्यान रखे, यह न करे कि चाहे–अनचाहे क़र्ज़ ले, चाहे सूद पर ही मिले, अगर क़र्ज़ ज़रूर ले, अपनी ज़मीन–बाग़ को बेचना पड़े या कुछ गिरवी रखे, अगर ऐसा करेगी, तो नाम और दिखावा की नीयत होने या बे–ज़रूरत क़र्ज़ लेने और सूद देने की वजह से जो कि गुनाह में सूद लेने के बराबर है या घमंड और फ़ख़्र की नीयत होने की वजह से ज़रूर गुनाहगार होगी। ख़ैर यह तो ख़िदमत–गुज़ारों के इनाम के बारे में बात थी, कुछ वे कमीन हैं जो किसी काम के नहीं, न वे कोई ख़िदमत करें, न किसी काम आएं, न उनसे कोई ज़रूरत पड़े, मगर क़र्ज़ देने वालों से बढ़ कर तक़ाज़ा करने को मौजूद और चाहे–अनचाहे उनका देना ज़रूर। इसमें भी जो ख़राबियां और जो–जो गुनाह देने–लेने वालों के हक़ में हैं, उनका बयान ऊपर आ चुका है, दोबारा लिखने की ज़रूरत नहीं। फिर जब उनका कोई हक़ नहीं, तो उनको देना सिर्फ़ एहसान और इनाम है और एहसान में ऐसी ज़बरदस्ती करना हराम है कि जी चाहे, न चाहे बदनामी के ख़्याल से देना ही पड़े और इस रस्म को जारी रखने में इस हराम बात को ताक़त पहुंचती है और हराम बात को ताक़त पहुंचाना और रिवाज देना भी हराम है, इसको भी बिल्कुल रोकना चाहिए।

6. फिर ध्यानियों को दूध–धुलाई के नाम से कुछ दिया जाता है, इसमें भी वही ज़रूरी समझना और ज़बरदस्ती देना, अगर ख़ुशी से दिया तो नाम और शोहरत के लिए देना ये सब ख़राबियां मौजूद हैं और चूंकि यह रस्म हिंदुओं की है, इसलिए इसमें जो काफ़िरों से मुशाबहत[1] है, वह जुदा, इसलिए यह भी जायज़ नहीं। मतलब यह है कि आम क़ायदा समझ लो कि रस्म जो इतनी ज़रूरी हो जाए कि चाहे–न चाहे, ज़बरदस्ती करना पड़े और न देने में इज़्ज़त–नाम का ख़्याल हो या सिर्फ़ अपनी बड़ाई की राह से की जाए, वह रस्म हराम है। इतनी बात समझ लेने से बहुत सी बातें तुमको ख़ुद ही मालूम हो जाएंगी।

7. अछवानी फिर गोंद, पंजीरी, सारे कुंबे में और बिरादरी में बंटती है, इसमें भी वही नाम–शोहरत वग़ैरह ख़राब नीयत और नमाज़–रोज़े से बढ़कर ज़रूरी समझने की वजह मौजूद है और पंजीरी में ऐसी अनाज की बे–क़द्री होती है कि इलाही–तौबा ! तक़रीब (उत्सव) वाले की तो अच्छी

1. मिलता–जुलता काम

ख़ासी लागत लग जाती है और वह किसी के मुंह तक भी नहीं जाती। फिर भला अनाज की ऐसी बे–क़द्री कहां जायज़ है।

8. फिर नाई ख़त लेकर बहू के मैके या ससुराल में ख़बर करने जाता है और वहां उसको इनाम दिया जाता है। ख़्याल रखने की बात है कि जो काम 15 पैसे के पोस्ट कार्ड में निकल सके, उसके लिए ख़ास एक आदमी का जाना कौन सी अक़्ल की बात है। फिर वहां खाने को मिले या न मिले, नाई साहब का क़र्ज़ जो (खुदा न करे) खुदा के क़र्ज़ से बढ़ कर समझा जाता है, अदा करना ज़रूर है और वही नाम और शोहरत की नीयत, ज़बरदस्ती देने वग़ैरह की ख़राबियां यहां भी हैं, इसलिए यह भी जायज़ नहीं।

9. सवा महीने का चिल्ला नहाने के वक़्त फिर सब औरतें जमा होती हैं और साथ वहीं खाती हैं और रात को कुंबे या बिरादरी में दूध–चावल तक़सीम होते हैं, भला साहब यह ज़बरदस्ती खाने की पख़ लगाने की क्या वजह। दो क़दम पर तो घर है, मगर खाना यहां खायें। यहां वही कहावत है, मान न मान, मैं तेरा मेहमान। इनकी तरफ़ से तो यह ज़बरदस्ती और घरवालों की नीयत, वही नाम और तानों से बचने की, ये दोनों वजहें इसके मना होने के लिए काफ़ी हैं। इसलिए दूध–चावल की तक़सीम, यह भी बिल्कुल बेकार बात है। एक बच्चे के साथ तमाम बड़े–बूढ़ों को भी दूध पिलाना क्या ज़रूर है। फिर इसमें भी नमाज़–रोज़े से ज़्यादा पाबंदी और नाम ऊंचा करने की बात और न करने से बे–इज़्ज़ती का ज़हर मिला हुआ है, इसलिए यह भी दुरूस्त नहीं।

10. इस सवा महीने तक ज़च्चे को हरगिज़ नमाज़ की तौफ़ीक़ नहीं होती, बड़ी–बड़ी पाबन्दे नमाज़ भी बे–परवाही कर जाती हैं, हालांकि शरअ में यह हुक्म है कि जब ख़ून बन्द हो जाए तुरंत नहाले। अगर नहाना नुक़्सान करे तो तयम्मुम करे, नमाज़ पढ़ना शुरू करे। बिना किसी उज़्र के एक वक़्त की भी नमाज़ छोड़ना सख़्त गुनाह है। हदीस शरीफ़ में है कि जिस किसी ने जान–बूझकर फ़र्ज़ नमाज़ छोड़ दी, वह ईमान से निकल गया। और हदीस शरीफ़ में है कि ऐसा शख़्स फ़िर्औन, हामान, क़ारून के साथ दोज़ख़ में होगा।

11. फिर बाप के घर से ससुराल आने के लिए छूछक तैयार होती है, जिसमें गुंजाइश के मुताबिक़ सब ससुराल वालों के जोड़े और बिरादरी के लिए पंजीरी और लड़की के लिए ज़ेवर, बर्तन, जोड़े वग़ैरह सब होते हैं। जब बहू छछक लेकर ससुराल में आयी, वहां सब औरतें छूछक देखने आती हैं और एक वक़्त खाना खाकर चली जाती हैं। इन सब बातों में जो इतनी

पाबंदी है कि फ़र्ज़–वाजिब से बढ़कर समझी जाती हैं, और वही नाम व शोहरत की नीयत जो कुछ है, सब ज़ाहिर है, भला जिसमें घमंड वग़ैरह इतनी ख़राबियां हों, वह कैसे जायज़ होगी। इसी तरह कुछ जगहों पर यह रस्म है कि बच्चे की ननिहाल से कुछ खिचड़ी–मुर्ग़ी–बकरी और कपड़े वग़ैरह छठी के नाम से आते हैं। इसमें भी वही नाम, शोहरत और ख़ामख़ाह की पाबन्दी और कुछ शकुन भी है। इसलिए यह भी मना है।

12. ज़च्चा के कपड़े, बिछौना, जूतियां वग़ैरह सब दाई का हक़ समझा जाता है। कभी इस पाबंदी की वजह से तक्लीफ़ भी उठानी पड़ती है कि वही पुरानी जूती घसीटती सड़–सड़ करती रहो। अच्छा आराम का बिछौना कैसे बिछे कि चार दिन में छिन जाएगा। इसमें भी वही ख़राबियां जो बयान हुई, मौजूद हैं।

13. ज़च्चा को बिल्कुल ना–पाक और छत समझना, उससे अलग बैठना, उसका जूठा खा लेना तो क्या मानी, जिस बरतन को छले, उसमें बे–धोए मांझे पानी न पीना, मतलब यह कि बिल्कुल भंगिन की तरह समझना यह भी बेकार की और बेहूदा बात है।

14. यह भी एक दस्तूर है कि पाक होने तक या कम से कम छठी नहाने तक ज़च्चा के शौहर को उसके पास नहीं आने देतीं, बल्कि इसको ऐब और बहुत बुरा समझती हैं। इस पाबन्दी की वजह से कभी तो बड़ी परेशानी और हरज होता है कि कैसी ही ज़रूरत हो, मगर क्या मजाल कि वहां तक पहुंच हो जाए, यह कौन सी अक़्ल की बात है। कभी कोई ज़रूरी बात कहने की हुई और किसी और से कहने के क़ाबिल न हुई या कुछ काम न सही तब भी शायद उसका दिल अपने बच्चे को देखने के लिए चाहता हो। सारा जहान तो देखे, मगर वह न देखने पाये, यह क्या बेकार हरकत है। अच्छे साहबज़ादे तश्रीफ़ ले आए कि मियां–बीवी में जुदाई पड़ गयी इस बे–अक़्ली की भी कोई हद है।

15. कहीं बच्चे को छाज यानी सूप में बिठाती हैं या ज़िंदगी के लिए किसी टोकरी में रख कर घसीटती हैं, यह तो बिल्कुल ही नाजायज़ शकुन है।

16. कुछ जगहों पर छठी के दिन तारे दिखाये जाते हैं। ज़च्चा को नहला–धुला कर अच्छा से अच्छे क़ीमती कपड़ा पहना कर आंखें बंद करके रात को मकान के आंगन में लाती हैं और किसी तख़्त पर खड़ा करके आंखें खोल देती हैं कि पहले निगाह आसमान के सितारे पर पड़े, किसी और को न देखे। यह भी बिल्कुल बेहूदा रस्म है। भला ख़ामख़ाह अच्छे–ख़ासे आदमी

को अंधा बना देना कैसी बद–अक़्ली है और शकुन लेने का जो गुनाह हुआ वह अलग। और कहीं–कहीं तारे गिनवाने के बाद, ज़च्चे को सात सुहागिनों के साथ थाल खिलाया जाता है, जिसमें हर क़िस्म का खाना होता है ताकि कोई खाना बच्चे को नुक़सान न करे, यह भी मना है।

17. छठी के दिन लड़की वाले ज़च्चा के शौहर को एक जोड़ा कपड़ा देते हैं, इसमें भी इतनी पाबंदी कर लेना, जिसका मना होना बयान हो चुका है, बुरा है।

18. ज़च्चे को तीन बार नहलाने को ज़रूरी जानती हैं। छठी के दिन छोटा चिल्ला और बड़ा चिल्ला। शरीअत से तो सिर्फ़ यह हुक्म था कि जब ख़ून बंद हो जाए तो नहा ले, चाहे पूरे चालीस दिन पर ख़ून बंद हो जाए, चाहे दो ही चार दिन में बंद हो जाए और यहां से तीन नहान वाजिब समझे जाते हैं। यह शरीअत का पूरा मुक़ाबला हुआ या नहीं ? कुछ लोग यह बहाना करते हैं कि बिना नहाये हुए तबीयत घिन किया करती हैं, इसलिए ज़च्चे को नहला देती हैं कि तबीयत साफ़ हो जाए और मैल कुचैल साफ़ हो जाए, इसका जवाब यह है कि यह बहाना बिल्कुल ग़लत है। अगर सिर्फ़ यही वजह है तो ज़च्चे का जब दिल चाहे, नहा ले। यह वक़्तों की पाबंदी कैसी कि पांचवें दिन ही हो और फिर दसवें या पंद्रहवें दिन ही हो, इसके क्या मानी, अब तो सिर्फ़ रस्म ही रस्म है, कोई भी वजह नहीं, बल्कि यह देखा जाता है कि जब उसका दिल चाहता है, उस वक़्त नहीं नहलातीं या नहलाने से कभी–कभी ज़च्चा और बच्चा दोनों को नुक़सान पहुंच जाता है और सबसे बढ़कर ख़ास बात यह कि जब निफ़ास बन्द होता है, उस वक़्त हरगिज़ नहीं नहलातीं, जब तक नहलाने का वक़्त न हो। खुद बतलाओ यह खुला गुनाह है या नहीं।

लड़का पैदा होने के वक़्त ये बातें सुन्नत हैं कि उसको नहला–धुला कर दाहिने कान में अज़ान और बायें कान में तक्बीर कह दी जाएं और किसी दीनदार बुज़ुर्ग से थोड़ा छोहारा चबा कर उसके तालू में लगा दिया जाये, इसके अलावा बाक़ी सब रस्में और अज़ान देने वाले की मिठाई वग़ैरह पाबंदी के साथ, ये सब बेकार, अक़्ल के ख़िलाफ़ और मना है।

अक़ीक़े की रस्मों का बयान

पैदाइश के सातवें दिन लड़के के लिए दो बकरे और लड़की के लिए एक ज़िब्ह करना और उसका गोश्त कच्चा या पका कर बांट देना और बालों के बराबर चांदी वज़न करके ख़ैरात कर देना और सिर मूंडने के बाद ज़ाफ़रान सिर में लगा देना, बस ये बातें तो सवाब की हैं, बाक़ी जो बेकार की रस्में इसमें निकाली गयी हैं, वे देखने के क़ाबिल हैं।

1. बिरादरी और कुंबे के लोग जमा होकर सिर मूंडने के बाद कटोरी में और कुछ सूप में, जिसके अंदर कुछ अनाज भी रखा जाता है, कुछ नक़द भी डालते हैं, जो नाई का हक़ समझा जाता है और यह उस घरवाले के ज़िम्मे क़र्ज़ समझा जाता है और इन देने वालों के यहां कोई काम पड़े तो दिया जाए। इसकी ख़राबियां तुम ऊपर समझ चुकी हो।

2. ध्यानियां यानी बहन वग़ैरह यहां भी वही अपना हक़, जो सच पूछो तो ना–हक़ है, लेती हैं, जिसमें काफ़िरों की मुशाबहत के सिवा और कई ख़राबियां हैं—जैसे, देने वाले की नीयत ख़राब होना, क्योंकि यह यक़ीनी बात है कि कभी गुंजाइश नहीं होती, और देना बोझ होता है, मगर सिर्फ़ इस वजह से कि न देने में शर्मिंदगी होगी, लोग ताने देंगे, मजबूर होकर देना पड़ता है। इसी को रिया या दिखावा कहते हैं और नाम और दिखावे के लिए माल ख़र्च करना हराम है और ख़ुद अपने दिल में सोचो कि इतना मजबूर हो जाना, जिससे तक्लीफ़ पहुंचे, कौन–सी अक़्ल की बात है। इसी तरह लेने वाले की यह ख़राबी कि यह देना सिर्फ़ इनाम व एहसान है और एहसान में ज़बरदस्ती करना हराम है और यह ज़बरदस्ती है कि अगर न दे तो ताना सुने, बदनाम हो, ख़ानदान भर में नक्टू बने और अगर कोई ख़ुशी से दे तब भी शोहरत और नाम की नीयत होना यक़ीनी है, जिसे क़ुरआन व हदीस में साफ़–साफ़ मना किया गया है।

3. पंजीरी की तक़्सीम की रूसवाई यहां भी होती है, जिसका अक़्ल के ख़िलाफ़ होना ऊपर बयान हो चुका है और शोहरत व नाम भी मक़्सूद है, जो हराम है।

4. उन रस्मों की पाबंदी की मुसीबत में कभी गुंजाइश न होने की

वजह से अक़ीक़ा रोके रखना पड़ता है और मुस्तहब[1] के ख़िलाफ़ किया जाता है। कई जगह तो कई-कई वर्षों के बाद होता है।

5. एक यह भी रस्म है कि जिस वक़्त बच्चे के सिर पर उस्तरा रखा जाए, तुरंत उसी वक़्त बकरा ज़िब्ह हो, यह भी बेकार बात है। शरीअत से चाहे सिर मूंडने के कुछ देर बाद ज़िब्ह करे या ज़िब्ह करके सिर मुंडाये, सब दुरूस्त है। मतलब यह है कि उस दिन में दोनों काम हो जाने चाहिए।

6. सिर नाई को और रान दाई को देना ज़रूरी समझना भी बेकार बात है, चाहे दो या न दो, दोनों अख़्तियार हैं, फिर अपनी मन गढ़ंत अलग शरीअत बनाने से क्या फ़ायदा, रान न दो, उसकी जगह गोश्त दे दो तो इसमें क्या नुक़्सान है।

7. किसी-किसी जगह यह भी तरीक़ा है कि हड्डियां तोड़ने को बुरा जानते हैं। दफ़न कर देने को ज़रूरी जानते हैं। यह बे-जड़ पते की बात है। यही ख़राबियां उस रस्म में हैं जो दांत निकलने के वक़्त होती हैं कि क़ुंबे में घुघुनियां बटती हैं और उनका न होना फ़र्ज़ व वाजिब के छूट जाने से बढ़ कर बुरा और ऐब समझा जाता है। इसी तरह खीर-चटाई कि रस्म के छठे महीने बच्चे को ख़ीर चटाती हैं और उस दिन से खाना शुरू हो जाता है। यह भी ख़ामख़ाह की पाबंदी है, जिसकी बुराई मालूम कर चुकी हो। इसी तरह वह रस्म, जिसका दूध छुड़ाने के वक़्त रिवाज है, मुबारकबाद के लिए औरतों का जमा होना और चाहे-अनचाहे उनकी दावत ज़रूरी होना, खजूरों का बिरादरी में बंटना, ग़रज़ इन सबका एक हुक्म है और किसी किसी जगह खजूरों के साथ एक और रस्म है कि एक कोरे घड़े में पानी भर कर, इस पर खजूरें रख कर लड़के के हाथ से उठवाती हैं और समझती हैं कि लड़का जितनी खजूरें उठायेगा, उतने ही दिन ज़िद करेगा। इसमें ग़ैब की जानकारी के शकुन का दावा है, जिसका गुनाह होना ज़ाहिर है। ऐसे ही वर्ष गांठ की रस्म में जन्म की तारीख़ पर हर साल जमा होकर खाना पकाना और नाड़े में एक छिल्ला बांधना ख़ामख़ह की पाबंदी है। इसी तरह सील का कूंड़ा यानी जब लड़का जवान होने लगता है, तब मूंछों में रूपए से सन्दल लगाया जाता है और सिवैयां पकाती हैं ताकि सिवैयां की तरह लंबे लंबे बाल हो जाएं। यह सब शकुन है, जिसकी बुराई जान चुकी हो।

---

1. पसंदीदी काम

ख़त्ना की रस्मों का बयान

इसमें भी बेकार की रस्में लोगों ने निकाल ली हैं, जो अक़्ल के बिल्कुल ख़िलाफ़ और बक्वास हैं।

1. लोगों को आदमी और ख़त भेजकर बुलाना और जमा करना यह सुन्नत के बिल्कुल ख़िलाफ़ है। एक बार प्यारे नबी सल्ल० के एक सहाबी को किसी ने ख़त्ने में बुलाया, आपने तश्रीफ़ ले जाने से इंकार कर दिया। लोगों ने वजह पूछी तो जवाब दिया कि अल्लाह के रसूल सल्ल० के ज़माने में हम लोग न तो ख़त्ने में कभी जाते थे, न उसके लिए बुलाये जाते थे। इस हदीस से मालूम हुआ कि जिस चीज़ का मश्हूर करना ज़रूरी न हो, उसके लिए लोगों को जमा करना–बुलाना सुन्नत के ख़िलाफ़ है। इसमें बहुत सी रस्में आ गयीं, जिनके लिए बड़े लम्बे चौड़े एहतमाम होते हैं।

2. कुछ जगहों पर इन रस्मों की वजह से ख़त्ने में इतनी देर हो जाती है कि लड़का सयाना हो जाता है, जिसमें इतनी देर हो जाने के सिवा यह भी ख़रबी होती है कि सब लोग उसका बदन देखते हैं, हालांकि ख़त्ना करने वालों को छोड़कर औरों को उसका बदन देखना हराम है और यह गुनाह इस बुलाने ही की वजह से हुआ।

3. कटोरे में न्यौता पड़ने का यहां भी यह फ़ज़ीहता है, जिसकी ख़राबियों का ज़िक्र हो चुका।

4. बच्चे के ननिहाल से कुछ और कपड़े लाये जाते हैं, जिसको 'भात' कहते हैं, जिसकी असली वजह यह है कि हिंदुस्तान के ग़ैर मुस्लिम लोग बाप के मर जाने पर उसके माल में से लड़कियों को कुछ हिस्सा नहीं देते थे। जाहिल मुसलमानों ने भी इनकी देखा–देखी यही रवैया अपनाया और मान लें कि उनकी देखा–देखी नहीं किया बल्कि ख़ुद ही रस्म निकाली, फिर भी बुरी तो है ही। जिस हक़दार को हक़ अल्लाह और रसूल सल्ल० ने मुक़र्रर फ़रमाया है, उसको न देना, ,ख़ुद दबा बैठना कहां दुरुस्त है। ग़रज़ यह कि जब लड़की को मीरास से महरूम रखा तो उसकी तसल्ली के लिए यह तजवीज़ किया कि मुख़्तलिफ़ मौक़ों और तक़रीबों में उसको कुछ दे दिया जाए, इस तरह देकर अपनी मन समझौती कर ली कि हमारे ज़िम्मे अब इसका कुछ हक़ नहीं रहा। ग़रज़ यह कि इस रस्म को निकालने की वजह

या तो काफ़िरों की पैरवी है या ज़ुल्म और ये दोनों हराम हैं। दो ख़राबियां तो ये हुईं। तीसरी ख़राबी वही बेहद पाबन्दी कि ननिहाल वालों के पास चाहे हो, चाहे न हो, हज़ार यत्न कर लो, सूदी क़र्ज़ लो, कोई चीज़ गिरवी रखो, जिसमें आज कल या तो नक़द सूद देना पड़ता है, या नक़द सूद तो नहीं देना पड़ता लेकिन जो जायदाद रेहन रखी है, उसकी पैदावार वही लोग जिसके पास रेहन रखी। यह भी सूद है और सूद का लेना–देना दोनों हराम हैं। ग़रज़ कुछ हो, मगर यहां सामान ज़रूरी हो। ख़ुद ही बतलाओ जब एक ग़ैर ज़रूरी बल्कि गुनाह का इस ज़ोर–शोर से एहतमाम हुआ कि फ़र्ज़ व वाजिब का भी इतना एहतमाम नहीं होता तो शरीअत से बाहर क़दम रखना हुआ या नहीं।

चौथी ख़राबी वही शोहरत और बड़ाई, नाम, घमंड---जिनका हराम होना ऊपर बयान हो चुका। कुछ कहते हैं कि अपने रिश्तेदारों से अच्छा व्यवहार करना तो इबादत और सवाब है, फिर इसमें गुनाह क्यों है। जवाब यह है कि अगर सुलूक और एहसान मंज़ूर होता, तो बग़ैर पाबंदी के जब अपने पास होता और उनको हाजत होती, दे दिया करते, यहां पर तो रिश्तेदारों को उपवास होने लगे, ख़बर भी नहीं लेते। रस्में करते वक़्त नाम–नाक करने के लिए सुलूक व एहसान नाम रख लिया।

5. कुछ शहरों में यह आफ़त है कि ख़त्ने में या सेहत के नहान के दिन ख़ूब राग या बाजा, नाच–रंग होता है, कहीं डोमनियां गाती हैं जिनका नाजायज़ होना ऊपर लिखा गया है। इसकी ख़राबियां और बुराइयां, अल्लाह तआला ने चाहा तो आगे बयान की जाएंगी। ग़रज़ इन सारी बेकार की रस्मों और गुनाहों को रोकना चाहिए। जब बच्चे में बर्दाश्त की ताक़त देखें, चुपके से नाई को बुलाकर ख़त्ना करा दें। जब अच्छा हो जाए नहलायें। अगर गुंजाइश हो और पाबंदी भी न करे और शोहरत, नाम, ताना और बदनामी का भी ख़्याल न हो तो दो चार दोस्त या दो चार ग़रीबों को जो मिल सके, ख़िला दें। अल्ला–अल्ला, ख़ैर सल्ला---लेकिन बार–बार ऐसा भी न करे, वरना फिर वही रस्म पड़ जाएगी।

मक्तब यानी बिस्मिल्लाह की रस्मों का बयान

रस्मों में से एक बिस्मिल्लाह की रस्म है, जो बड़े एहतमाम और पाबंदी के साथ लोगों में जारी है। इसमें ये ख़राबियां हैं :—

1. चार वर्ष चार महीने चार दिन का होना अपनी तरफ़ से मुक़र्रर कर लिया है, जो बिल्कुल बेकार की बात है, फिर उसकी इतनी पाबंदी कि चाहे जो कुछ हो, उसके ख़िलाफ़न होने पाये और अनपढ़ लोग तो इसे शरीअत ही की बात समझते हैं, जिसकी वजह से अक़ीदे में ख़राबी और शरीअत के हुक्म में एक पच्चर लगाना लाज़िम आता है।

2. दूसरी ख़राबी मिठाई बांटने की बेहद पाबंदी कि जहां से बने, ज़बरदस्ती ज़रूर करो, न करो तो बदनाम हो, नक्कू बनो, जिसका बयान ऊपर हो चुका है, फिर शोहरत और नाम और लोगों के दिखावे और वाह–वाह सुनने के लिए करना, यह अलग रहा।

3. कुछ पैसों वाले चांदी की क़लम–दवात से चांदी की तख़्ती पर लिखा कर बच्चों को उसमें पढ़वाते हैं। चांदी की चीज़ों को बरतना और काम में लाना हराम है, इसलिए इसमें लिखवाना भी हराम हुआ और इसमें पढ़वाना भी।

4. कुछ लोग बच्चे को उस वक़्त शरीअत के ख़िलाफ़ का कपड़ा पहनाते हैं। रेशमी या ज़री या कुसुम या ज़ाफ़रान का रंगा हुआ, यह भी गुनाह है।

5. कमीनों और ध्यानियों का इसमें भी फ़र्ज़ से बढ़कर हक़ समझा जाता है, जिसकी बुराई ऊपर बयान हो चुकी। यह भी रोक दिए जाने के क़ाबिल है। जब लड़का बोलने लगे, उसको कलमा सिखाओ, फिर किसी दीनदार बुज़ुर्ग, बरकती आदमी की ख़िदमत में जाकर बिस्मिल्लाह कहला दो और इस नेमत के शुक्रिए में अगर दिल चाहे तो बिला पाबंदी के जो तौफ़ीक़ हो, छिपाकर ख़ुदा की राह में कुछ ख़ैर–ख़ैरात कर दो। लोगों को दिखलाकर हरगिज़ मत दो। बाक़ी और सब पाख़ंड हैं। अक़्सर देखा जाता है कि जब बच्चे की ज़ुबान खुलने लगती है तो घर वाले अब्बा,

अम्मा, बाबा वग़ैरह कहलाते हैं; इसकी जगह अल्लाह–अल्लाह सिखलाओ तो कैसा अच्छा हो और इसी के क़रीब–क़रीब क़ुरआन ख़त्म होने के बाद रस्में होती हैं और उनमें भी बहुत सी ग़ैर–ज़रूरी बातों की बहुत पाबंदी की जाती है और बहुत सी बातें नाम के लिए की जाती हैं जैसे मेहमानों को जमा करना, किसी–किसी को जोड़े देना, इनकी बुराइयां ऊपर मालूम हो चुकी हैं।

तक़रीबों में औरतों के जाने और जमा होने का बयान

बिरादरी की औरतें कई तक़रीबों में जमा होती हैं, जिनमें कुछ तो ऊपर बयान हो चुकीं और कुछ बाक़ी हैं, जिनका बयान आगे आता है, यह सब नाजायज़ है। तक़रीबों के अलावा यों भी जब कभी जी चाहा कि फ़लानी को बहुत दिन हुए, नहीं देखा, बस झट डोली मंगायी और चल दीं या कोई बीमार हुआ तो उसको देखने चली गयीं। कहीं कोई खुशी हुई, वहहं मुबारकबादी देने जा पहुंची। कुछ तो ऐसी आज़ाद होती हैं कि बे डोली मंगवाये भी रात को चल देती हैं। बस रात हुई और सैर को सूझी। यह तो और भी बुरा है। और अगर चांदनी रात हुई तो और भी बे–हयाई है। मतलब यह है कि औरतों को अपने घर से निकलना और कहीं आना–जाना, बहुत सी ख़राबियों की वजह से किसी तरह दुरूस्त नहीं, बस इतनी इजाज़त है कि कभी–कभी अपने मां–बाप को देखने चली जाया करें। इसी तरह मां–बाप के सिवा और महरम रिश्तेदारों को देखने जाना दुरूस्त है, मगर साल भर में सिर्फ़ एक–आध बार। बस, इसके सिवा और कहीं बे–एहतियाती से जाना जिस तरह दस्तूर है, जायज़ नहीं, न रिश्तेदारों के यहां न किसी और के यहां, न ब्याह–शादी में, न ग़मी में, न बीमार के पूछने में, न मुबारकबाद देने को, न बड़ी रात के मौक़े पर, बल्कि ब्याह–बारात वग़ैरह में, जब किसी तक़रीब की वजह से महफ़िल और मज्मा हो तो अपने महरम रिश्तेदार के घर जाना भी दुरूस्त नहीं। अगर शौहर की इजाज़त से गयी तो वह भी गुनाहगार हुआ, और यह भी गुनाहगार हुई। अफ़सोस कि इस हुक्म पर हिन्दुस्तान भर में कहीं अमल नहीं, बल्कि इसको तो नाजायज़ ही

नहीं समझतीं, बल्कि जायज़ ख़्याल कर रखा है। हालांकि इसी की वजह से ये सारी ख़राबियां हैं। मतलब यह है कि अब मालूम हो जाने के बाद बिल्कुल छोड़ देना चाहिए और तौबा करनी चाहिए। यह तो शरीअत का हुक्म है। अब इसकी बुराइयां और ख़राबियां सुनो :—

जब बिरादरी में ख़बर मश्हूर हुई कि फ़्लां घर फ़्लानी तक़रीब है तो हर बीवी को नये और क़ीमती जोड़े की फ़िक्र तो है, कभी ख़ाविंद से फ़रमाइश होती है, कभी खुद बज़ाज़ को दरवाज़े पर बुलाकर उससे उधार लिया जाता है, या सूदी क़र्ज़ लेकर ख़रीदा जाता है। शौहर के पास पैसे नहीं होते, तब उसकी मजबूरी सुनी नहीं जाती। ज़ाहिर है कि यह जोड़ा सिर्फ़ दिखाने और नाम के लिए बनता है, जिसके लिए हदीस में आया है कि ऐसे शख़्स को क़ियामत के दिन ज़िल्लत का कपड़ा पहनाया जाएगा। एक गुनाह तो यह हुआ।

और फिर इस मक़्सद से माल का ख़र्च करना फ़िज़ूल ख़र्च है, जिसकी बुराई पहले बाब में आ चुकी है। यह दूसरा गुनाह हुआ।

ख़ाविंद से उसकी ताक़त से ज़्यादा, बे-ज़रूरत फ़रमाइश करना, उसको तक्लीफ़ पहुंचाना है। यह तीसरा गुनाह हुआ।

बज़ाज़ को बुलाकर बे-ज़रूरत उसके महरम से बातें करना, बल्कि अक्सर थान लेने-देने के वास्ते आधा-आधा हाथ, जिसमें चूड़ी मेंहदी, सभी कुछ होता है, बाहर निकाल देना, कितनी ग़ैरत और शर्म के ख़िलाफ़ है। यह चौथा गुनाह हुआ।

फिर अगर सूद पर क़र्ज़ लिया, तो सूद देना पड़ा, यह पांचवां गुनाह हुआ।

अगर ख़ाविंद की नीयत इन बे-जा फ़रमाइशों से बिगड़ गयी और हराम आमदनी पर उसकी नज़र पहुंची, किसी का हक़ मारा, घूस लिया और फ़रमाइशें पूरी कर दीं और अक्सर यही होता भी है कि हलाल आमदनी से ये फ़रमाइशें पूरी नहीं होतीं, तो यह गुनाह उस बीवी की वजह से हुआ और गुनाह की वजह बनना भी गुनाह है, यह छठा गुनाह हुआ।

अक्सर जोड़े के लिए गोटा-ठप्पा मसाला भी लिया जाता है और न जानने और बे-परवाही की वजह से इसके ख़रीदने में अक्सर सूद लाज़िम आ जाता है, क्योंकि चांदी-सोने और उसकी चीज़ों के ख़रीदने के मस्अले

बहुत नाज़ुक और बारीक हैं जैसा कि अक्सर ख़रीदने–बेचने[1] के बयान में लिख चुके हैं। यह सातवां गुनाह हुआ।

फिर ग़ज़ब यह है कि एक शादी के लिए जो जोड़ा बना, वह दूसरी शादी के लिए काफ़ी नहीं, उसके लिए फिर दूसरा जोड़ा चाहिए, वरना औरतें नाम रखेंगी, इसके पास बस यही एक जोड़ा है, इसको बार–बार पहन कर आती है, इसलिए इतने ही गुनाह फिर दोबारा जमा होंगे। गुनाह को बार–बार करते रहना भी बुरा और गुनाह है। यह आठवां गुनाह हुआ।

यह तो पोशाक की तैयारी थी, अब गहने की चिंता हुई। अगर अपने पास नहीं होता तो मांगा–तांगा पहना जाता है और उसके मांगे का होना ज़ाहिर नहीं किया जाता, बल्कि छिपाती हैं और अपनी ही मिल्कियत ज़ाहिर करती हैं। यह एक क़िस्म का धोखा और झूठ है। हदीस शरीफ़ में आया है कि जो कोई ऐसी चीज़ का अपना होना ज़ाहिर करे, जो सचमुच उसकी नहीं, उसकी ऐसी मिसाल है, जैसे किसी ने दो कपड़े झूठ और धोखे के पहन लिए यानी सिर से पांव तक झूठ लपेट लिया। यह नवां गुनाह हुआ।

फिर अक्सर गहने भी ऐसे पहने जाते हैं, जिसकी झंकार दूर तक जाए ताकि महफ़िल में जाते ही सबकी निगाहें उन्हीं के नज़ारें में लग जाएं। बजते गहने के पहनने से खुद मना किया गया है। हदीस शरीफ़ में है कि हर बाजे के साथ शैतान है। यह दसवां गुनाह हुआ।

अब सवारी का वक़्त आया। नौकर को डोली लाने का हुक्म हुआ या जिसके घर काम था उसके यहां से डोली आ गयी तो बीबी को नहाने की चिंता हुई। कुछ खली–पानी की तैयारी में देर हुई, कुछ गुस्ल की नीयत बांधने में देर लगी। ग़रज़ इस देर–वेर में नमाज़ जाती रही, तब कुछ परवाह नहीं या और कोई ज़रूरी काम में हरज हो जाए तब कुछ परवाह नहीं और अक्सर भली–मानुषों के गुस्ल के दिन यही मुसीबत पेश आती है। बहरहाल अगर नमाज़ क़ज़ा हो गयी या मक्रूह वक़्त हो गया, तो यह ग्यारहवां गुनाह हुआ।

अब कहार दरवाज़े पर पुकार रहे हैं और बीबी अंदर से उनको गालियां और कोसने सुना रही हैं। बे–वजह किसी ग़रीब को दूर–दबक करना या गाली–कोसने देना ज़ुल्म और गुनाह है, यह बारहवां गुनाह हुआ।

---

1. इसका 'मामले' वाले हिस्से में साफ़–साफ़ बयान हैं।

अब ख़ुदा–ख़ुदा करके बीबी तैयार हुई और कहारों को हटा कर सवार हुई। कुछ ऐसी असावधानी से सवार होती हैं कि डोली के अंदर से पल्लौ यानी आंचल लटक रहा है या किसी तरफ़ से पर्दा खुल रहा है या इत्र–फुलेल इतना भरा हुआ है कि रास्ते में ख़ुश्बू महकी जाती है, यह ना–महरमों के सामने अपना सिंगार ज़ाहिर करना है। हदीस शरीफ़ में आया है कि जो औरत घर से इत्र लगाकर निकले यानी इस तरह कि दूसरों को भी ख़ूश्बू पहुंचे, तो वह ऐसी–ऐसी है यानी बहुत बुरी है, यह तेरहवां गुनाह हुआ।

अब मंज़िल पर पहुंचीं। कहार डोली रखकर अलग हुए और यह बे–धड़क उतर कर घर में दाख़िल हुई या ख़्याल ही नहीं कि शायद कोई ना–महरम मर्द घर में हो और बहुत बार ऐसा होता भी है कि ऐसे मौक़े पर ना–महरम का सामना और चार आंखें हो जाती हैं। मगर औरतों को तमीज़ ही नहीं कि पहले घर में पता लगा लिया करें। भारी शुबहा होने पर पता न करना यह चौदहवां गुनाह हुआ।

अब घर में पहुंची तो वहां की बीबियों को सलाम किया। ख़ूब हुआ, कुछ ने तो ज़ुबान को तक्लीफ़ ही नहीं दी, सिर्फ़ माथे पर हाथ रख दिया, बस सलाम हो गया। इस तरह सलाम करने से हदीस शरीफ़ में मना किया गया है। कुछ ने सलाम का लफ़्ज़ कहा भी तो सिर्फ़ सलाम। यह भी सुन्नत के ख़िलाफ़ है, अस्सलामु अलैकुम कहना चाहिए। अब जवाब देखिए, ठंडी रहो, जीती रहो, सुहागिन रहो, उम्र बड़ी हो, दूधों नहाओ, पूतों फलों, भाई जिए, मियां जिए, बच्चा जिए, मतलब परिवार भर के नाम गिनाना आसान और 'वअलैकुम अस्सलाम' कि जिसके अंदर सब दुआएं आ जाती हैं, कठिन। यह हमेशा–हमेशा सुन्नत के ख़िलाफ़ चलना पंद्रहवां गुनाह हुआ।

अब मज्लिस जमी, तो बड़ा काम यह हुआ कि गपें शुरू हो गयीं। इसकी शिकायत, उसकी पीठ पीछे बुराई, इसकी चुग़ली, उस पर बुहतान, जो बिल्कुल हराम और सख़्त मना है। यह सोलहवां गुनाह हुआ।

बातों के दर्मियान में हर बीबी इस कोशिश में है कि मेरी पोशाक और ज़ेवर पर सबकी नज़र पड़नी चाहिए। हाथे से, पांव से, ज़ुबान से, मतलब यह कि तमाम बदन से यह ज़ाहिर होता है। यह सिर्फ़ रिया (दिख़ावा) है, जिसका हराम होना क़ुरआन और हदीस में साफ़–साफ़ आया है। यह सत्तरहवां गुनाह हुआ।

और जिस तरह हर बीबी दूसरों को अपने फ़ख्र का सामान दिखलाती

है, उसी तरह हर एक दूसरों के कुल हालात देखने की भी कोशिश करती हैं, फिर अगर किसी को अपने से कम पाया तो उसको नीचा व ज़लील और अपने को बड़ा समझा। कुछ घमंडी तो ऐसी होती हैं कि सीधे मुंह बात भी नहीं करतीं, यह सख़्त गुनाह है। यह अठारवां गुनाह हुआ।

और अगर दूसरों को अपने से बढ़ा हुआ देखा, तो जलन और ना-शुक्री और लालच अपनाया। यह उन्नीसवां, बीसवां और इक्कीसवां गुनाह हुआ। अक्सर इस तूफ़ान और बेहूदा कामों में लगे रहने से नमाज़ें उड़ जाती हैं, वरना वक़्त तो ज़रूर ही तंग हो जाता है। यह बाईसवां गुनाह हुआ।

फिर अक्सर एक दूसरे को देखकर य एक दूसरे से सुनकर ये बेकार की रस्में भी सीखती हैं। गुनाह का सीखना-सिखाना दोनों गुनाह हैं। यह तेईसवां गुनाह हुआ।

यह भी एक रस्म है कि ऐसे वक़्त सक़्क़ा जो पानी लाता है, उससे पर्दा करने के लिए बंद मकानों में नहीं जातीं, बल्कि उसको हुक्म होता है कि तू मुंह पर निक़ाब डालकर चला आ और किसी को देखना मत। अब आगे उसका दीन व ईमान जाने। चाहे कनखियों से पूरे मज्मे को देख, ले तो भी किसी को कुछ ग़ैरत और हया नहीं और ऐसा होता भी है, क्यों कि जो कपड़ा वह मुंह पर डालता है उससे सब दिखायी देता है, वरना सीधे घड़े-मटके के पास जाकर पानी कैसे भरता। ऐसी जगह जान-बूझकर बैठे रहना कि ना-महरम देख सके, हराम है। यह चौबीसवां गुनाह हुआ।

कुछ बीबियों के सामने लड़के दस-दस, बारह-बारह वर्ष की उम्र के अंदर घुसे चले आते हैं और मुरव्वत में उनसे कुछ नहीं कहा जाता, सामने आना पड़ता है। यह पचीसवां गुनाह हुआ, क्योंकि शरीअत के मुक़ाबले में किसी की मुरव्वत करना गुनाह है और जब लड़का सयाना हो जाया करे तो उससे पर्दा करने का हुक्म है।

अब खाने के वक़्त इस क़दर तूफ़ान मचता है कि एक-एक बीबी चार-चार तुफ़ैलियों को साथ लाती है और उनको ख़ूब भर देती हैं और घरवाले के माल या आबरू की कुछ परवाह नहीं करतीं। यह छब्बीसवां गुनाह हुआ।

अब छुट्टी पाने के बाद जब घर जाने की होती हैं तो कहारों की आवाज़ सुनकर याजूज व माजूज की तरह दौड़ती हैं कि एक पर दूसरी और दूसरी पर तीसरी, ग़रज़ सब दरवाज़े पर जा पहुंचती हैं कि पहले मैं

ही सवार हूं। कभी–कभी कहार हटने भी नहीं पाते और अच्छी तरह से सामना हो जाता है। यह सत्ताईसवां गुनाह हुआ।

कभी–कभी एक–एक डांली पर दो–दो लद गयीं और कहारों को नहीं बताया कि एक पैसा कहीं और न देना पड़े। यह अठाईसवां गुनाह हुआ।

फिर किसी की कोई चीज़ गुम हो जाये तो, बे–दलील किसी पर तोहमत लगाना, बल्कि कभी–कभी उस पर सख़्ती करना, अक्सर शादियों में होता है। यह उन्नतिसवां गुनाह हुआ।

फिर अक्सर तक़रीब वाले घर के मर्द असावधानी और जल्दी में और कुछ सिर्फ़ झांकने–ताकने के लिए बिल्कुल दरवाज़े में घर के रू–ब–रू आ कर खड़े होते हैं और बहुतों को निगाह डालते हैं। उनको देखकर किसी ने मुंह फेर लिया, कोई क़िसी की आड़ में हो गयी, किसी ने ज़रा सा सिर नीचा कर लिया, बस यह पर्दा हो गया। अच्छी–ख़ासी सामने बैठी रहती हैं। यह तीसवां गुनाह हुआ।

फिर दूल्हा की ज़ियारत और बरात के तमाशे को देखना फ़र्ज़ और बरकती चीज़ समझती हैं, जिस तरह औरत को अपना बदन पराये मर्दों को दिखलाना जायज़ नहीं, वैसे ही बे–ज़रूरत ग़ैर मर्द को देखना भी मना है। यह इक्तीसवां गुनाह हुआ।

फिर घर लौट आने के बाद कई कई दिन तक आने वाली बीबियों में और तक़रीब वाले की कार्रवाइयों में जो ऐब निकाले जाते हैं और कीड़े डाले जाते हैं, यह बत्तीसवां गुनाह हुआ।

इसी तरह की बहुत सी ख़राबियां और गुनाह की बातें औरतों के जमा होने में हैं। खुद ख़्याल करो कि जिसमें इतनी ज़्यादा ख़राबियां हों वह कैसे जायज़ हो सकता है। इसलिए इस रस्म का बंद करना सबसे ज़्यादा ज़रूरी है।

मंगनी की रस्मों का बयान

मंगनी में भी तूफ़ाने बे–तमीज़ी की तरह बहुत सी रस्में की जाती हैं, उनमें से कुछ को हम बयान करते हैं—

1. जब मंगनी होती है, तो ख़त लेकर नाई आता है, तो लड़की वाले की तरफ़ से शकराना बनाकर नाई के आगे रखा जाता है। इसमें भी वही

बेहद पाबंदी कि फ़र्ज़ वाजिब चाहे टल जाए मगर यह न टले। हो सकता है कि किसी घर में इस वक़्त दाल–रोटी ही हो, मगर जहां से बने, शकराना करो, वरना मंगनी ही न होगी। एक ख़राबी तो यह हुई।

फिर इस बेहूदा बात के लिए अगर सामान मौजूद न हो तो क़र्ज़ लेना पड़ता है, हालांकि बे–ज़रूरत क़र्ज़ लेना मना है। हदीस में ऐसे फ़र्ज़ क़र्ज़ लेने पर बड़ी धमकी आयी है। दूसरा गुनाह यह हुआ।

2. वह नाई खाना खाकर सौ रूपए या जितने लड़की वाले ने दिए हों, थाल में डाल देता है। लड़के वाला इसमें से एक या दो रूपया उठा कर बाक़ी फेर देता है और ये रूपए अपने कमीनों को बांट देता है। भला सोचने की बात है कि जब एक ही दो रूपए का लेन देन मंज़ूर है तो ख़ामख़ाह सौ रूपये को क्यों तक्लीफ़ दी और इस रस्म को पूरा करने के लिए कभी–कभी बल्कि अक्सर सूदी क़र्ज़ लेना पड़ता है, जिसके लिए हदीस में लानत आयी है और अगर क़र्ज़ भी न लिया तो फ़ख़्र और अपनी बड़ाई बतलाने के अलावा इसमें कौन सी अक़्ली मस्लहत है और जब सबको मालूम है कि एक–दो रूपए से ज़्यादा न लिया जाएगा तो सौ क्या, हज़ार रूपये में भी कोई बड़ाई और शान नहीं रही बड़ाई तो जब होती जब देखने वाले समझते कि तमाम रूपया भेंट चढ़ा दिया। अब तो सिर्फ़ मसख़रापन और बच्चों का सा खेल ही खेल रह गया और कुछ नहीं, मगर लोग करते हैं उसी फ़ख़्र और शान व शौकत के लिए। और अफ़सोस कि बड़े–बड़े अक़्लमंद भी, जो औरों को अक़्ल सिखाते हैं, वे भी इस अक़्ल के ख़िलाफ़ की रस्म में पड़े हुए हैं। ग़रज़ इसमें भी असल ईजाद के एतबार से तो दिखावे का गुनाह है और अब चूंकि बैकार को काम हो गया, जैसा कि अभी बयान हुआ, इसलिए यह भी बुरा है। हदीस शरीफ़ में आया है कि आदमी के इस्लाम की खुबी यह है कि सिर्फ़ बेकार का बातों को छोड़ दे। मतलब यह कि बेकार की बातें भी हुज़ूर सल्ल० की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ हैं और अगर सूदी रूपया लिया गया तो इसका गुनाह तो सब ही जानते हैं। ग़रज़ इतनी ख़राबियां इसमें भी मौजूद हैं।

3. फिर लड़की वाला नाई को एक जोड़ा कुछ नक़द रूपए के साथ देता है और यहां भी वही दिल्लगी होती है कि देना मंज़ूर है एक–दो और दिखलाये जाते हैं सौ। सच तो यह है कि रिवाज भी अजब चीज़ है कि कैसी ही अक़्ल के ख़िलाफ़ कोई बात हो, मगर अक़्लमंद भी उसके करने में नहीं शर्माते। इसकी ख़राबियां अभी बयान हो चुकीं।

4. नाई के लौटने से पहले सब औरतें जमा होती हैं और डोमनियां गाती हैं। औरतों के जमा होने की ख़राबियां बयान हो चुकीं और गाने की ख़राबियां ब्याह की रस्मों में बयान होंगी। ग़रज़ यह भी ना जायज़ है।

5. जब नाई पहुंचता है, अपना जोड़ा रूपयों सहित घर में भेज देता है। वह जोड़ा तमाम बिरादरी में घर–घर दिखला कर नाई को दे दिया जाता है। खुद ग़ौर करो जहां हर–हर बात को दिखलाने की पख़ लगी हो, कहां तक नीयत दुरूस्त रह सकती है। यक़ीनन जोड़ा बनाने के वक़्त यही नीयत होती है। ऐसा बनाओ कि कोई नाम न रखे। ग़रज़ दिखावा भी हुआ और बेकार का ख़र्च भी, जिसका हराम होना कुरआन व हदीस में साफ़–साफ़ आ गया है और मुसीबत यह है कि कभी इस एहतमाम पर भी देखने वालों को पसंद नहीं आता। वही कहावत है, चिड़िया अपनी जान से गयी, खाने वाले को मज़ा न मिला। कुछ घमंड की मारी इसमें ख़ूब ऐब निकालने लगती हैं और बदनाम करती हैं, ग़रज़ दिखावा, फ़िज़ूल ख़र्ची, ग़ीबत सभी कुद इस रस्म की वजह से होता है।

6. कुछ मुद्दत बाद लड़की वाले की तरफ़ से मिठाई अंगूठी और रूमाल और किसी क़दर रूपए, जिसको निशानी कहते हैं, भेजे जाते हैं और ये रूपये न्यौते के तौर पर जमा करके भेजा जाता है। यहां भी दिखावा, और बेहूदा और बेकार ख़र्च की गंदगी मौजूद है और न्यौते की ख़राबियां ऊपर आ चुकीं।

7. जो नाई और कहार यह मिठाई लेकर आते हैं, नाई को जोड़ा और कहारों की पगड़ियां और कुछ नक़द देकर रूख़्सत कर दिया जाता है। इस मिठाई को परिवार की बड़ी–बूढ़ी औरतें बिरादरी में घर–घर बांटती हैं और उसी के घर खाती हैं। सब जानते हैं कि इन कहारों की कुछ मज़दूरी नहीं मुक़र्रर की जाती, न इसका ख़्याल होता है कि ये ख़ुशी से जाते हैं या इन पर ज़बरदस्ती हो रही है। अक्सर वे लोग अपने किसी कारोबार या अपनी बीमारी या किसी रिश्तेदार या बीवी बच्चे की बीमारी की मजबूरी पेश करते हैं, मगर ये भेजने वाले अगर कुछ क़ाबूदार हुए तो खुद वरना किसी दूसरे क़ाबूदार भाई से जूते लगवा कर, ख़ूब पिटवा कर, ज़बरदस्ती भेजते हैं और इस मौक़े पर क्या अक्सर इन लोगों से ज़बरदस्ती काम लिया जाता है जो बिल्कुल गुनाह और ज़ुल्म है और ज़ुल्म का वबाल दुनिया में भी अक्सर पड़ता है और आख़िरत का गुनाह है ही। फिर मज़दूरी का न तै करना यह दूसरी बात शरीअत के ख़िलाफ़ हुई। यह उनकी रवानगी के फल–फूल हैं

और तक़्सीम करने में दिखावे का होना किसको मालूम नहीं। फिर तक़्सीम में इतनी मश्ग़ूली होती है कि अक्सर बांटने वालियों की नमाज़ें उड़ जाती हैं और वक़्त का तंग हो जाना तो ज़रूरी बात है। एक बात शरीअत के ख़िलाफ़ यह हुई।

जिनके घर हिस्से जाते हैं, उनके नख़रे बात–बात पर, हिस्सा फेर देना अलग उठाना पड़ता है, बल्कि कुबूल करना भी इस दिखावे की रस्म को रौनक़ देना और रिवाज डालना है। इसलिए शरीअत से यह भी ठीक नहीं। ग़रज़ इन सब बेकार की बातों को छोड़ देना वाजिब है। बस एक पोस्टकार्ड या ज़ुबानी बातचीत से निकाह का पैग़ाम दिया जा सकता है। दूसरी तरफ़ के लोग अपने तौर पर ज़रूरी बातों की खोज करके एक पोस्टकार्ड या फिर ज़ुबानी वायदे कर ले, लीजिए मंगनी हो गयी। अगर पक्की बात पूरी करने के लिए ये रस्में अदा की जाती हैं, तो एक तो किसी मस्लहत के लिए गुनाह करना दुरूस्त नहीं। फिर हम देखते हैं कि इन बेकार की रस्मों के बावजूद भी जहां मर्ज़ी नहीं होती, जवाब दे देते हैं, कोई भी कुछ नहीं कर सकता।

8. कहीं–कहीं तो मांगने के वक़्त ये रस्में होती हैं कि ससुराल वाले कुछ लोग आते हैं और दुल्हन की गोद भरी जाती है, जिसकी सूरत यह है कि लड़के का सरपरस्त अंदर बुलाया जाता है। वह दुल्हन की गोद में मेवा और पेड़े और बताशे वग़ैरह रखता है और हाथ पर एक रूपया रूप का रखता है, इसके बाद अब लड़की वाले इनको इसका बदला और जितनी तौफ़ीक़ हो, उतने रूपए देते हैं। इसमें भी कई बुराइयां हैं––एक तो अज्नबी मर्द को घर में बुलाना और उससे गोद भरवाना, अगरचे पर्दे की आड़ से हो, लेकिन फिर भी बुरा है। दूसरे गोद भरने में वही शकुन जो शरअन नाजायज़ है। तीसरे नारियल के सड़े हुए या अच्छा निकलने से लड़की की बुराई या भलाई की फ़ाल लेती हैं। इसका शिर्क और बुरा होना बयान हो चुका है। चौथे इसमें इस क़दर पाबंदी, जिसका बुरा होना तुम समझ चुकी हो और शोहरत और नाम भी ज़रूरी है। मतलब यह है कि कोई रस्म ऐसी नहीं है जिसमें गुनाह न होता हो।

ब्याह की रस्मों का बयान

सबसे बड़ी तक़रीब, जिसमें ख़ूब दिल खोलकर हौसले निकाले जाते हैं

और बहुत ज़्यादा रस्में अदा की जाती हैं, वह यही शादी की तक़रीब है, जिसको सच में बर्बादी कहना सही है और बर्बादी भी कैसी, दीन की भी और दुनिया की भी, इसमें जो रस्में की जाती हैं, ये हैं—

1. सबसे पहले बिरादरी के मर्द जमा होकर लड़की वाले की तरफ़ से तै की हुई तारीख़ का ख़त लिखकर नाई को देकर विदा करते हैं। यह रस्म ऐसी ज़रूरी है कि चाहे बरसात हो, राह में नदी, नाले पड़ते हों, जिसमें नाई साहब के बिल्कुल ही विदा हो जाने का डर हो, ग़रज़ कुछ भी हो, मगर यह मुम्किन नहीं कि डाक के ख़त को काफ़ी समझें या नाई से ज़्यादा कोई भरोसे का आदमी जाता हो, उसके हाथ भेजें। शरीअत ने जिस चीज़ को ज़रूरी नहीं ठहराया, उसको इतना ज़रूरी समझना कि शरीअत के ज़रूरी बतलाये हुए कामों से ज़्यादा उस पर ध्यान देना, ख़ुद इंसाफ़ करो कि शरीअत का मुक़ाबला है या नहीं और जब मुक़ाबला है तो छोड़ देना वाजिब है या नहीं। इसी तरह मर्दों के जमा होने को ज़रूरी समझना है। इसमें भी यही ख़राबी है। अगर कहो कि मश्विरे के लिए जमा होते हैं, तो यह बिल्कुल ग़लत है। वे बेचारे तो खुद पूछते हैं, कि कौन-सी तारीख़ लिखें, जो पहले से घर में ख़ास मश्विरा करके मुक़र्रर कर चुके हैं, वही बतला देते हैं और वे लोग लिख देते हैं। अगर मश्विरा ही करना है, जिस तरह और कामों में मश्विरा होता है कि एक-दो अक़्लमंद लोगों से राय लेली, बस यह काफ़ी है। घर-घर के आदमियों को बटोरना क्या ज़रूरी है। फिर अक्सर लोग जो नहीं आ सकते, अपने छोटे-छोटे बच्चों को अपनी जगह भेज देते हैं, भला वे मश्विरे में क्या तीर चलाएंगे। कुछ भी नहीं। ये सब मन समझौतियां है। सीधी बात क्यों नहीं कहते कि साहब यों ही रिवाज चला आता है। बस इसी रिवाज की बुराई और इसके छोड़ने का वाजिब होना बयान किया जाता है। ग़रज़ इस रस्म की सब बातें शरअ के ख़िलाफ़ है। फिर इसमें यह भी एक ज़रूरी बात है कि ये ख़त लाल ही हों और उस पर गोटा भी लिपटा हो। यह भी इसी बेहद पाबंदी के अंदर दाख़िल है, जिसकी बुराई और शान के ख़िलाफ़ होना कई बार ऊपर बयान हो चुका है।

2. घर में बिरादरी-कुंबे की औरतें जमा होकर लड़की को एक कोने में क़ैद कर देती हैं, जिसको मायूं बिठलाना और मांझे बिठलाना कहते हैं। उसके सिलसिले की कुछ बातें ये हैं कि उसकी चौकी पर बिठला कर उसके दाहिने हाथ पर कुछ बुटना रखती हैं और गोद में कुछ खील-बताशे भरती हैं और कुछ ख़ेल-बताशे, मौजूद लोगों में बांटती हैं और उसी तारीख़ से

बराबर लड़की के बुटना मला जाता है और बहुत सी पींडियां बिरादरी में बंटती हैं । यह रस्म भी कुछ बेकार की बातें मिलाकर बनायी गयी है :—

एक यह कि उसके अलग बिठाने को ज़रूरी समझना, चाहे गर्मी हो या घुटन हो। दुनिया भर के हकीम–डाक्टर भी कहें, उसको कोई बीमारी हो जाएगी, कुछ ही हो, मगर यह फ़र्ज़ क़ज़ा न होने पाये। इसमें भी वही बेहद पाबंदी की बुराई मौजूद है। और अगर उसके बीमार होने का डर हो तो दूसरा गुनाह, एक मुसलमान को नुक़्सान पहुंचाने का होगा, जिसमें माशाअल्लाह सारी बिरादरी भी शरीक है।

दूसरे बे–ज़रूरत चौकी पर बिठाना, इसकी क्या ज़रूरत है। क्या फ़र्श पर अगर बुटना मला जाएगा, तो बदन में सफ़ाई न आएगी। इसमें भी वही बेहद पाबंदी, जिसका शरअ के ख़िलाफ़ होना कई बार मालूम हो चुका है।

तीसरे दाहिने हाथ पर बुटना रखना और गोद में खील–बताशे भरना, मालूम होता है कि यह कोई टोटका और शकुन है। मगर ऐसा है तब तो शिर्क है और शिर्क का शरीअत के ख़िलाफ़ कौन मुसलमान नहीं जानता, वरना वही पाबंदी तो ज़रूर है। इसी तरह खील–बताशों के बांटने की पाबन्दी, यह सब बेहद पाबंदी दिखावा और घमंड है, जैसा कि ज़ाहिर है।

चौथे औरतों का जमा होना उन सारे बिगाड़ों की जड़ है, जैसा ऊपर बयान हो चुका है। कहीं–कहीं यह भी क़ैद है कि सात सुहागिनों का जमा होकर उसके हाथ पर बुटना रखना, यह एक शकुन है, जिसका शिर्क होना ऊपर सुन चुकी हो। अगर बदन की सफ़ाई और नर्मी की मसलहत से बुटना मला जाए, तो इसमें हरज नहीं, मगर मामूली तौर से बिला क़ैद कोई रस्म के मल दो, बस छुट्टी हुई। इसका इतना तूमार क्यों बांधा जाए। कुछ औरतें इस रस्म की पच में वजहें खोजती हैं। कुछ यह कहती हैं कि ससुराल जाकर कुछ दिन लड़की को सिर झुकाये एक ही जगह बैठना होगा, इसलिए आदत डालने की मस्लहत से मांझे बिठाते हैं कि वहां ज़्यादा तक्लीफ़ न हो और कुछ यह कहती हैं कि बुटना मलने से बदन साफ़ और ख़ुश्बूदार हो जाता है, इसलिए इधर–उधर निकलने में कुछ आसेब के ख़लल होने का डर है। ये सब शैतानी ख़्याल और मन–समझौतियां हैं। अगर सिर्फ़ यही बात है तो बिरादरी की औरतों का जमा होना, हाथ पर बुटना रखना, गोद भरना वग़ैरह और बेकार की बातें क्यों होती हैं। इतना मतलब तो बग़ैर इन बखेड़ों के भी हो सकता है।

दूसरे यह कि वहां जाकर बिल्कुल मुर्दा होकर रहना भी तो बुरा है, जैसा कि आगे आता है। इसलिए इसकी मदद और बाक़ी रखने के लिए जो

काम किया जाए, वह भी नाजायज़ है और यह न भी सही तो हम कहते हैं कि आदमी पर जैसी पड़ती है, सब झेल लेता है। खुद समझो कि पहले घर भर में चलती-फिरती थी, अब यकायक एक कोने में कैसे बैठ गयी। ऐसे ही वहां भी दो-एक दिन बैठ लेगी, बल्कि वहां तो दो एक दिन की मुसीबत है और यहां तो दस-दस, बारह-बारह दिन क़ैद की मुसीबत डाली जाती है।

तीसरे यह कि अगर आसेब के डर से नहीं निकलने पाती, तो बहुत से बहुत आंगन में और कोठे पर न जाने दो। यह क्या कि एक ही कोने में पड़ी कुढ़ा करे, खाने-पीने के लिए भी वहां से न टले, इसलिए यह सब मन गढ़ंत बहाने और बेकार की बातें हैं।

3. जब नाई ख़त लेकर दूल्हा के घर गया तो वहां बिरादरी की औरतें जमा होकर दो थाल शकराने की बनाती हैं, जिसमें एक नाई का होता है, दूसरा डोपनियों का। नाई का थाल बाहर भेजा जाता है और सारी बिरादरी के मर्द जमा होकर नाई को शकराना खिलाते हैं यानी खाते के मुंह तका करते हैं। और डोमनियां दरवाज़े में बैठकर गालियां गाती हैं। इसमें भी वही बेहद पाबंदी की बुराई। दूसरी ख़राबी इसमें यह है कि डोमनियों को गाने की मज़दूरी देना हराम है, फिर गाना भी गालियां, जो खुद गुनाह है। हदीस शरीफ़ में इसको मुनाफ़िक़ होने की निशानी फ़रमाया है, यह तीसरा गुनाह हुआ, जिसमें सब सुनने वाले शरीक हैं, क्योंकि जो आदमी गुनाह के मज्मे में शरीक हो, वह भी गुनाहगार होता है। चौथे मर्दों के मज्मे को ज़रूरी समझना, जो बेहद पाबंदी में दाख़िल है। मालूम नहीं नाई के शकराना खाने में इतने बुज़ुर्गों को क्या मदद करनी पड़ती है। पांचवें औरतों का जमा होना, जिसका गुनाह मालूम हो चुका है।

4. नाई शकराना खाकर हिदायत के मुताबिक़ अपने मालिक के, एक या दो रूपए थाल में डाल देता है और ये रूपए दूल्हा के नाई और डोमनियों में आधों-आध बंट जाते हैं। दूसरा थाल शकराने का, ठीक वही डोमनियां अपने घर ले जाती हैं, फिर बिरादरी की औरतों के लिए शकराना बनाकर बांटा जाता है। इसमें भी वही शोहरत और दिखावा और बेहद पाबंदी मौजूद है, इसलिए बिल्कुल शरअ के ख़िलाफ़ है।

5. सुबह को बिरादरी के मर्द जमा होकर ख़त का जवाब-लिखते हैं और एक जोड़ा नाई को बहुत उम्दा क़ीमती, बड़ी रक़म यानी सौ या दो सौ रूपए के साथ देते हैं। वही मस्ख़रापन जो पहले हुआ था, वह यहां भी होता है कि दिखलाये जाते हैं सौ और लिए जाते हैं एक-दो फिर इस

दिखावे और बे–मतलब हरकत के अलावा कुछ वक़्त इस रक़म के पूरा करने के लिए सूदी क़र्ज़ की ज़रूरत पड़ना, यह अलग गुनाह है, जिसका ज़िक्र अभी ऊपर आ चुका है।

6. अब नाई विदा होकर दूल्हन वालों के घर पहुंचता है। वहां बिरादरी की औरतें पहले से जमा होती हैं। नाई अपना जोड़ा घर में दिखलाने के लिए देता है और फिर सारी बिरादरी में घर–घर दिखलाया जाता है। इसमें वही औरतों का जमा होना और जोड़ा दिखाने में दिखावा, शोहरत की ख़राबी ज़ाहिर है।

7. उस तारीख़ से दूल्हा के बुटना मला जाता है और शादी की तारीख़ तक कुंबे की औरतें जमा होकर दूल्हा के घर बारी की तैयारी और दूल्हन के घर जहेज़ की तैयारी करती हैं और इस दर्मियान में जो मेहमान दोनों में से किसी के घर आते हैं, अगरचे उनको बुलाया न हो उनके आने का किराया दिया जाता है, इसमें वही औरतों का जमा होना और बेहद पाबंदी तो है ही और किराए का अपने पास से देना, भले ही दिल चाहे या न चाहे, सिर्फ़ दिखावे और शान व शौकत के लिए, यह और ख़ास बात, इसी तरह आने वालों का यह समझना कि यह उनके ज़िम्मे वाजिब है, यह एक क़िस्म की ज़बरदस्ती है। दिखावा और ज़बरदस्ती दोनों का शरअ के ख़िलाफ़ होना ज़ाहिर है और इससे बढ़कर क़िस्सा बरी और जहेज़ का है, जो शादी के बड़े भारी स्तून हैं और हरचंद ये दोनों बातें असल में जायज़ बल्कि बेहतर व पसंदीदा थे, क्योंकि बरी या साचिक़ सच में दूल्हा या दूल्हा वालों की तरफ़ से दुल्हन या दुल्हन वालों को भेंट है और जहेज़ सच में अपनी औलाद के साथ सुलूक व एहसान है, मगर जिस ढंग से इसका रिवाज है, उसमें तरह–तरह की ख़राबियां हो गयी है, जिनका खुलासा यह है कि अब न भेंट देना रह गया है, न सुलूक व एहसान, सिर्फ़ नाम और शोहरत और रस्म की पाबंदी की नीयत से किया जाता है। यही वजह है कि बरी और बरी और जहेज़ दोनों का एलान होता है यानी दिखला कर, शोहरत देकर देते हैं।

बरी भी बड़ी धूम–धाम और तकल्लुफ़ से दी जाती है और उसकी चीज़ें भी ख़ास मुक़र्रर हैं। बर्तन भी ख़ास तरह के ज़रूरी समझे जाते हैं, इसका अमातौर पर नज़ारा भी होता है, मौक़ा भी तै होता है। अगर भेंट देना होता, तो मामूली तौर पर जब तक मिल जाता और जो मिल जाता, रस्म की पाबंदी के बग़ैर और बे–एलान के सिर्फ़ मुहब्बत से भेज दिया करते। इसी तरह जहेज़ का सामान भी ख़ास–ख़ास मुक़र्रर है कि फ़्ला–फ़्ला

चीज़ ज़रूर हो और तमाम बिरादरी और कहीं सिर्फ़ अपना कुंवा और घर वाले उसको देखें और दिन भी वही ख़ास। अगर सुलूक व एहसान मक़्सद होता तो मामूली तौर पर जो मिल जाता और जब मिल जाता, दे देते। इसी तरह भेंट और एहसान के लिए कोई आदमी क़र्ज़ का बोझ नहीं उठाता, लेकिन इन दोनों के रस्मों के पूरा करने को अक्सर वक़्त क़र्ज़दार भी होते हैं, चाहे सूद ही देना पड़े। और चाहे हवेली और बाग़ बेच दिया जाये या गिरवी हो जाए। बस इसमें भी वही शोहरत–नुमाइश और फ़िज़ूल ख़र्ची वग़ैरह सब ख़राबियां मौजूद हैं, इसलिए यह भी नाजायज़ बातों में शामिल हो गया।

8. बरात के एक दिन पहले दूल्हा वालों का नाई मेंहदी लेकर और दुल्हन वालों का नाई नौशाह का जोड़ा लेकर अपनी–अपनी जगहों से चलते हैं और यह मंढे का दिन कहलाता है। दूल्हा के यहां इस तारीख़ पर बिरादरी की औरतें जमा होकर दुल्हन का जोड़ा तैयार करती हैं और उनको सिलाई में खीलें और बताशे दिए जाते है और तमाम कमीनों को एक–एक काम पर एक–एक परोत दिया जाता है। इसमें भी वही बेहद पाबंदी और औरतों का जमा होना है, जिसमें अनगिनत ख़राबियां पैदा हो जाती है।

9. जोड़ा लाने वाले नाई को जोड़ा पहुंचाने के वक़्त कुछ इनाम देते हैं और फिर यह जोड़ा नाइन लेकर सारी बिरादरी में घर–घर दिखलाने जाती है और उस रात को बिरादरी की औरतें जामा होकर खाना खाती हैं। ज़ाहिर है कि जोड़ा दिखलाने का मंशा दिखावे के अलावा और कुछ भी नहीं और औरतों के जमा होने की बरकतें मालूम ही हो चुकीं। ग़रज़ इस मौक़े पर भी गुनाहों की ख़ूब भीड़ होती है।

10. सुबह लड़के दूल्हा को ख़ूब नहला कर शाही जोड़ा पहनाते हैं और पुराना जोड़ा, जूता साहित नाई को दिया जाता है और चोटी–सेहरे का हक़ कमीनों को दिया जाता है। अक्सर इस जोड़े में शरअ के ख़िलाफ़ लिबास भी होता है और सेहरा चूंकि काफ़िरों की रस्म है, इसलिए इस हक़ का नाम चोटी–सेहरे से मुक़र्रर करना बेशक बुरा है, इसलिए यह भी शरअ के ख़िलाफ़ हुआ।

11. अब नौशह को घर में बुलाकर चौकी पर खड़ा करके ध्यानियां सेहरा बांधकर अपना हक़ लेती हैं और कुंबे की औरतें कुछ टके नौशह के सिर पर फेरकर कमीनों को देती है। नौशह के घर में जाने के वक़्त बिल्कुल एहतियात नहीं रहती। बड़े–बड़े परदे वालियां बनाव–सिंगार

किये हुए उसके सामने आ खड़ी होती हैं और यह समझती हैं कि यह तो उसके शर्म का वक़्त है, यह किसी को न देखेगा। भला यह ग़ज़ब की बात है या नहीं। एक तो यह कि यह कैसे मालूम हुआ कि वह न देखेगा। हर क़िस्म के तबियत के लड़के होते हैं, जिसमें आजकल तो अक्सर शरीर ही हैं, फिर अगर उसने न देखा, तो तुम क्यों उसको देख रही हो। हदीस शरीफ़ में है लानत करे अल्लाह देखने वाले पर और जिसको देखे उस पर भी। ग़रज़ इस मौक़े पर दूल्हा और औरतें सब गुनाह में मुब्तला होती हैं। फिर सेहरा बांधना, यह दूसरी बात शरअ के ख़िलाफ़ हुई क्योंकि यह काफ़िरों की रस्म है। फिर लड़-झगड़ कर अपना हक़ लेना अव्वल तो वैसे भी किसी पर ज़बरदस्ती करना हराम है, ख़ास कर एक गुनाह करके उस पर कुछ लेना बिल्कुल गंदगी है और नशे के सिर पर से पैसों का उतारना यह भी एक टोटका है, जिसके बारे में हदीस शरीफ़ में कहा गया है कि टोटका शिर्क है। ग़रज़ यह भी सिरे से पैर तक शरअ के ख़िलाफ़ बातों का मजमूआ है।

12. अब बरात खाना होती है। यह बरात भी शादी का बड़ा स्तून समझा जाता है और इसके लिए भी दूल्हा वाले, कभी दूल्हन वाले बड़ा इस्‌रार व तकरार करते हैं। ग़रज़ इसमें सिर्फ़ नाम और ऊंचा होने की बात है और अजब नहीं कि किसी वक़्त, जबकि राहों में अन्न न था, अक्सर डाकुओं और लुटेरों से दो चार होना पड़ता था। दूल्हा-दुल्हन और अस्‌बाब-ज़वेर वग़ैरह की हिफ़ाज़त के लिए उस वक़्त यह रस्म ईजाद हुई होगी। इसी वजह से घर पीछे एक एक आदमी ज़रूर जाता था। मगर अब न तो वह ज़रूरत बाक़ी रही और न कोई मस्‌लहत, सिर्फ़ दिखावा बाक़ी रह गया है। फिर अक्सर उसमें ऐसा भी करते हैं कि बुलाये पचास जा पहुंचे सौ। एक तो बे-बुलाये इस तरह किसी के घर जाना हराम है। हदीस शरीफ़ में है कि जो आदमी दावत में बे-बुलाये जाए वह गया तो चोर होकर और वहां से निकला लुटेरा होकर यानी ऐसा गुनाह होता है। जैसे चोरी और लूट-मार का। फिर दूसरे आदमी की इसमें बे-इज़्ज़ती हो जाती है किसी को रूसवा करना यह दूसरा गुनाह है। फिर इन बातों की वजह से अक्सर दोनों तरफ़ के लोगों से ऐसी ज़िद्दा-ज़िद्दी और बे-लुत्फ़ी होती है कि उम्र भर इसका असर दिलों में रहता है। चूंकि फूट हराम है, इसलिए जिन बातों से फूट पड़े, वह भी हराम होगी। इसलिए यह बेकार की रस्म हरगिज़ जायज़ नहीं। राह में जो गाड़ीबानों पर जिहालत सवार होती है और गाड़ियों को बे-सुध, बे ज़रूरत भगाना शुरू कर देते हैं, इसमें सैकड़ों ख़रतनाक वारदात हो जाती

हैं। ज़ाहिर है कि ऐसे ख़तरे में फंसना बे–ज़रूरत किसी तरह जायज़ नहीं।

13. दूल्हा उस शहर के किसी मश्हूर मुबारक मज़ार पर जाकर कुछ नक़द चढ़ा कर बरात में शामिल हो जाता है। इसमें जो अक़ीदा जाहिलों का है, वह यक़ीनी शिर्क तक पहुंचा हुआ है। अगर कोई समझदार इस बूरे अक़ीदे से पाक भी दो, तब भी इससे चूंकि जाहिलों के काम को ताक़त मिलती है और उसका रिवाज होता है, इसलिए सबको बचना चाहिए।

14. मेंहदी लाने वाले नाई को इतनी मिक़दार में इमाम दिया जाता है, जिससे दूल्हा वाला उस ख़र्च का अन्दाज़ा कर लेता है जो कमीनों को देना पड़ेगा। यानी कमीनों का ख़र्च इस इनाम से आठ हिस्सा ज़्यादा होता है, यह भी ज़बरदस्ती का जुर्माना है कि पहले ही ख़बर कर दी कि हम तुम से इतना रूपया दिलवा देंगे। चूंकि इस तरह ज़बरदस्ती दिलवाना हराम है, इसलिए इसका यह ज़रिया भी इसी हुक्म में है क्योंकि गुनाह का इरादा भी गुनाह है।

15. कुछ मेंहदी दुल्हन के लगायी जाती है और बाक़ी बट जाती है। ये दोनों बातें बेहद पाबन्दी में दाख़िल हैं, क्योंकि इसके ख़िलाफ़ को ऐब समझती हैं, इसलिए यह भी शरअ की हद से आगे बढ़ना है।

16. बरात के आने के दिन दुल्हन के घर औरतें जमा होती हैं। इस जमा होने की बुराइयां ऊपर मालूम हो चुकीं।

17. हर काम पर परोत यानी नेग बंटते हैं, जैसे नाई ने देग के लिए चूल्हा खोदकर परोत मांगा तो उसको एक थाल में अनाज, उस पर एक भेली गुड़ की रख कर दे दिया जाता है। इसी तरह हर–हर, ज़रा–ज़रा से काम पर भी जुर्माना ख़िदमतगारों को देना अच्छी बात है, मगर इस ढोंग की क्या ज़रूरत है। उसका जो हक़ समझो, एक बार दे दो। इस बार–बार देने की वजह भी वही शोहरत है। इसके अलावा यह देना या तो इनाम है या मज़दूरी। अगर इनाम व एहसान है तो उसको इस तरह ज़बरदस्ती करके लेना हराम है और जिसका लेना हराम है, देना भी हराम है। और अगर इसको मज़दूरी कहो तो मज़दूरी का तै करना, पहले से मिक़्दार बतला देना ज़रूरी है। इसके बे–तै किये इजारा ग़लत हो जाता है और ग़लत इजारा भी हराम है।

18. बरात पहुंचने पर गाड़ियों को घास–दाना और मांगे की गाड़ियों को घी और गुड़ भी दिया जाता है। इस मौक़े पर अक्सर गाड़ी–वान ऐसा तूफ़ान खड़ा करते हैं कि घर वाला बे–आबरू हो जाता है और इस

बे–इज़्ज़ती की वजह वही बरात लाने वाला हुआ। ज़ाहिर है कि बुरी बात को वजह बनना भी बुरा है।

19. बरात एक जगह ठहरती है। दोनों तरफ़ की बिरादरी के सामने बरी खोली जाती है। अब वक़्त आया दिखावा और नाम करने का, जो असल मक़सद है और इसी वजह से यह रस्म मना है।

20. इस बरी में कुछ चीज़ें बहुत ज़रूरी हैं, जैसे शाही, जोड़ा, अंगूठी, पांव का ज़ेवर , सुहाग पुड़ा, इत्र, तेल, मिस्सी, सुर्मादानी, कंघी, पान, खीलें, बाक़ी ग़ैर ज़रूरी। जितने जोड़े बरी में होते हैं, उतनी ही मटकियां होती हैं। इस सब बेकार की बातों का बेहद पाबंदी में दाखि़ल होना ज़ाहिर है, जिसका शरअ के ख़िलाफ़ होना कई बार बयान हो चुका और अब दिखावा और नाम करना तो सब रस्मों की जान है। इसको तो कहने की ज़रूरत ही क्या है।

21. इस बरी को ले जाने के वास्ते दुल्हन की तरफ़ से कमीन थाल लेकर आते हैं और एक–एक आदमी एक–एक चीज़ सिर पर ले जाता है। देखो यह दिखावा और अच्छी तरह ज़ाहिर हुई, अगरचे वह एक ही आदमी के ले जाने का बोझ हो, मगर ले जाये उसको एक काफ़िला, ताकि दूर तक सिलसिला मालूम हो। यह खुला हुआ धोखा और शेख़ी बघारना है।

22. ख़ानदान के तमाम मर्द बरी के साथ जाते हैं और बरी ज़नाने मकान में पहुंचा दी जाती है। इस मौक़े पर अक्सर बे–एहतियाती होती है कि मर्द भी घर में चले जाते हैं और औरतों का बे–पर्दा सामना होता है। नहीं मालूम उस दिन तमाम गुनाह और बे–ग़ैरती किस तरह हलाल और तमीज़दारी हो जाती है।

23. इस बरी में से शाही जोड़ा और कुछ चीज़ें रखकर बाक़ी सब चीज़ें फेर दी जाती हैं जिसको ठीक दूल्हा उसी तरह सन्दूक़ में रखता है। जब वापस लेना था तो ख़ामख़ाह भेजने की क्यों तक्लीफ़ की। पस वही नाम और शोहरत, फिर जब वापस आना यक़ीनी है, तब तो अक़्लमंदों के नज़दीक कोई शान व शौकत की बात भी नहीं—शायद किसी की मांग लाया हो फिर घर आकर वापस कर देगा और अक्सर ऐसा होता भी है। मतलब यह कि तमाम बेकार की बातें शरअ के भी खिलाफ़ और अक़्ल के भी ख़िलाफ़, फिर भी लोग इस पर खुश हैं।

24. बरी की थाल में दुल्हन वालों की ओर से एक या सवा रूपया डाला जाता है, जिसको बरी की चंगेर कहते हैं और वह दूल्हा के नाई का

हक़ होता है। इसके बाद एक डोमनी एक डोरी लेकर दूल्हा के पास जाती है और एक हल्का इनाम दो आने, चारे आने दिया जाता है। इसमें भी वही बेहद पाबंदी और इनाम का ज़बरदस्ती लेना है और मालूम नहीं डोमनी साहबा का क्या हक़ है और यह डोरी क्या बेकार की बात है।

25. बरात वाले निकाह के लिए घर बुलाये जाते हैं। ख़ैर ग़नीमत है। ख़ता माफ़ तो हुई। इस बेकार की रस्मों में इतनी देर लगती है कि अक्सर तो तमाम रात उसकी भेंट हो जाती है, फिर बद–ख़्वाबी से कोई बीमार हो गया , किसी को बद–हज़मी हो गयी, कोई नींद से ऐसा सोया कि सुबह की नमाज़ छूट गई। एक रोना हो तो रोया जाये, यहां तो सिर से पांव तक नूर ही नूर भरा है। अल्लाह रहम फ़रमाए।

26. सबसे पहले सक़्क़ा पानी लेकर आता है, उसको सवा रूपया बेर घड़ी के नाम से दिया जाता है, चाहे दिल चाहे, न चाहे, मगर ज़कात से बढ़ कर फ़र्ज़ है, कैसे न दिया जाए। ग़ज़ब है, एक तो इनाम में ज़बरदस्ती के यह मानी नहीं कि लाठी–डंडा मार कर किसी से कुछ ले लिया जाये, बल्कि यह भी ज़बरदस्ती है कि अगर न देंगे, तो बदनाम होंगे, फिर लेने वाले ख़ूब मांग–मांग कर झगड़–झगड़ कर लेते हैं और वे बेचारे अपनी इज़्ज़त के लिए दे देते हैं। यह सब ज़बरदस्ती की चीज़ें हराम हैं। फिर यह बेर घड़ी हिन्दुस्तानी लफ़्ज़ है। मालूम होता है कि ग़ैर–मुस्लिमों से यह रस्म सीखी है, यह दूसरी गुमराही हुई।

27. इसके बाद डोम शर्बत घोलने के लिए आता है, जिसको सवा रूपया दिया जाता है और शकर शर्बत की दुल्हन के यहां से आती है। यहां भी वही इनाम में ज़बरदस्ती को गंदगी लगी हुई है। फिर यह डोम साहब किस काम के हैं। बेशक शर्बत घोलने के लिए बहुत मुनासिब हैं, क्योंकि बाजा बजाते–बजाते हाथों में सुरूर का माद्दा पैदा हो गया है तो शर्बत पीने वालों को ज़्यादा सुरूर होगा, फिर ख़ास बात यह है कि कैसी ही सर्दी पड़ती हो, चाहे ज़ुकाम हो जाए, मगर शर्बत ज़रूर पिलाया जाए। इस बे–अक़्ली की भी कोई हद है।

28. फिर काज़ी साहब को बुलाकर निकाह पढ़वाते हैं, पस यह एक बात है जो तमाम बेकार की रस्मों में अच्छी और शरीअत के मुताबिक़ है, मगर इसमें भी देखा जाता है कि अक्सर जगह हज़रात काज़ी साहबान निकाह के मस्अलों को सिर्फ़ यही नहीं कि जानते नहीं, बल्कि कहीं–कहीं तो निकाह भी दुरूस्त नहीं होता। तमाम उम्र बद–कारी हुआ करती है और

कुछ तो ऐसे लालची हैं कि रूपया–सवा रूया के लालच से जिस तरह फ़रमाइश की जाए, कर गुज़रते हैं, चाहे निकाह हो या न हो, मुर्दा बहिश्त में जाए या दोज़ख़ में , अपने हलवे–मांडे से काम। इसमें बहुत एहतमाम करना चाहिए कि निकाह पढ़ने वाला खुद आलिम हो या किसी आलिम से ख़ूब मालूमात कर के निकाह पढ़े और कहीं तो निकाह से पहले दूल्हा को घर में बुला कर दुल्हन का हाथ पर्दे से निकाल कर उसकी हथेली पर कुछ तिल वग़ैरह रख कर दूल्हा को खिलाते हैं। ख़्याल करना चाहिए कि अभी निकाह नहीं हुआ और लड़की का हाथ दूल्हा के सामने बे–ज़रूरत कर दिया, कितनी बड़ी बे–हयाई है। अल्लाह बचाये।

29. इसके बाद अगर दूल्हा वाले छोहारे ले गये हों, तो वे लुटा देते हैं, या बांट देते हैं, वरना वही शर्बत, चाहे सर्दी हो या गर्मी, इस शर्बत में बेहद पाबंदी के अलावा बीमार डालने का सामान करना है जैसा कि कुछ फ़स्लों में होता है, यह कहां जायज़ है।

30. अब दुल्हन की तरफ़ का नाई हाथ धुलाता है। उसको सवा रूपया हाथ धुलाई दिया जाता है। यह देना असल में इनाम व एहसान है मगर उसको देने वाले और लेने वाले हक़ वाजिब और नेक समझते हैं, इस तरह से देना लेना हराम है, क्योंकि एहसान में ज़बरदस्ती करना हराम है, जैसा कि ऊपर गुज़र चुका और अगर इसे ख़िदमत गुज़ारी का हक़ कहो तो ख़िदमतगुज़ार तो दुल्हन वालों का है, उनके ज़िम्मे होना चाहिए, दूल्हा वालों से क्या वास्ता, ये तो मेहमान हैं। शरअ के ख़िलाफ़ होने के अलावा यह अक़्ल के किस क़दर ख़िलाफ़ है कि मेहमानों से अपने नौकरों को तंख़ाह व मज़दूरी दिलायी जाए।

31. दूल्हा के लिए घर से शकराना बनकर आता है, जो ख़ाली प्लेटों में सब बरातियों को तक़्सीम किया जाता है। इसमें यह बेहद पाबंदी के अलावा अक़ीदे की भी ख़रीबी है यानी अगर शकराना न बनाया जाए तो ना–मुबारकी की वजह समझते हैं, बल्कि अक्सर रस्मों में यही अक़ीदा है। यह ख़ुद शिर्क की बात है। हदीस शरीफ़ में आया है कि बद–शगूनी (अपशकुन) और ना मुबारकी की कोई असलियत नहीं। शरीअत जिसको बे–असल बतलाये, और लोग उसपर पुल बनाकर खड़ा कर दें, यह शरीअत का मुक़ाबला है या नहीं।

32. इसके बाद सब बराती खाना खाकर चले जाते हैं। लड़की वाले के घर से नौशह के लिए पलंग सजाकर भेजा जाता है और कैसे अच्छे वक़्त

भेजा जाता है, जब रात भर ज़मीन पर पड़े–पड़े चूर हो चुके। अब मरहम आया है। वाक़ई हक़ तो अभी हुआ, इससे पहले तो अजनबी और ग़ैर था। भले मानुषो ! अगर वह दामाद न था, तो बुलाया हुआ मेहमान तो था। आख़िर मेहमान के सत्कार का भी शरअ और अक़्ल में हुक्म हुआ है या नहीं। और दूसरे बराती भी बेकार रहे। इनकी अब भी किसी ने बात न पूछी। साहबो ! वे भी तो मेहमान हैं।

33. पलंग लाने वाले नाई को सवा रूपया दिया जाता है। बस यह मालूम हुआ कि चारपाई इस ग़रज़ के लिए आयी थी। अस्तग़्फ़िरूल्लाह ! (अल्लाह की तौबा !) इसमें भी वही इनाम में ज़बरदस्ती होना ज़ाहिर होता है।

34. पिछली रात को एक थाल में शकराना भेजा जाता है, उसको बरात के सब लड़के मिलकर खाते हैं, चाहे इन कम–बख़्ती के मारों को बद–हज़्मी हो जाए, मगर शादी वालों को अपनी रस्म पूरी करने से काम। पहले, जहां शकराना बनाने का ज़िक्र आया है, वहां बयान हो चुका है कि यह भी शरअ के ख़िलाफ़ है।

35. इस थाल लाने वाले नाई को सवा रूपया दिया जाता है। क्यों न दिया जाए, इन नाई साहब के बुज़ुर्गों ने इस बेचारे बराती के बाप–दादा को क़र्ज़ रूपया दे रखा था। वह बेचारा इसको अदा कर रहा है, वरना उसके बाप–दादा जन्नत में जाने से अटके रहेंगे। लाहौल व लाक़ूवत इल्ला बिल्लाह०

36. सुबह को बरात के भंगी दुल्हन वालों के घर दफ़ (एक बाजा) बजाते हैं। यह दफ़ बरात के साथ आती थी और दफ़ असल में जायज़ भी थी, मगर इसमें शरीअत ने यह मसलहत रखी है कि इससे निकाह को ख़ूब शोहरत हो जाए, लेकिन अब यक़ीनी बात है कि शान व शौकत दिखाने और अपने को बड़ा बनाने के लिए बजायी जाती है, इसलिए ना–जायज़ और बन्द कर दिए जाने के क़ाबिल है। एलान और शोहरत के और भी हज़ारों तरीक़े हैं और अब तो हर काम में मज्मा होता है। खुद ही सारी बस्ती में चर्चा हो जाती है, बस यही शोहरत काफ़ी है। अगर दफ़ के साथ शहनाई भी हो तो किसी हाल में जायज़ नहीं। हदीस शरीफ़ में साफ़ मना किया है।

37. दुल्हन वालों की तरफ़ का भंगी बरात के घोड़ों की लीद उठाता है और दोनों तरफ़ के भंगियों को लीद उठाई और सफ़ाई का नेक बराबर मिलता है, भला इस ठठेरे बदलाई से क्या फ़ायदा। दोनों को जब बराबर मिलता है तो अपने–अपने कमीनों को दे दिया होता, ख़ामख़ाह एक दूसरे से दिलाकर ज़बरदस्ती लाज़िम कराया।

38. दुल्हन वालों की डोमनी दूल्हा को पान खिलाने के लिए आती है और दस्तूर के मुताबिक़ अपना परोत लेकर जाती है, उसको भी इनाम देना पड़ता है। बेचारे को आज ही लूट लो, कुछ बचाकर ले जाने न पाये, बल्कि क़र्ज़दार होकर जाए। यहां भी उस ज़बरदस्ती को याद कर लो।

39. इसके बाद नाइन दुल्हन का सर गूंध करके कंघी को एक कटोरे में रखकर ले जाती है और उसको सिर–बंधाई और पौड़े पिसाई के नाम से कुछ दिया जाता है, क्यों न दिया जाए, यह बेचारा सबका क़र्ज़दार भी है, यहां भी वही ज़बरदस्ती है।

40. इसके बाद कमीनों के इनाम की लिस्ट दुल्हन वालों की तरफ़ से तैयार होकर दूल्हा वालों को दी जाती है, वह चाहे उसे बांट दे या इकट्ठे ही दुल्हन वालों को दे दे। इसमें भी वही ज़बरदस्ती पायी जाती है, जिसका हराम होना कई बार बयान हो चुका है। कुछ लोग कहते हैं साहब ये लोग ऐसे ही मौक़े की उम्मीद पर उम्र भर ख़िदमत करते हैं। इसका जवाब यह है जिसकी ख़िदमत की है, उससे ख़िदमत का बदला भी लेना चाहिए। यह क्या बेकार का काम है कि ख़िदमत करें उनकी और बदला दे वह।

41. नौशह घर में बुलाया जाता है और उस वक़्त पूरी बे–पर्दगी होती है और कुछ बातें बे–हयाई की उससे पूछी जाती हैं, जिसका गुनाह और बे–ग़ैरती होना ज़ाहिर है, बयान की ज़रूरत नहीं। कहीं तो दूल्हा से फ़रमाइशें होती हैं कि दूल्हन से कहे कि मैं तुम्हारा गुलाम हूं और तुम शेर हो, मैं भेड़ हूं। इलाही तौबा ! अल्लाह तआला शौहर को सरदार फ़रमायें और यह उसको गुलाम और ताबेदार बनाएं। बतलाओ क़ुरआन के ख़िलाफ़ रस्म है या नहीं।

42. अगर बहुत ग़ैरत से काम लिया गया तो उसका सलाम घर में मंगाया जाता है और उस वक़्त सलामी का रूपया जो न्यौते में आता है, जमा करके दूल्हा को दिया जाता है। इस न्यौते का गुनाह होना ऊपर बयान हो चुका।

43. इससे डोमनी और नाइन का हक़ आठ आने के बराबर निकाला जाता है। अल्लाह मियां की ज़कात का चालीसवां हिस्सा इतना फ़र्ज़ नहीं, खेत का दसवां हिस्सा वाजिब नहीं, मगर इनका निकालना सब फ़र्ज़ों से बढ़कर फ़र्ज़ है। यह बेहद पाबन्दी कितनी बेकार है। फिर यह कि नाइन तो ख़िदमती भी है, भला यह डोमनी किस काम की है जो हर जगह उसका साझा और हक़ रखा हुआ है। किसी के कहे के मुताबिक़ ब्याह में बीच का

लेखा शायद गाने–बजाने की ख़िदमत का हक़ होगा, सो जब गाना–बजाना हराम है, जैसा कि पहले बाब में बयान हो चुका है, तो इस पर कुछ मज़दूरी और इनाम देना–दिलाना किस तरह जायज़ होगा और मज़दूरी भी किस तरह की कि घर वाला तो इसलिए देता है कि उसने बुलाया, उसके यहां तक़रीब है, भला यह आने वाले की क्या कम–बख़्ती कि उससे ज़बरदस्ती वसूल किया जाता है और जो न दे, उसकी ज़िल्लत व रुसवाई और उस पर लान–तान किया जाता है। पस ऐसे गाने और ऐसे हक़ को क्यों न हराम कहा जाएगा। गाने बजाने में कुछ को यह शुबहा होता है कि ब्याह शादी में गीत दुरुस्त है, लेकिन यह नहीं देखते कि जो ख़राबियां इसमें मिल गयी हैं, उनसे दुरुस्त नहीं रहा। वे ख़राबियां ये हैं कि डोमनियां लय से गाती हैं। हमारे धर्म में यह मना है और उनकी आवाज़ ग़ैर–मर्दों के कान में पहुचती है। ना महरम को ऐसी आवाज़ सुनाना भी गुनाह है और अक्सर डोमनियां जवान भी होती हैं, उनकी आवाज़ से और भी ख़राबी का डर है, क्योंकि सुनने वालों का दिल पाक नहीं रहेगा। गाना सुनने से और नापाकी बढ़ जाती है। कहीं–कहीं ढोलक भी होती है, यह खुला हुआ गुनाह भी है। फिर ज़्यादा रात इसी धंधे में गुज़रती है, सुबह की नमाज़ें अक्सर क़ज़ा हो जाती हैं। मज़मून भी कभी कभी शरअ के ख़िलाफ़ होता है। ऐसा गाना गवाना कब दुरुस्त होगा ?

44. खाने से छूटने के बाद जहेज़ की तमाम चीज़ें मज्मे में लायी जाती हैं और एक–एक चीज़ सबको दिखलायी जाती है और ज़ेवर की लिस्ट सबको सुनाई जाती है। खुद कहो कि पूरी–पूरी नुमाइश और दिखावा है कि नहीं, अलावा इसके कि ज़नाने कपड़ों का मर्दों को दिखलाना कितनी ग़ैरत के ख़िलाफ़ है। और कुछ लोग अपने नज़दीक बड़ी दीनदारी करते हैं जहेज़ दिखलाते नहीं। ताला–बन्द संदूक़ और सामान की लिस्ट दे देते हैं, लेकिन इसमें भी दिखलावा ज़रूर है। बाराती वग़ैरह संदूक़ लाते हुए देखते हैं, कुछ लिस्ट भी मांगकर पढ़ने लगते हैं। दूसरे दूल्हा के घर में जो मेहमान हैं उन्हें खोलकर भी दिखाया जाता है। इसका बचाव तो यही है कि जहेज़ साथ न भेजा जाये, फिर इत्मीनान के वक़्त सब चीज़ें अपनी लड़की को दिखला कर सुपुर्द कर दी जाएं। वह सब चाहे ले जाए, चाहे एक बार करके, चाहे कई बार करके।

45. सवा रुपया कमीनों का नेक जहेज़ के थाल में डाला जाता है, वही इनाम में ज़बरदस्ती यहां भी याद कर लो।

46. अब लड़की के रुख़्सत होने का दिन आया, मियाना, पालकी

दरवाज़े में रखकर दुल्हन के बाप–भाई वग़ैरह उसके सिर पर हाथ धरने को घर में बुलाये जाते हैं, इस वक़्त भी अक्सर मर्दों–औरतों का आमना–सामना हो जाता है, जिसका बुरा होना ज़ाहिर है।

47. फिर लड़की को विदा करके डोले में बिठाते हैं और अक़्ल के ख़िलाफ़ सब में रोना–पीटना मचता है, मुम्किन है कि कुछ को जुदाई का सदमा हो, मगर अक्सर तो रस्म ही पूरा करने को रोती हैं कि कोई यों कहेगा कि उन पर लड़की भारी थी। उसको हटा करके खुश हुए और यह झूठा रोना ना–हक़ का दिखावा है जो कि अक़्ल और शरअ दोनों के ख़िलाफ़ और गुनाह है।

48. कहीं दूल्हा को हुक्म होता है कि गोद में लेकर डोले में रख दे। उनकी यह फ़रमाइश सबके सामने पूरी की जाती है। अगर दूल्हा कमज़ोर हुआ तो बहनें वग़ैरह सहारा लगाती हैं। इसमें अलावा बे–ग़ैरती और बे–हयाई के अक्सर औरतों का बिल्कुल सामना हो जाता है, क्योंकि यही तमाशा देखने के लिए तो यह फ़रमाइश हुई थी। फिर कभी दुल्हन ज़्यादा भरी हुई, न संभल सकी, तो छूट पड़ती और चोट लगती है, इसलिए यह भी ना जायज़ है।

49. दुल्हन के दोपट्टे के एक पल्लो में कुछ नक़द, दूसरे में हल्दी की गिरह, तीसरे में ज़ायफ़ल, चौथे में चावल और घास की पत्ती बांधती हैं यह शकुन और टोटका है। जो अक़्ल के ख़िलाफ़ होने के अलावा शिर्क की बात है।

50. और डोले में मिठाई की चंगेर रख देती हैं, जिसके ख़र्च का मौक़ा आगे चलकर मालूम होगा, उसी से उसका बेहूदा और मना होना भी ज़ाहिर हो जायेगा।

51. एक तो डोला दुल्हन की तरफ़ से कहार उठाते हैं और दूल्हा वाले उस पर बिखेर शुरू करते हैं। अगर उसमें कोई असर शगूनी भी समझते हैं कि उसके सिर से आफ़तें उतर गयीं, तब तो अक़ीदे की ख़राबी है, वरना नाम–शोहरत की नीयत होना ज़ाहिर है, ग़रज़ हर हाल में बुरा है। फिर लेने वाले इस बिखेर के, भंगी होते हैं, जिससे यह भी नहीं कह सकते कि सद्क़ा ख़ैरात करना मक़सद है, वरना ग़रीबों, मुहताजों को देते। पस यह एक क़िस्म का फ़िज़ूल व बेजा ख़र्च भी है कि हक़दारों को छोड़कर ग़ैर–हक़दारों को दिया। फिर इसमें कुछ को चोट लग जाती है, किसी को भीड़ की वजह से, और किसी को खुद रूपया–पैसा लग जाता है। यह ख़राबी अलग रही।

52. इस बिखेर में एक मुट्ठी उन कहारों को दी जाती है और वह सब कमीनों का हक़ होता है और वही ज़बरदस्ती का ना-जायज़ होना यहां भी याद कर लो।

53. जब बिखेर करते हुए शहर से बाहर पहुंचते हैं तो ये कहार डोला किसी बाग़ में रखकर अपना नेक सवा रूपया लेकर चले जाते हैं। वही इनाम लेने में ज़बरदस्ती यहां भी है।

54. और दुल्हन के रिश्ते-नातेदार जो उस वक़्त तक डोले के साथ होते हैं, बिदा करके चले जाते हैं और वहां पर वह चंगेर मिठाई की निकाल कर बरातियों में भाग-दौड़, छीना-झपटी शुरू होती है। इसके अलावा उसी बेहद पाबंदी के अक्सर बे-एहतियाती होती है कि अजनबी मर्द डोले में अन्धाधुन्ध हाथ डालकर वह चंगेर ले लेते हैं, इसकी परवाह नहीं कि पर्दा खुल जाएगा नाइन या दुल्हन को हाथ लग जाएगा और कुछ ग़ैरतमंद दूल्हा या दुल्हन के रिश्तेदार इस पर जोश में आकर बुरा-भला कहते हैं, जिसमें कभी-कभी बात बहुत बढ़ जाती है, मगर इस मनहूस रस्म को कोई नहीं छोड़ता। तमाम तिक्का फ़ज़ीहती मंज़ूर, मगर इसका छोड़ना मंज़ूर नहीं। इन्नालिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन०

55. रास्ते में जो पहली नदी मिलती है, कहार लोग उस नदी पर पहुंच कर डोला रख देते हैं कि हमारा हक़ दो, तब हम पार जाएं और यह हक़ कम से कम एक रूपया होता है, जिसको दरिया उतराई कहते हैं। यह वही इनाम में ज़बरदस्ती है।

56. जब मकान पर डोला पहुंचता है तो कहार डोला नहीं रखते, जब तक सवा रूपया उनको इनाम न दिया जाए। अगर यह इनाम है तो यह ज़बरदस्ती कैसी और अगर मजबूरी है तो मज़दूरी की तरह होनी चाहिए। जब किसी के पास हुआ, दे दिया, उसका वक़्त मुक़र्रर करके मजबूर करना रस्म करने के अलावा और कुछ नहीं, जिसको बेहद पाबंदी कहना चाहिए।

57. कहीं-कहीं यह भी होता है कि दूल्हा का कोई रिश्तेदार लड़का आकर डोला रोक लेता है कि जब तक हमारा हक़ न मिले, डोले को घर में न जाने देंगे, इसको भी उसी बेहद पाबंदी में दाख़िल समझो।

58. डोला आने से पहले ही बीच आंगन में थोड़ी जगह लीप रखती हैं और उसमें आटे से घरौंदे की तरह बना देती हैं। डोला सबसे पहले वहीं रखा जाता है। दुल्हन का अंगूठा उसमें टिका लेती हैं, तब अन्दर ले जाती हैं। इसमें बेहद पाबंदी के अलावा सरासर शकुन भरा हुआ है और अनाज की

बे–क़द्री, इसलिए यह भी ना–जायज़ है।

59. जब कहार डोला रखकर चले जाते हैं, तो ध्यानियां बहू को डोले में से नहीं उतारने देतीं, जब तक उनको उनका हक़ न दे दिया जाए, बल्कि अक्सर दरवाज़ा बन्द कर लेती हैं, जिसके यह मानी हुए कि जब तक हमको फ़ीस या जुर्माना न दे दिया जाए, तब तक हम दुल्हन को घर में न घुसने देंगे। यह भी इनाम में ज़बरदस्ती है।

60. इसके बाद नौकर को बुलाकर डोले के पास खड़ा किया जाता है, इसकी बड़ी पाबंदी है और एक क़िस्म का शकुन है, जिसमें अक़ीदे की ख़राबी मालूम होती है और अक्सर उस वक़्त पर्देदार औरतें भी बे–तमेज़ी से सामने आ खड़ी होती हैं।

61. औरतें संदल और मेंहदी पीसकर ले जाती हैं और दुल्हन के दाहिने पांव और कोख को एक टीका लगाती हैं। यह खुला हुआ टोटका और शिर्क है।

62. तेल और माश सदक़ा करके भंगिन को दिया जाता है और म्यानो के चारों पायों पर तेल छिड़का जाता है, वही अक़ीदे की ख़राबी का रोग इस बेकार हरकत का भी मंशा है।

63. और उस वक़्त एक बकरा गदड़िए से मंगाकर नौशह और दुल्हन के ऊपर सदक़ा करके उसी गदड़िए को कुछ नेक के साथ, जिसकी मिक़्दार दो आने या चार आने क़ीमत है, दिया जाता है। देखो, क्या बेकार की हरकत है। अगर बकरा ख़रीदा है, तो उसकी क़ीमत कहीं दी और अगर ख़रीदा नहीं, तो वह उस गदड़िये की मिल्क है, तो यह पराये माल का सदक़ा करने का क्या मतलब ! यह तो वही कहावत है कि हलवाई की दुकान पर नानाजी की फ़ातिहा ! फिर सदक़ा का मसरफ़ गदड़िया बहुत मुनासिब है, मतलब सर से पैर तक बेकार हरकत है और शरीअत के उसूल के बिल्कुल ख़िलाफ़ है।

64. इसके बाद बहू को उतार कर घर में लाती हैं और एक बोरिए पर क़िब्ला रूख़ बिठाती हैं और सात सुहागिनें मिलकर थोड़ी–थोड़ी खीर बहू के दाहिने हाथ पर रखती हैं, फिर इस खीर को उनमें से एक सुहागिन मुंह से चाट लेती है, यह रस्म बिल्कुल शकुनों और फ़ालों से मिलकर बनी है, जिसका मंशा अक़ीदे की ख़राबी है और क़िब्ला रूख होना बड़ी बरकत की बात है, लेकिन यह मस्अला इन्हीं बेकार की बातों पर अमल करने के लिए रह गया और कभी उम्र भर चाहे नमाज़ की तौफ़ीक़ न हुई हो और जब

उसकी पाबंदी फ़र्ज़ से बढ़कर होने लगे और ऐसा न करने को बद-शगुनी समझा जाए, तो यह भी शरअ की हद से बढ़ जाता है, इसलिए यह भी जायज़ नहीं। कुछ जगहों पर नौशह गोद में लेकर दुल्हन को उतारता है, इसकी बुराइयां ऊपर बयान हो चुकीं।

65. यह खीर दो बड़े थालों में उतारी जाती है। एक उनमें से डोमनी को (शाबाश री डोमनी तेरा तो सब जगह ज़हूरा है) और एक नाइन को कुछ इनाम के साथ, जिसकी मिक़्दार कम से कम पांच टके हैं, दिया जाता है। यह सब सिर्फ़ रस्मों की पाबन्दी और बेकार की बात है।

66. इसके बाद एक या दो मन की खीर बिरादरी में बांटी जाती है, जिसमें पाबन्दी के अलावा दिखावे और नाम बढ़ाने के अलावा और कुछ नहीं।

67. इसके बाद बहू का मुंह खोला जाता है और सबसे पहले सास या सबसे बड़ी औरत ख़ानदान की बहू का मुंह देखती है और कुछ मुंह दिखलाई देती है, जो साथ वाली के पास जमा होता रहता है। इसकी ऐसी सख़्त पाबन्दी है कि जिसके पास मुंह दिखलाई न हो, वह हरगिज़-हरगिज़ मुंह नहीं देख सकती, और लानत-मलामत का इतना भारी बोझ उस पर रखा जाता है, जिसको किसी तरह उठा ही न सके। मतलब यह है कि उसको वाजिब क़रार दिया है, जो साफ़ शरई हद से बढ़ जाता है, फिर इसकी कोई मुनासिब वजह नहीं समझ में आती कि उसके ज़िम्मे मुंह पर हाथ रखना, बल्कि हाथों पर मुंह रखना, यह क्यों फ़र्ज़ किया गया है और फ़र्ज़ भी ऐसा कि अगर कोई न करे तो तमाम बिरादरी में बे-हया, बे-शर्म, बे-ग़ैरत मशहूर हो जाए, बल्कि ऐसा ताज्जुब करे कि जैसे कोई मुसलमान काफ़िर बन जाए। फिर खुद ही कहो कि इसमें भी शरीअत की हद से बाहर हो जाना है या नहीं। इस शर्म में अक्सर बल्कि सारी दुल्हनें नमाज़ क़ज़ा कर डालती हैं। अगर साथ वाली ने मौक़ा पाकर पढ़वा दी, तो ख़ैर, वरना औरतों के मज़हब में इसकी इजाज़त नहीं कि खुद उठकर या किसी से कह-कर नमाज़ का बन्दोबस्त कर ले। उसको ज़रा इधर-उधर हिलना, बोलना, चाटना, खाना-पीना, अगर खुजली बदन में उठे, तो खुजलाना, अगर जम्हाई या अंगड़ाई का ग़लबा हो, तो जम्हाई या अंगड़ाई लेना या नींद आने लगे तो लेटे रहना, पेशाब-पाख़ाना ख़ता होने लगे, तो उसकी सूचना तक देना भी इन औरतों के मज़हब में हराम, बल्कि कुफ़्र है, इसी ख़्याल की वजह से दुल्हन दो चार दिन पहले से बिल्कुल दाना-पानी छोड़

देती है कि कहीं पेशाब या पाख़ाने की ज़रूरत न हो, जो सब में बदनामी हो जाए। ख़ुदा जाने उस बेचारी ने क्या जुर्म किया था, जो ऐसे सख़्त काल कोठरी में मज़्लूमा क़ैद की गयी। ख़ुद सोचो कि इसमें बे–वजह एक मुसलमान को तक्लीफ़ देना है या नहीं, फिर क्यों कर इजाज़त हो सकती है और याद रहे कि नमाज़ों के क़ज़ा होने का गुनाह उसको तो होतस ही है, लेकिन इन सब औरतों को उतना भी गुनाह होता है, जिनकी बदौलत ये रस्में क़ायम हुई हैं। इसलिए इन सब बेकार की रस्मों को ख़त्म करना चाहिए और कुछ शहरों में यह बेहूदगी है कि कुन्बे के सारे मर्द भी दुल्हन का मुंह देखते हैं। अस्तग़्फ़िरुल्लाह–नऊज़ुबिल्लाह०

68. ये सब औरतें मुंह देखती हैं, इसके बाद किसी का बच्चा बहू की गोद में बिठा देती हैं और कुछ मिठाई देकर उठा लेती हैं। वही बेकार की रस्म और शकुन मगर क्या होता है। इस पर भी कुछ के तो तमाम उम्र औलाद नहीं होती। तौबा, तौबा क्या बुरे ख़्यालात हैं।

69. इसके बाद बहू को उठाकर चारपाई पर बिठाती हैं, फिर नाइन दुल्हन के पैर का दाहिना अंगूठा धोती है और वह रूपया या अठन्नी वग़ैरह जो बहू के पल्लौं में बंधा होता है, अंगूठा धुलाई में नाइन को दिया जाता है। मालूम होता है कि यह भी कोई शकुन है।

70. दुल्हन के बाद शकराने के दो बड़े थाल, एक उसके लिए दूसरा नाइन के लिए, जो बहू के साथ आती है, बनाये जाते हैं। इस वक़्त भी वही सुहागिनें, मिलकर कुछ दाने बहू के मुंह को उस बेचारी के ललचाने के लिए लगाकर आपस में सब मिलकर खा लेती हैं। (शाबाश ! शाबाश !) यह सब शकुन मालूम होता है।

71. फिर दूल्हा वालों की नाइन दुल्हन वालों की नाइन का हाथ धुलवाती हैं और यह नाइन अपने मालिक के कहे के मुताबिक़ कुछ नक़द हाथ धुलवाई देती है और खाना शुरू कर देती है। इसमें भी वही बेहद पाबंदी और इनाम में ज़बरदस्ती की ख़राबी है।

72. ख़ाना खाते वक़्त डोमनियां गाना गाती हैं। (कमबख़्तों पर ख़ुदा की मार) और उस नाइन से नेक लेती हैं। माशाअल्लाह ! गालियां की गालियां खाओ और ऊपर से इनाम दो। इस जिहालत की भी कोई हद है। ख़ुदा की पनाह !

73. जब जहेज़ खोला जाता है तो एक जोड़ा साथ वाली नाइन को दिया जाता है और एक–एक जोड़ा सब ध्यानियां आपस में बांट लेती है।

वाह ! क्या अच्छी ज़बरदस्ती है। मान न मान, मैं तेरा मेहमान ! अगर कोई कहे कि यह ज़बरदस्ती नहीं, इसको तो सब माने हुए हैं तो जवाब यह है कि जब जानती हैं कि न मानने से नक्कू बनायी जाएंगी तो इस ज़बरदस्ती के मानने का क्या भरोसा है। ज़बरदस्ती का मानना तो वह भी मान लेता है, जिसकी चोरी हो जाती है और चुप होकर बैठा रहता है। या कोई ज़ालिम माल छिन लेता है और यह डर के मारे नहीं बोलता। ऐसे मानने से किसी का माल हलाल नहीं हो जाता। इसी तरह कहीं–कहीं यह भी रस्म है कि जहेज़ में बटवे और कमरबंद और तलीदानियां होती हैं और वे सब ध्यानियां आपस में बांट लेती हैं और हिस्सा रसद बहू को भी देती हैं।

74. रात का वक़्त तंहाई के लिए होता है, जिसमें कुछ बे–हया औरतें झांकती–ताकती हैं और हदीस के मुताबिक़ लानत में दाख़िल होती हैं।

75. सुबह को यह बेहयाई होती है कि रात का बिस्तर–चादर वग़ैरह देखी जाती है। इससे बढ़कर कहीं–कहीं तो यह ग़ज़ब है कि तमाम कुन्बे में नाइन के हाथ फिराया जाता है। किसी का राज़ मालूम करना बिल्कुल हराम है, ख़ासतौर से ऐसी शर्म की बात की शोहरत, सब जानते हैं कि कितनी बेग़ैरती की बात है। मगर अफ़सोस है कि ठीक उस वक़्त किसी को ना–गवार नहीं होता। अल्लाह बचाये।

76. असर व मग़्रिब के दर्मियान बहू का सिर खोला जाता है और उस वक्त डोमनियां गाती बजाती हैं और उनको सवा रूपया या पांच टके मांग भराई या सिर खुलाई के नाम से दिये जाते हैं और इसमें भी वही बेहद पाबंदी और मज़दूरी देने की ख़राबी मौजूद है।

77. बहू के आने से अगले दिन पहले नाते–रिश्तेदार दो–चार गाड़ियां और मिठाई वग़ैरह लेकर आते हैं। इस आने का नाम चौथी है। इसमें भी वही बेहद पाबन्दी की गंदगी लगी हुई है। बहू के भाई वग़ैरह घर में बुलाये जाते हैं और बहू के पास अलग मकान में बैठते हैं। अक्सर ये लोग शरीअत से ना–महरम भी होते हैं, मगर इसकी कुछ तमीज़ नहीं होती कि ना–महरम के पास तन्हा मकान में बैठना, ख़ासतौर से सज–धज के साथ कितना गुनाह और बेग़ैरती है और वह बहू को कुछ नक़द देते हैं और कुछ मिठाई खिलाते हैं और चौथी का जोड़ा, तेल व इत्र और कमीनों का ख़र्च सहित घर में भेज देते हैं और यह सब उसी बेहद पाबंदी में दाख़िल है।

78. जब नाई हाथ धुलाने आता है, तो वह अपना नेक, जो ज़्यादा से ज़्यादा सवा रूपया और कम से कम चार आने हैं, लेकर हाथ धुलवाता है।

इस फ़र्ज़ का भी कुछ ठिकाना है। जितने हक़ खुदा के और बंदों के हैं, सब रूक जाएगा मगर इस मनगढ़ंत हक़ में, जो सच पूछों तो ना–हक़ है, क्या बात कि ज़रा फ़र्क़ आ जाए, बल्कि पेशगी वसूल किया जाए। पहले इसका क़र्ज़ अदा कर दो, तब खाना नसीब हो। अस्तग़्फ़िरूल्लाह ! मेहमानों से दाम लेकर खाना खिलाना यह इन्हीं अक़्ल के दुश्मनों का काम है। यह भी बेहद पाबन्दी और शरअी हद से आगे बढ़ना और इनाम में ज़बरदस्ती करना है।

79. खाना खाने के वक़्त दुल्हन वालों की डोमनियां दरवाज़े पर बैठकर और गालियां गाकर इतना नेक लेती हैं। खुदा तुमको समझे। ऐसे ही लेने वाले और ऐसे ही देने वाले। ज़रूरतमंदों की खुशामद और दुआओं पर फूटी कौड़ी न दें और इन बद–ज़ातों को गालियां खाकर रूपए बख़्शें। वाह रे रिवाज ! तू भी कैसा ज़बरदस्त है। खुदा तुझे हमारे मुल्क से ग़ारत करे।

80. दूसरे दिन चौथी का जोड़ा पहना कर, उस मिठाई सहित, जो बहू के घर से आयी थी, विदा करते हैं। माशाअल्लाह ! भला इस मिठाई के भेजने से और फिर वापस जाने से क्या हासिल ! शायद इस मुबारक घर से मिठाई में बरकत आ जाने के लिए भेजी होगी। ख़्याल तो करो, रस्म की पाबन्दी में अक़्ल भी जाती रहती है और बेहद पाबंदी का गुनाह व इल्ज़ाम अलग रहा।

81. और बहू के साथ नौशह भी जाता है और विदा करते वक़्त वही चारों चीज़ें पल्लुओं में बांधी जाती हैं, जो विदाई के वक़्त वहां से बांधकर आयी थीं। यह भी बेकार की बात और शकुन है।

82. वहां जाकर दुल्हन उतारी जाती है तो उसका दाहिना अंगूठा वहां की नाइन धोकर वह अठन्नी या रूपया जो बहू के पल्लो में बंधा होता है, ले लेती है वही शकुन वहां भी हैं

83. जब दूल्हा घर में जाता है तो सालियां उसका जूता छिपाकर जूता छिपाई के नाम से कम से कम एक रूपया लेती हैं। शाबाश ! एक तो चोरी करें और उल्टा इनाम पायें। एक तो ऐसे बेकार के मज़ाक कि किसी की चीज़ उठाई, छिपा दी, हदीस में इसे मना किया गया है। फिर यह कि हंसी–दिल्लगी की ख़ूबी है, इससे बे–तकल्लुफ़ी बढ़ती है और अजबनी और ग़ैर–मर्द से ऐसा ताल्लुक़ पैदा करना यह खुद शरअ के ख़िलाफ़ है। फिर इस इनाम को लाज़िमी हक़ समझना यह भी ज़बरदस्ती करके लेना और शरअी हद से निकल जाना है। कहीं–कहीं जूता–छिपाई की रस्म नहीं, मगर इसका इनाम बाक़ी है। क्या वाहियात बात है।

84. इससे बदतर चौथी खेलना है जिसका कुछ शहरों में रिवाज है। इसमें जिस दर्जे की बे-हयाई और बेग़ैरती होती है, उसका कुछ पूछना है। फिर जिनकी औरतें उस चौथी खेलने में शरीक होती हैं, उनके शौहर बावजूद मालूम होने के इसका इन्तिज़ाम करने और न मना करने की वजह से दय्यूस बनते हैं। इस सबके अलावा कभी-कभी ऐसी चोटें लग जाती हैं कि आदमी तिलमिला जाता है, उसका गुनाह अलग।

85. जब दूल्हा आता है तो वहां का नाई उसके दाहिने पैर का अंगूठा धोकर अपना हक़ लेता है, जो एक रूपए के क़रीब होता है और बाक़ी कमीनों का ख़र्च घर में देते हैं, यह सब शकुन और बेहद पाबंदी में दाख़िल है। इन सब मौक़ों में नाई का हक़ सबसे ज़्यादा समझा जाता है। यह हिंदुओं की रस्म है, इनके रिवाज में नाई के अख़्तियार चूंकि बहुत ज़्यादा हैं, इसलिए इसकी बड़ी क़द्र है। अनपढ़ मुसलमानों के अख़्तियार तो उनसे ले लिए, मगर तंख़्वाह वहीं रखी, जो अक्सर जगह सिर्फ़ ना-हक़ का लेना-देना है, जहां कोई शरअी वजह भी नहीं हो सकती।

86. अब खाने का वक़्त आया तो दूल्हा साहब रूठे बैठे हैं। हज़ारों मन्नतें करो, खुशामद करो मगर उनका हाथ ही नहीं उठता कि जब तक हम को न दोगे, हम खाना न खायेंगे, जब हक़ मिल जाएगा तब खायेंगे। सुब्हानल्लाह ! क्या अक़्ल की बात है कि खाने का खाना खायें और ऊपर से दांत घिसाई मांगे। इस बे-तमीज़ी में हया-शर्म, अक़्ल, तहज़ीब, सब ताक़ पर रख दिए जाते हैं। इसमें भी एहसान में ज़बरदस्ती की और देने में दिखाने की बुराई मौजूद, इसलिए यह भी नाजायज़ है। दो-चार दिन के बाद फिर दूल्हा वाले दुल्हन को ले जाते हैं, उसको बहुड़ा कहते हैं और इसमें भी वही सब रस्में होती हैं. जो चौथी में हुई थीं। जो बुराइयां उसमें थीं, वही यहां भी समझ लो।

87. इसके बाद बहू के मैके से कुछ औरतें उसको लेने आती हैं और अपने साथ खजूरें लाती हैं, वही बेहद पाबंदी ।

88. ये खजूरें सारी बिरादरी में तक़्सीम होती हैं, वही दिखावा और नाम करने की बात।

89. फिर जब यहां से रूख़्सत होती है, तो नयी खजूरें साथ की जाती हैं वही बेहन पाबंदी।

90. और वह बाप के घर जाकर बिरादरी में बांटी जाती हैं, वही दिखावा व घमंड, यहां भी है।

91. इसके बाद शब-बरात या मुहर्रम हो तो बाप के घर होगा। जैसे यह पाबंदी आयत या हदीस से साबित है। वजह इसकी सिर्फ़ जिहालत का एक ख़्याल है कि मुहर्रम और शब-बरात को, अल्लाह की पनाह, ना-मुबारक समझती हैं, इसलिए दूल्हा के घर होना ना-मुनासिब जानती हैं।

92. और रमज़ान भी वहीं होता है। क़रीब ईद सवारी भेजकर बहू को बुलाती हैं। ग़रज़ यह कि जो त्यौहार ग़म और भूख के हैं जैसे मुहर्रम कि यह ग़म व रंज का ज़माना समझा जाता है, रमज़ान में भूख-प्यास का होना ज़रूरी है, शब-बरात को आम लोग जलता-बलता कहते हैं, ग़रज़ ये सब बाप के हिस्से हैं और ईद जो खुशी का त्यौहार है, वह घर होना चाहिए। लाहौल वला क़ूवत इल्ला बिल्लाह० और वहां से दो-तीन मन जिंस, जैसे सिवैयां, आटा, मेवा, वग़ैरह भेजा जाता है और दूल्हा-दुल्हन को जोड़ा कुछ नक़द सहित घी के नाम से और कुछ मिठाई दी जाती है। यह ऐसा ज़रूरी फ़र्ज़ है कि सूदी क़र्ज़ लेना पड़े, मगर यह क़ज़ा न हो। ज़ाहिर है कि यह शरअी हद से बढ़ जाता है।

93. निकाह के बाद साल-दो-साल तक बहू की रवानगी के वक़्त कुछ मिठाई और कुछ नक़द और जोड़े वग़ैरह दोनों तरफ़ से बहू के साथ कर दिए जाते हैं और रिश्तेदारों में भी ख़ूब दावतें होती हैं मगर वही जुर्माने की दावत कि बदनामी से बचने को या नाम कमाने को सारा बखेड़ा होता है। फिर इसके बदले और बराबरी का भी पूरा ध्यान रहता है, बल्कि कभी-कभी तो शिकायत व तक़ाज़ा करके दावत खाते हैं। ग़रज़ थोड़े दिनों तक यह आव-भगत सच्ची या झूठी होती रहती है, फिर इसके बाद कोई किसी को नहीं पूछता। सब खुशियां मनाने वाले और झूठी ख़ातिरदारी करने वाले अलग हुए। अब जो मुसीबत पड़े भुगतो। काश, जिस क़दर रूपया बेहूदा तौर पर उड़ाया जाता है, अगर इन दोनों के लिए इससे कोई जायदाद ख़रीदी जाती या व्यापार का सिसिला शुरू कर दिया जाता तो कितना आराम रहता। सारी ख़राबी इन रस्मों की पाबंदी से है।

94. दोनों तरफ़ की मिठाई दोनों की बिरादरी में बंट जाती है, जिसका मन्शा वही दिखावा है और अगर वह मिठाई सबको न पहुंचे तो अपने घर से मंगाकर मिलाओ, यह भी जुर्माना है।

95. कुछ जगह कंगना बांधने का भी रिवाज है जो ग़ैर-मुस्लिमों की रस्म होने की वजह से मना है।

96. कहीं तो आरसी मुस्हफ़ की भी रस्म है, इसमें भी तरह-तरह की

रुसवाइयां और ज़िल्लतें हैं, जो शरीअत और अक़्ल के बिल्कुल ख़िलाफ़ हैं।

97. कहीं साज-सज्जा और आतशबाज़ी का सामान होता है, जो सरासर दिखावा और माल का बेहूदा उड़ाना है, जिसके हराम होने में कोई शुबहा नहीं।

98. कुछ जगहों पर तो हिंदुस्तानी या अंग्रेज़ी बाजे होते हैं, इनका हराम होना हदीस में मौजूद है और कुछ नाच भी होता है, जिसका हराम होना पहले बाब में बयान कर दिया गया है।

99. कुछ तरीखें और महीनों और सालों को, जैसे अठारह साल को मनहूस समझते हैं और इसमें शादी नहीं करते। यह अक़ीदा भी बिल्कुल अक़्ल और शरअ के ख़िलाफ़ है।

100. कहीं तो जहेज़ के पलंग में चांदी के पाए, चांदी की सुर्मादानी, सलाई, कटोरे वग़ैरह दिए जाते हैं, जिनका इस्तेमाल करना हराम है। हदीस शरीफ़ में खुले तौर पर रोका गया है, इसलिए इसका देना भी हराम है।

ये सब बातें सौ से ऊपर हैं, जिनमें से किसी में एक गुनाह, किसी में दो, किसी में चार-पांच और किसी में बत्तीस तक जमा हैं। अगर हर एक के पीछे तीन-तीन गुनाह का औसत रखो तो यह शादी तीन सौ से कुछ ज़्यादा गुनाहों पर शामिल है। जिस तरह से तीन सौ से ज़्यादा शरअी हुक्म के ख़िलाफ़ होता है, उसमें भला ख़ैर व बरकत का क्या ज़िक्र। ग़रज़ ये सब बातें इन गुनाहों से भरी पड़ी हैं—

1. माल का बेहूदा उड़ाना, 2. नाम और शान 3. बेहद पाबंदी, 4. ग़ैर-मुस्लिमों जैसा काम, 5. सूदी क़र्ज़ या बे-ज़रूरत क़र्ज़ लेना 6. इनाम व इक्राम व एहसान को ज़बरदस्ती लेना, 7. बे-पर्दगी, 8. शिर्क व अक़ीदे की ख़राबी, 9. नमाज़ों का क़ज़ा होना या मक्रूह वक़्त में पढ़ना, 10. गुनाहों में मदद देना, 11. गुनाह पर क़ायम रहना, और उनको अच्छा जानना, जिनका क़ुरआन व हदीस में साफ़ बुरा बताया गया है, चुनांचे कुछ थोड़ा-सा बयान किया जाता है—

1. इर्शाद फ़रमाया अल्लाह ने कि बेहूदा मत उड़ाओ, बेशक अल्लाह तआला पसन्द नहीं करते बेहूदा उड़ाने वालों को।

2. दूसरी जगह फ़रमाया है, बेहूदा उड़ाने वाले शैतान के भाई हैं और शैतान अपने पालनहार का ना-शुक्रा है।

3. हदीस में फ़रमाया अल्लाह के रसूल सल्ल० ने जो शख़्स दिखाने के लिए कोई काम करे, अल्लाह तआला उसके ऐब क़ियामत के दिन दिखायेगा।

4. कुरआन मजीद में है कि अल्लाह तआला की हदों से आगे न बढ़ो।

इससे मालूम हुआ कि जो चीज़ शरअ में ज़रूरी नहीं, उसको ज़रूरी समझना, और उसकी बेहद पाबन्दी करना बुरा है, क्योंकि इसमें खुदा की हदों से आगे बढ़ना है।

5. हदीस शरीफ़ में है कि लानत फ़रमायी अल्लाह के रसूल सल्ल० ने सूद लेने वाले और देने वाले पर और फ़रमाया है कि गुनाह में दोनों बराबर हैं।

6. कर्ज़ लेने के बारे में भी हदीसों में बहुत धमकियां आयी हैं, इसलिए बे-ज़रूरत वह भी गुनाह है।

7. हदीस शरीफ़ में है कि किसी का माल हलाल नहीं है, बग़ैर उसकी खुशदिली के। इससे मालूम हुआ कि किसी क़िस्म की ज़बरदस्ती करके, मजबूर करके, दबाव डालकर लेना हराम है।

8. हदीस शरीफ़ में है कि लानत करे अल्लाह तआला देखने वाले को और जिसकी तरफ़ देखा जाए। इससे बे-पर्दगी की बुराई और उसका हराम होना साबित हुआ कि देखने वाले पर भी लानत है और जो सामने आ जाए, एहतियात से पर्दा न करे, उस पर भी लानत है और मर्द का ग़ैर औरत को देखना और औरत का ग़ैर-मर्द को देखना दोनों गुनाह हैं।

9. शिर्क की बुराई को कौन नहीं जानता।

10. हदीस में है कि अल्लाह के रसूल के साथी रज़ि० किसी अमल के छोड़ने को कुफ़्र न समझते थे, नमाज़ के अलावा। देखो, इससे नमाज़ क़ज़ा करने की कितनी बुराई निकली कि आदमी का ईमान ही सही और ठीक नहीं रहता।

11. अल्लाह तआला ने फ़रमाया, एक दूसरे की मदद करो, गुनाह और जुल्म में।

12. हदीस में है कि जब नेकी करने से तेरा जी खुश हो और बुरे काम करने से जी बुरा हो, पस तू मोमिन (ईमान वाला) है। इससे मालूम हुआ कि गुनाह को अच्छा जानना और उस पर क़ायम रहना, ईमान का वीरान करने वाला है।

13. हदीस शरीफ़ में ख़ासकर जिहालत भरी इन रस्मों के बारे में बड़ी सख़्त धमकियां आयी हैं।

14. फ़रमाया अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कि सबसे ज़्यादा जलन अल्लाह तआला को तीन आदमियों के साथ है। उनमें से एक यह भी फ़रमाया कि जो आदमी इस्लाम में आकर जाहिलियत की रस्में बरतना

चाहे।

इसके अलावा और बहुत सी हदीसें हैं। हम ज़्यादा बयान नहीं करते, पस मुसलमान पर फ़र्ज़ व वाजिब और ईमान व अक़्ल की बात यह है कि इन रस्मों की बुराई जब अक़्ल और शरअ से मालूम हो गयी तो हिम्मत करके सबको छोड़ दे और नाम व बदनामी पर नज़र न करे, बल्कि इसका तर्जुबा हो चुका है कि अल्लाह तआला की इताअत में ज़्यादा इज़्ज़त और नेकनामी होती है और इन रस्मों को ख़त्म करने के दो तरीक़े हैं—

एक यह कि सब बिरादरी मिलकर यह सब बखेड़े ख़त्म करे,

दूसरा तरीक़ा यह है कि अगर कोई इसका साथ न दे, तो खुद ही शुरू कर दे। देखा—देखी और लोग भी ऐसा करने लगेंगे, क्योंकि इन बेकार की रस्मों से सबको तक्लीफ़ है। इसी तरह अगर अल्लाह ने चाहा, तो कुछ दिनों में आम असर फैल जाएगा और शुरू करने का सवाब क़ियामत तक मिलता रहेगा, मरने के बाद भी मिलेगा।

कुछ लोग कहते हैं कि साहब, जिसको गुन्जाइश हो, वह करे, जिसको न हो, वह न करे। इसका जवाब यह है कि एक तो गुन्जाइश से इजाज़त कब हो सकती है। दूसरे यह कि जब गुन्जाइश वाले करेंगे तो उनकी बिरादरी के ग़रीब आदमी भी अपनी आबरू की हिफ़ाज़त के लिए ज़रूर करेंगे। इसलिए ज़रूरी इन्तिज़ाम की बात यही है कि सब ही छोड़ दें।

कुछ लोग कहते हैं कि अगर ये रस्में रुक जाएं, फिर मेल—मिलाप की कोई शक्ल ही नहीं। इसका जवाब यह है कि एक तो मेल—मिलाप की मसलहत से गुनाह की बात की इजाज़त किसी तरह जायज़ नहीं हो सकती। फिर यह मेल—मिलाप इस पर रुका नहीं। रस्मों की पाबंदी के बग़ैर एक दूसरे के घर जाए या उसको बुलाए, खिलाये—पिलाये, कुछ मदद व सुलूक करे, जैसा यार दोस्तों में राह व रस्म जारी है, तो क्या यह मुम्किन नहीं, बल्कि अब तो इन रस्मों की वजह से बजाए मुहब्बत के, जोकि मेल—मिलाप का असल मक़सद है, अक्सर रंज व तकरार और शिकायत और पूराने कीनों का ताज़ा करना और तक़रीब वाले का ऐब ढूंढकर निकालना, उसको ज़लील करने पर उतारू होना, इसी तरह की और दूसरी ख़राबियां देखी जाती हैं और चूंकि ऐसा लेना—देना, खिलाना—पिलाना रस्म की वजह से ज़रूरी हो गया है, इसलिए कुछ खुशी भी नहीं होती, न देने वाले को कि वह एक बेगार—सी उतारता है, न लेने वाले को कि वह अपना ज़रूरी हक़ समझता है, फिर लुत्फ़ कहां रहा, इसलिए इन तमाम बुरी रस्मों का ख़त्म कर देना

वाजिब है। मंगनी में जुबानी वायदा काफ़ी है, न नाई की ज़रूरत, न जोड़ा, और न निशानी और न मिठाई की ज़रूरत। जब दोनों निकाह के क़ाबिल हो जाएं जुबानी या ख़तों के ज़रिए, कोई वक़्त ठहरा कर दूल्हा को बुलाएं, एक उसका सरपरस्त और एक उसका ख़िदमत गुज़ार उसके साथ आना काफ़ी है, न बरी की ज़रूरत, न बरात की ज़रूरत, निकाह करके, तुरंत एक–आध दिन मेहमान रखकर उसको विदा कर दें और अपनी गुंजाइश के मुताबिक़ जो ज़रूरी और काम की चीज़ें जहेज़ में देनी मंज़ूर हों, बग़ैर दूसरों को दिखलाये और शोहरत दिए उसके घर भेज दें या अपने ही घर उसके सुपुर्द कर दें, न ससुराल के जोड़े की ज़रूरत, न चौथी के घोड़े की हाजत, फिर जब चाहें, दुल्हन वाले बुलावें और जब मौक़ा हो, दूल्हा वाले बुला ले। अपने–अपने कमीनों को गुन्जाइश के मुताबिक़ खुद ही दे लें, न ये उनसे दिलाएं, न वे इनसे। मुंह पर हाथ रखना भी कुछ ज़रूरी नहीं, बिखेर भी बेकार है। अगर तौफ़ीक़ हो तो शुक्रिया में ज़रूरतमंदों को दे दें। किसी काम के लिए क़र्ज़ न लो, हां, वलीमा सुन्नत है, वह भी अच्छी नीयत के साथ और थोड़े में, न कि नाम के लिए और दिखावे के लिए, वरना ऐसा वलीमा भी जायज़ नहीं।

हदीस में ऐसे वलीमे को 'सबसे बुरा खाना' कहा गया है, इसलिए न ऐसा वलीमा जायज़, न इसका क़ुबूल करना जायज़। इससे मालूम हो गया होगा कि अक्सर खाने जो बिरादरी को खिलाये जाते हैं, उनका खाना और खिलाना कुछ भी जायज़ नहीं। दीनदार को चाहिए कि खुद उन रस्मों को न करे और जिस तक़रीब में ये रस्में हों, वहां हरगिज़ शरीक न हो, बल्कि साफ़ इंकार कर दे। बिरादरी कुन्बे की खुशी अल्लाह तआला की ना–राज़ी के सामने कुछ काम न आयेगी। अल्लाह तआला सब मुसलमानों को ऐसी तौफ़ीक़ अता फ़रमाये, आमीन।

मह्र ज़्यादा बढ़ाने का बयान

इन ही रस्मों में से मह्र ज़्यादा ठहराने की रस्म है जो सुन्नत के ख़िलाफ़ है। हदीस में है कि हज़रत उमर रज़ि० ने फ़रमाया, ख़बरदार ! मह्र बढ़ाकर मत ठहराओ, इसलिए अगर यह इज़्ज़त की बात होती दुनिया में और तक़्वे की बात होती अल्लाह तआला के नज़दीक तो तुम्हारे पैग़म्बर सल्ल० इसके ज़्यादा हक़दार थे। मुझको मालूम नहीं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने किसी बीवी से निकाह किया हो या किसी साहबज़ादी का निकाह

किया हो, बारह औक़िया से ज़्यादा पर और कुछ रिवायतों में साढ़ बारह औक़िया आये हैं। यह हमारे हिसाब से लगभग एक सौ सैंतीस रू० होते हैं।

कुछ कहते हैं कि बड़ा मह्र इसलिए मुक़र्रर करते हैं, ताकि शौहर न छोड़ सके, यह बहाना बिल्कुल बेकार है। एक तो जिनको छोड़ना होता है, छोड़ ही देते हैं, फिर जो कुछ भी हो और जो मह्र के तक़ाज़े के ख़ौफ़ से नहीं छोड़ते, वह छोड़ने से भी बुरा कर देते हैं। यानी न तलाक़ देते हैं, न पास रखते हैं, बीच में अधर डाल रखा, न इधर की, न उधर की। उनका कोई क्या कर लेता है। सब सब फ़िज़ूल बहाने हैं। असल यह है कि घमंड के लिए ऐसा करते हैं कि ख़ूब शान ज़ाहिर हो, सो फ़ख़्र के लिए कोई काम करना, चाहे असल में जायज़ हो, हराम हो जाता है, तो भला उसका क्या कहना, जो खुद ही सुन्नत के ख़िलाफ़ और मक्रूह हो, वह तो और भी मना और बुरा समझा जाएगा। सुन्नत तो यहीं है कि हज़रत पैग़म्बर सल्ल० की बीवियों और साहबज़ादियों का–सा मह्र ठहराये और ख़ैर ऐसा ही ज़्यादा बांधने का शौक़ है तो हर आदमी की हैसियत के मुताबिक़ मुक़र्रर करें, इससे ज़्यादा न करें

हज़रत फ़ातिमा रज़ि० का निकाह

पहले तो हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० और हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि ने हुज़ूर सल्ल० से इस बड़ी दौलत की दर्ख़्वास्त की। आपने कम उम्र होने का उज़्र फ़रमा दिया, फिर हज़रत अली रज़ि० ने शर्माते हूए खुद हाज़िर होकर ज़ुबानी अर्ज़ किया। आप पर तुरंत हुक्मे इलैहि आया और आपने उनकी अर्ज़ को क़ुबूल कर लिया, तो इससे मालूम हुआ कि मंगनी में यह तमाम बखेड़े की जिनका आजकल रिवाज है, सब बेकार और सुन्नत के ख़िलाफ़ हैं। बस ज़ुबानी पैग़ाम और ज़ुबानी जवाब काफ़ी है। उस वक़्त हज़रत फ़ातिमा रज़ि० की उम्र साढ़े पंद्रह साल और हज़रत अली रज़ि० की 21 वर्ष की थी। इससे मालूम हुआ कि इस उम्र के बाद देर करना निकाह में अच्छा नहीं और यह भी मालूम हुआ कि दूल्हा–दुल्हन की उम्र में जोड़ होने का ध्यान भी रखना मुनासिब है और बेहतर यह है कि दूल्हा उम्र में दुल्हन से किस क़दर बड़ा हो। प्यारे नबी सल्ल० ने इर्शाद फ़रमाया ऐ अनस ! जाओ अबूबक्र व उमर व उस्मान व तलहा व ज़ुबैर रज़ि० और एक जमाअत अंसार को बुला लाओ, तो इससे मालूम हुआ कि निकाह की मज्लिस में अपने ख़ास लोगों को बुलाने में कुछ हरज नहीं और हिक्मत इसमें है कि निकाह

की शोहरत हो जाए जोकि चाहिए, मगर इस बुलावे में एहतमाम और कोशिश न हो। वक़्त पर बे–तकल्लुफ़, जो दो–चार आदमी क़रीब व नज़दीक के हों, जमा हो जाएं।

ये सब हाज़िर हो गये और आपने एक ख़ुत्बा पढ़कर निकाह कर दिया। इससे मालूम हुआ कि बाप का छिपे–छिपे फिरना यह भी सुन्नत के ख़िलाफ़ है, बल्कि बेहतर यह है कि बाप ख़ुद अपनी लड़की का निकाह पढ़े और चार सौ मिस्क़ाल चांदी मह्र मुक़र्रर हुआ, जिसकी मिक़्दार का तक़्सीम ऊपर आ चुका है। इससे मालूम हुआ कि मह्र लम्बा–चौड़ा मुक़र्रर करना भी सुन्नत के ख़िलाफ़ है, पस मह्रे फ़ातिमा काफ़ी और बरकत की वजह है और अगर किसी को ताक़त न हो तो उससे भी कम मुनासिब है।

फिर आपने एक थाल में खुरमा लेकर हाज़िर लोगों कों पहुंचा दिए। फिर हुज़ूर सल्ल० ने हज़रत फ़ातिमा रज़ि० को हज़रत उम्मे ऐमन के साथ हज़रत अली रज़ि० के घर पहुंचा दिया।

बहनो ! देखो यह दोनों जहान की शाहज़ादी की रूख़्सती है, जिसमें न धूम, न धाम, न म्यान, न पालकी, न बिखेर, न आपने हज़रत अली रज़ि० से कमीनों का ख़र्च दिलवाया, न कुन्बे–बिरादरी का खाना किया। हम लोगों को भी लाज़िम है कि अपने पैग़म्बर सल्ल० जैसे सरदार की पैरवी करें और अपनी इज़्ज़त को हुज़ूर सल्ल० की इज़्ज़त से बढ़कर न समझें (इससे अल्लाह की पनाह हम मांगते हैं) फिर हुज़ूर सल्ल० उनके घर तश्रीफ़ लाये और हज़रत फ़ातिमा रज़ि० से पानी मंगाया। वह एक लकड़ी के प्याले में पानी लायीं। इससे मालूम हुआ कि नई दुल्हनों की शर्म में इतना ज़्यादती न करना ऐब न समझा जाए। यह भी सुन्नत के ख़िलाफ़ है। प्यारे नबी सल्ल० ने अपनी कुल्ली उसमें डाल दी और हज़रत फ़ातिमा रज़ि० को फ़रमाया कि इधर मुंह करो और उनके सीना मुबारक और सिर मुबारक पर थोड़ा पानी छोड़ा और दुआ की, ऐ अल्लाह ! इन दोनों की औलाद को शैतान से आपकी पनाह में देता हूं, फिर फ़रमाया कि इधर पीठ करो और आपने इनके कंधों के बीच पानी छिड़का और फिर वही दुआ की। फिर हज़रत अली रज़ि० से पानी मंगाया और यही उनके साथ भी किया, मगर पीठ की तरफ़ पानी नहीं छिड़का। मुनासिब है कि दूल्हा–दुल्हन को जमा करके यह अमल किया करें कि बरकत की वजह बने।

हिंदुस्तान में ऐसी बुरी रस्म है कि निकाह हो जाने के बावजूद दूल्हा–दुल्हन में पर्दा रहता है। फिर इर्शाद हुआ कि बिस्मिल्लाह ! बरकत

के साथ अपने घर जाओ। और एक रिवायत में है कि निकाह के दिन हुज़ूर सल्ल० नमाज़ इशा के बाद हज़रत अली मुर्तज़ा रज़ि० के घर तशरीफ़ लाये और बर्तन में पानी लेकर उसमें अपना मुबारक थूक डाला और 'कुल अऊज़ु बिरब्बिल फ़लक़' और कुल अऊज़ू बिरब्बिन्नासि' पढ़कर दुआ की, हज़रत अली रज़ि० और हज़रत फ़ातिमा रज़ि० के आगे–पीछे हुक्म फ़रमाया कि उसको पिएं और वुज़ू करें। फिर दोनों साहबों के लिए पाकी और आपस में मुहब्बत से रहने की और औलाद में बरकत होने और अच्छी क़िस्म की दुआ फ़रमायी और फ़रमाया, जाओ आराम करो (अगर दामाद का घर क़रीब हो, तो यह अमल करना भी बरकत का सबब है) और जहेज़ औरतों की सरदार को यह था—दो चादर यमानी, जो सासी के तौर पर होती थीं, दो नहाली, जिसमें अलसी की छाल भरी थी, चार गद्दे, दो बाज़ूबंद चांदी के, एक कमली और एक तकिया, एक प्याला और एक चक्की, एक मशक और पानी रखने का बर्तन यानी घड़ा। कुछ रिवायतों में एक पलंग भी आया है।

बीवीयो ! जहेज़ में तीन बातों को ध्यान में रखना चाहिए। एक यह कि मुख़्तसर हो यानी यह कि गुन्जाइश से ज़्यादा की फ़िक्र न करो। दूसरे ज़रूरत का ख़्याल कि जिन चीज़ों की तुरंत ज़रूरत हो, वह देना चाहिए। तीसरे एलान व इज़्हार न होना चाहिए, क्योंकि यह तो अपनी औलाद के साथ एहसान व सुलूक है, दूसरों को दिखलाने की क्या ज़रूरत है। प्यारे नबी के अमल से जो अभी बयान हुआ, तीनों बातें साबित हैं और प्यारे नबी सल्ल० ने काम इस तरह बांटा कि बाहर का काम हज़रत अली रज़ि० के ज़िम्मे और घर का काम हज़रत फ़ातिमा रज़ि० के ज़िम्मे रहे। मालूम नहीं हिंदुस्तान की शरीफ़ज़ादियों में घर के काम से क्यों शर्म की जाती है, फिर हज़रत अली रज़ि० ने वलीमा किया, जिसमें यह सामान था—कई साअ[1] जौ की रोटी पकी हुई और कुछ खुरमे और कुछ मलीदा। पस वलीमा का सुन्नत तरीक़ा यह है कि बे–तकल्लुफ़ और बे–फ़ख़ के थोड़े में, जितना मिला, अपने ख़ास लोगों को खिलाये।

प्यारे नबी सल्ल० की बीवियों का निकाह

हज़रत ख़दीजा रज़ि० का मह्र पांच सौ दिरहम या उस क़ीमत के ऊंट थे, जो अबूतालिब ने अपने ज़िम्मे रखे और हज़रत उम्मे सलमा रज़ि० का

1. एक पैमाना जो नम्बरी सेर से एक छटांक ऊपर साढ़े तीन सेर होता है।

मह्र कोई बरतने की चीज़ थी, जो दस दिरहम की थी और हज़रत जुवैरिया रज़ि० का मह्र चार सौ दिरहम थे और उम्मे हबीबा रज़ि० का मह्र चार सौ दीनार थे, जो हब्शा के बादशाह ने अपने ज़िम्मे रखे और हज़रत सौदा रज़ि० का मह्र चार सौ दिरहम थे। और वलीमा हज़रत उम्मे सलमा रज़ि० का कुछ जौ का खाना था और हज़रत ज़ैनब बिन्त जह्श रज़ि० के वलीमे में एक बकरी ज़िब्ह हुई थी और गोश्त–रोटी लोगों को खिलाया गया था और हज़रत सफ़ीया रज़ि० की दफ़ा जो–जो कुछ सहाबा रज़ि० के पास हाज़िर था, सबको जमा कर लिया गया, यही वलीमा था। हज़रत आइशा सिद्दीक़ी रज़ि० का वलीमा, वह खुद फ़रमाती हैं, न ऊंट ज़िब्ह हुआ, न बकरी। साद बिन उबादा रज़ि० के घर से एक प्याला दूध का आया था, बस वही वलीमा था।

शरअ़ के मुताबिक़ शादी का एक नया क़िस्सा

यह क़िस्सा इस मक़्सद से लिखा जाता है कि अक्सर लोग रस्मों की बुराई को सुनकर पूछते हैं कि जब ये रस्में न हों, तो फिर किस तरीक़े से शादी करें। इसका जवाब मह्र ज़्यादा बढ़ाने के बयान से ज़रा पहले गुज़र चुका है कि किस तरह शादी करें और फिर हमने पैग़म्बर सल्ल० की साहबज़ादियों और बीवियों की शादी का क़िस्सा भी अभी लिख दिया है, समझदार आदमी के लिए काफ़ी है। मगर फिर भी कोई–कोई कहने लगते हैं। कि साहब, उस ज़माने की बात थी, आजकल करके दिखलाओ तो देखें और निरे ज़ुबानी तरीक़े बतलाने से क्या होता है। इस क़िस्से से यह मालूम हो जाएगा कि आजकल भी इस तरह शादी हो सकती है, फिर यह कि यह क़िस्सा न मौलवियों और दरवेशों के ख़ानदान का है और न किसी ग़रीब आदमी का है, न किसी छोटी क़ौम का है। दोनों तरफ़ माशाअल्लाह ख़ूब खाते–पीते, दुनियादारी बरतने वाले शरीफ़ आबरूदार घरों का है। इसलिए कोई यों भी नहीं कह सकता कि मौलवी दरवेश लोगों की और बात है या यह कि उनके पास कुछ था ही नहीं, इस मजबूरी को शरअ के मुताबिक़ कर लिया। इस क़िस्से से सारे शुबहे जाते रहेंगे।

इसी साल की बात है कि ज़िला मुज़फ़्फ़र नगर के दो क़स्बों में, एक क़स्बे में दूल्हा वाले, एक में दुल्हन वाले हैं। मुद्दत से दोनों तरफ़ वालों में बहुत बड़े हौसले थे, लेकिन ठीक वक़्त पर अल्लाह ने दोनों की हिदायत की। शरअ के हुक्म सुनकर अपने सब ख़्यालात को दिल से निकाल कर ख़ुदा और रसूल सल्ल० के हुक्म के मुताबिक़ तैयार हो गए, न शादी की तारीख़ मुक़र्रर करने को या मेंहदी ले जाने को या जोड़ा ले जाने को नाई भेजा गया, न इस सिलसिले में कोई रस्म अदा की गयी, न दुल्हन के बुटना मलने के वास्ते बीवियां जमा की गयीं। ख़ुद ही घर वालों ने मल–दल दिया, न दूल्हा न दुल्हन वालों ने घरों में किसी को मेहमान बुलाया, न किसी रिश्ते–नातेदार को कोई सूचना दी। शादी के पांच–छः दिन पहले ख़त के ज़रिए शादी का दिन ठहर गया। दूल्हा और दूल्हा, के साथ एक उसका बड़ा भाई था। दुल्हन के शरअी वली ने उस बड़े भाई को लिखकर निकाह की इजाज़त दी थी और एक मुलाज़िम काम व ख़िदमत के लिए था और कम–उम्र भतीजा इस मस्लहत से साथ ले लिया था कि शायद कोई ज़रूरी बात घर में कहला भेजने की ज़रूरत हो, तो यह बच्चा परदे के क़ाबिल नहीं है। बे–तकल्लुफ़ घर में जाकर कह देगा। बस कुल इतने आदमी थे जो किराए की एक बहली में बैठकर जुमा के दिन दुल्हन के घर पहुंच गए। दुल्हन का जोड़ा उन्हीं लोगों के पास था और दूल्हा अपने घर के कपड़े पहने हुए था। वहां पहुंचकर मिलने वालों को कहला भेजा गया कि जुमा की नमाज़ के बाद निकाह होगा। जुमा की नमाज़ के क़रीब दूल्हा का जोड़ा घर में से आ गया। उसको पहनकर जामा मस्जिद में चले गए। जुमा की नमाज़ के बाद पहले तो छोटा–सा वाज़ हुआ, जिसमें रस्मों की ख़राबियों का बयान था। इस वाज़ में जितने आदमी थे ख़ूब समझ गए। वाज़ के बाद निकाह पढ़ा गया और छुहारे घर में और बाहर बांटे गए। जो लोग न आ सके थे, उनके घर में भेज दिए। असर से पहले सब काम पूरा हो गया। मग़्रिब के बाद दूल्हा वालों को हमेशा के वक़्त पर अच्छा खाना खिलाया और इशा के बाद औरतों को भी वैसा ही वाज़ सुनाया गया। इन पर भी ख़ूब असर हुआ और वक़्त पर चैन से सो रहे।

अगर दिन थोड़ा ही दिन चढ़ा था कि दुल्हन को एक बहली में बिठाकर कर विदा कर दिया गया। साथ में एक रिश्तेदार बीवी और ख़िदमत के लिए एक नाइन थी। यह बहली दुल्हन के जहेज़ में मिली थी और पालकी या मियाना वग़ैरह की कोई पाबंदी नहीं की गयी और जहेज़ भी साथ नहीं दिया गया। दुल्हन वालों ने अपने कमीनों को अपने पास से इनाम दिया

और दुल्हा वालों ने सलामी रूपया भी नहीं लिया। बजाए बिखेर के, जो कि दुल्हन के सिर पर होती है, कुछ मस्जिदों में और ग़रीब–मुहताज के घरों में रूपए–पैसै भेज दिए गये। जुहर के वक़्त दुल्हा के घर आ पहुंचे। दुल्हन की कोई नमाज़ क़ज़ा नहीं हुई जो बीवियां दुल्हन को देखने आयीं, उनसे मुंह दिखायी नहीं ली गयी। अगले दिन वलीमा के लिए कुछ तो बाज़ार से अच्छी मिठाई मंगाकर और कुछ खाना घर में दो तरह का पकवा कर मुनासिब जगहों में अपने दोस्तों और मिलने वालों और ग़रीब मुहताजों और भले–सीधे तालिब इल्मों[1] के लिए भेज दिया गया। घर पर किसी को नहीं बुलाया गया, दुल्हन वालों की तरफ़ से चौथी की रस्म के लिए कोई नहीं आया । तीसरे दिन दुल्हा–दुल्हन उसके मायके चले गये और एक हफ़्ते रहकर फिर दूल्हा के घर आ गए। उस वक़्त जहेज़ के कुछ सामान भी साथ लाये और कुछ फिर भी दूसरे वक़्त पर लाने के लिए वहां ही छोड़ आये। उस वक़्त दुल्हन संयोग से मियाना में सवार थी। दूल्हा के कमीनों को जो कुछ रस्म के मुताबिक़ मिलता है, उससे ज़्यादा उनको इनाम बांट दिया गया। मतलब यह कि ऐसी चैन व अम्न से शादी हो गयी कि किसी को न कोई तक्लीफ़ हुई और न कोई तूफ़ान खड़ा हुआ। मैं भी शुरू से आख़िर तक उस शादी में शरीक रहा, इतनी मिठास और रौनक़ थी कि बयान में नहीं आती। खुदा की मेहरबानी से सब देखने वाले खुश हुए और बहुत लोग तैयार हो गये कि हम भी यों ही करेंगे। चुनांचे इस दिन के बाद दुल्हन के ख़ानदान में एक शादी और हुई और वह इससे भी सादी थी। अगर ज़्यादा सादी न हो सके तो इसी तरह कर लिया करो, जैसा कि इस क़िस्से में तुमने पढ़ा है। अल्लाह तआला तौफ़ीक़ बख़्शें। आमीन या रब्बल आलमीन !

बेवा के निकाह का बयान

इन्हीं बेहूदा रस्मों में से एक यह भी है कि बेवा औरत के निकाह को बुरा और शर्म की चीज़ समझते हैं, ख़ास कर शरीफ़ लोग इसमें ज़्यादा मुब्तला हैं। शरअ से भी और अक़्ल से भी जैसा पहला निकाह, वैसा दूसरा, दोनों में फ़र्क़ समझना, बे–वजह है और बे–वक़ूफ़ी है। सिर्फ़ ग़ैर–मुस्लिमों के

1. अरबी पढ़ने वाला छात्र

मेल–जोल और कुछ जायदाद की मुहब्बत से वह ख़्याल जम गया है। ईमान और अक़्ल की बात यह है कि जिस तरह पहले निकाह को बे–रोक–टोक कर देते हैं, उसी तरह दूसरा निकाह भी कर दिया करें। अगर दूसरे निकाह से दिल तंग होता है, तो पहले निकाह से क्यों नहीं होता। औरतों की ऐसी बुरी आदत है कि खुद करना और दूसरों को इस पर तैयार करना तो दूर रहा, अगर कोई खुदा की बंदी खुदा और रसूल सल्ल० का हुक्म सर–आंखों पर रखकर भी ले तो हिक़ारत की नज़र से देखती हैं। बात–बात में ताना देती हैं, हंसती हैं, ज़लील करती हैं। मतलब यह कि किसी बात में बे–चोट किये नहीं रहतीं। यह बड़ा गुनाह है, बल्कि इसको ऐब समझने में कुफ़्र का खौफ़ है। क्योंकि शरीअत के हुक्म को ऐब समझना, उसके करने वाले को हक़ीर व ज़लील जानना कुफ़्र है। सोचने की बात है कि हमारे पैग़म्बर सल्ल० की जितनी बीवियां थीं, हज़रत आइशा रज़ि० के अलावा कोई भी कुंवारी न थी, एक–एक, दो–दो निकाह पहले हो चुके थे, तो ख़ुदा की पनाह ! ख़ुदा की पनाह ! उनको भी बुरा कहोगी। क्या तौबा–तौबा, तुम्हारी शराफ़त उनसे भी बढ़ गयी कि जो काम उन्होंने किया, खुदा और रसूल सल्ल० ने जिसका हुक्म किया उसके करने से तुम्हारी इज़्ज़त घट जायेगी ? आबरू में बट्टा लग जाएगा, नाक कट जाएगी, तो यों कहो कि मुसलमान होना भी तुम्हारे लिए बे–इज़्ज़ती की बात है। ख़ूब याद रखो कि जब तक इस ख़्याल को अपने दिल से दूर न करोगी और पहले और दूसरे निकाह को बराबर न समझोगी तब तक हरगिज़ तुम्हारा ईमान दुरूस्त और ठीक न होगा, इसलिए इस ख़्याल के मिटाने में बड़ी कोशिश करनी चाहिए और सिवाए इसके कोशिश कामियाब नहीं हो सकती कि इज़्ज़त व शर्म को दिस से निकाल कर, रस्म व रिवाज को ताक़ पर रखकर, अल्लाह व रसूल सल्ल० को राज़ी और खुश करने के लिए तुरन्त बेवा औरतों का निकाह कर दिया करो। इन्कार करे तो उसको तैयार करो, कोशिश करो, दबाव डालो, मतलब यह कि जिस तरह बन पड़े, निकाह कर दो और ख़ूब समझ लो कि यह इन्कार सबका ज़ाहिरी इन्कार है, जो सिर्फ़ रिवाज की वजह से होता है। रिवाज न हो तो कोई इन्कार न करे। जब तक ऐसा न करोगी आमतौर पर इसका रिवाज न फैलेगा, हरगिज़ दिल का चोर न निकलेगा।

हदीस में है कि जो कोई मेरे छूटे हूए तरीक़े को फिर फैलाये और जारी करे, उसको सौ शहीदों का सवाब मिलेगा, इसलिए बेवा औरतों के निकाह में जो कोई कोशिश करेगा, और इसका रिवाज फैलायेगा और जो

अल्लाह के रसूल सल्ल० की खुशी के लिए और रिवाज बढ़ाने के लिए अपना निकाह कर लेगी, वह सौ शहीदों का सवाब पायेगी। क्या तुमको इन पर तरस नहीं आता। इनका हाल देख-देखकर तुम्हारा मन नहीं कुढ़ता कि उनकी उम्र बर्बाद होती है और वे मिट्टी में मिल जाती हैं।

तीसरा बाब उन रस्मों के बयान में जिनको लोग दोनों दुनिया के सवाब की बात समझ कर करते हैं

फ़ातिहा का बयान

पहले यह समझो कि फ़ातिहा यानी मुर्दे को सवाब पहुंचाने का तरीक़ा क्या है तो इसकी हक़ीक़त शरअ में बस इतनी है कि किसी ने कोई नेक काम किया, उस पर जो कुछ सवाब मिला, उसने अपनी तरफ़ से वह सवाब किसी दूसरे को दे दिया कि या अल्लाह ! मेरा यह सवाब फ़लां को दे दीजिए और फ़लां को पहुंचा दीजिए जैसे, किसी ने खुदा की राह में कुछ खाना या मिठाई या रूपया-पैसा कपड़ा वग़ैरह दिया, अल्लाह तआला से दुआ की कि जो कुछ इसका सवाब मुझे मिला है, वह फ़लां को पहुंचा दीजिए या एक-आध पारः कुरआन मजीद या एक-आध सूरः पढ़ी और उसका सवाब बख़्श दिया, चाहे वह नेक काम आज ही किया हो, या इससे पहले उम्र भर में कभी किया था, दोनों का सवाब पहुंच जाता है। इतना तो शरअ से साबित है।

अब देखो, जाहिलों ने इसमें क्या-क्या बखेड़ शामिल किए हैं—

पहले तो थोड़ी-सी जगह लीपते हैं, उसमें खाना रखते हैं। कुछ तो खाने के साथ पानी और पान भी रखते हैं। फिर एक आदमी खाने के सामने खड़ा होकर कुछ सूरतें पढ़ता है और नाम-ब-नाम सब मुर्दों को बख़्शता है। इन मनगढ़त तरीक़े में ये ख़राबियां हैं—

1. बड़ी ख़राबी इसमें यह है कि सारे जाहिलों का यह अक़ीदा है कि बग़ैर इस तरह पहुंचाए, सवाब ही नहीं पहुंचता। चुनांचे एक-एक की खुशामद करते फिरते हैं। जब तक कोई इस तरह का फ़ातिहा न करे, तब

तक वह खाना किसी को नहीं दिया जाता, क्योंकि अब तक सवाब तो पहुंचा ही नहीं, फिर किसी को किस तरह दिया जाए। कभी तो ग़ैर महरम को घर में बुलाकर फ़ातिहा दिलवाती हैं, जो शरीअत से नाजायज़ है, खुद मैंने देखा है कि जब बहुत से मुर्दों को फ़ातिहा दिलाना होता है, जिनके नाम बतला देने से याद नहीं रह सकते, तो वहां फ़ातिहा देने वाले को हुक्म होता है कि जब तू सब पढ़ चुके, तो 'हूं' कर देना। पस 'हूं' करने के वक़्त एक-एक नाम बतला कर उससे कहलाया जाता है और यह समझती हैं कि इस वक़्त जिसका नाम वह ले लेगा, उसी को सवाब मिलेगा। जिसका न लेगा, उसको न मिलेगा। हालांकि सवाब बख़्शने का अख़्तियार खाने के मालिक को है, न उस पढ़ने वाले को। उसके नाम लेने से कुछ नहीं होता, खुद यह जिसको चाहे बख़्शे, जिसको चाहे, बख़्शे। यह सब अक़ीदे की ख़राबी है।

कुछ कम-इल्म यों कहते हैं कि सवाब तो इसके बग़ैर भी पहुंच जाता है, लेकिन इस वक़्त सूरतें इसलिए पढ़ लेते हैं कि दोहरा सवाब पहुंच जाए एक खाने का, दूसरा कुरआन मजीद का। इसका जवाब यह है कि अगर यही मतलब है तो ख़ास इस वक़्त पढ़ने की क्या वजह। जो कुरआन मजीद तुमने सुबह को तिलावत किया, बस उसी को उसके साथ बख़्श दिया होता। अगर कोई आदमी उस वक़्त न पढ़े, पहले का पढ़ा हुआ एक-आधा पारः या पूरा कुरआन मजीउ बख़्श दे या यों कहे, अच्छा मिठाई बांट दो, फिर पढ़के बख़्श दूंगा तो कभी कोई न मानेगा या कोई इस खाने या मिठाई के पास न आये, वहीं दूर बैठा-बैठा पढ़ा दे, तब भी कोई नहीं मानता। फिर इस शक्ल में दूसरे से फ़ातिहा कराने का कोई मतलब ही नहीं, क्योंकि कुरआन पढ़ने का सवाब उसी पढ़ने वाले को होगा, तो तुम्हारी तरफ़ से तो बहरहाल मिठाई का सवाब पहुंचा। यह अच्छी ज़बरदस्ती है कि जब हम एक सवाब बख़्शें तो कुछ न कुछ वह भी बख़्शे।

2. लोग यह भी समझते हैं कि सिर्फ़ इस तरह पढ़कर बख़्श देने से सवाब पहुंच जाता है, खाना ख़ैरात करने की ज़रूरत नहीं। चुनांचे अल्लाह के रसूल सल्ल० या और किसी बुज़ुर्ग का फ़ातिहा दिलाकर खुद खा जाते हैं। ग्यारहवीं वग़ैरह की मिठाई अगर बांटी भी जाती है, तो किसको, फ़लाने नवाब साहब, तहसीलदार साहब, पेशकार साहब, थानेदार साहब, वग़ैरह यार-दोस्तों को भेजी जाती है। हमने कहीं नहीं देखा, न सुना कि सब मिठाई फ़क़ीरों और मिस्कीनों को ख़ैरात कर दी गयी हो। पस मालूम हुआ कि यही अक़ीदा है कि इस तरह पढ़कर बख़्श देने से इसका सवाब पहुंचेगा,

सो यह अक़ीदा खुद ग़लत और गुनाह है, इसलिए कि खुद वह चीज़ तो पहुंचती ही नहीं, हां, इसका सवाब पहुंचता है, तो जिनको बख़्शा उनको भी नहीं पहुंचा, अल–बत्ता एक दो सूरः जो पढ़ी है, सिर्फ़ उसी का सवाब पहुंचा, सो अगर उन्हीं का सवाब बख़्शना था तो इस मिठाई या खाने का बखेड़ा ना–हक़ किया, ख़ामख़ाह रूपया–दो रूपये का मुफ़्त एहसान रखा। अगर कहो कि नहीं साहब, फ़क़ीरों को भी इसमें से दे देते हैं, तो जवाब यह है कि फ़क़ीरों को दिया, बहुत से बहुत दस को, पांच को दिया, तो इससे क्या होता है, मक़सद तो पूरे रूपये की मिठाई का सवाब बख़्शना था तो रूपए का नाम क्यों किया और जिनको दिया जाता है, उनको ख़ैरात के नाम से हर–गिज़ नहीं दिया जाता, बल्कि तबर्रुक और हदिया (भेंट) समझकर देते हैं, चुनांचे उनको ख़ैरात दी तो हरगिज़ न लें, बल्कि बुरा मानें, इसलिए आजकल के रिवाज के एतबार से यह काम बिल्कुल बेकार और बे–मतलब है।

3. अच्छा हमने माना कि फ़ातिहा के बाद वह खाना मुहताज ही को दे दिया तो हम कहते हैं कि मुहताज को देने और खिलाने से पहले सवाब बख़्शने का क्या मतलब, तुमको तो सवाब उसी वक़्त मिलेगा, जब फ़क़ीर को दे दो या खिला दो। अभी तुम्हीं को सवाब नहीं मिला, तो उस बेचारे मुर्दे को क्या बख़्शा, मतलब यह कि इस काम की कोई बात ठिकाने की नहीं।

4. कुछ का यह भी अक़ीदा है कि खुद वह चीज़ पहुंच जाती है, चुनांचे खाने के साथ पानी कहां पिएंगे, फिर मुंह बद–मज़ा होगा, इसलिए पान की ज़रूरत पड़ेगी। खुदा की पनाह ! जिहालत की भी हद हो गयी। यह भी ख़्याल रखती हैं कि जो चीज़ उसको ज़िंदगी में पसंद थी, उस पर फ़ातिहा हो। छोटे बच्चे की दूध पर फ़ातिहा हो। मुझे ख़ूब याद है कि एक बार शब–बरात की फ़ातिहा पर एक बुढ़िया ने कई फुलझड़ियां रख दी थीं। और कहा था कि उनको आतशबाज़ी का बड़ा शौक़ था। खुद कहो यह अक़ीदे की ख़राबी है या नहीं।

5. यह भी ख़्याल है कि इस वक़्त उसकी रूह आती है। चुनांचे लोबान वग़ैरह खुश्बू सुलगाने का यही मतलब है, भले ही सबका यह ख़्याल न हो।

6. फिर जुमेरात की क़ैद अपनी तबियत से लगा ली। जब शरीअत से सब दिन बराबर हैं तो ख़ास जुमेरात को फ़ातिहा का एक दिन समझना शरई हुक्म को बदलना है या नहीं। फिर एक क़ैद से एक यह भी ख़राबी पैदा हो गयी है कि लोग समझने लगे कि मुर्दों की रूहें जुमेरात को

अपने–अपने घर आती हैं। अगर कुछ सवाब मिल गया तो ख़ैर, वरना ख़ाली हाथ लौट जाती हैं, यह सिर्फ़ ख़्याल है और बे–दलील का। ऐसा अक़ीदा रखना गुनाह है। इसी तरह कोई तारीख़ मुक़र्रर करना और यह समझना कि इसमें ज़्यादा सवाब मिलेगा, सिर्फ़ गुनाह का अक़ीदा है।

7. अक्सर लोगों की आदत है कि बहुत खाने में से थोड़ा–सा खाना किसी थाल में रखकर उसको सामने रखकर फ़ातिहा कराती हैं, इसमें इन ख़राबियों के अलावा एक यह बात पूछनी है कि सिर्फ़ इतने ही खाने का सवाब बख़्शना है या सारे खाने में सिर्फ़ उतने ही खाने का सवाब बख़्शना तो यक़ीनी तौर पर मंज़ूर नहीं, पस ज़रूर यही कहोगी कि सबका सवाब पहुंचाना मंज़ूर है। पस हम कहते हैं कि फिर सिर्फ़ इतने पर क्यों फ़ातिहा दिलाया। इससे तो तुम्हारे क़ायदे के मुताबिक़ सिर्फ़ उस थाल का सवाब पहुंचना चाहिए, बाक़ी तमाम खाना बर्बाद हो गया और बेकार रहा। अगर यों कहो कि उसका सामने रखना ज़रूरी नहीं, सिर्फ़ क़ीमत काफ़ी है तो फिर उस थाल के रखने की क्या ज़रूरत हुई। इसमें भी क़ीमत काफ़ी थी, वह तौबा–तौबा, हक़ तआला को नमूना दिखलाना है कि देखिए इस क़िस्म का खाना देग में है, उसका सवाब बख़्श दीजिए, नऊज़ुबिल्लाह०

8. फिर अगर सवाब पहुंचाने के लिए उसका सामने रखकर पढ़ना ज़रूरी है, तो अगर रूपया–पैसा या कपड़ा–ग़ल्ला वग़ैरह सवाब के लिए दिया जाए, उस पर फ़ातिहा क्यों नहीं पढ़ती हो ? और अगर यह ज़रूरी नहीं तो खाने और मिठाई में क्यों ऐसा करती हो और ज़रूरी समझती हो ?

9. फिर हम पूछते हैं कि ज़मीन लीपने की क्या ज़रूरत पड़ी। वह नजिस थी या पाक। अगर नापाक थी तो लीपने से पाक नहीं हुई, बल्कि वह और ज़्यादा नजिस हो गई कि पहले तो ख़ुश्क होने की वजह से प्याले वग़ैरह में लगने का शुबहा न था, अब वे बर्तन भी नजिस हो जाएंगे और अगर पाक थी तो लीपना तो सिर्फ़ बेकार का काम है।

10. बुज़ुर्गों की फ़ातिहा में सारी चीज़ें अछूती हों, कोरे घड़े, कोरे बर्तन निकाले जाएं, इनमें पानी कुएं से भरकर आये, घर का पानी न लगने पाये और उसको कोई न छुए, न हाथ डाले, न उसमें से कोई पिए, न जूठा करे, सेनी ख़ूब धोकर शकर आये। ग़रज़ घर की सब चीज़ें नजिस हैं। यह अजीब अक़्ल के ख़िलाफ़ बात है। अगर सचमुच नजिस है तो उनको अपने इस्तेमाल में क्यों लाती हो, वरना इस सारे पाखंड की क्या ज़रूरत ? शरअी हुक्म सिर्फ़ इतना है कि जिस चीज़ का खाना ख़ुद को जायज़, उसे फ़क़ीर को

देना भी जायज़ और जब फ़क़ीर को दे दिया तो अब सवाब बख़्श देना जायज़। फिर ये सारी बातें बेकार और अक़्ल के ख़िलाफ़ हुईं या नहीं। अगर कहो कि साहब, वह बड़ी दरगाह है, बुज़ुर्ग लोग हैं, उनके पास चीज़ एहतियात से भेजनी चाहिए, तो जवाब यह है कि एक तो अल्लाह तआला के यहां इस ज़ाहिरी एहतियात और पानी की कोई क़ीमत नहीं। उसके नज़दीक हलाल और तैयब (पाक) होने की क़ीमत है। अगर माल हराम हो गया तो हज़ार एहतियात करो, सब अकारत गया और अगर हलाल–तैयब है, तो यह सब बेकार है। वह यों ही मामूली तौर पर दे–देने से भी कुबूल करता है। दूसरे यह कि जब खुद उनकी दरगाह में भेजने का अक़ीदा हुआ तो यह हराम और शिर्क होगा, क्योंकि उस खाने को अल्लाह की राह में देना मक़्सूद है, न खुद उसके पास भेजना और उनकी राह में देना। अगर ऐसा अक़ीदा हो तो वह खाना भी हराम हो जाएगा। पस जब अल्लाह तआला की राह में देकर सवाब बख़्शाना मंज़ूर हो तो जैसे और चीज़ें खुदा की राह में देती हो और उसमें बेकार की रस्में नहीं करती हो, जैसे फ़क़ीर को पैसा दिया, उसको धोती नहीं, अनाज वग़ैरह दिया, घर के पके हुए खाने में से रोटी वग़ैरह दे दी हो, इसी तरह यह भी मामूली तौर से पकाकर दे दो, क्योंकि यह भी बड़ी दरगाह यानी अल्लाह तआला के यहां जाता है। वह भी वहीं जाता है, तो फिर दोनों में अंतर कैसा ? फिर सोचो तो इसमें एक हिसाब से बुज़ुर्गों को अल्लाह तआला पर बढ़ा देना है और यह दिल का चोर अलग रहा कि वह बुज़ुर्गों की दरगाह में जाता है और यह अल्लाह की दरगाह में, यह खुला हुआ शिर्क है।

11. इससे बुरा यह दस्तूर है कि हर एक का फ़ातिहा अलग–अलग करके दिलाया जाता है। यह अल्लाह मियां का, यह मुहम्मद सल्ल० का, यह हज़रत बीबी का। इसका तो साफ़ यही मतलब है कि सिर्फ़ इतना अल्लाह मियां को देती है और इतना–इतना उन लोगों को, तो भला इसके शिर्क होने में किसको शक हो सकता है (अल्लाह तौबा, अल्लाह तौबा !) इसका शिर्क और बुरा होना कलाम मजीद में साफ़–साफ़ ज़िक्र हुआ है, इससे तौबा करनी चाहिए। बस सारी चीज़ खुदा की राह में दे दो, फिर जितनों को सवाब बख़्शना हो, बख़्श दो।

फिर एक लुत्फ़ और है कि मामूली मुर्दों का फ़ातिहा तो सबका एक ही में करा देती हैं, बुज़ुर्गों और बड़े लोगों का अलग–अलग कराती हैं, जिसका मतलब यह हुआ कि वे तो बेचारे ग़रीब, मिस्कीन, कमज़ोर हैं, इसलिए एक

में हो जाए, तब भी कोई हरज नहीं और ये बड़े लोग हैं, साझे में होगा तो लड़ मरेंगे, छीना झपटी करने लगेंगे—लाहौल व ला कूवत इल्ला बिल्लाहि०

12. हज़रत बीबी के फ़ातिहा में यह भी क़ैद है कि खाना बन्द कर दिया जाए, खुला न रहे, क्योंकि वह पर्दादार थीं, तो उनके खाने का भी ग़ैर–महरम से सामना न हो, इसका बेकार होना खुद ज़ाहिर है।

13. हज़रत बीबी की फ़ातिहा और सहनक के खाने में एक यह भी क़ैद है कि मर्द नहीं खा सकते। भला वह खायेंगे तो सामना न हो जाएगा और हर औरत भी न खाये। कोई पाक–साफ़ नेक बख़्त औरत खाये और न वह खाये जिसने अपना दूसरा निकाह कर लिया हो, यह भी बहुत बुरा और गुनाह है। क़ुरआन मजीद में इसकी भी बुराई मौजूद है।

14. बुजुर्गों और औलियाउल्लाह की फ़ातिहा में एक और ख़राबी है, वह यह कि लोग उनको 'ज़रूरत पूरी करने वाला' और 'मुश्किल दूर करने वाला' समझ कर इस नीयत से फ़ातिहा व नियाज़ दिलाते हैं कि उनसे हमारे काम निकलेंगे, ज़रूरतें पूरी होंगी, औलाद होगी, माल और रोज़ी बढ़ेगी, औलाद की उम्र बढ़ेगी। हर मुसलमान जानता है कि इस तरह का अक़ीदा साफ़ शिर्क है। ख़ुदा बचाये। ग़रज़ इन रस्मों और आदतों को बिल्कुल छोड़ना चाहिए। अगर किसी को सवाब बख़शना मंज़ूर हो, तो जिस तरह शरीअत की तालिम है, उस तरह सीधे–सादे तौर पर बख़्श देना चाहिए, जैसा हमने ऊपर बयान किया है और इन सब बेकार की रस्मों को छोड़ देना चाहिए, बस, बिना पाबंदी रिवाज, जो कुछ तौफ़ीक़ मयस्सर हो, पहले मुहताज को दे दो, फिर उसका सवाब बख़्श दो। हमारे इस बयान से ग्यारहवीं, सहमुनी, तौशा वग़ैरह सबका हुक्म निकल आया और समझ में आ गया होगा। कुछ लोग क़ब्रों को चढ़ावा चढ़ाते हैं, तो यह बिल्कुल हराम है और इस चढ़ावे का खाना भी दुरुस्त नहीं। न खुद खाओ, न किसी को दो, क्योंकि इसका खाना भी दुरुस्त नहीं, देना भी दुरुस्त नहीं।

15. कुछ आदमी मज़ारों पर चादरें और ग़िलाफ़ भेजते हैं और उसकी मन्नत मानते हैं, चादर चढ़ाना मना है और जिस अक़ीदे से लोग ऐसा करते हैं, वह शिर्क है और दूसरे ख़ैरात–सद्क़ा में भी जाहिलों ने बहुत से बे–शरम रिवाज निकाल रखे हैं। चुनांचे एक रिवाज अक्सर जाहिलों में यह है कि किसी बीमारी का उतार समझकर चीलों वग़ैरह को मांस देती हैं। चूंकि अक्सर यह अक़ीदा होता है कि बीमारी इसी मांस से लिपटकर चली गयी और इसीलिए वह मांस आदमी के खाने के क़ाबिल नहीं समझते। ऐसे अक़ीदे

की शरअ में कोई सनद नहीं, इसलिए यह भी बिल्कुल शरअ के ख़िलाफ़ है। एक रिवाज यह है कि जानवर बाज़ार से मोल मंगवाकर छोड़ती हैं और यह समझती हैं कि हमने अल्लाह के वास्ते एक जान को आज़ाद किया है, अल्लाह मियां हमारी बीमार की जान को मुसीबत से आज़ाद कर देंगे। सो यह अक़ीदा रखना कि जान का बदला जान होता है, शरीअत की इसकी भी कोई सनद नहीं। ऐसी बे-सनद बात का एतक़ाद करना खुद गुनाह है।

एक रिवाज इससे बढ़कर गज़ब का है कि कोई चीज़ खाने-पीने की चौराहे पर रखवा देते हैं यह बिल्कुल काफ़िरों की रस्म है। बर्ताव में काफ़िरों का तरीक़ा वैसे भी मना है और जो उसके साथ अक़ीदा भी ख़राब हो, तो उसमें शिर्क और कुफ़्र का भी डर है। इस काम के करने वाले यही समझते हैं कि इस पर किसी जिन्न या भूत या पीर या शहीद का दबाव या सताव हो गया है, उनके नाम भेंट देने से वे खुश हो जाएंगे और वह बीमारी या मुसीबत जाती रहेगी, सो यह बिल्कुल मख़्लूक़ की पूजा है, जिसका शिर्क होना साफ़ ज़ाहिर है और इसमें जो राज़ी की बे-अदबी और रास्ता चलने वालों को तक्लीफ़ होती है, उसका गुनाह अलग रहा।

एक रिवाज यह गढ़ रखा है कि कुछ मौक़ों में सद्क़े के लिए कुछ चीज़ों को ख़ासकर रखा है जैसे माश और तेल और वह भी ख़ास भंगी को दिया जाता है। एक तो ऐसे ख़ास करन की शरीअत में कोई सनद नहीं और बे-सनद खाने को ख़ास करना गुनाह है। फिर मुहताज को छोड़कर भंगी को देना यह भी शरअ का मुक़ाबला है, क्योंकि शरअ में मुसलमान का हक़ ज़्यादा और तर्जीह के क़ाबिल है। फिर इसमें यह अक़ीदा भी होता है कि इस सद्क़े में बीमारी लपटी हुई है, इसलिए गंदे नापाक लोगों को देना चाहिए कि वे सब अला-बला खा जाएं। सो यह अक़ीदा भी बे-सनद है और ऐसी बे-सनद बात का एतक़ाद करना खुद गुनाह है। इस सद्क़े-ख़ैरात के इन तरीक़ों को छोड़कर सीधा तरीक़ा अपनाना चाहिए कि जो कुछ अल्लाह तआला ने दिया, चाहे कोई चीज़ हो, चुपके से किसी मुहताज को यह समझकर दे दिया कि अल्लाह तआला इससे खुश होंगे और उसकी बरक़त से बला और मुसीबत को दफ़ा कर देंगे। इससे ज़्यादा सब बेकार, पाखंड, बल्कि गुनाह है।

एक रिवाज यह निकाल रखा है कि गुलगुले वग़ैरह पकाकर औरतें मस्जिद में ले जाकर ख़ास मेहराब या मेंबर पर रखती हैं और कहीं-कहीं तो बाजा भी साथ होता है। बाजे का होना तो ज़ाहिर है, जैसा कुछ बुरा है,

बाक़ी और क़ैदें भी बेकार हैं। बल्कि खुद औरतों का मस्जिद में जाना ही मना है। जब नमाज़ के वास्ते औरतों को मस्जिद में जाने से मना किया है, तो यह काम उसके सामने कुछ भी नहीं है। कुछ तो उनमें जवान होती हैं, कुछ ज़ेवर पहने होती हैं, कुछ चिराग़ हाथ में लिए होती हैं कि हमारा मुंह भी देख लो। इसी तरह कुछ औरतें मन्नत मानने को या दुआ करने को या सलाम करने को मस्जिद में जाती हैं। ये सब बातें शरअ के ख़िलाफ़ हैं, सबसे तौबा करनी चाहिए। जो कुछ देना–दिलाना हो, या दुआ करना हो, अपने घर में बैठकर करो।

उन रस्मों का बयान, जो किसी के मरने में बरती जाती हैं

1. पहले, यह कि गुस्ल और कफ़न के सामान में बड़ी देर करती हैं। किसी तरह दिल ही नहीं चाहता कि मुर्दा घर से निकले। पैग़म्बर सल्ल० ने बड़ी ताकीद फ़रमायी है कि जनाज़े में हरगिज़ देर मत करो।

2. दूसरे, जनाज़े के साथ कुछ अनाज या पैसे वग़ैरह भेजते हैं कि क़ब्र पर ख़ैरात कर दिया जाए। इसमें नीयत ज़्यादा नाम करने की होती है, जिसमें कुछ भी सवाब नहीं मिलता, फिर यह होता है कि ग़रीब–मुहताज रह जाते हैं और जिनका पेशा यही है, वह घर ले जाते हैं, सवाब के लिए जो कुछ देना हो, सबसे छिपाकर ऐसे लोगों को दो जो बहुत मुहताज या अपाहिज या आबरूदार ग़रीब या दीनदार, नेकबख़्त हों।

3. तीसरे, अक्सर आदत यह है कि मरने के बाद मुर्दे के कपड़े, जोड़े या क़ुरआन शरीफ़ वग़ैरह निकालकर अल्लाह वास्ते दे देती हैं। ख़ूब समझ लो कि जब कोई मर जाता है, शरअ में जितने आदमियों को उसकी मीरास का हिस्सा पहुंचता है, वह सब आदमी उस मुर्दे की हर छोटी–बड़ी चीज़ के मालिक हो जाते हैं और वे सब चीज़ें उन सबके साझे की हो जाती हैं। फिर एक या दो आदमी के लिए सब सही होगा कि साझे कि चीज़ किसी को दे दें। और अगर सब साझी इजाज़त भी दे दें, लेकिन कोई उनमें नाबालिग़ हो, तब भी ऐसी चीज़ का देना दुरूस्त नहीं और इस इजाज़त का एतबार नहीं। इसी तरह सब साझी बालिग़ हों, लेकिन शर्मा–शर्मी में इजाज़त दे दें, तब

भी ऐसी चीज़ का देना ठीक नहीं, इसलिए जहां मौक़ा हो तो, पहले तो वे सब चीज़ें किसी आलिम से हर एक का हिस्सा पूछ कर शरअ के मुताबिक़ आपस में बांट लें। फिर हर आदमी को अपने हिस्से का अख़्तियार है, तो चाहे करे जिस को चाहे दे। हां अगर सब वारिस बालिग़ हों और सब खुशी से इजाज़त दे दें, तो बांटे बग़ैर भी ख़र्च करना दुरूस्त होगा।

4. चौथे, कुछम मुक़र्रर तारीख़ों पर या उनसे ज़रा आगे-पीछे, कुछ खाना वग़ैरह पका कर बिरादरी में बांटा जाता है और कुछ ग़रीबों को खिला दिया जाता है, उसको तीजा, दसवां, बीसवा, चालीसवां कहते हैं। उसमें एक तो नीयत ठीक नहीं होती। नाम के वास्ते यह सब सामान किया जाता है। जब यह नीयत हुई तो सवाब क्या होता और उलटा गुनाह और वबाल है। कहीं तो क़र्ज़ लेकर ये रस्में पूरी की जाती हैं और सब जानते हैं कि ऐसे ग़ैर-ज़रूरी काम के लिए क़र्ज़दार बनना खुद बुरी बात है और इतनी पाबंदी करना कि शरअ के हुक्मों से भी ज़्यादा हो जाए, यह भी गुनाह है और अक्सर ये रस्में मुर्दे के माल से अदा होती हैं, जिसमें यतीमों का भी साझा होता है। यतीमों का माल सवाब कमाने के कामों में भी ख़र्च करना दुरूस्त नहीं, तो गुनाह के कामों में तो और ज़्यादा बुरा होगा। हां, अपने माल में से जो कुछ तौफ़ीक़ हो, ग़रीबों को छिपा करके दे दो, ऐसी ख़ैरात खुदा के यहां कुबूल होती है, कुछ लोग ख़ास कर मीठे चावल मस्जिदों में भेजते हैं। कुछ तेल ज़रूर भेजते हैं, कुछ मरने के बाद दूध भेजते हैं कि वह बच्चा दूध पिया करता था। इन क़ैदों की कोई सनद शरअ में नहीं है। अपनी तरफ़ से नये तरीक़े निकालना बड़ा गुनाह है। ऐसे गुनाह को शरअ में बिद्अत कहते हैं। और पैग़म्बर सल्ल० ने फ़रमाया है कि बिद्अत गुमराही की चीज़ है और दोज़ख़ में ले जाने वाली है।

कुछ यह भी समझती है कि इन तारीख़ों में और जुमेरात के दिन और शब-बरात के दिनों में मुर्दे की रूहें घरों में आती हैं। इस बात की शरअ में कुछ असल नहीं और उनको आने की ज़रूरत ही क्या है, क्योंकि जो कुछ सवाब मुर्दे को पहुंचाया जाता है, वह खुद उसके ठिकाने पर पहुंच जाता है, फिर उसको क्या ज़रूरत है कि मारा-मारा फिरे। फिर यह भी है कि अगर मुर्दा नेक और बहिश्ती है, तो एसी बाहर की जगह छोड़कर क्यों आने लगा और अगर बद और दोज़ख़ी है तो उसको फ़रिश्ते क्यों छोड़ देंगे कि अज़ाब से छट कर सैर करता फिरे। ग़रज़ यह बात बिल्कुल बे-जोड़ मालूम होती है, अगर किसी ऐसी-वैसी किताब में लिखा हुआ देखो, तब भी ऐसा एतक़ाद

मत रखना। जिस किताब को आलिम सनद न रखें, वह भरोसे की नहीं है।

5. पांचवें, मय्यत के घर में औरतें कई बार इकट्ठी होती हैं और यह समझती हैं कि हम उसके दर्द–शरीक हैं, लेकिन वहां पहुंचकर कुछ तो पान छलिया खाने के काम में लग जाती हैं। अगर पान–छालियां में ज़रा देर या कमी हो जाए तो सारी उम्र गाती फिरें कि फ़लाने घर पान का टुकड़ा नसीब नहीं हुआ। कुछ वहां खाना भी खाती हैं, चाहे अपना घर कितनी ही नज़दीक हो, लेकिन ख़ामख़ाह मय्यत के घर जाकर पड़ी रहती हैं। भला बताओ, 'ये औरतें दर्द–शरीक होने आयी हैं या ख़ुद औरों पर अपना दर्द डालने आयीं हैं। ऐसी बेहूदा औरतों की वजह से घरवालों को इस क़दर तक्लीफ़ और परेशानी होती है, जिसकी कोई हद नहीं। एक तो उस पर मुसीबत आयी है, दूसरे यह उससे बढ़कर आ पड़ी। वही कहावत हो गयी, सर पीटना, घर लुटना। कुछ उनमें मुर्दे का नाम तक भी नहीं लेतीं, बल्कि दो–दो, चार–चार जमा होकर बैठती हैं और दुनियां व जहान के क़िस्से वहां बयान किये जाते हैं, बल्कि हंसती हैं, ख़ुश होती हैं, कपड़े ऐसे भड़कदार पहनकर आती हैं, जैसे किसी शादी में शरीक होने चली हैं। भला इन बेहूदियों के आने से कौन–सा फ़ायदा दीन या दुनिया का हुआ। कुछ जो सच–मुच भला चाहने वाली होती हैं, कुछ दर्द में भी शरीक होती हैं मगर जो असल तरीक़ा दर्द में शरीक होने का है कि आकर मर्दे वालों को तसल्ली दें, सब्र दिलाएं, उनके दिलों को थामें, इस तरीक़े से कोई शरीक नहीं होती, बल्कि और ऊपर से गले लग–लगकर रोना शुरू कर देती हैं। कुछ तो यों ही झूठ–मूठ मुंह बनाती हैं। आंखों में आंसू तक नहीं होता और कुछ अपने गड़े मुर्दों को याद करके ख़ामख़ाह का एहसान घरवालों पर रखती हैं। और जो सच्चे दिल से रोती भी हैं, वह भी कहां की अच्छी हैं, क्योंकि पहले तो, अक्सर बयान करके रोती हैं, जिसके लिए पैग़म्बर सल्ल० ने बहुत सख़्ती से मना किया है, बल्कि लानत की है। और दूसरे, इनके रोने से घरवालों का और दिल भर आता है और घाव पर नमक छिड़क जाता है। ज़्यादा बेताब होकर बिगड़–बिगड़कर रोती हैं और थोड़ा बहुत जो सब्र आ चला था वह भी जाता रहता है, तो इन औरतों ने बजाए सब्र दिलाने के और उल्टी बे–सब्री बढ़ा दी। फिर उनके आने का क्या फ़ायदा हुआ। सच बात यह है कि वे ग़म वालों का ग़म मिटाने नहीं आतीं, बल्कि अपने आपसे इल्ज़ाम उतारने को जमा होती हैं। भला जब औरतों के जमा होने में इतनी ख़राबियां हों, तो ऐसा जमा होना कब दुरूस्त होगा। इनमें कुछ दूर की आयी हुई

मेहमान होती हैं, बहलियों में चढ़–चढ़कर आती हैं और कई–कई रोज़ तक रहती हैं और घास–दाना बैलों का और अपनी आव–भगत का सारा बोझ घरवालों पर डालती हैं, चाहे मुर्दे वाले पर कैसी ही मुसीबत हो, चाहे उनके घर खाने को भी न हो, लेकिन उनके लिए सारे तकल्लुफ़ करना ज़रूर, हालांकि हदीस में है कि मेहमान को चाहिए कि घरवालों को तंग न करे। इससे ज़्यादा और तंग करना क्या होगा। फिर कुछ के साथ बच्चों की धाड़ होती है और वे चार–चार वक़्त आठ–आठ वक़्त खाने को कहते हैं। कोई घी–शकर की फ़रमाइश कर रहा हैं, कोई दूध के वास्ते मचल रहा है और उन सबका बन्दोबस्त घरवालों को करना पड़ता है और मुद्दतों तक यही सिलसिला जारी रहता है, ख़ासकर औरत अगर बेवा हो जाए तो एक चढ़ाई तो ताज़ा मौत के ज़माने हुई थी, दूसरी वैसी ही चढ़ाई इद्दत पर होती है, जिसका नाम छः माही रखा है और यों कहा जाता है कि इद्दत से निकालने के लिए आयी हैं। इनसे कोई पूछे कि इद्दत कोई कोठरी है, जिसमें से बेवा को हाथ–पांव पकड़ कर निकालेंगी। जब चार माह दस दिन गुज़र गये, इद्दत से निकल गयी और अगर उसको हमल था, जब बच्चा पैदा हो गया, इद्दत ख़त्म हो गयी। इस बेकार–सी बात की कौन–सी ज़रूरत है कि सारी दुनिया इकट्ठा हो फिर इसे सारे तूफ़ान का ख़र्च अक्सर ऐसा होता है। कि मुर्दे के माल से किया जाता है, जिसमें सब वारिसों का साझा होता है कुछ तो इनमें से परदेस में होते हैं, उनसे इजाज़त हासिल नहीं की जाती और कुछ ना–बालिग़ होते हैं, इनकी इजाज़त का शरअ में एतबार नहीं। याद रखो कि जिसने ख़र्च किया है, सारा उसी के ज़िम्मे पड़ेगा और सब वारिसों का हक़ पूरा–पूरा देना पड़ेगा। और अगर कोई बहाना लाये कि मेरा हिस्सा इन ख़र्चों के लिए काफ़ी नहीं, इसका जवाब यह है कि सबका हिस्सा भी काफ़ी न हो तो क्या करोगी ? क्या पड़ोसियों की चोरी दुरूस्त हो जाएगी ? ग़रज़ इस तूफ़ान में ख़र्च करने वाले गुनाहगार होते हैं। और यह ख़र्च हुआ इन आने वालियों की बदौलत, इसलिए वे भी गुनाहगार होती हैं। इसलिए यों चाहिए कि जो मर्द व औरत पास के हैं, वे खड़े–खड़े आएं और सब्र व तसल्ली देकर चले जाएं, फिर दोबारा आने की ज़रूरत नहीं।

इसी तरह तारीख़ मुक़र्रर करना भी बेकार बात है, जिसका जब मौक़ा हुआ, आ गया और जो दूर के हैं, अगर यह समझें कि हमारे गये बग़ैर मुसीबतज़दों की तसल्ली न होगी, तो आने का कुछ डर नहीं, लेकिन गाड़ी वग़ैरह का ख़र्च अपने पास से करना चाहिए और अगर सिर्फ़ इल्ज़ाम उतारने

को आयी हैं तो हरगिज़ न आयें, ख़त से मातमपुर्सी कर लें।

6. छठे, रस्म है कि मय्यत वालों के लिए, एक तो उनके नज़दीक के रिश्तेदार के घर से खाना आता है, यह बात बहुत अच्छी है, लेकिन इसमें भी लोगों ने कुछ ख़राबियां कर दी हैं, उनसे बचना वाजिब है। एक तो उसमें अदले-बदले का ख़्याल होने लगा है, कि फ़लाने ने हमारे यहां भेजा था, हम उनके घर भेजें। फिर इसका इतना ख़्याल है कि अपने पास गुंजाइश न हो और कोई दूसरा आदमी ख़ुशी से चाहे कि मैं भेज दूं। मगर यह आदमी बेढब ज़िद करेगा कि नहीं, हमारे ही यहां से जाएगा और इसकी वजह सिर्फ़ यही है कि हम न भेजेंगे, तो हम पर तान होगा, खा तो लिया, लेकिन बदला न दिया गया और ऐसी पाबन्दी, एक तो खुद मना है, फिर उसके लिए कभी क़र्ज़ लेना पड़ता है, इसलिए इस पाबंदी को छोड़ दें। जिस रिश्तेदार के कोई तौफ़ीक़ हुई, भेज दिया। इसी तरह यह पाबंदी भी बुरी है कि नज़दीक के रिश्तेदार रहते हुए दूर का रिश्तेदार क्यों भेजे। इसके लिए मरते-मारते हैं, इसकी वजह भी वही बदनामी मिटाना है, तो इस पाबन्दी को छोड़ दें। एक ख़राबी इसमें यह कर ली है कि ज़रूरत से बहुत ज़्यादा खाना भेजा जाता है और मय्यत के घर दूर-दूर के इलाक़ेदार खाने के वास्ते जमकर बैठ जाते हैं। यह खाना सिर्फ़ उन लोगों को खाना चाहिए, तो ग़म और मुसीबत के ग़लबे में अपना चूल्हा नहीं झोंक सकते और जिनके घर सबने खाना पकाया है, वह इस खाने से क्यों खाती हैं, अपने घर जाकर खायें या अपने घर से मंगा लें। एक ख़राबी यह भी तो है कि कुछ इस खाने में भी तकल्लुफ़ का सामान करती हैं, यह भी छोड़ देना चाहिए। जो वक़्त पर आसानी से हो गया, मुख़्तसर-सा तैयार करके मय्यत वालों के लिए भेज दिया।

7. सातवें, कुछ औरतें एक या दो हाफ़िज़ों को कुछ देकर क़ुरआन मजीद पढ़वाती हैं कि मुर्दों को सवाब बख़्शा जाए। कहीं-कहीं तो दूसरे दिन चनों पर कलमा और सीपारों में क़ुरआन मजीद पढ़वाया जाता है। चूंकि ऐसे लोग रुपया-पैसा या चने और खाने के लालच से क़ुरआन मजीद पढ़ते हैं उनको खुद ही कुछ सवाब नहीं मिलता। जब उन्हीं को कुछ नहीं मिला, तो मुर्दों को क्या बख़्शेंगे। वह सब पढ़ा-पढ़ाया और दिया-दिलाया बेकार और अकारत जाता है। कुछ आदमी लालच से नहीं पढ़ते, लेकिन लिहाज़ और बदला उतारने को पढ़ते हैं, यह भी दुनिया की नीयत हुई, इसका सवाब भी नहीं मिलता। हां, जो आदमी सिर्फ़ खुद के वास्ते, लालच और लिहाज़ के

बग़ैर पढ़ दे, न जगह ठहराये, न तारीख़ ठहराये, उसका सवाब बेशक पहुंचता है।

रमज़ान शरीफ़ की कुछ रस्मों का बयान

एक यह कि कुछ औरतें रमज़ीन शरीफ़ में हाफ़िज़ को घर के अंदर बुलाकर तरावीह में कुरआन मजीद सुना करती हैं। अगर यह हाफ़िज़ कोई अपना महरम मर्द हो और घर ही घर की औरतें सुन लिया करें और यह हाफ़िज़ नमाज़ मस्जिद में पढ़कर सिर्फ़ तरावीह के वास्ते घर में आ जाया करे, तो कुछ डर नहीं, लेकिन आजकल इसमें बहुत से असावधानियां होती हैं---

1. एक यह कि कुछ जगहों पर ना-महरम हाफ़िज़ घर में बुलाया जाता है, अगर्चे नाम के लिए कपड़ों का पर्दा होता है, लेकिन औरतें चूंकि बे-एहतियात ज़्यादा होती हैं, इसलिए अक्सर ऐसा होता है कि या तो हाफ़िज़ जी से बातें शुरू कर देती हैं या आपस में ख़ूब पुकार-पुकार कर बोलती हैं और हाफ़िज़ जी सुनते हैं ! भला बिना मजबूरी के अपनी आवाज़ ना महरम को सुनाना कब दुरूस्त है।

2. दूसरे जो आदमी कुरआन मजीद सुनाता है, जहां तक हो सकता है, ख़ूब आवाज़ बनाकर पढ़ता है। कुछ लोगों की आवाज़ ऐसी अच्छी होती है कि ज़रूर सुनने वाले का दिल उसकी तरफ़ हो जाता है, तो इस शक्ल में ना महरम मर्दों की आवाज़ औरतों के कान में पहुंचना कितनी बुरी बात है।

3. तीसरे, मुहल्ला भर की औरतें रोज़ के रोज़ इकट्ठा होती है। एक तो औरतों को मजबूरी के बग़ैर घर से बाहर पांव निकालना मना है और यह कोई मजबूरी नहीं क्योंकि उनको शरअ में कोई ताकीद नहीं आयी कि तरावीह जमाअत से पढ़ा करो, फिर निकलना भी रोज़-रोज़ का और ज़्यादा बुरा है। फिर लौटने का वक़्त ऐसा बे-मौक़ा होता है कि रात ज़्यादा हो जाती है, गलियां, कूचे, बिल्कुल ख़ाली-सुनसान हो जाते हैं। ऐसी हालत में ख़ुदा न करे, अगर माल या आबरू का नुक़्सान हो जाए, तो ताज्जुब नहीं। ख़ामख़ाह अपने आपको परेशानी में डालना अक़्ल के ख़िलाफ़ है और शरअ के भी ख़िलाफ़ है। ख़ासकर कुछ औरतें तो कड़े-छड़े पहनकर गलियों में चलती हैं तो और भी ज़्यादा ख़राबी का डर है।

एक रस्म रमज़ान शरीफ़ में यह है कि चौदहवें रोज़े को ख़ास सामान

खाने वग़ैरह का किया जाता है और उसको सवाब की बात समझती हैं। शरअ में जिस बात को सवाब न कहा हो, उसको सवाब समझना खुद गुनाह है। इसलिए उसको भी छोड़ना चाहिए।

एक रस्म यह है कि बच्चा जब पहला रोज़ा रखता है तो चाहे कोई कैसा ही ग़रीब हो, लेकिन क़र्ज़ करके भीख़ मांगकर रोज़ा कुशाई का बखेड़ा ज़रूर होगा। जो बात शरअ में ज़रूर न हो, उसको ज़रूरी समझना भी गुनाह है, इसलिए इसको ज़रूरी समझना भी गुनाह है और ऐसी पाबंदी छोड़ देनी चाहिए।

ईद की रस्मों का बयान

एक तो सिवइयां पकाने को ज़रूरी समझती हैं। शरअ से यह ज़रूरी बात नहीं। अगर दिल चाहे, पका लो, मगर इसमें सवाब मत समझो।

दूसरे रिश्तेदारों के बच्चों को देना–लेना या रिश्तेदारों के घर खाना भेजना, फिर उसमें अदला–बदला रखना और न हो तो क़र्ज़ लेकर करना, यह पाबंदी बेकार भी है और तक्लीफ़ भी होता है। इसलिए ये सब क़ैदें छोड़ दें।

बक़रीद की रस्मों का बयान

देना–लेना यहा भी ईद का सा है, जैसा इसका हुक्म अभी पढ़ा हैं, वही इसका भी हैं

दूसरे इसमें बहुत से आदमियों पर क़ुर्बानी वाजिब होती है और क़ुर्बानी नहीं करते, यह भी गुनाह है।

तीसरे क़ुर्बानी में अपनी तरफ़ से यह बात गढ़ रखी है कि सिरी सक़्क़े का हक़ है और पाए नाई का हक़ हैं। यह भी बेकार की बात और शरअ के ख़िलाफ़ पाबन्दी है, हां, अपनी ख़ुशी से जिसको चाहो, दे दो।

ज़ीक़ादा और सफ़र की रस्म का बयान

जाहिल औरतें ज़ीक़ादा को ख़ाली का चांद कहती हैं और इसमें शादी करने को मनहूस समझती हैं। यह एतक़ाद भी गुनाह है, तौबा करनी चाहिए।

और सफ़र को तेरह तेज़ी कहती हैं और इस महीने को ना–मुबारक जानती हैं और कहीं–कहीं तो तेरहवीं तारीख़ को कुछ घुघुनियां वग़ैरह पकाकर बांटती हैं कि इसकी नहूसत से हिफ़ाज़त रहे। ये सारे अक़ीदे शरअ के ख़िलाफ़ और गुनाह हैं, तौबा करे।

रबीउल अव्वल या किसी और वक़्त में मीलाद शरीफ़ का बयान

कहीं–कहीं औरतों में भी मीलाद शरीफ़ होता है और जिस तरह आजकल हो रहा है, उसमें ये ख़राबियां हैं—

1. अगर औरत पढ़ने वाली है, तो अक्सर उसकी आवाज़ बाहर दरवाज़े में जाती है। ना–महरमों को आवाज़ सुनाना बुरा है, ख़ासकर शेर के पढ़ने की आवाज़ में ज़्यादा ख़राबी का डर है।

2. अगर मर्द पढ़ने वाला है, तो यह ज़ाहिर है कि वह मर्द सब औरतों का महरम न होगा, बहुत–सी औरतों का ना–महरम होगा। अगर उसने शेर–अशआर अच्छी आवाज़ से पढ़े, जैसा आजकल रिवाज है, तो औरतों ने मर्द का गाना सुना, यह भी मना है।

3. रिवायतें और किताबें मीलाद के बयान की अक्सर ग़लत रिवायतों से भरी हुई हैं, उनका पढ़ना और सुनना सब गुनाह है।

4. कुछ तो यों समझती हैं कि पैग़म्बर सल्ल० इस महफ़िल में तशरीफ़ लाते हैं और इसीलिए बीच में पैदाइश के बयान के वक़्त खड़े हो जाते हैं। इस बात पर शरअ में कोई दलील नहीं और जो बात शरअ में साबित न हो, उसका यक़ीन करना गुनाह है। और कुछ यह अक़ीदा

नहीं रखते, लेकिन खड़ा होने को ऐसा ज़रूरी समझते हैं कि जो खड़ा न हो। उसको बुरा-भला कहते हैं और खुद उनसे कहो कि जब शरअ में खड़ा होना ज़रूरी नहीं तो आज मीलाद होगा, इसमें खड़े मत होना, तो कभी उनका दिल गवारा न करे और समझें कि जब खड़े न हुए मीलाद ही नहीं हुआ। जो चीज़ शरअ में ज़रूरी न हो, उसको ज़रूरी समझना, यह भी गुनाह है।

6. मिठाई या खाना बांटने की ऐसी पाबंदी है कि कभी नाग़ा नहीं होता और नाग़ा करने में बदनामी और हज़रत सल्ल० की ना-खुशी समझते हैं। और जो चीज़ शरअ में ज़रूरी नहीं, उसकी पाबंदी करना यह भी बुरा है।

7. उसके सामान में, या पढ़ते-पढ़ते, देर लग गयी या मिठाई बांटने में अक्सर नमाज़ का वक़्त तंग हो जाता है, यह भी गुनाह है।

8. अगर किसी का अक़ीदा भी ख़राब न हो और गुनाह की बातों को उससे निकाल दे, जब भी ज़ाहिरी पाबंदी से जाहिलों को ज़रूर सनद होगी, तो जिस बात से जाहिलों के बिगड़ने का डर हो और वह चीज़ शरअ में ज़रूरी करने की न हो, तो ऐसी बात छोड़ देना चाहिए, इसीलिए रिवाज के मुताबिक़ इस अमल को न करे, बल्कि जब हज़रत सल्ल० के हालात पढ़ने का शौक़ हो तो कोई ढंग की किताब लेकर खुद पढ़ ले या बे-इकट्ठा किए हुए घर के दो-चार आदमी या जो मिलने-मिलाने आ गये हों, उनको भी सुना दे। और अगर हज़रत सल्ल० की रूह को किसी चीज़ का सवाब बख़्शना मंज़ूर हो तो दूसरे वक़्त मिस्कीनों को देकर या खिलाकर बख़्श दे। नेक काम को कोई मना नहीं करता, मगर बेढंगापन बुरा है।

रजब की रस्मों का बयान

इसको आम लोग मरयम रोज़े का चांद कहते हैं और इसकी सत्ताईस तारीख़ में रोज़ा रखने को अच्छा समझते हैं कि एक हज़ार रोज़ों का सवाब मिलता है। शरअ में इसकी कोई असल नहीं। अगर नफ़्ल रोज़ा रखने को दिल चाहे, अख़्तियार है, अल्लाह तआला जितना चाहें, सवाब दे दें, अपनी तरफ़ से हज़ार या लाख मुक़र्रर न समझे। कहीं-कहीं तो इस महीने में तबारक की रोटियां पकती हैं, यह भी गढ़ी हुई बात है। शरअ में इसका कोई हुक्म नहीं। न इस पर कोई सवाब का वायदा है। इसलिए ऐसे काम को

दीन की बात समझना गुनाह है।

शब–बरात का हलवा, मुहर्रम का खिचड़ा और शर्बत

शब–बरात की इतनी असल है कि पंद्रहवीं रात और पंद्रहवां दिन इस महीने का बहुत बुज़ुर्गी और बरकत है। हमारे हज़रत पैग़म्बर सल्ल० ने इस रात को जागने की और इस दिन को रोज़ा रखने की तरफ़ उभारा है और इस रात हमारे पैग़म्बर सल्ल० ने मदीने के क़ब्रस्तान में तश्रीफ़ ले जाकर मुर्दों के लिए बख़्शिश की दुआ मांगी है, तो अगर इस तारीख़ में मुर्दों को कुछ बख़्श दिया करे, चाहे कुरआन शरीफ़ पढ़कर, चाहे खाना खिला कर, चाहे नक़द देकर, चाहे वैसे ही दुआ बख़्शिश की कर दे, तो यह तरीक़ा सुन्नत के मुताबिक़ है। इससे ज़्यादा जितने बखेड़े लोग कर रहे हैं, उसमें हलवे की क़ैद लगा रखी है और इसी तरीक़े से फ़ातिहा दिलाते हैं और ख़ूब पाबंदी से यह काम करते हैं। ये सब बेकार की चीज़ें हैं। इन सब बातों की बुराई ऊपर अभी पढ़ चुकी हो और यह भी सुन चुकी हो कि जो चीज़ शरअ में ज़रूरी न हो, उसको ज़रूरी समझना या हद से ज़्यादा पाबंद हो जाना बुरी बात है।

इसी तरह मुहर्रम की दसवीं की रस्मों को समझ लो। शरअ में सिर्फ़ इतनी अस्ल है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने यों फ़रमाया है कि जो आदमी उस दिन अपने घरवालों पर ख़ूब खाने–पीने की फ़राग़त रखे, साल भर तक उसकी रोज़ी में बरकत होती है और जब इतना खाना घर में पके तो अगर उसमें से अल्लाह तआला के वास्ते भी मुहताजों, ग़रीबों को दे दे, तो क्या डर है। इससे ज़्यादा जो कुछ करते हैं, उसमें उसी तरह की बुराइयां हैं, जैसे, ऊपर सुन चुकी हो।

इससे बढ़कर शर्बत बांटने की रस्म है कि अपने ख़्याल में कर्बला के प्यासे शहीदों को सवाब बख़्शते हैं, तो याद रखो कि शहीदों को शर्बत नहीं पहुंचता, बल्कि सवाब पहुंच सकता है और सवाब में ठंडा शर्बत और गर्म–गर्म खाना सब बराबर है। फिर शर्बत की पाबंदी में सिवा ग़लत अक़ीदे के, कि उनकी प्यास इससे बुझेगी और क्या बात है। ऐसा ग़लत अक़ीदा ख़ुद

गुनाह है।

कुछ जाहिल शब–बरात में आतशबाज़ी और मुहर्रम में ताज़िए का सामान करते हैं। आतिशबाज़ी की बुराई पहले बाब में लिख दी है और ताज़िए की बुराई इससे ज़्यादा क्या होगी कि उसके साथ ऐसे–ऐसे बर्ताव करते हैं कि जो शरअ में बिल्कुल शिर्क और गुनाह है। उस पर चढ़ावा चढ़ाते हैं, उसके सामने सिर झुकाते हैं, उस पर अर्ज़ियां लटकाते हैं, मर्सिए पढ़ते हैं, रोते–चिल्लाते हैं और उसके साथ बाजा बजाते हैं। उसके दफ़न करने की जगह को ज़ियारत की जगह समझते हैं। मर्द–औरत आपस में बे–पर्दा हो जाते हैं, नमाज़ें बर्बाद करते हैं। इन बातों की बुराई कौन नहीं जानता।

कुछ आदमी और बखेड़े नहीं करते, मगर शहादत नामा पढ़ा करते है, तो याद रखो कि अगर इसमें ग़लत रिवायतें हैं, तब तो ज़ाहिर है कि मना है और अगर सही रिवायतें भी हों, जब भी, चूंकि सबकी नीयत यही होती है कि सुनकर रोएगे और शरअ में मुसीबत के अंदर इरादा करके रोना दुरुस्त नहीं। इस वास्ते इस तरह का शहादत नामा पढ़ना भी दुरुस्त नहीं।

इसी तरह मुहर्रम के दिनों में इरादा करके रंग पुड़िया छोड़ देना और सोग और मातम की सूरत बना लेना या अपने बच्चों को ख़ास तौर के कपड़े पहनाना, यह सब बिद्अत और गुनाह की बातें है।

तबर्रुकात की ज़ियारत के वक़्त इकट्ठा होना

कहीं–कहीं जुब्बा शरीफ़ या मू[1]–ए–शरीफ़ पैग़म्बर सल्ल० या किसी और बुज़ुर्ग का मशहूर है। उसकी ज़ियारत के लिए या तो उसी जगह जमा होते हैं या उन लोगों को घरों में बुलाकर ज़ियारत करते हैं और ज़ियारत करने वालों में औरतें भी होती हैं।

एक तो हर जगह इन तबर्रुकात की जगह नहीं और अगर सनद भी हो, तब भी जमा होने में बड़ी ख़राबियां हैं। कुछ ख़राबियां वहां बयान कर दी हैं, जहां शादी में औरतों के जमा होने का ज़िक्र लिखा है। फिर शोर व गुल और बे–पर्दगी, और कहीं–कहीं ज़ियारत वालों का गाना, जिसको सब

1. बाल।

औरतें सुनती हैं, यह सब हर आदमी जानता है कि बुरी बातें है, हां अगर अकेले में ज़ियारत कर ले और ज़ियारत के वक़्त शरअ के ख़िलाफ़ कोई बात न करे, दुरूस्त है और रस्मों का पूरा हाल 'इस्लाहुर्रुसूम' एक किताब है, उसमें लिख दिया है। इस जगह तुमको एक गुर बतलाते हैं, उसको ध्यान में रखोगी, तो सब रस्मों का हाल मालूम हो जाएगा, कभी धोखा न होगा।

वह गुर यह है कि जिस बात को शरअ ने नाजायज़ कहा हो, उसको जायज़ समझना गुनाह है। जिसको जायज़ बतलाया हो, मगर ज़रूर न कहा हो, उसको ज़रूर समझकर पाबंदी करना या नाम कमाने को करना भी गुनाह है। इसी तरह जिस काम को शरअ ने सवाब नहीं बतलाया, उसको सवाब समझना गुनाह है और जिसको सवाब बतलाया और ज़रूर न कहा, उसको ज़रूर समझना गुनाह है और ज़रूर न समझे, मगर दुनिया के लान–तान के डर से उसके छोड़ने को बुरा समझे, यह भी गुनाह है। इसी तरह शरअ की सनद के बग़ैर कोई बात गढ़ना और उसका यक़ीन कर लेना गुनाह है। इसी तरह अल्लाह तआला के सिवा किसी से दुआ मांगना या उनको नफ़ा व नुक़्सान का मालिक समझना, ये सब गुनाह की बातें है। अल्लाह तबारक व तआला सबसे बचाएं।

असली बहिश्ती ज़ेवर का छठा

हिस्सा ख़त्म हुआ।

(भाग-7)

बहिश्ती ज़ेवर

हज़रत मौलाना अशरफ़ अली थानवी (रह०)

विषय सूची

क्या ? कहां ?

आदाब, अख़्लाक़, सवाब और अज़ाब के बयान में इबादतों का संवारना

वुज़ू और पाकी का बयान

अमल 1—वुज़ू अच्छी तरह करो, भले ही किसी वक़्त नफ़्स (मन) को ना–पसंद हो।

अमल 2—ताज़ा वुज़ू का ज़्यादा सवाब है।

अमल 3—पाख़ाना पेशाब के वक़्त क़िब्ले की तरफ़ मुंह न करो, न पीठ करो।

अमल 4—पेशाब की छींटों से बचो। इसमें असावधानी बरतने से क़ब्र का अज़ाब होता है।

अमल 5—किसी सूराख़ में पेशाब मत करो, शायद उसमें से सांप–बिच्छू वग़ैरह निकल आयें।

अमल 6—जहां गुस्ल करना हो, वहां पेशाब मत करो।

अमल 7—पेशाब–पाख़ाना के वक़्त बातें मत करो।

अमल 8—जब सो कर उठो, जब तक हाथ अच्छी तरह न धो

लो, पानी के अन्दर हाथ न डालो।

अमल 9—जो पानी धूप से गर्म हो गया हो, उसको इस्तेमाल न करो, इससे बर्स की बीमारी का डर है, जिसमें बदन पर सफ़ेद–सफ़ेद दाग़ हो जाते हैं।

नमाज़ का बयान

अमल 1—नमाज़ सही वक़्त पर पढ़ो। रुकूअ व सज्दा अच्छी तरह करो। जी लगाकर पढ़ो।

अमल 2—जब बच्चा सात वर्ष का हो जाये, उसको नमाज़ की ताकीद करो। जब दस वर्ष का हो जाए, तो मारकर नमाज़ पढ़ाओ।

अमल 3—ऐसे कपड़े या ऐसी जगह में नमाज़ पढ़ना अच्छा नहीं कि उसकी फूल–पत्ती में ध्यान लग जाये।

अमल 4—नमाज़ी के आगे कोई आड़ होनी चाहिए। अगर कुछ न हो, एक लकड़ी खड़ी कर लो या कोई ऊंची चीज़ रख लो और उस चीज़ को दाएं या बाएं अबरू[1] के सामने रखो।

अमल 5—फ़र्ज़ पढ़कर बेहतर है कि उस जगह से हटकर सुन्नत व नफ़्ल पढ़ो।

अमल 6—नमाज़ में इधर–उधर मत देखो। ऊपर निगाह मत उठाओ। जहां तक हो सके, जम्हाई को रोको।

अमल 7—जब पेशाब या पाख़ाने का दबाव हो, पहले उससे छुट्टी पा लो। फिर नमाज़ पढ़ो।

अमल 8—नफ़्लें और वज़ीफ़ें इतने शुरू करो, जिसका निबाह हो सके।

मौत और मुसीबत का बयान

अमल 1—अगर पुरानी मुसीबत याद आ जाए तो 'इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहिराजिऊन० (إِنَّا لِلّٰهِ وَإِنَّا إِلَيْهِ رَاجِعُوْنَ ۝)

---

1. भवें।

पढ़ लो जैसा सवाब पहले मिला था, वैसा ही फिर मिलेगा।

अमल 2—रंज की कैसी ही हल्की बात हो, उस पर 'इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन०'(إِنَّا لِلّٰهِ وَإِنَّا إِلَيْهِ رَاجِعُونَ) पढ़ लिया करो सवाब मिलेगा।

ज़कात व ख़ैरात का बयान

अमल 1—ज़कात जहां तक हो सके, ऐसे लोगों को दी जाए, जो मांगते नहीं, आबरू थामें घरों में बैठे हैं।

अमल 2—ख़ैरात में थोड़ी चीज़ देने से मत शर्माओ, जो तौफ़ीक़ हो, दे दो।

अमल 3—यों न समझो कि ज़कात देकर और ख़ैरात देना क्या ज़रूरी है। ज़रूरत के मौक़े पर हिम्मत के मुताबिक़ ख़ैर–ख़ैरात करते रहो।

अमल 4—अपने रिश्तेदारों को देने से दोहरा सवाब है। एक ख़ैरात का, दूसरा रिश्तेदार से एहसान करने का।

अमल 5—ग़रीब पड़ोसियों का ख़्याल रखा करो।

अमल 6—शौहर के माल से इतनी ख़ैरात मत करो कि उसको ना–पसन्द हो।

रोज़े का बयान

अमल 1—रोज़े में बेहूदा बातें करना, लड़ना–भिड़ना बहुत बुरी बात है और किसी की ग़ीबत[1] करना तो और भी बड़ा गुनाह है।

अमल 2—नफ़्ली रोज़ा शौहर से इजाज़त लेकर रखो, जबकि वह घर पर मौजूद हो।

अमल 3—जब रमज़ान शरीफ़ के दस दिन रह जाएं, तो ज़रा इबादत ज़्यादा करो।

---

1. पीठ पीछे बुराई को गीबत कहते हैं।

क़ुरआन मजीद की तिलावत का बयान

अमल 1—अगर क़ुरआन मजीद अच्छी तरह न चले, घबरा कर मत छोड़ो, पढ़े जाओ, ऐसे आदमी को दोहरा सवाब मिलता है।

अमल 2—अगर क़ुरआन शरीफ़ पढ़ा हो, उसको भुलाओ मत, बल्कि हमेशा पढ़ती रहो, नहीं तो बड़ा गुनाह होगा।

अमल 3—क़ुरआन शरीफ़ जी लगाकर ख़ुदा से डर कर पढ़ा करो।

दुआ व ज़िक्र का बयान

अमल 1—दुआ मांगने में इन बातों का ख़्याल रखो। ख़ूब शौक़ से दुआ मांगो, गुनाह की चीज़ मत मांगो। अगर काम होने में देर हो जाए, तंग होकर मत छोड़ो। क़ुबूल होने का यक़ीन रखो।

अमल 2—गुस्से में आकर अपने माल व औलाद व जान को मत कोसो, शायद क़ुबूल होने की घड़ी हो।

अमल 3—जहां बैठकर दुनिया की बातें और धंधों में लगो, वहां थोड़ा बहुत अल्लाह व रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का ज़िक्र ज़रूर कर लिया करो, नहीं तो वे सब बातें वबाल हो जाएंगी।

अमल 4—इस्तग़्फ़ार[1] बहुत पढ़ा करो। इससे मुश्किल आसान और रोज़ी में बरकत होती हैं

अमल 5—अगर नफ़्स की शामत से गुनाह हो जाये, तो तौबा में देर मत लगाओ। अगर फिर हो जाए, फिर जल्दी तौबा करो। यों मत सोचो कि जब तौबा छूट जाती है, फिर ऐसी तौबा से क्या फ़ायदा।

अमल 6—कुछ दुआएं ख़ास-ख़ास वक़्त पर पढ़ी जाती हैं। सोते वक़्त यह दुआ पढ़ो—'अल्लाहुम्म बिस्मिक अमूतु व अह्या (اَللّٰهُمَّ بِاسْمِكَ اَمُوْتُ وَاَحْيٰى) जागते वक़्त यह दुआ पढ़ो, 'अल्हम्दु लिल्लाहिल्लाज़ी अह्याना बअ्द मा अमातना व इलैहिन्नुशूर॰' (اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِىْ اَحْيَانَا بَعْدَ مَا اَمَاتَنَا وَاِلَيْهِ النُّشُوْرُ

1. यानी 'अस्तग़्फ़िरुल्लाह'।

اَللّٰهُمَّ بِكَ اَصْبَحْنَا وَبِكَ اَمْسَيْنَا وَبِكَ نَحْيٰى وَبِكَ نَمُوْتُ وَاِلَيْكَ सुबह को यह दुआ पढ़ो, 'अल्लाहुम्म बिक अस्बहना व बिन अम्सैना व बिक नह्या व बिक नमूतु व इलैकन्नुशूर०' (النُّشُوْرُ) शाम को यह दुआ पढ़ो, 'अल्लाहुम्म बिक

اَللّٰهُمَّ بِكَ اَمْسَيْنَا وَبِكَ اَصْبَحْنَا وَبِكَ نَحْيٰى وَبِكَ نَمُوْتُ وَاِلَيْكَ النُّشُوْرُ

अम्सैना व बिक अस्बह् ना व बिक नह् या बिक नमूतु व इलैकन्नुशूर०'

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِيْ

खाना खाकर यह दुआ पढ़ो, 'अल्हम्दु लिल्लाहिल्लज़ी अत्अ़ मना व सक़ाना व ज अ लना मिनल् मुस्लिमीन व कफ़ाना व अताना'

اَطْعَمَنَا وَسَقَانَا وَجَعَلَنَا مِنَ الْمُسْلِمِيْنَ وَكَفَانَا وَاٰوَانَا

सुबह की नमाज़ के बाद और मग़िरब की नमाज़ के बाद यह दुआ पढ़ो, 'अल्लाहुम्म अजिर्नी मिनन्नारि०[1] (اَجِرْنِيْ مِنَ النَّارِ) सात बार पढ़ो और बिस्मिल्लज़ी ला यज़ुर्रू मअस्मिही शैउन फ़िल अर्ज़ि व ला फ़िस्समाइ व हुस्समीउल अलीम० (بِسْمِ الَّذِيْ لَا يَضُرُّ مَعَ اسْمِهٖ شَيْءٌ فِي الْاَرْضِ وَلَا فِي السَّمَآءِ وَهُوَ السَّمِيْعُ الْعَلِيْمُ) तीन बार पढ़ो। सवारी पर बैठकर यह दुआ पढ़ो, 'सुब्हानल्लज़ी सख़्ख़र लना हाज़ा व मा कुन्ना लहू मुक़्रिनीन व इन्ना इला रब्बिना ल मुन्क़लिबून०' (سُبْحَانَ الَّذِيْ سَخَّرَ لَنَا هٰذَا وَمَا كُنَّا لَهٗ مُقْرِنِيْنَ وَاِنَّا اِلٰى رَبِّنَا لَمُنْقَلِبُوْنَ) 'किसी के घर खाना खाओ तो खा कर यह भी पढ़ो, 'अल्लाहुम्म बारिक लहुम फ़ी मा रज़क़्तहुम वग़्फ़िर लहुम वर्हम्हुम०' (اَللّٰهُمَّ بَارِكْ لَهُمْ فِيْمَا رَزَقْتَهُمْ وَاغْفِرْ لَهُمْ وَارْحَمْهُمْ) चांद देखकर यह दुआ पढ़ो, 'अल्लाहुम्म अहिल्लहू अलैना बिल् अम्नि वल् ईमानि वस्सलामति वल् इस्लामि रब्बी व रब्बुकल्लाहु० (اَللّٰهُمَّ اَهِلَّهٗ عَلَيْنَا بِالْاَمْنِ وَالْاِيْمَانِ وَالسَّلَامَةِ وَالْاِسْلَامِ رَبِّيْ وَرَبُّكَ اللّٰهُ) किसी मुसीबत के मारे हुए को देखकर यह दुआ पढ़ो, अल्लाह तआला तुमको इस मुसीबत से बचाये रखेंगे, 'अल्हम्दु लिल्लाहिल्लज़ी आफ़ानी मिम्मब्तलाक बिही व फ़ज़्ज़ लनी अला कसीरमि मिम्मन ख़ ल क़ तफ़्ज़ीला०' (اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِيْ عَافَانِيْ مِمَّا ابْتَلَاكَ بِهٖ وَفَضَّلَنِيْ عَلٰى كَثِيْرٍ مِّمَّنْ خَلَقَ تَفْضِيْلًا) जब कोई तुमसे बिदा होने लगे, उससे इस तरह कहो, अस्तौदिअुल्लाह दीनकुम व अमानत कुम व ख़वातीम अअ़् मालिकुम०

اَسْتَوْدِعُ اللّٰهَ دِيْنَكُمْ وَاَمَانَتَكُمْ وَخَوَاتِيْمَ اَعْمَالِكُمْ

दूल्हा या दुल्हन को निकाह की मुबारकी दो, तो इस तरह कहो,

'बार कल्लाहु लकुमा व बा रक अलैकुमा व जमअ़ बैनकुमा फ़ी ख़ैरिन०

بَارَكَ اللهُ لَكُمَا وَبَارَكَ عَلَيْكُمَا وَجَمَعَ بَيْنَكُمَا فِي خَيْرٍ

जब कोई मुसीबत आये तो यह दुआ पढ़ो—'या हय्यु या क़य्यूमु बिरह्मतिक अस्तग़ीसु० (يَاحَيُّ يَاقَيُّومُ بِرَحْمَتِكَ اَسْتَغِيْثُ)
पांचों नमाज़ों के बाद और सोते वक़्त ये चीज़ें पढ़ा करो, 'अस्तग्फ़िरूल्लाहल्लज़ी लाइलाह, इल्ला हुवल् हय्युल क़य्यूमु व अतूबु इलैहि० (اَسْتَغْفِرُ اللهَ الَّذِى لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ الْحَىُّ الْقَيُّوْمُ وَاَتُوْبُ اِلَيْهِ) तीन बार, 'लाइलाह इल्लल्लाहु वह्दहू ला शरीक लहू लहुल् मुल्कु व लहुल् हम्दु व हुव अला कुल्लि शैइन क़दीर०' (لَآ اِلٰهَ اِلَّا اللهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ لَهُ الْمُلْكُ وَلَهُ الْحَمْدُ وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَىْءٍ قَدِيْرٌ)
एक बार 'सुब्हानल्लाह' (سُبْحَانَ اللهِ) तैंतीसबार 'अलहम्दु लिल्ला' (اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ) तैंतीस बार और अल्लाहु अक्बर (اَللهُ اَكْبَرُ) चौंतीस बार और 'कुल अऊज़ु बिरब्बिल फ़ ल क़०' (قُلْ اَعُوْذُ بِرَبِّ الْفَلَقِ) और 'क़ुल अऊज़ु बिरब्बिन्नास' (قُلْ اَعُوْذُ بِرَبِّ النَّاسِ) एक–एक बार और आयतल कुर्सी एक बार और सुबह के वक़्त सूरः यासीन एक बार और मग़रिब के बाद सूरः वाक़िआ एक बार, और इशा के बाद सूरः मुल्क एक बार और जुमा के दिन सूरः कहफ़ एक बार पढ़ लिया करो और सोते वक़्त 'आमनर्रसूलु' (اٰمَنَ الرَّسُوْلُ) भी सूरः के ख़त्म तक पढ़ लिया करो। और क़ुरआन की तिलावत रोज़ किया करो, जितना हो सके और याद रखो कि इन चीज़ों का पढ़ना सवाब है और न पढ़े तो गुनाह भी नहीं।

क़सम और मन्नत का बयान

अमल 1—अल्लाह तआला के सिवा किसी और चीज़ की क़सम न खाओ, जैसे अपने बच्चे की, अपनी सेहत की, अपनी आंखों की, ऐसी क़सम से गुनाह होता है और जो भूले से मुह से निकल जाए, तो तुरन्त कलमा पढ़ लो।

अमल 2—इस तरह से कभी क़सम मत खाओ कि अगर मैं झूठी हूं तो बाईमान हो जाऊं, चाहे सच्ची ही बात हो।

अमल 3—अगर ग़ुस्से में ऐसी क़सम खा बैठो कि जिसका पूरा

करना गुनाह हो तो उसको तोड़ दो और कफ़्फ़ारा अदा करो, जैसे यह क़सम खा ली कि बाप या मां से न बोलूंगी या और कोई क़सम इस तरह की खा ली।

मामलों का यानी बर्ताव का संवारना

लेने–देने का बयान

मामला 1—रूपए–पैसे का ऐसा लालच मत करो कि हलाल व हराम की पहचान न रहे और जो हलाल पैसा ख़ुदा दे, उसको उड़ाओ नहीं, हाथ रोक कर ख़र्च करो, बस, जहां ज़रूरत हो, वहीं उठाओ।

मामला 2—अगर कोई मुसीबत का मारा हुआ मजबूरी में अपनी चीज़ बेचता हो, तो उसको ज़रूरत वाला समझकर मत दबाओ और उस चीज़ के दाम मत गिराओ या उसकी मदद करो या मुनासिब दामों से वह चीज़ ख़रीद लो।

मामला 3—अगर तुम्हारा क़र्ज़दार ग़रीब हो, उसको परेशान मत करो, बल्कि उसको मोहलत दो, कुछ या सारा माफ़ कर दो।

मामला 4—अगर तुम्हार ज़िम्मे किसी का क़र्ज़ हो और तुम्हारे पास देने को हैं, उस वक़्त टालना बड़ा ज़ुल्म है।

मामला 5—जहां तक मुम्किन हो, किसी से क़र्ज़ मत करो और अगर मजबूरी से लो, उसके अदा करने का ख़्याल रखो। बे–परवाह मत बन जाओ और अगर जिसका क़र्ज़ है, वह तुमको कुछ कहे–सुने, तो उलट कर जवाब मत दो। नाराज़ मत हो।

मामला 6—हंसी में किसी की चीज़ उठाकर छिपा देना, जिसमें वह परेशान हो, बहुत बुरी बात है।

मामला 7—मज़दूर से मज़दूरी करा कर उसकी मज़दूरी देने में कोताही मत करो।

मामला 8—अकाल के दिनों में कुछ लोग अपने या पराये बच्चे को बेच डालते हैं, उनको लौंडी–गुलाम बनाना हराम है।

मामला 9—अगर खाना पकाने को किसी को आग दे दी या खाने में डालने को ज़रा सा नमक दे दिया तो ऐसा सवाब है जैसे वह

सारा खाना उसे दे दिया।

मामला 10—पानी पिलाना बड़ सवाब है। जहां पानी ज़्यादा मिलता है, वहां तो ऐसा सवाब है, जैसे गुलाम आज़ाद किया और जहां कम मिलता है, वहां ऐसा सवाब है, जैसे किसी मुर्दे को ज़िंदा कर दिया।

मामला 11—अगर तुम्हारे ज़िम्मे किसी का लेना-देना हो या किसी की अमानत तुम्हारे पास रखी हो तो या तो दो-चार आदमियों से उसका ज़िक्र कर दो या लिखवा कर रख दो, शायद मर-मरा जाओ तो तुम्हारे ज़िम्मे किसी का रह जाए।

निकाह का बयान

मामला 1—अपनी औलाद के निकाह में ज़्यादा इस बात का ख़्याल रखो कि दीनदार आदमी से हो। दौलत वग़ैरह पर ज़्यादा ख़्याल मत करो, ख़ास कर आजकल ज़्यादा दौलत वाले अंग्रेज़ी पढ़ने से ऐसे भी होने लगे हैं कि कुफ़्र की बातें करते हैं। ऐसे आदमी से निकाह भी क़ुबूल नहीं होता। तमाम उम्र बद-कारी का गुनाह होता रहेगा।

मामला 2—अक्सर औरतों की आदत होती है कि ग़ैर-औरतों की शक्ल व सूरत का बयान अपने ख़ाविंद से किया करती हैं, यह बहुत बुरी बात है। अगर उसका दिल आ गया तो रोती फिरेंगी।

मामला 3—अगर किसी जगह से कहीं से ब्याह-शादी का पैग़ाम आ चुका है और कुछ-कुछ मर्ज़ी भी मालूम होती है, ऐसी जगह तुम अपनी औलाद के लिए पैग़ाम मत भेजो, हां, अगर वह छोड़ बैठे या दूसरा आदमी जवाब दे दे, तब तुमको दुरूस्त है।

मामला 4—मियां-बीवी की तंहाई में ख़ास मामलों का अपनी साथियों-सहेलियों से ज़िक्र करना अल्लाह तआला के नज़दीक बहुत ना-पसंद है। अक्सर दूल्हा-दुल्हन इसकी परवाह नहीं करते।

मामला 5—अगर निकाह के मामले में तुमसे कोई मश्विरा ले, तो अगर उस मौक़े की कोई ख़राबी या बुराई तुमको मालूम हो, तो उसको ज़ाहिर करो। यह ग़ीबत हराम नहीं, हां, ख़ामख़ाह किसी को बुरा मत कहो।

मामला 6—अगर ख़ाविंद हैसियत वाला हो और बीवी को ज़रूरत भर ख़र्च न दे, तो बीवी छिपा कर ले सकती है, मगर फ़िज़ूल ख़र्ची करने

को या दुनिया की रस्में पूरा करने को लेना दुरूस्त नहीं।

किसी को तक्लीफ़ देने का बयान

मामला 1—जो आदमी पूरा हकीम न हो, उसको किसी की दवा–दारू करना दुरूस्त नहीं, जिसमें नुक़्सान का डर हो। अगर ऐसा किया, तो गुनाहगार होगा।

मामला 2—धार वाली चीज़ से किसी को डराना नहीं चाहिए, चाहे हंसी में हो, मना है, शायद हाथ से निकल पड़े।

मामला 3—चाकू खुला हुआ किसी के हाथ में मत दो या तो बन्द कर के दो या चारपाई वग़ैरह पर रख दो, दूसरा आदमी अपने हाथ से उठा ले।

मामला 4—कुत्ते–बिल्ली को बंद रखना, जिसमें वह भूखा–प्यासा तड़पे, बड़ा गुनाह है।

मामला 5—किसी गुनाहगार को ताना देना बुरी बात है, हां, नसीहत के तौर पर कहना कुछ डर नहीं।

मामला 6—बे–ख़ता किसी को घूरना, जिससे वह डर जाए, दुरूस्त नहीं। देखो जब घूरना तक दुरूस्त नहीं, तो हंसी में किसी को भयानक डरा देना कितनी बुरी बात है।

मामला 7—अगर जानवर ज़िब्ह करना हो, छुरी ख़ूब तेज़ कर लो, बे–ज़रूरत तक्लीफ़ न दो।

मामला 8—जब सफ़र करो, जानवर को तक्लीफ़ न दो, न बहुत ज़्यादा सामान लादो, न बहुत डराओ और जब मंज़िल पर पहुंचो, पहले जानवर के घास–दाने का बन्दोबस्त करो।

आदतों का संवारना

खाने–पीने का बयान

अदब 1—बिस्मिल्लाह कहकर खाना शुरू करो और दाहिने हाथ से खाओ और अपने सामने से खाओ, हां, अगर उस बर्तन में कई क़िस्म

की चीज़ें हैं, जैसे कई तरह के फल, कई तरह की मिठाई हो, उस वक़्त जिस चीज़ का जी चाहे, जिस तरफ़ से चाहे उठाओ।

अदब 2—उंगलियां चाट लिया करो और बरतन में सालन ख़त्म हो चुके, तो उसको भी साफ़ कर लिया करो।

अदब 3—अगर लुक़्मा (कौर) हाथ से छूट जाए तो उसको उठाकर साफ़ कर के खा लो, शेख़ी मत करो।

अदब 4—ख़रबूज़े की फांकें हैं या खज़ूर व अंगूर के दाने हैं या मिठाई की डलियां हैं, तो एक-एक उठाओ, दो-दो एकदम से मत लो।

अदब 5—अगर कोई चीज़ बदबूदार खायी हो, जैसे कच्ची प्याज़, लहसन, तो अगर महफ़िल में बैठना हो, पहले मुंह साफ़ कर लो, बदबू न रहे।

अदब 6—रोज़ के ख़र्च के लिए आटा-चावल नाप-तौल कर पकाओ, अन्धा-धुन्ध मत उठाओ।

अदब 7—खा-पीकर अल्लाह तआला का शुक्र अदा करो।

अदब 8—खाने से पहले और खाने के बाद हाथ धो डालो।

अदब 9—बहुत जलता खाना मत खाओ।

अदब 10—मेहमान की ख़ातिर करो। अगर तुम मेहमान जाओ तो इतना मत ठहरो कि दूसरे को बोझ लगने लगे।

अदब 11—खाना मिलकर खाने से बरकत होती है।

अदब 12—जब खाना खा चुको, अपने उठने से पहले दस्तरख़्वान उठवा दो। उससे पहले ख़ुद उठना बे-अदबी है अगर अपने साथिन से पहले खा चुको, तब भी उसका साथ दो। थोड़ा-थोड़ा खाती रहो ताकि वह शर्म के मारे भूखी न उठ जाए। अगर किसी वजह से उठने ही की ज़रूरत हो, तो उससे मजबूरी बता दो।

अदब 13—मेहमान को दरवाज़े के पास तक पहुंचाना सुन्नत है।

अदब 14—पानी एक सांस में मत पियो, तीन सांस में पियो और सांस लेने के वक़्त बरतन मुंह से अलग कर दो और बिस्मिल्लाह करके पियो और पीकर अल्हम्दु लिल्लाह कहो।

अदब 15—जिस बरतन में ज़्यादा पानी आ जाने का शुबहा हो या जिस बरतन के अन्दर का हाल मालूम न हो कि उसमें शायद कोई कीड़ा या कांटा हो, ऐसे बरतन से मुंह लगाकर पानी मत पियो।

अदब 16—बे-ज़रूरत खड़े होकर पानी मत पियो।

अदब 17—पानी पीकर अगर दूसरों को भी देना हो, तो जो तुम्हारे दाहिनी तरफ़ हो, उसको पहले दो और वह अपनी दाहिनी तरफ़ वाले को दे। इसी तरह कोई चीज़ बांटना हो जैसे, पान, इत्र, मिठाई, सब का यही तरीक़ा है।

अदब 18—जिस तरफ़ से बर्तन टूट रहा है, उधर से पानी मत पियो।

अदब 19—शुरू शाम के वक़्त बच्चों को बाहर मत निकलने दो और रात को दरवाज़े बिस्मिल्लाह करके बन्द करो और बिस्मिल्लाह करके बरतनों को ढांक दो और चिराग़ सोते वक़्त गुल कर दो और चूल्हे की आग बुझा दो या दबा दो।

अदब 20—खाने–पीने की चीज़ किसी के पास भेजना हो तो ढांक कर भेजो।

पहनने–ओढ़ने का बयान

अदब 1—एक जूती पहन कर मत चलो। रज़ाई वग़ैरह इस तरह मत लपेटो कि चलने में या जल्दी से हाथ निकालने में मुश्किल हो।

अदब 2—कपड़ा दाहिनी तरफ़ से पहनना शुरू करो, जैसे दाहिनी आस्तीन व दाहिनी पांयचा, दाहिनी जूती और बायीं तरफ़ से निकालो।

अदब 3—कपड़ा पहनकर यह दुआ पढ़ो, गुनाह माफ़ होते हैं, 'अल्हम्दु लिल्लाहिल्लज़ी कसानी हाज़ा व र ज़ क़नीहि मिन ग़ैरि हौलिम मिन्नी व ला क़ूवतिन॰' (الحمد لله الذي كساني هذا ورزقنيه من غير حول مني ولا قوة)

अदब 4—ऐसा कपड़ा मत पहनो जिसमें बे–पर्दगी हो।

अदब 5—जो अमीर औरतें बहुत क़ीमती पोशाक और ज़ेवर पहनती हैं, उनके पास ज़्यादा मत बैठो, ख़ामख़ाह दुनिया का लालच बढ़ेगा।

अदब 6—पैवंद लगाने को ज़िल्लत मत समझो।

अदब 7—कपड़ा न बहुत तकल्लुफ़ का पहनो और न मैला–कुचैला पहनो, बीच का रहे और सफ़ाई रखो।

अदब 8—बालों में तेल कंघी करती रहो, मगर हर वक़्त इसी धुन में मत रहो, हाथों में मेंहदी लगाओ।

अदब 9—सुर्मा तीन–तीन सलाई, दोनों आंखों में लगाओ।

अदब 10—घर को साफ़ रखो।

बीमारी और इलाज का बयान

अदब 1—बीमार को खाने-पीने पर ज़्यादा ज़बरदस्ती मत करो।

अदब 2—बीमारी में बद-परहेज़ी मत करो।

अदब 3—शरअ के ख़िलाफ़ तावीज़-गंडा-टोटका हरगिज़ इस्तेमाल मत करो।

अदब 4—अगर किसी को नज़र लग जाए, जिस पर शुबहा हो कि उसकी नज़र लगी है, उसका मुंह और दोनों हाथ कुहनी सहित और दोनों पांव और दोनों ज़ानू और इंस्तिजे का मौक़ा धुलवा कर पानी जमा करके उस आदमी के सिर पर डालो, जिसको नज़र लगी है, इनशाअल्लाहु तआला शिफ़ा हो जाएगी।

अदब 5—जिन बीमारों से दूसरों को नफ़रत होती है, जैसे खुजली या ख़ून बिगड़ जाना, ऐसे बीमार को चाहिए कि ख़ुद सबसे अलग रहे ताकि किसी को तक्लीफ़ न हो।

ख़्वाब देखने का बयान

अदब 1—अगर डरावना ख़्वाब नज़र आए तो बायीं तरफ़ तीन बार थुथकार दो और तीन बार أَعُوْذُ بِاللهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ

अऊज़ु बिल्लाहि मिनश्शैतानिर्रजीम

पढ़ो और करवट बदल डालो और किसी से ज़िक्र मत करो। इन्शाअल्लाह कोई नुक़्सान न होगा।

अदब 2—अगर सवाब कहना हो, तो ऐसे आदमी से कहो, जो अक़्लमंद हो, तुम्हारा भला चाहने वाला हो, ताकि बुरी ताबिर न दे।

अदब 3—झूठा ख़्वाब बनाना बड़ा गुनाह है।

सलाम करने का बयान

अदब 1—आपस में सलाम किया करो, इस तरह 'अस्सलामु अलैकुम।' और जवाब इस तरह दिया करो, 'व अलैकुम अस्सलाम।' इसके अलावा सब तरीक़े बेकार हैं।

अदब 2—जो पहले सवाब करे, उसको ज़्यादा सवाब मिलता है।

अदब 3—जो कोई दूसरे का सलाम लाये, यों जवाब दो, 'अलैहिम व अलैकुमुस्सलाम'

अदब 4—अगर कई आदमियों में से एक ने सलाम कर लिया तो सब की तरफ़ से हो गया। इसी तरह सारी महफ़िल में से एक ने जवाब दे दिया, वह भी सब की तरफ़ से हो गया। (हाथ के इशारे से सलाम करते वक़्त झुकना मना है) अगर कोई आदमी दूर हो और तुम उसको सलाम करो या वह तुमको सलाम करे, तो फिर हाथ से इशारा करना जायज़ है, लेकिन ज़ुबान से भी सलाम के लफ़्ज़ अदा करने चाहिएं।

बैठने–लेटने–चलने का बयान

अदब 1—बन–ठन कर इतराती हुई मत चलो।

अदब 2—उल्टी मत करो।

अदब 3—ऐसी छत पर मत सोओ, जिसमें आड़ न हो, शायद लुढ़क कर गिर पड़े।

अदब 4—कुछ धूप में, कुछ साए में न बैठो।

अदब 5—अगर तुम किसी मजबूरी में बाहर निकलो तो सड़क के किनारे–किनारे चलो। बीच में चलना औरत के लिए बे–शर्मी है।

सबमें मिलकर बैठने का बयान

अदब 1—किसी को उसकी जगह से उठाकर खुद वहां मत बैठो।

अदब 2—कोई औरत महफ़िल से उठकर किसी काम को गयी

और अक़्ल से मालूम हुआ कि अभी फिर आयेगी, ऐसी हालत में उसकी जगह किसी और को बैठना न चाहिए, वह जगह उसी का हक़ है।

अदब 3—अगर दो औरतें इरादा करके महफ़िल में पास-पास बैठी हों, तुम उनके बीच में जाकर मत बैठो, हां, अगर वे खुशी से बिठा ले, तो कुछ डर नहीं।

अदब 4—जो औरत तुमसे मिलने आये, उसको देखकर ज़रा अपनी जगह से खिसक जाओ, जिसमें वह यह जाने कि मेरी इज़्ज़त की।

अदब 5—महफ़िल में सरदार बनकर मत बैठो, जहां जगह हो, ग़रीबों की तरह बैठ जाओ।

अदब 6—जब छींक आये, मुंह पर कपड़ा या हाथ रख लो और दबी आवाज़ से छींको।

अदब 7—जम्हाई को जहां तक हो सके, रोको अगर न रूके तो मुंह ढांक लो।

अदब 8—बहुत ज़ोर से मत हंसो।

अदब 9—महफ़िल में नाक-मुह चढ़ाकर, मुंह फुलाकर मत बैठो। आजिज़ी से, ग़रीबों की तरह बैठो। कोई बात मौक़े की हो, बोलचाल भी लो, हां, गुनाह की बात मत करो।

अदब 10—महफ़िल में किसी तरफ़ पांव मत फैलाओ।

जुबान के बचाने का बयान

अदब 1—बे-सोचे कोई बात मत कहो। जब सोचकर यक़ीन हो जाए कि यह बात किसी तरह बुरी नहीं, तब बोलो।

अदब 2—किसी को बे-ईमान या यों कहना कि फ़लानी पर खुदा की मार, खुदा की फिटकार, खुदा का ग़ज़ब पड़े, दोज़ख़ नसीब हो, चाहे आदमी को, चाहे जानवर को, यह सब गुनाह है। जिसको कहा है, अगर वह ऐसा न हुआ तो यह सब फिटकार लौटकर उस कहने वाली पर पड़ती है।

अदब 3—अगर तुमको कोई बे-जा बात कहे, तो बदले में उतना ही कह सकती हो अगर ज़रा भी ज़्यादा कहा, फिर तुम गुनाहगार होगी।

अदब 4—दोग़ली बात मुंह देखे की मत करो कि उसके मुंह पर उसकी-सी और इसके मुंह पर इसकी-सी।

अदब 5—चुग़लख़ोरी हरगिज़ मत करो, न किसी की चुग़ली सुना।

अदब 6—झूठ हरगिज़ मत बोलो।

अदब 7—ख़ुशामद से किसी के मुंह पर तारीफ़ मत करो और पीठ पीछे भी हद से ज़्यादा तारीफ़ मत करो।

अदब 8—किसी की ग़ीबत हरगिज़ मत करो और ग़ीबत यह है कि किसी के पीठ पीछे उसकी ऐसी बात कहना कि अगर वह सुने तो उसको रंज हो, चाहे वह बात सच्ची ही हो और अगर वह बात ही ग़लत है तो बुहतान (आरोप) है। इसमें और भी ज़्यादा गुनाह है।

अदब 9—किसी से बहस मत करो। अपनी बात को ऊंची मत करो।

अदब 10—ज़्यादा मत हंसो, इससे दिल की रौनक़ जाती रहती है।

अदब 11—जिस आदमी की ग़ीबत की है, अगर उसे माफ़ करा न सको, तो उस आदमी के लिए मग़्फ़िरत की दुआ किया करो। उम्मीद है कि क़ियामत में साफ़ कर दे।

अदब 12—झूठा वायदा मत करो।

अदब 13—ऐसी हंसी मत करो, जिससे दूसरा ज़लील हो जाए।

अदब 14—अपनी किसी चीज़ या किसी हुनर पर बड़ाई मत जतलाओ।

अदब 15—शेर–अशआर का धंधा मत रखो। हां, अगर मज़मून शरअ के ख़िलाफ़ न हो और थोड़ी–सी आवाज़ से कभी–कभी कोई दुआ या नसीहत का शेर पढ़ लो तो डर नहीं।

अदब 16—सुनी–सुनायी हुई बातें मत कहा करो, क्योंकि अक्सर ऐसी बातें झूठी हैं।

मुतफ़र्रिक़[1] बातों का बयान

अदब 1—ख़त लिखकर उस पर मिट्टी छोड़ दिया करो। इससे उस काम में आसानी हो जाती है, जिस काम के लिए ख़त लिखा गया

1. अलग–अलग, भिन्न–भिन्न।

हो।

अदब 2—ज़माने को बुरा मत कहो।

अदब 3—बातें बहुत चबा–चबा कर मत करो, न लम्बी बातें करो, न बढ़ा–चढ़ा कर कहो, सिर्फ़ ज़रूरत भर बातें करो।

अदब 4—किसी के गाने की तरफ़ कान मत लगाओ।

अदब 5—किसी की बुरी शक्ल या बुरी बात की नक़ल मत उतारो।

अदब 6—किसी का ऐब देखो, उसको छिपाओ, गाती मत फिरो।

अदब 7—जो काम करो, सोचकर, अन्जाम समझकर, इत्मीनान से करो। जल्दी में अक्सर काम बिगड़ जाते हैं।

अदब 8—कोई तुमसे मश्विरा ले, तो वही सलाह दो, जिसको अपने नज़दीक बेहतर समझती हो।

अदब 9—गुस्से को जहां तक हो सके, रोको।

अदब 10—लोगों से अपना कहा–सुना माफ़ करा लो, वरना क़ियामत में बड़ी मुसीबत होगी।

अदब 11—दूसरों को भी नेक काम बतलाती रहो, बुरी बातों से मना करती रहो, अगर बिल्कुल क़ुबूल करने की उम्मीद न हो या डर हो कि यह तक्लीफ़ पहुंचाएगा, तो ख़ामोशी जायज़ है, मगर दिल से बुरी बात को बुरा समझती रहो और मजबूरी के अलावा ऐसे आदमियों से न मिलो।

दिल का संवारना

ज़्यादा खाने के लालच की बुराई और उसका इलाज

बहुत से गुनाह पेट के ज़्यादा पालने से होते हैं, इसमें कई बातों का ख़्याल रखो। मज़ेदार खाने की पाबंद न हो। हराम रोज़ी से बचो। हद से

ज़्यादा न भरो, बल्कि दो–चार लुक़्मे की भूख़ रखकर खाओ, इसमें बहुत से फ़ायदे हैं—

एक तो दिल साफ़ रहता है, जिससे अल्लाह तआला की नेमतों की पहचान होती है और इससे अल्लाह तआला की मुहब्बत पैदा होती है।

दूसरे दिल में नर्मी रहती है, जिससे दुआ व ज़िक्र में लज़्ज़त मालूम होती है।

तीसरे नफ़्स में बड़ाई और सरकशी नहीं होने पाती।

चौथे नफ़्स को थोड़ी–सी तक्लीफ़ पहुंचती है और तक्लीफ़ देखकर खुदा का अज़ाब याद आता है और इस वजह से नफ़्स गुनाहों से बचाता है।

पांचवे गुनाह से लगाव कम होता है।

छठे तबीयत हल्की रहती है। नींद कम आती है। तहज्जुद और दूसरी इबादतों में सुस्ती नहीं होती।

सातवें भूखों, मजबूरों पर रहम आता है, बल्कि हर एक के साथ रहमदिली पैदा होती है।

ज़्यादा बोलने के लालच की बुराई और उसका इलाज

नफ़्स को ज़्यादा बोलने में भी मज़ा आता है और इससे सैकड़ों गुनाहों में फंस जाता है। झूठ और ग़ीबत और कोसना, किसी को ताना देना, अपनी बड़ाई हांकना, ख़ामख़ाह किसी से बहसा–बहसी लगाना, अमीरों की खुशामद करना, ऐसी हंसी करना, जिससे किसी का दिल दुखे। इन सब आफ़तों से बचना जभी मुम्किन है कि जुबान को रोके और उसको रोकने का तरीक़ा यह है कि जो बात मुंह से निकालना हो, जी में आते ही न कह डाले, बल्कि ख़ूब सोच–समझ ले कि इस बात में किसी तरह का गुनाह है या सवाब है या यह कि न गुनाह है, न सवाब। अगर वह बात ऐसी है, जिसमें थोड़ा या बहुत गुनाह है, तो बिल्कुल अपनी जुबान बन्द कर लो। अगर अन्दर से नफ़्स तक़ाज़ा करे, तो उसको समझाओ कि इस

वक़्त थोड़ा-सा जी को मार लेना आसान है और दोज़ख़ का अज़ाब बहुत सख़्त है और अगर वह बात सवाब की है तो कह डालो और अगर न गुनाह है, न सवाब, तो भी मत कहो और अगर बहुत ही दिल चाहे, तो थोड़ी-सी कह कर चुप हो जाओ। हर बात में इसी तरह सोचा करो। थोड़े दिनों में बुरी बात कहने से खुद नफ़रत हो जाएगी और ज़ुबान की हिफ़ाज़त का उपाय यह भी है कि बे-ज़रूरत किसी से न मिलो। जब तंहाई होगी, खुद ही ज़ुबान ख़ामोश रहेगी।

गुस्से की बुराई और उसका इलाज

गुस्से में अक़्ल ठिकाने नहीं रहती और अन्जाम सोचने का होश नहीं रहता, इसलिए ज़ुबान से भी जा-बेजा निकल जाता है और हाथ से भी ज़्यादती हो जाती है। इसलिए इसको बहुत रोकना चाहिए और इसका तरीक़ा यह है कि सबसे पहले यह करे कि जिस पर ग़ुस्सा आया है, उसको अपने सामने से बिल्कुल हटा दे। अगर वह न हटे, खुद उस जगह से टल जाए, फिर सोचे, जितना यह आदमी मेरा क़ुसूरवार है, उससे ज़्यादा मैं अल्लाह तआला की क़ुसूरवार हूं और जैसा मैं चाहती हूं कि अल्लाह तआला मेरी ख़ता माफ़ कर दे, ऐसे ही मुझको भी चाहिए कि मैं इसका क़ुसूर माफ़ कर दूं। ज़ुबान से अऊज़ु बिल्लाह कई बार पढ़ और पानी पी ले या वुज़ू कर ले, इससे गुस्सा जाता रहेगा। फिर जब अक़्ल ठिकाने हो जाए, उस वक़्त भी अगर इस क़ुसूर पर सज़ा देना मुनासिब मालूम हो, जैसे सज़ा देने में उसी क़ुसूरवार की भलाई है, जैसे अपनी औलाद है कि उसको सुधारना ज़रूर है या सज़ा देने में दूसरे की भलाई है, जैसे उस शख़्स ने किसी पर ज़ुल्म किया था, अब मज़्लूम की मदद करना और उसके वास्ते बदला लेना ज़रूर है, इससे सज़ा की ज़रूरत है, तो पहले ख़ूब समझ ले कि इतनी ख़ता की कितनी सज़ा होनी चाहिए, जब अच्छी तरह शरअ के मुताबिक़ इस बात से तसल्ली हो जाये, उसी तरह सज़ा दे दे। कुछ दिन इसी तरह गुस्सा रोकने से दिल अपने आप क़ाबू आ जाएगा, तेज़ी न रहेगी और कीना भी इस गुस्से से पैदा हो जाता है। जब गुस्से में सुधार हो जाएगा, कीना भी दिल से निकल जाएगा।

जलन की बुराई और उसका इलाज

किसी को खाता–पीता या फलता–फूलता या इज़्ज़त व आबरू से रहता हुआ देखकर दिल में जलना और रंज करना और उसकी गिरावट से खुश होना, इसको जलन या हसद कहते है। यह बहुत बुरी चीज़ है, इसमें गुनाह भी है। ऐसे आदमी की सारी ज़िंदगी कड़वाहट में गुज़रती है, ग़रज़ उसकी दुनिया और दीन दोनों बे–मिठास है इसलिए इस आफ़त से निकलने की बहुत कोशीश करनी चाहिए और इलाज इसका यह है कि पहले यह सोचे कि मेरे जलन करने से मुझ ही को नुक़्सान और तक्लीफ़ है, उसका यह नुक़्सान है और मेरा नुक़्सान यह है कि मेरी नेकियां बर्बाद हो रही हैं, क्योंकि हदीस में है, जलन नेकियों को इस तरह खा जाती है, जैसे आग लकड़ी को खा लेती है और वजह इसकी यह है कि जलन करने वाली गोया अल्लाह पर एतराज़ कर रही है कि फ़लाना आदमी इस नेमत के लायक़ न था, उसको नेमत क्यों दी, तो यों समझो कि तौबा–तौबा, अल्लाह तआला का मुक़ाबला करती है, तो कितना बड़ा गुनाह होगा और तक्लीफ़ ज़ाहिर ही है कि हमेशा रंज व ग़म में रहती है और जिससे जलन किया है उसका कोई नुक़्सान नहीं है, क्योंकि उसकी जलन से वह नेमत जाती न रहेगी, बल्कि उसका नफ़ा यह है कि उस जलन करने वाली की नेकियां उसके पास चली जाएंगी।

जब ऐसी–ऐसी बातें सोच चुकी तो फिर यह करो कि अपने दिल पर ज़बरदस्ती करके जिस आदमी से जलन पैदा हुई है, जुबान से दूसरों के सामने उसकी तारीफ़ और भलाई करो और यों कहो कि अल्लाह तआला का शुक्र है कि उसके पास ऐसी–ऐसी नेमतें हैं, अल्लाह तआला उसको दोगुनी करें और अगर उस आदमी से मिलना हो जाए तो उसकी इज़्ज़त करे और उसके साथ नर्मी से पेश आए, पहले–पहले ऐसे बर्ताव से नफ़्स को बहुत तक्लीफ़ होगी, मगर धीरे–धीरे आसानी हो जाएगी और जलन जाती रहेगी।

दुनिया और माल की मुहब्बत की बुराई और उसका इलाज

माल की मुहब्बत ऐसी बुरी चीज़ है कि जब यह दिल में आती है, तो अल्लाह तआला की याद और मुहब्बत उसके दिल में नहीं समाती, क्योंकि ऐसे आदमी को तो हर वक़्त यही उधेड़बुन रहेगी कि रुपया किस तरह आये और कैसे जमा हो। गहना—कपड़ा ऐसा होना चाहिए, इसका सामान किस तरह करना चाहिए, इतने बर्तन हो जाएं, इतनी चीज़ें बन जाएं, ऐसा घर बनाना चाहिए, बाग़ लगाना चाहिए, जायदाद ख़रीदनी चाहिए। जब रात—दिन इसी में रहा, फिर अल्लाह तआला को याद करने की फ़ुर्सत कहां मिलेगी।

एक बुराई इसमें यह है कि जब दिल में इसकी मुहब्बत जम जाती है, तो मर कर ख़ुदा के पास जाना भी उसको बुरा मालूम होता है, क्योंकि यह ख़्याल आता है कि मरते ही सारा ऐश जाता रहेगा और कभी ख़ास मरते वक़्त दुनिया का छोड़ना बुरा मालूम होता है और जब उसको मालूम होता है कि अल्लाह तआला ने दुनिया से छुड़ाया है तौबा—तौबा, अल्लाह से दुश्मनी हो जाती है और ख़ात्मा कुफ़्र पर होता है।

एक बुराई इसमें यह है कि जब आदमी दुनिया समेटने के पीछे पड़ जाता है, फिर उसको हराम व हलाल का कुछ ख़्याल नहीं रहता है, न अपना और पराया हक़ सूझता है, न झूठ और दग़ा की परवाह होती है। बस यही नीयत रहती है कि कहीं से आये, लेकर भर लो। इसी वास्ते हदीस में आया है कि दुनिया की मुहब्बत सारे गुनाहों की जड़ है। जब ये ऐसी बुरी चीज़ है तो हर मुसलमान को कोशीश करनी चाहिए कि इस बला से बचे और अपने दिल से इस दुनिया की मुहब्बत बाहर करे। इस तरह——

1. इलाज इसका तो यह है कि मौत को ज़्यादा याद करे और हर वक़्त सोचे कि यह सब सामान एक दिन छोड़ना है, फिर इसमें जी लगाने से क्या फ़ायदा। बल्कि जिस क़दर जी लगेगा, उसी क़दर छोड़ते वक़्त

हसरत होगी।

2. बहुत से इलाक़े न बढ़ाये, यानी बहुत से आदमियों से मेल–जोल, लेना–देना न बढ़ाए, ज़रूरत से ज़्यादा सामान चीज़, मकान, जायदाद जमा न करे, कारोबार, रोज़गार, व्यापार हद से ज़्यादा न फैलाए। इन चीज़ों को ज़रूरत और आराम तक रखे। मतलब यह है कि सब सामान बहुत थोड़ा रखे।

3. फ़िज़ूलख़र्ची करने से आदमी का लालच बढ़ता है, और उसके लालच से ख़राबियां पैदा होती हैं।

4. मोटे खाने–कपड़े की आदत रखे।

5. ग़रीबों में ज़्यादा बैठे, अमीरों से बहुत कम मिले, क्योंकि अमीरों से मिलने में हर चीज़ का लालच पैदा होता है।

6. जिन बुज़ुर्गों ने दुनिया छोड़ दी है, उनके क़िस्से–हिकायतें देखा करे।

7. जिस चीज़ से दिल को ज़्यादा लगाव हो, उसको ख़ैरात कर दे, या बेच डाले।

इनशाअल्लाह इन उपायों से दुनिया की मुहब्बत दिल से निकल जाएगी और दिल में, जो दूर–दूर की उमंगें पैदा होती हैं कि यों जमा करें, यों सामान ख़रीदें, यों औलाद के लिए मकान–गांव छोड़ जाएं, जब दुनिया की मुहब्बत जाती रहेगी, ये उमंगें अपने आप कम होती जाएंगी।

कंजूसी की बुराई और उसका इलाज

बहुत से हक़, जिनका अदा करना फ़र्ज़ और वाजिब है, जैसे ज़कात और क़ुरबानी, किसी मुहताज की मदद करना, अपने ग़रीब नातेदारों के साथ सुलूक करना, कंजूसी में यह हक़ अदा नहीं होते, इसका गुनाह होता है। यह तो दीन का नुक़्सान है और कंजूस आदमी सबकी निगाहों में ज़लील और बे–क़दर रहता है, यह दुनिया का नुक़्सान है। इससे ज़्यादा क्या बुराई होगी।

1. इलाज इसका तो यह है कि माल और दुनिया की मुहब्बत दिल से निकाले, इससे इसकी मुहब्बत न रहेगी, कंजूसी किसी तरह हो ही नहीं सकती।

2. इलाज यह है कि जो चीज़ अपनी ज़रूरत से ज़्यादा हो, अपनी

तबीयत पर ज़ोर डाल कर उसको किसी को दे डाला करे, भले ही नफ़्स को तक्लीफ़ हो, अगर हिम्मत करके इस तक्लीफ़ को सहारे, जब तक कि कंजूसी का असर बिल्कुल दिल से न निकल जाए, यों ही किया करे।

नाम और तारीफ़ चाहने की बुराई और उसका इलाज

जब आदमी के दिल में इसकी ख़्वाहिश होती है, तो दूसरे आदमी के नाम और तारीफ़ से जलता है, इसकी बुराई ऊपर सुन चुकी हो और दूसरे आदमी की बुराई और ज़िल्लत सुनकर जी ख़ुश होता है। यह भी बड़े गुनाह की बात है कि आदमी दूसरे का बुरा चाहे और इसमें यह भी बुराई है कि कभी नाजायज़ तरीक़ों से नाम पैदा किया जाता है, जैसे नाम के वास्ते शादी वग़ैरह में ख़ूब माल उड़ाया, फ़िज़ूल ख़र्ची और वह माल कभी रिश्वत से जमा किया, कभी सूदी क़र्ज़ लिया और यह सारे उस नाम के लिए किए और दुनिया का नुक़्सान इसमें यह है कि ऐसे लोगों के दुश्मन और जलने वाले बहुत होते हैं और हमेशा उसको ज़लील और बदनाम करने और उसको नुक़्सान और तक्लीफ़ पहुंचाने की चिंता में लगे रहते हैं।

एक इलाज इसका तो यह है कि यों सोचे जिन लोगों की निगाह में नाम और तारीफ़ होगी, न वे रहेंगे, न मैं रहूंगी। थोड़े दिनों के बाद कोई पूछेगा भी नहीं। फिर ऐसी बे–बुनियाद चीज़ पर ख़ुश होना नादानी की बात है।

दूसरा इलाज यह है कि कोई ऐसा काम करे जो शरअ के तो ख़िलाफ़ न हो, मगर वह लोगों की नज़र में ज़लील और बदनाम हो जाए, जैसे घर की बची हुई बासी रोटियां ग़रीबों के हाथ सस्ती बेचने लगे, इससे ख़ूब रूसवाई होगी।

घमंड और शेख़ी की बुराई और उसका इलाज

घमंड और शेख़ी इसको कहते हैं कि आदमी अपने आपको इल्म में या इबादत में, या दीनदारों में या हसब–नसब में या माल और सामान में या इज़्ज़त व आबरू में या अक़्ल में या और किसी बात में औरों से बड़ा समझे और दूसरों को अपने से कम और छोटा जाने, यह बड़ा गुनाह है। हदीस में आया है कि जिसके दिल में राई बराबर भी घमंड होगा, वह जन्नत में न जाएगा और दुनिया में भी ऐसे आदमी से दिल में बहुत नफ़रत करते हैं और उसके दुश्मन होते हैं, भले ही डर के मारे ज़ाहिर में आव–भगत करें और इसमें यह भी बुराई है कि ऐसा आदमी किसी की नसीहत नहीं मानता, हक़ बात को किसी के कहने से कुबूल नहीं करता, बल्कि बुरा मानता है और इस नसीहत करने वालों को तक्लीफ़ पहुंचाना चाहता है।

इलाज इसका यह है कि अपनी हक़ीक़त पर विचार करे कि मैं मिट्टी और नापाक पानी की पैदाइश हूं। सारी ख़ूबियां अल्लाह तआला की दी हुई हैं, अगर वह चाहें, अभी सब ले लें, फिर शेखी किस बात पर करूं और अल्लाह तआला की बड़ाई को याद करे। उस वक़्त अपनी बड़ाई निगाह में न आयेगी और जिसको उसने हक़ीर समझा है, उसके सामने आजिज़ी से पेश आए और उसकी इज़्ज़त किया करे, शेख़ी दिल से निकल जाएगी, अगर और ज़्यादा हिम्मत न हो तो अपने ज़िम्मे उतनी ही पाबंदी करे कि जब कोई छोटे दर्जे का आदमी मिले, उसको पहले खुद सलाम किया करे। इन्शाअल्लाह तआला इससे भी नफ़्स में बहुत आजज़ी आ जाएगी। (नफ़्लों की ज़्यादती भी घमंड का बेहतरीन इलाज है।)

इतराने और अपने आपको अच्छा समझने की बुराई और उसका इलाज

अगर किसी ने अपने आपको अच्छा समझा या गहना–कपड़ा पहन कर इतराई, चाहे दूसरों को भी बुरा और कम न समझी, यह बात भी बुरी है। हदीस में आया है कि यह आदत दीन को बराबर करती है और यह भी बात है कि ऐसा आदमी अपने संवारने की चिंता नहीं करता, क्योंकि जब वह अपने आपको अच्छा समझता है, तो उसको अपनी बुराइयां कभी नज़र न आएंगी।

इलाज इसका यह है कि अपने ऐबों को सोचा और देखा करे और यह समझे कि जो बातें मेरे अंदर अच्छी हैं, यह अल्लाह तआला की नेमत है, मेरा कोई कमाल नहीं, यह सोचकर अल्लाह तआला का शुक्र अदा किया करे और दुआ किया करे कि ऐ अल्लाह ! इस नेमत में घटाव न आये।

नेक काम दिखावे के लिए करने की बुराई और उसका इलाज

यह दिखलावा कई तरह का होता है। कभी साफ़ ज़ुबान से होता है कि हमने इतना कुरआन पढ़ा, हम रात को उठे थे। कभी और बातों में मिला होता है, जैसे कहीं बद्दुओं का ज़िक्र हो रहा था, किसी ने कहा कि नहीं साहब, ये सब बातें ग़लत हैं। हमारे साथ ऐसा बर्ताव हुआ तो अब बात तो हुई और कुछ, लेकिन उसी में यह भी सब ने जान लिया कि उन्होंने हज किया है। कभी काम करने से होता है, जैसे दिखलावे की नीयत से, सबके सामने तस्बीह लेकर बैठ गयी या कभी काम के संवारने से होता है, जैसे किसी की आदत है कि हमेशा कुरआन पढ़ती है मगर चार औरतों के सामने ज़रा संवार–संवार कर पढ़ना शुरू कर दिया। कभी

सूरत व शक्ल से होता है जैसे आंखें बंद करके गरदन झुकाकर बैठ गई, जिससे देखने वालियां समझे कि बड़ी अल्लाह वाली हैं, हर वक़्त उसी ख़्याल में डूबी हैं, रात को बहुत जागी हैं, नींद में आंखें बंद हुई जाती हैं। इसी तरह यह दिखलावा और भी कई तौर पर होता है, और जिस तरह से भी हो, बहुत बुरा है। क़ियामत में ऐसे नेक कामों पर, जो दिखलावे के लिए किए गये हों, सवाब के बदले उल्टा अज़ाब दोज़ख़ का होगा।

इलाज इसका वही है जो कि नाम और तारीफ़ चाहने का इलाज है, जिसको हम ऊपर लिख चुके हैं, क्योंकि दिखलावा इसलिए होता है कि मेरा नाम हो, मेरी तारीफ़ हो।

नोट—इन बुरी बातों के जो इलाज बतलाये गये हैं, उनको दो–चार बार बरत लेने से काम नहीं चलता और ये बुराइयों नहीं दूर होतीं, जैसे गुस्से को दो चार बार रोक लिया तो, इससे उस बीमारी की जड़ नहीं गयी या एक–आध बार गुस्सा न आया तो इस धोखे में न आयें कि मेरा नफ़्स संवर गया है, बल्कि बहुत दिनों तक इन इलाजों को बरते और जब चूक हो जाए, अफ़सोस और रंज और आगे को ख़्याल रखे कि मुद्दतों के बाद इन्शा अल्लाहु तआला इन बुराइयों की जड़ जाती रहेगी।

एक ज़रूरी काम की बात

नफ़्स के अन्दर जितनी बुराइयां हैं और हाथ और पांव से जितने गुनाह होते हैं, उनके इलाज का एक आसान तरीक़ा यह भी है कि जब नफ़्स से कोई शरारत और बुराई या गुनाह का काम हो जाए, उसको कुछ सज़ा दिया करे और दो सज़ाएं आसान हैं कि हर आदमी कर सकता है।

एक तो यह है कि अपने ज़िम्मे कुछ आना दो–आना, रुपया दो–रुपया, जैसी हैसियत हो, जुर्माने के तौर पर ठहरा ले। जब कभी कोई बात हो जाया करे, वह जुर्माना ग़रीबों में बांट दिया करे। अगर फिर हो, फिर इसी तरह करे।

दूसरी सज़ा यह है कि एक वक़्त या दो वक़्त खाना न खाया करे। अल्लाह तआला से उम्मीद है कि अगर कोई इन सज़ाओं को निबाह कर बरते, इन्शाअल्लाह सब बुराइयां छूट जाएंगी।

आगे अच्छी बातों को बयान है, जिनसे दिल संवरता है।

तौबा और उसका तरीक़ा

तौबा ऐसी अच्छी चीज़ है कि इससे सब गुनाह माफ़ हो जाते हैं, और जो आदमी अपनी हालत पर ग़ौर करेगा, तो हर वक़्त कोई न कोई बात गुनाह की हो जाती है, ज़रूर तौबा को हर वक़्त ज़रूरत समझेगा।

तरीक़ा इसके हासिल करने का यह है कि क़ुरआन व हदीस में जो अज़ाब के डरावे गुनाहों पर आये हैं, उनको याद करे और सोचे। इससे गुनाह पर दिल दुखेगा। उस वक़्त चाहिए कि ज़ुबान से भी तौबा करे और जो नमाज़–रोज़ा वग़ैरह क़ज़ा हुआ हो, उसको भी क़ज़ा करे। अगर बन्दों के हुक़ूक़ ख़त्म हुए हैं, उनसे माफ़ भी करा ले या अदा कर दे और जो वैसे ही गुनाह हों, उन पर ख़ूब कुढ़े और रोने की शक्ल बनाकर अल्लाह तआला से ख़ूब माफ़ी मांगे।

अल्लाह से डरना और उसका तरीक़ा

अल्लाह तआला ने फ़रमाया है कि मुझसे डरो और ख़ौफ़ ऐसी अच्छी चीज़ है कि उसकी बदौलत गुनाहों से बचता है। तरीक़ा इसका वही है, जो तरीक़ा तौबा का है कि अल्लाह तआला के अज़ाब को सोचा करे और याद किया करे।

अल्लाह से उम्मीद रखना और उसका तरीक़ा

अल्लाह तआला ने फ़रमाया है कि, 'तुम हक़ तआला की रहमत से ना–उम्मीद मत हो' और उम्मीद ऐसी अच्छी चीज़ है कि उससे नेक काम के लिए दिल बढ़ता है और तौबा करने की हिम्मत होती है। तरीक़ा इसका यह है कि अल्लाह तआला की रहमत याद करे और सोचे।

सब्र और उसका तरीक़ा

नफ़्स को दीन की बात पर पाबंद रखना और दीन के ख़िलाफ़ उससे कोई काम न होने देना, इसको सब्र कहते हैं और इसके कई मौक़े हैं

एक मौक़ा यह है कि आदमी चैन अमन की हालत में हो। अल्लाह तआला ने सेहत दी हो। माल व दौलत, इज़्ज़त व आबरू, नौकर–चाकर, आल–औलाद, घर–बार, साज़–सामान दिया हो, ऐसे वक़्त का सब्र यह है कि दिमाग़ ख़राब न हो, अल्लाह तआला को न भूल जाए, ग़रीबों को हक़ीर न समझे, उनके साथ नर्मी और एहसान करता रहे।

दूसरा मौक़ा इबादत का वक़्त है कि उस वक़्त नफ़्स सुस्ती करता है, जैसे नमाज़ के लिए उठने में या नफ़्स कंजूसी करता है जैसे ज़कात–ख़ैरात देने में। ऐसे मौक़े पर तीन तरह का सब्र करना चाहिए—एक इबादत से पहले की नीयत दुरुस्त रखे। अल्लाह ही के वास्ते वह काम करे, नफ़्स की कोई ग़रज़ न हो। दूसरे इबादत के वक़्त कि कम–हिम्मती न हो। जिस तरह इबादत का हक़ है, उसी तरह अदा करे। तीसरी इबादत के बाद कि उसको किसी के सामने ज़िक्र न करे।

तीसरा मौक़ा गुनाह का वक़्त है। उस वक़्त का सब्र यह है कि नफ़्स को गुनाह से रोके।

चौथा मौक़ा वह वक़्त है कि उस शख़्स को कोई मख़्लूक़ तक्लीफ़ पहुंचाए, बुरा–भला कहे। उस वक़्त का सब्र यह है कि बदला न ले, ख़ामोश हो जाए।

पांचवां मौक़ा मुसीबत, बीमारी, माल के नुक़्सान या किसी क़रीबी अज़ीज़ के मर जाने का है। उस वक़्त का सब्र यह है कि ज़ुबान से शरअ के ख़िलाफ़ कलमा न कहे बयान करके न रोये। तरीक़ा सब क़िस्म के सब्रों का यह है कि इन सब मौक़ों के सवाब को याद कर ले और समझे कि ये सब बातें मेरे फ़ायदे के वास्ते हैं और सोचे कि बे–सब्री करने से तक़्दीर तो टलती नहीं, ना–हक़ सवाब भी क्यों खोया जाए।

शुक्र और उसका तरीक़ा

अल्लाह तआला की नेमतों से ख़ुश होकर, अल्लाह तआला की मुहब्बत दिल में पैदा होना और उस मुहब्बत से यह शौक़ होना कि जब वह हमकों ऐसी–ऐसी नेमतें देते हैं, तो उनकी ख़ूब इबादत करो और ऐसी नेमत देने वाले की ना–फ़रमानी बड़े शर्म की बात है। यह खुलासा है शुक्र का। यह ज़ाहिर है कि बंदे पर हर वक़्त अल्लाह तआला की हज़ारों नेमतें हैं। अगर कोई मुसीबत भी है, तो उसमें भी बंदे का फ़ायदा है, तो वह भी नेमत[1] है। जब हर वक़्त नेमत है, तो हर वक़्त दिल में यह खुशी और मुहब्बत रहना चाहिए कि कभी अल्लाह तआला के हुक्म बजा लाने में कमी न करनी चाहिए। तरीक़ा उसका यह है कि अल्लाह तआला की नेमतों को याद करे और सोचा करे।

अल्लाह पर भरोसा रखना और उसका तरीक़ा

यह हर मुसलमान को मालूम है कि अल्लाह तआला के इरादे के अलावा न कोई नफ़ा दे सकता है, न नुक़्सान पहुंचा सकता है। इसलिए ज़रूरी हुआ कि जो काम करे, अपने उपाय पर भरोसा न करे, नज़र अल्लाह तआला पर रखे और किसी मख़्लूक़ से ज़्यादा उम्मीद न रखे, न किसी से ज़्यादा डरे। यह समझ ले कि ख़ुदा के चाहने के अलावा कोई कुछ नहीं कर सकता। इसको भरोसा और तवक्कुल कहते हैं। तरीक़ा इसका वही है कि अल्लाह तआला की क़ुदरत और हिक्मत को और मख़्लूक़ को ना–चीज़ होने को ख़ूब सोचे और याद करे।

1. क्योंकि उस पर सब्र करने से अज़ाब भी होता है और नफ़्स का सुधार भी होता है कि वह ज़लील होता है और कभी कोई अच्छा–सा बदला दुनिया में भी मिल जाता है।

अल्लाह से मुहब्बत और उसका तरीक़ा

अल्लाह तआला की तरफ़ दिल का खिंचना और अल्लाह की बातों को सुनकर और उनके कामों को देखकर दिल को मज़ा आना, यह मुहब्बत है। तरीक़ा इसका यह है कि अल्लाह तआला का नाम बहुत ज़्यादा पढ़ा करे और उसकी ख़ूबियों को याद किया करे और उनको जो बंदों के साथ मुहब्बत है, उसको सोचा करे।

अल्लाह के हुक्म पर राज़ी रहना और उसका तरीक़ा

जब मुसलमान को यह मालूम है कि अल्लाह तआला की तरफ़ से जो कुछ होता है, सब में बंदे का फ़ायदा और सवाब है, तो हर बात पर राज़ी रहना चाहिए, न घबराये, न शिकायत--हिकायत करे। तरीक़ा इसका इसी बात को सोचना है कि जो कुछ होता है, सब बेहतर है।

सच्ची नीयत और उसका तरीक़ा

दीन का जो काम करे उसमें कोई दुनिया का मतलब न हो, न तो दिखलावा हो, न ऐसा कोई मतलब हो, जैसे किसी के पेट में बोझ हो, उसने कहा, लाओ रोज़ा रख लें, रोज़े का रोज़ा हो जाएगा और पेट हल्का हो जाएगा या नमाज़ के वक़्त पहले से वुज़ू हो, मगर गर्मी भी है, इसलिए ताज़ा वुज़ू कर लिया कि वुज़ू भी ताज़ा हो जाएगा और हाथ–पांव भी ठंडे हो जायेंगे या किसी मांगने वाले को कुछ दिया कि उसके तक़ाज़े से जान बची और यह बला टली। ये सब बातें सच्ची नीयत के ख़िलाफ़ हैं। तरीक़ा इसका यह है कि काम करने से पहले ख़ूब सोच लिया करे। अगर किसी ऐसी बात का उसमें मेल पाये, उससे दिल को साफ़ कर ले।

दिल से खुदा का ध्यान रखना और उसका तरीक़ा

दिल से हर वक़्त ध्यान रखे कि अल्लाह तआला को मेरे सब हालों की ख़बर है, ज़ाहिर की भी और दिल की भी। अगर बुरा काम होगा या बुरा ख़्याल लाया जाएगा, शायद अल्लाह तआला दुनिया में या आख़िरत में सज़ा दें। दूसरे इबादत के वक़्त यह ध्यान जमाये कि वह मेरी इबादत को देख रहे हैं, अच्छी तरह बजा लेना चाहिए। तरीक़ा इसका यही है कि कसरत से हर वक़्त यह सोचा करे, थोड़े दिनों उसका ध्यान बंध जाएगा, फिर इन्शाअल्लाह तआला इससे कोई बात अल्लाह तआला की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ न होगी।

क़ुरआन मजीद पढ़ने में दिल लगाने का तरीक़ा

क़ायदा है कि अगर कोई किसी से कहे कि हम को थोड़ा–सा क़ुरआन सुनाओ, देखें कैसी पढ़ती हो, तो उस वक़्त जहां तक हो सकता है, ख़ूब बनाकर सवार कर संभाल कर पढ़ती हो। अब यों किया करो कि जब क़ुरआन पढ़ने का इरादा किया करो, पहले दिल में यह सोच लिया करो कि गोया अल्लाह तआला ने हम से फ़रमाइश की है कि हम को सुनाओ कैसा पढ़ती हो और यों समझो कि अल्लाह ख़ूब सुन रहे हैं और यों ख़्याल करो कि जब आदमी के कहने से बना–संवार कर पढ़ते हैं, तो अल्लाह तआला के फ़रमाने से जो पढ़ते हैं तो उसको ख़ूब ही संभाल–संभाल कर पढ़ना चाहिए। यह सब बातें अब सोचकर पढ़ना शुरू करो और जब तक पढ़ती रहो, यही बातें ख़्याल में रखो और पढ़ने में बिगाड़ होने लगे या दिल इधर–उधर बटने लगे, तो थोड़ी देर के लिए पढ़ना रोक करके

इन बातों को सोचो और फिर ताज़ा करो। इन्शाअल्लाह तआला इस तरीके से सही और साफ़ भी पढ़ा जाएगा और दिल भी इधर मुतवज्जह रहेगा। अगर एक मुद्दत तक इसी तरह पढ़ोगी, तो फिर आसानी से दिल लगने लगेगा।

नमाज़ में दिल लगाने का तरीक़ा

इतनी बात याद रखो कि नमाज़ में कोई काम, कोई पढ़ना, बे-इरादे न हो, बल्कि हर बात इरादे और सोच में हो, जैसे 'अल्लाहु अक्बर' कह कर जब खड़ी हो तो हर लफ़्ज़ पर यों सोचो कि मैं अब 'सुब्हानकल्लाहुम्म' पढ़ रही हूं। फिर सोचों कि अब 'व बिहम्दिक' कह रही हूं। फिर ध्यान करो कि अब 'व तबारकस्मुक' मुंह से निकल रहा है। इसी तरह हर लफ़्ज़ पर अलग-अलग ध्यान और इरादा करो। अल्हम्दु और सूरः में यों ही करो। फिर रूकूअ में इसी तरह हर बार 'सुब्हान रब्बियल् अज़ीम' को सोच-सोच कर कहो, ग़रज़ मुंह में से जो निकालो, ध्यान भी उधर रखो। सारी नमाज़ में यही तरीक़ा रखो। इन्शाअल्लाहु तआला इस तरह करने से नमाज़ में किसी तरफ़ ध्यान न बटेगा, फिर थोड़े दिनों में आसानी से जी लगने लगेगा और नमाज़ में मज़ा आयेगा।

पीरी-मुरीदी का बयान

मुरीद बनने में कई फ़ायदे हैं—

फ़ायदा न० 1—यह कि दिल संवारने के तरीक़े जो ऊपर बयान किए गए हैं, उनके बर्ताव करने में कभी कम-समझी से ग़लती हो जाती है। पीर उसका ठीक रास्ता बतला देता है।

फ़ायदा न० 2—यह है कि किताब में पढ़ने में कभी-कभी इतना असर नहीं होता, जितना पीर के बतलाने से होता है। एक तो उसकी बरकत होती है, फिर यह भी डर होता है कि अगर कोई नेक काम में कमी की या कोई बुरी बात की, पीर से शर्मिन्दगी हुई।

फ़ायदा न० 3—यह कि पीर से अक़ीदत और मुहब्बत हो जाती है और यों जी चाहता है कि जो इसका तरीक़ा है, हम भी उसके मुताबिक़

चलें।

फ़ायदा न० 4—यह है कि अगर पीर नसीहत करने में सख़्ती या गुस्सा करता है तो ना—गवार नहीं होता। फिर इस नसीहत पर अमल करने की ज़्यादा कोशिश की जाती है। और भी कुछ फ़ायदे हैं, जिन पर अल्लाह तआला की मेहरबानी होती है। अगर मुरीद होने का इरादा हो, तो पहले पीर में यह बातें देख लो। जिसमें ये बातें न हो, उससे मुरीद न हो एक ये कि वह पीर दीन के मस्अले जानता हो, शरअ को जानता हो। दूसरे यह कि उसमें कोई बात शरअ के ख़िलाफ़ न हो। जो अक़ीदें तुमने इस किताब के पहले हिस्से में पढ़े हैं, वैसे उसके अक़ीदें हों। जो—जो मस्अले और दिल के संवारने के तरीक़े तुमने इस किताब में पढ़े हैं, कोई बात उसमें उनके ख़िलाफ़ न हो। तीसरे कमाने—खाने के लिए पीरी—मुरीदी न करता हो। चौथे किसी ऐसे बुज़ुर्ग का मुरीद हो, जिसको अक्सर अच्छे लोग बुज़ुर्ग समझते हों। पांचवें उस पीर को भी अच्छे लोग अच्छा कहते हों। छठे उसकी तालिम में यह असर हो कि दीन की मुहब्बत और शौक़ पैदा हो जाए। यह बात उसके और मुरीदों का हाल देखने से मालूम हो जाएगी। अगर दस मुरीदों में पांच—छः मुरीद भी अच्छे हों, तो समझो कि यह पीर तासीर वाला है और एक—आध मुरीद के बुरा होने से शुबहा मत करो और तुमने जो सुना होगा कि बुज़ुर्गों में तासीर होती है, वह तासीर यही है और दूसरी तासीरों को मत देखना कि वे जो कुछ कह देते हैं, उसी तरह होता है। वह एक 'छू' कर देते हैं, तो बीमारी जाती रहती हैं, वे जिस काम के लिए तावीज़ देते हैं, वह काम मर्ज़ी के मुताबिक़ हो जाता है। वह ऐसी तवज्जोह देते हैं कि आदमी लोट—पोट हो जाता है। इन तासीरों से कभी धोखा मत खाना। सातवें उस पीर में यह बात हो कि दीन को नसीहत करने में मुरीदों का ख़्याल न करता हो। बे—जा बात से रोक देता हो। जब कोई ऐसा पीर मिल जाए तो अगर तुम कुंवारी हो, तो मां—बाप से पूछकर और अगर तुम्हारी शादी हो गई है, तो शौहर से पूछकर अच्छी नीयत से, ख़ालिस दीन के दुरूस्त करने की नीयत से मुरीद हो जाओ और अगर ये लोग किसी मस्लहत से इजाज़त न दें, तो मुरीद होना फ़र्ज़ तो है नहीं, मुरीद मत बनो, हां, दीन की राह पर चलना फ़र्ज़ है। बिना मुरीद हुए भी उस राह पर चलती रहो।

पीरी–मुरीदी से मुताल्लिक़ कुछ बातों की तालीम

तालीम 1—पीर का ख़ूब अदब रखे। अल्लाह तआला का नाम लेने का तरीक़ा वह जिस तरह बतलाये, उसको निबाहे। उसके बारे में यों सोचे कि मुझको जितना फ़ायदा दिल के ठीक करने का इससे पहुंच सकता है, उतना उस ज़माने के किसी बुज़ुर्ग[1] से नहीं पहुंच सकता।

तालीम 2—अगर मुरीद का दिल अभी अच्छी तरह नहीं संवरा था कि पीर का इंतिक़ाल हो गया, तो दूसरे कामिल पीर से, जिसमें ऊपर की सब बातें हों, मुरीद हो जाए।

तालीम 3—किसी किताब में कोई वज़ीफ़ा या कोई फ़क़ीरी की बात देखकर अपनी अक़्ल से कुछ न करे, पीर से कुछ ले और जो कोई नयी बात भली या बुरी मन में आये या किसी बात का इरादा पैदा हो, पीर से पूछ ले।

तालीम 4—पीर से बे–पर्दा न हो और मुरीद होने के वक़्त उसके हाथ में हाथ न दे। रूमाल या किसी और कपड़े से या ख़ाली ज़ुबान से मुरीदी दुरूस्त है।

तालीम 5—अगर ग़लती से शरअ के ख़िलाफ़ किसी पीर से मुरीद हो जाए या पहले वह शख़्स अच्छा था, अब बिगड़ गया तो मुरीदी तोड़ डाले और किसी अच्छे बुज़ुर्ग से मुरीद हो जाए, लेकिन अगर कोई हल्की–सी बात कभी–कभार पीर से हो जाए, तो यों समझो कि आख़िर यह भी आदमी है, फ़रिश्ता तो है नहीं, इससे ग़लती हो गयी, तो तौबा से माफ़ हो सकती है। ज़रा–ज़रा सी बात से एतक़ाद ख़राब न करे, हां, अगर वह बे–जा बात पर जम जाए तो फिर मुरीदी तोड़ डाले।

तालीम 6—पीर को यों समझना गुनाह है कि उसको हर वक़्त सब हाल मालूम है।

---

1. लेकिन किसी बुज़ुर्ग की तौहीन हरगिज़ न करे।

तालीम 7—फ़क़ीरी की जो ऐसी किताबें हैं कि उसका ज़ाहिरी मतलब शरअ के ख़िलाफ़ है, ऐसी किताबें कभी न देखे। इसी तरह जो शेर–अश्आर शरअ के ख़िलाफ़ हैं, उनको कभी ज़ुबान से न पढ़े।

तालीम 8—कुछ फ़क़ीर कहा करते हैं कि शरअ का रास्ता और है और फ़क़ीरी का रास्ता और है, ये फ़क़ीर गुमराह हैं, इनको झूठा समझना फ़र्ज़ है।

तालीम 9—अगर पीर कोई बात शरअ के ख़िलाफ़ बतलाये, उस पर अमल दुरूस्त नहीं, अगर वह उस पर हठ करे तो उससे मुरीदी तोड़ दे।

तालीम 10—अगर अल्लाह तआला का नाम लेने की बरकत से दिल में कोई अच्छी हालत पैदा हो या अच्छे ख़्वाब नज़र आएं या जागते में कोई आवाज़ या रोशनी मालूम हो, तो बजुज़ अपने पीर के किसी से ज़िक्र न करे, न कभी अपने वज़ीफ़ों और इबादत का किसी से इज़्हार करे, क्योंकि ज़ाहिर करने से वह दौलत जाती रहती है।

तालीम 11—अगर पीर ने कोई वज़ीफ़ा या ज़िक्र बतलाया और कुछ मुद्दत तक उसका असर या मज़ा दिल पर कुछ मालूम न हो, तो उससे तंगदिल या पीर से बद–एतक़ाद न हो, बल्कि यों समझे कि बड़ा असर यही है कि अल्लाह तआला का नाम लेने का दिल में इरादा पैदा होता है और इस नेक काम की तौफ़ीक़ होती है। ऐसे असर का कभी दिल में ख़्याल न लाये कि मुझको ख़्वाब में बुज़ुर्गों की ज़ियारत हुआ करे, मुझको होने वाली बातें मालूम हो जाया करें, मुझको ख़ूब रोना आया करे, मुझको इबादत में ऐसी बेहोशी हो जाए कि दूसरी चीज़ों की ख़बर ही न रहे। कभी–कभी ये बातें भी हो जाया करती हैं और कभी नहीं होतीं। अगर हो जाएं तो अल्लाह तआला का शुक्र बजा लाये और अगर न हों या होकर कम हो जाएं या जाती रहें, तो ग़म न करे, हां, ख़ुदा न करे अगर शरअ की पाबंदी में कमी होने लगे, या गुनाह होने लगें यह बात ज़रूर ही ग़म की है, जल्दी हिम्मत करके अपनी हालत ठीक कर ले और पीर को इत्तिला दे और वह जो बतलाये, उस पर अमल करे।

तालीम 12—दूसरे बुज़ुर्गों की या दूसरे ख़ानदान की शान में गुस्ताख़ी न करे और न दूसरी जगह के मुरीदों से यों कहे कि हमारे पीर तुम्हारे पीर या हमारा ख़ानदान तुम्हारे ख़ानदान[1] से बढ़कर है। इन

---

1. पीरों के बहुत से ख़ानदान हैं, जैसे चिश्ती, क़ादरी, नक़्शबंदी, सुहरावर्दी वग़ैरह।

बेकार की बातों से दिल में अन्धेरा पैदा होता है।

तालीम 13—अगर अपनी किसी पीर बहन पर पीर की मेहरबानी ज़्यादा हो या उसको वज़ीफ़ा व ज़िक्र से ज़्यादा फ़ायदा हो, तो उस पर जले नहीं।

मुरीद को, बल्कि हर मुसलमान को इस तरह रात–दिन रहना चाहिए

1. ज़रूरत के मुताबिक़ दीन का इल्म हासिल करे, चाहे किताब पढ़कर या आलिमों से पूछताछ कर।

2. सब गुनाहों से बचे।

3. अगर कोई गुनाह हो जाए, तुरन्त तौबा करे।

4. किसी का हक़ न रखे। किसी को जुबान से या हाथ से तक्लीफ़ न दे। किसी की बुराई न करे।

5. माल की मुहब्बत और नाम की ख़्वाहिश न रखे, न बहुत अच्छे खाने–कपड़े की चिन्ता में रहे।

6. अगर उसकी ख़ता पर कोई टोके, अपनी बात न बनाये, तुरन्त इक़रार और तौबा कर ले।

7. सख़्त ज़रूरत के बग़ैर सफ़र न करे। सफ़र में बहुत–सी बात असावधानी की होती हैं, बहुत से नेक काम छूट जाते हैं, वज़ीफ़ों में ख़लल पड़ जाता है, वक़्त पर कोई काम नहीं होता।

8. बहुत न हंसे, बहुत न बोले, ख़ास कर ना–महरम से बे–तकल्लुफ़ी की बातें न करे।

9. किसी से झगड़ा–तक्रार न करे।

10. शरअ का हर वक़्त ख़्याल रखे।

11. इबादत में सुस्ती न करे।

12. ज़्यादा वक़्त तन्हाई में रहे।

13. अगर औरतों से मिलना–जुलना पड़े, तो सबसे नर्म होकर रहे, सबकी सेवा करे, बड़ाई न जतलाये।

14. और अमीरों से तो बहुत ही कम मिले।

15. बद-दीन आदमी से दूर भागे।

16. दूसरों का ऐब न ढूंढे और किसी पर बद-गुमानी न करे, अपने ऐबों को देखा करे और उनको सुधारा करे।

17. नमाज़ को अच्छी तरह, अच्छे वक़्त, दिल से पाबंदी के साथ अदा करने का बहुत ध्यान रखे।

18. दिल या ज़ुबान से हर वक़्त अल्लाह की याद में रहे, किसी वक़्त ग़ाफ़िल न हो।

19. अगर अल्लाह तआला के नाम में मज़ा आये, दिल खुश हो, तो अल्लाह तआला का शुक्र बजा लाये।

20. बात नर्मी से करे।

21. सब कामों के लिए वक़्त मुक़र्रर कर ले, और उसको पाबंदी से निबाहे।

22. जो कुछ रंज व ग़म और नुक़्सान पेश आये, अल्लाह तआला की तरफ़ से जाने, परेशान न हो और यों समझे की कि इसमें मुझको सवाब मिलेगा।

23. हर वक़्त दिल में दुनिया का हिसाब-किताब और दुनिया के कामों का ज़िक्र-मज़्कूर न रखे, बल्कि अल्लाह ही का ख़्याल भी रखे।

24. जहां तक हो सके, दूसरों को फ़ायदा पहुंचाये, भले दुनिया को हो या दीन का।

25. खाने-पीने में न इतनी कमी करे कि कमज़ोर या बीमार हो जाए, न इतनी ज़्यादती करे कि इबादत में सुस्ती होने लगे।

26. अल्लाह तआला के सिवा किसी से लालच न करे, न किसी की तरफ़ ख़्याल दौड़ाए कि फ़्लानी जगह से हमको यह फ़ायदा हो जाए।

27. अल्लाह तआला की खोज में बे-चैन रहे।

28. नेमत थोड़ी हो या बहुत, शुक्र बजा लाये और फ़क़ व फ़ाक़ा से दिल तंग न हो।

29. जो उसी प्रजा हैं, उनके ख़ता व क़ुसूर छोड़ जाए।

30. किसी का ऐब मालूम हो जाए तो उसको छिपाए, हां, अगर, कोई किसी को नुक़्सान पहुंचाना चाहता है और तुमको मालूम हो जाए, तो उस शख़्स से कह दो।

31. मेहमानों और मुसाफ़िरों और ग़रीबों और आलिमों और दरवेशों की सेवा करे।

32. नेक सोहबत अपनाये।

33. हर वक़्त अल्लाह तआला से डरा करे। 34. मौत को याद रखे।

35. किसी वक़्त बैठकर रोज़ के रोज़ अपने दिनभर के कामों को सोचा करे, जो नेकी याद आये, उस पर शुक्र करे, गुनाह पर तौबा करे।

36. झूठ हरगिज़ न बोले।

37. जो महफ़िल शरअ के ख़िलाफ़ हो, वहां हरगिज़ न जाए।

38. शर्म व हया और बुर्दबारी से रहे।

39. इन बातों पर घमंड न हो कि मेरे अन्दर ऐसी–ऐसी ख़ूबियां हैं।

40. अल्लाह तआला से दुआ करे कि नेक राह पर क़ायम रखें।

रसूलुल्लाह सल्ल० की हदीसों से कुछ कामों के सवाब का और बुरी बातों के अज़ाब का बयान, ताकि नेकियों से लगाव हो और बुराइयों से घिन हो

नीयत ख़ालिस रखना

1. एक शख़्स ने पुकार कर पूछा, ऐ अल्लाह के रसूल सल्ल० ! ईमान क्या चीज़ है ? आपने फ़रमाया कि नीयत को ख़ालिस करना।

फ़—मतलब यह है कि जो काम करे, खुदा के वास्ते करे।

2. फ़रमाया अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कि सारे काम नीयत के साथ हैं।

फ़—मतलब यह कि अच्छी नीयत हो तो नेक काम पर सवाब मिलता है, वरना नहीं मिलता।

सुनावे और दिखावे के वास्ते कोई काम करना

3. फ़रमाया अल्लाह के रसूल सल्ल० ने, जो शख़्स सुनाने के वास्ते

कोई काम करे, अल्लाह तआला कियामत में उसके ऐब सुनवाएंगे और जो शख़्स दिखलाने के वास्ते कोई काम करे अल्लाह तआला कियामत में उसके ऐब दिखलाएंगे।

4. और फ़रमाया है अल्लाह के रसूल सल्ल० ने, थोड़ा-सा दिखलावा भी एक तरह का शिर्क है।

क़ुरआन व हदीस के हुक्म पर चलना

5. फ़रमाया अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने, जिस वक़्त मेरी उम्मत में दीन का बिगाड़ पड़ जाए, उस वक़्त जो आदमी मेरे तरीक़े को थामे रहे, उसको सौ शहीदों के बराबर सवाब मिलेगा और फ़रमाया अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कि मैं तुम लोगों में ऐसी चीज़ छोड़े जाता हूं कि अगर तुम उसको थामे रहोगे, तो कभी न भटकोगे। एक तो अल्लाह की किताब यानी क़ुरआन, दूसरे नबी सल्ल० की सुन्नत यानी हदीस।

नेक काम की राह निकालना या बुरी बात की बुनियाद डालना

6. फ़रमाया अल्लाह के रसूल सल्ल० ने जो शख़्स नेक राह निकाले, फिर और लोग उस पर चलें तो उस शख़्स को ख़ुद उसका सवाब भी मिलेगा और जितनों ने उसकी पैरवी की है, उन सब के बराबर भी उसको सवाब मिलेगा और उनके सवाब में भी कमी न होगी और जो शख़्स बुरी राह निकाले, फिर और लोग उस राह पर चलें तो उस शख़्स को ख़ुद उसका भी गुनाह होगा और जितनों ने उसकी पैरवी की है, उन सब के बराबर भी उसको गुनाह होगा और उसके गुनाह में भी कमी न होगी।

फ़—जैसे किसी ने अपनी औलाद की शादी में रस्में रोक दीं या किसी बेवा ने निकाह कर लिया और उसकी देखा-देखी औरों को भी हिम्मत हुई तो इस शुरू करने वाली को हमेशा सवाब हुआ करेगा।

दीन का इल्म ढूंढ़ना

7. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जिस शख़्स के साथ अल्लाह तआला भलाई करना चाहते हैं, उसको दीन की समझ देते हैं।

फ़—यानी मस्अले–मसाइल की तलाश और शौक़ उसको हो जाता है।

दीन का मस्अला छिपाना

8. फ़रमाया अल्लाह के रसूल सल्ल० ने, जिससे कोई दीन की बात पूछी जाए और वह उसको छिपा ले तो क़ियामत के दिन उसको आग की लगाम पहनायेगी।

फ़—अगर तुमसे कोई मस्अला पूछा करे और तुमको ख़ूब याद हो, तो सुस्ती और इन्कार मत किया करो, अच्छी तरह समझा दिया करो।

मस्अला जान कर अमल न करना

9. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जिस क़दर इल्म होता है, वह इल्म वाले पर वबाल होता है, उस आदमी के अलावा, जो उसके मुताबिक़ अमल करे।

फ़—देखो कभी बिरादरी के ख़्याल से या नफ़्स की पैरवी से मस्अले के ख़िलाफ़ न करना।

पेशाब से एहतियात न करना

10. फ़रमाया अल्लाह के रसूल सल्ल० ने, पेशाब से ख़ूब एहतियात रखा करो, क्योंकि अक्सर क़ब्र का अज़ाब इसी से होता है।

वुज़ू और गुस्ल में ख़ूब ख़्याल से पानी पहुंचाना

11. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जिन हालतों में नफ़्स को नागवार हो, ऐसी हालत में अच्छी तरह वुज़ू करने से गुनाह धुल जाते हैं।

फ़—नागवारी कभी सुस्ती से होती है, कभी सर्दी से।

मिस्वाक करना

12. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, दो रक्अतें मिस्वाक करके पढ़ना उन सत्तर रक्अतों से अफ़ज़ल हैं, जो बे-मिस्वाक किए पढ़ी जाएं।

वुज़ू में अच्छी तरह पानी न पहुंचाना

13. अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कुछ लोगों को देखा कि वुज़ू कर चुके थे, मगर एड़ियां कुछ सूखी रह गयीं थीं, तो आपने फ़रमाया, बड़ा अज़ाब है, एड़ियों को दोज़ख़ का।

फ़—अंगूठी, छल्ला, चूड़ियां, छड़े अच्छी तरह हिला कर पानी पहुंचाया करो और जाड़ों में अक्सर पांव सख़्त हो जाते हैं, ख़ूब पानी से तर किया करो और कुछ औरतें मुंह सामने-सामने से धो लेती हैं, कानों तक नहीं धोतीं, इन सब बातों का ख़्याल रखो!

औरतों का नमाज़ के लिए बाहर निकलना

14. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने औरतों के लिए सबसे अच्छी मस्जिद उनके घरों के अन्दर का दर्जा है।

फ़—मालूम हुआ कि मस्जिद में औरतों का जाना अच्छा नहीं, इससे यह भी समझो कि नमाज़ के बराबर कोई चीज़ नहीं। जब उसके लिए घर से निकलना अच्छा नहीं समझा गया, तो फ़िज़ूल मिलने-मिलाने या रस्मों को पूरा करने को घर से निकलना तो कितना बुरा होगा।

नमाज़ की पाबंदी

15. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि पांचों नमाज़ों की मिसाल ऐसी है कि जैसे किसी के दरवाज़े के सामने एक गहरी नहर बहती हो और वह उसमें पांच वक़्त नहाया करे।

फ़—मतलब यह है कि जैसे उस शख़्स के बदन पर ज़रा मैल न रहेगा, उसी तरह जो शख़्स पांचों वक़्त की नमाज़ पाबंदी से पढ़े, उसके

सारे गुनाह धुल जाते हैं।

16. और फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि क़ियामत के दिन बंदे से सबसे पहले नमाज़ का हिसाब होगा।

अव्वल वक़्त नमाज़ पढ़ना

17. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि अव्वल वक़्त नमाज़ पढ़ने में अल्लाह तआला को ख़ुशी होती है।

फ़—बीबियों ! तुमको जमाअत में जाना तो है नहीं, फिर क्यों देर किया करती हो ?

नमाज़ को बुरी तरह पढ़ना

18. फ़रमाया रसुलुल्लाह सल्ल० ने, जो शख़्स बे–वक़्त नमाज़ पढ़े और वुज़ू अच्छी तरह न करे और जी लगाकर न पढ़े और रूकूअ व सज्दा अच्छी तरह न करे, तो वह नमाज़ काली, बे–नूर होकर रह जाती है और यों कहती है कि ख़ुदा तुझे बर्बाद करे, जैसा तूने मुझे बर्बाद किया, यहां तक कि जब अपनी जगह पर पहुंचती है, जहां अल्लाह को मंज़ूर हो तो पुराने कपड़े की तरह लपेट कर उस नमाज़ी के मुंह पर मारी जाती है।

फ़—बीबियो ! नमाज़ तो इसी वास्ते पढ़ती हो कि सवाब हो, फिर इस तरह क्यों पढ़ती हो कि और उल्टा गुनाह हो ?

नमाज़ में ऊपर या इधर–उधर देखना

19. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि तुम नमाज़ में ऊपर मत देखो करो, कभी तुम्हारी निगाह छीन ली जाए।

20. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जो शख़्स नमाज़ में खड़े होकर इधर–उधर देखे, अल्लाह तआला उसकी नमाज़ को उसी पर उल्टा देते हैं।

फ़—यानी क़ुबूल नहीं करते।

नमाज़ पढ़ने के सामने से निकल जाना

21. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, अगर नमाज़ी के सामने से गुज़रने वाले को ख़बर होती कि कितना गुनाह होता है तो चालीस वर्ष तक खड़ा रहना उसके नज़दीक बेहतर होता, सामने से निकलने से।

फ़—लेकिन अगर नमाज़ी के सामने एक हाथ के बराबर या उससे ज़्यादा कोई चीज़ खड़ी हो तो उस चीज़ के सामने से गुज़रना दुरूस्त है।

नमाज़ को जान कर क़ज़ा कर देना

22. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने जो शख़्स नमाज़ को छोड़ दे, वह जब अल्लाह तआला के पास जाएगा, तो अल्लाह तआला ग़ज़बनाक होंगे।

क़र्ज़ दे देना

23. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि मैंने मेराज की रात में बहिश्त के दरवाज़े पर लिखा हुआ देखा कि ख़ैरात का सवाब दस हिस्सा मिलता है और क़र्ज़ देने का सवाब अठारह हिस्सा।

ग़रीब क़र्ज़दार को मोहलत दे देना

24. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जब तक क़र्ज़ अदा करने के वायदे का वक़्त न आया हो, उस वक़्त तक अगर किसी ग़रीब को मोहलत दे, तब तो हर रोज़ ऐसा सवाब मिलता है जैसे उतना रूपया ख़ैरात दे दिया। और जब उसका वक़्त आ जाए और फिर मोहलत दी तो हर दिन ऐसा सवाब मिलता है जैसे उतने रूपए से दो गुना रूपया रोज़ाना ख़ैरात दिया।

क़ुरआन मजीद पढ़ना

25. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जो शख़्स क़ुरआन का एक हर्फ़

(अक्षर) पढ़ता है, उसको एक हर्फ़ पर एक नेकी मिलती है और एक नेकी का क़ायदा यह है कि उसके बदले दस हिस्से मिलते हैं और मैं अलिफ़–लाम– मीम को एक हर्फ़ नहीं कहता बल्कि अलिफ़ हर्फ़ है और लाम एक हर्फ़ है और मीम एक हर्फ़।

फ़—तो इस हिसाब से तीन हर्फ़ों पर तीस नेकियां मिलेंगी।

अपनी जान और औलाद को कोसना

26. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि न अपने लिए बद–दुआ करे और न अपनी औलाद के लिए और न अपने ख़िदमत करने वालों के लिए और न अपने माल–दौलत के लिए। कभी ऐसा न हो कि तुम्हारे कोसने के वक़्त कुबूल किये जाने की घड़ी हो कि उसमें अल्लाह तआला से जो मांगो, अल्लाह तआला वही कर दे।

हराम माल कमाना और उससे खाना–पीना

27. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जो गोश्त और ख़ून हराम माल से बढ़ा होगा, वह जन्नत में न जाएगा, दोज़ख़ ही उसके लायक़ है।

28. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जो शख़्स कोई कपड़ा दस दिरहम की ख़रीद ले और उसमें एक दिरहम हराम का हो, तो जब तक वह कपड़ा उसके बदन पर रहेगा, अल्लाह तआला उसकी नमाज़ कुबूल न करेंगे।

फ़—एक दिरहम चवन्नी से कुछ ज़्यादा होता है।

धोखा करना

29. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने जो शख़्स हम लोगों से धोखाबाज़ी करे, वह हम से बाहर है।

फ़—चाहे किसी चीज़ के बेचने में धोखा हो या और किसी मामले में, सब बुरा है।

क़र्ज़ लेना

30. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने जो शख़्स मर जाए और उसके

ज़िम्मे किसी का कोई दीनार या दिरहम रह गया हो, तो उसकी नकियों से पूरा किया जाएगा, जहां न दीनार होगा, न दिरहम।

फ़—दीनार सोने का दस दिरहम की क़ीमत का होता है।

31. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि क़र्ज़ दो तरह का होता है। जो शख़्स मर जाए और उसकी नीयत अदा करने की हो तो अल्लाह तआला फ़रमाता है कि मैं उसका मददगार हूं और जो शख़्स मर जाए और उसकी नीयत अदा करने की न हो, उस शख़्स की नेकियों से लिया जाएगा और उस दिन दीनार व दिरहम कुछ न होगा।

फ़—मददगार का मललब यह है कि मैं उसका बदला उतारूंगा।

हैसियत होते हुए भी किसी का हक़ टालना

32. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि हैसियत वालों का टालना जुल्म है।

फ़—जैसे कुछ लोगों की आदत होती है कि क़र्ज़ वाली को या जिस की मज़दूरी चाहिए उसकी ख़ामख़ाह दौड़ाते हैं, झूठे वायदे करते हैं कि कल आना। अपने सारे ख़र्च चले जाते हैं, मगर किसी का देने में बे–परवाही करती हैं।

सूद लेना या देना

33. रसूलुल्लाह सल्ल० ने सूद लेने वाली पर और सूद देने वाली पर लानत फ़रमायी है।

किसी की ज़मीन दबा लेना

34. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जो शख़्स बालिश्त भर ज़मीन भी ना–हक़ दबा ले, उसके गले में सातों ज़मीन का तौक़ डाला जाएगा।

मज़दूरी तुरन्त दे देना

35. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि मज़दूर को उसका पसीना

सूखने से पहले मज़दूरी दे दिया करो।

36. अल्लाह तआला फ़रमाते हैं कि तीन आदमियों पर मैं खुद दावा करूंगा। उन्हीं में से एक वह शख़्स भी है कि किसी मज़दूर को काम पर लगाया और उससे काम पूरा ले लिया और उसकी मज़दूरी न दी।

औलाद का मर जाना

37. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि जो दो मियां–बीवी मुसलमान हों और उनके तीन बच्चे मर जाएं, अल्लाह तआला अपनी मेहरबानी से उन दोनों को बहिश्त में दाख़िल करेंगे। कुछ लोगों ने पूछा, या रसूलुल्लाह सल्ल० ! अगर दो मरे हों ? आपने फ़रमाया, दो में भी यही सवाब है। फिर एक को पूछा। आपने एक में भी यही फ़रमाया, फिर आपने फ़रमाया कि मैं क़सम खाता हूं उस ज़ात की कि जिस हाथ में मेरी जान है कि जो हमल गिर गया हो, वह भी अपनी मां को आंवल नाल से पकड़ कर बहिश्त की तरफ़ खींचकर ले जाएगा, जबकि मां ने सवाब की नीयत की हो।

फ़—यानी सवाब का ख़्याल करके सब्र किया हो।

ग़ैर–मर्दों के सामने औरत का इत्र लगाना

38. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने औरत अगर इत्र लगाकर ग़ैर मर्दों के पास से गुज़रे तो वह ऐसी–ऐसी है यानी बद–कार है।

औरत का बारीक कपड़ा पहनना

39. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कुछ औरतें नाम को तो कपड़ा पहनती हैं और सच में नंगी हैं। ऐसी औरतें बहिश्त में न जाएंगी और न उसकी ख़ूश्बू सूंघने पाएंगी।

औरतों को मर्दों की सी शक्ल व सूरत बनाना

40. रसूलुल्लाह सल्ल० ने उस औरत पर लानत फ़रमायी है जो मर्दों का सा पहनावा पहने।

फ़—हमारे मुल्क में खड़ा जूता या अचकन मर्दों का पहनावा है। औरत को इन चीज़ों का पहनना हराम है।

शान दिखलाने को कपड़े पहनना

41. रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया कि जो कोई दुनिया में नाम और दिखावे के लिए कपड़ा पहने, अल्लाह उसको क़ियामत में ज़िल्लत का लिबास पहना कर उसमें दोज़ख़ की आग लगायेंगे।

फ़—मतलब यह कि जो इस नीयत से कपड़ा पहने कि मेरी ख़ूब शान बढ़े, सबकी निगाह मेरे ही ऊपर पड़े, औरतों में यह मर्ज़ बहुत है।

किसी पर ज़ुल्म करना

42. रसूलुल्लाह सल्ल० ने अपने पास बैठने वालों से पूछा कि तुम जानते हो, मुफ़्लिस[1] कैसा होता है। उन्होंने अर्ज़ किया, हममें मुफ़्लिस वह कहलाता है, जिसके पास धन–दौलत न हो। आपने फ़रमाया कि मेरी उम्मत में बड़ा मुफ़्लिस वह है कि क़ियामत के दिन नमाज़, रोज़ा, ज़कात सब लेकर आये, लेकिन उसके साथ यह भी है कि किसी को बुरा–भला कहा था और किसी को तोहमत लगायी थी और किसी का माल खा लिया था और किसी को मारा था और किसी का ख़ून किया था, तो उसकी कुछ नेकियां एक को मिल गयीं, कुछ दूसरे को मिल गयीं और अगर इन हक़ों के बदले अदा होने से पहले उसकी नेकियां ख़त्म हो चुकीं, तो इन हक़दारों के गुनाह लेकर उस पर डाल दिए जाएंगे और उसको दोज़ख़ में फेंक दिया जाएगा।

रहम करना

43. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जो आदमी आदमियों पर रहम न करे, अल्लाह उस पर रहम नहीं करता।

---

1. गरीब।

अच्छी बात दूसरों को बतलाना और बुरी बात से मना करना

44. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जो आदमी तुममें से कोई बात शरीअत के ख़िलाफ़ देखे तो उसको हाथ से मिटा दे और इतना बस न चले तो ज़ुबान से मना कर दे और अगर इसकी भी ताक़त न हो, तो दिल से बुरा समझे और दिल से बुरा समझना ईमान का हारा दर्जा है।

फ़—बीबियों ! अपने बच्चों और नौकरों पर तुम्हारा पूरा अख़्तियार है, उनको ज़बरदस्ती नमाज़ पढ़वाओ और अगर उनके पास कोई तस्वीर काग़ज़ की या मिट्टी की या चीनी की या कपड़े की देखो या कोई बेहूदा किताब देखो, तुरन्त तोड़–फ़ाड़ डालो। उनको ऐसी चीज़ों के लिए या आतशबाज़ी और कंकव्वे के लिए या दीवाली की मिठाई के खिलौने के लिए पैसे मत दो।

मुसलमान का ऐब छिपाना

45. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने जो आदमी अपने मुसलमान भाई का ऐब छिपाये अल्लाह तआला क़ियामत में उसके ऐब छिपायेंगे और जो आदमी मुसलमान का ऐब खोल दे अल्लाह तआला उसका ऐब खोल देंगे, यहां तक कि कभी उसको घर में बैठे फ़ज़ीहत कर देते हैं।

किसी की ज़िल्लत या नुक़्सान पर खुश होना

46. फ़रमाया अल्लाह के रसूल सल्ल० ने, अपने भाई मुसलमान की मुसीबत पर ख़ुशी ज़ाहिर मत करो। अल्लाह तआला उस पर रहम करेंगे और तुमको उसमें फंसा देंगे।

किसी को किसी गुनाह पर ताने देना

47. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जो शख़्स अपने भाई मुसलमान

को किसी गुनाह पर ग़ैरत दिला दे तो जब तक यह ग़ैरत दिलाने वाला उस गुनाह को न कर लेगा, उस वक़्त तक न मरेगा।

फ़—यानी गुनाह से उसने तौबा कर ली, फिर उसको याद दिला कर शर्मिन्दा करना बुरी बात है और अगर तौबा न की हो तो नसीहत के तौर पर कहना तो दुरुस्त है, लेकिन अपने आपको पाक समझकर या उस को रुस्वा करने के लिए कहना फिर भी बुरा है।

छोटे—छोटे गुनाह कर बैठना

48. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, ऐ आइशा ! छोटें गुनाहों से भी अपने आपको बहुत बचाओ, क्योंकि अल्लाह तआला की तरफ़ से उनकी पकड़ करने वाला भी मौजूद है।

फ़—यानी फ़रिश्ता उनको भी लिखता है, फिर क़ियामत में हिसाब होगा और अज़ाब का डर है।

मां—बाप का खुश रखना

49. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि अल्लाह तआला की ख़ुशी मां—बाप की ख़ुशी से है और अल्लाह तआला की नाराज़ी मां—बाप की नाराज़ी में है।

रिश्तेदारों से बद—सलूकी करना

50. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि हर जुमे की रात में तमाम आदमियों के अमल और इबादत अल्लाह के दरबार में पेश होते हैं। जो आदमी रिश्तेदार से बद—सुलूकी करे, उसका अमल क़ुबूल नहीं होता।

बे—बाप के बच्चों का पालना

51. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि मैं और जो आदमी यतीम का ख़र्च अपने ज़िम्मे रखे, जन्नत में इस तरह पास—पास रहेंगे और शहादत

की उंगली[1] और बीच की उंगली से इशारा करके बतलाया और दोनों में थोड़ा फ़ासला रहने दिया।

52. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जो आदमी यतीम के सर पर हाथ फेरे और सिर्फ़ अल्लाह ही के लिए फेरे, जितने बालों पर उसका हाथ गुज़रा है, उतनी नेकियां उसको मिलेंगी और जो आदमी किसी यतीम लड़की या लड़के के साथ एहसान करे जोकि उसके साथ रहता हो, तो मैं और वह जन्नत में ऐसे रहेंगे जैसे शहादत की उंगली और बीच की उंगली पास–पास हैं।

पड़ोसी को तक्लीफ़ देना

53. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जो आदमी अपने पड़ोसी को तक्लीफ़ दे, उसने मुझको तक्लीफ़ दी, उसने ख़ुदा को तक्लीफ़ दी और जो आदमी अपने पड़ोसी से लड़ा, वह मुझसे लड़ा और जो मुझसे लड़ा वह अल्लाह से लड़ा।

फ़—मतलब यह कि बे–वजह या हल्की–हल्की बातों पर उससे रंज व तकरार करना बुरा है।

मुसलमान का काम कर देना

54. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जो आदमी अपने भाई मुसलमान के काम में होता है, अल्लाह तआला उसके काम में होते हैं।

शर्म और बे–शर्मी

55. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, शर्म ईमान की बात है और ईमान जन्नत में पहुंचता है और बे–शर्मी बुरी आदत है, बुरी आदत दोज़ख़ में ले जाती है।

फ़—लेकिन दीन के काम में शर्म हरगिज़ मत करो, जैसे ब्याह के दिनों में या सफ़र में अक्सर औरतें नमाज़ नहीं पढ़तीं, ऐसी शर्म, बेशर्मी से भी बुरी है।

अच्छी आदत–बुरी आदत

56. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि अच्छी आदत गुनाहो को इस तरह पिघला देती है, जिस तरह पानी नमक के पत्थर को पिघला देता है और बुरी आदत इबादत को इस तरह ख़राब कर देती है जिस तरह सिरका शहद को ख़राब कर देता है।

57. और फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि तुम सब में मुझको ज़्यादा प्यारा और आख़िरत में ज़्यादा नज़दीकी वाला वह आदमी है जिसके अख़्लाक़ अच्छे हों। और तुममें ज़्यादा मुझको बुरा लगने वाला और आख़िरत में सबसे ज़्यादा मुझको दूर रहने वाला, वह आदमी है जिसके अख़्लाक़ बुरे हों।

नर्मी और रूखापन

58. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि बेशक अल्लाह तआला मेहरबान हैं और पसंद करते हैं नर्मी को और नर्मी पर ऐसी नेमतें देते हैं कि सख़्ती पर नहीं देते।

59. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि जो आदमी महरूम रहा नर्मी से, वह सारी भलाइयों से महरूम हो गया।

किसी घर में झांकना

60. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जब तक इजाज़त न ले ले, किसी के घर में झांक कर न देखे और अगर ऐसा किया तो यों समझों कि अन्दर ही चला गया।

फ़—कुछ औरतों को ऐसी शामत सवार होती है कि दूल्हा–दुल्हन को झांक–झांक कर देखती हैं, बड़ी बे–शर्मी की बात है। सच तो यह है कि झांकने में और किवाड़ खोलकर अन्दर जाने में क्या अन्तर है। बड़े गुनाह की बात है।

कान लगाना या बातें करने वालों के पास जा घुसना

61. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने जो आदमी किसी की बातों की तरफ़ कान लगाये, और वे लोग, ना–गवार समझें, क़ियामत के दिन उसके दोनों कानों में सीसा छोड़ा जाएगा।

गुस्सा करना

62. एक आदमी ने रसूलुल्लाह सल्ल० से अर्ज़ किया कि मुझको कोई ऐसा अमल बतलाइए, जो मुझको जन्नत में दाख़िल करे। आपने फ़रमाया, गुस्सा मत करना और तेरे लिए जन्नत है।

बोलना छोड़ना

63. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि किसी मुसलमान को हलाल नहीं कि अपने भाई मुसलमान के साथ तीन दिन से ज़्यादा बोलना छोड़ दे और जो तीन दिन से ज़्यादा बोलना छोड़ दे और इसी हालत में मर जाए, तो वह दोज़ख़ से जाएगा।

किसी को बे–ईमान कह देना या फिटकार डालना

64. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जो आदमी अपने भाई मुसलमान को काफ़िर कह दे, तो ऐसा गुनाह है, जैसे उसको क़त्ल कर दिया।

65. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि मुसलमान पर लानत करना ऐसा है कि उसको क़त्ल कर डालना।

66. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि जब कोई आदमी किसी पर लानत करता है, तो एक तो वह लानत आसमान की तरफ़ चढ़ती है, आसमान के दरवाज़े बंद कर लिए जाते हैं, फिर वह ज़मीन की तरफ़ उतरती है, वह बंद कर ली जाती है, फिर वह दाएं–बाएं फ़िरती है। जब

कोई ठिकाना नहीं पाती, तब उसके पास जाती है, जिस पर लानत की गयी थी। अगर वह इस लायक़ हो, तो ख़ैर, नहीं तो उसके कहने वाले पर पड़ती है।

फ़—कुछ औरतों को बहुत आदत है कि सब पर ख़ुदा की मार ख़ुदा की फिटकार किया करती हैं, किसी को बे–ईमान कह देती हैं, यह बड़ा गुनाह है, चाहे आदमी को कहे या जानवर को या और किसी चीज़ को।

किसी मुसलमान को डरा देना

67. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने हलाल नहीं किसी मुसलमान को कि दूसरे मुसलमान को डराये।

68. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने जो आदमी किसी मुसलमान की तरफ़ ना–हक़ किसी तरह निगाह फेर कर देखे कि वह डर जाए, अल्लाह तआला क़ियामत में उसको डरायेंगे।

फ़—अगर किसी ख़ता व क़ुसूर पर हो, तो ज़रूरत पर दुरूस्त है।

मुसलमान को उज़्र मान लेना

69. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जो आदमी अपने भाई मुसलमान के सामने उज़्र करे[1] और वह उसके उज़्र को क़ुबूल न करे, तो ऐसा आदमी मेरे पास हौज़े कौसर पर न आयेगा।

फ़—यानी अगर कोई तुम्हार क़ुसूर करे और फिर वह माफ़ करे तो माफ़ कर देना चाहिए।

ग़ीबत करना

70. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जो आदमी दुनिया में अपने मुसलमान भाई का मांस खायेगा यानी ग़ीबत करेगा, अल्लाह तआला क़ियामत के दिन मुर्दार मांस उसके पास लाएंगे और उससे कहा जाएगा कि जैसा तूने ज़िंदा को खाया था, अब मुर्दार को भी खा, तो वह आदमी

---

1. यानी मजबूरी बयान करे,

उसको खायेगा और नाक–भौं चढ़ाता जाएगा और गुल मचाता जाएगा।

चुगली खाना

71. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, चुग़ली खाने वाला जन्नत में न जाएगा।

किसी पर बोहतान लगाना

72. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने जो आदमी किसी मुसलमान को ऐसी बात लगाये, तो उसमें न हो, अल्लाह तआला उसको दोज़ख़ियों के लहू और पीप के जमा होने की जगह रहने को देंगे, यहां तक कि वह अपने कहे से बाज़ आये और तौबा कर ले।

कम बोलना

73. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने तो आदमी चुप रहता है, बहुत–सी आफ़तों से बचा रहता है।

74. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, सिवा अल्लाह के ज़िक्र के और बातें ज़्यादा मत किया करो, क्योंकि सिवा अल्लाह तआला के ज़िक्र के, बहुत बातें करना दिल को सख़्त कर देता है, और लोगों में सबसे ज़्यादा अल्लाह से दूर वह आदमी है, जिसका दिल सख़्त हो।

अपने आपको सबसे कम समझना

75. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जो आदमी अल्लाह तआला के वास्ते तवाज़ोअ[1] अख़्तियार करना है, अल्लाह तआला उसका रूत्बा बढ़ा देते हैं और जो आदमी घमंड करता है, अल्लाह उसकी गर्दन तोड़ देते हैं यानी ज़लील कर देते हैं।

1. नर्मी, पस्ती।

अपने आपको औरों से बड़ा समझना

76. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, ऐसा आदमी जन्नत में न जाएगा, जिसके दिल में राई के दाने के बराबर भी तकब्बुर होगा।

सच बोलना और झूठ बोलना

77. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने तुम सच बोलने के पाबंद रहो, क्योंकि सच बोलना नेकी की राह दिखलाता है और सच और नेकी दोनों जन्नत में ले जाते हैं और झूठ बोलने से बचा करो, क्योंकि झूठ बोलना बदी की रहा दिखलाता है और झूठ और बदी दोनों दोज़ख़ में ले जाते हैं।

हर एक के मुंह पर उसी की–सी बात कहना

78. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जिस आदमी के दो मुंह होंगे, क़ियामत में उसकी दो जुबान होंगी आग की।

फ़—दो मुंह होने का मतलब यह है कि उसके मुंह पर उसकी–सी कह दे और उसके मुंह पर उसकी–सी कह दी।

अल्लाह के सिवा किसी दूसरे की क़सम खाना

79. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जो आदमी अल्लाह तआला के सिवा किसी और की क़सम खाये, उसने कुफ़्र किया या यों फ़रमाया कि उसने शिर्क किया।

फ़—जैसे कुछ आदमियों की आदत होती है कि इस तरह क़सम खाते हैं, तेरी जान की क़सम ! अपने दीदों की क़सम ! अपने बच्चे की क़सम !, से सब मना हैं और एक हदीस में है कि अगर कभी कोई ऐसी क़सम मुंह से निकल जाए, तो तुरन्त कलमा पढ़ ले।

ऐसी क़सम खाना कि अगर मैं बोलूं तो ईमान नसीब न हो

80. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जो आदमी क़सम में इस तरह कहे कि मुझको ईमान नसीब न हो। अगर वह झूठा होगा, तब तो जिस तरह उसने कहा है, इसी तरह हो जाएगा और अगर सच्चा होगा तब भी ईमान पूरा न रहेगा।

फ़---इसी तरह यों कहना कि कलमा नसीब न हो या दोज़ख़ नसीब न हो, ये क़समें मना हैं। यह आदत छोड़ना चाहिए।

रास्ते में तक्लीफ़ पहुंचाने वाली चीज़ का हटा देना

81. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि एक आदमी चला जा रहा था। रास्ते में उसको एक कांटेदार टहनी पड़ी हुई मिली, उसने रास्ते से अलग कर दिया। अल्लाह तआला ने उस अमल की बड़ी क़द्र की और उसको बख़्श दिया।

फ़—इससे मालूम हुआ कि ऐसी चीज़ रास्ते में डालना बुरी बात है। कुछ बे–तमीज़ औरतों की आदत होती है, आंगन में पीढ़ी बिछाकर बैठती हैं, आप तो उठ खड़ी हुई और पीढ़ी वहीं छोड़ दी। कभी–कभी चलने वाले उसमें उलझकर गिर जाते हैं और मुंह–हाथ टूटता है। इसी तरह रास्ते में कोई बर्तन छोड़ देना या चारपाई या कोई लकड़ी या सिलबट्टा डालना बुरा है।

वायदा और अमानत पूरा करना

82. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जिसमें अमानत नहीं, उसमें ईमान[1] नहीं और जिसको वायदे का ध्यान नहीं, उसमें दीन नहीं।

1. यानी ऐसे लोगों का ईमान और दीन अधूरा है।

किसी पंडित या फ़ाल खोलने वाले या हाथ देखने वाले के पास जाना

83. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जो आदमी ग़ैब की बात बतलाने वाले के पास आये, और कुछ बातें पूछे और उसको सच्चा जाने, उस आदमी की चालीस दिन की नमाज़ कुबूल न होगी।

फ़—इसी तरह अगर किसी पर जिन्न–भूत का शुबहा हो जाता है, और कुछ औरतें उस जिन्न से ऐसी बातें पूछती हैं कि मेरे मियां की नौकरी कब लग जाएगी, मेरा बेटा कब आएगा, ये सब गुनाह की बातें हैं।

कुत्ता पालना या तस्वीर रखना

84. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जिस घर में कुत्ता या तस्वीर हो, उसमें फ़रिश्ते नहीं आते।

फ़—यानी रहमत के फ़रिश्ते नहीं आते। बच्चों के खिलौने जो तस्वीर वाले हों, वे भी मना हैं।

किसी मजबूरी के बग़ैर उल्टा लेटना

85. रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम एक आदमी के पास से गुज़रे, जो पेट के बल लेटा था। आपने उसको अपने पांव से इशारा किया और फ़रमाया कि इस तरह लेटने को अल्लाह तआला पसंद नहीं करते।

कुछ धूप में, कुछ साए में बैठना–लेटना

86. रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस तरह बैठने को मना फ़रमाया है कि कुछ धूप में और कुछ साए में हो।

टोना और टोटका

87. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, कि बद–शगूनी (टोना–टोटका) शिर्क है।

88. और फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि टोटका शिर्क है।

दुनिया का लालच न करना

89. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने दुनिया का लालच न करने से दिल को भी चैन होता है और बदन को भी आराम मिलता है।

90. और फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, कि अगर बहुत–सी बकरियों में दो ख़ूनी भेड़िए छोड़ दिए जाएं, तो उनको ख़ूब चीरें–फाड़ें–खायें तो बर्बादी इन भेड़ियों से भी उतनी नहीं पहुंचती, जितनी बर्बादी आदमी के दीन को इस बात से होती है कि माल का लालच करे और नाम चाहे।

मौत को याद रखना

91. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, इस चीज़ को बहुत याद किया करो कि जो सारी लज़्ज़तों को ख़त्म कर देगी यानी मौत।

92. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जब सुबह का वक़्त तुम पर आये, तो शाम के वास्ते सोच–विचार मत किया करो और जब शाम का वक़्त तुम पर आये, तो सुबह के वास्ते सोच–विचार मत किया करो और बीमारी आने से पहले अपनी ज़िंदगी के फल उठा लो।

फ़—मतलब यह है कि तंदुरुस्ती और ज़िंदगी को ग़नीमत समझो और नेक काम में इसको लगाये रखो, वरना बीमारी और मौत में फिर कुछ न हो सकेगा।

मुसीबत में सब्र करना

93. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, मुसलमान को जो दुख–मुसीबत–रंज पहुंचता है, यहां तक कि किसी सोच में जो थोड़ी सी परेशानी होती

है, उन सब में अल्लाह तआला उसके गुनाह माफ़ कर देते हैं।

बीमार को पूछना

94. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, एक मुसलमान दूसरे मुसलमान की बीमार पुरसी सुबह के वक़्त करे तो शाम तक उसके लिए सत्तर हज़ार फ़रिश्ते दुआ करते हैं और अगर शाम को करे, तो सुबह तक सत्तर हज़ार फ़रिश्ते दुआ करते हैं।

मुर्दे को नहलाना, कफ़न देना और घर वालों को तसल्ली देना

95. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जो आदमी मुर्दे को गुस्ल दे, तो गुनाहों[1] में ऐसा पाक हो जाता है, जैसे मां के पेट से पैदा हुआ हो और जो किसी मुर्दे पर कफ़न डाले, तो अल्लाह तआला उसको जन्नत का जोड़ा पहनायेंगे और जो किसी ग़म के मारे को तसल्ली करे, अल्लाह तआला उसको परहेज़गारी का लिबास पहनायेंगे और उसकी रूह पर रहमत भेजेंगे और जो आदमी किसी मुसीबत के मारे को तसल्ली दे, अल्लाह तआला उसको जन्नत के जोड़ों में से ऐसे क़ीमती दो जोड़े पहनाएंगे कि सारी दुनिया भी क़ीमत में उनके बराबर नहीं।

चिल्लाकर और बयान करके रोना

96. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, बयान करके रोने वाली औरत पर और जो औरत सुनने में शरीक हो, उस पर लानत फ़रमायी है।

फ़—बीबियों ! खुदा के वास्ते इसको छोड़ दो।

---

1. यानी छोटे गुनाहों से।

यतीम का माल खाना

97. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि क़ियामत के कुछ आदमी इस तरह क़ब्रों से उठेंगे कि उनके मुंह से आग के गोले निकलते होंगे। किसी ने आप से पूछा कि या रसूलुल्लाह ! वे कौन लोग होंगे ? फ़रमाया तुमको मालूम नहीं, अल्लाह तआला ने क़ुरआन मजीद में फ़रमाया है कि जो लोग यतीमों का माल नाहक़ खाते हैं, वे लोग अपने पेट में अंगारे भर रहे हैं।

फ़—ना—हक़ का मतलब यह है कि उनको वह माल खाने का और उसमें से फ़ायदा उठाने का शरअ से कोई हक़ नहीं। बीबियों ! डरो, हिंदुस्तान में ऐसी बुरी रस्म है कि जहां ख़ाविंद छोटे—छोटे बच्चे छोड़कर मरा, सारे माल पर बेवा ने क़ब्ज़ा कर लिया। फिर उसी में मेहमानों का ख़र्च और मस्जिदों का तेल और नमाज़ियों का खाना, सब कुछ करती हैं, हालांकि उसमें यतीमों का हक़ है और सारे ख़र्च साझे में समझती हैं और वैसे भी रोज़ के ख़र्च में और फ़िर इन बच्चों के ब्याह व शादी में, जिस तरह अपना जी चाहता है, ख़र्च करती हैं। शरअ में कोई मतलब नहीं। इस तरह साझे के माल से ख़र्च करना सख़्त गुनाह है। उनका हिस्सा अलग रख दो और उसमें से ख़ास उन्हीं के ख़र्च में, जो बहुत मजबूरी के हैं, उठाओ और मेहमानदारी और ख़ैर—ख़ैरात अगर करना हो, अपने ख़ास हिस्से से कर दो। वह भी शरअ के ख़िलाफ़ न हो, नहीं तो अपने माल से भी दुरुस्त नहीं। ख़ूब याद रखो, नहीं तो मरने के साथ ही आंखे खुल जाएंगी।[1]

क़ियामत के दिन का हिसाब—किताब

98. फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि क़ियामत में कोई आदमी अपनी जगह से हटने न पायेगा, जब तक कि चार बातें उस[2] से न पूछी जायेंगी। एक तो यह उम्र किस चीज़ में ख़त्म की ? दूसरे यह कि जाने हुए मस्अलों पर अमल किया ? तीसरी यह कि माल कहां से कमाया और कहां उठाया? चौथी यह कि अपने बदन को किस चीज़ से घटाया।

---

1. यानी अज़ाब होगा।
2. बहुत से तक़्वा वाले हिसाब से छूट भी पा जायेंगे, जैसा कि हदीस में आया है।

फ़—मतलब यह कि सारे काम शरअ के मुताबिक़ किये थे या अपने नफ़्स के मुताबिक़ किये थे।

99. और फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि क़ियामत[1] में सारे हुक़ूक़ अदा करने पड़ेंगे, यहां तक सींग वाली बकरी से बे–सींग वाली बकरी के लिए बदला लिया जाएगा।

फ़—यानी अगर उसने ना–हक़ सींग मार दिया होगा।

जन्नत–दोज़ख़ का याद रखना

100. रसूलुल्लाह सल्ल० ने ख़ुत्बे में फ़रमाया कि दो चीज़ें बहुत बड़ी हैं। उनको मत भूलना यानी जन्नत और दोज़ख़। फिर यह फ़रमाकर आप बहुत रोये, यहां तक कि आंसुओं से आपकी मुबारक दाढ़ी भीग गयी। फिर फ़रमाया कि क़सम है उस ज़ात की, जिसके क़ब्ज़े में मेरी जान है, आख़िरत की बातें जो कुछ मैं जानता हूं अगर तुमको मालूम हो जायें तो तुम जंगलों को चढ़ जाओ और अपने सर पर धूल डालते फिरो।

फ़—बीबियों ! यह एक सौ हदीसें हैं और कई जगह इस किताब में और हदीसें भी आयीं हैं। हमारे पैग़म्बर सल्ल० ने फ़रमाया है कि जो कोई चालीस हदीसें भी याद करके मेरी उम्मत को पहुंचाए, तो वह क़ियामत के दिन आलिमों के साथ उठेगा। तो तुम हिम्मत करके ये हदीसें औरों को भी सुनाती रहा करो। इन्शाअल्लाह तुम भी क़ियामत में आलिमों के साथ उठोगी। कितनी बड़ी नेमत कैसी आसानी से मिलती है।

थोड़ा–सा हाल[2] कियामत का और उसकी निशानियों का

क़ियामत की छोटी निशानियां रसूलुल्लाह सल्ल० की फ़रमायी हुई हदीस में ये आयी हैं।

---

1. अगर्चे जानवर से कोई पूछ नहीं, मगर इंसाफ़ बतान के लिए हक़ तआला करेंगे, न कि हिसाब लेने के एतबार से, ख़ूब समझ लो।

2. 'क़ियामत नमा' से लिया गया, लेख शाहर फ़ीउद्दीने रह०

लोग खुदाई माल को अपनी मिल्कियत समझने लगें और ज़कात को दंड की तरह भारी समझें, अमानत को अपना माल समझें और मर्द बीवी की ताबेदरी[1] करे। मां की ना–फ़रमानी करे और बाप को ग़ैर समझे और दोस्त को अपना समझें और दीन का इल्म दुनिया कमाने को हासिल करें। सरदारी और हुकूमत ऐसों को मिले जो सबमें निकम्मे हों यानी बद–ज़ात, और लालची और बुरी आदतों वाले। जो जिस काम के लायक़ न हो, वह काम उसके सुपुर्द हो। शराब खुल्लम खुल्ला पी जाने लगे। नाचने और गाने वाली औरतों का रिवाज हो जाए। ढोलक, सारंगी, तबला, और ऐसी चीज़ें बहुत बढ़ जाएं और पिछले लोग उम्मत के बुज़ुर्गों को बुरा–भला कहने लगें।

अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम फ़रमाते हैं कि ऐसे वक़्त में ऐसे–ऐसे अज़ाबों के इंतिज़ार में रहो कि सुर्ख़ आंधी आये, कुछ लोग ज़मीन में धंस जायें, आसमान से पत्थर बरसें, सूरतें बदल जायें आदमी से सूअर–कुत्ते हो जायें और बहुत–सी आफ़तें आगे–पीछे जल्दी–जल्दी इस तरह आने लगें, जैसे बहुत से दाने किसी तागे में पिरो रखे हों और वह तागा टूट जाए और सब दाने ऊपर तले झट–झट गिरने लगें।

यह निशानियां भी आयी हैं कि दीन का इल्म कम हो जाए, झूठ बोलना हुनर समझा जाए, अमानत का ख़्याल दिलों से जाता रहे और हया–शर्म जाती रहे। सब तरफ़ बे–दीनों का ज़ोर हो जाए, झूठे–झूठे तरीक़े निकलने लगें। जब ये सारी निशानियां हो चुकें, उस वक़्त सब मुल्कों में ईसाई लोगों की अमलदारी हो । उसी ज़माने में शाम के मुल्कों में एक शख़्स अबू सुफ़ियान की औलाद में ऐसा पैदा हो कि बहुत से सैयदों का ख़ून करे, शाम व मिस्त्र में उसके हुक्म चलने लगें। इसी मुद्दत में रूस के मुसलमान बादशाह की ईसाइयों के एक गिरोह से लड़ाई हो और ईसाइयों के एक गिरोह में समझौता हो जाए। दुश्मन गिरोह शहर क़ुस्तुन्तुनिया पर चढ़ाई करके अपना–अपना दख़ल कर ले। वह बादशाह अपना देश छोड़कर शाम के मुल्क में चला जाए और ईसाइयो के जिस गिरोह से समझौता और मेल हो, उस गिरोह को अपने साथ शामिल करके उस दुश्मन गिरोह से बड़ी भारी लड़ाई हो, इस्लामी फ़ौज की जीत हो। एक दिन, बैठे–बिठाए जो ईसाई हिमायती थे, उनमें से एक आदमी एक मुसलमान के सामने कहने लगे कि हमारी क्रास की बरकत से जीत हुई। मुसलमान उसके ज़वाब में कहे कि

1. यानी शरअ के ख़िलाफ़ मौक़े पर।

इस्लाम की बरकत से जीत हुई। इसी में बात बढ़ जाए, यहां तक कि दोनों आदमी अपने–अपने मज़हब वालों को पुकार कर जमा कर लें और आपस में लड़ाई होने लगे। इसमें इस्लाम का बादशाह शहीद हो जाए और शाम के मुल्क में भी ईसाइयों का अमल–दख़ल हो जाए और ये ईसाई उस दुश्मन गिरोह से समझौता कर लें और बचे–खुचे मुसलमान मदीना को चले जायें। ख़ैबर[1] के पास तक ईसाइयों की अमलदारी हो जाए। उस वक़्त मुसलमानों को चिन्ता हो जाए कि हज़रत इमाम मेंहदी अलैहिस्सलाम को खोजना चाहिए ताकि इन मुसीबातों से जान छूटे।

उस वक़्त इमाम मेंहदी अलैहिस्सलाम मदीना मुनव्वरा में होंगे और इस डर से कि कहीं हुकूमत के लिए मेरे सर न हों, मदीना मुनव्वरा से मक्का मुअज़्ज़मा चले जाएंगे। उस ज़माने के वली जो अब्दाल का दर्जा रखते हैं, सब हज़रत इमाम मेंहदी की खोज में होंगे। कुछ लोग झूठ–मूठ भी मेंहदी होने का दावा करना शुरू कर देंगे।

मतलब यह कि इमाम मेंहदी अलैहिस्सलाम ख़ाना–ए–काबा का तवाफ़[2] करते होंगे, हजरे अस्वद और मकामे इब्राहीम के दर्मियान में होंगे कि कुछ नेक लोग उनको पहचान लेंगे और उनको ज़बरदस्ती घेर–घार कर उनसे उनको हाकिम बनाने की बैअत कर लेंगे। इसी बैअत में एक आवाज़ आसमान से आएगी कि सब लोग, जितने वहां मौजूद होंगे, सुनेंगे। वह आवाज़ यह होगी कि अल्लाह तआला के ख़लीफ़ा यानी हाकिम बनाये हुए इमाम मेंहदी अलैहिस्सलाम हैं।

हज़रत इमाम मेंहदी के ज़ाहिर होने के बाद क़ियामत की बड़ी निशानियां शुरू होती हैं। मतलब यह कि जब आप की बैअत का क़िस्सा मशहूर होगा तो मदीना मुनव्वरा में जो फ़ौजें होंगी, वह मक्का चली आयेंगी और मुल्क शाम, इराक़ और यमन के अब्दाल और औलिया सब आपकी सेवा में हाज़िर होंगे। और भी अरब की बहुत सी फ़ौजें इकट्ठी हो जाएंगी।

जब यह ख़बर मुसलमानों में मशहूर होगी, तो एक आदमी ख़ुरासान से हज़रत इमाम की मदद के लिए एक बड़ी फ़ौज लेकर चलेगा, जिसकी फ़ौज के आगे चलने वाले हिस्से के सरदार का नाम मंसूर होगा और राह में बहुत–से बद दीनों की सफ़ाई करता जाएगा और जिस आदमी का ऊपर

1. ख़ैबर मदीना मुनव्वरा के पास एक जगह है,
2. परिक्रमा।

ज़िक्र आया है कि अबू सुफ़ियान की औलाद में होगा और सैयदों का दुश्मन होगा, चूंकि हज़रत इमाम भी सैयद होंगे, वह आदमी इमाम अलैहिस्सलाम से लड़ने को एक फ़ौज भेजेगा। जब यह फ़ौज मक्का और मदीना के दर्मियान के जंगल में पहुंचेगी और एक पहाड़ के तले ठहरेगी, तो सबके सब ज़मीन में धंस जाएंगे, सिर्फ़ दो आदमी बच जायेंगे, जिसमें से एक तो हज़रत इमाम को जाकर ख़बर करेगा और दूसरा उस सुफ़ियानी को ख़बर पहुंचाएगा। ईसाई सब तरफ़ से फ़ौज जमा करेंगे और मुसलमानों से लड़ने की तैयारी करेंगे। उस फ़ौज में उसी दिन अस्सी झंडे होंगे और हर झंडे के साथ उस दिन बारह हज़ार आदमी होंगे, तो कुल नौ लाख साठ हज़ार आदमी हुए।

हज़रत इमाम मक्का मुअज़्ज़मा से चलकर मदीना मुनव्वरा तश्रीफ़ लायेंगे और वहां अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के मज़ार शरीफ़ की ज़ियारत करके शाम के मुल्कों को रवाना होंगे और शहर दमिश्क़ तक पहुंच जाएंगे कि दूसरी तरफ़ से ईसाइयों की फ़ौज मुक़ाबले में जा जाएगी। हज़रत इमाम की फ़ौज तीन हिस्से हो जाएगी—एक हिस्सा तो भाग जाएगा, एक हिस्सा शहीद हो जाएगा और एक हिस्सा जीतेगा, इस शहादत और जीत का क़िस्सा यह होगा कि हज़रत इमाम ईसाइयों से लड़ने की फ़ौज तैयार करेंगे और बहुत से मुसलमान आपस में क़सम खायेंगे कि बे–जीत न हटेंगे, तो सारे आदमी शहीद हो जायेंगे। सिर्फ़ थोढ़े–से आदमी बचेंगे, जिनको लेकर हज़रत इमाम अपनी फ़ौज से चले जायेंगे।

अगले दिन फिर इसी तरह का क़िस्सा होगा। क़सम खाकर जायेंगे और थोड़े से बचकर आयेंगे और तीसरे दिन भी ऐसा होगा। आख़िरकार चौथे दिन के थोड़े से आदम मुक़ाबला करेंगे और अल्लाह तआला इन्हें जितायेंगे।

अब हज़रत इमाम मुल्क का इंतिज़ाम करेंगे और सब तरफ़ फ़ौजें भेजेंगे। और ख़ुद इन सारे कामों से निमट कर क़ुस्तुन्तुनिया जीतने को चलेंगे। जब रूम नदी के किनारे पर पहुंचेंगे, बनू इस्हाक़ के सत्तर हज़ार आदमियों को नावों पर सवार करके उस शहर को जीतने के लिए तज्वीज़ करेंगे। जब ये लोग शहर की फ़सील के सामने पहुंचेंगे, 'अल्लाहु अक्बर–अल्लाहु अक्बर' ऊंची आवाज़ से कहेंगे। इस नाम की बरकत से शहर पनाह की दीवार गिर पड़ेगी और मुसलमान हमला करके शहर के अन्दर घुस पड़ेंगे और दुश्मनों को क़त्ल करेंगे और ख़ूब इंसाफ़ और क़ायदे से मुल्क का इंतिज़ाम करेंगे। हज़रत इमाम से जब बैअत हुई थी, उस वक़्त से इस जीत की छः साल या सात साल की मुद्दत गुज़रेगी।

हज़रत इमाम यहां के इंतिज़ाम में लगे होंगे कि एक झूठी ख़बर मशहूर होगी कि यहां क्या बैठे हो, वहां शाम में दज्जाल आ गया और तुम्हारे ख़ानदान में फ़साद फैला रखा है। इस ख़बर पर हज़रत इमाम शाम की तरफ़ सफ़र करेंगे और जांच–पड़ताल के लिए नौ या पांच सवारों को आगे भेजेंगे। इनमें से एक आदमी आकर ख़बर देगा कि वह ख़बर ग़लत थी, अभी दज्जाल नहीं निकला। हज़रत इमाम को इत्मीनान हो जाएगा और फिर सफ़र में जल्दी न करेंगे। इत्मीनान के साथ दर्मियान के मुल्कों का इंतिज़ाम देखते–भालते शाम में पहुंचेंगे। वहां पहुंचकर थोड़े ही दिन गुज़रेंगे कि दज्जाल भी निकल पड़ेगा।

दज्जाल यहूदियों में से होगा। एक तो शाम और इराक़ के दर्मियान में से निकलेगा और नबी होने का दावा करेगा, फिर अस्फ़हान पहुंचेगा, वहां के सत्तर हज़ार यहूदी उसके साथ हो जायेंगे और खुदाई का दावा शुरू कर देगा। इसी तरह बहुत से मुल्कों से होता हुआ यमन की सीमा तक पहुंचेगा और हर जगह से बहुत से बद दीन साथ होते जायेंगे, यहां तक कि मक्का मुअज़्ज़मा के क़रीब आकर ठहरेगा। लेकिन फ़रिश्तों की हिफ़ाज़त की वजह से शहर नेक अन्दर न जाने पायेगा, फिर वहां से मदीना का रूख़ करेगा और वहां भी फ़रिश्तों का पहरा होगा, जिससे अन्दर न जाने पायेगा, मगर मदीना को तीन बार हालन[1] आयेगा और जितने आदमी दीन में सुस्त और कमज़ोर हैं, भूंडोल से डर कर मदीने से बाहर निकल खड़े होंगे और दज्जाल के फंदे में फंस जायेंगे।

उस वक़्त मदीना में कोई बुजुर्ग होंगे जो दज्जाल से ख़ूब बहस करेंगे। दज्जाल झल्ला कर उनको क़त्ल कर देगा और फिर उनके जिस्म के दोनों टुकड़ों को मिलाकर कहेगा, ज़िंदा हो जा। वे ज़िंदा हो जायेंगे। फिर झल्ला कर पूछेगा कि अब तुम मेरे खुदा होने के क़ायल होते हो। वह फ़रमायेंगे कि अब तो और भी यक़ीन हो गया कि तू दज्जाल है। फिर वह उनको मारना चाहेगा, मगर उसका कुछ बस न चलेगा, फिर उन पर कोई चीज़ असर न करेगी। वहां से दज्जाल शाम मुल्क को रवाना होगा, जब वह दमिश्क़ के क़रीब पहुंचेगा और हज़रत इमाम वहां पहले से पहुंच चुके होंगे और लड़ाई की तैयारी में लगे होंगे कि असर का वक़्त आ जाएगा, मुअज़्ज़िन अज़ान कहेगा, लोग नमाज़ की तैयारी में होंगे कि अचानक हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम दो फ़रिश्तों के कंधों पर हाथ रखे हुए आसमान से उतरते हुए दीख पड़ेंगे, वह जामा मस्जिद के पूर्वी मीनार पर आकर ठहरेंगे, वहां से ज़ीना लगाकर नीचे तशरीफ़ लायेंगे।

---

1 अरबी भाषा में भूडोल को कहते हैं।

हज़रत इमाम सब लड़ाई का सामान उनके सुपुर्द कराना चाहेंगे। वह फ़रमायेंगे कि लड़ाई का इन्तिज़ाम आप ही रखें। मैं ख़ास दज्जाल को क़त्ल करने आया हूं। ग़रज़ जब रात गुज़र कर सुबह होगी, हज़रत इमाम फ़ौज को तैयार करेंगे और हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम एक घोड़ा, एक नेज़ा मगा कर दज्जाल की तरफ़ बढ़ेंगे और मुसलमान दज्जाल की फ़ौज पर हमला करेंगे। बहुत तेज़ लड़ाई होगी। उस वक़्त हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम की सांस में यह असर होगा कि जहां तक निगाह जाए, वहां तक सांस पहुंच सके और जिस दुश्मन को सांस की हवा लगे, तुरन्त ख़त्म हो जाए। दज्जाल हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम को देखकर भागेगा। आप उसका पीछा करेंगे। यहां तक कि बाबे लुद एक जगह है, वहां पहुंच कर नेज़े से उसका काम तमाम कर देंगे। मुसलमान दज्जाल की फ़ौज को क़त्ल करना शुरू करेंगे। फिर हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम शहरों–शहरों तशरीफ़ ले जायेंगे, जितने लोगों ने दज्जाल को सताया था, सबकी तसल्ली करेंगे और खुदा की मेहरबानी से कोई भी उस वक़्त ग़ैर मोमिन न रहेगा।

फिर हज़रत इमाम का क़त्ल हो जाएगा सब इन्तिज़ाम हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम के हाथ में आ जाएगा।

फिर याजूज–माजूज निकलेंगे। उनके रहने की जगह, जहां उत्तर की तरफ़ आबादी ख़त्म हुई है, उससे भी सात बिलायत से बाहर है और उधर का समुद्र ज़्यादा ठंडक की वजह से ऐसा जमा हुआ है कि उसमें जहाज़ भी नहीं चल सकता। हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम मुसलमानों को अल्लाह तआला के हुक्म के मुताबिक़ चलायेंगे और याजूज–माजूज बड़ा ऊधम मचायेंगे। आख़िर को अल्लाह तआला उनको हलाक कर देंगे और ईसा अलैहिस्सलाम पहाड़ से उतर आयेंगे। चालीस वर्ष के बाद हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम वफ़ात फ़रमायेंगे और हमारे पैग़म्बर सल्ल० के रौज़े में दफ़न होंगे और आपकी गद्दी पर एक आदमी, यमन के रहने वाले बैठेंगे जिनका नाम जहजाज होगा और क़हतान के क़बीले से होंगे और बहुत दीनदारी और इंसाफ़ के साथ हुकूमत करेंगे। इनके बाद आगे–पीछे और कई बादशाह होंगे। फिर धीरे–धीरे नेक बातें कम होना शुरू होंगी और बुरी बातें बढ़ने लगेंगी।

उस वक़्त आसमान पर एक धुंवा–सा छा जाएगा और ज़मीन पर बरसेगा, जिससे मुसलमानों को ज़ुकाम और बे–दीनों को बेहोशी होगी। चालीस दिन के बाद आसमान साफ़ हो जाएगा और उसी ज़माने के क़रीब बक़रीद का महीना होगा। दसवीं तारीख़ के बाद यका–यकी एक रात इतनी

लंबी होगी कि मुसाफ़िरों का दिल घबरा जाएगा और बच्चे सोते-सोते उक्ता जायेंगे और चौपाए-जानवर जंगल में जाने के लिए चिल्लाने लगेंगे और किसी तरह सुबह न होगी, यहां तक कि तमाम आदमी डर और घबराहट से परेशान हो जायेंगे। जब तीन रातों के बराबर वह रात हो चुकेगी, उस वक़्त सूरज थोड़ी-रोशनी लिए हुए जैसे गहन लगने के वक़्त होता है, पच्छिम की तरफ़ से निकलेगा, उस वक़्त किसी का ईमान या तौबा कुबूल न होगी। जब सूरज इतना ऊंचा हो जाएगा, जैसा कि दोपहर से पहले होता है, फिर अल्लाह तआला के हुक्म से पच्छिम ही की तरफ़ लौटेगा और क़ायदे के मुताबिक़ डूबेगा, फिर हमेशा अपने पुराने क़ायदे के मुताबिक़ रोशन और रौनक़दार निकलता रहेगा।

इसके थोड़े ही दिन बाद सफ़ा पहाड़, जो मक्का में है, भूडोल होकर फट जाएगा, और उस जगह से एक जानवर, बहुत अजीब शक्ल व सूरत का निकल कर लोगों से बातें करेगा और बड़ी तेज़ी से सारी ज़मीन पर फिर जाएगा और ईमान वालों की पेशानी पर हज़रत मूसा अलै० की लाठी से नूरानी लकीर खींच देगा, जिससे सारा चेहरा उसका रोशन हो जाएगा और बे-ईमानों की नाक या गरदन पर हज़रत सुलैमान अलै० की अंगूठी से काली मुहर कर देगा, जिससे उसका चेहरा मैला हो जाएगा और यह काम करके वह ग़ायब हो जाएगा। इसके बाद दक्खिन से एक हवा, बड़ी अच्छी चलेगी। उससे सब ईमान वालों के बग़ल में कुछ निकल आएगा, जिससे वह मर जाएंगे।

जब मुसलमान मर जाएंगे तो उस वक़्त काफ़िर हब्शियों का सारी दुनिया में अमल-दखल हो जाएगा और वे लोग ख़ाना-ए-काबा को शहीद कर देंगे और हज बंद हो जाएगा और क़ुरआन शरीफ़ दिलों से और काग़ज़ों से उठ जाएगा और ख़ुदा का डर और लोगों की शर्म सब उठ जाएगी और कोई अल्लाह-अल्लाह कहने वाला न रहेगा। उस वक़्त मुल्क शाम में बहुत सस्ती होगी, लोग ऊंटों पर और सवारियों पर पैदल उधर झुक पड़ेंगे और जो रह जाएंगे, एक आग पैदा होगी और सबको हांकती हुई शाम में पहुंचा देगी। और हिकमत इसमें यह है कि क़ियामत के दिन सब लोग उसी मुल्क में जमा होंगे, फिर वह आग ग़ायब हो जाएगी और उस वक़्त दुनिया को बड़ी तरक़्क़ी होगी।

तीन चार साल इसी हाल से गुज़रेंगे कि यकायकी जुमा के दिन मुहर्रम की दसवीं तारीख़, सुबह के वक़्त सब लोग अपने-अपने काम में लगे होंगे कि सूर फूंक दिया जाएगा, पहले हल्की-हल्की आवाज़ होगी, फिर इतनी बढ़ जाएगी कि उसी के डर से लोग मर जाएंगे, ज़मीन व आसमान सब फट

जाएंगे और दुनिया ख़त्म हो जाएगी और जब सूरज पच्छिम से निकला था, उस वक़्त से सूर फूंकने तक एक सौ तीस वर्ष का ज़माना होगा। अब यहां से क़ियामत का दिन शुरू हो गया।

ख़ास क़ियामत के दिन का ज़िक्र

जब सूर फूंकने से तमाम दुनिया ख़त्म हो जाएगी, चालीस वर्ष इसी वीरान हालत में बीत जाएंगे, फिर अल्लाह तआला के हुक्म से दूसरी बार सूर फूंका जाएगा और फिर ज़मीन व आसमान इसी तरह क़ायम हो जाएंगे और मुर्दे क़ब्रों से ज़िंदा होकर क़ब्रों से निकल पड़ेंगे और क़ियामत के मैदान में इकट्ठे कर कर दिए जाएंगे।

सूरज बहुत नज़दीक हो जाएगा, जिसकी गर्मी से लोगों के दिमाग़ पकने लगेंगे और जैसे–जैसे लोगों के गुनाह होंगे, उतना ही पसीना ज़्यादा निकलेगा और लोग इस मैदान में भूखे–प्यासे खड़े–खड़े परेशान हो जाएंगे। जो नेक लोग होंगे, उनके लिए उस मैदान की मिट्टी मैदे की तरह बना दी जाएगी, उसको खा कर भूख का इलाज करेंगे, और प्यास बुझाने को हौज़े कौसर पर जाएंगे। फिर जब क़ियामत के मैदान में खड़े–खड़े परेशान हो जाएंगे, उस वक़्त मिलकर पहले हज़रत आदम अलैहिस्सलाम के पास, फिर और नबियों के पास इस बात की सिफ़ारिश कराने के लिए जाएंगे कि हमारा हिसाब–किताब और कुछ फ़ैसला जल्दी हो जाए। सब पैग़म्बर कुछ न कुछ मजबूरी बताएंगे और सिफ़ारिश का वायदा न करेंगे।

सबके बाद हमारे पैग़म्बर, सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर होकर वही दर्ख़्वास्त करेंगे। आप अल्लाह तआला के हुक्म से क़ुबूल फ़रमा कर मक़ाम महमूद में (कि एक जगह का नाम है) तशरीफ़ ले जाकर शफ़ाअत फ़रमायेंगे। अल्लाह तआला का इर्शाद होगा कि हमने सिफ़ारिश क़ुबूल की। अब हम ज़मीन पर अपनी तजल्ली फ़रमा कर हिसाब व किताब किये देते हैं।

पहले आसमान से फ़रिश्ते बहुत ज़्यादा उतरना शुरू होंगे और तमाम आदमियों को हर तरफ़ से घेर लेंगे, फिर अल्लाह तआला का अर्श उतरेगा, उस पर उसकी तजल्ली होगी और हिसाब व किताब शुरू हो जाएगा और आमाल नामे उड़ाये जाएंगे और ईमान तोलने की तराज़ू खड़ी की जाएगी, जिससे सब नेकियां और बदियां मालूम हो जाएंगी, और पुल सिरात पर

चलने का हुक्म होगा। जिसकी नेकियां तोल से ज़्यादा होंगी वह पुल सिरात से पार होकर बहिश्त (जन्नत) में जा पहुंचेगा और जिसके गुनाह ज़्यादा होंगे, अगर अल्लाह तआला ने माफ़ न कर दिए होंगे, वह दोज़ख़ में गिर जाएगा। और जिसकी नेकियां और गुनाह बराबर होंगे, एक जगह है, 'आराफ़'—जन्नत और दोज़ख़ के बीच में, वह वहां रह जाएगा।

इसके बाद हमारे पैग़म्बर सल्ल० और दूसरे हज़रात अंबिया अलैहिमुस्सलाम और आलिम और वली और शहीद और हाफ़िज़ और नेक बंदे गुनाहगार लोगों के बख़्शवाने के लिए शफ़ाअत करेंगे। उनकी शफ़ाअत क़ुबूल होगी और जिसके दिल में ज़र्रा भी ईमान होगा, वह दोज़ख़ से निकलना कर जन्नत में दाख़िल कर दिया जाएगा।

इसी तरह जो लोग आराफ़ में होंगे, वे भी आख़िर में जन्नत में दाख़िल कर दिए जाएंगे और दोज़ख़ में खाली वही लोग रह जाएंगे जो बिल्कुल बे–दीन (काफ़िर) और मुश्रिक हैं और ऐसे लोगों को भी दोज़ख़ से निकला नसीब न होगा।

जब जन्नती और दोज़ख़ी अपने–अपने ठिकाने हो जाएंगे, उस वक़्त अल्लाह तआला जन्नत और दोज़ख़ के बीच में मौत को एक मेंढे की सूरत में हाज़िर करके सब जन्नतियों और दोज़ख़ियों को दिखला कर इसको ज़िब्ह करा देंगे और फ़रमाएंगे कि अब न जन्नतियों को मौत आयेगी और न दोज़ख़ियों को आयेगी, सबको अपने–अपने ठिकाने पर हमेशा के लिए रहना होगा। उस वक़्त न जन्नतियों की ख़ुशी की कोई हद होगी और न दोज़ख़ियों के सदमे और रंज की कोई सीमा होगी।

जन्नत की नेमतों और दोज़ख़ की मुसीबतों का ज़िक्र

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया कि अल्लाह तआला फ़रमाते हैं कि मैंने अपने नेक बंदों के लिए ऐसी नेमतें तैयार कर रखी हैं न किसी आंख ने देखी और न किसी कान ने सुनी और न किसी आदमी के दिल में उनका ख़्याल आया।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया कि जन्नत की इमारत में एक ईंट चांदी और एक ईंट सोने की और ईंटों के जोड़ने का गारा ख़ालिस मुश्क का

है और जन्नत की कंकरियां मोती और याकूत हैं और वहां की मिट्टी ज़ाफ़रान है। जो आदमी जन्नत में चला जाए, चैन व सूख में रहेगा और रंज व ग़म न देखेगा और हमेश-हमेशा को उसमें रहेगा। कभी न मरेगा, न उन लोगों के कपड़े मैले होंगे, न उनकी जवानी ख़त्म होगी।

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि जन्नत में दो बाग़ तो ऐसे हैं कि वहां के बर्तन और सब सामान चांदी के होंगे और दो बाग़ ऐसे हैं कि वहां के बर्तन और सब सामान सोने के होंगे।

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि जन्नत में सौ दर्जे ऊपर तले हैं। एक दर्जे से दूसरे दर्जे तक इतना फ़ासला है कि जितना ज़मीन व आसमान के दर्मियान में फ़ासला है यानी पांच सौ वर्ष और सब दर्जों में बड़ा दर्जा फ़िर्दौस है और इसी में जन्नत की चारों नहरें और इससे ऊपर अर्श है। तुम जब अल्लाह तआला से मांगों तो फ़िर्दौस मांगा करो।

यह भी फ़रमाया है कि इनमें एक-एक दर्जा इतना बड़ा है कि अगर तमाम दुनिया के आदमी एक में भर दिए जाएं तो अच्छी तरह समा जाए।

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि जन्नत में जितने पेड़ हैं सबका तना सोने का है।

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि सबसे पहले जो लोग जन्नत में आएंगे उनका चेहरा ऐसा रोशन होगा जैसे चौदहवीं रात का चांद। फिर जो उनके पीछे जाएंगे, उनका चेहरा तेज़ रोशनी वाले सितारे की तरह होगा। न वहां पेशाब की ज़रूरत होगी, न पाख़ाने की, न थूक की, न रेंठ की। कंधियां सोने की होंगी और पसीना मुश्क की तरह ख़ुश्बूदार होगा। किसी ने पूछा, फिर खाना कहां जाएगा ? रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया कि एक डकार आएगी जिसमें मुश्क की ख़ुश्बू होगी।

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जन्नत वालों में जो सबसे निचला दर्जे का होगा, उससे अल्लाह तआला पूछेगा कि अगर तुझको दुनिया के किसी बादशाह के मुल्क के बराबर दे दूं तो राज़ी हो जाएगा। वह कहेगा, ऐ परवरदिगार ! मैं राज़ी हूं। फिर इर्शाद होगा, जा तुझको इसके पांच हिस्से के बराबर दे दिया। वह कहेगा, ऐ रब ! मैं राज़ी हो गया। फिर इर्शाद होगा, जा तुझको इतना दिया और इससे दस गुना दिया और इसके अलावा जिस चीज़ को तेरा जी चाहेगा, जिससे तेरी आंख को लज़्ज़त होगी, वह तुझको मिलेगा। एक रिवायत है कि दुनिया और उससे दस हिस्सा ज़्यादा के बराबर उसको मिलेगा।

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, अल्लाह तआला जन्नत वालों से पूछेंगे, कि तुम खुश भी हो ? वह अर्ज़ करेंगे कि भला खुश क्यों न होते, आपने हमको वह चीज़ें दीं, जो आज तक किसी मख़लूक़ को नहीं दीं। इर्शाद होगा कि हम तुमको ऐसी चीज़ें दें जो इन सबसे बढ़ कर हो। वे अर्ज़ करेंगे, इन सबसे बढ़कर क्या चीज़ होगी ? इर्शाद होगा कि वह चीज़ यह कि मैं तुमसे हमेशा खुश रहूंगा, कभी ना–राज़ न हूंगा।

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि जब जन्नत वाले जन्नत में जा चुकेंगे, अल्लाह तआला उनसे फ़रमायेंगे, तुम और कुछ ज़्यादा चाहते हो ? मैं तुमको दूं ? वे अर्ज़ करेंगे, हमारे चेहरे आपने रोशन कर दिए, हमको जन्नत में दाख़िल कर दिया, हमको दोज़ख़ से निजात दे दी, हमको क्या चाहिए। उस वक़्त अल्लाह तआला पर्दा उठाएंगे। इतनी प्यारी कोई नेमत न होगी, जितनी की अल्लाह के दीदार में लज़्ज़त होगी।

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि दोज़ख़ को हज़ार वर्ष तक धौंकाया, यहां तक कि उसका रंग लाल हो गया और फिर हज़ार वर्ष और धौंकाया, यहां तक कि सफ़ेद हो गयी, फिर हज़ार वर्ष तक धौंकाया यहां तक कि काली हो गयी। अब वह बिल्कुल काली व अंधी है।

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, तुम्हारी यह आग जिसको जलाते हो, दोज़ख़ की आग से सत्तर हिस्सा तेज़ी में कम है। और वह सत्तर हिस्सा इससे ज़्यादा तेज़ है।

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, कि अगर बड़ा भारी पत्थर दोज़ख़ के किनारे से छोड़ा जाए और सत्तर वर्ष तक बराबर चला जाए, जब जाकर उसके तले में पहुंचे।

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने दोज़ख़ को लाया जाएगा, उसकी सत्तर हज़ार बागें होंगी और बागों को सत्तर हज़ार फ़रिश्ते पकड़े हुए होंगे जिससे उसको घसीटेंगे।

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि सबमें हल्का अज़ाब दोज़ख में एक शख़्स को होगा। उसके पांव में सिर्फ़ आग की दो जूतियां हैं, मगर उससे उसका भेजा हंडिया की तरह पकता है और वह यों समझता है मुझसे बढ़कर किसी पर अज़ाब नहीं।

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कि दोज़ख़ में ऐसे–ऐसे बड़े सांप हैं, जैसे ऊंट। अगर एक बार काट लें तो चालीस वर्ष तक लहर उठती रहे और बिच्छू ऐसे बड़े–बड़े जैसे पलान कसा हुआ ख़च्चर। अगर वे काट लें तो

चालीस वर्ष तक विष चढ़ा रहे।

एक बार रसूलुल्लाह सल्ल० नमाज़ पढ़कर मिंबर पर तशरीफ़ लाये और फ़रमाया कि मैंने आज जन्नत और दोज़ख़ का ठीक वैसा ही नक़्शा देखा है। न आज तक मैंने जन्नत में ज़्यादा कोई अच्छी चीज़ देखी और न दोज़ख़ से ज़्यादा कोई चीज़ तक्लीफ़ की देखी।

उन बातों का बयान कि उनके बग़ैर ईमान अधूरा रहता है

हदीस शरीफ़ में आया है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया कि कई ऊपर सत्तर बातें ईमान से मुताल्लिक़ हैं। सबसे बड़ी बात तो 'ला इलाह इल्लल्लाह'[1] है और सबसे छोटी बात यह है कि रास्ते में कोई कांटा, लकड़ी या पत्थर पड़ा हो, जिससे रास्ता चलने वालों को तक्लीफ़ हो, उस को हटा दे। और शर्म व हया भी इन्हीं बातों में से एक बड़ी चीज़ है।

इस इर्शाद से मालूम हुआ कि जब इतनी बातें ईमान से ताल्लुक़ रखती हैं तो पूरा मुसलमान वही होगा, जिसमें सब बातें हों और जिसमें कोई बात हो, कोई न हो, वह अधूरा मुसलमान है। यह सब जानते हैं कि मुसलमान पूरा ही होना ज़रूरी है, इसलिए सबको ज़रूरी हुआ कि इन सब बातों को अपने अन्दर पैदा करे और कोशिश करे कि किसी बात की कमी न रह जाए। इसलिए हम इन बातों को लिख कर बतला देते हैं। वे सब सात ऊपर सत्तर हैं। तीस तो दिल से मुताल्लिक़ हैं—

1. अल्लाह तआला पर ईमान रखना।

2. यह एतक़ाद रखना कि ख़ुदा के सिवा सब चीज़ पहले नहीं थी, फिर ख़ुदा के पैदा करने से पैदा हुई।

3. यह यक़ीन करना कि फ़रिश्ते हैं।

4. यह यक़ीन करना कि अल्लाह तआला ने जितनी किताबें पैग़म्बरों पर उतारी थीं, सब सच्ची हैं, हां, क़ुरआन के सिवा अब औरों का हुक्म नहीं रहा।

5. यह यक़ीन करना कि सब पैग़म्बर सच्चे हैं, हां, अब सिर्फ़

---

1. यानी कलमा तैयबा 'लाइलाह इल्लल्लाह मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह'

रसूलुल्लाह सल्ल० के तरीक़े पर चलने का हुक्म है।

6. यह यक़ीन करना कि अल्लाह तआला को सब बातों की पहले से ही ख़बर है और जो उनको मंज़ूर होता है, वही करते हैं।

7. यह यक़ीन करना कि क़ियामत आने वाली है,

8. जन्नत का मानना, 9. दोज़ख़ का मानना,

10. अल्लाह तआला से मुहब्बत रखना।

11. रसूलुल्लाह सल्ल० से मुहब्बत रखना,

12. और किसी से भी अगर मुहब्बत या दुश्मनी करे तो अल्लाह ही के वास्ते करना।

13. हर एक काम में नीयत दीन ही की करना,

14. गुनाहों पर पछताना।

15. अल्लाह तआला से डरना,

16. अल्लाह तआला की रहमत की उम्मीद रखना।

17. शर्म करना, 18. नेमत का शुक्र करना।

19. वायदा पूरा करना, 20. सब्र करना।

21. अपने को औरो से कम समझना,

22. मख़्लूक़ पर रहम करना।

23. जो कुछ खुदा की तरफ़ से हो, उस पर राज़ी रहना,

24. खुदा पर भरोसा करना।

25. अपनी किसी ख़ूबी पर न इतराना।

26. किसी से कीना—कपट न रखना।

27. किसी से जलन न रखना, 28. गुस्सा न करना।

29. किसी का बुरा न करना, 30. दुनिया से मुहब्बत न रखना, और सात बातें ज़ुबान से मुताल्लिक़ हैं।

31. ज़ुबान से कलमा पढ़ना, 32. कुरआन की तिलावत करना।

33. इल्म सीखना, 34. इल्म सिखाना।

35. दुआ करना, 36. अल्लाह तआला का ज़िक्र करना।

37. लग्व और गुनाह की बात से, जैसे झूठ, ग़ीबत, गाली, कोसना, शरअ के ख़िलाफ़ गाना, इस सबसे बचना। और चालीस बातें हमारे बदन से मुताल्लिक़ हैं।

38. वुज़ू और गुस्ल करना, कपड़े का पाक रखना।

39. नमाज़ का पाबंद रहना।

40. ज़कात और सदक़ा–ए–फ़ित्र देना।

41. रोज़ा रखना, 42. हज करना।

43. एतकाफ़ करना, 44. जहां रहने में बीच की ख़राबी हो, वहां से चले जाना।

45. मन्नत खुदा की पूरी करना, 46. जो क़सम गुनाह की बात पर न हो, उसको पूरा करना।

47. टूटी हुई क़सम का कफ़्फ़ारा देना, 48. जितना बदन ढांकना फ़र्ज़ है, उसको ढांकना।

49. क़ुर्बानी करना, 50. मुर्दे का कफ़न–दफ़न करना।

51. किसी का क़र्ज़ आता हो, उसका अदा करना, 52. लेन–देन में शरअ के ख़िलाफ़ बातों से बचना।

53. सच्ची गवाही का न छिपाना, 54. अगर नफ़्स तक़ाज़ा करे, निकाह कर लेना।

55. जो अपनी हुकूमत में हैं, उनका हक़ अदा करना, 56. मां–बाप को आराम पहुंचाना।

57. औलाद को पालना, 58. नातेदारों से बद–सुलूकी न करना।

59. आक़ा की ताबेदारी करना, 60. इन्साफ़ करना।

61. मुसलमानों की जमाअत से अलग कोई तरीक़ा न निकालना।

62. हाकिम की ताबेदारी करना, मगर शरअ के ख़िलाफ़ बात में न करे।

63. लड़ने वालों में समझौता करा देना, 64. नेक काम में मदद देना।

65. नेक राह बतलाना, बुरी बात से रोकना, 66. अगर हुकूमत हो तो शरअ के मुताबिक़ सज़ा देना।

67. अगर वक़्त आए तो दीन के दुश्मनों से लड़ना, 68. अमानत अदा करना।

69. ज़रूरत वाले को रूपया क़र्ज़ देना, 70. पडोसी की ख़ातिरदारी करना।

71. आमदनी पाक लेना, 72. ख़र्च शरअ के मुताबिक़ करना।

73. सलाम का जवाब देना, 74. अगर कोई छींक लेकर 'अल्–हम्दुलिल्लाह' कहे तो 'यर्हमुकल्लाह' कहना।

75. किसी को ना–हक़ तकलीफ़ न देना, 76. शरअ के खेल–तमाशों से बचना।

77. रास्ते में ढेला पत्थर, कांटा, लकड़ी हटा देना। अगर अलग–अलग सब बातों का सवाब मालूम करना हो तो 'फुरूअलईमान' एक किताब है, इसमें देख लो।

अपने नफ़्स की और आम आदमियों की ख़राबी

ऊपर जितनी अच्छी और बुरी बातों का सवाब और अज़ाब की चीज़ों का बयान आया है, उसमें दो चीज़ें बाधा डालती हैं—एक तो खुद अपना नफ़्स कि हर वक़्त गोद में बैठा हुआ तरह–तरह की बातें सुझाता है, नेक कामों में बहाने निकालता है और बुरे कामों में अपनी ज़रूरतें बतलाता है और अज़ाब से डराओ तो अल्लाह तआला का माफ़ करने वाला और रहीम होना याद दिलाता है और ऊपर से शैतान उसको सहारा देता है।

और दूसरे बाधा डालने वाले वे आदमी हैं, जो उससे किसी तरह का वास्ता रखते हैं—या तो नाते–रिश्तेदार हैं या जान–पहचान वाले हैं, या बिरादरी कुन्बे के हैं या उसकी बस्ती के हैं। और कुछ गुनाह तो इस वास्ते होते हैं कि उनके पास बैठकर उनकी बुरी बातों का असर उसमें आ जाता है और कुछ गुनाह उनकी ख़ातिर से होते हैं और कुछ इस वास्ते हैं कि उनकी निगाह में हल्कापन न हो और कुछ गुनाह इसलिए हो जाते हैं कि वे लोग उसके साथ बुराई करते हैं, कुछ वक़्त उस बुराई के रंज में, कुछ वक़्त उनकी ग़ीबत में और कुछ वक़्त उनसे बदला लेने की फ़िक्र में ख़र्च होता है, फिर उससे तरह–तरह के गुनाह पैदा हो जाते हैं। ग़रज़ सारी ख़राबी उस नफ़्स की ताबेदारी की और आदमियों से भलाई की उम्मीद रखने की है, इसलिए उनकी ख़राबी से बचने के लिए दो बातें ज़रूरी ठहरीं—एक तो अपने नफ़्स को दबाना, उसको बहला–फुसला कर, कभी डांट–डपट कर दीन की राह पर लगाना, दूसरे सब आदमियों से ज़्यादा लगाव न रखना और इस बात की परवाह न करना कि वे अच्छा कहेंगे या बुरा कहेंगे, इस वास्ते इन दोनों बातों को अलग–अलग लिखा जाता है।

नफ़्स के साथ बर्ताव का बयान

पाबंदी के साथ थोड़ा–सा वक़्त शाम को या सोते वक़्त मुक़र्रर कर लो। उस वक़्त में अकेले बैठकर और अपने दिल को जहां तक हो सके, सारे ख़्यालों से पाक करके अपने जी से यों बातें किया करो और नफ़्स से यों कहा करो कि ऐ नफ़्स ! ख़ूब समझ ले, तेरी मिसाल दुनिया में एक सौदागर की–सी है। पूंजी तेरी उम्र है और नफ़ा उसका यह है कि हमेशा की भलाई यानी आख़िरत की निजात हासिल करे। अगर यह दौलत हासिल कर ली तो सौदागरी में नफ़ा हुआ और अगर इस उम्र को यों ही खो दिया और भलाई और निजात हासिल न की, तो इस सौदागरी में बड़ा टोटा हुआ कि पूंजी भी गई और नफ़ा नसीब न हुआ।

यह पूंजी ऐसी क़ीमती है कि इसकी एक–एक घड़ी, बल्कि एक–एक सांस बे–इन्तिहा क़ीमत रखती है और कोई ख़ज़ाना कितना ही बड़ा हो, उसकी बराबरी नहीं कर सकता, क्योंकि ख़ज़ाना अगर जाता रहे, तो कोशिश से उसकी जगह दूसरा ख़ज़ाना मिल सकता है और यह उम्र जितनी गुज़रती है, उसकी एक पल भी लौटकर नहीं आ सकती, न दूसरी उम्र और मिल सकती है। दूसरे यह कि इस उम्र से कितनी बड़ी दौलत कमा सकते हो यानी हमेशा के लिए जन्नत और अल्लाह की ख़ुशी और दीदार इतनी बड़ी दौलत, किसी ख़ज़ाने से कोई नहीं कमा सकता, इसलिए यह पूंजी बहुत ही क़द्र और क़ीमत की हुई।

और ऐ नफ़्स ! अल्लाह तआला का एहसान मान कि अभी तेरी मौत नहीं आयी, जिससे यह उम्र ख़त्म हो जाती, अल्लाह तआला ने आज का दिन ज़िंदगी का और निकाल दिया है और अगर तू मरने लगे तो हज़ारों दिल व जान से आरज़ू करे कि मुझको एक दिन की और उम्र मिल जाए तो उस दिन में सारे गुनाहों से सच्ची और पक्की तौबा कर लूं और पक्का वायदा अल्लाह से कर लूं कि फिर उन गुनाहों के पास न फटकूंगा और वह सारा दिन अल्लाह तआला की याद और ताबेदारी में गुज़ारूंगा। जब मरने के वक़्त तेरा यह ख़्याल और हाल हो, तो अपने दिल में तू यों ही समझ ले कि गोया मेरी मौत का वक़्त आ गया था और मेरे मांगने से अल्लाह तआला ने यह दिन और दे दिया है और इस दिन के बाद मालूम नहीं कि और दिन नसीब होगा या नहीं, सो इस दिन को तो इसी तरह गुज़ारना चाहिए, जैसा

कि उम्र का आख़िरी दिन मालूम हो और इसको इसी तरह गुज़ार यानी सब गुनाहों से पक्की तौबा कर ले। और उस दिन में कोई छोटी या बड़ी ना–फ़रमानी न कर और तमाम दिन अल्लाह तआला के ध्यान और ख़ौफ़ में गुज़ार दे और कोई हुक्म ख़ुदा का न छोड़।

जब वह सारा दिन इसी तरह गुज़र जाए, फिर अगले दिन यों ही सोचे कि शायद उम्र का यही एक दिन बाक़ी रहा हो और ऐ नफ़्स ! इस धोखे में मत आना कि अल्लाह तआला माफ़ ही कर देंगे, क्योंकि एक यह कि तुझे कैसे मालूम हुआ कि माफ़ ही कर देंगे और सज़ा न देंगे, भला अगर सज़ा होने लगे तो उस वक़्त क्या करेगा और उस वक़्त कितना पछताना पड़ेगा।

और अगर हमने माना कि माफ़ ही हो गया, जब भी तो नेक काम करने वालों को जो इनाम और दर्जा मिलेगा, वह तुझको नसीब न होगा। फिर जब तू अपनी आंखों से औरों को मिलना, और अपना महरूम होना देखेगा, किस क़दर हसरत और अफ़सोस होगा।

इस पर अगर नफ़्स सवाल करे कि बतलाओ, फिर मैं क्या करू और किस तरह कोशिश करूं, तो तुम उसको जवाब दो कि तू यह काम कर कि जो चीज़ तुझसे मर कर छूटने वाली है यानी दुनिया और बुरी आदतें, तो उसको अभी छोड़ दे और जिससे तेरा वास्ता पड़ने वाला है, और उसके बग़ैर तेरा गुज़र नहीं हो सकता यानी अल्लाह तआला और उसको राज़ी करने की बातें, उसको अभी से ले बैठ और उसकी याद और ताबेदारी में लग जा और बुरी आदतों का बयान और उनके छोड़ने का इलाज और अल्लाह तआला के राज़ी करने की बातों की तफ़्सील और उनके हासिल करने की तदबीर ख़ूब समझा–समझाकर ऊपर लिख दी है और उसके मुताबिक़ कोशिश और बर्ताव करने से दिल से बुराइयां निकल जाती हैं और नेकियां जम जाती हैं।

अपने नफ़्स से कहो कि ऐ नफ़्स ! तेरी मिसाल बीमार की–सी है और बीमार को परहेज़ करना पड़ता है और गुनाह को करना बद–परहेज़ी है, इसलिए इससे परहेज़ करना ज़रूरी है और यह परहेज़ अल्लाह तआला ने सारी उम्र के लिए बतला रखा है। भला सोच तो सही, अगर दुनिया का कोई छोटा–सा डाक्टर किसी बड़ी बीमारी में तुझको यह बतला दे कि फ़लानी मज़ेदार चीज़ ख़ाने से जब कभी खायेगा, उस बीमारी को सख़्त नुक़्सान पहुंचेगा और तू सख़्त तक्लीफ़ में मुब्तला हो जाएगा और फ़लानी

कड़वी बद–मज़ा दवा रोज़ाना खाते रहोगे तो अच्छे रहोगे और तक्लीफ़ कम रहेगी, तो यक़ीनी बात है कि अपनी जान, जो प्यारी है, उसके लिए उस डाक्टर के कहने से कैसी ही मज़ेदार चीज़ हो, उसको सारी उम्र के लिए छोड़ देगा और दवा कैसी ही बद–मज़ा और ना–गवार हो, आंख बन्द करके रोज़ के रोज़ उसको निगल जाया करेगा।

तो हमने माना कि गुनाह बड़े मज़ेदार हैं और नेक काम बहुत नागवार हैं, लेकिन जब अल्लाह तआला ने इन मज़ेदार चीज़ों का नुक़्सान बताया है और इन नागवार कामों को फ़ायदेमंद फ़रमाया है, फिर नुक़्सान और फ़ायदा भी कैसा, हमेशा–हमेशा का, जिसका नाम दोज़ख़ और जन्नत है। और तू ऐ नफ़्स ताज्जुब और अफ़सोस की बात है कि जान की मुहब्बत में छोटे डाक्टर का कहने का तो यक़ीन कर ले और उसका पाबंद हो जाए और अपने ईमान की मुहब्बत में अल्लाह तआला के कहने पर दिल को न जमाये और गुनाहों के छोड़ने की हिम्मत न करे और नेक कामों से फिर भी जी चुराये। तू कैसा मुसलमान है कि तौबा ! तौबा !! अल्लाह तआला के फ़रमाने को एक छोटे से डाक्टर के कहने के बराबर भी न समझे और कैसा बे–अक़्ल है कि जन्नत के हमेशा–हमेशा के आराम की दुनिया के थोड़े दिनों के आराम के बराबर भी क़द्र न करे और दोज़ख़ की इतनी सख़्त और लम्बी तक्लीफ़ से दुनिया की थोड़े दिनों की तक्लीफ़ के बराबर भी बचने की कोशिश न करे।

और नफ़्स से यों कहो कि ऐ नफ़्स ! दुनिया सफ़र की जगह है और सफ़र में पूरा आराम हरगिज़ नहीं मिला करता। तरह–तरह की तक्लीफ़ें झेलनी पड़ती हैं, मगर मुसाफ़िर इसलिए इन तक्लीफ़ों को सहार लेता है कि घर पहुंचकर पूरा आराम मिल जाएगा, बल्कि इन तक्लीफ़ों से घबरा कर, किसी सराय में ठहर कर उसको अपना घर बना ले और सब सामान आराम का वहां जमा कर ले तो सारी उम्र भी घर पहुंचना नसीब न हो। इसी तरह दुनिया में जब तक रहना है, मेहनत व मशक़्क़त को सहारा करना चाहिए। इबादत में मेहनत है और गुनाहों के छोड़ने में भी मशक़्क़त है और भी तरह–तरह की मुसीबत है, लेकिन आख़िरत हमारा घर है, वहां पहुंचकर सब मुसीबत कट जाएगी। यहां की सारी मेहनत व मशक़्क़त को झेलना चाहिए। अगर यहां आराम ढूंढा तो घर जाकर आराम का सामान मिलना मुश्किल है। बस यह समझ कर कभी दुनियां की राहत व लज़्ज़त का लालच न करना चाहिए और आख़िरत की दुरुस्ती के लिए हर तरह की मेहनत को खुशी से उठाना चाहिए। ग़रज़ ऐसी–ऐसी बातें नफ़्स से करके उसको राह

पर लगाना चाहिए और रोज़ाना इसी तरह समझना चाहिए। और याद रखो कि अगर तुम खुद इसी तरह अपनी भलाई और दुरूस्ती की कोशिश न करोगी तो और कौन आयेगा जो तुम्हारा भला चाहेगा। अब तुम जानो, तुम्हारा काम जाने।

आम आदमियों के साथ बर्ताव का बयान

आम आदमी तीन तरह के हैं—

एक तो वे जिनसे दोस्ती और बहन–साथिन होने का ताल्लुक़ है।

दूसरे वे जिनसे सिर्फ़ जान–पहचान है।

तीसरे वह जिनसे जान–पहचान भी नहीं। हर एक के साथ बर्ताव करने का तरीक़ा अलग है।

जिनसे जान पहचान भी नहीं, अगर उनके साथ मिलना–बैठना हो, तो इन बातों का ख़्याल रखो कि वह इधर–उधर की बातें और ख़बरें बयान करें, इनकी तरफ़ कान मत लगाओ और वे जो कुछ वाही–तबाही बकें, उनसे बिल्कुल बहरी बन जाओ, उनसे बहुत मत मिलो, उनसे कोई उम्मीद और इल्तिजा मत करो और अगर कोई बात उनसे शरअ के ख़िलाफ़ देखो, तो अगर यह उम्मीद हो कि नसीहत मान लेंगी, तो बहुत नर्मी से समझा दो और जिनसे दोस्ती और राह व रस्म है, उनमें इसका ख़्याल रखो कि एक तो हर किसी से दोस्ती और राह व रस्म मत पैदा करो, क्योंकि हर आदमी दोस्ती के क़ाबिल नहीं होता। हां, जिसमें ये बातें हों, उनसे ताल्लुक़ रखने में कोई हरज नहीं।

एक–यह कि वह अक़्लमंद, हो क्योंकि बेवकूफ़ आदमी से एक तो दोस्ती का निबाह नहीं होता, दूसरे कभी ऐसा होता है कि तुमको फ़ायदा पहुंचाना चाहता है, मगर बेवकूफ़ी की वजह से और उल्टा नुक़्सान कर गुज़रता है, जैसे किसी ने रीछ पाला था। एक बार यह आदमी सो गया और उसके मुंह पर बार–बार मक्खी आकर बैठती थी। उस रीछ को जो गुस्सा आया मक्खी के मारने को एक बड़ा पत्थर उठाकर लाया और ताक कर उसके मुंह पर खींच मारा, मक्खी तो उड़ गयी और उस बेचारे का सर खील–खील हो गया।

दूसरी–बात यह कि उसके अख़्लाक़ और आदतें और मिजाज़ अच्छा हो। अपने मतलब की दोस्ती न रखे और गुस्से के वक़्त अपने आपे से बाहर न हो जाए, छोटी से छोटी बात में तोते की–सी आंखें न बदले।

तीसरी—बात यह कि दीनदार हो, क्योंकि जो आदमी दीनदार नहीं है, वह अल्लाह तआला का हक़ अदा नहीं करता, तो तुमको उससे क्या उम्मीद है कि उससे वफ़ा होगी। दूसरी ख़राबी यह है कि जब तुम बार—बार उसको गुनाह करते देखोगी और दोस्ती की वजह से नर्मी करोगी तो ख़ुद तुमको भी इस गुनाह से नफ़रत न रहेगी। तीसरी ख़राबी यह है कि उसकी बुरी सोहबत का असर तुमको भी पहुंचेगा और वैसे ही बुरे गुनाह तुमसे भी होने लगें।

चौथी—बात यह है कि उसको दुनिया का लालच न हो, क्योंकि लालच वाले के पास बैठने से ज़रूर दुनिया का लालच बढ़ता है। जब हर वक़्त उसको उसी धुन और उसी चर्चे में देखोगी, कहीं ज़ेवर का ज़िक्र है, कहीं कपड़े की फ़िक्र है, कहीं घर के सामान का धन्धा है, तो कहां तक तुम को ख़्याल न होगा और जिसको ख़ुद ही लालच न हो, मोटा कपड़ा हो, मोटा खाना हो, हर वक़्त दुनिया के फ़ना होने का ज़िक्र हो, उसके पास बैठकर जो कुछ थोड़ा—बहुत लालच होता है, वह भी दिल से निकल जाता है।

पांचवीं—बात यह कि उसकी आदत झूठ बोलने की न हो, क्योंकि झूठ बोलने वाले आदमी का कुछ भरोसा नहीं, ख़ुदा जाने उसकी किस बात को सच्चा समझकर आदमी धोखे में आ जाए। इन पांचों बातों का ख़्याल तो दोस्ती पैदा करने से पहले कर लेना चाहिए। और जब किसी में पांचों बातें देख लीं और राह व रस्म पैदा कर ली, अब उसके हक़ अच्छी तरह अदा करो और वे हक़ ये हैं कि जहां तक हो सके, उसकी ज़रूरत में काम आओ। अगर अल्लाह तआला गुन्जाइश दे, उसकी मदद करो। उसका भेद किसी से मत कहो, उसका ऐब किसी से मत कहो। जो कोई उसको बुरा कहे उससे ख़बर मत करो। जब वह बात करे कान लगा कर सुनो। अगर उसमें कोई ऐब देखो तो बहुत नर्मी और ख़ैरख़ाही से तन्हाई से समझा दो। अगर उससे कोई ख़ता हो जाए, माफ़ कर दो। उसकी भलाई के लिए अल्लाह तआला से दुआ करती रहो।

अब रह गए वे आदमी जिनसे सिर्फ़ जान—पहचान है, ऐसे आदमी से बड़ी सावधानी चाहिए, क्योंकि जो दोस्त हैं, वे तो तुम्हारे भले में हैं और जिनसे जान—पहचान भी नहीं, वे अगर भले में नहीं तो बुराई में भी नहीं और ये जो बचकर रह गए, जिनसे न दोस्ती है और न वे बिल्कुल अनजाने हैं, ज़्यादा तक्लीफ़ और बुराई ऐसों ही से पहुंचती है कि ज़ुबान से दोस्ती और ख़ैरख़ाही का दम भरते हैं और अन्दर ही अन्दर जड़ें खोदते हैं और जलते हैं और हर वक़्त ऐब ढूंढा करते हैं और बदनाम करने की चिन्ता में

रहता हैं। इसलिए जहां तक हो सके किसी से जान–पहचान और मुलाक़ात मत पैदा करो और उनकी दुनिया को देखकर लालच मत करो और इनके लिए अपना दीन (धर्म) मत बर्बाद करो।

अगर कोई तुमसे दुश्मनी करे तो उससे दुश्मनी मत करो, क्योंकि उसकी तरफ़ से फिर तुम्हारे साथ और ज़्यादा बुराई होगी तो तुम उसे सहार न सकोगी और इसी धंधे में लग जाओगी और दुनिया और दीन दोनों का नुक़सान होगा। इस वास्ते नज़रें चुरा लेना ही बेहतर है और अगर कोई तुम्हारी इज़्ज़त–आबरू ख़ातिरदारी करे या तुम्हारी तारीफ़ करे और मुहब्बत ज़ाहिर करे तो तुम इस धोखे में मत आना और इस भरोसे मत रहना क्योंकि बहुत कम आदमी हैं जिनका भीतर–बाहर एक–सा हो और बहुत कम इत्मीनान है कि उनके ये बर्ताव साफ़ दिल से हों। इसकी उम्मीद हरगिज़ किसी से मत रखो और जो कोई तुम्हारी ग़ीबत करे, तुम सुनकर न गुस्सा हो, न यह ताज्जुब करो कि उसने मेरे साथ यह मामला किया और मेरे हक़ का या मेरे एहसान का या मेरे बड़े होने का या मेरे ताल्लुक़ का कुछ ख़्याल न किया, क्योंकि अगर इंसाफ़ करके देखो तो तुम भी खुद सब के साथ आगे–पीछे एक हालत में नहीं रह सकती हो, सामने और बर्ताव होता है और पीछे और बर्ताव, फिर जिस बला में खुद फंसी हो, औरो पर क्यों ताज्जुब करती हो।

खुलासा यह है कि किसी से किसी तरह की भलाई की उम्मीद मत रखो, न तो किसी क़िस्म के फ़ायदे पहुंचने की और न किसी की नज़र में आबरू बढ़ने की और न किसी के दिल में मुहब्बत पैदा होने की—जब किसी से कोई उम्मीद न रखोगी, तो फिर कोई तुमसे कैसा ही बर्ताव करे, कभी ज़रा भी रंज न होगा और खुद जहां तक हो सके सबको फ़ायदा पहुंचाओ। अगर किसी की कोई भलाई की बात समझ में आये और यह यक़ीन हो कि वह मान लेगा तो उसको बतला दो, नहीं तो ख़ामोश रहो। अगर किसी से कोई फ़ायदा पहुंच जाये तो अल्लाह तआला का शुक्र करो और उस आदमी के लिए दुआ कर दो और किसी से कोई नुक़्सान या तक्लीफ़ पहुंचे तो यों समझो कि मेरे किसी गुनाह की सज़ा है। अल्लाह तआला के सामने तौबा करो और उस आदमी से रंज मत रखो, ग़रज़ न लोगों की भलाई को देखो न बुराई, बल्कि हर वक़्त अल्लाह तआला पर निगाह रखो और उनसे ही काम रखो और उनकी ही ताबेदारी और याद में लगी रहो। अल्लाह तआला तौफ़ीक़ बख़्शे। आमीन !!

(भाग-8)

बहिश्ती ज़ेवर

हज़रत मौलाना अशरफ़ अली थानवी (रह॰)

www.idaraimpex.com

विषय सूची

क्या ? कहां ?

असली बहिश्ती ज़ेवर

का

आठवां हिस्सा

بِسْمِ اللّٰہِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِیْمِ

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

नेक बीबियों के हाल में

इस बयान से पहले बरकत के वास्ते पैग़म्बरे ख़ुदा सल्ल० का थोड़ा–सा ज़िक्र किया जाता है, ताकि पढ़ने वालियां अपने पैग़म्बर सल्ल० को और आपकी आदतों को भी जान लें जिससे उनको मुहब्बत पैदा हो और पैरवी करें और यह बात भी है कि उन सबको नेकी की जो दौलत मिली, वह आप ही की बरकत से मिली है। पहली उम्मत की बीबियों को तो आपके नूर[1] से और इस उम्मत की बीबियों को आपकी शरअ से, इसलिए पहले आपका ज़िक्र लिखकर फिर बीबियों का हाल शुरू होगा।

पैग़म्बर साहब सल्ल० की पैदाइश और वफ़ात वग़ैरह का बयान

आपका मुश्हूर मुबारक नाम मुहम्मद है, सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम।

1. यानी आपके नूर की बरकत से, इसलिए कि तमाम जगत का वजूद आप ही की वजह से हुआ है।

आपके पिता का नाम अब्दुल्लाह है और उनके पिता का नाम अब्दुल मुत्तलिब और उनके पिता का नाम हाशिम और उनके पिता का नाम अब्द मुनाफ़ है। आपकी माता का नाम आमिना है और उनके पिता का नाम वहब और उनके पिता का नाम अब्दे मुनाफ़ और उनके पिता का नाम ज़ुहरा। यह अब्दे मुनाफ़ और हैं।

पीर के दिन (सोमवार) रबीउल् अव्वल के महीने में, जिस साल एक काफ़िर बादशाह हाथी लेकर काबा पर उसके ढाने के लिए चढ़ आया था, आप पैदा हुए।[1]

आप पांच साल और दो दिन के थे, उस वक़्त आपकी दूध-पिलाई ने आपको आपकी माता के पास पहुंचा दिया। जब आप छः साल के हो गये। आपकी मां आपको साथ लेकर आपके दादा की ननिहाल बनी नज्जार मदीना में गयीं और एक महीने बाद लौटते हुए अब्वा नामी जगह पर इंतिक़ाल कर गयीं। उम्मे ऐमन भी साथ थीं। वह आपको मक्का लायीं। आपके पिता का इंतिक़ाल उसी वक़्त हो गया था, जब आप मां के पेट में थे।

आपको आपके दादा अब्दुल मुत्तलिब ने पालना-पोसना शुरू किया। फिर आपके दादा का इंतिक़ाल हो गया। आपके चाचा अबू तालिब ने आपकी परवरिश की।

वह आपको शाम की तरफ़ व्यापार के लिए ले गये थे, राह में बहीरा ने जो ईसाई आलिम और पादरी था, आपको देखा और आपके चचा से ताकीद की कि आपकी हिफ़ाज़त करो, यह नबी हैं और आपको मक्का वापस करा दिया।

फिर आप खुद हज़रत ख़दीजा का माल लेकर व्यापार के लिए शाम को चले। राह में नस्तूरा ने, जो कि ईसाई आलिम और पादरी था, आपके नबी होने की गवाही दी। जब आप लौटे तो हज़रत ख़दीजा से आपकी शादी हो गयी। उस वक़्त आपकी उम्र 25 वर्ष की थी और हज़रत ख़दीजा रज़ि० चालीस वर्ष की थीं।

फिर चालीस वर्ष की उम्र में आपको नुबूवत मिली और आप बावन या तिरपन वर्ष के थे कि आपको मेराज हुई।

नुबुवत के बाद तेरह वर्ष आप मक्का में रहे। फिर जब काफ़िरों ने बहुत परेशान किया, तो अल्लाह तआला के हुक्म से आप मदीना मुनव्वरा

---

1. इस्तीआब वग़ैरह से।

चले गये और दूसरा वर्ष मदीना मुनव्वरा में आये हुए था कि बद्र की लड़ाई हुई, फिर और लड़ाइयां हुईं। सब छोटी–बड़ी मिलाकर पैंतीस हुईं। मशहूर निकाह आपके ग्यारह बीबियों से हुए, जिनमें दो आपके सामने इंतिक़ाल कर गयीं—एक तो हज़रत ख़दीजा रज़ि०, दूसरे हज़रत ज़ैनब ख़ुज़ैमा की बेटी। आपकी वफ़ात के वक़्त जो ज़िंदा थीं—हज़रत सौदा रज़ि०, हज़रत आइशा रज़ि० हज़रत हफ़्सा रज़ि०, हज़रत उम्मे सलमा रज़ि०, हज़रत ज़ैनब, जहश की बेटी रज़ि०, हज़रत उम्मे हबीबा रज़ि०, हज़रत जुवैरिया रज़ि०, हज़रत मैमूना रज़ि०, हज़रत सफ़ीया रज़ि०।

आपकी औलाद चार लड़कियां थीं। सबसे बड़ी हज़रत ज़ैनब रज़ि० थीं। उनसे छोटी हज़रत उम्मे कुल्सूम और रुक़ैया थीं। और सबसे छोटी हज़रत फ़ातिमा रज़ि० थीं। ये सब हज़रत ख़दीजा से हैं। तीन या चार या पांच लड़के थे—हज़रत क़ासिम रज़ि०, हज़रत अब्दुल्लाह रज़ि०, हज़रत तैयब रज़ि० और हज़रत ताहिर रज़ि०। ये हज़रत ख़दीजा से हैं और एक हज़रत इब्राहीम रज़ि० हज़रत मारिया रज़ि० से हैं, जो आपकी बांदी थीं और उनका दूध पीने की उम्र में ही इंतिक़ाल हो गया था। इस तरह तो पांच हुए। कुछ ने कहा कि अब्दुल्लाह का नाम तैयब भी है, तो इस तरह चार हुए। कुछ ने कहा कि तैयब भी उन्हीं अब्दुल्लाह का नाम है, और ताहिर भी, तो इस तह तीन हुए। हज़रत अब्दुल्लाह नुबूवत के बाद पैदा हुए और मक्का ही में इंतिक़ाल कर गए और बाक़ी पैग़म्बरज़ादे नुबूवत से पहले पैदा हुए और नुबूवत से पहले ही इंतिक़ाल कर गये।

आप मदीने में दस वर्ष तक रहे, फिर बुध के दिन सफ़र के महीने में दो दिन रहे थे, आप बीमार हुए और रबीउल अव्वल की 12 तारीख़, पीर के दिन चाश्त के वक़्त तिर्सेठ साल की उम्र में वफ़ात फ़रमा गये और मंगल के दिन दोपहर ढले दफ़न किये गये। कुछ ने कहा कि मंगल का दिन गुज़र कर रात आ गयी थी और यह देर इसलिए हुई थी कि सहाबा ग़म व सद्मा से ऐसे परेशान थे कि किसी का होश दुरुस्त नहीं था।

हज़रत पैग़म्बर सल्ल० की बेटियों में हज़रत ज़ैनब रज़ि० के एक लड़का पैदा हुआ अली रज़ि० और एक लड़की उमामा रज़ि०। दोनों की नस्ल नहीं चली। हज़रत रुक़ैया से एक लड़का पैदा हुआ अब्दुल्लाह, छः साल का इंतिक़ाल कर गया। हज़रत उम्मे कुलसूम की कोई औलाद नहीं हुई और हज़रत फ़ातिमा रज़ि० के हसन रज़ि०, हुसैन रज़ि० हुए, जिनकी औलाद बहुत कस्रत से फैली।

पैग़म्बर सल्ल० के मिज़ाज व आदत का बयान

आप दिल के बड़े सखी थे, किसी सवाले से 'नहीं' कभी नहीं की, अगर हुआ, दे दिया, न हुआ नर्मी से समझा दिया, दूसरे वक़्त देने का वायदा कर लिया। आप बातचीत के बड़े सच्चे थे, आपकी तबीयत बहुत नर्म थी। सब बातों में सहूलत और आसानी बरतते, अपने पास उठने-बैठने वालों का बड़ा ख़्याल रखते थे कि उनको किसी तरह की अपने से तक्लीफ़ न पहुंचे, यहां तक कि अगर रात को उठकर बाहर जाना होता, तो बहुत ही आहिस्ता जूती पहनते, बहुत हल्के से किवाड़ खोलते, बहुत आहिस्ता चलते और अगर घर में तशरीफ़ लाते तो घर वाले सोये रहते तो भी सब काम चुपके-चुपके करते, कभी किसी सोते की नींद न ख़राब हो जाए, हमेशा नीची निगाह ज़मीन की तरफ़ रखते, जब बहुत से आदमियों के साथ चलते, तो औरों से पीछे रहते, जो सामने आता उसको पहले खुद सलाम करते, जब बैठते तो आजिज़ी की सूरत बनाकर। जब खाना खाते, तो बहुत ही ग़रीबों की तरह बैठकर, कभी पेट भर खाना नहीं खाया।

हर वक़्त अल्लाह तआला के ख़ौफ़ से ग़मगीन-से रहते, हर वक़्त इसी सोच में लगे रहते, इसी धुन में किसी करवट चैन न आता। ज़्यादा वक़्त ख़ामोश रहते, बिना ज़रूरत के बातें न करते। जब बोलते तो ऐसा साफ़ कि दूसरा आदमी ख़ूब समझ ले। आपकी बात न तो इतनी लम्बी होती कि ज़रूरत से ज़्यादा, न इतनी कम होती कि मतलब भी समझ में न आये। बात में ज़रा सख़्ती न थी, न बर्ताव में किसी तरह की सख़्ती थी। अपने पास आने वाले की बे-क़द्री और ज़िल्लत न करते थे। किसी की बात न काटते थे, हां, अगर शरअ के ख़िलाफ़ कोई बात करता, तो या तो मना फ़रमाते या वहां से खुद उठ जाते। खुदा की नेमत कैसी ही छोटी क्यों न हो, आप उसको बहुत बड़ा समझते थे। कभी उसमें ऐब न निकालते थे कि इसका मज़ा अच्छा नहीं है, या इसमें बदबू आती है, हां, जिस चीज़ को दिल न कहता उसको खुद खाते, न उसकी तारीफ़ करते

और न उसमें ऐब निकालते।

दुनिया की कैसी ही बात हो, उसकी वजह से आपको ग़ुस्सा न आता। जैसे किसी के हाथ से नुक़सान हो गया, किसी ने काम को बिगाड़ दिया। यहां तक कि हज़रत अनस रज़ि० कहते हैं कि मैंने दस वर्ष तक आपकी ख़िदमत की। इस दस वर्ष में मैंने जो कुछ कर दिया, उसको यों नहीं फ़रमाया कि क्यों किया और जो नहीं किया उसको यों नहीं पूछा, कि क्यों नहीं किया,[1] हां, अगर कोई बात दीन के ख़िलाफ़ हो, तो उस वक़्त आपके गुस्से की कोई ताब न ला सकता था अपने नीजी मामले में आपने गुस्सा नहीं किया। अगर किसी से नाराज़ होते, तो सिर्फ़ मुंह फेर लेते यानी ज़ुबान से कुछ सख़्त व सुस्त न फ़रमाते और जब ख़ुश होते तो नीची निगाह कर लेते यानी शर्म इतनी थी कि क्या कुंवारी लड़की को होगी।

बड़ी हंसी आती तो यों ही तनिक मुस्करा देते यानी आवाज़ से न हंसते, सब में मिले-जुले रहते, यह नहीं कि अपनी शान बनाकर लोगों से खिचने लगें, बिल्क कभी किसी का दिल ख़ुश करने के लिए हंसी मज़ाक़ भी फ़रमा लेते, लेकिन इसमें भी वही बात फ़रमाते जो सच्ची होती।

नफ़्लें इतनी पढ़ते कि खड़े-खड़े दोनों पांव सूज जाते। जब क़ुरआन पढ़ते या सुनते तो ख़ुदा के ख़ौफ़ और मुहब्बत से रोते। आजिज़ी, इतनी मिज़ाज में थी कि अपनी उम्मत को हुक्म फ़रमाया कि मुझको बहुत मत बढ़ा देना और कोई ग़रीब मामा सील आ कर कहती कि मुझको आपसे अलग कुछ कहना है। आप फ़रमाते अच्छा कहीं सड़क पर बैठकर कह ले। वह जहां बैठ जाती, आप भी वहीं बैठ जाते। कोई बीमार हो, अमीर या ग़रीब, उसको पूछते, किसी का जनाज़ा होता, आप उस पर तशरीफ़ लाते। कैसा ही कोई ग़ुलाम-नौकर दावत कर देता, आप क़ुबूल फ़रमा लेते। अगर कोई जौ की रोटी और बदमज़ा चर्बी की दावत करता, आप उससे भी उज़्र न फ़रमाते।

ज़ुबान से कोई बेकार बात न निकलती। सबका दिल रखते, कोई

---

1. और कुछ रिवायतों में यह भी आया है, अब्दुर्रज़्ज़ाक की सनद के साथ कि हज़रत अनस रज़ि० फ़रमाते हैं कि जब कभी हुज़ूर सल्ल० के कोई घर वाले (किसी ख़ता पर) उन्हें मलामत करते तो हुज़ूर सल्ल० उनको मना फ़रमाते और फ़रमाते कि जो कुछ तक़्दीर में था, वह हो गया।

—कंज़ुल उम्माल

ऐसा बर्ताव न फ़रमाते, जिससे कोई घबराये। ज़ालिम और तकलीफ़ पहुंचाने वालों की शरारत से बड़े अच्छे ढंग से अपना बचाव भी करते। मगर उनके साथ उसी खुले दिल और अच्छे अख़्लाक़ से पेश आते। आपके पास हाज़िर होने वालों में अगर कोई न आता तो उसको पूछते। हर काम को एक क़ायदे से करते यह नहीं कि कभी कुछ कर दिया, कभी किसी तरह कर लिया। जब उठते खुदा की याद करते, जब बैठते, यह नहीं कि सबको फांद कर बड़ी जगह जाकर बैठें।

अगर बात करने के वक़्त कई आदमी होते तो बारी–बारी सबकी तरफ़ मुंह करके बात करते, यह नहीं कि एक तरफ़ तो तवज्जोह है, दूसरों को देखते भी नहीं। सबके साथ ऐसा बर्ताव करते कि हर आदमी यही समझता कि मुझे सबसे ज़्यादा चाहते हैं अगर कोई पास आकर बैठता या बात शुरू करता, उसके लिए रूके बैठे रहते। जब पहले वही उठ जाता, तब आप उठते। आपके अख़्लाक़ सबके साथ आम थे।

घर में जाकर मस्नद–तकिया[1] लगा कर बैठते थे। घर के बहुत से काप अपने हाथ से कर लेते, कहीं बकरी का दूध निकाल लेते, कहीं अपने कपड़े साफ़ कर लेते। अपना काम अक्सर अपने हाथ से कर लिया करते। कैसा ही बुरे से बुरा आदमी आपके पास आता उससे भी मेहरबानी के साथ मिलते, उसका दिल न तोड़ते। ग़रज़ सारे आदमियों से ज़्यादा आप ही के अच्छे अख़्लाक़ थे।

अगर किसी से कोई ना–पसंद बात हो जाती तो कभी उसके मुंह–दर–मुंह न जतलाते, न तबियत में सख़्ती थी और न कभी सख़्ती की सूरत बनाते, जैसे कुछ लोगों की आदत होती है कि किसी के डराने–धमकाने को झूठ–मूझ की सूरत बना कर वैसी ही बातें करने लगते हैं। न आपकी आदत चिल्लाने की थी। जो कोई आपके साथ बुराई करता आप कभी उसके साथ बुराई न करते, बल्कि माफ़ कर दिया करते।

कभी अपने हाथ से किसी गुलाम को, ख़िदमतगुज़ार को, औरत को बल्कि किसी जानवर तक को भी नहीं मारा और शरीअत के हुक्म से सज़ा देना और बात है। और आप पर कोई ज़्यादती करता तो उसका बदला न लेते, हर वक़्त हंसमुख़ रहते और नाक–भौं न चढ़ाते। यह मतलब नहीं कि बे–ग़म रहते, क्योंकि ऊपर आ चुका है कि हर वक़्त ग़म और सोच में

1. यानी आराम के लिए, न कि घमंड के तौर पर।

रहते।

मिज़ाज बहुत नर्म था, न बात में सख़्ती, न बर्ताव में सख़्ती, न बेबाकी थी कि जो चाहा, फट से कह दिया, न किसी का ऐब बयान करते, न किसी चीज़ के देने में कमी फ़रमाते। इन आदतों की हवा भी नहीं लगी थी, जैसे अपनी बड़ाई करना, किसी से बहसा–बहसी करना, जिस बात में कोई फ़ायदा न हो, उसमें लगना, न किसी की बुराई, न किसी के ऐब की खोद–कुरेद करते और वही बात मुंह से निकालते, जिसमें सवाब मिला करता है। कोई बाहर का परदेसी आ जाता और बोल–चाल में, पूछने या कहने में बद–तमीज़ी करता, आप उसकी सहार फ़रमाते। किसी को अपनी तारीफ़ न करने देते और हदीसों में बड़ी अच्छी–अच्छी बातें लिखी हैं जितनी हमने बतला दी हैं, अगर अमल करो, ये भी बहुत हैं। अब नेक बीबियों के हाल सुनो।

हज़रत हव्वा अलैहिस्सलाम का ज़िक्र

यह हज़रत आदम अलैहिस्सलाम की बीवी और तमाम दुनिया के आदमियों की मां हैं। अल्लाह तआला ने उनको अपनी कुदरत से हज़रत आदम अलै० की बायीं पसली से पैदा किया और फिर उनके साथ निकाह कर दिया और जन्नत में रहने की जगह दी।

वहां एक पेड़ था, उसके खाने को मना कर दिया। उन्होंने ग़लती से शैतान के बहकाने में आकर उस पेड़ से खा लिया। इस पर अल्लाह का हुक्म हुआ कि जन्नत से दुनिया में जाओ। दुनिया में आकर अपनी ग़लती पर बहुत रोयीं। अल्लाह तआला ने उनकी ग़लती माफ़ कर दी और पहले हज़रत आदम अलैहिस्सलाम से अलग हो गयीं थीं, अल्लाह तआला ने फिर उनसे मिला दिया। फिर दोनों से बहुत–सी औलाद पैदा हुई।

फ़ायदा—बीबियों ! देखो हज़रत हव्वा ने अपनी ग़लती मान ली, तौबा कर ली। कुछ औरतें अपनी ग़लती को बनाया करती हैं और कभी अपने ऊपर बात नहीं आने देतीं और ऐसी तो बहुत हैं, जो गुनाह कर रही हैं, सारी उम्र करती रहती हैं, उसको छोड़ती नहीं, ख़ास–कर ग़ीबत और रस्मों की पाबंदी। बीबियों ! इस आदत को छोड़ो। जो गलती हो जाए उसको तुरन्त छोड़ कर तौबा कर लिया करो।

हज़रत नूह अलैहिस्सलाम की मां का ज़िक्र

क़ुरआन शरीफ़ में है कि हज़रत नूह अलैहिस्सलाम ने अपने साथ अपनी मां के लिए भी दुआ की। तफ़्सीरों में लिखा है कि आपके मां–बाप मुसलमान थे।

फ़ायदा—देखो, ईमान की क्या बरकत है कि ईमानदार के वास्ते पैग़म्बर भी दुआ करते हैं। बीबियों ! ईमान को मज़बूत रखो।

हज़रत सारा अलैहिस्सलाम का ज़िक्र

यह हज़रत इब्राहीम अलै० पैग़म्बर की बीवी और हज़रत इस्हाक़ अलै० की मां हैं। इनका फ़रिश्तों से बोलना और फ़रिश्तों का इनसे यह कहना कि तुम सारे घर वालों पर ख़ुदा की रहमत और बरकत है क़ुरआन में आया है।

इनकी पाकदामनी और इनकी दुआ क़ुबूल होने का एक क़िस्सा हदीस[1] में आया है कि जब हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम हिजरत करके शाम को चले, यह भी सफ़र में साथ थीं। रास्ते में किसी ज़ालिम बादशाह की बस्ती आयी। उस कम–बख़्त से किसी ने जा लगाया कि तेरी अमलदारी में एक बीबी बड़ी ख़ूबसूरत आयी हैं। उसने हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम को बुलाकर पूछा, तुम्हारे साथ कौन औरत है। आपने फ़रमाया कि मेरे दीन की बहन हैं। बीवी इसलिए नहीं फ़रमाया कि वह उनको ख़ाविंद समझ कर मार डालता, जब वहां से लौट कर आये, हज़रत सारा से कहा कि मेरी बात झूठी मत कर देना और वैसे तुम दीन में मेरी बहन ही हो ? उसने हज़रत सारा को पकड़वा बुलाया। जब उनको मालूम हुआ कि उसकी नीयत बुरी है, उन्होंने वुज़ू करके नमाज़ पढ़ी और दुआ की कि ऐ अल्लाह! अगर मैं तेरे पैग़म्बर पर ईमान रखने वाली और हमेशा अपनी आबरू बचाने वाली हूं तो इस काफ़िर का मुझ पर क़ाबू न चलने

---

1. बुख़ारी शरीफ़।

दीजिए।

बस उसका यह हाल हुआ कि लगा हाथ-पांव दे-दे मारने, फिर तो खुशामद करने लगा और कहा कि ऐ बीबी ! अल्लाह से दुआ करो मैं अच्छा हो जाऊं। मैं पक्का वायदा करता हूं कि कुछ न कहूंगा, उनको भी यह ख़्याल आया कि अगर मर जाएगा तो लोग कहेंगे कि उसी औरत ने मार डाला होगा। ग़रज़ उसके अच्छे होने की दुआ कर दी। तुरंत चंगा हो गया। उसने फिर शरारत का इरादा किया। आपने फिर बद-दुआ की। उसने फिर खुशामद की। आपने फिर दुआ दी।

ग़रज़ तीन बार ऐसा ही क़िस्सा हुआ। आख़िर झल्ला कर कहने लगा कि तुम किस बला को मेरे पास ले आये, इनको विदा करो और हज़रत हाजरा को, जिनको अपने जुल्म से बांदी बना रखा था और वह क़िब्तियों की क़ौम से थी, और इसी तरह खुदा ने उनकी इज़्ज़त भी बचा रखी थी। ख़िदमत के लिए उनके हवाले किया। माशाअल्लाह ! इज़्ज़त-आबरू से हज़रत इब्राहीम के पास आ गयीं।

फ़ायदा—बीबियों ! देखो पारसाई कैसी बरकत की चीज़ है। ऐसे आदमी कि किस तरह अल्लाह तआला हिफ़ाज़त करते हैं और यह भी मालूम हुआ कि नमाज़ से मुसीबत टलती है और दुआ क़ुबूल होती है। जब कोई परेशानी हुआ करे, बस नफ़्लों में लग जाया करो और दुआ किया करो।

हज़रत हाजरा अलैहिस्सलाम का ज़िक्र

जिस ज़ालिम बादशाह का क़िस्सा ऊपर आ चुका है, उसने हज़रत हाजरा को बांदी के तौर पर रख छोड़ा था, जैसा अभी बयान हुआ। फिर उसने हज़रत सारा को दे दिया और हज़रत सारा ने उनको अपने शौहर हज़रत इब्राहीम अलै० को दे दिया। उनसे हज़रत इस्माईल अलै० पैदा हुए।

अभी हज़रत इस्माईल दूध-पीते बच्चे ही थे कि अल्लाह तआला को

1. मतलब यह है कि मैं ज़रूर मुसलमान हूं, बस इस्लाम की बरकत से मुझे इस बला से बचाइए। यह शर्त ताकीदे मज़्मून के लिए, है न कि शक दूर करने के लिए।

मंज़ूर हुआ कि मक्का शरीफ़ को हज़रत इस्माईल की औलाद से आबाद करें। उस वक़्त उस जगह जंगल था और काबा भी बना हुआ न था। अल्लाह तआला ने हज़रत इब्राहीम अलै० को हुक्म दिया कि हज़रत इस्माईल अलै० और उनकी मां हाजरा को उस मैदान में छोड़ दो, हम इनके निगरां हैं। खुदा के हुक्म से हज़रत इब्राहीम अलै० मां और बच्चे दोनों को लेकर उस वीरान जंगल में, जहां अब मक्का आबाद है, पहुंचा आये और उनके पास एक मश्कीज़ा पानी का और एक थैला खुरमे का रख दिया। जब पहुंचा कर वहां से लौटने लगे तो हज़रत हाजरा अलैहिस्सलाम उनके पीछे चलीं और पूछा हमको आप अकेले यहां छोड़े जाते हैं ? हज़रत इब्राहीम ने उनको कुछ जवाब न दिया।[1] तब उन्होंने पूछा कि अल्लाह तआला ने तुमको इसका हुक्म फ़रमाया है ? इब्राहीम अलै० बोले, हां। कहने लगीं, तो कुछ ग़म नहीं। वह आपही हमारी ख़बर रखेंगे। और अपनी जगह जाकर बैठ गयीं। छोहारे खाकर पानी पी लेतीं और हज़रत इस्माईल अलै० को दूध पिलातीं। जब मश्क का पानी ख़त्म हो गया तो मां–बेटे पर प्यास का ग़लबा हुआ। और हज़रत इस्माईल की तो यह हालत हुई कि मारे प्यास के बल खाने लगे। मां इस हालत में अपने बच्चे को न देख सकीं और पानी देखने को सफ़ा पहाड़ पर चढ़ीं और चारों तरफ़ निगाह दौड़ायी, शायद कहीं पानी नज़र आये। जब कहीं नज़र नहीं पड़ा तो उस पहाड़ से उतर कर दूसरे पहाड़ मर्वा की ओर चलीं कि उस पर चढ़कर देखें। बीच के मैदान में एक टुकड़ा ज़मीन का गढ़ा–सा था, जब तक बराबर ज़मीन पर रहीं तो बच्चे को देख लेतीं। जब उस गढ़े में पहुंची तो बच्चा नज़र न पड़ा, इसलिए दौड़कर उस टुकड़े से निकलकर बराबर मैदान में आ गयीं। ग़रज़ मर्वः पहाड़ पर पहुंची। और इसी तरह चढ़कर वहां भी कुछ पता न चला। उससे उतरकर बेताबी में फिर सफ़ा पहाड़ की ओर चलीं। इसी तरह दोनों पहाड़ों पर कई फेरे किये और उस गढ़े को हर बार दौड़ कर तै करती थीं। अल्लाह तआला को यह बात इतनी पसंद आयी कि हाजियों को हमेशा–हमेशा के लिए इसी तरह हुक्म मर दिया कि दोनों पहाड़ों के बीच में सात फेरे करें। उस टुकड़े में जहां गढ़ा था और अब वह भी बराबर ज़मीन हो गयी है, दौड़कर चला करें। ग़रज़ अख़ीर

---

1. किसी ख़ास मस्लहत से जवाब नहीं दिया और किसी ज़रूरत से ऐसा करना बद अख़्लाक़ी नहीं।

फेरे में मर्वः पहाड़ पर थीं कि उनके कान में एक आवाज़–सी आयी। उसकी तरफ़ कान लगाकर खड़ी हुईं वही आवाज फिर आयी। आवाज़ देने वाला कोई नज़र न आया। हज़रत हाजरा ने पुकार कर कहा कि मैंने आवाज़ सुन ली है। अगर कोई आदमी मदद कर सकता है, तो करे। उसी वक़्त जहां अब ज़म्ज़म का कुंवा है, वहां फ़रिश्ता ज़ाहिर हुआ और अपना बाज़ू ज़मीन पर मारा। वहां से पानी उबलने लगा। उन्होंने चारों तरफ़ मिट्टी का डोल बनाकर उसको घेर लिया और मशक में पानी भर लिया, खुद भी पिया और बच्चे को भी पिलाया।

फ़रिश्ते ने कहा, कुछ खौफ़ मत करना, इस जगह ख़ुदा का घर यानी काबा है। यह लड़का अपने बाप के साथ मिलकर इस घर को बनायेगा और यहां आबादी हो जाएगी। चुनांचे थोड़े ही दिनों में सब चीज़ें ज़ाहिर हो गयीं। एक क़ाफ़िला उधर से गुज़रा वे लोग पानी देखकर ठहर गये और वहीं बस पड़े और हज़रत इस्माईल अलै० की शादी हो गयी।

फिर हज़रत इब्राहीम अलै० अल्लाह तआला के हुक्म से तशरीफ़ लाये और दोनों बाप–बेटों ने मिलकर ख़ाना–ए–क़ाबा बनाया। और वह ज़म्ज़म का पानी उस वक़्त ज़मीन के अन्दर उतर गया था, फिर मुद्दत के बाद कुंआ बन गया।

फ़ायदा—देखो, हज़रत हाजरा को अल्लाह तआला पर कैसा भरोसा था। जब वह उनको मालूम हो गया कि जंगल में रहना अल्लाह तआला के हुक्म से है, फिर कैसी बे–फ़िक्र हो गयीं। और फिर इस भरोसा करने की क्या–क्या बरतकें ज़ाहिर हुईं।

बीबियो ! इस तरह तुमको ख़ुदा पर भरोसा रखना चाहिए, इन्शाअल्लाह सब काम ठीक हो जाएंगे और देखो उनकी बुज़ुर्गी कि दौड़ी तो थीं पानी की खोज में और अल्लाह तआला के नज़दीक वह कैसी प्यासी हो गयीं कि हाजियों के लिए उसको इबादत बना दिया। जो बंदे मक़्बूल होते हैं, उनका मामला ही दूसरा हो जाता है।

बीबियो ! कोशिश करके अल्लाह तआला के हुक्म माना करो, ताकि तुम भी मक़्बूल हो जाओ। फिर तुम्हारे दुनिया के काम भी दीन में शमिल हो जायेंगे।

हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम की दूसरी बीवी का ज़िक्र

खाना–ए–काबा बनाने से पहले दो बार हज़तर इब्राहीम अलैहिस्सलाम और भी मक्का में आए हैं, मगर हज़रत इस्माईल अलै॰ दोनों बार घर में नहीं मिले और ज़्यादा ठहरने का हुक्म न था। सो, पहली बार जब तशरीफ़ लाये, उस वक़्त हज़रत इस्माईल के घर में एक बीवी थी, उनसे पूछा कि किस तरह गुज़र होता है। कहने लगी, बड़ी मुसीबत में हैं। आपने फ़रमाया जब तुम्हारे ख़ाविंद आयें, उनसे मेरा सलाम कहना और यह कहना कि अपने दरवाज़े की चौखट बदल दो।

चुनांचे हज़रत इस्माईल अलै॰ घर आये तो सब हाल मालूम हुआ। आपने फ़रमाया, वह मेरे वालिद थे और चौखट तू है। वह यों कह गये हैं। कि तुझको छोड़ दूं। उसको तलाक़ देकर फिर एक और बीवी से निकाह किया।

जब हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम आये हैं, तो यह बीवी घर में थीं। उन्होंने बड़ी आवभगत की। आपने उनसे भी गुज़र–बसर का हाल पूछा। उन्होंने कहा, अल्लाह तआला का शुक्र है, बहुत आराम में हैं। आपने उनके लिए दुआ की और फ़रमाया, जब तुम्हारे शौहर आए तो मेरा सलाम कहना और कहना कि अपने दरवाज़े की चौखट को क़ायम रखें।

चुनांचे हज़रत इस्माईल अलै॰ को आने के बाद यह हाल भी मालूम हुआ। आपने बीवी से फ़रमाया कि यह मेरे बाप थे। यों कह गये हैं कि तुझको अपने पास रखूं।

फ़ायदा—देखो ना–शुक्री का फल पहली बीवी को क्या मिला कि एक नबी नाराज़ हुए। दूसरे नबी ने अपने पास से अलग कर दिया और सब्र व शुक्र का फल दूसरी बीवी को क्या मिला कि एक नबी ने दुआ दी, दूसरे नबी की ख़िदमत में रहना नसीब हुआ।

बीबियों ! कभी नाशुक्री न करना, जिस हालत में हो, सब्र व शुक्र के

साथ रहना।

नमरूद काफ़िर बादशाह की बेटी का ज़िक्र[1]

नमरूद वह ज़ालिम बादशाह है, जिसने हज़रत इब्राहीम अलै० को आग में डाल दिया। उसकी यह बेटी, जिसका नाम राज़ा है, ऊपर खड़ी हुई देख रही थीं। देखा कि आग ने हज़रत इब्राहीम अलै० पर कुछ असर नहीं किया। पुकार कर पूछा, इसकी क्या वजह है। आपने फ़रमाया 'लाइलाह इल्लल्लाह इब्राहीम ख़लीलुल्लाह०' कहकर चली आओ। वह कलमा पढ़ती हुई बे-धड़क आग के अन्दर चली गयीं। इस पर भी आग ने कोई असर न किया और वहां से निकल कर अपने बाप को बहुत बुरा-भला कहा। उसने उसके साथ बहुत सख़्ती की मगर वह अपने ईमान पर क़ायम रहीं।

फ़ायदा—सुब्हानल्लाह ! कैसी हिम्मत की बीवी थीं कि तक्लीफ़ में भी ईमान को न छोड़ा ! बीबियों ! तुम भी मुसीबत के वक़्तों में हिम्मत मज़बूत रखा करो और बाल बराबर भी दीन के ख़िलाफ़ मत किया करो।

हज़रत लूत अलैहिस्सलाम की बेटियों का ज़िक्र

जब अल्लाह तआला ने लूत अलैहिस्सलाम के पास फ़रिश्ते भेजे और उन्होंने आकर ख़बर दी कि अब आपकी क़ौम पर, जिसने आपको नहीं माना, अज़ाब आने वाला है, तो अल्लाह तआला ने यह भी कहला भेजा था, अपने मुसलमान कुंबे को रातों-रात उस बस्ती से निकला ले जाओ। इस मुसलमान कुंबे में आपकी बेटियां भी थीं। ये भी अज़ाब से बच गयी थीं।

फ़ायदा—देखो ईमान कैसी बरकत की चीज़ है कि दुनिया में जो ख़ुदा का अज़ाब आता है, ईमान उससे भी बचा लेता है।

-बीबियों ! ईमान को ख़ूब मज़बूत करो और वह मज़बूत होता है इस

1. यह किस्सा 'अजाइबुल कसस' से लिया गया।

तरह कि सब हुक्म बजा लाओ और सब गुनाहों से बचो।

हज़रत अय्यूब अलैहिस्सलाम की बीवी का ज़िक्र

इनका नाम रहमत है। जब हज़रत अय्यूब अलै० का तमाम जिस्म ज़ख़्मी हो गया और सब ने पास आना छोड़ दिया, यह बीबी उस वक़्त ख़िदमत में लगी रहतीं और हर तरह की तक्लीफ़ उठातीं। एक बार उनको आने में देर हो गयी थी। हज़रत अय्यूब अलै० ने गुस्से में क़सम खायी कि अच्छा हो जाऊं तो इनके सौ लकड़ियां मारूंगा। जब आपको सेहत हो गयी तो अपनी क़सम पूरी करने का इरादा किया। अल्लाह तआला ने अपनी रहमत से यह आसान हुक्म कर दिया कि तुम एक झाड़ू लो, जिसमें सौ सींकें हों और एक बार मार दो।

फ़ायदा—देखो कैसी सब्र करने वाली बीबी थीं कि ऐसी हालत में भी बराबर अपने शौहर की ख़िदमत करती रहीं। और बीमारी में उनकी क़सम से मालूम होता है कि मिज़ाज कुछ नाज़ूक हो गया था, वह उसको भी सहती थीं। इसी ख़िदमत और सब्र की बरकत थी कि अल्लाह ने उनको लकड़ियों से बचवा लिया, जिससे मालूम होता है कि अल्लाह तआला को बहुत ही प्यारी थीं कि उसने हुक्म को कैसे आसान कर दिया। अब यह मस्अला नहीं है इस तरह कि अगर कोई क़सम खाये तो झाड़ू मारने से क़सम पूरी न होगी, बल्कि ऐसी क़सम को तोड़कर कफ़्फ़ारा देना होगा।

बीबियों ! शौहर की ताबेदारी और उसके मिज़ाज की नज़ाकत कीं ख़ूब सहार किया करो, तुम भी ऐसी प्यारी बंदी बन जाओगी।

हज़रत यूसुफ़ अलै० की ख़ाला का ज़िक्र

इनका ज़िक्र क़ुरआन मजीद में आया है कि जब हज़रत यूसुफ़ अलै० मिस्त्र के बादशाह हुए और अकाल पड़ा और सब भाई मिलकर अनाज ख़रीदने उनके पास गये, और हज़रत युसूफ़ अलै० ने अपने आपको

पहचनवा दिया, उस वक़्त अपना कुर्ता अपने पिता याकूब अलैहिस्सलाम की आंखों। पर डालने के लिए दिया और यह भी कहा कि सब को यहां ले आओ। चुनांचे हज़रत याकूब अलैहिस्सलाम की रोशनी फिर ठीक हो गयी और अपने वतन से चलकर मिस्त्र में हज़रत यूसुफ़ अलै० से मिले तो युसूफ़ अलै० ने अपने वालिद और ख़ाला को ताज़ीम के वास्ते बादशाही तख़्त पर बिठा दिया। और ये दोनों साहब और सब भाई उस वक़्त हज़रत यूसुफ़ अलै० के सामने सज्दे में गिर पड़े। उस ज़माने में सज्दा सलाम की जगह दुरूस्त था, अब दुरूस्त नहीं रहा। अल्लाह तआला ने उनकी ख़ाला को मां फ़रमा दिया है। उनकी मां का इंतिक़ाल हो गया था और याकूब अलै० ने उनसे निकाह कर लिया था।

कुछ ने कहा है कि जिनका यह क़िस्सा है, यह मां थीं। हज़रत राहील इनका नाम था। हज़रत यूसुफ़ अलै० ने फ़रमाया कि मेरे बचपन के सपने का फल यह है। उन्होंने सपना देखा था कि चांद–सूरज और ग्यारह सितारे मुझे सज्दा कर रहे हैं।

फ़ायदा—देखो,[1] कैसी बुज़ुर्ग होंगी, जिनकी इज़्ज़त नबी ने की।

हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की मां का ज़िक्र

इनका नाम यूख़ांद है। जिस ज़माने में फ़िऔन को नजूमियों ने डराया था कि बनी इस्राईल की कौम में एक लड़का ऐसा पैदा होगा जो तेरी बादशाही को तबाह करेगा और फ़िऔन ने हुक्म दिया कि जो लड़का बनी इस्राईल में पैदा हो, उसको क़त्ल कर डालो। चुनांचे हज़ारों लड़के क़त्ल हो गये। ऐसे नाज़ुक वक़्त में हज़रत मूसा अलै० पैदा हुए। उस वक़्त खुदा–ए–तआला ने इन बीवी के दिल में यह बात डाली, जिसको इल्हाम कहते हैं, तुम बे–फ़िक्र उनको दूध पिलाती रहो और जब इसका डर हो कि किसी को ख़बर हो जाएगी, तो उस वक़्त उनको संदूक़ के अन्दर बन्द करके दरिया में डाल दीजियो। फिर उनको जिस तरह हमको मंज़ूर होगा, तुम्हारे पास पहुंचा देंगे। चुनांचे उन्होंने बे–धड़क ऐसा ही किया और अल्लाह तआला ने अपने सब वायदे पूरे कर दिए।

---

1. ख़ाला बगर बुज़ुर्ग हों, तो बहुत ज़्यादा इज़्ज़त के क़ाबिल हैं और बुज़ुर्ग न हों, जब भी उनकी इज़्ज़त करना वाजिब है।

फ़ायदा—बीबियो ! देखो उनको खुदा–ए–तआला पर कैसा भरोसा और इत्मीनान था और इस भरोसे की बरकतें भी कैसी ज़ाहिर हुईं।

हज़रत मूसा अलै० की बहन का ज़िक्र

इसका नाम कुछ के मुताबिक़ मरयम है, कुछ के मुताबिक़ कुल्सूम है।

जब हज़रत मूसा अलै० को उनकी मां ने दरिया में डाल दिया तो बेटी से कहा कि ज़रा तुम खोज लगाओ कि अंजाम क्या होता है। ग़रज़ वह संदूक़ नहर में होकर फ़िऔन के महल में पहुंचा और निकाला गया तो उसके अंदर एक सुन्दर बच्चा मिला। फ़िऔन ने क़त्ल करना चाहा, मगर फ़िऔन की बीवी आसिया ने कि नेक–बख़्त और खुदा तरस थीं, कह–सुन कर जान बचायी और दोनों मियां–बीवी ने अपना बेटा बनाकर पालना चाहा, तो अब मूसा अलै० किसी अन्ना का दूध ही मुंह में न लेते। सब हैरान थे कि क्या तद्बीर करें।

उस वक़्त यह बीबी यानी हज़रत मूसा अलै० की बहन इसी खोज में वहां पहुंच गयी थीं। कहने लगीं कि मैं एक दूध पिलाने वाली बतलाऊं, जो बहुत भला चाहने वाली और मेहरबान है और दूध भी उसका बहुत सुथरा है।

आख़िर उन्होंने हज़रत मूसा अलै० की मां का पता बतला दिया। वह बुलायी गयीं और मूसा अलै० उनके सुपुर्द किये गये और अल्लाह तआला का जो वायदा था कि हम उनको तुम्हारे पास पहुंचा देंगे, वह इसी तरह से पूरा हुआ।

फ़ायदा—देखो, अक़्ल भी क्या चीज़ है, किस तरह पता भी लगा लिया और कैसी जान जोखों में अपनी मां का भला चाहा और उनकी ताबेदारी की और दुश्मनों को भी ख़बर न हुई।

बीबियों ! मां–बाप की ताबेदारी और अक़्ल–तमीज़ बड़ी नेमत है।

हज़रत मूसा अलै० की बीवी का ज़िक्र

इनका नाम सफ़ूरा है और यह हज़रत शुऐब अलै० की बड़ी बेटी हैं

और जब हज़रत मूसा[1] अलै० के हाथ से मिस्त्र शहर में एक काफ़िर बे-इरादा मारा गया और फ़िऔन को ख़बर हुई, उसने अपने सरदारों से सलाह की कि मूसा अलै० को क़त्ल कर देना चाहिए। मूसा अलै० यह खबर पाकर छिप-छिपा कर मद्‌यन शहर की और चल दिए। जब बस्ती की हद में पहुंचे तो देखा कि बहुत से चरवाहे कुंए से खींच-खींच कर अपनी बकरियों को पानी पिला रहे हैं और दो लड़कियां अपनी बकरियों को पानी पर जाने से हटा रही हैं।

इन दोनों लड़कियों में एक हज़रत मूसा अलै० की बीवी थीं और एक साली। आपने उनसे इसकी वजह पूछी, उन्होंने कहा कि हमारे घर में कोई मर्द काम करने वाला नहीं है, इसलिए हमको ख़ुद काम करना पड़ता है, लेकिन चूंकि हम औरतें हैं, इसलिए मर्दों के चले जाने के इंतिज़ार में रहते हैं, सबके चले जाने के बाद हम अपनी बकरियों को पानी पिला लेते हैं। आपको इनके हाल पर रहम आया और पानी ख़ुद निकाल कर बकरियों को पिला दिया।

इन दोनों ने जाकर अपने बुज़ुर्ग वालिद से यह क़िस्सा बयान किया। उन्होंने बड़ी बेटी को भेजा कि इन बुज़ुर्ग को बुला लाओ। वह शर्माती हुई आयीं और मूसा अलै० को उनका पैग़ाम पहुंचा दिया। आप उनके साथ हो लिए और हज़रत शुऐब अलै० से मिले। उन्होंने उनकी हर तरह से तसल्ली की और फ़रमाया कि मैं चाहता हूं कि इनमें से एक लड़की तुमसे ब्याह दूं, मगर शर्त यह है कि आठ या दस वर्ष मेरी बकरियां चरवाओ। आपने मंज़ूर कर लिया और बड़ी बेटी से आपका निकाह हो गया। वायदा पूरा करने के बाद आप उनको लेकर वतन चले थे कि रास्ते में सर्दी की वजह से आग की ज़रूरत हुई। तूर पहाड़ की आग नज़र आयी। वहां पहुंचे तो ख़ुदा का नूर था। वहीं आपको पैग़म्बरी मिल गयी।

फ़ायदा—देखो, अपने घर का काम कैसी मेहनत से करती थीं और ग़ैर-मर्द से मजबूरी से बोलीं तो कैसी शर्माती हुई।

बीबियों ! तुम भी घर के कामों में आराम तलबी और सुस्ती मत करो और शर्म व हया हर वक़्त ज़रूरी समझो।

---

1. आप अंधे थे।

हज़रत मूसा अलै० की साली का ज़िक्र

इनका ज़िक्र अभी ऊपर आ चुका है, उनका नाम सफ़ीरा है। यह भी अपनी बहन के साथ घर का कारोबार बड़ी मेहनत से करती थीं और बाप की ताबेदारी और ख़िदमत बजा लाती थीं।

फ़ायदा—बीबियों ! इस तरह तुम भी मां–बाप की ख़िदमत और घर के काम में मेहनत मशक़्क़त किया करो, जैसे काम ग़रीब लोग किया करते हैं, उनको ज़िल्लत मत समझो। देखो, पैग़म्बर ज़ादियों से ज़्यादा तुम्हारा रुत्बा नहीं है।

हज़रत आसिया रज़ि० का ज़िक्र

फ़िऔन मिस्र का बादशाह था, जिसने ख़ुदाई का दावा किया था यह उसकी बीवी हैं। ख़ुदा की क़ुदरत, ख़ाविंद ऐसा शैतान और बीवी ऐसी नेक दिल जिनकी तारीफ़ क़ुरआन में आयी है और जिनकी बुज़ुर्गी हमारे पैग़म्बार सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस तरह फ़रमायी कि अगले मर्दों में तो बहुत कामिल हुए हैं, मगर औरतों में कोई कमाल के दर्जे को नहीं पहुंची, अलावा हज़रत मरयम[1] और हज़रत आसिया के। इन्होंने ही मूसा अलै० की जान बचायी थी जैसे मूसा अलै० की बहन के ज़िक्र में गुज़रा। उनकी क़िस्मत में मूसा अलै० पर ईमान लाना लिखा था। शरू बचपन ही से उनके दिल में उनकी मुहब्बत पैदा हो गयी थी। जब हज़रत मूसा अलै० को पैग़म्बरी मिली, फ़िऔन तो ईमान नहीं लाया, मगर यह ईमान ले आयीं।

फ़िऔन को, जब उनके ईमान लाने की ख़बर हुई तो उन पर बड़ी सख़्ती की और तरह–तरह से तक्लीफ़ पहुचायी, मगर उन्होंने अपना ईमान

---

1. यह मज़मून पिछली उम्मतों से मुताल्लिक़ है, इसलिए कि हज़रत फ़ातिमा रज़ि० जन्नत की तमाम औरतों की सरदार हैं, लेकिन चूंकि वह जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की उम्मत में हैं, इसलिए यहां इनका ज़िक्र नहीं किया गया।

नहीं छोड़ा। इसी हालत में दुनिया से उठ गयीं।

फ़ायदा—देखो, ईमान की कैसी मज़बूत थीं कि बद–दीन ख़ाविंद बादशाह था, सब कुछ उसने किया मगर उसका साथ नहीं दिया। अब ज़रा–सी तक्लीफ़ में कुफ़्र के कलमे बकने लगती हैं।

बीबियों ! ईमान बड़ी दौलत है, कैसी है तक्लीफ़ पहुंचे दीन के ख़िलाफ़ कोई काम न करना। अगर किसी का ख़ाविंद बद–दीनी का काम करे, कभी उसका साथ न देना, और उस ज़माने में काफ़िर मर्द से निकाह हो जाता था; मगर हमारी शरअ में अब यह हुक्म है कि अगर ख़ाविंद काफ़िर हो, निकाह दुरूस्त नहीं होता और अगर काफ़िर होने से पहले हो गया हो तो निकाह टूट जाता है।

फ़िऔन की बेटी की ख़वास का ज़िक्र

रौज़तुस्सफ़ा एक किताब है, उसमें लिखा है कि फ़िऔन की बेटी की एक ख़वास थी, जो उसकी कार–मुख़्तार थी और उसकी कंघी–चोटी भी वही करती थी और हज़रत मूसा अलै० पर ईमान रखती थी, मगर फ़िऔन के डर से ज़ाहिर न करती थी।

एक बार वह ख़वास उसके बाल संवार रही थीं कि उसके हाथ से कंघी छूट गयी। उसने बिस्मिल्लाह कह कर उठा ली। लड़की ने पूछा यह तूने क्या कहा, यह किसका नाम है। ख़वास ने कहा, यह उसी का नाम है जिसने तेरे बाप को पैदा किया और उसको बादशाही दी। लड़की को बड़ा ताज्जुब हुआ कि मेरे बाप से कोई बड़ा है। दौड़ी हुई बाप के पास गयी और सारा क़िस्सा बयान किया। फ़िऔन निहायत गुस्से से आया और उस ख़वास को बुलाकर डराया–धमकाया, मगर उसने साफ़ कह दिया कि जो चाहे सो करें, ईमान न छोडूंगी।

एक तो उसके हाथ में कीले जड़ी, उस पर अंगारे और झूझल डाले, जब इससे भी कुछ असर न हुआ तो उसकी गोद में एक लड़का था, उसको आग में डाल दिया। लड़का आग में बोला कि अम्मां सब्र कीजियो, ख़बरदार ! ईमान न छोड़ियो। ग़रज़ वह ईमान पर जमी रही, यहां तक कि उस बेचारे को पकड़ कर जलते तंदूर में झोंक दिया। तीसवें पारे में सूरः बुरूज में जो खाइयों वाला क़िस्सा आया है, इसमें भी इसी तरह एक औरत का और एक बच्चे का क़िस्सा हुआ था।

फ़ायदा—देखो, ईमान की कैसी मज़बूती थी।

बीबियों ! ईमान बड़ी नेमत है। अपने नफ़्स की खुशी के वास्ते या किसी लालच की वजह से या किसी मुसीबत या किसी तक्लीफ़ की वजह से कभी अपने ईमान–दीन में ख़लल् मत डालना, खुदा और रसूल सल्ल० के ख़िलाफ़ कोई काम मत करना।

हज़रत मूसा अलै० के लश्कर की एक बुढ़िया का ज़िक्र

जब फ़िऔन ने मिस्त्र में बनी इस्राईल को बहुत तंग करना शुरू किया, उनसे तरह–तरह की बेगारें लेता, उनको मारता, दुख पहुंचाता, हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम को अल्लाह तआला का हुक्म हुआ कि सब बनी इस्राईल को रातों रात मिस्त्र से निकाल ले जाओ ताकि फ़िऔन के जुल्म से इनकी जान छूटें।

मूसा अलै० सब को लेकर चले। जब नील नदी पर पहुंचे, रास्ता भूल गये और भी किसी की पहचान में रास्ता न आया। आपने ताज्जुब किया और पुकार कर फ़रमाया कि जो आदमी इस भेद को जानता हो, वह आकर बतलाये।

एक बुढ़िया ने हाज़िर होकर अर्ज़ किया कि जब हज़रत यूसुफ़ अलै० का इंतिक़ाल होने लगा था तो उन्होंने अपने भाई–भतीजों को वसीयत फ़रमा दी थी कि अगर किसी वक़्त में तुम लोग मिस्त्र का रहना छोड़ दो तो मेरा ताबूत, जिसमें मेरी लाश होगी, अपने साथ ले जाना, तो जब तक वह ताबूत आप साथ न लेंगे, रास्ता न मिलेगा। आपने ताबूत का हाल पूछा कि कहां दफ़न है ? इसका जानने वाला भी, बुढ़िया के अलावा कोई न निकला। उससे जब पूछा तो उसने अर्ज़ किया कि मैं यों न बतलाऊंगी, मुझसे एक बात का इक़रार कीजिए, उस वक़्त मैं बतलाऊंगी। आपने पूछा, वह क्या बात है ? कहने लगे, इक़रार यह है कि मेरा ख़ात्मा ईमान पर

---

1. तफ़्सीरे मज़्हरी।

हो। और जन्नत में जो दर्जा[1] रहने को आपको मिले, मुझे भी मिले। आपने अल्लाह तआला से अर्ज़ किया, ऐ अल्लाह ! यह बात तो मेरे अख़्तियार की नहीं, हुक्म हुआ कि तुम इक़रार कर लो, हम पूरा कर देंगे। आपने इक़रार कर लिया। उसने ताबूत का पता बतला दिया कि दरिया के बीच में दफ़न था। उस ताबूत का पता बतला दिया कि दरिया के बीच में दफ़न था। उस ताबूत का निकालना था और रास्ते का मिलना, तुरन्त रास्ता मिल गया।

फ़ायदा—देखो, बड़ी बीबी कैसी बुज़ुर्ग थीं कि कोई दौलत दुनिया की नहीं मांगी, अपने अंजाम को दुरूस्त किया।

बीबियों ! तुम भी दुनिया का लालच छोड़ दो। वह तो जितनी क़िस्मत में है मिलेगी ही, अपने दीन को संवारो[2]।

हैसूर की बहन का ज़िक्र

कुरआन शरीफ़ में हज़रत मूसा अलै० और हज़रत ख़िज़्र के क़िस्से में ज़िक्र है कि हज़रत ख़िज़्र अलै० ने एक छोटे बच्चे को अल्लाह तआला के हुक्म से मार डाला। हज़रत ख़िज़्र अलै० ने फ़रमाया कि यह लड़का अगर जवान होता तो काफ़िर होता और उसके मां–बाप ईमानदार थे, औलाद की मुहब्बत में उनके बिगड़ने का डर था। इसलिए यह ही मस्लहत हुई कि उसको क़त्ल कर दिया जाए। अब इसके बदले अल्लाह तआला एक लड़की देंगे जो बुराइयों से पाक होगी और मां–बाप को ज़्यादा भलाई पहुंचाने वाली होगी।

चुनांचे और किताबों में लिखा है कि एक लड़की ऐसी ही पैदा हुई और एक पैग़म्बर से उसका निकाह हुआ और सत्तर पैग़म्बर उसकी औलाद में हुए और उस लड़के का नाम हैसूर था। यह लड़की उसकी बहन थी।

---

1. इससे यह मलतब नहीं कि वह बड़ी बीबी हज़रत मूसा अलै० के बराबर सवाब में हो जाएगी, बल्कि सिर्फ़ एक जगह रहना होगा, यह भी बड़ी नेमत है और सवाब में नबी के बराबर कोई नहीं हो सकता।
2. इसलिए कि जन्नत बग़ैर कोशिश के नहीं मिल सकती।
3. यह बहुत बड़े वली हैं, नबी नहीं हैं।

फ़ायदा—जिसकी तारीफ़ में अल्लाह तआला फ़रमायें कि बुराइयों से पाक और मां–बाप को भलाई पहुंचाने वाली होगी, वह कैसी अच्छी होगी। देखो, गुनाह से पाक रहना और मां–बाप को सुख देना कैसा प्यारा काम है, जिसमें आदमी का ऐसा रूतबा हो जाता है कि खुदा–ए–तआला उस आदमी की तारीफ़ करें।

बीबियों ! इन बातों में ख़ूब कोशीश करो।

हैसूर की मां का ज़िक्र

हैसूर वही लड़का है, जिसका ज़िक्र ऊपर आ चुका है। यह भी पढ़ चुकी हो कि क़ुरआन में उसके मां–बाप को ईमानदार लिखा है, जिसको अल्लाह तआला ईमानदार फ़रमा दें, वह ऐसा कच्चा–पक्का ईमानदार तो होगा नहीं, ख़ूब पूरा ईमानदार होगा। इससे मालूम हुआ कि हैसूर की मां भी बहुत बुजुर्ग थीं।

फ़ायदा—देखो, ईमान में पक्का होना, ऐसी दौलत है, जिस पर अल्लाह तआला ने तारीफ़ की।

बीबियो ! ईमान को मज़बूत करो और वह इसी तरह मज़बूत होता है कि शरअ के हुक्म ख़ूब बजा लाओ। सब बुराइयों से बचो।

हज़रत सुलेमान अलै० की मां का ज़िक्र

क़ुरआन में है कि सुलैमान अलै० ने दुआ में यह कहा कि ऐ अल्लाह! आप ने मेरे मां–बाप पर इनाम किया है। मालूम हुआ कि आप की मां भी बुज़र्ग थीं, क्योंकि बड़ा इनाम ईमान और दीन है।

फायदा—देखो ईमान ऐसी चीज़ है कि ईमानदार का ज़िक्र पैग़म्बरों की जुबान पर भी ख़ूबी के साथ आता है।

बीबियों ! ईमान को ख़ूब रौनक़ दो।

हज़रत बिल्क़ीस का ज़िक्र

यह मुल्क सबा की बादशाह थीं। हज़रत सुलैमान अलै० को हुद हुद जानवर ने ख़बर दी थी कि मैंने एक औरत बादशाह देखी है और वह

सूरज को पूजती है। आपने एक ख़त लिख कर हुद हुद को दिया कि उसके पास डाल देना। उस ख़त में लिखा था कि तुम लोग मुसलमान होकर यहां हाज़िर हो। इस ख़त को पढ़ कर अमीरों और वज़ीरों से सलाह की। बहुत बात–चीत के बाद खुद ही यह सलाह क़रार दी कि मैं उनके पास कुछ चीज़ें भेंट के तौर पर भेजता हूं। अगर लेकर रख लें तो समझूंगी कि दुनियादार बादशाह हैं। अगर न रखेंगे तो समझूंगी, पैग़म्बर हैं।

जब वे चीज़ें हज़रत सुलैमान अलै० के पास पहुंची, आपने सब लौटा दीं और कहला भेजा कि अगर मुसलमान न होगी तो लड़ाई के लिए फ़ौज लाता हूं। यह पैग़ाम सुनकर यक़ीन हो गया कि बेशक पैग़म्बर हैं और मुसलमान होने के इरादे से अपने शहर से चलीं। इनके चलने के बाद सुलैमान अलै० ने अपने मोजज़े से उनका एक बड़ा भारी क़ीमती बादशाही तख़्त भी अपने दरबार में मंगा लिया, ताकि बिल्क़ीस मोजज़ा भी देख ले और इसके मोती–जवाहर उखाड़ कर दूसरी तरफ़ जड़वा दिए।

जब बिल्कीस यहां पहुंची तो हज़रत सुलैमान अलै० के हुक्म से उनकी अक़्ल आज़माने को पूछा गया कि देखो, यह तुम्हारा तख़्त तो नहीं है। ग़ौर से देखकर कहा, हां, वैसा ही है। इस तरह क्यों कहा कि कुछ सूरत शक्ल बदल गयी। इस जवाब से मालूम हुआ कि अक़्लमंद हैं।

फिर सुलैमान अलै० ने बिल्क़ीस को यह बात बतलानी चाही कि हमारे ख़ुदा की दी हुई बादशाही तुम्हारी दुनिया की बादशाही से वैसे भी ज़्यादा है। यह बात दिखलाने के वास्ते हज़रत सुलैमान अलै० ने हुक्म दिया कि एक हौज़ पानी से भर उसके ऊपर ऐसे साफ़–चिकने कांच का फ़र्श बनाया जाए कि वह नज़र न आए और हज़रत सुलैमान अलै० ऐसी जगह जा बैठे कि जो आदमी वहां पहुंचना चाहे, हौज़ रास्ते में पड़े और बिल्क़ीस को इसी जगह हाज़िर होने का हुक्म दिया।

बिल्क़ीस जो हौज़ के पास पहुंची, कांच तो नज़र न आया, यों समझी कि मुझको पानी के अंदर जाना पड़ेगा, तो पांयचे चढ़ाने लगी। तुरंत उनको कह दिया गया कि इस पर कांच का फ़र्श है, ऐसी ही चली आओ। जब बिल्क़ीस ने तख़्त मंगा लेने का मोजज़ा देखा और इस कारीगरी को भी देखा, जिससे यह समझीं कि इनके पास वैसे भी बादशाही का सामान मेरे यहां के सामान से ज़्यादा है तुरन्त कलमा पढ़ कर मुसलमान हो गयीं।

फिर कुछ आलिमों ने तो यह कहा कि हज़रत सुलैमान अलै० ने

इनके साथ ख़ुद निकाह कर लिया और कुछ ने कहा कि यमन के बादशाह से निकाह कर दिया। अल्लाह तआला ही को मालूम है कि क्या हुआ।

फ़ायदा—देखो, कैसी बे–नफ़्स थीं कि बावजूद अमीर बादशाह होने के, जब दीन की सच्ची बात मालूम हो गयी, तुरन्त उसको कुबूल करने में शेखी नहीं की, न बाप–दादा के रस्म को पकड़ कर बैठीं।

बीबियो ! तुम भी अपना यह तरीक़ा रखो कि जब दीन की बात सुनो, कभी शर्म या ख़ानदान की रस्म की पैरवी मत करो। इनमें से कोई चीज़ काम न आयेगी, सिर्फ़ दीन साथ चलेगा।

बनी इस्राईल[1] की एक लौंडी का ज़िक्र

हदीस में एक क़िस्सा है कि बनी इस्राईल की एक औरत अपने बच्चे को दूध पिला रही थी, इतने में एक सवार बड़ी शान व शौकत से सामने से गुज़रा। मां ने दुआ की कि ऐ अल्लाह ! मेरे लड़के को ऐसा ही कर दीजिए। बच्चा मां की छाती छोड़कर बोलने लगा कि ऐ अल्लाह ! मुझको एसा मत कीजियो और फिर दूध पीने लगा। फिर सामने से कुछ लोग गुज़रे जो एक लौंडी को पकड़े ज़िल्लत के साथ लिए जाते थे। मां ने दुआ की कि ऐ अल्लाह ! मेरे लड़के को ऐसा मत कीजियो। वह बच्चा फिर बोला, ऐ अल्लाह ! मुझको[2] ऐसा कर दीजियो। मां ने पूछा, यह क्या बात है ? बच्चे ने कहा कि वह सवार तो एक ज़ालिम शख़्स था, और लौंडी को लोग तोहमत लगाते हैं कि यह चोर है, बद–चलन है और वह ग़रीब इससे पाक है।

फ़ायदा—मतलब यह कि उस सवार की दुनिया वालों के नज़दीक तो क़द्र है, मगर अल्लाह तआला के नज़दीक कुछ क़द्र नहीं और यह लौंडी दुनिया वालों के नज़दीक तो बे क़द्र है, मगर अल्लाह तआला के नज़दीक इसकी बड़ी क़द्र है। तो क़द्र ख़ुदा के नज़दीक चाहिए, चाहे

1. बुख़ारी शरीफ़।
2. मक़सद यह था कि ख़ुदा–ए–तआला के नज़दीक मक़्बूल हो जाऊं, यह मतलब न था कि मैं दुनिया में ज़लील होऊं और आख़िरत में अज़ीज़ हूं, इसलिए ऐसी दुआ मांगना शरीअत में मना है कि दुनिया में ज़िल्लत हो।

दुनिया कैसा ही समझे। अगर ख़ुदा के नज़दीक क़द्र न हुई तो दुनिया वालों की क़द्र किस काम आयेगी। देखो, यह उस लौंडी की करामत थी उस की पाकी ज़ाहिर करने के लिए वह दूध-पीता बच्चा बातें करने लगा।

बीबियो ! कुछ औरतों की आदत है कि ग़रीबों को बहुत हक़ीर समझती हैं और ज़रा से शुबहे से इन पर ऐब और चोरी लगाती हैं। यह बुरी बात है, शायद वह अल्लाह तआला के नज़दीक तुमसे अच्छी हो।

बनी इस्राईल[1] की एक अक़्लमंद दीनदार बीबी का ज़िक्र

मुहम्मद बिन काब का बयान है कि बनी इस्राईल में एक आदमी बड़ा आलिम और बड़ा इबादतगुज़ार था। उसको अपनी बीवी के साथ बहुत मुहब्बत थी। इत्तिफ़ाक़ से वह मर गयी। उस आलिम पर ऐसा ग़म सवार हुआ कि दरवाज़ा बंद करके बैठ गया और सबसे मिलना-जुलना छोड़ दिया।

बनी इसराईल में एक औरत थी। उसने यह क़िस्सा सुना, उसके पास गयी और घर में आने वालों से कहा कि मुझको एक मस्अला पूछना है और वह ज़ुबानी ही पूछ सकती हूं। और दरवाज़े पर जम कर बैठ गयी। आख़िर उसको ख़बर हुई और अंदर आने की इजाज़त दी। आकर कहने लगी कि मुझको एक मस्अला पूछना है। उसने कहा, बयान करो। कहने लगी कि मैंने अपनी पड़ोसिन से कुछ ज़ेवर मांगे के तौर पर लिया था और मुद्दत तक उसको पहनती रही। फिर उसने आदमी भेजा कि मेरा ज़ेवर दे दो, तो क्या उसका ज़ेवर दे देना चाहिए ? आलिम ने कहा, बेशक दे देना चाहिए।

वह औरत बोली, वह तो मेरे पास मुद्दत तक रहा है तो कैसे दे दूं। आलिम ने कहा, तब तो वह और भी खुशी से दे देना चाहिए, क्योंकि एक

1. तजुर्बा है कि ऐसे मौक़े पर दूसरे की नसीहत काम कर जाती है, चाहे नसीहत करने वाला दीनदारी में उस आदमी से जिसको नसीहत की जाती है, कम ही दर्जे का हो।

मुद्दत तक उसने नहीं मांगा, यह उसका एहसान है। औरत ने कहा, खुदा तुम्हारा भला करे, फिर तुम क्यों ग़म में पड़े हो ? खुदा–ए–तआला ने एक चीज़ मांगे दी थी, जब चाहा ले ली, उसकी चीज़ थी। यह सुनकर उस आलिम की आंखें–सी खुल गयीं और इस बात से उसको बड़ा फ़ायदा पहुंचा।

फ़ायदा—देखो, कैसी औरत थी जिसने मर्द को अक्ल दी और मर्द भी कैसा आलिम[1]। बीबियो ! तुमको चाहिए कि मुसीबत में यही समझा करो, दूसरों को भी समझा दिया करो।

हज़रत मरयम अलै० की माँ का ज़िक्र

इन बीबी का नाम हुन्ना था। इम्रान इनके मियां का नाम था, जो बाप हैं। हज़रत मरयम अलै० की मां को हमल रहा तो उन्होंने अल्लाह से मन्नत मानी कि जो बच्चा मेरे पेट में है, उसको मस्जिद की सेवा के लिए आज़ाद छोड़ दूंगी, यानी दुनिया के काम उससे न लूंगी। उनका विचार था कि लड़का पैदा होगा, क्योंकि मस्जिद की सेवा लड़का ही कर सकता है। उस ज़माने में ऐसी मन्नत ठीक थी।

जब पैदा होने का वक़्त आया तो पैदा हुई लड़की। अफ़सोस से कहा कि ऐ अल्लाह ! यह तो लड़की हुई। हुक्म हुआ कि लड़की लड़कों से भी अच्छी होगी और ख़ुदा ने उसको क़ुबूल किया। मतलब हज़रत मरयम[2] उनका नाम रखा और उन्होंने उनके लिए यह दुआ की कि इनको और इनकी औलाद को शैतान से बचाइयो। चुनांचे हमारे पैग़म्बर सल्ल० ने फ़रमाया कि शैतान[3] सब बच्चों को पैदा होते वक़्त छोड़ता है, मगर हज़रत मरयम और उनके बेटे हज़रत ईसा अलै० को नहीं छोड़ सका।

फ़ायदा—देखो, उनकी पाक नीयत थी कैसी बरकत हुई कि अल्लाह तआला ने कैसी पाक औलाद दी और उनकी दुआ भी क़ुबूल की। मालूम होता है कि अल्लाह तआला को उनकी बड़ी आव–भगत मंज़ूर थी।

---

1. दीन का इल्म रखने वाला।
2. मरयम का मलतब है इबादत गुज़ार औरत
3. ज़ाहिर यह है कि जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम इस हुक्म से अलग हैं, यानी आपको पैदा होते वक़्त शैतान ने नहीं छेड़ा।

बीबियों ! पाक नीयत की ऐसी बरकतें होती हैं, हमेशा अपनी नीयत ख़ालिस रखा करो। जो नेक काम करो, ख़ुदा के वास्ते करो, तुम्हारी भी अल्लाह के दरबार में क़द्र हो जाएगी।

हज़रत मरयम अलै० का ज़िक्र

इनके पैदा होने का क़िस्सा अभी गुज़र चुका है। जब यह पैदा हो चुकीं तो उनकी मां अपनी मन्नत मुताबिक़ उनको लेर बैतुल मक़्दिस की मस्जिद में पहुंची और वहां के रहने वाले बुज़ुर्गों से कहा कि यह मन्नत की लड़की लो। चूंकि बड़े बुज़ुर्ग ख़ानदान की थीं, सबने चाहा कि मैं लेकर पालूं। इनमें हज़रत ज़करीया अलै० भी थे। वह हज़रत मरयम के खालू होते थे। यों भी उनका हक़ ज़्यादा था, मगर फिर भीं लोगों ने उनसे झगड़ना शुरू किया। जिस फ़ैसले पर सब राज़ी हुए थे, उसमें भी यह ही बड़े रहे।

आख़िर हज़रत ज़करीया अलै० ने उनको लेकर पालना शुरू किया। उनके बढ़ने की हालत यह थी कि और बच्चों से कहीं ज़्यादा बढ़ती थीं, यहां तक कि थोड़े दिनों से स्यानी मालूम होने लगीं और वैसे भी बचपन से पैदाइशी बुज़ुर्ग और वली थीं। अल्लाह तआला ने उनको क़ुरआन मजीद में सिद्दीक़ फ़रमाया है और उनकी करामत बयान फ़रमायी है कि बे-फ़सल मेवे ग़ैब से उनके पास आ जाते। हज़रत ज़करिया अलैहिस्सलाम पूछते, ये मेवे कहां से आये, तो जवाब देतीं कि अल्लाह के यहां से। ग़रज़ उनकी सारी बातें अचम्भे की थीं, यहां तक कि जब जवान हुईं, तो सिर्फ़ अल्लाह की क़ुदरत से मर्द के बग़ैर उनको हमल हो गया और हज़रत ईसा अलै० पैग़म्बर पैदा हुए।

यहूदियो ने बे-बाप[1] के बच्चा होने पर वाही-तबाही बकना शुरू किया। अल्लाह तआला ने ईसा अलैहिस्सलाम को पैदा होने ही के ज़माने में बोलने की ताक़त दी। उन्होंने ऐसी अच्छी-अच्छी बातें कहीं कि इन्साफ़

---

1. हालांकि यह कोई ताज्जुब की बात न थी, इसलिए कि हज़रत आदम अलै० तो हक़ तआला की क़ुदरत से बिना मां-बाप के पैदा हुए थे, सो हज़रत ईसा अलै० का बिना बाप के पैदा होना क्या ताज्जुब था। अल्लाह तआला हर बात की क़ुदरत रखते हैं, मगर वे यहूदी लोग मूर्ख और दुष्ट थे।

वालों को मालूम हो गया कि उनकी पैदाइश खुदा की कुदरत का नमूना है, बेशक बे–बाप के पैदा हुए हैं और उनकी मां पाक–साफ़ हैं।

हमारे पैग़म्बर सल्ल० ने उनकी बुज़ुर्गी बयान फ़रमायी है कि औरतों में कोई कामिल नहीं, दो औरतों के अलावा—एक हज़रत मरयम और दूसरी हज़रत आसिया। यह मज़मून हज़रत आसिया के ज़िक्र में भी आ चुका है।

फ़ायदा—देखो, उनकी मां ने उनको खुदा के नाम कर दिया था, कैसी बुज़ुर्ग हुई और खुद अल्लाह तआला की ताबेदारी में लगी रहती थीं। जिससे आदमी वली हो जाता है। उसकी बरकत से अल्लाह तआला ने कैसी तोहमत से बचा लिया।

बीबियो ! अल्लाह की ताबेदारी किया करो, सब आफ़तों से बची रहोगी और अपनी औलाद को दीन में ज़्यादा लगा रखा करो, दुनिया का बन्दा मत बना दिया करो।

हज़रत ज़करीया अलैहिस्सलाम की बीवी का ज़िक्र

इनका नाम ईशाअ़ है। यह हज़रत हन्ना की बहन और हज़रत मरयम की ख़ाला हैं। इनके लिए अल्लाह तआला ने यों फ़रमाया है कि हमने ज़करीया की बीवी को संवार दिया।

इसका मतलब कुछ आलिमों ने यह लिखा है कि हमने इनकी आदतें ख़ूब संवार दीं। हज़रत यह्या अलै० इनके बुढ़ापे में पैदा हुए तो हज़रत ईसा अलै० रिश्ते में हज़रत यह्या अलै० की ख़ाला के नाती हैं। यह नाती भी बेटे की जगह होता है। इसलिए हमारे पैग़म्बर सल्ल० ने एक को दूसरी की ख़ाला का बेटा फ़रमा दिया है।

फ़ायदा—देखो, अच्छी आदत ऐसी अच्छी चीज़ है कि अल्लाह तआला ने भी उनकी तारीफ़ फ़रमायी है।

बीबियो ! अपनी आदतें इस तरह की ख़ूब संवारो, जिसका तरीक़ा हमने सातवें हिस्से में अच्छी तरह लिख दिया है। ये 25 क़िस्से पहली उम्मतों के नेक बीवियों के थे, अब थोड़े–से इस उम्मत की नेक बीवियों के

भी सुन लो।

हज़रत ख़दीजा रज़ि० का ज़िक्र

यह हज़रत रसूलुल्लाह सल्ल० की सबसे पहली बीवी है, इनकी बड़ी-बड़ी बुज़ुर्गियां हैं। एक बार पैग़म्बर सल्ल० ने इनसे फ़रमाया कि हज़रत जिब्रील अलै० अल्लाह का सलाम तुम्हारे पास लाते हैं और आपसे यह भी फ़रमाया कि तमाम दुनिया की बीबियों में सबसे अच्छी चार बीबियां हैं—एक हज़रत मरयम, दूसरी हज़रत आसिया, फ़िऔन की बीवी, तीसरी हज़रत ख़दीजा और चौथी हज़रत फ़ातिमा रज़ि०

प्यारे नबी सल्ल० को दुश्मनों से जो परेशानी होती, तो आप इन्हीं से आकर फ़रमाते। यह कोई ऐसी तसल्ली की बात कह देतीं कि हज़रत सल्ल० की परेशानी जाती रहती। और आपको उनको ऐसा ख़्याल था कि उनके इन्तिक़ाल के बाद भी बकरी वग़ैरह ज़िब्ह करते, तो उनकी साथियों-सहेलियों को भी ज़रूर गोश्त भेजते।

हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से पहले उनका निकाह हुआ था। उनके पहले शौहर का नाम अबूहाला तमीमी है।

फ़ायदा—अल्लाह तआला और रसूल सल्ल० के नज़दीक उनकी क़द्र ईमान और ताबेदारी से थी।

बीबियों ! तुम भी इसमें ख़ूब कोशिश करो और यह भी मालूम हुआ कि ख़ाविंद की परेशानी में उसका दिन रखने की बात करना और तसल्ली करना नेक आदत है। अब कुछ औरतें ख़ाविंद के अच्छे-बिच्छे दिल को उल्टा परेशान कर डालती हैं, कभी फ़रमाइशें करके, कभी तकरार कर के इस आदत को छोड़ दो।

हज़रत सौदा रज़ि० का ज़िक्र

यह भी हमारे पैग़म्बर सल्ल० की बीवी हैं। उन्होंने अपनी बारी का दिन हज़रत आइशा रज़ि० को दे दिया था।

हज़रत आइशा रज़ि० का क़ौल है कि किसी औरत को देखकर मुझको यह लालच नहीं हुआ कि मैं भी वैसी ही होती, सिवा हज़रत सौदा रज़ि० के। उनको देखकर मुझे लालच होता था कि मैं भी ऐसी ही होती

जैसी यह है।

उनके पहले शौहर का नाम सकरान बिन अम्र था।

फ़ायदा—देखो, हज़रत सौदा रज़ि० की हिम्मत कि अपनी बारी अपनी सौत को दे दी। आजकल ख़ामख़ाह भी सौत से लड़ाई और जलन किया करती है। आजकल जान-जानकर उस पर ऐब लगाती हैं।

बीबियो ! तुमको भी ऐसी ही हिम्मत और इन्साफ़ करना चाहिए। फिर देखो अख़्लाक़ हज़रत सिद्दीक़ा रज़ि० के कि उन्होंने इन जैसे होने की तमन्ना ज़ाहिर फ़रमायी।

हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ि० का ज़िक्र

यह हमारे पैग़म्बर सल्ल० की बहुत चहेती बीवी हैं, सिर्फ़ इन ही कुंवारी से हज़रत सल्ल० के बड़े-बड़े सहाबी रज़ि० उनसे मस्अला पूछा करते थे।

एक बार हमारे हज़रत सल्ल० से एक सहाबी रज़ि० ने पूछा कि सब से ज़्यादा आपको किस से मुहब्बत है ? फ़रमाया, आइशा रज़ि० के साथ। उन्होंने पूछा, और मर्दों में ? फ़रमाया, आपके बाप यानी हज़रत अबूबक्र रज़ि० के साथ। और भी इनकी बहुत ख़ूबियां आयी हैं।

फ़ायदा—देखो, एक यह औरत थीं, जिनसे बड़े-बड़े आलिम दीन के मस्अले पूछते थे। एक अब हैं कि खुद भी आलिमों से पूछने का या दीन की किताबें पढ़ने का शौक़ नहीं।

बीबियो ! दीन का इल्म ख़ूब मेहनत और शौक़ से सीखो।

हज़रत हफ़्सा रज़ि० का ज़िक्र

यह भी हमारे पैग़म्बर सल्ल० की बीवी और हज़रत उमर रज़ि की बेटी हैं। हज़रत सल्ल० ने किसी बात पर उनको एक तलाक़ दे दी थी। फिर जिब्रील अलै० के कहने से आपने रुजूअ कर लिया। हज़रत जिब्रील अलै० ने यों फ़रमाया कि आप हफ़्सा रज़ि० से रुजूअ कर लीजिए, क्योंकि वह दिन को रोज़ा रखती है, रातों को जाग कर इबादत बहुत करती हैं और वह जन्नत में आपकी बीवी होंगी।

उन्होंने अपने भाई अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० को वसीयत की थी

कि मेरा इतना ख़ैरात कर दीजियो और कोई ज़मीन भी उन्होंने वक़्फ़ की थी, उसके इंतिज़ाम के लिए भी वसीयत की थी। उनके पहले के ख़ाविंद का नाम ख़ैनस बिन हुज़ाफ़ा था।

फ़ायदा—दीनदारी की बरकत देखो कि अल्लाह के यहां से तरफ़दारी की जाती है। फ़रिश्ते के हाथ तरफ़दारी का हुक्म होता है कि अपनी तलाक़ को लौटा लो और उनकी सख़ावत देखो कि अल्लाह की राह में किस तरह ख़ैरात का इंतिज़ाम कर दिया और ज़मीन भी वक़्फ़ की।

बीबियो ! दीनदारी अख़्तियार करो और माल का लालच और मुहब्बत दिल से निकालो।

हज़रत ज़ैनब खुज़ैमा की बेटी रज़ि० का ज़िक्र

यह भी हमारे पैग़म्बर सल्ल० की बीवी हैं। यह ऐसी सख़ी थीं कि ग़रीबों की मां के नाम से मशहूर थीं। इनके पहले शौहर का नाम अब्दुल्लाह दिन जह्श था।

फ़ायदा—देखो, ग़रीबों की ख़िदमत कैसी बुज़ुर्गी की चीज़ है।

हज़रत ज़ैनब हाशमिया रज़ि० का ज़िक्र

यह भी हमारे पैग़म्बर सल्ल० की बीवी हैं। हज़रत ज़ैद रज़ि० एक सहाबी हैं। हमारे हज़रत ने उनको अपना बेटा बनाया था। पहले बेटा बनाना शरअ में दुरुस्त था।[1] जब वह जवान हुए तो हज़रत को उनकी शादी की चिंता हुई। आपने इन्हीं ज़ैतब के लिए उनके भाई को पैग़ाम दिया। ये दोनों भाई–बहन नसब (वंश) में हज़रत ज़ैद रज़ि० को बराबर का न समझते थे। इसलिए पहले तो रुके, मगर अल्लाह तआला ने यह

1. यानी पहले जो भी किसी को बेटा बनाता था, उससे निस्बत करना यानी उसका बेटा कहना जायज़ था।

आयत भेज दी कि पैग़म्बर की तज्वीज़ के बाद फिर मुसलमान को कोई उज्र नहीं करना चाहिए। दोनों ने मंज़ूर कर लिया, और निकाह हो गया, मगर कुछ मियां–बीवी में अच्छी तरह से न बनी। नौबत यहां तक पहुंची कि ज़ैद रज़ि० ने तलाक़ देने का इरादा कर लिया और हज़रत सल्ल० आकर सलाह की। हज़रत सल्ल० ने रोका और समझाया, मगर अंदाज़ से आपको मालूम हो गया कि यह बग़ैर तलाक़ दिए रहेंगे नहीं। उस वक़्त आपको बहुत सोच हुआ कि एक तो इन दोनों भाई–बहनों का दिल इस निकाह को गवारा न करता था, पर हमारे कहने से क़ुबूल किया, अब अगर तलाक़ हो गयी तो और भी दोनों भाई–बहनों की बात हल्की होगी और बड़ा दिल टूटेगा। उनके दिल रखने का क्या उपाय किया जाए।

आख़िर सोचने से यह बात ख़्याल में आयी कि अगर मैं अपने से निकाह करूं, तो बेशक उसके आंसू पुंछ जाएंगे, वरना कोई बात समझ में नहीं आती, लेकिन उसके साथ ही दुनिया की ज़ुबान का भी ख़्याल था कि बे–ईमान लोग ताने ज़रूर देंगे कि बेटे की बीवी को घर में डाल लिया। अगरचे शरअ से मुंह बोला बेटा सचमुच नहीं हो जाता, मगर लोगों की ज़ुबान को कौन पकड़े, फिर उनमें भी बेईमान लोग, जिनको ताना देने के लिए ज़रा–सा बहाना बहुत है।

आप इसी सोच–विचार में थे, इधर हज़रत ज़ैद रज़ि० ने तलाक़ भी दे दी। इद्दत गुज़रने के बाद आपकी ज़्यादा राय इसी तरफ़ ठहरी कि पैग़ाम भेजना चाहिए। चुनांचे आपने पैग़ाम दिया। इन्होंने कहा मैं अपने पालनहार से कह लूं, अपनी अक़्ल से कुछ नहीं करती, उनको जो मंज़ूर होगा, आप ही सामान कर देंगे। यह कह करके मुसल्ला पर पहुंचकर नमाज़ में लग गयीं और नमाज़ के बाद दुआ की। अल्लाह तआला ने अपने पैग़म्बर सल्ल० पर यह आयत नाज़िल कि हमने इनका निकाह आपसे कर दिया। आप उनके पास तश्रीफ़ लें आये और यह आयत सुना दी।

वह और बीबियों पर फ़ख़्र[1] किया करतीं कि तुम्हारा निकाह तुम्हारे मां–बाप ने किया और मेरा निकाह अल्लाह तआला ने किया। और पहले–पहल जो पर्दे को हुक्म हुआ है, वह इन्हीं की शादी में हुआ। और यह बीवी बड़ी सख़ी थीं, दस्तकार भी थीं, अपनी दस्तकारी की आमदनी

---

1. यह फ़ख़्र घमंड के तौर पर न था, बल्कि अल्लाह तआला की नेमत का इज़्हार था और यह इबादत है।

से ख़ैरात किया करतीं।

एक बार का ज़िक्र है कि सब बीबियों ने मिलकर हमारे हज़रत सल्ल० से पूछा कि आपके बाद कौन बीवी सबसे पहले दुनिया से जाकर आपसे मिलेंगी। आपने फ़रमाया, जिसके हाथ सबसे लम्बे होंगे। अरबी बोल–चाल में लम्बे हाथ वाला कहते हैं सख़ी को, मगर बीवियों की समझ में नहीं आया। वे समझीं, इसी नाप के लम्बान को। सबने एक लकड़ी से अपने–अपने हाथ नापना शुरू किये, तो सबसे ज़्यादा लम्बे हाथ निकले हज़रत सौदा रज़ि० के। मगर सबसे पहले वफ़ात पायी हज़रत ज़ैनब रज़ि ने, उस वक़्त समझ में आया कि ओहो, यह मतलब था। ग़रज़ उनकी सख़ावत अल्लाह और रसूल सल्ल० के नज़दीक भी मानी हुई थी।

हज़रत आइशा रज़ि० का कहना है कि मैंने हज़रत ज़ैनब से अच्छी कोई औरत नहीं देखी। दीन में बहुत कामिल, ख़ुदा से डरने वाली, बात की बड़ी सच्ची, रिश्तेदारों से बड़ा सुलूक करने वाली, ख़ैरात बहुत करने वाली, दस्तकारी में बड़ी मेहनतिन। हमारे पैग़म्बर सल्ल० ने उनके हक़ में फ़रमाया है कि वह दिल में बहुत आजिज़ी रखने वाली, ख़ुदा के सामने गिड़गिड़ाने वाली थीं।

फ़ायदा—बीबियों ! तुमने सख़ावत की बुज़ुर्गी और दस्तकारी की ख़ूबी और हर काम में अल्लाह तआला से रूजूअ करना देखा, देखो कभी अपने से काम करने की ज़िल्लत मत समझना। हुनर–पेशे को कभी ऐब मत जानना।

हज़रत उम्मे हबीबा रज़ि० का ज़िक्र

यह भी हमारे हज़रत सल्ल० की बीवी हैं। जब मक्का में काफ़िरों ने मुसलमानों को बहुत सताया और मदीना जाने का उस वक़्त तक कोई हुक्म न हुआ था, उस वक़्त बहुत से मुसलमान हब्शा के मुल्क को चले गये थे। वहां का बादशाह जिसको नजाशी कहते हैं, ईसाई मज़हब रखता था, मगर मुसलमानों के जाने के बाद वह मुसलमान हो गया। ग़रज़ जो मुसलमान हब्शा गए थे, उन्हीं में हज़रत उम्मे हबीबा रज़ि० भी थीं। यह बेवा हो गयीं तो नजाशी बादशाह ने एक ख़वास, जिसका नाम अब्रहा था, उनके पस भेजी कि मैं तुमको रसूलुल्लाह सल्ल० के लिए पैग़ाम देता हूं। उन्होंने मंज़ूर किया और इमाम में अब्रहा को चांदी के दो कंगन और

कुछ अंगूठी–छल्ले दिए। इनके पहले शौहर अब्दुल्लाह बिन जह्श थे।

फ़ायदा—कैसी दीनदार थीं कि दीन की हिफ़ाज़त के लिए घर से बे–घर हो गयीं, आख़िर अल्लाह तआला ने उनकी मेहनत के बदले में कैसी राहत और इ़ज़्ज़त दी कि हज़रत सल्ल० से निकाह हुआ और बादशाह न उसका बंदोबस्त किया।

बीबियो ! दीन का जब मौक़ा आये, कभी दुनिया के आराम का या नाम का या माल का या घर–बार का लालच मत करना, सब चीज़ें दीन पर कुर्बान हैं।

हज़रत जुवैरिया रज़ि० का ज़िक्र

यह भी हमारे हज़रत सल्ल० की बीवी हैं। यह एक लड़ाई में जो बनी मुस्तलिक़ की लड़ाई के नाम से मश्हूर है, काफ़िरों के शहर में क़ैद होकर आयी थीं और एक सहाबी हज़रत साबित बिन क़ैस या उनके कोई चचेरे भाई थे, यह उनके हिस्से में लगी थीं। उन्होंने अपने मालिक से कहा कि मैं तुमको इतना रूपया दूं और तुम मुझको गुलामी से आज़ाद कर दो। उन्होंने मंज़ूर किया।

वह हज़रत सल्ल० के पास आयीं कि कुछ रूपये का सहारा लगा दें। आपने उनकी दीनदारी और ग़रीबी पर रहम खाया और फ़रमाया कि अगर तुम कहो तो रूपया सब मैं अदा कर दूं और तुमसे निकाह कर लूं। उन्होंने जी जान से क़ुबूल कर लिया, मतलब यह कि निकाह हो गया।

जब लोगों को निकाह का हाल मालूम हुआ तो उनके कुंबे–क़बीले के और भी बहुत से क़ैदी जो दूसरे मुसलमानों के क़ब्ज़े में थे, सबने इन क़ैदियों को ग़ुलामी से आज़ाद कर दिया कि अब इनका हमारे हज़रत सल्ल० से ससुराली रिश्ता हो गया। अब इनका ग़ुलाम बनाना बे–अदबी है।

हज़रत आइशा रज़ि० का कौल है कि हमको कोई औरत ऐसी नहीं मालूम हुई कि जिससे उसकी बिरादरी को इतना बड़ा फ़ायदा पहुंचा हो। इनके पहले शौहर का नाम मुसाफ़ेअ बिन सफ़वान था।

फ़ायदा—देखो, दीनदारी अजब नेमत है कि उसकी वजह से, लौंडी होने के बावजूद हज़रत सल्ल० की बीवी बनीं।

बीबियो ! हज़रत सल्ल० से ज़्यादा कोई इ़ज़्ज़तदार नहीं। जब

आपने लौंडी को बीवी बनाना ऐब नहीं समझा तो अगर कोई घटिया जगह किसी मस्लहत से निकाह करें या परदेस से किसी को ले आये तो तुम भी उसको हक़ीर मत समझो। यह बहुत बुरा मर्ज़ है और गुनाह भी है। देखो, सहाबा रज़ि० का अदब कि उनकी बीवी की इज़्ज़त कितनी ज़्यादा थी कि उनकी बिरादारी की ज़िल्लत भी गवारा नहीं की। आजकल कैसी जिहालत है कि खुद ऐसी बीवी की भी इज़्ज़त नहीं करतीं, चाहे कैसी ही दीनदार हो। भला इसकी बिरादरी को तो क्या ख़ाक–इज़्ज़त करने की उम्मीद है।

हज़रत मैमूना रज़ि० का ज़िक्र

यह भी हमारे पैग़म्बर सल्ल० की बीवी हैं।

एक बहुत बड़े हदीस के जानने वाले आलिम यों कहते हैं कि उनका निकाह हज़रत सल्ल० से इस तरह हुआ है कि उन्होंने अर्ज़ किया था कि अपनी जान आपको बख़्शती हूं, यानी मह्र के बग़ैर आपके निकाह में आना मंज़ूर करती हूं और आपने कुबूल फ़रमा लिया था। इस तरह का निकाह हमारे पैग़म्बर सल्ल० को दुरुस्त था और एक बहुत तफ़्सीर के जानने वाले आलिम यों कहते हैं कि जिस आयत में ऐसे निकाह का हुक्म है, वह एक उन ही बीवी के लिए उतरी है। इनके पहले शौहर का नाम हवैतब था।

फ़ायदा—देखो, कैसी दीन की आशिक़ बीबियां थीं कि हज़रत की ख़िदमत को इबादत समझकर मह्र की भी परवा नहीं की, हालांकि उस ज़माने में मह्र नक़दा–नक़द हो मिल जाया करता था। हमारे ज़माने की तरह क़ियामत का या मौत का हार न था।

बीबियो ! बस दीन ही को हमेशा असली दौलत समझो। दुनिया से ऐसी मुहब्बत रखो कि अपने वक़्त को, अपने ख़्याल को इसी में खपा दो। रात–दिन इसी का धंधा रहे, मिल जाए, तो बाग़–बाग़ हो जाओ, चाहे सवाब हो चाहे गुनाह, न मिले तो ग़म सवार हो जाए तो शिकायत करती फिरो। होत वालों पर जलन करने लगो, नीयत डांवाडोल करने लगो।

हज़रत सफ़ीया रज़ि० का ज़िक्र

यह भी हमारे पैग़म्बर सल्ल० की बीवी हैं।

ख़ैबर[1] एक बस्ती है। वहां यहूदियों से मुसलमानों की लड़ाई हुई थी। यह बीबी उस लड़ाई में क़ैद होकर आयीं थीं और एक सहाबी रज़ि० के हिस्से में लग गयी थीं। हज़रत पैग़म्बर सल्ल० ने उनसे मोल लेकर आज़ाद कर दिया और उनसे निकाह कर लिया।

यह बीबी हज़रत हारून पैग़म्बर अलैहिस्सलाम की औलाद में हैं और बहुत बुर्दबार, अक़्लमंद, ख़ूबियों की भरी हुई हैं। इनकी बुर्दबारी इस एक क़िस्से से मालूम होती है कि उनकी एक लौंडी ने हज़रत उमर रज़ि० से झूठ–मूठ की उनकी दो बातों की चुगली खायी। एक तो यह इनको अब तक सनीचर के दिन से मुहब्बत है। यह दिन यहूदियों में बड़ी ताज़ीम का था। मतलब यह था कि इनमें मुसलमान होकर भी अपने पहले मज़हब यहूदी होने का असर बाक़ी है, तो यों समझो कि मुसलमान पूरी नहीं हुईं। दूसरी बात यह कही कि यहूदियों को ख़ूब देती–लेती हैं। हज़रत उमर रज़ि० ने हज़रत सफ़ीया रज़ि० से पूछा तो उन्होंने जवाब दिया कि पहली बात तो बिल्कुल झूठ है। जब से मैं मुसलमान हुई हूं और जुमा का दिन ख़ुदा–ए–तआला ने दे दिया है, सनीचर से दिल को लगाव भी नहीं रहा। रही दूसरी बात, वह अल्बत्ता सही है और वजह इसकी यह है कि वे लोग मेरे रिश्तेदार हैं और रिश्तेदारों से सुलूक करना शरअ के ख़िलाफ़ नहीं।

फिर उस लौंडी से पूछा कि तुझसे झूठी चुग़ली खाने को किसने कहा था। कहने लगी शैतान ने। आपने फ़रमाया, जा तुझको गुलामी से आज़ाद किया।

इनके पहले शौहर का नाम कनाना बिन अबुल हक़ीक़ था।

फ़ायदा—बीबियो ! देखो, बर्दबारी इसे कहते हैं। तुमको भी चाहिए कि अपनी मामा, नौकर–चाकर भी ख़ता और क़ुसूर माफ़ करती रहे।

1. यह बस्ती मदीना मुनव्वरा के क़रीब है।

बात–बात में बदला लेना कम हौसले की बात है।[1] और देखो, सच्ची कैसी थीं कि जो बात थी, साफ़ कह दी, उसको बनाया नहीं, जैसे आजकल कुछ औरतों की आदत है कि कभी अपने ऊपर बात नहीं आने देतीं। हेर–फेर करके अपने आपको इल्ज़ाम से बचाती हैं। बात का बनाना भी बुरी बात है।

हज़रत ज़ैनब रज़ि० का ज़िक्र

यह बीबी हमारे पैग़म्बर सल्ल० की बेटी हैं और हज़रत सल्ल० को उनसे बहुत मुहब्बत थी। इनका निकाह अबुल आस बिन रबीअ[2] से हुआ था। जब वह मुसलमान हो गयीं और शौहर ने मुसलमान होने से इंकार कर दिया, तो उनसे ताल्लुक़ ख़त्म करके उन्होंने मदीना की हिजरत की। थोड़े दिनों पीछे इनके शौहर भी मुसलमान होकर मदीना आ गये। हज़रत सल्ल० ने फिर इन्हीं से निकाह कर दिया। और वह भी इनको बहुत चाहते थे। जब यह हिजरत करके मदीना को चलीं थीं, रास्ते में एक और क़िस्सा हुआ कि कहीं दो काफ़िर मिल गये, उनमें से एक ने उनको धकेल दिया। यह एक पत्थर पर गिर पड़ी और उनको कुछ उम्मीद थी वह भी जाती रही और इस क़दर सद्मा पहुंचा कि मरते दम तक अच्छी न हुई, आख़िर इसी में इंतिक़ाल हो किया।

फ़ायदा—देखो, कैसी हिम्मत और दीनदारी की बात है कि दीन के वास्ते अपना वतन छोड़ा, ख़ानदान को छोड़ दिया, काफ़िरों के हाथ से कैसी तक्लीफ़ उठाई कि उसमें जान गई, मगर दीन पर क़ायम रहीं।

बीबियो ! दीन के सामने सब चीज़ों को छोड़ देना चाहिए। अगर तक्लीफ़ पहुंचे, उसको झेलो। अगर ख़ाविंद बद–दीन हो, कभी उसका साथ मत दो।

---

1. पहले आ चुका है कि हुज़ूर सल्ल० ने अपने नफ़्स के लिए कभी गुस्सा नहीं किया, जिससे यह भी मालूम हुआ कि आपने कभी किसी से बदला नहीं लिया। कमाल यही है, गो क़ुसूर की मिक़्दार बदला लेना जायज़ है।

2. पहले ऐसा निकाह यानी मुसलमान औरत का काफ़िर मर्द के साथ जायज़ था, अब यह हुक्म नहीं रहा।

हज़रत रूकैया रज़ि० का ज़िक्र

यह भी हमारे पैग़म्बर सल्ल० की बेटी हैं। इनका पहला निकाह उत्बा से हुआ जो अबूलहब काफ़िर का बेटा था, जिसकी बुरई सूरः तब्बत में आई है। जब ये दोनों बाप–बेटे मुसलमान न हुए और बाप के कहने से उसने इन बीवी को छोड़ दिया तो हज़रत सल्ल० ने उनको निकाह हज़रत उस्मान रज़ि० से कर दिया। जब हमारे हज़रत सल्ल० बद्र की लड़ाई में चले हैं, उस वक़्त यह बीमार थीं और आप हज़रत उस्मान रज़ि० को उनकी ख़ैर–ख़बर लेने के वास्ते मदीना–मुनव्वरा छोड़ गए थे और फ़रमाया था कि तुमको जिहाद वालो के बराबर सवाब मिलेगा और जिहाद वालों के साथ उनका हिस्सा भी लगाया। जिस दिन लड़ाई जीतकर मदीने में आये हैं, उसी दिन उनका इंतिक़ाल हो गया।

फ़ायदा—देखो, इनकी कैसी बुज़ुर्गी है कि इनकी ख़िदमत करने का सवाब जिहाद के बराबर ठहरा। यह बुज़ुर्गी उनके दीनदार होने की वजह से है।

बीबियो ! अपने दीन को पक्का करने का ख़्याल हर वक़्त रखो। कोई गुनाह न होने पाये, इससे दीन में बड़ी कमज़ोरी आ जाती है।

हज़रत उम्मे कुल्सूम रज़ि० का जिक्र

यह भी हमारे पैग़म्बर सल्ल० की बेटी हैं। इनका पहला निकाह उतैबा से हुआ जो काफ़िर अबू लहब का दूसरा बेटा है। अभी रूख़्सती न होने पाई थी कि हमारे हज़रत सल्ल० को पैग़म्बरी मिल गई। वे दोनों बाप–बेटे मुसलमान हुए और उसने भी बाप के कहने से इन बीबी को छोड़ दिया। जब इनकी बहन रूकया रज़ि० का इन्तिक़ाल हो गया था तो इनका निकाह हज़रत उस्मान रज़ि० से हो गया। और जब हज़रत रूकैया का इन्तिक़ाल हो गया था तो इत्तिफ़ाक़ से उसी ज़माने में हज़रत हफ़्सा भी बेवा हो गयीं। उनके बाप हज़रत उमर रज़ि० ने उनका निकाह हज़रत उस्मान रज़ि० से करना चाहा। इनकी कुछ राय न हुई, पैग़म्बर सल्ल० को ख़बर हुई तो आपने फ़रमाया कि हफ़्सा को तो उस्मान से अच्छा ख़ाविंद

बतलाता हूं और उस्मान को हफ़्सा से अच्छी बीवी बतलाता हूं। चुनांचे आपने हज़रत हफ़्सा रज़ि० से निकाह कर लिया और हज़रत उस्मान रज़ि० का निकाह हज़रत उम्मे कुलसूम से कर दिया।

फ़ायदा—आपने इनको अच्छा कहा और पैग़म्बर किसी को अच्छा कहें य ईमान की वजह है।

बीबियो ! ईमान और दीन दुरूस्त रखो।

हज़रत फ़ातिमा ज़ुहरा रज़ि० का ज़िक्र

यह उमर में सब बहनों से छोटी और रूत्बे में सबसे बड़ी और रूत्बे बड़ी और सबसे ज़्यादा प्यारी बेटी हमारे पैग़म्बर सल्ल० की हैं। हज़रत सल्ल० ने उनको अपनी जान का टुकड़ा फ़रमाया है और उनको सारी दुनिया की औरतों का सरदार फ़रमाया है और यों भी फ़रमाया है कि जिस बात से फ़ातिमा को रंज होता है उससे मुझको भी रंज होता है। और जिस बीमारी में हमारे पैग़म्बर सल्ल० ने वफ़ात पाई है, उसी बीमारी में आपने सबसे छिपाकर, सिर्फ़ इन्हीं को अपनी वफ़ात के नज़दीक हो जाने की ख़बर दी थी, जिस पर यह रोने लगीं। आपने फिर उनके कान में फ़रमाया कि तुम रंज न करो, एक तो सबसे पहले तुम मेरे पास चली आओगगी, दूसरे जन्नत में सब बीबियों की सरदार होगी, यह सुनकर हंसने लगीं। हज़रत सल्ल० की बीवियों ने कितना ही पूछा कि यह क्या बात थी। उन्होंने कुछ जवाब न दिया और प्यारे नबी सल्ल० की वफ़ात के बाद यह भेद[1] बतलाया और हज़रत अली रज़ि० से इनका निकाह हुआ है और भी हदीसों में इनकी बड़ी–बड़ी बुज़ुर्गियां आई हैं।

फ़ायदा—हज़रत सल्ल० की यह सारी मुहब्बत और ख़ुसूसियत इसलिए थी कि यह दीनदार, और सबसे ज़्यादा सब्र व शुक्र करने वाली थीं।

---

1. और ज़िंदगी में न बतलाया, इसलिए कि वह राज था हुज़ूर सल्ल० का और ब–ज़ाहिर इसी वजह से आपने छिपा रखा था और वफ़ात के बाद रखने की वजह जाती रही, इस वास्ते हज़रत फ़ातिमा रज़ि० ने ज़ाहिर कर दिया।
आपके सब्र व शुक्र और दूसरे कमालों के तफ़्सीली बयान के लिए देखिये मेरी किताब 'मनाक़िबे फ़ातिमा।'

बीबियो ! दीन और सब्र व शुक्र को अख़्तियार करो, तुम भी अल्लाह व रसूल सल्ल० की प्यारी बन जाओ।

फ़ायदा—जहां सबसे पहले पैगम्बर सल्ल० का हाल बयान हुआ है, वहां भी इन सब बीबियों और बेटियों के नाम आ चुके हैं।

फ़ायदा—बीबियो ! एक बात और सोचने की है। तुमने हज़रत मुहम्मद सल्ल० की ग्यारह बीबियों और चार बेटियों का हाल पढ़ा है। इस से तुमको यह भी मालूम हुआ होगा कि बीवियों में हज़रत आइशा के अलावा सब बीवियों का हज़रत सल्ल० से दूसरा निकाह हुआ है और बेटियों में हज़रत ज़ैनब रज़ि० और हज़रत फ़ातिमा रज़ि० को छोड़कर बाक़ी दो हज़रत उस्मान रज़ि० से दूसरा निकाह हुआ है। ये बारह बीबियां वे हैं कि दुनिया में कोई औरत इज़्ज़त और रुत्बे में उनके बराबर नहीं। अगर दूसरा निकाह कोई ऐब की बात न होती, तो ये बीबियां, तौबा–तौबा, क्या ऐब की बात करतीं। अफ़सोस है कि कुछ कम–समझ आदमी इसको ऐब समझते हैं। भला जब हज़रत सल्ल० के घराने की बात को ऐब और बे–इज़्ज़ती समझा तो ईमान कहां रहा ? ये कैसे मुसलमान हैं कि हज़रत सल्ल० के तरीक़े को ऐब और काफ़िरों के तरीक़े को इज़्ज़त की बात समझें।

और भी सुनो तुमसे पहले वक़्तों की बेवाओं में और अबकी बेवाओं में भी बड़ा फ़र्क़ है। इन कमबख़्ती मारियों में जिहालत तो थी, मगर अपनी आबरू की बड़ी हिफ़ाज़त करती थीं, अपने नफ़्स को मार देती थीं, इनसे कोई बात ऊंच–नीच की नहीं होने पाती थी और अब तो बेवाओं को सुहागिनों से ज़्यादा बनाव–सिंगार का हौसला होता है, इसलिए बहुत जगह ऐसी नाजुक–नाजुक बातें होने लगी हैं, जो कहने के लायक़ नहीं। अब तो बिल्कुल बेवा के बिठाने का ज़माना नहीं रहा, क्योंकि न औरतों में पहली–सी शर्म व हया रही और न मर्दों में पहली–सी ग़ैरत और बेवाओं में रंडापा काटने और हर तरह से उनके खाने–कपड़े की ख़बर लेने का ख़्याल रहा। अब तो भूल कर भी बेवा को न बिठलाना चाहिए। अल्लाह तआला समझ और तौफ़ीक़ दें।

पहली उम्मतों की बीबियों के बाद यहां तक हज़रत सल्ल० की ग्यारह बीवियों और चार बेटियों, कुल पंद्रह बीबियों का ज़िक्र हुआ। आगे और ऐसी बीबियों का ज़िक्र आता है जो हज़रत सल्ल० के वक़्त में थीं। इनमें कुछ का हज़रत सल्ल० से ख़ास–ख़ास ताल्लुक़ भी है।

हज़रत हलीमा सादिया[1] का ज़िक्र

इन बीबी ने हमारे पैग़म्बर सल्ल० को दूध पिलाया है और जब हज़रत सल्ल० ने ताइफ़ शहर पर जिहाद किया है, उस ज़माने में यह बीबी अपने शौहर और बेटे को लेकर हज़रत सल्ल० की ख़िदमत में आयी थीं। आपने बड़ी इज़्ज़त की और अपनी चादर बिछाकर उस पर उनको बिठलाया और वे सब मुसलमान हुए।

फ़ायदा—देखो, इसके बावजूद कि हज़रत सल्ल० के साथ उनका बड़ा ताल्लुक़ था, पर यह जान गयी कि दीन व ईमान के बग़ैर सिर्फ़ इस ताल्लुक़ की वजह से बख़्शिश न होगी, इसलिए आकर दीन क़ुबूल किया।

बीबियो ! तुम इस भरोसे पर मत रहना कि हम फ़लाने पीर की औलाद हैं या हमारा फ़लाना बेटा या पोता, आलिम–हाफ़िज़ है, ये लोग हमको बख़्शवा लेंगे। याद रखो, अगर तुम्हारे पास ख़ुद भी दीन है, तो ये लोग भी कुछ अल्लाह तआला से तुम्हारे वास्ते कह–सुन सकते हैं। नहीं तो ऐसे ताल्लुक़ कुछ भी काम न आयेंगे।

हज़रत उम्मे ऐमन रज़ि० का ज़िक्र

इन बीवी ने हमारे पैग़म्बर सल्ल० को गोद में खिलाया है और पाला है। हज़रत सल्ल० कभी–कभी इनके पास मिलने जाया करते थे। एक बार हज़रत सल्ल० इनके पास तशरीफ़ लाये, उन्होंने एक प्याले में कोई पीने की चीज़ दी। ख़ुदा जाने हज़रत सल्ल० का उस वक़्त जी न चाहता था या आप का रोज़ा था, आपने मजबूरी ज़ाहिर की। चूंकि पालने–रखने का उनको नाज़ था, ज़िद बांध कर खड़ी हो गयीं और बे–झिझक कह रही थीं, नहीं, पीना पड़ेगा और हज़रत सल्ल० यों भी फ़रमाया करते थे कि मेरी सगी मां के बाद उम्मे ऐमन मेरी मां हैं। हज़रत सल्ल० की वफ़ात के बाद हज़रत अबूबक्र रज़ि० हज़रत उमर रज़ि० कभी–कभी उनकी ज़ियारत को जाया करते थे। उनको देखकर हज़रत सल्ल० को याद करके रोने

---

1. अजाइबुल क़सस।
2. मुस्लिम व नववी वग़ैरह।

लगतीं, ये दोनों साहब भी रोने लगते।

फ़ायदा—देखा, कैसी बुज़ुर्गी की बात है कि हज़रत सल्ल० उनके पास जाएं, ऐसे बड़े सहाबा रज़ि० उनकी ख़ातिर–मदारात करें। यह बुज़ुर्गी इस वजह से थी कि उन्होंने रसूलुल्लाह सल्ल० की ख़िदमत की और दीन में कामिल थीं।

बीबियो ! अब हज़रत सल्ल० की ख़िदमत यही है कि हज़रत सल्ल० के दीन की ख़िदमत करो, औरों की नेक बातें बतलाओ, औरतों को दीन सिखलाओ, अपनी औलाद को नेकी की तालिम दो और खुद भी दीन में मज़बूत रहो, इन्शाअल्लाह तआला तुमको बुज़ुर्गी का हिस्सा मिल जाएगा और ज़ियारत से यों न समझो कि ये सब ज़ियारत करने वालों के सामने बे–पर्दा हो जाती होंगी। किसी के पास इरादा करके जाना और पास बैठना, अगरचे दर्मियान में पर्दा भी हो और अच्छी–अच्छी बातें कहना–सुनना, बस यही ज़ियारत है।

हज़रत उम्मे सुलैम का ज़िक्र

यह हज़रत रसूलुल्लाह सल्ल० की सहाबिया हैं।[2] और एक सहाबी हैं हज़रत अबू तल्हा रज़ि०, उनकी बीवी हैं और एक सहाबी हैं हज़रत अनस रज़ि० जो हमारे हज़रत के ख़ास ख़िदमतगुज़ार हैं, उनकी यह मां हैं और एक तरह से हमारे हज़रत सल्ल० की खाला हैं। और उनके एक भाई थे सहाबी, वह एक लड़ाई में शहीद हो गये।

हज़रत सल्ल० उनकी बहुत ख़ातिर किया करते थे और कभी–कभी उनके घर तशरीफ़ ले जाया करते। हज़रत सल्ल० ने उनको जन्नत में भी देखा था।

उनका एक अजीब क़िस्सा सामने आया है कि उनका एक बच्चा था, वह बीमार हो गया और एक दिन मर गया। रात का वक़्त था, अब उनका सब्र देखो, यह ख़्याल किया कि अगर ख़ाविंद को ख़बर करूंगी, सारी रात बेचैन होंगे, खाना–दाना न खायेंगे पस चुप होकर बैठ रहीं। आये ख़ाविंद और पूछा बच्चा कैसा है ? कहने लगीं, आराम है। झूठ भी नहीं कहा,

---

1. हदीस की किताबों और उनकी शरहों से लिया गया।
2. यानी यह बीबी हुज़ूर की सोहबत पायी हुई हैं।

मुसलमान के वास्ते, इससे बढ़कर क्या आराम होगा कि अपने असली ठिकाने चला जाए। वह समझे नहीं। ग़रज़ उनके सामने खाना लाकर रखा, उन्होंने खाना खाया, फिर उनको उनकी तरफ़ ख़्वाहिश हुई। ख़ुदा की बंदी ने इससे भी उज़्र नहीं किया। जब सारी बातों से फ़ारिग़ हो चुकीं तो ख़ाविंद से पूछती हैं कि अगर कोई किसी को मांगी चीज़ दे और फिर अपनी चीज़ मांगने लगे, इंकार करने का कुछ हक़ हासिल है। उन्होंने कहा, नहीं। कहने लगीं तो फिर बच्चे को सब्र करो। वह बड़े ख़फ़ा हुए कि मुझको जभी क्यों न ख़बर दी।

उन्होंने गह सारा क़िस्सा हज़रत सल्ल० से जाकर बयान किया। आपने उनके लिए दुआ कि। ख़ुदा की क़ुदरत, उसी रात हमल रह गया और बच्चा पैदा हुआ और इनकी औलाद में बड़े-बड़े आलिम हुए।

फ़ायदा—बीबियो ! सब्र इनसे सीखो और ख़ाविंद को आराम पहुंचाने का सबक़। और यह जो मांगी हुई चीज़ की मिसाल दी, कैसी अच्छी और सच्ची बात है। अगर आदमी इतनी बात समझ ले तो कभी बे-सब्री न करे। देखो, इसकी बरकत कि अल्लाह मियां ने उस बच्चे का बदला कितनी जल्दी दे दिया, और कैसा बरकत का बदला दिया, जिसकी नस्ल में आलिम-फ़ाज़िल हुए।

हज़रत उम्मे हराम[1] का ज़िक्र

यह भी सहाबिया रज़ि० हैं और हज़रत उम्मे सुलैम रज़ि०, जिनका ज़िक्र अभी गुज़रा है, उनकी बहन हैं। यह भी हज़रत सल्ल० की एक रिश्ते से ख़ाला हैं। इनके यहां हज़रत सल्ल० तशरीफ़ ले जाया करते थे।

एक बार आपने उनके घर खाना खाया, फिर नींद आ गयी, फिर हंसते हुए जागे। उन्होंने वजह पूछी। आपने फ़रमाया मैंने इस वक़्त ख़्वाब में अपनी उम्मत के लोगों को देखा कि जिहाद के लिए जहाज़ में सवार हुए जा रहे हैं और सामान व लिबास में अमीर और बादशाह मालूम होते हैं। उन्होंने अर्ज़ किया, या रसूलुल्लाह सल्ल० ! दुआ कीजिए, अल्लाह तआला मुझको भी इनमें से कर दे। आपने दुआ फ़रमायी। फिर आपको

---

1. मुस्लिम और उसकी शरह से लिया गया।

नींद आ गयी, तो इसी तरह फिर हंसते हुए उठे और इसी तरह का ख़्वाब फिर बयान किया। इस ख़्वाब में उसी तरह के दो आदमी नज़र आये थे। उन्होंने अर्ज़ किया, या रसूलुल्लाह सल्ल० ! दुआ कीजिए, अल्लाह तआला मुझको भी इनमें से कर दे। आपने फ़रमाया कि तुम पहलों में से हो। चुनांचे इनके शौहर जिनका नाम उबादा था, दरिया के सफ़र में जिहाद में गये, यह भी साथ गयीं। जब दरिया से उतरी हैं, यह भी किसी जानवर पर सवार होने लगीं। उसने शोख़ी की, यह गिर गयीं और इन्तिक़ाल फ़रमा गयीं।

फ़ायदा—हज़रत सल्ल० की दुआ क़ुबूल हो गयी, क्योंकि जब तक घर लौटकर न आये, वह सफ़र जिहाद ही का रहता है और जिहाद के सफ़र में, चाहे किसी तरह मर जाए, उसमें शहीद ही का सवाब मिलता है। देखो, कैसी दीनदार थीं कि सवाब हासिल करने के शौक़ में जान की परवाह नहीं की। खुद दुआ करायी कि मुझको यह दौलत मिले।

बीबियो ! तुम भी इसका ख़्याल रखो और दीन का काम करने में अगर थोड़ी बहुत तक्लीफ़ हुआ करे, उससे घबराया मत करो। आख़िर सवाब भी तुम ही लोगी।

हज़रत उम्मे अब्द रज़ि० का ज़िक्र

एक सहाबी हैं बहुत बड़े, हज़रत अब्दुल्लाह बिन मस्ऊद रज़ि०। यह बीबी उनकी मां हैं और खुद भी सहाबिया हैं। इनको हमारे हज़रत सल्ल० के घर के कामों में ऐसा दख़ल था कि देखने वाले यह समझते थे कि यह भी घर वालों ही में हैं।

फ़ायदा—इस क़दर ख़ुसूसियत पैग़म्बर सल्ल० के घर में, यह सिर्फ़ दीन की वजह से थी।

बीबीयो ! अगर दीन को संवारोगी तो तुमको भी क़ियामत में हज़रत सल्ल० से नज़दीकी नसीब होगी।

हज़रत अबूज़र ग़िफ़ारी रज़ि० की वालिदा का ज़िक्र

यह एक सहाबी हैं। जब हज़रत सल्ल० के पैग़म्बर होने की ख़बर मशहूर हुई और काफ़िरों ने झुठलाया तो यह बुज़ुर्ग अपने वतन से मक्का मुअज़्ज़मा में इस बात का पता लगाने आये थे। यहां का हाल देख–भालकर मुसलमान हो गये। जब यह लौट कर अपने घर गये और अपनी मां को सारा क़िस्सा सुनाया तो कहने लगीं, मुझको तुम्हारे दीन से कोई इंकार नहीं। मैं भी मुसलमान होती हूं।

फ़ायदा—देखो, तबीयत की पाकी यह है कि जब सच्ची बात मालूम हो गयी, उसके मानने में बाप–दादा के तरीक़े का ख़्याल नहीं किया।

बीबियो ! तुम्हें भी जब शरअ की बात मालूम हो जाया करे, इसके मुक़ाबले में ख़ानदानी रस्मों का नाम मत लिया करो। बस ख़ुशी–ख़ुशी दीन की बात मान लिया करो और उसी का बर्ताव किया करो।

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० की वालिदा का ज़िक्र

सह एक सहाबी हैं। अपनी मां को दीन क़ुबूल करने के वास्ते समझाया करते। एक बार मां दीन व ईमान की कोई ऐसी बात कह दी कि उनको बड़ा सदमा हुआ। यह रोते हुए हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पास आये और अर्ज़ किया कि हज़रत ! मेरी मां के वास्ते दुआ कीजिए कि ख़ुदा उसको हिदायत करे। आपने दुआ की कि ऐ अल्लाह ! अबू हुरैरह रज़ि० की मां को हिदायत कर।

यह ख़ुशी–ख़ुशी घर पहुंचे तो दरवाज़ा बन्द था और पानी गिरने की आ रही थी, जैसे कोई नहाता हो। इनके आने की आहट सुनकर मां ने पुकार कर कहा, वहां ही रहो, नहा–धोकर किवाड़ खोले और कहा, 'अश्हदु अल्लाइलाह इल्लल्लाहु, अश्हदु अन्न मुहम्मदर्रसूलुल्लाह०' (मैं गवाही देती हूं कि एक अल्लाह के अलावा कोई माबूद नहीं और गवाही देती हूं कि मुहम्मद अल्लाह के रसूल हैं।)

इनका मारे ख़ुशी का यह हाल हो गया कि बे–अख़्तियार रोना शुरू किया और इसी हाल में जाकर सारा क़िस्सा हज़रत सल्ल० से बयान किया। आपने अल्लाह तआला का शुक्र अदा किया। उन्होंने कहा, या रसुलुल्लाह सल्ल० ! अल्लाह से दुआ कर दीजिए कि मुसलमानों से हम मां–बेटों की मुहब्बत हो जाए और मुसलमानों को हम दोनों से मुहब्बत हो जाए। आपने दुआ फ़रमाई।

फ़ायदा—देखो, नेक औलाद से कितना बड़ा फ़ायदा है।

बीबियो ! अपने बच्चों को भी दीन का इल्म सिखलाओ। इससे तुम्हारा दीन भी संवरेगा।

हज़रत अस्मा बिन्त असीम रज़ि० का ज़िक्र

यह बीबी सहाबिया हैं। जब मक्के में काफ़िरों ने मुसलमानों को बहुत सताया, उस वक़्त बहुत मुसलमान मुल्क हब्शा को चले गए थे। उनमें यह भी थीं। फिर जब हज़रत पैग़म्बर सल्ल० मदीने में तशरीफ़ ले आए तो सब मुसलमान मदीना आ गए थे। उनमें यह भी आयी थीं। आपने इनको ख़ुशख़बरी दी थी कि तुम ने दो हिजरतें की हैं, तुमको बहुत सवाब होगा।

फ़ायदा—देखो, दीन के वास्ते किस तरह बे–घर हुई, तब तो सवाब लूटे।

बीबियो ! अगर दीन के वास्त कुछ मेहनत उठाना पड़े, तो उकताना मत।

हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ि० की वालिदा[1] का ज़िक्र

हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ि० सहाबी हैं। यह फ़रमाते हैं कि मेरी वालिदा ने एक बार मुझसे पूछा, तुमको हज़रत सल्ल० की ख़िदमत में गए हुए कितने दिन हुए। मैंने बतलाया कि इतने दिन हुए, मुझको बुरा-भला कहा। मैंने कहा, अब जाऊंगा और मग़्रिब आप ही के साथ पढूंगा और आपसे अर्ज़ करूंगा कि मेरे और तुम्हारे लिए बख़्शिश की दुआ करें। चुनांचे मैं गया और मग़्रिब पढ़ी, इशा पढ़ी। जब इशा पढ़कर आप चले, मैं साथ हो लिया। मेरी आवाज़ सुनकर फ़रमाया, हुज़ैफ़ा हैं। मैंने कहा, जी हां। फ़रमाया, क्या काम है, अल्लाह तुम्हारी और तुम्हारी मां की बख़्शिश करें।

फ़ायदा—देखो, कैसी अच्छी बीवी थीं, अपनी औलाद के लिए इन बातों का भी ख़्याल रखती थीं कि हज़रत सल्ल० की ख़िदमत में गए या नहीं।

बीबियो ! तुम भी अपनी औलाद की ताकीद रखा करो कि बुज़ुर्गों के पास जाकर बैठा करें। इनसे दीन की बातें सीखें और अच्छी सोहबत की बरकत हासिल करें।

हज़रत फ़ातिमा बिन्त ख़त्ताब रज़ि० का ज़िक्र

यह हज़रत उमर रज़ि० की बहन हैं। हज़रत उमर रज़ि० से पहले मुसलमान हो चुकी थीं, इनके ख़ाविंद सईद बिद ज़ैद रज़ि० भी मुसलमान हो चुके थे। हज़रत उमर उस वक़्त तक मुसलमान न हुए थे। ये दोनों हज़रत उमर रज़ि० के डर के मारे अपना इस्लाम छिपा रखते थे। एक बार इनके क़ुरआन मजीद पढ़ने की आवाज़ हज़रत उमर रज़ि० ने सुन ली और इन दोनों के साथ बड़ी सख़्ती की, लेकिन बहनोई तो फिर भी मर्द थे, हिम्मत तो इन बीबी की देखो कि साफ़ कहा कि बेशक हम मुसलमान हैं और क़ुरआन मजीद पढ़ रहे थे, चाहे मारो चाहे छोड़ो। हज़रत उमर रज़ि० ने कहा, मुझको भी क़ुरआन मजीद दिखलाओ। बस, क़ुरआन का

1. तिर्मिज़ी शरीफ़।

देखना था और इसका सुनना था, तुरन्त ईमान का नूर उनके दिल में दाखि़ल हो गया और हज़रत सल्ल० की ख़िदमत में हाज़िर होकर मुसलमान हुए।

फ़ायदा—बीबियो ! तुमको भी दीन और शरअ की बातों में ऐसी ही मज़बूती चाहिए। यह नहीं कि ज़रा से रूपए के लिए शरअ के ख़िलाफ़ कर लिया। बिरादरी–कुंबे के ख़्याल से शरअ के ख़िलाफ़ रस्में कर लीं और जो बात भी शरअ के खि़लाफ़ हो, किसी तरह उसके पास मत जाओ।

एक अंसारी औरत[1] का ज़िक्र

इब्ने इस्हाक़ से रिवायत है कि हज़रत सल्ल० के साथ उहद की लड़ाई में एक अंसारी बीवी का ख़ाविंद और बाप–भाई सब शहीद हो गए। जब उसने सुनो तो पहले यह पूछा, बतलाओ हज़रत सल्ल० कैसे हैं ? लोगों ने कहा, ख़ैरियत से हैं। कहने लगीं, जब आप सही–सालिम हैं, फिर किसी का क्या ग़म ?

फ़ायदा—सुब्हानल्लाह ! हज़रत के साथ कैसी मुहब्बत थी।

बीबियो ! अगर तुमको हज़रत सल्ल० के साथ मुहब्बत करनी मंज़ूर है, तो शरअ की पूरी–पूरी पैरवी करो। इससे और मुहब्बत की वजह से बहिश्त में हज़रत सल्ल० के पास दर्जा मिलेगा।

हज़रत उम्मे फ़ज़्ल लुबाना बिन्त हारिस[2] का ज़िक्र

यह हमारे हज़रत पैग़म्बर सल्ल० की चची हैं और हज़रत अब्बास रज़ि० की बीवी और अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ि० की मां हैं।

क़ुरआन मजीद में जो आया है कि जो मुसलमान काफ़िरों के मुल्क में

1. इस्तीआब वग़ैरह,
2. सिहाह सित्ता।

रहने से खुदा की इबादत न कर सके, उसको चाहिए कि इस मुल्क को छोड़कर कहीं औरतें जा बसे । अगर ऐसा न करेगा, उसको बहुत गुनाह होगा, हां, बच्चे और औरें जिनको दूसरी जगह का रास्ता न मालूम हो, न इतनी बहादुरी और हिम्मत हो, वे माफ़ी के क़ाबिल हैं, तो हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि० फ़रमाते हैं कि इन्हीं कम–हिम्मतों में, मैं और मेरी मां थीं, वह औरत थीं और मैं बच्चा था।

फ़ायदा––देखो, यह उनकी नीयत की ख़ूबी थी कि दिल से काफ़िरों में रहना पसंद न था, लेकिन लाचार थीं इस वास्ते अल्लाह की उन पर रहमत हो गयी कि गुनाह से बचा लिया।

बीबियो ! तुम भी दिल से हमेशा दीन के मुताबिक़ अमल करने की पक्की नीयत रखा करो। फिर तुम्हारी मजबूरी के माफ़ होने की उम्मीद है और जो दिल ही से दीन की बात का इरादा न किया, तो फिर गुनाह से बच नहीं सकतीं।

हज़रत उम्मे सुलैत रज़ि० का ज़िक्र

एक बार हज़रत उमर रज़ि० मदीने की बीबियों को कुछ चादरें बांट रहे थे। एक चादर रह गयी, आपने लोगों से सलाह पूछी कि बतलाओ, किस को दूं ? लोगों ने कहा कि हज़रत अली की बेटी उम्मे कुलसूम, जो आपके निकाह में हैं, उनको दे दीजिए। आपने फ़रमाया, नहीं, बल्कि यह उम्मे सुलैत का हक़ है।

यह बीबी अंसार में की हैं और हज़रत सल्ल० से बैअत हैं। हज़रत उमर रज़ि० ने फ़रमाया कि उहद की लड़ाई में उनका यह हाल था कि पानी की मश्कें ढोती फिरती थीं और मुसलमानों के खाने–पीने का इन्तिज़ाम करती थीं।

इसी तरह एक बीबी थीं ख़ौला, वह तो लड़ाई में तलवार लेकर लड़ती थीं।

फ़ायदा––देखो, ख़ुदा के काम में कैसी हिम्मत की थी, जब तो हज़रत उमर रज़ि० ने इतनी क़दर की। अब कम हिम्मतों का हाल यह है कि नमाज़ भी पांच वक़्त की ठीक–ठीक नहीं पढ़ी जाती।

हज़रत हाला बिन्त ख़ुवैलद का ज़िक्र

यह हमारे पैग़म्बर सल्ल० की साली और हज़रत ख़दीजा की बहन हैं। यह एक बार हज़रत सल्ल० की ख़िदमत में हाज़िर हुईं और दरवाज़े से बाहर खड़े होकर आने की इजाज़त चाही। चूंकि आवाज़ अपनी की-सी थी, इसलिए आपको हज़रत ख़दीजा रज़ि० का ख़्याल आया और चौंक-से गये, फ़रमाने लगे, ऐ अल्लाह ! यह हाला हो।

फ़ायदा—इस दुआ से मालूम हुआ कि आपको उनसे मुहब्बत थी, यों तो साली का रिश्ता भी है, मगर बड़ी वजह आपकी मुहब्बत की सिर्फ़ दीनदारी है।

बीबियो ! दीनदार बन जाओ, तुमको भी अल्लाह और रसूल सल्ल० चाहने लगेंगे।

हज़रत हिंद बिन्त उत्बा का ज़िक्र

हज़रत मुआविया रज़ि०, जो हमारे हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साले हैं, यह उनकी मां हैं। इन्होंने एक बार हमारे पैग़म्बर सल्ल० से अर्ज़ किया कि मुसलमान होने से पहले मेरा यह हाल था कि आपसे ज़्यादा किसी की ज़िल्लत न चाहती थी और अब यह हाल है कि आपसे ज़्यादा किसी की इज़्ज़त नहीं चाहती। आपने फ़रमाया कि मेरा भी यही हाल है।

फ़ायदा—इससे एक तो इनका सच्चा होना मालूम हुआ, दूसरा मालूम हुआ कि हज़रत सल्ल० के साथ इनको मुहब्बत थी और हज़रत सल्ल० को इनके साथ मुहब्बत थी।

बीबियो ! तुम भी सच बोला करो और हज़रत सल्ल० से मुहब्बत रखो और ऐसे काम करो कि हज़रत सल्ल० को तुमसे मुहब्बत हो जाए।

हज़रत उम्मे ख़ालिद रज़ि० का ज़िक्र

जब लोग हब्शा की हिजरत करके गए थे, उनमें यह भी थीं। उस ज़माने में बच्ची थीं। वहां से लौटकर जब मदीना को आयीं, तो उनके बाप हज़रत सल्ल० की ख़िदमत में आये और यह भी साथ आयीं, एक पीला कुर्ता पहने हुए थीं, आपके पास एक छोटी सी चादर, बूटेदार रखी थी, आपने उनको उढ़ा दी और फ़रमाया, बड़ी अच्छी है, बड़ी अच्छी है। फिर यह दुआ की कि घिस–घिस पुरानी हो। इस दुआ का मतलब यह होता है कि तुम्हारी बड़ी उम्र हो।

लोगों का यह बयान है कि जितनी उम्र उनकी हुई हमने किसी औरत की नहीं सुनी। लोगों में चर्चा हुआ करता है कि फ़्लानी बीबी की इतनी ज़्यादा उम्र है, यह बच्ची तो थीं ही, हज़रत सल्ल० के मुहरे नुबूवत से खेलने लगीं। बाप ने डांटा। आपने फ़रमाया, रहने दो, क्या डर है ?

फ़ायदा—बड़ी ख़ुश क़िस्मत थीं।

बीबियो ! दीन की चादर ही नबी सल्ल० की चादर है, जैसा कि क़ुरआन मजीद में परहेज़गारी को बेहतरीन लिबास फ़रमाया है। अगर इस दौलत को लेना चाहती हो, दीन और परहेज़गारी अपनाओ।

हज़रत सफ़ीया रज़ि० का ज़िक्र

यह हमारे पैग़म्बर सल्ल० की फूफी हैं। जब हज़रत सल्ल० के चचा हज़रत हमज़ा रज़ि० उहद की लड़ाई में शहीद हो गए, आपने यह फ़रमाया कि मुझको सफ़ीया रज़ि० के सद्मे का ख़्याल है, वरना हमज़ा रज़ि० को दफ़न न करता, दरिंदे खा जाते और क़ियामत में दरिंदों के पेट में से इनका हश्र (उठना) होता।

फ़ायदा—इससे मालूम हुआ कि हज़रत सल्ल० को इनका बहुत ख़्याल था कि अपनी औलाद को इनकी ख़ातिर छोड़ दिया।

बीबियो ! यह ख़्याल इनकी दीनदारी की वजह से था। तुम भी दीनदार बनो ताकि तुम भी इस लायक़ हो जाओ कि पैग़म्बर ख़ुदा सल्ल० तुमसे भी राज़ी रहें।

हज़रत अबुल् हैसम रज़ि० की बीवी का ज़िक्र

यह एक सहाबी रज़ि० हैं। हमारे हज़रत सल्ल० की उनके हाल पर ऐसी मेहरबानी थी कि एक बार आप पर फ़ाक़ा था। जब भूख की बहुत तेज़ी हुई आप इनके घर में तशरीफ़ बे–तकल्लुफ़ ले गए। मियां तो घर में थे नहीं, मीठा पानी लेने गए थे। इन बीवी ने आपकी बहुत ख़ातिर की, फिर मियां भी आ गए, वह और भी ज़्यादा ख़ुश हुए और दावत का सामना किया।

फ़ायदा––अगर इन बीवी के इख़्लास पर आपको इत्मीनान न होता तो जैसे मियां घर में न थे, आप लौट आते, मालूम हुआ कि आप जानते थे कि यह भी ख़ूब ख़ुश हैं। किसी का पैग़म्बर सल्ल० से ख़ूब ख़ुश होना और पैग़म्बर सल्ल० का किसी को अच्छा समझना यह थोड़ी बुज़ुर्गी नहीं है।

बीबियो ! हज़रत सल्ल० उस वक़्त मेहमान थे, तुम भी मेहमानों के आने से ख़ुश हुआ करो। संगदिल मत हुआ करो।

हज़रत अस्मा बिन्त अबी बक्र रज़ि० का ज़िक्र

यह हमारे पैग़म्बर सल्ल० की साली हैं। हज़रत आइशा रज़ि० की बहन हैं। जब हज़रत सल्ल० हिजरत करके मदीना को चले हैं, जिस थैली में नाश्ता बांधने को कोई चीज़ न मिली, उन्होंने तुरन्त अपना कमर–बन्द बीच से चीर डाला, एक टुकड़ा कमर–बन्द रखा, दूसरे टुकड़े से नाश्ता बांध दिया।

फ़ायदा—ऐसी मुहब्बत बड़ी दीनदार की होती है कि अपने ऐसे काम की चीज़ आपके आराम के लिए बेकार कर दी।

बीबियो ! दीन की मुहब्बत ऐसी ही चाहिए कि अगर दुनिया बिगड़ जाए तो कुछ परवाह न करो।

हज़रत उम्मे रोमान रज़ि० का ज़िक्र

यह हमारे पैग़म्बर सल्ल० की सास और हज़रत आइशा रज़ि० की मां हैं।

हज़रत आइशा रज़ि० पर एक मुनाफ़िक़ ने, तौबा–तौबा, तोहमत लगायी थी जिसमें कुछ भोले–सीधे मुसलमान भी शामिल हो गए थे और हज़रत सल्ल० भी उनसे कुछ चुप–चुप हो गए थे फिर अल्लाह तआला ने हज़रत आइशा रज़ि० की पाकी क़ुरआन मजीद में उतारी और हज़रत सल्ल० ने वे आयतें पढ़कर घर में सुनाई, उस वक़्त हज़रत उम्मे रोमान ने हज़रत आइशा रज़ि० को कहा कि उठो और हज़रत सल्ल० की शुक्रगुज़ारी करो और इससे पहले भी, हालांकि उनको अपनी बेटी का बड़ा सद्मा था, मगर क्या मुम्किन है कि कोई ज़रा–सी बात भी ऐसी कही हो, जिससे हज़रत सल्ल० की शिकायत टपकती।

फ़ायदा––औरतों से ऐसा तहम्मुल और ज़ब्त बहुत ताज्जुब की बात है, वरना ऐसे वक़्त में कुछ न कुछ मुंह से निकल ही जाता है। जैसे, यह ही कह देती, कि अफ़सोस मेरी बेटी से बे–वजह खिंच गए, ख़ासकर जब पाकी साबित हो गई, उस वक़्त ज़रूर कुछ न कुछ गुस्सा और रंज होता कि लो, ऐसी पाक पर शुबहा था, मगर उन्होंने उलटा अपनी बेटी को दबाया और हज़रत सल्ल० की तरफ़दारी की।

बीबियो ! तुम भी ऐसे रंज व तकरार के वक़्त बेटी को बढ़ावे मत दिया करो, उसकी तरफ़ से होकर ससुराल वालों से मत लड़ा करो।

इस क़िस्से में एक और बीबी का भी ज़िक्र आया है, जिनके बेटे इन्हीं की तोहमत लगाने वालों में भोलेपन से शामिल हो गए थे। इन बीबी ने एक मौक़े पर अपने बेटे ही को कोसा और आइशा रज़ि० की तरफ़दार रहीं। यह बीबी उम्मे मिस्तह कहलाती हैं। देखो, हक़परस्ती यह होती है कि बेटे की बात की पच नहीं की बल्कि सच्ची बात की तरफ़ रहीं और बेटे को बुरा कहा।

हज़रत उम्मे अतीया रज़ि० का ज़िक्र

यह बीबी सहाबिया हैं और हज़रत सल्ल० के साथ छः लड़ाइयों में गयीं और वहां बीमारों और घायलों का इलाज और मरहम–पट्टी करती थीं और हज़रत सल्ल० से इस क़दर मुहब्बत थी कि जब कभी आपका नाम लेतीं तो यों भी ज़रूर कहतीं कि मेरा बाप आप पर कुर्बान !

फ़ायदा—बीबियो ! दीन के कामों में हिम्मत करो और हज़रत रसूल सल्ल० के साथ ऐसे ही मुहब्बत रखो।

हज़रत बरीरह रज़ि० का ज़िक्र

यह एक शख़्स की लौंडी थीं। फिर इसे हज़रत आइशा रज़ि० ने ख़रीद कर आज़ाद कर दिया। यह उन्हीं के घर पर रहती थीं और हज़रत आइशा रज़ि० और हमारे पैग़म्बर सल्ल० की ख़िदमत किया करतीं।

एक बार इनके लिए कहीं से गोश्त आया था। हमारे हज़रत सल्ल० ने खुद मांग कर खाया था।

फ़ायदा—हज़रत सल्ल० की ख़िदमत करना कितनी बड़ी ख़ुशक़िस्मती है और इनकी मुहब्बत पर हज़रत सल्ल० को पूरा भरोसा था, जब ही तो उनकी चीज़ खा ली और यह समझे कि यह ख़ुश होंगी।

बीबियो ! हज़रत सल्ल० की ख़िदमत यह है कि दीन की ख़िदमत करो और यह ही मुहब्बत है हज़रत सल्ल० के साथ।

फ़ातिमा बिन्त अबी हुबैश और हुम्ना बिन्त जह्श और हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि० की बीवी ज़ैनब का ज़िक्र

इन तीनों बीबियों का हज़रत सल्ल० से मसअले पूछने के लिए घर

से आना हदीसों में आया है और इसीलिए हमने तीनों का नाम साथ ही लिख दिया है कि इनका हाल एक ही सा है।

पहली बीबी ने इस्तिहाज़े का मस्अला पूछा। दूसरी बीबी हमारे हज़रत सल्ल० की साली और हज़रत ज़ैनब की बहन हैं, उन्होंने भी इस्तिहाज़ा का मस्अला पूछा था। तीसरी बीबी ने सद्क़ा देने का मस्अला पूछा था। अब्दुल्लाह बिन मस्ऊद एक बहुत बड़े सहाबी हैं यह उनकी बीवी हैं।

फ़ायदा—बीबियो ! दीन का शौक़ ऐसा होता है, तुमको भी जो मस्अला मालूम न हुआ करे, ज़रूर परहेज़गार आलिमों से पूछ लिया करो। अगर काई शर्म की बात हुई, इन आलिमों की बीवी से कह दिया, उन्होंने पूछ लिया। हज़रत सल्ल० की बीबियों और बेटियों के बाद यहां तक उन पचीस औरतों के ज़िक्र हुए, जो हज़रत के ज़माने में थीं और भी ऐसी बहुत बीबियों के हालात किताबों में लिखे हैं, मगर हमने इतना ही लिखा है कि किताब बढ़ न जाए। आगे उन बीबियों का ज़िक्र आता है, जो हज़रत सल्ल० के पीछे हुई हैं।

इमाम हाफ़िज़ इब्ने असाकिर की उस्ताद बीबियां

यह इमाम हदीस के बड़े आलिम हैं। जिन उस्तादों से उन्होंने यह इल्म हासिल किया है, उनमें अस्सी से ज़्यादा औरतें हैं।

फ़ायदा—अफ़सोस एक यह ज़माना है कि औरतें दीन का इल्म हासिल करके शागिर्दी के दर्जे को भी नहीं पहुंचती।

हुफ़ैद बिन ज़ोहरा तबीब की बहन और भांजी

यह एक मश्हूर तबीब (डाक्टर) हैं। इनकी बहन और भांजी हिक्मत का इल्म ख़ूब रखती थीं। और एक बादशाह था, ख़लीफ़ा, उसके महलों का इलाज उन्हीं के सुपुर्द था।

फ़ायदा—यह इल्म तो औरतों में से बिल्कुल जाता रहा। इस इल्म में अगर अच्छी नीयत हो और लालच और कपट न करे, कोई हराम दवा न खिला दे, दीन के कामों में ग़फ़लत न करे तो बड़ा सवाब है और लोगों का फ़ायदा है। अब जाहिल दाइयां औरतों का सत्यानास करती हैं। अगर इल्म होता तो यह ख़राबी क्यों होती। जिन औरतों के बाप–भाई–मियां हकीम हैं, वह अगर हिम्मत करे तो उनको इस इल्म का हासिल करना बहुत असान है।

इमाम यज़ीद बिन हारून की लौंडी

यह हदीस के बड़े इमाम हैं। आख़िरी उम्र में निगाह बहुत कमज़ोर हो गई थी, किताब न देख सकते थे। इनकी यह लौंडी इनकी मदद करती। ख़ुद किताबें देखकर, हदीस याद करके उनको बतला दिया करती।

फ़ायदा—उस ज़माने में लौंडिया–बांदियां आलिम होती थीं। अब बीबियां भी अक्सर जाहिल हैं। खुदा के वास्ते इस धब्बे को मिटाओ।

इब्ने सिमाक कूफ़ी की लौंडी

यह बुज़ुर्ग अपने ज़माने के आलिम हैं। उन्होंने एक बार अपनी लौंडी से पूछा, मेरी तक़रीर कैसी है। उसने कहा, तक़रीर तो अच्छी है, मगर इतना ऐब है कि एक बात को बार–बार कहते हो। उन्होंने कहा, इसलिए बार–बार कहता हूं कि कम समझ लोग भी समझ लें। कहने लगी, जब तक कमसमझ समझेंगे, समझदार घबरा चुकेंगे।

फ़ायदा—किसी आलिम की तक़रीर में ऐसी गहरी बात समझना आलिम ही से हो सकता है। इससे मालूम होता है कि वह लौंडी आलिम थी।

बीबियो ! लौंडियों से तो कम रहो। ख़ूब कोशिश करके इल्म हासिल करो। घर में कोई मर्द आलिम हो तो हिम्मत करके अरबी भी पढ़ लो पूरा मज़ा इल्म का इसी में है, तुमको तो लोगों से ज़्यादा आसान है, क्योंकि कमाना–धमाना तो तुमको है नहीं, इत्मीनान से इसी में लगी रहो। रह सीना–पिरोना, वह हफ़्तों में सीख सकती हो, सारी उम्र क्यों बर्बाद करती

हो।

इब्ने जौज़ी[1] की फूफी

यह बुजुर्ग बड़े आलिम हैं। इनकी फूफी इनको बचपन में आलिमों के पढ़ने–पढ़ाने की जगह ले आया करतीं। बचपन ही से जो इल्म की बातें कान में पड़ती रहीं, अल्लाह की मेहरबानी से दस वर्ष में ऐसे ही गये कि आलिमों की तरह वाज़ कहने लगे।

फ़ायदा—देखो, अपनी औलाद के वास्ते दीन का इल्म सिखलाने का कितना बड़ा ख़्याल था। वह बड़ी–बूढ़ी होंगी, खुद ले गयीं, तुम इतना तो कर सकती हो कि जब तक वह दीन का इल्म न पढ़ ले, अंग्रेज़ी में मत फंसाओ। बुरी संगत से रोको, इस पर तम्बीह करो। स्कूल में, मदरसे में जाने की ताकीद करो। अब तो यह हाल है कि एक तो पढ़ाने का शौक़ नहीं, और अगर है तो अंग्रेज़ी का कि मेरा बेटा तहसीलदार होगा, डिप्टी होगा, चाहे क़ियामत में दोज़ख़ में जाए और मां–बाप को भी साथ ले जाए। याद रखो कि सबसे ज़रूरी दीन का इल्म है, यह नहीं तो कुछ भी नहीं।

इमाम रबीअतुर्राए की मां

यह भी बड़े आलिम हुए हैं। इमाम मालिक और हसन बसरी जो सूरज से ज़्यादा रोशन हैं, वे दोनों इन्हीं के शागिर्द हैं। इनके बाप का नाम फ़रूख़ है। बनी उमैया की बादशाही के ज़माने में वह फ़ौज में नौकर थे। बादशाही हुक्म से वह बहुत–सी लड़ाइयों में भेजे गए थे। उस वक़्त यह अपनी मां के पेट में थे। इनको सत्ताईस वर्ष इस सफ़र में लग गये, यह पीछे ही पैदा हुए और पीछे ही इतने बड़े आलिम हुए। चलते वक़्त इनके बाप ने अपनी बीवी को तीस हज़ार अशर्फ़ियां दी थीं। उस हिम्मती और समझदार बीवी ने सब अशर्फ़ियां इनके पढ़ाने–लिखाने में ख़र्च कर दीं।

जब इनके बाप सत्ताईस वर्ष पीछे लौटकर आये, तो बीवी से

---

1. वाज़ में उनको बहुत बड़ा कमाल था और बीस हज़ार आदमी उनके हाथ पर मुसलमान हुए।

अशर्फ़ियों को पूछा। उन्होंने कहा, सब हिफ़ाज़त से रखे हैं। इस अर्से में हज़रत रबीआ मस्जिद में जाकर हदीस सुनाने में लग गए। फ़रूख़ ने जो यह तमाशा अपनी आंख से देखा कि मेरा बेटा एक दुनिया का पेशवा हो रहा है, मारे ख़ुशी के फूले न समाये। जब घर लौटकर आये, बीवी ने पूछा, बतलाओ, तीस हज़ार अशर्फ़ियां ज़्यादा अच्छी हैं या यह नेमत। वह बोले अशर्फ़ियों की क्या हक़ीक़त है। जब उन्होंने कहा कि मैंने वह अशर्फ़ियां इसी नेमत के हासिल करने में ख़र्च कर डालीं, उन्होंने बहुत ख़ुश होकर कहा कि ख़ुदा की क़सम ! तूने अशर्फ़ियां बर्बाद नहीं कीं।

फ़ायदा—बीबियां, दीन के इल्म की कैसी क़द्र जानती थीं कि तीस हज़ार अशर्फ़ियां अपने बेटे के इल्म हासिल करने में ख़र्च कर डालीं।

बीबियो ! तुम भी ख़र्च की परवाह न मत करना। जिस तरह हो, औलाद को दीन का इल्म हासिल कराना।

इमाम बुख़ारी की मां और बहन

इमाम बुख़ारी के बराबर हदीस का कोई आलिम नहीं हुआ। उनकी उम्र चौदह साल की थी। जब उन्होंने इल्म हासिल करने का सफ़र किया तो उनकी मां और बहन ख़र्च की ज़िम्मेदार थीं।

फ़ायदा—भला मां तो वैसे भी ख़र्च दिया करती है, मगर बहन जिसका रिश्ता ज़िम्मेदारी का नहीं है, उनको क्या पड़ी थी। मालूम होता है उस ज़माने में बीबियों में दीन के इल्म का नाम लिया और ये अपना माल व सामान क़ुर्बान करने को तैयार हो गयीं।

बीबियो ! तुमको भी ऐसा ही होना चाहिए।

क़ाज़ीज़ादा रूमी की बहन

यह एक बड़े मशहूर फ़ाज़िल हैं। जब यह रूम के उस्तादों से इल्म हासिल कर चुके तो उनको बाहर के आलिमों से इल्म हासिल करने का शौक़ हुआ और चुपके–चुपके सफ़र का सामान भी करना शुरू किया। उनकी बहन को मालूम हुआ तो अपना बहुत–सा ज़ेवर अपने भाई के सामान में छिपा कर रख दिया और ख़ुद उनसे भी नहीं कहा।

फ़ायदा—कैसी अच्छी बीबियां थीं। नाम से कोई मतलब न था। वह चाहती थीं कि किसी तरह इल्म क़ायम रहे।

बीबियो ! इल्म के क़ायम रखने में मदद करना बड़ा सवाब है जो दीन के मदरसे हैं, जितनी आसानी से मदद मुम्किन हो, ज़रूर ख़्याल रखो। अब हज़रत सल्ल० के ज़माने की बीबियों का हाल लिखा जाता है, जिनका दिल फ़क़ीरी की तरफ़ था।

हज़रत मुआज़ा अदवीया रह० का ज़िक्र

इनका अजब हाल था, जब दिन आता कहतीं, शायद यह वह दिन है, जिसमें मैं मर जाऊं और शाम तक न सोतीं कि कहीं मौत के वक़्त खुदा की याद से ग़ाफ़िल न मरूं, इसी तरह जब रात आती तो सुबह तक न सोतीं और यही बात कहतीं। अगर नींद को ज़ोर होता तो घर में दौड़ी-दौड़ी फिरतीं और नफ़्स को कहतीं कि नींद का वक़्त आगे आता है। मतलब यह था कि मरकर फिर क़ियामत तक सोइयो, रात-दिन में सौ नफ़्लें पढ़ा करतीं। कभी आसमान की तरफ़ निगाह न उठातीं। जब से उनके शौहर मर गए, फिर बिस्तर पर नहीं लेटीं। यह हज़रत आइशा रज़ि० से मिली हैं और उनसे हदीसें सुनी हैं।

फ़ायदा—बीबियो ! ख़ुदा की मुहब्बत और याद ऐसी होती है, ज़रा आंखें खोलो।

हज़रत राबिआ अदवीया रह० का ज़िक्र

यह बहुत रोया करतीं। अगर दोज़ख़ का ज़िक्र सुन लेती थीं, तो गश आ जाता, कोई कुछ देता, तो फेर देतीं और कह देतीं कि मुझको दुनिया[1] नहीं चाहिए। अस्सी वर्ष की उम्र में यह हाल हो गया था कि चलने में मालूम होता था कि अब गिरीं। कफ़न हमेशा अपने सामने रखतीं। सज्दे की जगह आंसुओं से तर हो जाती और उनकी अजीब व ग़रीब बातें मशहूर हैं और उनको राबिआ बसरिया भी कहते हैं।

फ़ायदा—बीबियो ! कुछ तो अल्लाह का डर और मौत की याद तुम भी अपने दिल में पैदा करो। देखो, आख़िर यह भी तो औरत ही थीं।

1. किसी दीनी मस्लहत से हदिए के वापस कर देने में कुछ हरज नहीं।

हज़रत माजदा क़रशीया का ज़िक्र

यह कहा करतीं कि जो क़दम रखती हूं, बस इसके बाद, मौत है और फ़रमाया करतीं, ताज्जुब है, दुनिया के रहने वालों को कूच की ख़बर दे दी गई है और फिर ऐसे ग़ाफ़िल हैं, जैसे किसी ने कूच की ख़बर सुनी ही नहीं, यहीं रहेंगे और फ़रमातीं, कोई नेमत जन्नत की और अल्लाह तआला की रज़ामन्दी की बे-मेहनत नहीं मिलती।

फ़ायदा—बीबियो ! कैसी काम की नसीहतें हैं अपने दिल पर उनको जमाओ और बरतो।

हज़रत आइशा बिन्त ज़ाफ़र सादिक़ का ज़िक्र

उनका दर्जा नाज़ का था, यों कहा करती थीं कि अगर मुझको दोज़ख़ में डाला, मैं सबसे कह दूंगी कि मैं अल्लाह को एक मानती थी, फिर मुझको अज़ाब दिया। 154 हि० में इन्तिक़ाल हुआ और बाबे क़राना मिस्त्र में मज़ार है।

फ़ायदा—बीबियो[1] ! यह दर्जा किसी-किसी को मिलता है और जिनको हुआ है, पूरी ताबेदारी की बरकत से हुआ है, उसको अपनाओ और याद रखो कि अल्लाह को एक मानना पूरा-पूरा यह है कि न और किसी को पूजे, न किसी से उम्मीद रखे, न किसी से डरे, न किसी को ख़ुश करने का ख़्याल हो, न किसी के नाराज़ होने की परवाह हो कोई अच्छा कहे, ख़ुश न हो, कोई बुरा कहे, ग़म न करे, कोई सताये, तो उस पर निगाह न करे, यों समझे कि अल्लाह को यों ही मंज़ूर था, मैं बन्दा हूं, हर हाल में राज़ी रहना चाहिए, तो जो आदमी इस तरह ख़ुदा को मानेगा, उसको दोज़ख़ से क्या ताल्लुक़ ! यह मतलब था इन बीवी का, गोया

---

1. और बहुत बड़ा कमाल यह है कि सुन्नत के मुताबिक़ अल्लाह की मेहरबानी का उम्मीदवार रहे और आमाल पर भरोसा और उनका ज़िक्र तक भी न करे, ख़ूब समझ लो।

अल्लाह के इस तरह एक मानने की बरक़त और बुज़ुर्गी बयान करती थीं।

रिबाह कैसी की बीवी का ज़िक्र

यह सारी रात इबादत करतीं। जब एक पहर रात गुज़र जाती, तो शौहर से कहतीं कि उठो, अगर वे न उठते, तो फिर थोड़ी देर के बाद उनको उठातीं। फिर आख़िर रात में कहतीं, ऐ रिबाह ! उठो, रात गुज़रती है और तुम सोते हो। कभी ज़मीन से तिन्का उठाकर कहतीं कि ख़ुदा की क़सम ! दुनिया मेरे नज़दीक इससे भी ज़्यादा बे-क़द्र है। इशा की नमाज़ पढ़कर, ज़ीनत के कपड़े पहनकर ख़ाविंद से पूछतीं कि तुमको कुछ ख़्वाहिश है। अगर वह इन्कार कर देते तो वह कपड़े उतार कर रख देतीं और सुबह तक नफ़्लों में लगी रहतीं।

फ़ायदा––बीबियो ! तुमने देखा कि अल्लाह तआला की कैसी इबादत करती थीं और साथ-साथ ख़ाविंद का कितना हक़ अदा करती थीं और ख़ाविंद को दीन की मुहब्बत भी देती थीं। ये सारी बातें करने की हैं।

हज़रत फ़ातिमा नीशापुरी का ज़िक्र

एक बुज़ुर्ग हैं, बड़े कामिल ज़ुन्नून मिस्त्री। वह फ़रमाते हैं कि इन बीबी से मुझको काफ़ी फ़ायदा पहुंचा है। वह फ़रमाया करतीं, जो आदमी हर वक़्त अल्लाह तआला का ध्यान नहीं रखता, वह गुनाह के हर मैदान में जा गिरता है, जो मुंह में आया, बक डालता है, और जो हर वक़्त अल्लाह का ध्यान रखता है, वह फ़िज़ूल बातों से गूंगा हो जाता है और अल्लाह तआला से शर्म व हया करने लगता है।

हज़रत अबू यज़ीद रह० कहते हैं कि मैंने फ़ातिमा रज़ि० के बराबर कोई औरत नहीं देखी, उनको जिस जगह की ख़बर दी, वह उनको पहले ही मालूम हो जाती थी। उमरा:[1] के रास्ते में मक्का मुअज़्ज़मा में 223 हि० में इनका इन्तिक़ाल हुआ।

1. उमरा: हज के साथ होता है। हज फ़र्ज़ है, उमरा सुन्नत है।

फ़ायदा—देखो, ध्यान रखने की क्या अच्छी बात कही, अगर इसी को निबाह लो, तो सारे गुनाहों से बच जाओ और यह भी मालूम हुआ कि इन बीबी को कश्फ़ (किसी बात का पहले से मालूम हो जाना) होता था, हालांकि यह कोई बड़ा रुत्बा नहीं है, लेकिन अगर अच्छे आदमी को हो, तो अच्छी बात है।

हज़रत राबिआ या राबिया शामिया बिन्त इस्माईल का ज़िक्र

यह सारी रात इबादत करतीं और हमेशा रोज़ा रखतीं और फ़रमातीं कि जब अज़ान सुनती हूं, क़ियामत के दिन पुकारने वाला फ़रिश्ता याद आ जाता है और जब गर्मी को देखती हूं तो क़ियामत के दिन की गर्मी याद आ जाती है।

इनके ख़ाविंद भी बड़े बुज़ुर्ग हैं, इब्ने अबिल हवारी रह०। यह उनसे कहतीं, मुझको तुम्हारे साथ भाइयों की सी मुहब्बत है। मतलब यह कि मेरे नफ़्स को ख़्वाहिश नहीं है और फ़रमातीं कि जब कोई इबादत में लग जाता है, अल्लाह तआला उसके ऐबों की उसको ख़बर देते हैं और जब उसको अपने ऐबों की ख़बर हो जाती है, फिर वह दूसरों के ऐबों को नहीं देखता और फ़रमातीं कि मैं जिन्नों को आते-जाते देखती हूं और मुझको हूरें नज़र आती हैं।

फ़ायदा—बीबियो ! इबादत इसको कहते हैं और देखो, तुम जो दूसरों के ऐबों का हर वक़्त धन्धा रखती हो, उसका क्या अच्छा इलाज बताया कि अपने ऐबों को देखा करो, फिर क़िसी का ऐब नज़र ही न आएगा और मालूम होता है कि इनको कश्फ़ भी होता था, कश्फ़ का हाल ऊपर के क़िस्से में आ गया है।

हज़रत उम्मे हारून का ज़िक्र

इन पर ख़ुदा का ख़ौफ़ बहुत ग़ालिब था और बहुत इबादत करतीं

और रूखी रोटी खाया करतीं। फ़रमातीं कि रात के आने से मेरा दिल खुश होता है और जब दिन होता है तो दुखी हो जाती हूं। सारी रात जागतीं और तीस वर्ष से सर में तेल नहीं डाला, मगर जब सर खोलतीं तो बाल साफ़ और चिकने होते थे।

एक बार बाहर निकलीं, किसी शख़्स ने ख़ुदा जाने किसको कहा होगा कि पकड़ो। उनको क़ियामत का दिन याद आ गया और बे–होश होकर गिर गयीं।

एक बार जंगल में सामने से शेर आ गया। आपने फ़रमाया, अगर मैं तेरी रोज़ी हूं, तो मुझको खा लो, वह पीठ फेर कर चला गया।

फ़ायदा—सुब्हानल्लाह ! ख़ुदा की याद में कैसी चूर थीं और ख़ुदा से कितनी डरती थीं और शेर की बात उनकी करामत है, जैसा हमने कश्फ़ का हाल लिखा है, वही करामत का समझो।

बीबियो ! तुम भी ख़ुदा की याद और ख़ुदा का डर दिल में पैदा करो। आख़िर क़ियामत भी आने वाली है, कुछ सामान कर रखो।

हबीब अजमी[1] की बीवी हज़रत उमरः का ज़िक्र

यह सारी रात इबादत करतीं। जब रात का आख़िरी हिस्सा होता तो ख़ाविंद से कहतीं, क़ाफ़िला आगे चल दिया, तुम पीछे सोते रह गए। एक बार इनकी आंख दुखने आई। किसी ने पूछा, कहने लगीं, मेरे दिल का दर्द इससे भी ज़्यादा है।

फ़ायदा—बीबियो ! ख़ुदा की मुहब्बत का ऐसा दर्द पैदा करो कि सब दर्द उसके सामने हल्के हो जाएं।

1. यह बहुत बड़े वलीयुल्लाह और हसन बसरी के शार्गिद हैं।

हज़रत अमलुत जलील रह० का ज़िक्र

यह बड़ी आबिद-ज़ाहिद थीं। एक बार कई बुज़ुर्गों में बात-चीत हुई कि वली कैसा है। सब ने कहा, आओ अमलुत जलील रह० से चलकर पूछें। ग़रज़ उनसे पूछा। फ़रमाया वली की कोई घड़ी ऐसी नहीं होती जिसमें उसको खुदा के सिवा कोई और धंधा हो। जो कोई इसको दूसरा धंधा बतला दे, वह झूठा है।

फ़ायदा—कैसी शान की बीवी थीं कि बुज़ुर्ग मर्द इनसे ऐसी बातें पूछते थे और उन्होंने कैसी अच्छी पहचान बतलाई।

बीबियो ! तुम भी इसकी फ़िक्र करो और अपने सारे धंधों से ज़्यादा खुदा की याद का धंधा करो।

हज़रत उबैदा बिन्त किलाब का ज़िक्र

मालिक बिन दीनार एक बड़े कामिल बुज़ुर्ग हैं। यह बीवी उनकी ख़िदमत में आती जाती थी। कुछ बुज़ुर्ग इनका रुत्बा राबिआ बसरीया रह० से ज़्यादा बतलाते हैं। एक आदमी को कहते सुना कि पूरा परहेज़गार जब होता है कि उसके नज़दीक खुदा के पास जाना सब चीज़ों से प्यारा हो जाए। यह सुनकर ग़श खाकर गिर पड़ीं।

फ़ायदा—खुदा के पास जाने का कैसा शौक़ था कि ज़िक्र सुनकर ग़श आ गया। अब यह हाल है कि मौत का नाम सुनना पसंद नहीं। इसकी वजह सिर्फ़ दुनिया की मुहब्बत है कि जाने को जी नहीं चाहता। इसको दिल से निकालो, जब खुदा के यहां जाने को जी चाहेगा।

हज़रत अफ़ीरा आबिदा रह० का ज़िक्र

एक दिन बहुत से आबिद (इबादतगुज़ार) लोग इसके पास आये और कहा, हमारे लिए दुआ कीजिए। आपने फ़रमाया कि मैं इतनी गुनाहगार हूं कि अगर गुनाह करने की सज़ा में आदमी गूंगा हो जाया करता तो मैं बात भी न कर सकती यानी गूंगी हो जाती, लेकिन दुआ करना सुन्नत है,

इसलिए दुआ करती हूं, फिर सब के लिए दुआ की।

फ़ायदा—देखो, ऐसी आबिद-ज़ाहिद होकर भी अपने को ऐसा आजिज़ गुनाहगार समझतीं थीं। अब यह हाल कि ज़रा दो तीन तस्बीहें पढ़ने लगीं और अपने आपको बुज़ुर्ग समझ लिया। अल्लाह तआला को बड़ाई ना-पसन्द है। हर हाल में अपने आपको सबसे कम समझो और सच भी है, सैकड़ों ऐब हर हालत में भरे रहते हैं, फिर इबादत के साथ उनको भी देखे तो बड़ाई का ख़्याल न आये।

हज़रत शअ्वाना का ज़िक्र

यह बहुत रोतीं और यों कहतीं कि मैं चाहती हूं कि इतना रोऊं कि आंसू बाक़ी न रहें, फिर ख़ून से रोऊं इतना कि बदन भर में ख़ून न रहे। उनकी नौकरानी का बयान है कि जब से मैंने उनको देखा है, ऐसा फ़ैज़ होता है कि कभी दुनिया की चाह मुझको नहीं हुई और किसी मुसलमान को हक़ीर न समझा।

हज़रत फ़ुज़ैल बिन अयाज़ रह० बड़े मशहूर बुज़ुर्ग हैं। वह इनके पास जाकर दुआ कराते।

फ़ायदा—खुदा के ख़ौफ़ से या मुहब्बत से रोना बड़ी दौलत है। अगर रोना ना आये तो रोने की सूरत ही बना लिया करो। अल्लाह की आजिज़ी पर रहम आ जाएगा और बुज़ुर्गों के पास बैठने से बड़ा फ़ैज़ होता है, जैसा कि उनकी नौकरानी ने बयान किया, तुम भी नेक सोहबत ढूंढा करो और बुरे आदमी से बचा करो।

हज़रत आमिना रमलीया रह० का ज़िक्र

एक बुज़ुर्ग हैं बिश्‌ बिन हारिस रह०। यह उनकी ज़ियारत को आते। एक बार बिश्‌ बीमार हो गए। यह उनको पूछने गयीं। अहमद बिन हंबल, जो बहुत बड़े इमाम हैं। वह भी पूछने आ गए। मालूम हुआ कि यह आमिना हैं, रमलीया से आई हैं, इमाम अहमद ने बिश्‌ से कहा कि इनसे हमारे लिए दुआ कराओ। बिश्‌ ने दुआ के लिए कहा। उन्होंने दुआ की कि ऐ अल्लाह ! बिश्‌ और अहमद दोज़ख़ से पनाह चाहते हैं, इन दोनों को पनाह दो।

इमाम अहमद कहते हैं कि रात को एक पर्चा ऊपर से गिरा। उसमें बिस्मिल्लाह के बाद लिखा हुआ था कि हम ने मंज़ूर किया और हमारे यहां और भी नेमतें हैं।

फ़ायदा—सुब्हानल्लाह ! कैसी दुआ क़ुबूल हुई।

बीबियो ! यह सब बरकत ताबेदारी की है। जो ख़ुदा का हुक्म पूरा करता है, अल्लाह तआला उसके सवाल पूरा करते हैं। पस हुक्म मानने में कोशीश करो।

हज़रत मंफ़ूसा बिंत ज़ैद बिन अबिल् फ़ूरास का ज़िक्र

जब इनका बच्चा मर जाता, उसका सर गोद में रखकर कहतीं कि तेरा मुझसे आगे जाना इससे बेहतर है कि मुझसे पीछे रहता। मतलब[1] यह कि तू आगे जाकर मुझको बख़्शवाएगा और ख़ुद भी बच्चा है, बख़्शा जाएगा और अगर मेरे पीछे ज़िंदा रहता तो सैकड़ों गुनाह करता और ख़ुदा जाने कि बख़्शवाने के क़ाबिल होता या न होता और फ़रमातीं कि मेरा सब्र बेहतर है बे-क़रारी से और फ़रमातीं कि अगरचे जुदाई का अफ़सोस है, लेकिन सवाब की इससे ज़्यादा ख़ुशी है।

फ़ायदा—बीबियो ! किसी के मरने के वक़्त अगर यह बातें कहकर जी को समझाया करो तो इन्शाअल्लाहु तआला काफ़ी हैं।

---

1. मौजूदा हालत पर यही कहना मुनासिब था, वरना यह भी हो सकता था कि बच्चा वली होता, ख़ुद भी बहुत-सा सवाब पाता और शफ़ाअत भी ऊंचे दर्जे की करता, मगर यक़ीन इसका भी नहीं था, सिर्फ़ इम्कान की बात थी।

हज़रत सैयदा नफ़ीसा रह० बिन्त हसन बिन ज़ैद बिन हसन बिन अली रज़ि० का ज़िक्र

यह हमारे पैग़म्बर सल्ल० के ख़ानदान से हैं, क्योंकि हज़रत अली रज़ि० के जो पोते हैं ज़ैद रह० यह उनकी पोती हैं। सन् 154 हि० मक्का में पैदा हुयीं। इबादत ही में उठान हुआ। इमाम शाफ़ई बड़े इमाम हैं। जब वह मिस्त्र में आए तो इनकी ख़िदमत में आया-जाया करते थे।

फ़ायदा—बीबियो ! इल्म और बुज़ुर्गी वह चीज़ है कि इतने बड़े इमाम उनकी ख़िदमत में आते थे। तुम भी दीन का इल्म हासिल करो, उस पर अमल करो ताकि बुज़ुर्गी हासिल हो।

हज़रत मैमूना सौदा का ज़िक्र

एक बुज़ुर्ग हैं अब्दुल वाहिद ज़ैद। इनका बयान है, वह कहते हैं कि मैंने अल्लाह से दुआ की, ऐ अल्लाह ! बहिश्त में जो आदमी मेरा साथी होगा, मुझे उसे दिखला दीजिए। हुक्म हुआ, तेरी साथी, जन्नत में मैमूना सौदा है। मैंने पूछा, वह कहां हैं, जवाब मिला, वह कूफ़ा में हैं, फ़्लां क़बीले में। मैंने वहां जाकर पूछा, लोगों ने कहा, वह एक दीवानी है, बकरियां चराया करती है। मैं जंगल में पहुंचा तो देखा, खड़ी हुई नमाज़ पढ़ रहीं हैं। और भेड़िए और बकरियां एक जगह मिली-जुली फिर रही हैं। जब सलाम फेरा तो फ़रमाया, ऐ अब्दुल वाहिद, अब जाओ, मिलने का वायदा जन्नत में है। मझको ताज्जुब हुआ कि मेरा नाम कैसे मालूम हो गया। कहने लगीं, तुमको मालूम नहीं, जिन रूहों में वहां जान-पहचान हो चुकी है, उनमें मुहब्बत होती है। मैंने कहा कि मैं भेड़िए और बकरियां एक जगह देखता हूं, यह क्या बात है ? कहने लगीं, जाओ अपना काम करो, मैंने अपना मामला हक़ तआला से ठीक कर लिया। अल्लाह

तआला ने मेरी बकरियों का मामला भेड़ियों के सुपुर्द कर दिया।

फ़ायदा—इन बीबी के कश्फ़ व करामात दोनों इससे मालूम होते हैं, यह सब बरकत, पूरी ताबेदारी बजा लाने की है।

बीबियो ! खुदा की ताबेदारी में मुस्तैद हो जाओ।

हज़रत रैहाना मज्नूना रह० का ज़िक्र

अबुर्रबीअ रह० एक बुज़ुर्ग हैं। वह कहते हैं कि मैं और मुहम्मद बिन मुंकदिर रह० और साबित बनानी रह०, कि ये दोनों भी बुज़ुर्ग हैं, एक बार सब के सब रैहाना के मेहमान हुए। वह आधी रात से पहले उठीं और कहने लगीं कि चाहने वाली अपने प्यारे की तरफ़ जाती है और दिल का ख़ुशी से यह हाल है कि निकला जाता है। जब आधी रात हुई कहने लगी, ऐसी चीज़ से जी लगाना न चाहिए, जिसके देखने से खुदा की याद में फ़र्क़ आये, और रात को इबादत में ख़ूब मेहनत करना चाहिए, तब आदमी ख़ुदा का दोस्त बनता है। जब रात गुज़र गई तो चिल्लायीं, हाय लुट गयी। मैंने कहा, क्या हुआ। कहने लगीं, रात जाती रही जिसमें खुदा से ख़ूब जी लगाया जाता है।

फ़ायदा—देखो, रात को उनकी कितनी क़द्र थी और जिसको इबादत का मज़ा लेना होगा, उसको रात की क़द्र होगी।

बीबियो ! तुम भी अपना थोड़ा–सा रात का हिस्सा अपनी इबादत के लिए मुक़र्रर कर लो और देखो खुदा के सिवा किसी से जी लगाने की कैसी बुराई उन्होंने बयान की, तुम भी माल व दौलत, कपड़ा, गहना, औलाद, जायदाद और बर्तन, मकान से बहुत जी मत लगाओ।

हज़रत सिरी सिक़्ती रह० की एक मुरीदनी का ज़िक्र

इन बुज़ुर्ग के एक मुरीद बयान करते हैं कि हमारे पीर की एक मुरीदनी थीं, उनका लड़का मक्तब में पढ़ता था। उस्ताद ने किसी काम से भेजा। वह कहीं पानी में जा गिरा और डूब कर मर गया। उस्ताद को

ख़बर हुई। उसने हज़रत सिरी के पास जाकर ख़बर की। आप उठकर उस मुरीदनी के घर गये और सब्र की नसीहत की। वह मुरीदनी कहने लगी हज़रत ! आप यह सब्र को मज़मून क्यों फ़रमा रहे हैं ? उन्होंने कहा, तेरा बेटा डूब कर मर गया। ताज्जुब से कहने लगी, मेरा बेटा ? उन्होंने फ़रमाया कि हां, तेरा बेटा। कहने लगी, मेरा बेटा कभी नहीं डूबा और यह कह कर उठकर उस जगह पहुंची और जाकर बेटे का नाम लेकर पुकारा, ऐ ज़ार ! उसने जवाब दिया, क्यों मां ! और पानी से ज़िन्दा निकल आया।

हज़रत सिरी रह० ने हज़रत जुनैद रह० से पूछा, यह क्या बात है ? उन्होंने फ़रमाया, इस औरत का एक मुक़ाम और दर्जा है कि इस पर **जो** मुसीबत आने वाली होती है, उसको ख़बर कर दी जाती है और इसकी ख़बर नहीं हुई, इस लिए उसने कहा कि कभी ऐसा नहीं हुआ।

फ़ायदा—हर वली को अलग–अलग दर्जा मिलता है। कोई यह न समझे कि यह दर्जा उस वली से बड़ा है, जिसको पहले से न मालूम हो कि मुझ पर क्या गुज़रने वाला है। अल्लाह तआला को अख़्तियार है जिसके साथ जो बर्ताव चाहें रखें, मगर फिर भी बड़ी करामत है और यह सब बरकत इसकी **है** कि ख़ुदा और रसूल सल्ल० की ताबेदारी करे, इसमें कोशिश करना चाहिए, फिर अल्लाह तआला चाहें तो यही दर्जा दे दें, चाहे इससे बढ़ायें।

हज़रत तोहफ़ा रह० का ज़िक्र

हज़रत सिरी सिक़्ती का बयान है कि मैं एक बार अस्पताल गया, देखा कि एक लड़की ज़ंजीरों में बंधी हुई रो रही है। और मुहब्बत के शेर पढ़ रही है। मैंने वहां के दारोग़ा से पूछा, कहने लगा यह पागल है। यह सुन कर वह और रोयी और कहने लगी, मैं पागल नहीं हूं, आशिक़ हूं। मैंने पूछा किसकी आशिक़ है ? कहने लगी, जिसने हमने नेमतें दीं, जो हमारे हर वक़्त पास है यानी अल्लाह तआला।

इतने में उसका मालिक आ गया और दारोग़ा से पूछा, तोहफ़ा कहां है ? उसने कहा, अंदर है और हज़रत सिरी रह० उसके पास हैं।

उसने मेरी इज़्ज़त की। मैंने कहा, मुझसे ज़्यादा यह लड़की ताज़ीम[1] के लायक़ है। और तूने इसका यह हाल क्यों किया है ? कहने लगा, मेरी सारी दौलत इसमें लग गयी। बीस हज़ार रूपए की मेरी ख़रीद है। मुझको उम्मीद थी कि ख़ूब नफ़ा से बेचूंगा, मगर यह न खाती है, न पीती है, रात–दिन रोया करती है। मैंने कहा, मेरे हाथ इसको बेच डाल। कहने लगा, आप फ़क़ीर आदमी हैं, इतना रूपया कहां से देंगे।

मैंने घर जाकर अल्लाह तआला से ख़ूब गिड़–गिड़ा, गिड़–गिड़ा कर दुआ की। एक आदमी ने दरवाज़ा खटखटाया। जाकर क्या देखता हूं कि एक आदमी बहुत से तोड़े रूपयों के लिए खड़ा है। मैंने कहा कि कौन है ? कहने लगा कि मैं अहमद बिन मुस्ना हूं। मुझको ख़्वाब में हुक्म हुआ कि आपके पास रूपए लाऊं। मैं खुश हुआ और सुबह को अस्पताल पहुंचा।

इतने में मालिक भी रोता हुआ आया। मैंने कहा, रंज मत कर, मैं रूपए लाया हूं। दोगुने नफ़ा तक अगर मांगेगा, दे दूंगा। कहने लगा, अगर सारी दुनिया मिले, तब भी न बेचूंगा। मैं इसको अल्लाह के वास्ते आज़ाद करता हूं। मैंने कहा, यह क्या बात है ? कहने लगा, ख़्वाब में मुझ पर ख़फ़ा हुआ गया है और तुम गवाह रहो, मैंने सब माल अल्लाह की राह में छोड़ा।

मैंने जो देखा, तो अहमद बिन मुस्ना भी रो रहा है। मैंने कहा, तुझको क्या हुआ ? कहने लगा, मैं भी सब माल अल्लाह की राह में ख़ैरात करता हूं। मैंने कहा, सुब्हानल्लाह ! बीबी तोहफ़ा की बरकत है कि इतने आदमियों की हिदायत हुई। तो कहां से उठीं और रोती हुई चलीं। हम भी साथ चले। थोड़ी दूर जाकर खुदा जाने वह कहां चली गयीं और हम सब मक्का को चले। अहमद बिन मुस्ना का तो राह में इन्तिक़ाल हो गया और मैं और वह मालिक मक्का पहुंचे। हम तवाफ़ कर रहे थे कि एक दर्दनाक आवाज़ सुनी। पास जाकर पूछा, कौन है ? कहने लगी, सुब्हानल्लाह ! भूल गये, मैं तोहफ़ा हूं। मैंने कहा, कहो क्या–क्या मिला ? कहने लगीं, अपने साथ मेरा जी लगा दिया और औरों से हटा दिया। मैंने कहा, अहमद बिन मुस्ना का इंतिक़ाल हो गया। कहने लगीं, उसको बड़े–बड़े दर्जे मिले हैं। मैंने कहा, तुम्हारा मालिक भी आया है। उन्होंने कुछ चुपके से कहा।

---

1. देखो, इन बुज़ुर्ग ने अपने आपको कम समझा और उस लड़की को बुज़ुर्ग कहा, ऐसा ही तुम भी किया करो। अपने को हमेशा ज़लील समझो।

देखता क्या हूं कि मुर्दा है। मालिक ने जो यह हाल देखा, बेताब हो गया। गिर पड़ा, हिला कर देखा तो मुर्दार। मैंने दोनों को कफ़न देकर दफ़न कर दिया।

फ़ायदा—सुब्हानल्लाह ! कैसी अल्लाह की आशिक़ थीं। बीबीयो ! लालच करो इस क़िस्से का। हमारे पीर हाजी इम्दादुल्लाह साहब मुहाजिर मक्की क़द्दस सिर्रहू ने अपनी किताब 'तोहफ़तुल उश्शाक़' में ज़्यादा तफ़्सील से लिखा है।

हज़रत जुवैरिया रह० का ज़िक्र

यह एक बादशाह की लौंडी थीं। उस बादशाह ने आज़ाद कर दिया था। इसके बाद अबू अब्दुल्लाह क़राबी एक बुज़ुर्ग हैं, उन्होंने इनकी इबादत देखकर इनसे निकाह कर लिया था। और इबादत किया करती थीं। एक बार ख़्वाब में बड़े अच्छे–अच्छे ख़ेमे लगे हुए देखे। पूछा ये किसके लिए हैं। मालूम हुआ कि उनके लिए है। जो तहज्जुद में क़ुरआन पढ़ते हैं ! इसके बाद रात का सोना छोड़ दिया और ख़ाविंद को जगा कर कहतीं कि क़ाफ़िले चल दिए।

फ़ायदा—बीबियो ! ख़ुद भी इबादत करो और ख़ाविंद को भी समझाया करो।

हज़रत शाह बिन शुजाअ किरमानी की बेटी का ज़िक्र

यह बुज़ुर्ग बादशाही छोड़ कर फ़क़ीर हो गए थे। उनकी एक बेटी थी। ऐ बादशाह ने पैग़ाम दिया, मगर आपने मंज़ूर नहीं किया। एक ग़रीब नेक–बख़्त लड़के को अच्छी तरह नमाज़ पढ़ते देखकर उससे निकाह कर दिया। जब वह विदा होकर शौहर के घर आयी तो एक सूखी रोटी छोड़कर ढकी हुई देख कर पूछा, यह क्या है। लड़के ने कहा, यह रात बच गयी थी, वह रोज़ा खोलने के लिए रख ली।

यह सुनकर वह उल्टे पांव हटीं। लड़के ने कहा कि मैं पहले ही

जानता था कि भला बादशाह की बेटी मेरी ग़रीबी पर कब राज़ी होगी। वह बोलीं, ग़रीबी से नाराज़ नहीं है, बल्कि इससे नाराज़ है कि तुमको खुदा पर भरोसा नहीं है और मुझको बाप पर ताज्जुब है कि मुझको यों कहा कि एक नेक जवान है। भला जिसको खुदा पर भरोसा न हो, वह नेक क्या। वह जवान मजबूरियां गिनाने लगा। वह बोलीं, मजबूरी तो मैं जानती नहीं। या घर मैं रहूंगी या यह रोटी रहेगी ? उस जवान ने तुरन्त यह रोटी ख़ैरात कर दी। उस वक़्त वह घर में बैठीं।

फ़ायदा—बीबियो ! यह भी तो औरत[1] थीं ! तुम कुछ तो सब्र सीखो और माल–अस्बाब का लालच मत करो।

हज़रत हातिम असम्म रह० की एक छोटी सी लड़की का ज़िक्र

यह एक बड़े बुज़ुर्ग हैं। कोई अमीर चला जा रहा था कि उसको प्यास लगी। उनका घर रास्ते में था, पानी मांगा और जब पानी पी लिया तो कुछ नक़द फेंक कर चला गया। सबका तवक्कुल पर गुज़र था। सब ख़ुश हुए। घर में उनके एक छोटी सी लड़की थी। वह रोने लगी। घरवालों ने पूछा, कहने लगी, कि एक ना–चीज़ बंदे ने हमारा हाल देख लिया तो हम ग़नी हो गये और अल्लाह तआला तो हमको हर वक़्त देखते हैं, अफ़सोस, हम अपना दिल ग़नी नहीं रखते।

फ़ायदा—कैसी समझ की बच्ची थी। अफ़सोस है कि अब बड़ी–बूढ़ियों को भी इतनी अक़्ल नहीं कि खुदा पर नज़र रखतीं। लोगों पर निगाह रखती हैं कि फ़लानी से नफ़ा हो जाएगा, फ़लाना मदद कर देगा। खुदा के वास्ते दिल को ठीक करो।

1. उनको अल्लाह के भरोसे का ऊंचा दर्जा हासिल था।

हज़रत सित्तुल मुलूक का ज़िक्र

यह अरब देश की रहने वाली हैं। इनके ज़माने में तमाम वली और आलिम इनकी इज़्ज़त करते थे। एक बार बैतुलमक़्दिस की ज़ियारत को आयी थीं। उस ज़माने में वहां एक बुज़ुर्ग थे अली बिन अलीस यमानी। उनका बयान है कि मैं उसी मस्जिद में था। मैंने देखा कि आसमान से मस्जिद के गुंबद तक एक नूर का तार बंध रहा है। मैंने जाकर देखा तो उस गुंबद के नीचे यह बीबी नमाज़ पढ़ रही हैं और वह तार इनसे मिला हुआ है।

फ़ायदा—यह नूर परहेज़गारी का था। दिल में तो सब परहेज़गारों के पैदा होता है। अल्लाह तआला कभी ज़ाहिर में भी दिखला देते हैं, लेकिन जगह इस नूर की दिल है।

बीबियो ! परहेज़गारी अपनाओ। नेक कामों की पाबन्दी करो, जो चीज़ें मना हैं, उनसे बचो।

अबू आमिर वाइज़ की लौंडी का ज़िक्र

इनका बयान है कि मैंने एक लौंडी बहुत ही बे–हक़ीक़त दामों को बिकते देखी, जिसका रंग तो पीला हो गया था और पेट–पीठ एक हो गये थे और बाल से जम गये थे। मुझको उस पर तरस आया। मैंने मोल ले लिया, मैंने कहा, बाज़ार जाकर रमज़ान का सामान ख़रीद ला। कहने लगी, ख़ुदा का शुक्र है, मेरे लिए बाहर महीने बराबर हैं कि दिन को हमेशा रोज़ा रखती हूं और रात को इबादत करती हूं। फिर जब ईद. आयी, तो मैंने उसके लिए सामान ख़रीदने का इरादा किया। कहने लगी, तुम्हारे मिज़ाज में दुनिया का बड़ा बखेड़ा है। फिर अपनी नमाज़ में लग गयीं, एक आयत पढ़ी, जिसमें दोज़ख़ का ज़िक्र था। बस, एक चीख़ मार कर गिर गयीं और मर गयीं।

फ़ायदा—देखो, ख़ुदा का डर ऐसा होता है। ख़ैर, यह हाल तो अख़्तियार से बाहर है, मगर इतना ज़रूर है कि गुनाह से रूक जाया करें, चाहे किसी तरहा का गुनाह हो, हाथ–पांव का हो या दिल का हो या

जुबान का हो।

फ़ायदा—इस हिस्से में कुल सौ क़िस्से नेक बीबियों के बयान हुए, इस तरह से कि पहली उम्मतों की बीबियों के 25, हज़रत सल्ल० की बीबियों और बेटियों के 15 और हज़रत सल्ल० के ज़माने की और बीबियों के 25 और हज़रत सल्ल० के ज़माने के बाद की बीबियों में इल्म वाली बीबियों के 10 और दरवेश बीबियों के 25। ये सब मिलकर एक सौ हो गये। किताबों में और भी बहुत से क़िस्से हैं, मगर नसीहत मानने वालों के लिए इतने ही बहुत हैं।

रिसाला किस्वतुन्निसव:

असली बहिश्ती ज़ेवर के आठवें हिस्से का एक हिस्सा

नोट---अल्हम्दु वस्सलात के बाद---यह एक छोटी-सी किताब (रिसाला) है। जिसका बड़ा हिस्सा औरतों को उभारने वाले अमल और इन पर चलने वालियों की बड़ाइयों पर शामिल है। इसके लिखे जाने की वजह यह है कि बंदा शुरू रमज़ान 1335 हि० में कुछ मुख़्लिस दोस्तों के कहने पर रियासत भरतपूर के डेक नामी जगह पर मेहमान हुआ। संयोग से एक दिन मेज़बान साहब के ज़माने में वाज़ हुआ तो ज़रूरत के मुताबिक़ ज़्यादातर औरतों की कोताहियों का बयान किया गया। इसके बाद ही एक नेक बीबी का पैग़ाम आया, औरतों की बुराइयां तो बहुत-सी हैं, लेकिन अगर इनमें कुछ ख़ूबियां या इनके कुछ हुक़ूक़ भी हों, तो इल्म होना ज़रूरी है।

मेरे दिल में तुरन्त ख़्याल आया कि वाक़ई जिस तरह डरावे की चीज़ एक ख़ास तरीक़े से नफ़ा पहुंचाती हैं, उभारने वाली चीज़ें भी, जिनमें हुक़ूक़ भी शामिल हैं, कभी-कभी उनसे ज़्यादा नफ़ा पहुंचाने वाली होती हैं, इनसे दिल बढ़ता है, जिससे नेक अमल का चाव ज़्यादा होता है और सिर्फ़ डरावे से तो कभी-कभी दिल कमज़ोर और उम्मीद धुंधली हो जाती है, पस तुरनत इरादा कर लिया कि इन्शाअल्लाहु तआला ख़ास इन मज़मूनों में एक मुस्तक़िल किताब लिखूंगा। इस वाकिआ को दो महीने गुज़रे थे, क्योंकि अब ज़ीक़ादा का शुरू है, 'क़न्जुल उम्माल' में उसकी एक मुस्तक़िल सुर्ख़ी नज़र पड़ी। इससे यह ख़्याल ताज़ा हुआ और मुनासिब मालूम हुआ कि इसी का तर्जुमा (अनुवाद) कर दिया जाए और लिखते

वक़्त अगर कोई और हदीस याद आ जाए, उसे भी बढ़ा दिया जाए।

फिर याद आया, बहिश्ती ज़ेवर के आठवें हिस्से में भी ऐसी आयतें व हदीसें जमा की गयी हैं, चुनांचे देखने से यह याद सही निकली। तो मुनासिब मालूम हुआ कि पहले एक 'फ़स्ल'[1] में बहिश्ती ज़ेवर का मज़मून ठीक वही लेकर, फिर दूसरी 'फ़स्ल' में 'कन्जुल उम्माल' की रिवायतों को इज़ाफ़ों के साथ जमा कर दी जाएं।

चूकि बहिश्ती ज़ेवर के आठवें हिस्से के बढ़ावे वाले मज़मून के बाद किसी क़दर डरावे का मज़मून भी है और बढ़ावे के साथ किसी क़दर डरावा होने से उम्मीद के मज़मून में एतदाल[2] हो जाता है, इसलिए मुनासिब मालूम हुआ कि तीसरी फ़स्ल में वह डरावे का मज़मून ठीक वैसे ही लिख दिया जाये। पस इस किताब में असल मज़मून बढ़ावा और फ़ज़ीलतों का है। नमा इसका 'किस्वतुन्निस्वः' है यानी औरतों के लिए तक़्वा का लिबास।

पहली फ़स्ल

असली बहिश्ती ज़ेवर के बढ़ावे के मज़मून में नेक बीबियों की आदम और तारीफ़ और दर्जे क़ुरआन व हदीस से

यहां तक नेक बीबियों के सौ क़िस्से लिखे गये। चूंकि असली मक़्सद इन क़िस्सों से अच्छी आदतों का बतलाना है, इसलिए मुनासिब मालूम हुआ

1. अध्याय, 2. संतुलन।

कि थोड़ी–सी ऐसी आयतों और हदीसों का खुलासा और तर्जुमा लिख दिया जाए, जिसमें अल्लाह और रसूल सल्ल० ने ख़ास करके नेक बीबियों की आदत और तारीफ़ और दर्जे का ज़िक्र फ़रमाया है, क्योंकि बीबियों को जब ख़बर होगी कि उनमें तो अल्लाह व रसूल सल्ल० ने इरादा करके ख़ास हमारा ही बयान फ़रमाया है, तो इससे और दिल बढ़ेगा और नेक आदतों का ज़्यादा शौक़ हो जाएगा और मुश्किल बात आसान हो जाएगी।

आयतों का मज़मून

फ़रमाया अल्लाह तआला ने, जो औरतें ऐसी हैं कि इस्लाम का काम करती हैं यानी नमाज़ और रोज़े की पाबंदी, गुनाह–सवाब के कामों का ख़्याल करती हैं और जो ईमान ठीक रखती हैं, यानी हदीस व क़ुरआन के ख़िलाफ़ किसी बात में अपना दिल नहीं जमातीं और जो औरतें ताबेदारी से रहती हैं यानी शेख़ी नहीं करतीं और जो औरतें ख़ैरात व ज़कात देती हैं और जो औरतें रोज़ा रखती हैं, अपनी इ़ज़्ज़त व आबरू को बचाती हैं यानी किसी के सामने हो जाने का और किसी को आवाज़ सुनाने का और शरअ के ख़िलाफ़ कपड़े पहनने का और बे–ज़रूरत किसी के हंसने–बोलने का और भी हर तरह की बे–शर्मी का परहेज़ रखती हैं और जो औरतें अल्लाह को बहुत याद रखती हैं यानी दिल से भी उसका ध्यान रखती हैं और ज़ुबान से भी उसका नाम लेती रहती हैं, ऐसी औरतों के लिए अल्लाह तआला ने अपनी बख़्शिश और बड़ा सवाब तैयार कर रखा है।

फ़रमाया अल्लाह तआला ने, जो नेक–बख़्त औरतें होती हैं, उनमें ये बातें हुआ करती हैं कि वे ताबेदार होती हैं और शौहर घर न भी हो, जब भी अपनी बीबियां अच्छी हैं जो शरअ के कामों की पाबंद हों और उनके अक़ीदे ठीक हों और वे ताबेदारी करती हों और जहां कोई शरअ के ख़िलाफ़ कोई बात हुई, तुरन्त तौबा कर लेती हों और अल्लाह तआला की इबादत में लगी रहती हो और रोज़ा रखती हों।

हदीसों का मज़मून

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, ऐसी औरत[1] पर अल्लाह की रहमत नाज़िल हो कि रात को उठकर तहज्जुद पढ़े और अपने शौहर को भी जगा दे कि वह भी नमाज़ पढ़े।

फ़रमाया[2] रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जो औरतें कुंवारपने की हालत में यह हमल में बच्चा जनने के वक़्त या चिल्ले के दिनों में मर जाए, उसको शहीद ही का दर्जा मिलता है।

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जिसके तीन बच्चे मर जाएं और वह सवाब समझकर सब्र करे, तो जन्नत में दाख़िल होगी। एक औरत बोली, ऐ अल्लाह के रसूल सल्ल० ! और जिसके दो ही बच्चे मरे हों ? आपने फ़रमाया, दो का भी यही सवाब है। एक रिवायत में है कि एक सहाबी ने, एक बच्चे के मरने को पूछा। आपने उसमें भी बड़ा सवाब बतलाया।

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जो हमल गिर जाये, वह भी अपनी मां को जन्नत में घसीट कर ले जाएगा, जबकि सवाब समझ कर सब्र करे।

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, सबसे अच्छो ख़ज़ाना नेक बख़्त औरत है कि ख़ाविंद उसके देखने से खुश हो जाए और जब उसको कोई काम बतलाये तो हुक्म बजा लाये जब ख़ाविंद घर पर न हो, तो इज़्ज़त–आबरू थामे बैठी रहे।

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, अरब औरतों में क़ुरैश की नेक औरतें दो बातों में सबसे अच्छी होती हैं—एक तो बच्चे पर ख़ूब मेहरबानी करती हैं, दूसरे ख़ाविंद के माल की हिफ़ाज़त करती हैं।

फ़ायदा—मालूम हुआ कि औरत में ये आदतें होनी चाहिए। आजकल औरतें शौहर का माल बड़ी बे–दर्दी से उड़ाती हैं और औलाद पर जैसे खाने–पीने की मेहरबानी होती है, उससे ज़्यादा उसकी आदत संवारने की

---

1. मिश्कात शरीफ़।
2. मक़सद यह है कि ये फ़ज़ीलतें, जो कुंआरी औरतों की बयान की गई हैं, आमतौर से हासिल किये जाने के क़ाबिल हैं। अगर बेवा से कहीं ये आदतें पाई जाएं, तो वह भी इस एतबार से कुंवारी के बराबर हैं और जो क़ुंवारी इत्तिफ़ाक़ से इन आदतों वाली न हो तो वह भी शुमार होगी।

होनी चाहिए, नहीं तो अधूरी मुहब्बत होगी।

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, कुंवारी लड़कियों से निकाह करो, क्योंकि उनकी बोलचाल शौहर के साथ नर्म होती है और शर्म व हया की वजह से बे–लिहाज़ और मुंह फट नहीं होतीं और उनको थोड़ा ख़र्च दे दो तो खुश हो जाती हैं।

फ़ायदा—मालूम हुआ कि औरतों में शर्म व लिहाज़ और थोड़े को काफ़ी समझना अच्छी आदत है। इसका मतलब यह नहीं कि बेवा से निकाह न करे, बल्कि कुंवारी की एक तारीफ़ है और कुछ हदीसों में हमारे हज़रत सल्ल० ने बेवा औरत से निकाह करने पर एक सहाबी को दुआ दी है।

फ़रमाया अल्लाह के रसूल सल्ल० ने, औरत जब पांच वक़्त की नमाज़ पढ़ लिया करे और रमज़ान के रोज़े रख लिया करे और अपनी आबरू की हिफ़ाज़त रखे और अपने शौहर की ताबेदारी करे, तो ऐसी औरत जन्नत में जिस दरवाज़े से चाहे दाख़िल हो जाए।

फ़ायदा—मतलब यह है कि दीन की ज़रूरी बातों की पाबंदी रखे, तो और बड़ी–बड़ी मेहनत की इबादतें करने की उसको ज़रूरत नहीं। जो दर्जा इन मेहनत की इबादतों से मिलता, वह औरत को ख़ाविंद की ताबेदारी और औलाद की ख़िदमतगुज़ारी और घर के इन्तिज़ाम में मिल जाता है।

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जिस औरत की मौत ऐसी हालत में आये कि उसको शौहर उससे खुश हो, वह औरत जन्नत में जाएगी।

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जिस आदमी को चार चीज़ें मिल गयीं, उसको दुनिया व आख़िरत की दौलत मिल गयी। एक तो दिल ऐसा कि नेमत का शुक्र अदा करता हो, दूसरे ज़ुबान ऐसी, जिससे खुदा का नाम ले, तीसरे बदन ऐसा कि बला व मुसीबत पर सब्र करे, चौथे बीवी ऐसी कि आबरू और शौहर के माल में छल–कपट न करे।

फ़ायदा—यानी आबरू न खोये, न माल शौहर की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ ख़र्च करे।

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, जो औरत बेवा हो जाए और ख़ानदान भी है और मालदार भी है, लेकिन उससे अपने बच्चों की ख़िदमत और परवरिश में लगकर अपना रंग मैला कर लिया, यहां तक कि वे बच्चे या तो बड़े होकर अलग हो गए या मर–मरा गये तो ऐसी औरत में बहिश्त में मझसे ऐसी नज़दीक होगी, जैसे शहादत की उंगली और बीच की उंगली।

फ़ायदा—इसका यह मतलब नहीं कि बेवा का बैठ रहना ज़्यादा सवाब है, बल्कि उस औरत को बनाव-सिंगार और नफ़्स की ख़्वाहिश से कुछ मतलब न हो तो उसका यह दर्जा है।

रसूलुल्लाह सल्ल० से एक आदमी ने कहा, ऐ अल्लाह के रसूल सल्ल० ! फ़लानी औरत बहुत ज़्यादा नफ़्ल नमाज़ें पढ़ती, रोज़े रखती और ख़ैरात करती है, लेकिन ज़ुबान से पड़ोसियों को तक्लीफ़ पहुंचाती है। आपने फ़रमाया, वह दोज़ख़ में जाएगी। फिर उस आदमी ने कहा कि फ़लानी औरत नफ़्ल नमाज़ें, रोज़े और ख़ैरात कुछ ज़्यादा नहीं करती, यों ही कुछ पनीर के टुकड़ दे-दिला देती है, लेकिन ज़ुबान से पड़ोसियों को तक्लीफ़ नहीं देती। आपने फ़रमाया कि वह जन्नत में जाएगी।

रसूलुल्लाह सल्ल० की ख़िदमत में एक औरत हाज़िर हुई। उसके साथ दो बच्चे थे। एक को गोद में ले रखा था, दूसरे को उंगली पकड़े हुए थी। आपने देखकर इर्शाद फ़रमाया कि ये औरतें पहले पेट में बच्चे को रखती हैं, फिर जनती है, फिर उनके साथ किस तरह मुहब्बत और मेहरबानी करती हैं। अगर इनका बर्ताव शौहरों से बुरा न हुआ करता तो उनमें जो नमाज़ की पाबंद होतीं, बस जन्नत ही में चला जाया करतीं।

दूसरी फ़स्ल

कंज़ुल उम्माल के बढ़ावे के मज़मून में

हदीस 1—इर्शाद फ़रमाया हुज़ूर सल्ल० ने (औरतों से), क्या तुम इस बात पर राज़ी नहीं (यानी राज़ी होना चाहिए) कि जब तुममें से कोई

अपने शौहर से हामिला होती है और वह शौहर उससे राज़ी हो तो ऐसा सवाब मिलता है कि जैसे अल्लाह की राह में रोज़ा रखने वाले और रात जागकर इबादत करने वाले को। और जब उसको दर्दज़ेह होता है तो आसमान और ज़मीन के रहने वालों को उसकी आंखों की ठंडक (यानी राहत) को जो सामान छिपा रखा गया है, उसकी ख़बर नहीं। फिर जब वह बच्चा जनती है, तो उसके दूध एक घूंट भी नहीं निकलता उसके पिस्तान से एक बार भी बच्चा नहीं चूसता, जिसमें उसको हर घूंट और हर चूसने पर एक नेकी न मिलती हो और अगर बच्चे की वजह से उसको रात को जागना पड़े, तो उसको अल्लाह की राह में सत्तर ग़ुलामों को आज़ाद करने का सवाब मिलता है। ऐ सलामत ! (यह नाम है हज़रत इब्राहीम, साहबज़ादा हुज़ूरे अक़्दस सल्ल० की खिलाई का, वही इस हदीस की रिवायत करने वाली हैं। आप उनसे फ़रमाते हैं कि) तुमको मालूम है, मेरी मुराद इससे कौन औरतें हैं, जो (बावजूद इसके कि) नेक हैं नाज़ों की पली हैं (मगर) शौहरों की फ़रमांबरदारी करने वाली हैं। उस (शौहर) की ना–क़द्री नहीं करतीं।

हदीस 2—फ़रमाया रसुलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने, जब औरत अपने शौहर के घर में से (अल्लाह की राह में) ख़र्च करे, मगर घर को बर्बाद न करे यानी इजाज़त और मुनासिब मिक़्दार से ज़्यादा ख़र्च न करे, तो उस औरत को भी सवाब मिलता है, उसके ख़र्च करने की वजह से और उसके शौहर को भी इसका सवाब मिलता है उसके कमाने की वजह से और तहवीलदार को भी उसके बराबर मिलता है। किसी की वजह से किसी सवाब घटता नहीं।

फ़—पस औरत यह न समझे कि जब कमाई मर्द की है तो मैं सवाब की क्या हक़दार हूंगी।

हदीस 3—फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, ऐ औरतो ! तुम्हारा जिहाद हज है।

फ़—देखिए, इनकी बड़ी रियायत है। हज करने से, जिसमें जिहाद के बराबर दुश्वारी भी नहीं, जिहाद का सवाब मिलता है, जो कि सबसे ज़्यादा मुश्किल इबादत है।

हदीस 4— औरतों पर न जिहाद है और न जुमा, न जनाज़े का साथ देना। फिर देखिए, उनको घर बैठे कितना सवाब मिल जाता है।

हदीस 5—रसूलुल्लाह सल्ल० ने जब बीवियों को साथ लेकर हज फ़रमाया तो इर्शाद हुआ कि बस यह हज कर लिया, फिर इसके बाद बोरियों पर जमी बैठी रहना।

फ़—मतलब यह कि बे-ज़रूरत सफ़र न करना।

हदीस 6—फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, अल्लाह तआला पसंद करता है उस औरत को जो अपने शौहर के साथ तो लाग और मुहब्बत करे और ग़ैर मर्द से अपनी हिफ़ाज़त करे।

फ़—मतलब यह है कि शौहर से मुहब्बत करने और उसकी मन्नत-खुशामद करने को शान के ख़िलाफ़ न समझे, जैसी घमन्डी औरतें होती हैं।

हदीस 7—फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, औरतें भी मर्दों ही के अंग हैं।

फ़—चुनांचे हज़रत आदम अलैहिस्सलाम से हव्वा अलै० का पैदा होना मशहूर है। मतलब यह कि औरतों के हुक्म भी मर्दों ही की तरह हैं। पस अगर इनकी फ़ज़ीलतें वग़ैरह अलग होतीं, तब भी कोई दुख की बात न थी। जिन अमलों पर मर्दों से फ़ज़ीलतों का वायदा है, उन्हीं अमलों पर उनसे है।

हदीस 8—फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, बेशक अल्लाह तआला ने औरतों के हिस्से में रश्क का सवाब लिखा है और मर्दों पर जिहाद का लिखा है। पस जो औरत ईमान (और मतलब सवाब) की राह से रश्क की बात पर, जैसे शौहर ने दूसरा निकाह कर लिया, सब्र करेगी, उसको शहीद के बराबर सवाब मिलता है। देखिए, एक ज़रा से सब्र पर कितना बड़ा सवाब मिलता है, जो मर्दों को कितनी मुश्किल से मिलता है।

हदीस 9—फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, अपने बीवी का कारोबार करने को तुमको सदक़े का सवाब मिलता है। देखिए, औरतों को राहत पहुंचाने का कैसा सामान शरीअत ने किया है कि इसमें सवाब का वायदा फ़रमाया, जिसके लालच से हर मुसलमान अपनी बीवी को राहत पहुंचा देगा।

हदीस 10—फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, सब औरतों से अच्छी वह औरत है कि जब शौहर उसकी तरफ़ नज़र करे, तो वह उसको खुश कर दे और जब कोई हुक्म दे तो वह उसकी फ़र्माबरदारी करे और अपने जान व माल में उसको नाखुश करके उसकी कोई मुख़ालफ़त न करे।

हदीस 11—फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, अल्लाह रहमत फ़रमा दे पाजामा पहनने वाली औरतों पर।

फ़—देखिए, पाजामा पहनना पर्दे की अपनी मस्लहत से लिहाज़ से

फ़ितरी (स्वाभाविक) है, मगर इसमें भी पैग़म्बर सल्ल० की दुआ ले ली। यह कितनी बड़ी मेहरबानी है औरतों के हाल पर।

हदीस 12—फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, बद–कार औरत की बद–कारी हज़ार बद–कार मर्दों की बद–कारी के बराबर और नेक–कार औरत की नेक–कारी सत्तर औलिया की इबादत के बराबर है।

देखिए, कितने थोड़े अमल पर कितना बड़ा सवाब मिला। यह रियायत नहीं औरतों की तो क्या है ?

हदीस 13—फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, किसी औरत को अपने घर में घर–गिरहस्ती का काम करना जिहाद करने वालों के रुत्बे को पहुंचाता है, इन्शाअल्लाहु तआला।

फ़—क्या इन्तिहा है इस मेहरबानी की।

हदीस 14—फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, तुम्हारी बीवियों में सबसे अच्छी वह औरत है, जो अपनी आबरू के बारे में पाकदामन हो, आपने शौहर में आशिक़ हो।

फ़—देखिए शौहर से मुहब्बत करना एक खुशी है नफ़्स की, मगर इसमें भी फज़ीलत और सवाब है।

हदीस 15—एक शख़्स ने अर्ज़ किया, ऐ अल्लाह के रसूल सल्ल० मेरी एक बीवी हैं जब उसके पास जाता हूं तो वह कहती है, मुबारक हो मेरे सरदार को और मेरे घरवालों के सरदार को और जब वह मुझको रंजीदा देखती है, तो कहती है कि दुनिया का क्या ग़म करते हो, तुम्हारी आख़िरत का काम तो बन रहा है। आपने सुनकर फ़रमाया कि इस औरत को ख़बर कर दो कि वह अल्लाह के काम करने वालों में से एक काम करने वाली है और उसको जिहाद करने वाले का आधा सवाब मिलता है।

देखिए, शौहर की मामूली आवभगत में उसको कितना बड़ा सवाब मिल गया।

हदीस 16—अस्मा बिन्त यज़ीद अन्सारिया से रिवायत है कि उन्होंने अर्ज़ किया, या रसूलुल्लाह सल्ल०! मैं औरतों की भेजी हुई आपके पास आयी हूं। वह अर्ज़ करती हैं कि मर्द जुमा, जमाअत और मरीज़ की अयादत (मिज़ाज पुर्सी), जनाज़ा में शिर्कत और हज–उमरः और इस्लामी सरहदों की हिफ़ाज़त की वजह से हम पर बाज़ी ले गये। आपने फ़रमाया, तू वापस जा और औरतों को ख़बर कर दे कि तुम्हारा अपने शौहर के लिए बनाव–सिंगार करना या शौहर का हक़ अदा करना और शौहर की

रज़ामंदी की खोज में रहना और शौहर की मर्ज़ी का इत्तिबाअ करना, यह सब उस आमाल के बराबर है।

हदीस 17—फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, औरत अपने हमल की हालत से लेकर बच्चा जनने और दूध छुड़ाने तक (फ़ज़ीलत और सवाब में) ऐसी है जैसे इस्लाम की राह में सरहद की निगरानी करने वाला, जिसमें हर वक़्त जिहाद के लिए तैयार रहता है और अगर इस बीच मर जाये तो उसको शहीद के बराबर सवाब मिलता है।

हदीस 18—फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, (वही मज़मून है जो इस फ़स्ल की सबसे पहली हदीस का है, बस इतना फ़र्क़ है कि दूध पिलाने पर यह फ़रमाया) जब कोई औरत दूध पिलाती है तो हर घूंट के पिलाने पर ऐसा सवाब मिलता है जैसे किसी जानदार को ज़िंदगी दे दी। फिर जब वह दुध छुड़ाती है, तो फ़रिश्ता उसके कंधे पर (शाबाशी से) हाथ मारता है और कहता है कि पिछले गुनाह सब माफ़ हो गये, अब आगे जो करे फिर से कर। उनमें जो गुनाह काम का होगा, लिखा जाएगा और मुराद इससे छोटे गुनाह हैं मगर छोटे गुनाहों का माफ़ होना क्या थोड़ी बात है।

हदीस 19—फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, ऐ बीबियो ! याद रखो कि तुम में जो नेक हैं, वे नेक लोगों से पहले जन्नत में जाएंगी। फिर (जब शौहर जन्नत में आएंगे) तो वे औरतें गुस्ल देकर और खुश्बू लगाकर शौहरों के हवाले कर दी जाएंगी, लाल और पीले रंग की सवारियों पर उनके साथ ऐसे बच्चे होंगे जैसे बिखरे हुए मोती।

बीबियो ! और कौन-सी फ़ज़ीलत चाहती हो, जन्न में मर्दों से पहले तो पहुंच गयीं, हां, नेक बन जाना शर्त है और यह कुछ मुश्किल नहीं।

हदीस 20—हज़रत आइशा रज़ि० से रिवायत है, उन्होंने फ़रमाया कि जिस औरत को शौहर बाहर हो और वह अपनी ज़ात में उसकी इस हालत की देख-भाल करे और बनाव-सिंगार छोड़ दे और अपने पांव को बांध दे और ज़ीनत के सामान को रोक दे और नमाज़ की पाबन्दी रखे, वह क़ियामत के दिन कुंवारी लड़की बनाकर उठाई जाएगी। पस अगर उसका शौहर मोमिन हुआ तो वह जन्नत में उसकी बीवी होगी और अगर उसका शौहर मोमिन न हुआ (खुदा न करे, दुनिया से बे-ईमान होकर मरा था) तो अल्लाह तआला उसका निकाह किसी शहीद से कर देंगे।

हदीस 21—अबुद्दर्दा रज़ि० से रिवायत है, उन्होंने कहा, मुझको

वसीयत की मेरे ख़लील अबुल् क़ासिम सल्ल० ने, पस फ़रमाया कि ख़र्च किया करो अपनी ताक़त से अपने ख़ानदान वालों पर।

फ़—जो लोग ताक़त के बावजूद बीवी के ख़र्च में तंगी करते हैं, वे तनिक इस हदीस को देखें।

हदीस 22—मदायनी से रिवायत है कि हज़रत अली रज़ि० ने फ़रमाया कि आदमी अपने घर का ज़िम्मेदार नहीं बनता, जब तक कि वह ऐसा न हो जाए कि उसको इसकी परवाह न रहे कि उसने कैसा लिबास पहन लिया और न इसका ख़्याल रहे कि भूख की आग किस चीज़ से बुझायी।

फ़—जो लोग अपना तन पालने में मस्त रहकर घर वालों से बे-परवा रहते हैं, वे इससे सबक़ पकड़ें।

मिश्कात से बढ़ाया गया हिस्सा

हदीस 23—हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया कि औरतों के हक़ में मेरी नसीहत भलाई करने की क़ुबूल करो, इसलिए कि वे पसली से पैदा हुई हैं।

फ़—यानी उससे सीधेपन की उम्मीद न रखो। उसकी टेढ़ी समझ पर सब्र करो। देखिए, औरतों को किस क़दर रियायत का हुक्म है।

हदीस 24—हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से रिवायत है कि मोमिन मर्द को मोमिन औरत से कपट न रखना चाहिए यानी अपनी बीवी, से क्योंकि अगर उसकी एक आदत को ना-पसंद करेगा तो दूसरी को ज़रूर पसंद करेगा। इसको मुस्लिम ने रिवायत किया।

फ़—यानी यह सोचकर सब्र करे।

हदीस 25—अब्दुल्लाह बिन ज़मआ से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया कि अपनी बीवी को बे-दर्दी से न मारना चाहिए और फिर दिन के ख़त्म पर जिमाअ (संभोग) करने लगे।

फ़—यानी फिर मुरव्वत कैसे गवारा करेगी।

हदीस 26—हकीम बिन मुआविया अपने बाप से रिवायत करते हैं कि मैंने अर्ज़ किया कि, ऐ अल्लाह के रसूल सल्ल० ! हम पर हमारी बीवी का क्या हक़ है ? आपने फ़रमाया, वह हक़ यह है कि जब तू खाना खाये, तो उसको भी खिलाये और जब तू कपड़ा पहने तो उसको भी पहनाये

और उनके मुंह पर न मारे और बोल–चाल घर के अन्दर रहकर न छोड़ी जाए। इसको अहमद, अबूदाऊद और इब्ने माजा ने रिवायत किया।

फ़—यानी अगर उससे रूठे तो घर से बारह न जाए।

हदीस 27—हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया, सब मोमिन हैं। ईमान का कामिल वह शख़्स है जिसके अख़्लाक़ अच्छे हैं और तुम सब में अच्छे वे लोग हैं जो अपनी बीवियों के साथ अच्छे हों। —तिर्मिज़ी

फ़—ये दूसरी फ़स्ल की 27 हदीसें हैं और पहली फ़स्ल में तेरह थीं। सब मिलाकर चालीस हो गयीं गोया यह मज्मूआ–ए–फ़स्ल 'फ़ज़ाइलुन्निसा' की एक चहल हदीस है।

तीसरी फ़स्ल

बहिश्ती ज़ेवर के डरावे के मज़मून में औरतों के कुछ ऐबों पर, नसीहत कुरआन और हदीस से

जब हम ने बीबियों की आदत बतला चुके, तो मुनासिब मालूम हुआ कि कुछ ऐब जो औरतों में पाए जाते हैं और उनसे नेकी में कमी आ जाती है और उन ऐबों पर, जो अल्लाह और रसूल सल्ल० ने ख़ासकर औरतों को ताकीद या नसीहत फ़रमायी है, उनका ख़ुलासा भी लिख दें ताकि इन ऐबों से नफ़रत खाकर बचें, जिससे पूरी नेकी क़ायम रहे।

आयतों का मज़मून

फ़रमाया अल्लाह तआला ने जिन बीबियों में निशनियों से तुमको मालूम हो कि ये कहना नहीं मानतीं, तो पहले उनको नसीहत करो और इससे न मानें तो उनके पास सोना–बैठना छोड़ दो और इस पर भी न माने मो उनको मारो।[1] इसके बाद अगर वे ताबेदारी करने लगें तो उनको तक्लीफ़ देने के लिए बहाना मत ढूंढो।

फ़ायदा—इससे मालूम हुआ कि ख़ाविंद का कहना न मानना बहुत बुरी बात है।

फ़रमाया अल्लाह तआला ने, चलने में पांव ज़ोर से ज़मीन पर मत रखो, जिसमें ज़ेवर वग़ैरह की ग़ैर–मर्द को ख़बर हो जाए।

फ़ायदा—बाजेदार ज़ेवर पहनना तो बिल्कुल दुरस्त नहीं और जिसमें बाजा न हो, एक दूसरे से लगकर बज जाता हो, उसमे यह एहतियात है और समझो कि जब पांव में जो एक चीज़ है उसकी आवाज़ की इतनी एहतियात है तो ख़ुद औरत की आवाज़ और उसके बदन के खुलने की कितनी ताकीद होगी।

हदीसों का मज़मून[2]

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, ऐ औरतो ! मैंने तुमको दोज़ख़ में बहुत देखा है। औरतों ने पूछा, इसकी क्या वजह है ? आपने फ़रमाया, तुम मार–फिटकार सब[3] चीज़ों पर बहुत डाला करती हो और शौहर की ना–शुक्री बहुत करती हो और उसकी दी हुई चीज़ को बहुत नाक मारती हो।

रसूलुल्लाह सल्ल० के सामने एक बीबी ने बुख़ार को बुरा कहा। आपने फ़रमाया कि बुख़ार को बुरा मत कहो, इससे गुनाह माफ़ होते हैं।

---

1. मारने से थोड़ा मारना मुराद है।
2. मिश्कात से लिया गया।
3. यानी कहती हैं, फ़लाने पर ख़ुदा की मार–फिटकार।

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने बयान करके रोने वाली औरत अगर तौबा न करेगी तो क़ियामत के दिन इस हालत में खड़ी की जाएगी कि उसके बदन पर कुरते की तरह एक रोग़न लपेटा जाएगा, जिसमें आग बड़ी जल्दी लगती है और कुरते ही की तरह तमाम जिस्म के ख़ुजली होगी यानी उसको दो तक्लीफ़ें होंगी। खुजली से तमाम बदन नोच डालेगी और दोज़ख़ की आग लगेगी वह अलग।

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, ऐ मुसलमान औरतों ! कोई पड़ोसिन अपनी पड़ोसिन की भेजी हुई चीज़ को छोटा और हल्का न समझे, चाहे बकरी की खुरी क्यों न हो[1]

फ़ायदा—कुछ औरतों की यह आदत होती है कि दूसरे के घर से आयी हुई चीज़ को बहुत नाक मारा करती हैं और ताना दिया करती हैं

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, एक औरत को एक बिल्ली की वजह से अज़ाब हुआ था। उसने उसको पकड़कर बांध दिया था, न तो खाने को दिया, न उसको छोड़ा। यों ही तड़प कर मर गई।

फ़ायदा—इस तरह जानवर पालकर उसके खाने-पीने की ख़बर न लेना अज़ाब की बात है।

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने कुछ मर्द और औरत साठ वर्ष तक ख़ुदा की इबादत करते हैं, फिर मौत का वक़्त आता है तो शरअ के ख़िलाफ़ वसीयत कर के दोज़ख़ के क़ाबिल हो जाते हैं।

फ़ायदा—जैसे कुछ लोगों की आदत होती है, यों कह मरते हैं कि देखो, मेरी चीज़ मेरे नाती को देना, भाई को न देना, या फ़लानी बेटी को फ़लानी चीज़ दूसरी बेटी से ज़्यादा देना, यह सब हराम है। वसीयत और मीरास के मस्अले किसी आलिम से पूछकर उसके मुताबिक़ अमल करे। कभी उसके ख़िलाफ़ न करे।

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने, कोई औरत दूसरी औरत से इस

---

1. मक़्सद यह कि थोड़ी-सी भी भेंट ख़ुशी से क़ुबूल कर लेना चाहिए, क्योंकि काम का है ही और अल्लाह तआला की नेमत है। इसमें मुसलमान का दिल रखना है। खुरी का ज़िक्र मुबालगा (अतिश्योक्ति) के लिए है, यह मतलब नहीं कि ख़ुरी ही भेंट दी जाए और वह क़ुबूल की जाए, ख़ूब समझ लो।

तरह न मिले कि अपने शौहर के सामने इस तरह कहने लगे, जैसे वह उसको देख रहा है।

रसूलुल्लाह सल्ल० के पास एक बार आपकी दो बेटियां बैठीं थीं कि एक अंधे सहाबी आने लगे। आपने दोनों को पर्दे में जाने का हुक्म दिया। दोनों ने ताज्जुब से अर्ज़ किया, वह तो अंधे हैं। आपने फ़रमाया, तुम तो अंधी नहीं हो। तुम तो उनको देखती हो।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया, जब कोई औरत अपने शौहर को दुनिया में कुछ तक्लीफ़ देती है तो जो हूर उस शौहर को मिलेगी, वह कहती है कि खुदा तुझे ग़ारत करे। वह तेरे पास मेहमान है। जल्द ही तेरे पास से हमारे पास चला आयेगा।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने फ़रमाया, मैंने ऐसी दोज़ख़ी औरत को नहीं देखा यानी मेरे ज़माने से पीछे ऐसी औरतें पैदा होंगी कि कपड़े पहने होंगी और नंगी होंगी, यानी नाम को इनके बदन पर कपड़ा होगा, लेकिन कपड़ा इतना बारीक होगा कि तमाम बदन दीख पड़ेगा और इतरा कर बदन को मटका कर चलेंगी। और बालों के अंदर मोबाफ़ का कपड़ा देकर बालों को लपेट कर इस तरह बांधेंगी जिसमें बाल बहुत से मालूम हों जैसे ऊंट का कोहान होता है, ऐसी औरतें जन्नत में न जाएंगी, बल्कि उसकी खुशबू भी उनको नसीब न होगी।

फ़ायदा---यानी जब परहेज़गार औरतें जन्नत में जाने लगेंगी तो उनको उनके साथ जाना नसीब न होगा, फिर चाहे सज़ा के बाद ईमान की बरकत से चली जाएं।

फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ल० ने जो औरतें सोने[1] का ज़ेवर दिखलावे को पहनेगी उसी से उसको अज़ाब दिया जाएगा।

रसूलुल्लाह सल्ल० एक सफ़र में तश्रीफ़ रखते थे। एक आवाज़ सुनी जैसे कोई किसी पर लानत कर रहा हो। आपने पूछा क्या बात है ? लोगों ने अर्ज़ किया कि यह फ़लानी औरत है कि अपनी सवारी की ऊंटनी पर लानत कर रही है। वह ऊंटनी चलने में कमी या शोख़ी करती होगी। उस औरत ने झल्ला कर कह दिया होगा तुझे खुदा की मार, जैसा औरतों का दस्तूर है।

---

1. और तमाम ज़ेवर का यही हुक्म है, चाहे चांदी का हो या किसी चीज़ का हो और अगर कोई कपड़ा इस नीयत से पहने, उसका भी यही हुक्म है।

रसूलुल्लाह सल्ल० ने लोगों को हुक्म दिया कि इस औरत को इसके सामान को उस ऊंटनी पर से उतार दो। यह ऊंटनी तो उस औरत के नज़दीक लानत के क़ाबिल है, फिर उसको काम में क्यों लाती है।

फ़ायदा—ख़ूब सज़ा दी।

रिसाला 'किस्वतुन्निसा' ख़त्म हुआ। आगे है बहिश्ती ज़ेवर के आठवें हिस्से के मज़मून का बाक़ी हिस्सा

इन दोनों मज़मूनों यानी तारीफ़ और नसीहत में यहां पांच आयतें और पचास हदीसें लिखी गयीं और इस हिस्से के शुरू में हमने अपने पैग़म्बर सल्ल० की मुबारक आदतें बहुत—सी लिख दी हैं, जिनकी हर वक़्त बर्ताव में ज़रूरत है और इसके पहले सात हिस्सों में हर तरह की नेकी और हर तरह की नसीहत तफ़्सील से लिख दी है, जिसका ध्यान रखो और अमल करो। इन्शाअल्लाह तआला क़ियामत में बड़े दर्जे पाओगी, वरना ख़ुद पनाह में रखे, बुरी औरतों का बुरा हाल होगा। अगर क़ुरआन व हदीस समझने के क़ाबिल कभी हो जाओ तो बहुत से क़िस्से ऐसी बद—दीन और बद—ज़ात, बद—अक़ीदा और बद—अमल औरतों के तुमको मालूम होंगे। अल्लाह तआला हमारा—तुम्हारा नेकियों में गुज़र और उन्हीं में ख़ात्मा और उनमें हश्र करे। आमीन।

असली बहिश्ती ज़ेवर का आठवां हिस्सा ख़त्म हुआ।

(भाग-9)

बहिश्ती ज़ेवर

हज़रत मौलाना अशरफ़ अली थानवी (रह०)

विषय सूची

क्या ? कहां ?

इसमें तन्दुरूस्ती हालिस करने और उसके क़ायम रखने के कुछ ज़रूरी उपाय, है जिनके जानने से औरतें अपनी और अपने बच्चों की हिफ़ाज़त और एहतियात कर सके, तन्दुरूस्ती ऐसी चीज़ है कि इससे आदमी का दिल ख़ुश रहता है तो इबादत और नेक काम में ख़ूब जी लगता है, खाने-पीने का मज़ा मिलता है तो दिल से अल्लाह तआला का शुक्र करता है। बदन में ताक़त रहती है तो अच्छे काम और दूसरों की सेवा ख़ूब कर सकता है हक़दारों का हक़ अच्छी तरह अदा हो सकता है।

इसलिए तन्दुरूस्ती पर ध्यान देना, ऐसी नीयत से इबादत और दीन का काम है, ख़ासकर औरतों को ऐसी बात का जानना बहुत ज़रूरी है, क्योंकि उनके हाथों में बच्चे पलते हैं और वे अपना नफ़ा-नुक़्सान कुछ नहीं समझते तो जो औरतें इन बातों को नहीं जानतीं, उनकी बे-एहतियातियों से बच्चे बीमार हो जाते हैं। अगर वे पढ़ने क़ाबिल हुए, तो उनके इल्म में भी हरज होता है। फिर बच्चों की बीमारी में या खुद औरतों की बीमारी में मर्दों को अलग परेशानी होती है। दवा-दारू में उन्हीं का रूपया ख़र्च होता है, मतलब यह कि हर तरह का नुक़्सान ही नुक़्सान है और हमारे पैग़म्बर सल्ल० ने भी दवा और परहेज़ को पसन्द फ़रमाया है, इसलिए थोड़ा-थोड़ा बयान ऐसी ज़रूरी बातों का लिख दिया है।

हवा का बयान

पुरवा हवा, जोकि सूरज निकलने की तरफ़ से आती है, चोट और घाव को नुक़्सान करती है और कमज़ोर आदमी को भी सुस्ती लाती है। चोट और घाव और कमज़ोरी से इससे हिफ़ाज़त रखें, दोहरा कपड़ा पहन लिया करें।

2. जो हवा दक्खिन से चलती है, गर्म होती है, नसों को ढीला करती है। जो लागे अभी बीमारी से उठे हैं, उनको इस हवा से बचना चाहिए। वरना बीमारी के लौट आने का डर है।

3. घर में जगह-जगह कीचड़ न करो, इससे भी हवा ख़राब हो जाती है और यह भी ख़्याल रखो कि पाख़ाना और गुस्लख़ाना और बरतन धोने की जगह—ये सब जगहें, अपने उठने-बैठने की जगह से, जहां तक हो सके अलग और दूर रखो।

कुछ औरतों की आदत होती है कि बच्चों को किसी जगह पांव पर बिठला कर हगा-मुता लिया, फिर बहुत ख़्याल किया तो उस जगह को लीप दिया। यह बिल्कुल बे-तमीज़ी और नुक़्सान की बात है। एक तो इसके लिए जगह मुक़र्रर रखो, नहीं तो कम से कम इतना करो कि कोई बरतन इस काम के लिए अलग ठहरा लो, और उसको तुरन्त साफ़ कर लिया करो।

4. कभी-कभी घर में ख़ुशबूदार चीज़ें सुलगा दिया करो, जैसे लौबान, काफ़ूर अगर-बत्ती वग़ैरह और वबा (छूत की बीमारियों) के ज़माने में गंधक या लौबान घर के हर कमरे में सुलगाओ और किवाड़ बन्द कर दो ताकि अच्छी तरह इन चीज़ों को असर हो जाए।[1]

5. सोते वक़्त चिराग़ ज़रूर गुल कर दिया करो, ख़ासकर मिट्टी का तेल जलता छोड़ने में ज़्यादा नुक़्सान है। हवा में ख़ुशकी छायी होती है, दिमाग़ और आंखों को नुक़्सान पहुंचता है। कभी मौत की नौबत आ गयी है।[2]

---

1. सिर्फ़ नीम के पत्तों की धूनी भी अच्छा असर रखती है।
2. बंद मकान में मिट्टी का तेल हरगिज़ न जलाओ, चाहे लालटेन में हो या लैम्प में या डिबिया में, इससे फेफड़े ख़राब हो जाते हैं।

6. बन्द मकान में धुंवा करके हरगिज़ न बैठो। कहीं–कहीं ऐसा हुआ है कि इस तरह तापने वालों का एक साथ दम घुट गया और इतनी फ़ुर्सत न मिली कि किवाड़ खोलकर बाहर निकल आएं, वहीं मरकर रह गये।

7. जाड़े के दिनों में सर्दी से बचो। अगर नहाने का इत्तिफ़ाक़ हो तो तुरन्त बाल सुखा लो, अगर मिज़ाज ज़्यादा सर्द है तो चाय पी लो या दो तोला शहद और पांच माशा कलौंजी चाट लो।[1]

8. जिस तरह ठंडी हवा से बचना ज़रूरी है, इसी तरह गर्म हवा यानी लू से बचो, मोटा दोहरा कपड़ा पहनो, गर्मी में आंवले से सर धोया करो।

खाने का बयान

1. खाना हमेशा भूख से कम खाओ। यह ऐसी तद्बीर है कि इसका ख़्याल रखने से सैंकड़ों बीमारियों से हिफ़ाज़त रहती है।

2. रबी के दिनों में खाना कम खाओ, कभी–कभी रोज़ा रख लिया करो और रबी के दिन वे कहलाते हैं, जबकि जाड़ा जाता हो और गर्मी आती हो।

3. गर्मी के दिनों में ठंडी चीज़ें इस्तेमाल में रखो, जैसे ख़ीरा, ककड़ी, तुरई वग़ैरह अगर मुनासिब मालूम हो तो कोई दवा भी ठंडी तैयार रखो और बच्चों और बड़ों को ज़रूरत के मुताबिक़ देते रहो, जैसे शर्बत, नीलूफ़र, शर्बते उन्नाब वग़ैरह फ़ालूदा भी अच्छी चीज़ है, इससे नये अनाज की गर्मी नहीं होती और सिर्फ़ तुख़्मरैहान भी फांक लेना भी यही फ़ायदा देता है। इस मौसम में गर्म व ख़ुश्क चीज़ें बहुत कम खाओ, जैसे अरहर की दाल, आलू वग़ैरह।

4. ख़रीफ़ के दिनों में ऐसी चीज़ें कम खाओ जिनसे सौदा पैदा होता है जैसे, तेल, बैगन, बड़े का गोश्त, मसूर वग़ैरह और ख़रीफ़ के दिन वे कहलाते हैं, जिसको बरसात कहते हैं।

---

1. सर्दी में नहान का एक तरीक़ा यह भी है कि सर एक बार धोकर सुखा लिया और बाक़ी बदन दूसरे वक़्त धो लिया। गुस्ल इस तरह भी अदा हो जाता है।

5. जाड़े के दिनों में, जिसे मिल सके, ताक़तवर खाने और दवाएं इस्तेमाल करे ताकि तमाम साल बहुत–सी आफ़तों से बचा रहे, जैसे नीम–ब्रिश्त अन्डा, नमक सुलैमानी के साथ और गाजर का हलवा। नीम–ब्रिश्त अन्डा इसको कहते हैं कि अन्दर से पूरा जमा न हो।

तरीक़ा इसका यह है कि अन्डे को एक बारीक कपड़े में लपेट कर ख़ूब खौलते पानी में सौ बार गोता दें या अन्डे को खोलते पानी में ठीक तीन मिनट डालकर निकाल लें और तीन मिनट ठन्डे पानी में डाल रखें। इसकी सिर्फ़ ज़र्दी खानी चाहिए, सफ़ेदी अच्छी चीज़ नहीं है।

6. जब तक ज़्यादा ज़रूरत न हो, दवा की आदत मत डालो। छोटे–छोटे मर्ज़ में खाना कम कर देने से या बदल देने से काम निकाल लिया करो।

7. आजकल खाने में बहुत गड़बड़ हो गया है, जिसमें तरह–तरह के नुक़्सान होते हैं, इसलिए अच्छे और ख़राब खानों के नाम लिखे जाते हैं।

अच्छे खाने ये हैं

अन्डा, नीम–ब्रिश्त, कबूतर के बच्चों का गोश्त, बकरी का गोश्त, मेंढे का गोश्त, लवा, बटेर, तीतर, मुर्ग़ अक्सर जंगली चिड़ियां, हिरन, नील गाय और दूसरे शिकारों का गोश्त, मछली, गेहूं की रोटी, अंगूर, इंजीर, अनार, सेब, शलजम, पालक, खुर्फ़ा दूध, जलेबी, सिरी–पाए, लेकिन सिरी–पाए से ख़ून गाढ़ा पैदा होता है।

ख़राब खाने ये हैं

बैगन, मूली, लाही का साग यानी काले पत्तों की सरसों का साग, सींगरे, बतख़ का गोश्त, गाजर, सुखाया हुआ गोश्त, लोबिया, मसूर, तेल, गुड़, खटाई।

इन चीज़ों के ख़राब होने का यह मतलब नहीं कि बिल्कुल न खाएं, बल्कि बीमारी की हालत में तो बिल्कुल न खाएं और तन्दुरुस्ती में भी अपने मिज़ाज को देखकर ज़रा कम खाएं। हां, जिसका मिज़ाज मज़बूत है और उनकी आदत है, उनको कुछ नुक़्सान नहीं।

कहीं–कहीं दस्तूर है कि ज़च्चा को क़िस्म–क़िस्म के खाने, कहीं

माश की दाल, कहीं बड़ा गोश्त, और कहीं भारी पड़ने वाली तरकारियां ठन्डी करके देते हैं। यह बुरी रस्म है। ऐसे मौक़ों पर एहतियात रखने के लिए ख़राब खानों को लिख दिया गया है।

अब थोड़ा–सा बयान इन ख़ानों की ख़ासियत का भी लिखा जाता है, ताकि अच्छी तरह से मालूम हो जाए।

बैंगन—गर्म खुश्क है। इसमें ग़िज़ाइयत[1] बहुत कम है, ख़ून बुरा पैदा करता है, बवासीर वालों को और बादी मिज़ाज वालों को बहुत नुक़सान करता है। अगर इसमें घी ज़्यादा डाला जाए और सिरका भिगाया हुआ ज़ीरा मिला दिया जाए, तो उसके नुक़्सान कम हो जाते हैं।

तिल्ली के लिए फ़ायदेमंद है, ख़ासकर सिरके में पड़ी हुई।

लाही का साग—गर्म है। गुर्दे के रोगी का बहुत नुक़्सान करता है और हमल की हालत में खाने से बच्चे के मर जाने का डर है।

सींगरी—भी गर्म है

बतख़ का गोश्त—गर्म ख़ुश्क है, देर मे हज़्म होता है, मगर पोदीना डालने से इसका नुक़्सान कम हो जाता है।

और दरियायी बत्तख़ का गोश्त इतना नुक़्सान नहीं करता, जितना बत्तख़ का करता है।

गाजर—गर्म–तर है और देर से हज़्म होती है, हां, गैस (उफान) को रोकती है और सुकून पैदा करती है, इसलिए लोग उसको ठंडी कहते हैं। गोश्त में पकाने से इसके नुक़्सान कम होते हैं। मुरब्बा इसका उम्दा चीज़ है, रहम को ताक़त देता है और हामिला औरतें गाजर खाने से ज़्यादा एहतियात रखें, क्योंकि इससे ख़ून जारी हो जाता है।

लोबिया—गर्म–तर है, देर में हज़्म होता है, इससे बिखरे ख़्वाब नज़र आते हैं, सिरका और दारचीनी मिलाने से इसका नुक़सान कम हो जाता है, लेकिन हामिला औरतें हरगिज़ न खायें।

मसूर—खुश्क है। बवासीर वालों को नुक़्सान करती है। जिन का मेदा कमज़ोर है और बादी मिज़ाज वालों को नुक़्सान करती है। ज़्यादा घी डालने से या सिरका मिलाकर खाने से इसका कुछ सुधार हो जाता है।

तेला—गर्म है, सौदा (बादीपन) पैदा करता है और इससे पैदा

---

1. पौष्टिकता।

होने वाली बीमारियों में नुक़्सान करता है। ठन्डी तरकारियां मिलाने से कुछ सुधार हो जाता है और तिल के आधा सेर तेल को जोश देकर इसमें दो तोला मेथी के बीज डालें और जब मेथी जल जाए, निकाल कर फेंक दें। फिर इसमें आधा सेर घी मिलाकर जमा लें तो तेल का मज़ा अच्छा और घी का–सा हो जाता है। अगर मेथी के बीज गुड़ के पानी में औटा कर मिलाकर, छानकर उससे निकले हुए पानी को तेल में मिलाकर फिर औटाएं, यहां तक कि पानी जल जाए तो उम्मीद है कि तेल का नुक़्सान भी जाता रहेगा। यह तरीक़ा ग़रीबों के लिए काम का है।

गुड़—गर्म है, सौदा ज़्यादा पैदा करता है।

खटाई—ज़्यादा खाना पट्ठों को नुक़्सान करता है और जल्द बढ़ा करता है। औरतें बहुत एहतियात रखें और हमल में और ज़च्चा होने की हालत में और ज़ुकाम में ज़्यादा एहतियात ज़रूरी है। अगर खटाई में मीठी चीज़ मिला दीजिए तो नुक़्सान कम हो जाता है।

8. कुछ खाने ऐसे हैं कि अलग–अलग खाओ तो कुछ डर नहीं लेकिन साथ खाने से नुक़्सान होता है, यानी इनमें से जब तक एक चीज़ मेदे में हो, दूसरी न खाएं। अक्सर मिज़ाजों में तीन घन्टे का फ़ासला देना काफ़ी होता है।

हकीमों ने कहा है कि दूध के साथ खटाई न खाएं। इसी तरह दूध पीकर पान न खाएं, इससे दूध का पानी मेदे में अलग हो जाता है। दूध और मछली साथ न खाएं। इसमे फ़ालिज और कोढ़ का डर है।

दूध चावल के साथ सत्तू न खाएं। चिकनाई खाकर पानी न पीएं। तेल या घी बे–क़लई के बर्तन में न रखें। कसाला हुआ खाना न खाएं। मिट्टी के बर्तन पकाया हुआ खाना सबसे बेहतर है।

अमरूद, खीरा, ककड़ी, ख़रबूज़ा तरबूज़ और हरे मेवों पर पानी न पिएं, अंगूर के साथ सिरी–पाए न खाएं।

9. खाना बहुत गर्म न खाओ। गर्म खाना खाकर ठंडा पानी पीने से दांतों को बहुत नुक़्सान पहुंचता है।

10. मोटा आटा मैदे से अच्छा है। लुक़्मे (कौर) को ख़ूब चबाना चाहिए, खाना जल्दी–जल्दी खा लेना चाहिए। बहुत देर में खाने से हज़्म में ख़राबी होती है।

11. बहुत भूख में न सोओ और न खाना खाते ही सोओ। कम से

कम दो घंटे गुज़र जाएं और तबीयत हल्की–हल्की मालूम होने लगे, उस वक़्त हरज नहीं।

फ़ायदा—अगर कभी क़ब्ज़ हो जाए तो उसका उपाए ज़रूर करो। आसान–सी तद्बीर तो यह है कि रोटी न खाओ।

12. अगर पाख़ाना रोज़ से ज़्यादा नर्म आये तो रोकने का उपाय करो और चिकनाई कम कर दो। भुना हुआ गोश्त खाओ और अगर दस्त आने लगें या मामूली क़ब्ज़ ये ज़्यादा क़ब्ज़ हो जाए तो हकीम–डाक्टर को ख़बर कर दो।

13. खाना खाकर तुरन्त पाख़ाने में मत जाओ और अगर बहुत तक़ाज़ा हो, तो हरज नहीं।

14. पेशाब–पाखाना का जब तक़ाज़ा हो तो हरगिज़ मत रोको। इस तरह से तरह–तरह की बीमारियां पैदा होती हैं।

पानी का बयान

1. सोते से उठकर तुरन्त पानी न पियो और एक दम हवा में न निकलो। अगर बहुत ही प्यास है, तो बेहतरीन तरीक़ा यह है कि नाक पकड़कर पानी पियो और एक–एक घूंट करके पानी पियो और पानी पीकर कुछ देर तक नाक पकड़े रहो। सांस नाक से मत लो। इसी तरह गर्मी में चलकर तुरन्त पानी मत पियो, ख़ासकर जिसको लू लगी हो, वह अगर तुरन्त बहुत–सा पानी पी ले तो उसी वक़्त मर जाता है। इसी तरह नहार मुंह पानी न पीना चाहिए या पाख़ाने से निकल कर तुरन्त पानी न पीना चाहिए।

2. जहां तक हो सके, पानी ऐसे कुएं को हो, जिस पर भराई ज़्यादा हो, खारा पानी और गर्म पानी मत पियो। बारिश का पानी सबसे अच्छा है, मगर जिसको खांसी या दमा हो, वह न पिये। किसी–किसी पानी में तेल–सा मिला मालूम होता है, वह पानी बहुत बुरा है। अगर ख़राब पानी को अच्छा बनाना हो तो उसको इतना पकायें कि सेर का तीन पाव रह जाए, फिर ठंडा करके छानकर पिएं।

3. घड़ों को हर वक़्त ढंका रखो, बल्कि पीने के बर्तन के मुंह पर बारीक कपड़ा बंधा रखो, ताकि छना हुआ पानी पीने में आये।

4. बर्फ़ गुर्दे को नुक़्सान करता है, ख़ास कर औरतें इसकी आदत न

डालें, इससे बेहतर शोरा का झला हुआ पानी है।

5. खाते-पीते में हरगिज़ न हंसो, इससे कभी-कमी मौत की नौबत आ जाती है।[1]

आराम और मेहनत का बयान

1. न तो इतना आराम करो कि बदन फूल जाए, सुस्ती छा जाए, हर वक़्त पलंग ही पर दिखायी दो, घर के कारोबार दूसरों पर डाल दो, क्योंकि ज़्यादा आराम से अपने घर का भी नुक़्सान है और कुछ बीमारियां भी लग जाती हैं और न इतनी मेहनत करो कि बीमार हो जाओ, बल्कि अपने हाथ-पांव सारे बदन में बीच की राह से मेहनत का काम ज़रूर लेना चाहिए। इसके तरीक़े ये हैं कि हर काम को हाथ चलाकर फुर्ती से करो, सुस्ती की आदत छोड़ दो और घर में थोड़ी देर ज़रूर टहल लिया करो। दो-चार बार अगर बे-पर्दगी न हो, तो कोठे पर चढ़-उतर लिया करो। चर्ख़े और चक्की का ज़रूर थोड़ा बहुत मश्ग़ला रखो। हम यह नहीं कहते कि तुम उससे पैसे कमाओ। एक तो इसमें भी कोई ऐब की बात नहीं, लेकिन अपनी तन्दुरुस्ती को क़ायम रखना तो ज़रूरी चीज़ है, इससे तन्दुरुस्ती ख़ूब रहती है।

देखो, जो औरतें मेहनती हैं, कूटती-पीसती हैं, कैसी ताक़तवर और ताज़ी रहती हैं और जो औरतें आराम तलब हैं, सारी उम्र दवा का प्याला मुंह को लगा रहता है। ऐसी मेहनत को 'रियाज़त' कहते हैं। खाना खाकर जब तक तीन घंटे न गुज़र जाएं, उस वक़्त रियाज़त न करना चाहिए और जब थोड़ा-थोड़ा पसीना आने लगे या सांस ज़्यादा फूलने लगे, तो रियाज़त रोक देनी चाहिए।

2. बच्चों के लिए झूला-झूलना अच्छी रियाज़त है।

3. सुबह को सवेरे उठने की आदत रखो, बल्कि हिम्मत करके तहज्जुद को उठा करो, इससे तन्दुरुस्ती ख़ूब बनी रहती है।

4. दोपहर को बे-ज़रूरत न सोओ और अगर कुछ थकन हो या नींद आ रही हो, तो और बात है।

---

1. सोडा, लेमन व विलायती पान अगर पियो तो थोड़ा-थोड़ा कई सांस में पियो। एक दम पीने से कमी-कमी ऐसा फंदा लगता है कि दम पर बन जाती है।

5. दिमाग़ से भी कुछ काम लेना ज़रूरी है। अगर इससे बिल्कुल काम न लिया जाए तो दिमाग़ में बिल्कुल रतूबत (तरी) बढ़ जाती है और ज़ेहन कुंद हो जाता है और जो हद से ज़्यादा ज़ोर डाला जाए, हर वक़्त फ़िक्र और सोच में रहे तो खुश्की और कमज़ोरी पैदा हो जाती है। इस वास्ते अन्दाज़ से मेहनत लेना मुनासिब है। पढ़ने–पढ़ाने का शुग्ल रखो।

क़ुरआन शरीफ़ रोज़ान पढ़ा करो। किताब देखा करो, बारीक बातों को सोचा करो। न इतना गुस्सा करो कि आपे से बाहर हो जाओ, न ऐसा पी जाओ कि किसी पर बिल्कुल रोक–टोक न रहे। न ऐसी खुशी करो कि खुदा की बे–नियाज़ी और उसकी क़ुदरत को भूल जाओ कि वह एक दम में चाहें, सारी खुशी को ख़ाक में मिला दें, न इतना रंज करो कि अल्लाह तआला की रहमत हो बिल्कुल याद न रहे और इसी ग़म को लेकर बैठ जाओ। अगर कोई ज़्यादा सद्मा पहुंचे तो अपनी तबीयत को दूसरी तरफ़ हटा दो, किसी काम में लग जाओ। इन सब बातों से, बीमारी बल्कि हलाकत कर डर है। अगर किसी को बहुत खुशी की बात सुनाना हो और वह दिल का कमज़ोर हो तो इकट्ठे न सुनाओ, पहले पूछो कि अगर तुम्हारा यह काम हो जाए तो कैसा,। फिर कहो कि देखो हम कोशीश कर रहे हैं, शायद हो जाये। और उम्मीद तो है कि हो जाए, फिर उसी वक़्त या दो चार घंटे बाद सुना दो कि तुम्हारा यह काम हो गया। इसी सुनानी हो, तो यों कहो कि फ़्लां आदमी बीमार था, उसकी हालत तो ग़ैर थी ही, और मौत सबके लिए है, कभी न कभी आयेगी ही। अल्लाह के फ़ैसले से उसने इंतिक़ाल किया।

फ़ायदा––बीमारी की हालत में और पेट में जब बच्चे में जान पड़ जाए, मियां के पास सोने से नुक़्सान होता है।

इलाज कराने में जिन बातों का ख़्याल रखना ज़रूरी है

1. छोटी–मोटी बीमारी में दवा न करनी चाहिए। खाने–पीन, चलने फिरने, हवा के बदलने से इसका इलाज कर लेना चाहिए। जैसे, गर्म हवा से सर में दर्द हो गया तो सर्द हवा में बैठ जाओ या खाना खाने से पेट में

बोझ हो गया, तो एक–दो वक़्त फ़ाक़ा[1] करलें या नीदं की कमी से सर में दर्द हो गया तो सो रहें या ज़्यादा सोने से सुस्ती हो गयी, तो कम सोचें या दिमाग़ से ज़्यादा काम लिया था, उससे ख़ुश्की हो गयी, ज़रा मेहनत कम कर दें, उसको आराम व सुकून दें। जब इन उपायों से काम न चले, तो अब दवा को अख़्तियार करें।

2. मर्ज़ चाहे कितना ही बड़ा हो, घबराओ मत, इससे इलाज़ का इंतिज़ाम ख़राब हो जाता है, ख़ूब जमाव और इत्मीनान से इलाज करो।

3. मुस्हिल (दस्त लाना) कै़ और फ़स्द की आदत न डालो यानी बिना भारी ज़रूरत के हर साल मुस्हिल न लिया करो। अगर भुस्हिल की आदत पड़ जाए तो उसके छोड़ने का तरीक़ा यह है कि जब मौसम मुस्हिल का क़रीब आये तो खाना कम कर दो। रियाज़त ज़्यादा करो। कोई ऐसी दवा खाते रहो, जिससे पाख़ाना खुल कर आता रहे, जैस हड़ का मुरब्बा, या गुलेक़ंद या जवारिश मुस्तगी वग़ैरह। फिर अगर मुस्हिल के दिनों में तबीयत में कुछ मैल भी रहे तो कुछ परवाह न करो और मुस्हिल को टाल दो। इस तरह से आदत छूट जाएगी।

4. सख़्त ज़रूरत के बग़ैर बहुत तेज़ दवाएं न खाएं। ऐसी दवाओं में यह ख़राबी है कि अगर फ़ायदा न दें तो नुक़्सान भी पूरा करेंगी, ख़ास कर कुश्तों से बहुत बचो, क्योंकि ये जब नुक़्सान करते हैं तो तमाम उम्र रोग नहीं जाता, हां, रांग और मूंगे का कुश्ता बहुत हल्का होता है, इसमें कुछ डर नहीं और हड़ताल और संखिया और ज़हरीली दवाओं के कुश्तों के पास न जाओ और हराम[2] और नजिस दवा न खाओ, न लगाओ।

5. जब कोई दवा[3] एक लम्बी मुद्दत तक खाना हो, तो कभी–कभी एक–दो दिन को छोड़ दिया करो या उसकी जगह और दवा बदल दिया करो, क्योंकि जिस दवा की आदत हो जाती है, उसका असर नहीं होता।

6. जब तक ग़िज़ा से काम चले, दवा इस्तेमाल न करो। जैसे, मुस्हिल के बाद ताक़त आने के लिए जवान आदमी को यख़नी काफ़ी है उसको मुश्क व अंबर की ज़रूरत नहीं, हां, बूढ़े आदमी को यख़नी क़ब्ज़

---

1. उपवास,
2. इसके मस्अले 'तिब्बी जौहर' में देख लो।
3. दवा को हमेशा ढांक कर और हिफ़ाज़त से रखो। कुछ दवाओं पर कुछ जानवर आशिक़ होते हैं, वे उनमें ज़रूर मुंह डालते हैं, जैसे बिल्ली, बालछड़ और सांप।

करती है और इसके हज़म करने के लिए भी ताक़त चाहिए। ऐसे शख़्स को कोई माजून वग़ैरह बना लेना बहुत मुनासिब है।

7. दवा को बहुत एहतियात से ठीक तौल कर नुस्ख़े के मुताबिक़ बनाओ। अपनी तरफ़ से मत घटाओ–बढ़ाओ।

8. दवा पहले हकीम को दिखला लो। अगर बुरी हो, उसको बदल डालो।

9. दिल–जिगर , दिमाग़, फेफड़ा और आंख वग़ैरह, जो नाज़ुक चीज़ें हैं, उनके लिए ऐसी दवा इस्तेमाल न करो, जो बहुत तेज़ हैं या बहुत ठंडी या बहुत घुलाने वाली हैं या ज़हरीली हैं, हां, जहां सख़्त ज़रूरत हो, लाचारी है।

10. इलाज हमेशा ऐसे डाक्टर या हकीम से कराओ जो डाक्टरी या हिकमत का इल्म रखता हो और तजुर्बेकार भी हो, इलाज तवज्जोह से और सोच–समझकर करता हो, बे–सोच–समझे नुस्ख़ा न लिख देता हो। मुस्हिल देने में जल्दी न करता हो किसी का नाम मशहूर सुनकर धोखे में न आओ।

11. बीमारी में परहेज़ को दवा से ज़्यादा ज़रूरी समझो और तन्दुरुस्ती में परहेज़ हरगिज़ न करो। फ़सल की चीज़ों में से, जिसको जी चाहे, शौक़ से खाओ, मगर यह ख़्याल रखो कि पेट ये ज़्यादा न खाओ और पेट में बोझ पाओ तो फ़ाक़ा करो।

12. यों तो हर बीमारी का इलाज ज़रूर है, लेकिन ख़ास कर इन बीमारियों के इलाज में हरगिज़ ग़फ़लत मत करो। और बच्चों के लिए तो और ज़्यादा ख़्याल करो। ज़ुकाम, खांसी, आंख दुखना, पसली का दर्द, बद–हज़मी, बार–बार पाख़ाना जाना, पेचिश, आंत उतरना, हैज़ की कमी या ज़्यादती, बुख़ारी जो हर वक़्त रहता हो, या खाना खाकर हो जाता हो, किसी जानवर या आदमी का काट खाना, ज़हरीली दवा का खा लेना, दिल धड़कना, चक्कर आना, जगह–जगह से बदन फ़ड़कना, तमाम बदन का सुन्न हो जाना और जब भूख बहुत बढ़ जाए या बहुत घट जाए या नींद बहुत बढ़ जाए या बहुत घट जाए या पसीना बहुत आने लगे या बिल्कुल न आये और कोई बात अपनी हमेशा की आदत के खिलाफ़ पैदा हो जाए तो समझो कि बीमारी आती है, जल्दी हकीम से कह कर उपाय करो और खाने वग़ैरह में बे–एहतियाती न होने दो।

13. नब्ज़ दिखलाने में इन बातों का ख़्याल रखो कि नब्ज़ दिखलाने के वक़्त पेट न भरा हो, न बहुत खाली हो कि भूख से बेताब हो, तबीयत

पर न ज़्यादा ग़म हो, न ज़्यादा खुशी हो, न सोकर उठने के बाद फ़ौरन दिखलाये, न बहुत जागने के बाद, न किसी मेहनत का काम करने के बाद, न दूर से चलकर आने के बाद।

नब्ज़ दिखाने के वक़्त चार ज़ानू होकर बैठो या चारपाई पर या पीढ़ी पर पांव लटका कर बैठो, किसी करवट पर ज़्यादा ज़ोर देकर मत बैठो, न कोई–सा हाथ टेको, तकिया भी न लगाओ। जिस हाथ की नब्ज़ दिखलाओ, उसमें कोई चीज़ मत पकड़ो, न हाथ को बहुत सीधा करो, न बहुत मोड़ो, बल्कि बाज़ू की पसलियों से मिला कर ढीला छोड़ दो। सांस बन्द न करो, हकीम या डाक्टर से न डरो, इससे नब्ज़ में बड़ा फ़र्क़ पड़ जाता है। अगर लेट कर नब्ज़ दिखलाना हो, तो करवट पर मत लेटो, चित लेट जाओ।

14. क़ारूरा (पेशाब) रखने में इन बातों का ख़्याल रखो कि क़ारूरा ऐसे वक़्त लिया जाए कि आदमी आदत के मुताबिक़ नींद से उठा हो, अभी तक कुछ खाया–पिया न हो। हरी तरकारी के खाने से क़ारूरे में हरापन आ जाता है, ज़ाफ़रान और अमल्तास से पीलापन आ जाता है और मेंहदी लगाने से लाली आ जाती है, रोज़ा रखने और नींद न आने से और ज़्यादा थकन से और बहुत भूख और देर तक पेशाब रोकने से पीलापन या लाली आ जाती है। कभी बहुत जागने से क़ारूरा का रंग सफ़ेद हो जाता है। कभी बहुत जागने से क़ारूरा का रंग सफ़दे हो जाता है, बहुत पानी पीने से रंग हल्का हो जाता है। दस्तों के बाद का क़ारूरा एतबार के क़ाबिल नहीं रहता। खाना खाने से बारह घंटे बाद का क़ारूरा पूरे एतबार के क़ाबिल है।

जब सुबह को क़ारूरा दिखलाना हो तो रात को बहुत पेट भर कर न खायें, ज़च्चे का क़ारूरा एतबार के क़ाबिल नहीं। अगर क़ारूरा छः घंटे रखा रहा हो, तो दिखाने के क़ाबिल नहीं रहा और कुछ क़ारूरे इसमें भी कम में ख़राब हो जाते हैं। ग़रज़ जब देखें कि इसके रंग और बू में फ़र्क़ आ गया तो दिखलाने के क़ाबिल नहीं रहा।[1]

15. जल्दी–जल्दी बे–ज़रूरत हकीम–डाक्टर को न बदलो। उसे ख़ुश रखो, उसके ख़िलाफ़ मत करो। मगर फ़ायदा न हो, तो उस पर

1. क़ारूरे का बर्तन बिल्कुल साफ हो और ढांककर रखना चाहिए। अगर शीशी में दिखाया जाए तो शीशी बिल्कुल साफ़ हो।

इल्ज़ाम मत दो, उसको देकर एहसान मत जतलाओ।

16. मरीज़ पर सख़्ती मत करो। उसकी सख़्त मिज़ाजी को झेलो, उसके सामने ऐसी कोई बात मत करो, जिससे उसको ना–उम्मीदी हो जाए, चाहे कैसी ही उसकी हालत ख़राब हो, मगर उसकी तसल्ली करते रहो।

कमज़ोरी के वक़्त के उपायों का बयान

कभी–कभी बहुत दिनों तक बुख़ार आने से या और किसी बीमारी में मुब्तला रहने से आदमी कमज़ोर हो जाता है, उस वक़्त कुछ लोग उस को जल्द ताक़त आने के लिए बहुत से खाने या मेवे वग़ैरह खिलाते हैं। यह ठीक नहीं। यहां, ऐसे वक़्त के मुनासिब उपायों को लिखा जाता है—

1. याद रखो कि कमज़ोरी में एक दम ज़्यादा खाने से या बहुत ताक़त की दवा खा लेने से फ़ायदा नहीं पहुंचता, बल्कि कभी–कभी नुक़्सान पहुंच जाता है। फ़ायदा उसी के खाने से और उतनी ही मिक़्दार से पहुंचता है, जो आसानी से हज़म हो जाए और अगर खाना मिक़्दार में ज़्यादा खा लिया या चीज़ें ज़्यादा ताक़त वाली हुई तो मरीज़ उसे बरदाश्त नहीं कर पायेगा और हज़म की ख़रीबी पैदा हो जाएगी, इस तरह मुम्किन है, मर्ज़ फिर लौट आये और पेट में सुद्दे पड़ जाएं या वरम हो जाए, इसलिए कमज़ोरी की हालत में धीरे–धीरे ग़िज़ा को बढ़ाओ और अगर एक–दो चम्मच शोरबा ही या एक अंडा ही हज़म हो सकता है, तो यही दो, कुछ ज़्यादा न दो, भले ही मरीज़ भूख–भूख पुकारे, भूखा रहने से नुक़्सान नहीं होता और ज़्यादा खा लेने से नुक़्सान हो जाता है। हां, यह हो सकता है कि दो–दो चम्मच करके शोरबा दिन में तीन–चार बाद दो, लेकिन यह ख़्याल रखो कि दो बार में तीन–चार घंटे से फ़ासला कम न हो, ताकि पहली ग़िज़ा हज़म हो चुके, तब दूसरी ग़िज़ा पहुंचे, वरना बद–हज़मी का डर है।

मतलब यह कि हर काम में धीरे–धीरे ज़्यादती करें, ग़िज़ा देने में, घी देने में, चलने–फिरने, बोलने–चालने, लिखने–पढ़ने में और मरीज़ को ख़ुश रखें। कोई बात उसको रंज देने वाली उसके सामने न कहें, न उसको बिल्कुल अकेला छोड़ें, न उसके मिज़ाज के ख़िलाफ़ भीड़ इकट्ठी करें, न बहुत रोशनी में रखें, न बहुत अंधेरे में। बेहतर है कि हकीम–डाक्टर

के मश्विरे पर इस हालत में अमल करते रहें और यह न समझें कि अब मर्ज़ निकल गया, पूछने की क्या ज़रूरत है ?

2. कमज़ोर आदमी को अगर भूख ख़ूब लगती हो और ख़ूराक ख़ूब खा लेता है, लेकिन तबियत उठती नहीं और पाख़ाना–पेशाब साफ़ नहीं होता और ताक़त नहीं आती तो समझ लो कि मर्ज़ अभी बाक़ी है और यह भूख झूठी है।

3. कमज़ोर आदमी को दोपहर का सोना अक्सर नुक़सान देता है।

4. कमज़ोर आदमी को अगर भूख न लगे तो समझ लो कि मर्ज़ का माद्दा अभी उसके ज़िम्मे में बाक़ी है।

5. कमज़ोरी में ज़्यादा देर तक भूख और प्यास को मारना भी नहीं चाहिए, इससे कमज़ोरी बढ़ जाती है। जब भूख और प्यास ग़ालिब हो, कुछ खाने–पीने को दे दिया जाए।

6. पतली ग़िज़ा जल्द हज़म हो जाती है, भले ही इसका असर देर तक रहने वाला न हो। जैसे आश जौ, शोरबा, चूज़ा मुर्ग़ या बटेर का या बकरी का गोश्त। खुश्क और गाढ़ी ग़िज़ा देर में हज़म होती है, भले ही इसका असर देर तक रहता है। जैसे, क़ीमा, कबाब, खीर वग़ैरह।

7. कमज़ोरी में बहुत ठंडा पानी नहीं पीना चाहिए, और न एक दम बहुत–सा पानी पीना चाहिए। इससे कभी–कभी मौत को नौबत आ गयी है।

8. कमज़ोर आदमी की कोई दवा भी ताक़त की, हकीम–डाक्टर की राय से बनवा लेनी मुनासिब है, ताकि जल्द ताक़त आ जाए।

9. आमले का मुरब्बा, सेब का मुरब्बा, पेठे का मुरब्बा, चांदी या सोने के वरक़ के साथ खाना भी ताक़त की चीज़ है।

सफ़र के ज़रूरी उपायों का बयान

1. सफ़र करने से पहले पेशाब–पाख़ाना से फ़ारिग़ हो लो और खाना थोड़ा खाओ, ताकि तबियत भारी न हो।

2. सफ़र में खाना ऐसा खाओ, जिससे ग़िज़ा ज़्यादा बनती हो जैसे क़ीमी, कबाब, कोफ़्ता जिसमें घी अच्छा हो और हरी तरकारियों से ग़िज़ा कम बनती है, इसलिए मत खाओ।

3. किसी–किसी सफ़र में पानी कम मिलता है, ऐसे सफ़र में खुरफ़े के बीज आधा सेर और थोड़ा सिरका साथ रखो। नौ माशा बीज फांककर

ज़रा–सा सिरका पानी में मिलाकर पी लिया करो, इससे प्यास कम लगती है। अगर बीज न हों तो सिरका पानी से मिलाकर पीना भी काफ़ी है। अगर हज के सफ़र में साथ रखें तो बहुत मुनासिब है।[1]

4. अगर सफ़र में अरक़े काफ़ूर भी साथ रखें, तो मुनासिब हैं, इससे प्यास भी नहीं लगती और हैज़ा के लिए भी मुफ़ीद है।

5. अगर लू में चलना हो तो बिल्कुल खाली पेट चलना बुरा है, इससे लू का असर ज़्यादा होता है। बेहतर यह है कि प्याज़ ख़ूब बारीक काटकर दही या और किसी खट्टी चीज़ में मिलाकर चलने से पहले खा लें और अगर प्यास के घी मे भून लें तो बदबू भी न रहे और प्याज़ के साथ रखने से भी लू नहीं लगती और अगर किसी को लू लग जाए तो ठंडे पानी से उसका मुंह धुलाओ और कद्दू या ककड़ी या खुर्फ़ा कुचलकर रोग़ने गुल मिलाकर सर पर रखो और ठंडे पानी से कुल्लियां कराओ, पानी हरगिज़ न पीने दो। जब ज़रा तबियत ठहरे तो चखने के बराबर बहुत ठंडा पानी पिलाओ और दवा पिलाओ। वह भी एकदम नहीं, बल्कि थोड़ी–थोड़ी करके पिलाओ।

हमल के उपायों और एहतियातों का बयान

1. हमल में क़ब्ज़ न होने पाये। जब ज़रा पेट में बोझ मालूम हो तो एक दो वक़्त सिर्फ़ शोरबा, चिकनाईदार पी लें। अगर क़ब्ज़ न जाए तो दो मुनक़्क़ा या मुरब्बे की हड़ खा लें तो यह नुस्ख़ा इस्तेमाल करें, इसमें हमल को कोई नुक़्सान नहीं और मेदे को मज़बूत करता है और बच्चे को गिरने से बचाये रखता है। साढ़े दस माशा गुलाब के फूल की पंखुड़ियां, बेहतर तो ताज़ा है, वरना खुश्क सही, रात को आधे पाव गुलाब में भिगो रखें। सुबह को इनता पीसें कि छानने की ज़रूरत न रहे, फिर थोड़ी मिस्त्री मिला कर नाक बंद करके पिएं, इससे दो तीन दस्त अच्छा हो जाते हैं। हां, जिन्हें नज़ला का ज़ोर ज़्यादा होता हो तो वे इसे न पियें, बल्कि मुरब्बे की हड़ खा लिया करें। अगर इससे फ़ायदा न हो हकीम–डाक्टर से पूछ।

2. हामिला को ये ग़िज़ाएं नुक़्सान करती हैं—लोबिया, चना, तिल, गाजर, मूली, चुकंदर, हिरन का गोश्त, ज़्यादा मिर्चे ज़्यादा खटाई, तरबूज़,

1. मगर जिसको नज़ला की आदत हो, वह सिरका न खाये।

ख़रबूज़ा, ज़्यादा माश की दाल, लेकिन कभी–कभी डर नहीं।

और ये चीज़ें नुक़्सान नहीं करतीं—अंगूर, अमरूद, नाशपाती, सेब, अनार, जामुन, मीठा आम, बटेर, तीतर और छोटी चिड़िया का गोश्त।

3. चलने में ज़ोर से पांव व पड़े। ऊंची जगह से नीचे एकदम न उतरें, मतलब यह कि पेट को ज़्यादा हरकत से बचाएं, कोई भारी मेहनत न करें, भारी बोझ न उठाएं, बहुत गुस्सा न करें, ज़्यादा ग़म न करें, ख़ुश्बू कम सूंघें, नवें महीने ख़ुश्बू से ज़्यादा एहतियात रखे, क्योंकि बच्चा मुश्किल से होता है, चलने–फिरने की आदत रखें, क्योंकि हर वक़्त बैठे रहने से बादी और सुस्ती बढ़ती है।

मियां के पास न जाएं, ख़ास कर चौथे महीने से पहले और सातवें के बाद ज़्यादा नुक़्सान है। जिनके मिज़ाज में बलग़म ज़्यादा हो, वे ज़्यादा चिकनाई भी न खायें। क़ीमा और मूंग की दाल भुनी हुई और ऐसी चीज़ खाया करें।

इरादा करके कै न करें। अगर ख़ुद आये तो रोकना न चाहिए। जिन चीज़ों से नज़ला ख़ांसी पैदा हो, उनसे बचें। पेट की ठंडी हवा से बचाएं।

4. अगर क़ै बहुत आया करे तो तीन–तीन माशा आनरदाना और पोदीना पीसकर कच्चे अंगूर के शर्बत में मिलाकर चाट लिया करें। अगर मेदे में ख़राबी हो और इसकी वजह से क़ै आये तो क़ै लाने वाली दवाओं से पेट साफ़ करें।

5. अगर मिट्टी वग़ैरह खाने की ख़्वाहिश हो, तो ख़ुद जाती रहती है। अगर ज़्यादा हो तो उस गुलाब वाली दवा से पेट साफ़ करें जो नं० 1 में गुज़र चुकी है।

6. अगर भूख बंद हो जाए तो चिकनाई और मिठाई कम खायें और उसी गुलाब वाली दवा से पेट साफ़ करें।

7. जब दिल धड़का करे, दो–चार घूंट गरम पानी या गर्म गुलाब के साथ पी लिया करें और ज़रा चला–फिरा करें।

8. अगर हमल में पैरों पर वरम आ जाए तो कुछ डर नहीं।

9. जिसको हमल गिर जाने की आदत हो, वह चार महीने तक और फिर सातवें महीने के बाद बहुत एहतियात रखे, कोई गर्म चीज़ न खाये, कोई बोझ न उठाये, बल्कि हर वक़्त लंगोट बांधे रखे और जब गिरने की निशानियां मालूम होने लगें तो तुरन्त हकीम–डाक्टर से मश्विरा करें।

और अगर गिर जाए तो, उस वक़्त बड़े एहतियात की ज़रूरत है।

हमल गिर जाने के उपायों का बयान

अगर हमल गिर जाए तो ग़िज़ा बिल्कुल बंद कर दें। जब भूख ज़्यादा हो तो ख़रबूज़े के छिले हुए बीज, दो–तीन तोला ज़रा भूनकर और स्वाद बनाने के लिए लाहौरी नमक और काली मिर्च मिलाकर खायें; या मुनक्कें सेंक कर खिलाएं। तीन दिन तक और कुछ ग़िज़ा न खिलाएं। हां, पेट की सफ़ाई के लिए हकीम–डाक्टर के मश्विरे से दवा पिलाते रहें।

कमर और नाफ़ के नीचे नीम के पत्तों से सेंकते रहें।

चौथे दिन थोड़ी मूठ औटा कर उसका पानी पिलायें,

फिर पांचवें दिन शोरबे से चपाती ख़ूब गला कर दें। और पेट की सफ़ाई में कमी न रहने दें।

ज़च्चा के उपायों का बयान

1. जब नवां महीना शुरू हो जाए, हर रोज़ एक माशा मुस्तगी बारीक पीस कर उसमें नौ माश रोग़न बादाम और ज़रा–सी मिस्त्री मिलाकर रोज़ चाट लिया करें, रोग़न बादाम अच्छा न मिले तो ग्यारह बादाम छीलकर, ख़ूब बारीक पीसकर, मिस्त्री मिलाकर चाट लिया करें। गाय का दूध जितना हज़्म हो सके, पिया करें या गाय का मस्का अगर हज़्म हो जाए, चाटा करें–इन सब दवाओं से बच्चा आसानी से पैदा होता है।

वैसे बच्चा पैदा होते वक़्त ज़्यादा तक्लीफ़ हो या बच्चा पेट में मर जाए या और कोई नये ख़तरे की बात पैदा हो जाए फ़ौरन हकीम–डाक्टर को ख़बर करो।

2. बच्चे को एक दिन–रात दूध न दें, बजाए दूध के घुट्टी दें ताकि पेट ख़ूब साफ़ हो जाए। अगले दिन दूध दें।

बच्चे की मां इस बीच अपना दूध दो तीन बार दबा–दबा कर निकाल दे, बल्कि गर्म पानी से छातियों को धारे, ताकि जमा हुआ दूध निकल जाए। एक हफ़्ते तक दिन–रात में तीन बार से ज़्यादा दूध न पिलाएं।

3. रस्म है कि मिट्टी या बेसन से बच्चे को ग़ुस्ल देते हैं, बजाए

इसके अगर नमक के पानी से गुस्ल दें और थोड़ी देर के बाद ख़ालिस पानी से नहलायें, तो बहुत–सी बीमारियों से जैसे फोड़ा–फुन्सी वग़ैरह सबसे हिफ़ाज़त रहती है, लेकिन नमक का पानी नाक या कान या आंख या मुंह में न जाने पाये।

अगर बच्चे के बदन पर मैल ज़्यादा मालूम हो तो कई दिन तक नमक के पानी से गुस्ल दें और अगर मैल न हो तो भी चिल्ले भर तक तीसरे–चौथे दिन ख़ालिस पानी से ग़ुस्ल दिया करें और ग़ुस्ल के बाद तेल मल दिया करें। अगर चार–पांच महीने तक तेल की मालिश रखें तो बहुत मुफ़ीद है।

4. बच्चे को एसी जगह रखें जहां बहुत रोशनी न हो। ज़्यादा रोशनी से उसकी निगाह कमज़ोर हो जाती है।

5. बच्चे को दूध देने से पहले कोई मीठी चीज़ जैसे शहद या खजूर चबायी हुई वग़ैरह उंगली पर लगाकर उसके तालू पर लगायें।[1]

6. रस्म है कि ज़च्चा को काढ़ा पिलाते हैं और उसके लिए एक नुस्ख़ा तै है, सबको वही दिया जाता है, चाहे उसका मिज़ाज गर्म हो या सर्द हो या वह बीमार हो। यह बुरी रस्म है, बल्कि मिज़ाज के मुताबिक़ दवा देनी चाहिए। इसमें भी हकीम–डाक्टर का मश्विरा ज़रूरी है।

7. बच्चे को ज़्यादा देर तक एक करवट लेटे हुए किसी चीज़ पर निगाह न जमाने दें, इससे भेंगापन हो जाता है, करवट बदलते रहें।

8. जिसके दूध कम होता हो, अगर दूध ठीक हो तो दूध पिलाओ, वरना ऐसी चीज़ें खिलाओ–पिलाओ, जिससे दूध बने।

9. दूध पिलाने वाली कोई नुक़्सान करने वाली चीज़ न खाये।

10. अगर दूध छातियों में जम जाए और तक्लीफ़ दे और खिंचाव मालूम होने लगे तो तुरन्त इलाज करें।

11. जिसका दूध ख़राब हो, बच्चे को न पिलाएं। एक बूंद नाख़ुन पर डालकर देख लें। अगर तुरन्त बह जाए या बहुत देर तक न बहे, तो ख़राब और अगर ज़रा बह कर रह जाए तो उम्दा है और जिस पर मक्खी न बैठे, वह बुरा है।

---

1. उस वक़्त जो चीज़ तालू पर लगा दी जाती है, तमाम उम्र उसका असर रहता है, यहां तक कि कुछ बच्चे के तालू में बिच्छू घिसकर, मिस्त्री मिलाकर मल दिया गया, तमाम उम्र बिच्छू का ज़हर न चढ़ा।

बच्चों के उपायों और एहतियातों के बयान

1. सबसे बढ़कर मां का दूध हे। बशर्ते कि मसान का मर्ज़ न हो और अगर मसान का मर्ज़ हो तो सबसे नुक़्सानदेह मां का दूध है। (जिसको यह मर्ज़ हो, उसे ज़रूर ही अपना इलाज कराना चाहिए, वरना बच्चों के मरने का ख़तरा रहता है) तंदुरूस्त मां अगर खाली पिस्तान भी बच्चे के मुंह में दे तो बच्चे को फ़ायदा पहुंचता है और यह आदत कर लें कि हर बार दूध पिलाने से पहले एक उंगली शहद चटा लिया करें, तो बहुत मुफ़ीद है।

2. जब बच्चा सात दिन का हो जाए, पालने में झुलाना और लोरी सुनाना उसको बहुत मुफ़ीद है। गोद में लें या पालने में लिटा दें, बच्चे का सर ऊंचा रखें।

3. बच्चा जिस वक़्त पैदा होता है, उसका दिमाग़ केमरे की तरह होता है। जब कुछ उसमें आंख की राह से या कान की राह से पहुंचता है, उसका फोटो उतरकर वहीं जम जाता है और तमाम उम्र महफ़ूज़ रहता है। अगर अच्छी सीख देनी हो तो बच्चे के सामने तमीज़ और सलीक़े की बातें करें। तहज़ीब के ख़िलाफ़ कोई हरकत न करें, कोई बात बुरी मुंह से न निकालें, अच्छे बाले ही जुबान से निकलते रहें।

4. जब दूध छोड़ने के दिन नज़दीक आएं और बच्चा कुछ खाने लगे, तो इसका ख़्याल रखें, कोई बड़ी चीज़ हरगिज़ न चबाने दें, इससे डर है कि दांत मुश्किल से निकले और हमेशा के लिए दांत कमज़ोर रहें।

5. ऐसी हालत में न ग़िज़ा पेट भर कर खिलाएं, न पानी ज़्यादा पिलाएं, इससे मैदा हमेशा के लिए कमज़ोर हो जाता हैं। अगर ज़रा भी पेट फूला देखें, तो ग़िज़ा बंद कर दें और जिस तरह हो सके, बच्चे को सुला दें, इससे ग़िज़ा जल्दी हज़म हो जाती है।

6. अगर गर्मी में दूध छुड़ाया जाए तो प्यास और भड़कने न दें। इसका उपाय यह है कि हर दिन ज़हर मोहरा गुलाब या पानी में घिस कर पिलाएं और ज़्यादा चिकनाई न खिलाएं और हमेशा तीसरे दिन तालू पर मेंहदी की टिकिया रखें।

अगर बहुत जोड़ों में दूध छुड़ाया जाए तो सर्दी से बचाए और कोई भारी चीज़ न खाने दें और बद-हज़मी का ख़्यला रखें।

7. जब मसोढ़े सख़्त हो जाएं और दांत निकलते मालूम हों तो मुर्ग़

की चर्बी मसोढ़ें पर मला करें और सर और गरदन पर तेल ख़ूब मला करें और कान में भी तेल ख़ूब डाला करें। कभी–कभी शहद दो बूंद शीत–गर्म करके कानों में डाल दिया करें कि मैल न जमे और उस दवा का इस्तेमाल करें कि दांत आसानी से निकलें।

8. जब दांत किसी क़दर निकल आएं और बच्चा कुछ चबाने लगे तो एक गिरह मुलहठी की ऊपर से छीलकर पानी में भिगोकर नर्म करके बच्चे के हाथ में दे दें कि उससे खेला करे और उसको चबाया करे, इससे एक तो अपनी उंगलियां न चबायेगा, दूसरे दांत निकलने से मसूढ़े न फूलेंगे और दर्द न करेंगे और कभी–न–कभी नमक और शहद मिलाकर मसोढ़ों पर मलते रहें, इससे मुंह नहीं आता और दांत बहुत आसानी से निकलते हैं।

9. जब बच्चे की जुबान कुछ खुल चले, तो कभी–कभी ज़ुबान की जड़ को उंगली से मल दिया करें, इससे बहुत जल्दी साफ़ बोलने लगता है।

10. बुरी आदतों से तन्दुरुस्ती ख़राब हो जाती है, इसलिए बच्चे की आदतें दुरूस्त रखने का ख़्याल रखें। कोई और भी उसके सामने बे–हूदा हरकत न करने पाये।

11. बच्चों को किसी ख़ास गिज़ा की आदत न डालो, बल्कि मौसमी चीज़ें सब खिलाती रहो, ताकि आदत रहे, हां, बार–बार न खिलाओ। जब तक एक चीज़ हज़म न हो जाए, दूसरी न दो और कोई चीज़ इनती न खिलाओ की हज़म न हो सके। और हरे मेवों पर पानी न दो और खटाई ज़्यादा न खाने दो, ख़ासकर लड़कियों को और बच्चों को ताकीद रखो कि खाना खाने में और पानी पीने में न हंसे, न कोई ऐसी हरकत करें कि जिससे लुक़्मा या पानी नाक की तरह चढ़ जाए।[1] जैसी हैसियत हो, बच्चों को अच्छी गिज़ा दो। इस उम्र में जो कुछ ताक़त बदन में आ जाएगी, तमाम उम्र काम में आएगी, ख़ासकर जाड़ों में मेवा या तिल के लड्डू खिला दिया करो, नारियल और मिस्त्री खाने से ताक़त भी आती है और चुनौने पैदा नहीं होते और सोते में पेशाब ज़्यादा नहीं आता। इसी तरह और मेवों में और फ़ायदे हैं।

---

1. ख़ासकर सोडा लेमन की बोतल पीने में कि इससे फंदा लगता है तो मौत की नौबत आती है।

12. बच्चों को मेहनत की आदत ज़रूर डालें, बल्कि ज़रूरत भर लड़कों को दंड–मुगदर की और हैसियत हो तो घोड़े की सवारी की, लड़कियों को छोटी चक्की, फिर बड़ी चक्की, फिर चर्ख़ा फेरने की आदत डालें।

13. ख़त्ना जितनी छोटी उम्र में हो जाए, बेहतर है, तक्लीफ़ कम होती है, घाव भर जाता है।

14. बहुत छोटी उम्र में शादी कर देने में बहुत से नुक़्सान हैं। बेहतर तो यही है कि लड़का जब कमाने का और लड़की जब घर चलाने का बोझ उठा सके, उस वक़्त शादी की जाए।

झाड़–फूंक का बयान

जिस तरह बीमारी का इलाज दवा–दारू से होता है, उसी तरह कुछ मौक़ों पर झाड़–फूंक से भी फ़ायदा हो जाता है, इसलिए दवा–दारू का बयान लिखने के बाद थोड़ा सा बयान झाड़–फूंक का भी लिखना मुनासिब समझा।

दूसरे यह कि कुछ जाहिल औरतें बच्चों की बीमारी में, औलाद की आरज़ू में ऐसी डांवाडोल हो जाती हैं कि शरअ के ख़िलाफ़ काम करने लगती हैं। कहीं फ़ाल खुलवाती हैं, कहीं चढ़ावे चढ़ाती हैं, कहीं वाही–तबाही मन्नतें मानती हैं, कहीं किसी को हाथ दिखाती हैं, बद–दीन और ठग लोगों से तावीज़–गंडे या झाड़–फूंक कराती हैं, बल्कि कुछ जाहिल तो ऐसे वक़्त में शीतला–भवानी तक को पूजने लगती हैं, जिससे दीन भी ख़राब होता है, गुनाह भी होता है, बल्कि कुछ बातों से आदमी काफ़िर–मुश्रिक हो जाता है और कभी ऐसे लोग कुछ पैसे–रूपये या कपड़ा और ग़ल्ला या मुर्ग़ा या बकरा वग़ैरह भी वसूल कर लेते हैं और कभी–कभी ऐसे लोगों के पास औरतों के आने–जाने या बात–चीत करने से इनकी नीयत बिगड़ जाती है और आबरू के लागू हो जाते हैं, ग़रज़ हर तरह का नुक़्सान है और फिर भी वही होता है, जो मंज़ूरे खुदा होता है, इसलिए यही ख़्याल हुआ कि किसी क़दर झाड़–फूंक के ऐसे तरीक़े बतलायें जाएं जो हमारी शरअ के ख़िलाफ़ न हों, ताकि अल्लाह तआला के नाम की बरकत से शिफ़ा भी हो और दीन भी बचा रहे। और माल और आबरू का नुक़्सान भी न हो।

सर का और दांत का दर्द और रियाह

एक पाक तख़्ती पाक रेता बिछाकर एक खूंटी से इस पर यह लिखो---अबजद, हव्वज़, हुत्ती और खूंटी को ज़ोर से अ (अलिफ़) पर दबाओ और दर्दवाला अपनी उंगली ज़ोर की दर्द की जगह रखे और तुम एक बार 'अल–हम्दु' पढ़ो और उससे दर्द का हाल पूछो। अगर अब भी रहा हो तो इसी तरह 'ब' (बे) को दबाओ। ग़रज़ इसी तरह एक–एक हर्फ़ पर अमल करो। इन्शअल्लाह हर्फ़ ख़त्म न होने पाएंगे कि दर्द जाता रहेगा।

हर क़िस्म का दर्द

दर्द चाहे जहां हो, या आयत बिस्मिल्लाह सहित पढ़कर दम करें या किसी तेल वग़ैरह पर पढ़कर मालिश करें या बा–वुज़ू लिखकर बांधें— 'बिल् हक़्क़ि अन्ज़ल्नाहु व बिल् हक़्क़ि न ज़ल व मा अर्सल्नाक इल्ला मुबश्शिरंव्व नज़ीरा० بالحق انزلناہ وبالحق نزل وما ارسلنک الا مبشرا ونذیرا

दिमाग़ का कमज़ोर होना

पांचों नमाज़ों के बाद सर पर हाथ रखकर ग्यारह बार 'या क़वीयु' (یاقوی) पढ़ो।

निगाह की कमज़ोरी

पांचों नमाज़ों के बाद 'या नूरू' (یانور) ग्यारह बार पढ़कर दोनों हाथों के पोरों पर दम करके आखों पर फेर ले।

ज़ुबान में हकलापन होना या ज़ेहन का कम होना

फ़ज्र की नमाज़ के पढ़कर एक पाक कंकरी मुंह में रखकर यह

इक्कीस बार पढ़ें—

رب اشرح لی صدری و یسرلی امری واحلل عقدۃ من لسانی یفقھوا قولی

'रब्बिशरह ली सद्री व यस्सिर ली अम्री वह्लुल उक्दतम मिल्लिसानी सफ़्क़हू क़ौली'

और रोज़ाना एक बिस्कुट पर 'अल्हम्दुलिल्लाह' (आख़िर तक) लिखकर चालीस दिन खिलाने से भी ज़ेहन बढ़ता है। الحمد للہ۔

हौल दिली

यह आयत बिस्मिल्लाह सहित लिखकर गले में बांधें। डोरा इतना लंबा रहे कि तावीज़ दिल पर पड़ा रहे और दिल बायीं तरफ़ होता है।

الذین امنوا وتطمئن قلوبھم بذکر اللہ الا بذکر اللہ تطمئن القلوب ۵

अल्लज़ीन आमनू औ तत् मइन्न कुलूबहुम बिज़िक्रिल्लाहि अला बिज़िक्रिल्लाहि तत् मइन्नुल कुलूबि०

पेट का दर्द

यह आयत पानी वग़ैरह पर तीन बार पढ़ कर पिलाएं या लिखकर पेट पर बांधें 'ला फ़ीहा ग़ोलुंव्व ला हुम अन्हा यन्ज़िफ़ून०

لا فیھا غول ولا ھم عنھا ینزفون ۵

हैज़ा और हर क़िस्म की वबा, ताऊन वग़ैरह

انا انزلنا

ऐसे दिनों में जो चीज़ खायें–पिएं, पहले तीन बार उस पर सूरः 'इन्ना अंज़ल्ना' पढ़ कर दम कर लिया करें। इन्शाअल्लाह हिफ़ाज़त रहेगी। और जिसको हो जाए उसको भी किसी चीज़ पर दम करके खिलाएं–पिलाएं, इन्शाअल्लाहु तआला शिफ़ा होगी।

तिल्ली बढ़ जाना

यह आयत बिस्मिल्लाह सहित लिखकर तिल्ली की जगह बांधें,

'ज़लिक तख़फ़ीफ़ुम मिर्रब्बिकुम व रहमतुन० (ذلك تخفيف من ربكم ورحمة)

नाफ़ टल जाना

यह आयत बिस्मिल्लाह सहित लिखकर नाफ़ की जगह बांधें, नाफ़ अपनी जगह आ जाएगी और अगर बंधा रहने दें, तो फिर न टलेगी।

ان الله يمسك السموات والارض ان تزولا ولئن زالتا ان امسكهما من احد من بعده انه كان حليما غفورا ○

इन्नल्लाह यम्सकुस्समवाति वल् अर्ज़ इन तज़ूल व लइन ज़ालता इन अम्सक हुमा मिन अहदिम मिम बअ़दिही इन्नहू कान हलीमन ग़फ़ूरा०

बुख़ार

अगर जाड़े के बग़ैर हो, यह आयत लिख कर बांधें और इसी को दम करें। 'कुल् ना या नारू कूनी बर्दव्व सलामन अला इब्राहीम० قلنا يانار كوني بردا وسلاما على ابراهيم

और अगर जाड़े से हो,

यह आयत लिख कर गले में या बाज़ू पर बांधे। 'बिस्मिल्लाहि मज्रेहा व मुर्साहा इन्न रब्बी ल ग़फ़ूरुर्रहीम० بسم الله مجريها ومرسها ان ربي لغفور رحيم

फोड़ा–फुंसी या वरम

पाक मिट्टी पिंडोल वग़ैरह चाहे खड़ा ढेला चाहे पिसी हुई लेकर उस पर यह दुआ तीन बार पढ़कर फूंक दें।

بسم الله بتربة ارضنا بريقة بعضنا ليشفى سقيمنا باذن ربنا

बिस्मिल्लाहि बितुर्बति अर्ज़िना बिरीकाति बाज़िना लियुश्फ़ा सक़ीमना बिइज़्नि रब्बिना०

और उस पर थोड़ा पानी छिड़क कर वह मिट्टी तक्लीफ़ की जगह या उसके आस–पास दिन में दो चार बार मला करें।

सांप–बिच्छू या भिड़ वग़ैरह का काट लेना

ज़रा से पानी में नमक घोल कर उस जगह मलते जाएं और 'कुल या' पूरी सूर : पढ़ कर दम करते जाएं, बहुत देर तक ऐसा ही करें।

सांप का घर में निकलना या किआसेब होना

चार क़ीले लोहे की लेकर एक–एक पर यह आयत 25–25 बार दम करके घर के चारों कोनों में ज़मीन में गाड़ दें। इन्शाअल्लाह तआला सांप उस घर में न रहेगा। यह आयत यह है— انهم يكيدون كيدا ۝ واكيد كيدا ۝ فمهل الكفرين امهلهم رويدا

इन्नहुम यकीदून के दंब्व अकीदु कैदा फ़ महहिलि काफ़िरीन अम्हिलहुम रूवैदा० इस घर में आसेब का असर भी न होगा।

बावले कुत्ते का काट लेना

انهم يكيدون ... رويدا

यही आयत जो ऊपर लिखी गयी है। 'इन्नहुम यकीदून' से 'रूवैदा' तक, एक रोटी या बिस्कुट के चालीस टुकड़ों पर लिखकर एक टुकड़ा रोज़ उस आदमी को खिला दें। इन्शाअल्लाह हुड़क न होगी।

बांझ होना

चालीस लौंगें लेकर हर एक पर सात–सात बार इस आयत को पढ़े और जिस दिन औरत पाकी का गुस्ल करे, उस दिन से एक लौंग रोज़ाना सोते वक़्त खाना शुरू कर दे और उस पर पानी न पिए और कभी–कभी मियां के साथ बैठे–उठे। आयत यह है— او كظلمت فى بحر لجى يغشه موج من فوقه موج من فوقه سحاب ظلمت بعضها فوق بعض اذا

اخرج یدہ لم یکد یراھا و من لم یجعل اللہ لہ نورًا فمالہ من نور۔

औ क ज़ुलुमातिन फ़ी बह्‌रिन लुज्जीयिन यग्शाहु मौजुन मिन फ़ौक़िही मौजुन मिन फ़ौक़िही सहाबुन ज़ुलुमातुन बअ़ज़ुहा फ़ौक़बाज़िन इज़ा अख़्रजयदहू लम यकद यराहा व मल्लम यज् अ़लिल्लाहु लहू नूरन फ़मा लहू मिन नूर०

इन्‌शाअल्लाहु तआला औलाद होगी।

हमल गिर जाना

एक तागा कुसुम का रंगा हुआ औरत के क़द के बराबर लेकर उसमें नौ गिरह लगाये और हर गिरह पर यह आयत पढ़ कर फूंके। इन्‌शाअल्लाहु तआला हमल न गिरेगा और अगर किसी वक़्त तागा न मिले तो किसी परचे पर लिखकर पेट पर बांधे। आयत यह है— واصبر وما

صبرک الا باللہ ولا تحزن علیھم ولا تک فی ضیق مما یمکرون ان اللہ مع الذین اتقوا والذین ھم محسنون

वस्बिरू व मा सबुकइल्ला बिल्लाहि व ला तहज़न अलैहिम वला तकु फ़ी ज़ौक़िम्मा यम्कुरून इन्नल्लाह मअल्लज़ीनत्तक़ी वल्लज़ीन हुम मुहसिनून०

बच्चा होने का दर्द

यह आयत एक परचे पर लिखकर पाक कपड़े पर लपेट कर औरत की बायीं रान में बांधे या शीरीनी पर पढ़ कर उसको खिलादे। इन्‌शाअल्लाह बच्चा आसानी से पैदा होगा। आयत यह है— اذا السماء انشقت

واذنت لربھا وحقت واذا الارض مدت والقت ما فیھا وتخلت واذنت لربھا وحقت۔

इज़स्समाउन शक़्क़त व अज़िनत लिरब्बिहा व हुक़्क़त इज़ल् अज़ु मुद्दत व अल्क़त मा फ़ीहा व तख़ल्लत व अज़िनत लिरब्बिहा व हुक़्क़त०

बच्चा ज़िंदा रहना

अजवाइन और काली मिर्च आधा पाव लेकर पीर के दिन दोपहर के वक़्त चालीस बार सूरः वश्शम्स इस तरह पढ़े कि हर बार के साथ दरूद शरीफ़ भी पढ़े। जब चालीस बार हो जाए, फिर एक बार दरूद शरीफ़ पढ़े और अजवाइन और काली मिर्च पर दम करके और शुरू हमल से या जब से ख़्याल हुआ हो, दूध छुड़ाने तक रोज़ाना थोड़ा-थोड़ा दोनों चीज़ों से खा लिया करे। इन्शअल्लाहु तआला औलाद ज़िन्दा रहेगी।

हमेशा लड़की होना

इस औरत का ख़ाविंद या कोई दूसरी औरत उसके पेट पर उंगली से कुंडल या गोला सत्तर बार बनाये और हार बार में 'या मतीनु' يَامَتِيْنُ कहें। इन्शाअल्लाहु तआला लड़का पैदा होगा।

बच्चे को नज़र लग जाना या रोना या रोते में डरना

'क़ुल अऊज़ु बिरब्बिल फ़ ल क़'० और 'क़ुल अऊज़ु बिरब्बिनासि'० तीन-तीन बार पढ़कर उस पर दम करे और यह दुआ लिख कर गले में डाल दे।

قل اعوذ برب الفلق اور قل اعوذ برب الناس

अऊज़ू बिकलिमातिल्लाहि ताम्माति मिन शर्रि कुल्लि शैतानिन व हाम्मतिन व ऐनिन लाम्मतिन'

इन्शाअल्लाहु सब आफ़तों से हिफ़ाज़त रहेगी।

चेचक

एक नीला गंडा सात तार का लेकर उस पर सूरः रहमान, जो सत्ताइसवें पारा के आधे पर है और जब ये आयतें कहे 'फ़बि अय्यि आलइ' उस पर दम करके एक गिरह लगाये। सूरः के ख़त्म होने तक इक्तीस गिरहें हो जाएंगी। फिर वह गंडा बच्चे के गले में डाल दें। अगर चेचक से पहले

डाल दें तो इन्शाअल्लाह चेचक से हिफ़ाज़त रहेगी। और अगर चेचक निकलने के बाद डालें तो ज़्यादा तक्लीफ़ न होगी।

हर तरह की बीमारी

चीनी की तश्तरी पर सूरः अल–हम्द और ये आयतें लिखकर बीमार को रोज़ाना पिलाया करें, बहुत ही असर की चीज़ है। आयतें ये हैं—

ويشف صدور قوم مؤمنين ۝ واذا مرضت فهو يشفين ۝ وشفاء لما في الصدور
وهدى ورحمة للمؤمنين ونـنزل من القران ما هو شفاء ورحمة
للمؤمنين ولا يزيد الظالمين الا خسارا ۝ قل هو للذين امنوا هدى وشفاء

व यशिफ़ सुदूर क़ौमिम मुअ्मिनीन व इज़ा मरिज़्त फ़हुव यशफ़ीन व शिफ़ाउल्लिमा फ़िस्सुदूरि व हुदंव्व रहमत ल्लिल मुअ्मिनीनव व नुनज़्ज़िलु मिनल् क़ुरआनि मा हुव शिफ़ाउंव्व रह्मतुल्लिल मुअ्मिनीन व ला यज़ीदुज़्ज़ालिमीन इल्ला ख़सारा० कुल हुव लिल्लज़ीन आमनू हुदंव्व शिफ़ा०

मुहताज और ग़रीब होना

इशा की नमाज़ के बाद आगे–पीछे ग्यारह बार दरूद शरीफ़ और बीच में ग्यारह तस्बीह 'या मुइज़्ज़ु (يَا مُعِزُّ) की पढ़कर दुआ किया करे और चाहे यह दूसरा वज़ीफ़ा पढ़ा लिया करे। इशा की नमाज़ के बाद पीछे सात–सात बार दरूद शरीफ़, और बीच में चौदह तस्बीह दाने 'या वह्हाबु' (يَا وَهَّابُ) पढ़ कर दुआ करे इन्शाअल्लाहु तआला फ़रागत और बरकत होगी।

आसेब लिपट जाना

इन आयतों को बीमार के कान में पढ़ कर दम करे और पानी पर पढ़कर उसको पिला दे— افحسبتم انما خلقنكم عبثا وانكم الينا لا ترجعون ۝
فتعالى الله الملك الحق لا اله الا هو رب العرش الكريم ۝ ومن يدع مع الله الها

الخ لا برهان له به فانما حسابه عند ربه انه لا يفلح الكافرون وقل رب اغفر وارحم وانت خير الراحمين

अ फ़हिसब्तुम अन्नमा ख़लक़नाकुम अ ब संव्व अन्नकुम इलैना ला तुर्जऊन० फ़ तआलल्लाहुल मलिकुल हक़्क़ु ला इलाह इल्ला हुव रब्बुल अर्शिल करीम व मंय्यद्अु मअल्लाहि इलाहन आख़र ला बुर्हान हलू बिही फ़ इन्नमा हिसाबुहू अिन्द रब्बिही इन्नहू का युफ़्लिहुल काफ़िरून० वकुर्रब्बिग़्फिर वर्हम व अन्त ख़ैरुर्राहिमीन०

और सूरः वस्समाइ वत्तारिक़ि सात बार कान में दम करना और दाहिने कान में अज़ाद दे और बायें कान में तक्बीर कहना भी आसेब को भगा देता है।

किसी तरह का काम अटकना

बाहर दिन तक हर दिन इस दुआ को बारह हज़ार बार पढ़ कर हर रोज़ दुआ किया करे। इन्शाअल्लाहु तआला कैसी ही मुश्किल काम हो पूरा हो जाएगा 'या बदीअल् अजराइबि बिल ख़ैरि या बदीअु०'

يا بديع العجائب بالخير يا بديع

देव का शुबहा होना

'क़ुल अऊज़ु बिरब्बिल फ़ ल क़'० 'क़ुल अऊज़ु बिरब्बिनासि'० तीन–तीन बार पानी पर दम करके रोगी को पिलाएं और ज़्यादा पानी पर दाम करके उस पानी में नहलायें और दुआ चालीस दिन तक रोज़ाना चीनी की तश्तरी पर लिखकर पिलाया करें—

يا حي حين لا حي في ديمومة ملكه وبقائه يا حي

या हय्युन हीन लाही फ़ी दै मूमत मुल्किही वक़ाइही या हय्युन

इन्शाअल्लाहु तआला जादू का असर जाता रहेगा और यह दुआ हर उस बीमार के लिए भी मुफ़ीद है जिसको डाक्टरों–हकीमों ने जवाब दे दिया हो।

ख़ाविंद का नाराज़ या बे–परवा रहना

इशा की नमाज़ के बाद ग्यारह दाना काली मिर्च लेकर आगे–पिछे

ग्यारह बारह दरूद शरीफ़ और दर्मियान में ग्यारह तस्बीह 'या लतीफु या व दूदु' (یا لطیف یا ودود) की पढ़ें और ख़ाविंद के मेहरबान होने का ख़्याल रखें। जब सब पढ़ चुकें, इन स्याह मिर्चों पर दम करके, तेज़ आंच में डालें और अल्लाह तआला से दुआ करे। इन्शाअल्लाहु तआला ख़ाविंद मेहरबान होगा और कम से कम चालीस दिन करें।

दूध कम होना

ये दोनों आयतें नमक पर सात बार पढ़ कर माश की दाल में खिलाएं। पहली आयत—

والوالدات یرضعن اولادھن حولین کاملین لمن اراد ان یتم الرضاعۃ

वल वालिदातु युर्ज़अन औलाद हुन्न हौलैनि कामिलैनि लिमन अराद अंय्युतिम्मर्र ज़ाअत०

दूसरी आयत

وان لکم فی الانعام لعبرۃ نسقیکم مما فی بطونہ من بین فرث ودم لبنا خالصا سائغا للشاربین۰

व इन्न लकुम फ़िल् अन्–आमि लअिब्रतन नुस्क़ीकुम मिम्मा फ़ी बुतूनिही मिम बैनि फ़र्सिन व दमिन ल ब नन ख़ालिसन साइग़ल्लिश्शारिबनि०

दूसरी आयत अगर आटे के पेड़े पर दम करके गाय व भैंस को खिलाएं, खूब दूध देती रहे।

जिनको और ज़्यादा झाड़–फूंक की चीज़ों जानने का शौक़ हो, वे हमारी किताब 'आमाले क़ुरआनी' के तीनों हिस्से और 'शिफ़ाउल् अलील' और 'ज़फ़र जलील' देख लें और इन बातों को हमेशा याद रखें, कि क़ुरआन की आयत बे–वुज़ू मत लिखो। और नहाने की ज़रूरत में पढ़ो भी मत और जिस कागज़ पर क़ुरआन की आयत लिख कर तावीज़ बनाओ तो उस कागज़ पर एक और कागज़ सादा लपेट दो ताकि तावीज़ लेने वाला अगर बे वुज़ू हो तो उसको हाथ में लेना दुरूस्त हो और चीनी की तश्तरी पर आयत लिखकर बे वुज़ू हाथ में मत दो, बल्कि तुम खुद पानी से घोल दो। जब तावीज़ काम का न रहे, उसको पानी में घोल कर किसी नदी या नहर या कुएं में छोड़ दो।

असली बहिश्ती ज़ेवर का नवां
हिस्सा ख़त्म हुआ।

(भाग-10)

बहिश्ती ज़ेवर

हज़रत मौलाना अशरफ़ अली थानवी (रह०)

विषय सूची

क्या ? कहां ?

असली बहिश्ती ज़ेवर

का

दसवां हिस्सा

بسم الله الرحمن الرحيم

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

इनमें ऐसी बातें ज़्यादा हैं, जिससे दुनिया में खुद भी आराम से रहे और दूसरों को भी इससे तक्लीफ़ न पहुंचे और ये बातें ज़ाहिर में तो दुनिया की मालूम होती हैं, लेकिन पैग़म्बर सल्ल० ने फ़रमाया है कि पूरा मुसलमान वह है जिसके हाथ और ज़ुबान से किसी को तक्लीफ़ न पहुंचे।[1] और यह भी फ़रमाया है कि मुसलमान को मुनासिब नहीं कि किसी सख़्त तक्लीफ़ में फंसकर अपने आपको ज़लील करे और यह भी आया है कि पैग़म्बर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम वाज़ में इसका ख़्याल रखते थे कि सुनने वाले उकता न जाए। और यह भी फ़रमाया है कि मेहमान इतना न ठहरे कि घर वाला तंग आ गए।

इससे मालूम हुआ कि बे-ज़रूरत तक्लीफ़ उठाना या किसी को तक्लीफ़ देना या ऐसा बर्ताव करना जिससे दूसरा आदमी उकता जाए या तंग होने लगे, यह भी दीन के ख़िलाफ़ है। इसलिए दीन की बातों के साथ ऐसी बातें भी इस किताब में लिख दी हैं, जिनसे अपने आपको और दूसरों को आराम पहुंचे।

---

1. कंज़ुल उम्माल की तक़्वीम से।

कुछ बातें सलीक़े और आराम की

1. जब रात को घर का दरवाज़ा बंद करने लगो तो बंद करने से पहले घर के अन्दर ख़ूब देखभाल लो कि कुत्ता–बिल्ली तो नहीं रह गया। कभी रात को जान का या चीज़ का नुक़्सान कर दे या और कुछ नहीं तो रात भर की खड़–खड़ ही नींद उड़ाने को बहुत है।

2. कपड़ों और अपनी किताबों को कभी–कभी धूप देती रहा करो।

3. घर साफ़ रखो और चीज़ अपने मौक़े पर रखो।

4. अगर अपनी तंदुरूस्ती चाहो तो अपने को बहुत आरामतलब न बनाओ। कुछ मेहनत का काम अपने हाथ से किया करो। सबसे अच्छी चीज़ औरतों के लिए चक्की पीसना या मूसल से कूटना या चरख़ा कातना है। इससे बदन तंदुरूस्त रहता है।

5. अगर किसी से मिलने जाओ तो वहां इतना मत बैठो या उससे इतनी देर तक बातें मत करो कि वह तंग हो जाए या इससे किसी काम में हरज होने लगे।

6. सब घर वाले इस बात के पाबंद रहें कि हर चीज़ की एक जगह तै कर लें और वहां से जब उठाएं तो बरत कर फिर वहीं पर रख दें ताकि हर आदमी को वक़्त पर पूछना–ढूंढ़ना न पड़े। और जगह बदलने से कभी–कभी किसी को भी नहीं मिलती। सबको तक्लीफ़ होती है और जो चीज़ें ख़ास तुम्हारे बरतने की हैं, उनकी जगह भी तै कर लो, ताकि ज़रूरत के वक़्त हाथ डालते ही मिल जाए।

7. राह में चारपाई या पीढ़ी या और कोई बरतन, ईंट–पत्थर–सिल वग़ैरह मत डालो। अक्सर ऐसा होता है कि अंधेरे में या कभी–कभी दिन ही में कोई झपटा हुआ रोज़ की आदत के मुताबिक़ बे–खटके चला आ रहा है, वह उलझ कर गिर गया और जगह, बे–जगह चोट लग गयी।

8. जब हमसे कोई किसी काम को कहे, तो उसको सुनकर हां या नहीं ज़रूर ज़ुबान से कुछ कह दो, ताकि कहने वाले का दिल एक तरफ़ हो जाए, नहीं तो ऐसा न कहो कि कहने वाला तो समझे कि उसने सुन लिया है और तुमने सुना न हो या वह समझे कि तुम यह काम करोगी और तुमको करना मंज़ूर न हो, तो ना–हक़ दूसरा आदमी भरोसे में रहा।

9. नमक खाने में किसी क़दर कम डाला करो, क्योंकि कम का तो

इलाज हो सकता है लेकिन अगर ज़्यादा हो गया तो उसका इलाज ही नहीं।

10. दाल में साग में, मिर्च कुतरकर मत डालो, बल्कि पीसकर डालो, क्योंकि कुतरकर डालने से बीज उसके टुकड़ों में रह जाते हैं। अगर कोई टुकड़ा मुंह में आ जाता है तो इन बीजों से तमाम मुंह में आग लग जाती है।

11. अगर रात को पानी पीने का इत्तिफ़ाक़ हो, तो अगर रोशनी हो तो उसको ख़ूब देख लो, नहीं तो लोटे वग़ैरह में कपड़ा लगा लो ताकि मुंह में कोई ऐसी–वैसी चीज़ न आ जाए।

12. बच्चों को हंसी में मत उछालो और किसी खिड़की वग़ैरह से मत लटकाओ। अल्लाह बचाये। कभी ऐसा न हो कि हाथ से छूट जाए और हंसी की गुल फंसी हो जाए। इस तरह उनके पीछे हंसी में मत दौड़ो शायद गिर पड़ें और चोट लग जाए।

13. जब बरतन खाली हो जाए तो उसको हमेशा धोकर उल्टा रखो और जब दोबारा उसको बरतना हो तो फिर उसको धो लो।

14. बर्तन ज़मीन पर रखकर, अगर इनमें खाना निकालो तो वैसे ही सेनी या दस्तरख़्वान पर मत रख दो। पहले उसके तले देख लो और साफ़ कर लो।

15. किसी के घर मेहमान जाओ तो उससे किसी चीज़ की फ़रमाइश मत करो। कभी चीज़ तो होती है बे–हक़ीक़त, मगर वक़्त की बात है। घर वाला इसको पूरी नहीं कर सकता। ना–हक़ उसको शर्मिंदगी होगी।

16. जहां और आदमी बैठे हों वहां बैठकर मत थूको, नाक मत साफ़ करो। अगर ज़रूरत हो तो एक किनारे पर जाकर फ़ारिग़ हो जाओ।

17. खाना खाने में ऐसी चीज़ों का नाम मत लो, जिससे सुनने वालों के घिन पैदा होती है। कुछ नाज़ुक मिज़ाजों को बहुत तक्लीफ़ होती है।

18. बीमार के सामने या उसके घर वालों के सामने ऐसी बातें न करो, जिससे ज़िंदगी की ना उम्मीदी पायी जाए, ना–हक़ दिल टूटेगा, बल्कि तसल्ली की बातें करो। इन्शाअल्लाहु तआला सब दुख जाता रहेगा।

19. अगर किसी की छिपी बात करनी हो और वह भी इस जगह मौजूद हो तो आंख से या हाथ से इशारा मत करो। ना–हक़ उसको शुबहा होगा और यह उस वक़्त है कि उस बात का करना शरअ से

दुरूस्त भी हो और अगर दुरूस्त न हो तो ऐसी बात ही करना गुनाह है।

20. बात करते वक़्त बहुत हाथ मत नचाओ।

21. दामन, आंचल, आस्तीन से नाक मत पोंछो।

22. पाख़ाने के क़दमचे पर तहारत[1] मत करो। आबदस्त के वास्ते एक क़दमचा अलग छोड़ दो।

23. जूती हमेशा झाड़कर पहनो, शायद उसके अंदर कोई तक्लीफ़ पहुंचाने वाला जानवर बैठा हो, इसी तरह कपड़ा–बिस्तर भी।

24. पर्दे की जगह में किसी के फोड़ा फुन्सी हो, तो उससे मत पूछो कि किस जगह है, ना–हक़ उसको शर्माना है।[2]

25. आने–जाने की जगह मत बैठो, तुमको भी और सबको भी तक्लीफ़ होगी।

26. बदन और कपड़े में बदबू पैदा न होने दो। अगर धोबी के घर के धुले हुए कपड़े न हों, तो बदन ही के कपड़ों को धो डालो और नहा डालो।

27. आदमियों के बैठे हुए झाड़ू मत दिलवाओ।

28. गुठली–छिलके किसी आदमी के ऊपर मत फेंको।

29. चाक़ू–कैंची या सूई या किसी और चीज़ से मत खेलो, शायद ग़फ़लत से कहीं लग जाए।

30. जब कोई मेहमान आए, सबसे पहले उसको पाख़ाना बतला दो और बहुत जल्दी उसके साथ की सवारी के खड़ी करने का और बैल या घोड़े के घास–चारे का इन्तिज़ाम कर दो और खाने में इतना तक्ल्लुफ़ मत करो कि उसको वक़्त पर खाना न मिले, खाना वक़्त पर पका दो, चाहे सादा और थोड़ा ही हो और उसके जाने का इरादा हो तो बहुत जल्द और सवेरे नाश्ता तैयार कर दो। मतलब यह कि उसके आराम और मस्लहत में ख़लल न पड़े।

31. पाख़ाना या ग़ुस्लख़ाना से कमरबंद बांधती हुई मत निकलो, बल्कि अन्दर ही अच्छी तरह बांधकर तब बाहर आओ।

32. जब तुमसे कोई बात पूछे, पहले उसका जवाब दे दो, फिर और

---

1. और मर्दों को पाख़ाना में न पानी ले जाना चाहिए, बल्कि ढेला ले जाए फिर ग़ुस्लखाने में आबदस्त लें।

2. यह पूछना बेकार भी है, क्योंकि यह मालूम हो गया कि पर्दे की जगह है, तो जनरल जानकारी तो हो गई, फिर ख़ामख़ाह ज़्यादा छान–बीन की क्या ज़रूरत।

काम को लगो।

33. जो बात कहो या किसी बात का जवाब दो मुंह खोलकर साफ़ बात कहो, ताकि दूसरा अच्छी तरह समझ ले।

34. किसी को कोई चीज़ हाथ में देना हो, तो दूर से मत फेंको, शायद दूसरे के हाथ में न आ सके, तो नुक़्सान हो, पास जाकर दे दो।।

35. अगर दो आदमी पढ़ते–पढ़ाते हों या बातें कर रहे हों, तो उन दोनों के बीच में आकर चिल्लाना या किसी से बात न करना चाहिए।[1]

36. अगर कोई किसी काम में या बात में लगा हो, तो जाते ही उससे अपनी बात मत शुरू करो, बल्कि मौक़े का इन्तिज़ार करो। जब वह तुम्हारी तरफ़ तवज्जोह करे, तब बात करो।

37. जब किसी के हाथ में कोई चीज़ दे देना हो, तो जब तक कि वह दूसरा आदमी उसको अच्छी तरह संभाल न ले, अपने हाथ से मत छोड़ो कभी–कभी यों ही बीच में गिरकर नुक़्सान हो जाता है।

38. अगर किसी को पंखा झलना हो तो ख़ूब ख़्याल रखो, सर में या और कहीं बदन या कपड़े में न लगे और ऐसे ज़ोर से मत झलो, जिससे दूसरा परेशान हो।

39. खाना खाने में हड्डियां एक जगह जमा रखो। इसी तरह किसी चीज़ के छिलके वग़ैरह सब तरफ़ मत फैलाओ। जब सब इकट्ठे हो जाएं, मौक़े से एक तरफ़ डाल दो।

40. बहुत दौड़कर या मुंह ऊपर उठाकर मत चलो, कभी गिर न पड़ो।

41. किताब को बहुत संभालकर एहतियात से बंद करो। अक्सर शुरू के और आख़िर के पन्ने मुड़ जाते हैं।

42. अपने शौहर के सामने किसी ना–महरम मर्द की तारीफ़ न करना चाहिए, कुछ मर्दों को ना–गवार गुज़रता है।

43. इसी तरह ग़ैर–औरतों की तारीफ़ भी शौहर से न करे, शायद उसका दिल उस पर आ जाए और उससे हट जाए।

44. जिससे बे–तकल्लुफ़ी न हो, उससे मुलाक़ात के वक़्त उसके घर का हाल या उसके माल व दौलत, ज़ेवर व पोशाक का हाल न पूछना

---

1. बल्कि ऐसे मौक़े पर सलाम भी न करो। जब वे लोग अपने काम से फ़ारिग़ होकर तुम्हारी तरफ़ तवज्जोह करें, उस वक़्त सलाम–कलाम करो।

चाहिए।

45. महीने में तीन दिन या चार दिन ख़ास इस काम के लिए मुक़र्रर कर लो कि घर की सफ़ाई पूरे तौर से कर लिया करो। जाले उतार दिए, फ़र्श उठवा कर झड़वा दिए। हर चीज़ क़रीने से रख दी।

46. किसी के सामने से कोई कागज़ लिखा हुआ या किताब रखो हुई उठाकर देखना न चाहिए। अगर वह कागज़ क़लमी है तो शायद कोई राज़ की बात लिखी हो और छिपी हुई है, तो शायद उसमें कोई ऐसा कागज़ लिखा हो।

47. सीढ़ियों पर बहुत संभल कर उतरो–चढ़ो, बल्कि बेहतर यह है कि जिस सीढ़ी पर एक पांव रखो, दूसरा भी उसी पर रखकर फिर अगली सीढ़ी पर इसी तरह पांव रखो और यह कि एक सीढ़ी पर एक पांव और दूसरी सीढ़ी पर दूसरा पांव। लड़कियों और औरतों को तो बिल्कुल मुनासिब नहीं और बचपन में लड़कों को भी मना करो।

48. जहां कोई बैठा हो, वहां कपड़ा या किताब या और कोई चीज़ इस तरह झटकना न चाहिए कि उस आदमी पर गर्द पड़े। इसी तरह मुंह से या कपड़े से भी झाड़ना न चाहिए, बल्कि उस जगह से दूर जाकर साफ़ करना चाहिए।

49. किसी के ग़म व परेशानी या दुख–बीमारी की कोई ख़बर सुने, तो जब तक ख़ूब पक्के तौर पर बात न हो जाए, किसी से ज़िक्र न करे और ख़ासकर उस आदमी के रिश्तेदारों से तो हरगिज़ न कहे, क्योंकि अगर ग़लत हुई तो ख़ामख़ाह दूसरे को परेशानी दी। फिर वे लोग उसको भी बुरा–भला कहेंगे कि क्यों ऐसी बद–फ़ाली निकाली।

50. इसी तरह मामूली बीमारी और तक्लीफ़ की ख़बर दूर परदेस के रिश्तेदारों को ख़त के ज़रिए से न करे।

51. दीवार पर मत थूको, पान की पीक मत डालो। इसी तरह तेल का हाथ दीवार या किवाड़ से मत पोंछो, बल्कि धो डालो, लेकिन जले हुए तेल को नापाक मत कहो, जैसा कि कुछ जाहिल औरतें कहती हैं।

52. अगर दस्तरख़्वान पर और सालन की ज़रूरत हो, तो खाने वाले के सामने से बरतन मत उठाओ, दूसरे बरतन में ले आओ।

53. कोई आदमी तख़्त या चारपाई पर बैठा या लेटा हो, तो उसको हिलाओ मत, अगर पास से निकलो तो इस तरह निकलो कि उसमें ठोकर–घुटना न लगे। अगर तख़्त पर कोई चीज़ रखना हो या उस पर

से कुछ उठाना हो तो ऐसे वक़्त धीरे से उठाओ और धीरे से रखो।

54. खाने–पीने की कोई चीज़ खुली मत रखो, यहां तक कि अगर कोई चीज़ दस्तरख़्वान पर भी रखी जाए, लेकिन वह ज़रा देर में या आख़िर में खाने की हो तो उसको भी ढांक कर रखो।

55. मेहमान को चाहिए कि अगर पेट भर जाए तो थोड़ा सालन–रोटी दस्तरख़्वान पर ज़रूर छोड़ दे ताकि घरवालों को यह शुबहा न हो कि मेहमान को खाना कम हो गया, इससे वह शर्मिंदा होते हैं।

56. जो बर्तन बिल्कुल खाली हो, उसको अलमारी या ताक़ वग़ैरह में रखना हो तो उल्टा करके रखो।

57. चलते में पांव पूरा उठाकर आगे रखो, घिसरा कर मत चलो। इसमें जूता भी जल्द टूटता है और बुरा भी मालूम होता है।

58. चादर–दोपट्टे का ख़्याल रखो। उसका पल्ला ज़मीन पर लटकता न चले।

59. अगर कोई नमक या और कोई खाने–पीने की चीज़ मांगे, बर्तन में लाओ, हाथ पर रख कर मत लाओ।

60. लड़कियों के सामने कोई बे-शर्मी की बात मत करो, वरना उनकी शर्म जाती रहेगी।

ऐब और तक्लीफ़ की कुछ बातें जो औरतों में पायी जाती हैं

1. एक ऐब यह है कि बात का माक़ूल जवाब नहीं देतीं, जिससे पूछने वाले को तसल्ली हो जाए। बहुत–सी फ़िज़ूल बातें इधर–उधर की मिला देती हैं और असल बात फिर भी मालूम नहीं होती। हमेशा याद रखो कि जो आदमी कुछ पूछे, उसका मतलब ख़ूब ग़ौर से समझ लो फिर उसका जवाब ज़रूरत के मुताबिक़ दे दो।

2. एक ऐब यह है कि कोई काम उनसे कहा जाए, तो सुनकर ख़ामोश हो जाती हैं। काम कहने वाले को यह शुबहा रहता है कि ख़ुदा जाने उन्होंने सुना भी है या नहीं सुना। कभी ग़लती से उसने यों समझ लिया कि सुन लिया होगा और सच तो यह है कि सुना न हो तो इस

भरोसे पर वह काम नहीं होता। और यह पूछने के वक़्त यह कहकर अलग हो गयीं कि मैंने नहीं सुना। ग़रज़ वह काम तो रह गया।

कभी ग़लती से उसने समझ लिया कि नहीं सुना होगा, इसलिए उसने दोबारा फिर कहा तो उस ग़रीब के लत्ते लिए जाते हैं कि सुन लिया, सुन लिया, क्यों जान खाती हो। मतलब यह कि उस वक़्त भी आपस में रंज होता है। अगर यह पहली ही बार इतना कह देतीं कि अच्छा, तो दूसरे को ख़बर तो हो जाती।

3. एक ऐब यह है कि मामा असील को, जो काम बतला देंगी और किसी से घर में कोई बात न कहेंगी, दूर से चिल्लाकर कहेंगी। इसमें दो ख़राबियां हैं—

एक तो बेहयाई और बे-पर्दगी कि बाहर दरवाज़े तक, बल्कि कुछ मौक़ों पर सड़क तक आवाज़ पहुंचती है।[1]

दूसरी ख़राबी यह कि दूर से कुछ बात समझ में आयी और कुछ न आयी, जितनी समझ में न आयी, उतना काम न हुआ। अब बीबी ख़फ़ा हो रही हैं कि तूने यों क्यों न किया। दूसरी जवाब दे रही हैं कि मैंने तो सुना नहीं था। ग़रज़ तू-तू, मैं-मैं हुई और काम बिगड़ा, सो अलग।

इसी तरह उनकी मामा असीलें हैं कि जिस बात का जवाब बाहर से लाएंगी, दरवाज़े से चिल्लाती हुई आयेंगी, इसमें भी कुछ समझ में आया और कुछ न आया। तमीज़ की बात यह है कि जिससे बात करनी हो, उसके पास जाओ या उसको अपने पास बुलाओ और इत्मीनान से अच्छी तरह समझा कर कह दो और समझ लो, सुन लो।

4. एक ऐब यह है कि चाहे किसी चीज़ की ज़रूरत हो या न हो, लेकिन पसंद आने की देर है। ज़रा पसंद आयी और ले ली, चाहे क़र्ज़ ही हो जाए, लेकिन कुछ परवाह नहीं और अगर क़र्ज़ भी न हुआ, तब भी अपने पैसे को इस तरह बेकार खोना कौन-सी अक़्ल की बात है। फ़िज़ूलख़र्ची गुनाह भी है। जहां ख़र्च करना हो एक तो ख़ूब सोच लो कि यहां ख़र्च करने में कोई दीन का फ़ायदा या दुनिया की ज़रूरत भी है। अगर ख़ूब सोचने से ज़रूरत और फ़ायदा मालूम हो, ख़र्च करो, नहीं तो पैसा मत खाओ और क़र्ज़ तो जहां तक हो सके, हरगिज़ मत लो, चाहे थोड़ी-सी तक्लीफ़ हो जाए।

---

1. कुछ औरतों की आवाज़ के पर्दे का बिल्कुल एहतमाम नहीं होता, हालांकि आवाज़ का पर्दा भी वाजिब है, जैसे कि चेहरे का पर्दा भी ज़रूरी है, इसलिए गुनाहगार होती हैं। हर क़िस्म के पर्दे को बहुत एहतमाम करना चाहिए।

5. एक ऐब यह है कि जब कहीं जाती हैं, चाहे शहर में या सफ़र में, टालते–टालते बहुत देरकर देती हैं कि वक़्त तंग हो जाता है, तो मंज़िल पर देर में पहुंचेगी। अगर रास्ते में रात हो गयी, जान व माल का डर है। अगर गर्मी के दिन हुए, तो धूप में ख़ुद भी तपेंगी और बच्चों को भी तक्लीफ़ होगी। अगर बरसात है, एक तो बरसने का डर, दूसरे गारे–कीचड़ में गाड़ी का चलना कठिन और देर में देर हो जाती है। अगर सवेरे से चलें, हर तरह की गुंजाइश रहे और अगर बस्ती ही में जाना हुआ, जब भी कहारों को खड़े–खड़े परेशानी।[1] फिर देर में लौटना होगा, अपने कामों का हरज होगा, खाने के इंतिज़ाम में देर होगी। कहीं जल्दी में खाना बिगड़ गया, कहीं मियां तक़ाज़ा कर रहे, कहीं बच्चे रो रहे हैं। अगर जल्दी सवार हो जाती तो ये मुसीबतें क्यों होतीं ?

6. एक ऐब यह है कि सफ़र में बे–ज़रूरत भी सामान बहुत सा लादकर ले जाती हैं, जिससे जानवर को भी तक्लीफ़ होती है, जगह में भी तंगी होती है और सबसे ज़्यादा मुसीबत साथ के मर्दों को होती है, उनको संभालना पड़ता है, कहीं–कहीं लादना भी पड़ता है। मज़दूरी के पैसे उन्हीं को देने पड़ते हैं, ग़रज़ कि तमाम फ़िक्र इन बेचारों की जान पर होती है, ये अच्छी ख़ासी गाड़ी में बेफ़िक्र बैठी रहती हैं। सामान हमेशा सफ़र में कम ले जाओ, हर तरह का आराम मिलता है।

इसी तरह रेल के सफ़र में ख़्याल रखो, बल्कि रेल में ज़्यादा सामान ले जाने से ज़्यादा तक्लीफ़ होती है।

7. एक ऐब यह है कि गाड़ी वग़ैरह में सवार होने के वक़्त मर्दों से कह दिया कि मुंह ढांक लो, एक कोने में छिप जाओ और जब सवार हो चुकीं तो उन लोगों को दोबारा इत्तिला नहीं दी जाती कि अब पर्दा नहीं। इसमें दो ख़राबियां होती हैं—

कभी तो वे बेचारे मुंह को ढांके हुए बैठे हैं, ख़ामख़ाह तक्लीफ़ हो

---

1. और इस परेशानी के अलावा कहारों का वक़्त भी बर्बाद होता है और उस वक़्त की बर्बादी की कुछ मज़दूरी नहीं दी जाती, इसलिए इस सूरत में औरतें गुनाहगार होती हैं। इत्तिफ़ाक़ से ऐसा हो भी जाए तो कहारों से ख़ता माफ़ करानी ज़रूरी है या उनको कुछ ज़्यादा मज़दूरी देकर राज़ी किया जाए और यही दूसरी सूरत ज़्यादा बेहतर है, क्योंकि ख़ता माफ़ कराने से कहार चढेंगे और उनकी आदत बिगाड़ेंगे।

रही है और कभी ऐसा होता है कि वे अटकल से समझते हैं कि बस पर्दा हो चुका और यह समझकर मुंह खोल देते हैं या सारे आ जाते हैं और बेपर्दगी होती है। यह सारी ख़राबी दोबारा न कहने की है, वरना अगर सब को मालूम हो जाए कि दोबारा कहने की भी आदत है, तो सब आदमी उसके इंतिज़ार में रहें और बे-कहे कोई सामने न आये।

8. एक ऐब यह है कि अभी सवार होने को तैयान नहीं हुई और आधा घंटा पहले से पर्दा करा दिया, रास्ता रोकवा दिया। बे-वजह ख़ुदा की मख़्लूक़ को तक्लीफ़ हो रही है और यह अभी घर में चोंचले-बघार रही हैं।

9. एक ऐब यह है कि जिस घर जाती हैं, गाड़ी या डोली से उतर कर झप से घर में जा घुसती हैं। अक्सर ऐसा होता है कि घर का कोई मर्द अंदर होता है, उसका सामना हो जाता है। तुमको चाहिए कि अभी गाड़ी या डोली से मत उतरो, पहले किसी मामा वग़ैरह को घर में भेजकर दिखवा लो और अपने आने की ख़बर कर दो, कोई मर्द वग़ैरह होगा, तो वह अलग हो जाएगा। जब सुन लो कि अब घर में मर्द वग़ैरह नहीं हैं, तब उतरकर अंदर जाओ।

10. एक ऐब यह है कि आपस में जब औरतें बातें करती हैं, अक्सर यह होता है कि एक बात ख़त्म नहीं होने पाती कि दूसरी शुरू कर देती हैं, बल्कि बहुत बार ऐसा होता है कि दोनों एकदम से बोलती हैं। वह अपनी कह रही है और यह अपनी हांक रही है, न वह इसकी सुने, न यह उसकी सुने। भला ऐसी बात करने ही से क्या फ़ायदा ? हमेशा याद रखो कि जब एक बोलने वाले की बात ख़त्म हो जाए, उस वक़्त दूसरी को बोलना चाहिए।

11. एक ऐब यह है कि ज़ेवर और कभी रूपया-पैसा भी बे-एहतियाती से कभी तकिया के नीचे रख दिया, कभी किसी ताक़ में खुला रख दिया, ताला-कुंजी होते हुए भी सुस्ती के मारे इसमें हिफ़ाज़त से नहीं रखतीं, फिर कोई चीज़ जाती रहे तो सबका नाम लगाती फिरती हैं।

12. एक ऐब यह है कि उनको एक काम के लिए भेजो, जाकर दूसरे काम में लग जाती हैं। जब दोनों से छुट्टी पाएं तब लौटती हैं। इसमें भेजने वाले को सख़्त तक्लीफ़ और उलझन होती है, क्योंकि उसने तो एक काम का हिसाब लगा रखा है कि यह इतनी देर का है। जब इतनी देर गुज़र जाती है, तो फिर उसको परेशानी शुरू होती है और यह अक़्लमंद कहती है कि आए तो हैं ही, लाओ दूसरा काम भी लगे हाथों करते चलें। ऐसा

मत करो। एक तो पहला काम करके उसकी फ़रमाइश पूरी कर दो, फिर अपने तौर पर इत्मीनान से दूसरा काम कर लो।

13. एक ऐब तो सुस्ती का है कि एक वक़्त के काम को दूसरे वक़्त पर उठा रखती हैं, इससे अक्सर हरज और नुक़्सान होता है।

14. एक ऐब यह है कि मिज़ाज में अख़्तियार नहीं और ज़रूरत और मौक़ा को नहीं देखतीं कि यह जल्दी का वक़्त है। मुख़्तसर तौर पर इस काम को निमटा लें। हर वक़्त इनको इत्मीनान और तकल्लुफ़ ही सूझता है। इस तकल्लुफ़–तकल्लुफ़ में कभी–कभी असल काम बिगड़ जाता है और मौक़ा निकल जाता है।

15. एक ऐब यह है कि कोई चीज़ खो जाए तो बे–जाने समझे किसी पर तोहमत लगा देती हैं यानी जिसने कभी कोई चीज़ चुराई थी, बे–धड़क कर दिया कि बस जी, इसी का काम है, हालांकि यह क्या ज़रूर है कि सारे ऐब एक ही आदमी ने किए हों। इसी तरह और बुरी बातों में ज़रा से सुबहे से पक्का यक़ीन करके अच्छा–ख़ासा गढ़–मढ़ देती हैं।

16. एक ऐब यह है कि पान–तम्बाकू का ख़र्च[1] इनता बढ़ा लिया है कि ग़रीब आदमी तो सहार ही नहीं सकता और अमीरों के यहां इतने ख़र्च में चार–पांच ग़रीबों का भला हो सकता है, इसको घटाना चाहिए।

ख़राबी यह है कि बे–ज़रूरत भी खाना शुरू कर देती हैं, फिर वह गंदगी लग जाती है।

17. एक ऐब यह है कि उनके सामने दो आदमी किसी मामले में बात करते हों और उनसे न कोई पूछे, न गछे, मगर यह ख़ामख़ाह दख़ल देती हैं और सलाह बताने लगती हैं। जग तक तुमसे कोई सलाह न ले, तुम बिल्कुल गूंगी–बहरी बनीं बैठी रहो।

18. एक ऐब यह है कि महफ़िल में से आकर तमाम औरतों की सूरत–शक्ल, उनके ज़ेवर, पोशाक का ज़िक्र अपने ख़ाविंद से करती हैं, भला अगर शौहर का दिल किसी पर आ गया और वह उसके ख़्याल में लग गया तो तुमको कितना बड़ा नुक़्सान[2] पहुंचेगा।

---

1. तम्बाकू अगर ऐसा हो, जिसके खाने से मुंह में बदबू आने लगे, तो उसका खाना, फ़िज़ूलख़र्ची के अलावा बदबू की वजह से भी मकरूह है।

2. और अगर उसने तुम्हारी उस तारीफ़ करने की वजह से कोई ना–जायज़ काम किया, ज़िना वग़ैरह, तो इस गुनाह की वजह बन जाने का गुनाह तुमको भी होगा।

19. एक ऐब यह है कि उनको किसी से कोई बात करना हो, तो वह दूसरा आदमी चाहे कैसे ही काम में हो, या वह कोई बात कर रहा हो, कभी इंतिज़ार न करेंगी कि उसका काम या बात ख़त्म हो तो हम बात करें, बल्कि उसकी बात या काम के बीच में जाकर टांग अड़ा देती हैं। यह बुरी बात है ज़रा ठहर जाना चाहिए। जब वह तुम्हारी तरफ़ मुतवज्जह हो सके उस वक़्त बात करो।

20. एक ऐब यह है कि हमेशा बात अधूरी करेंगी। पैग़ाम अधूरा पहुंचा देंगी, जिससे मतलब ग़लत समझा जाएगा। कभी–कभी इसमें काम बिगड़ जाता है और कभी दो आदमियों में इस ग़लती से रंज होता है।

21. एक ऐब यह है कि उनसे बात की जाए तो पूरे तौर से मुतवज्जह होकर उसे नहीं सुनतीं। इसी में और काम भी कर लिया, किसी और से भी बात कर ली। न तो बात करने वाले का बात करके जी बहला होता है और न उस काम के होने का पूरा भरोसा होता है। क्योंकि जब पूरी बात सुनी नहीं तो उसको करेंगी किस तरह।

22. एक ऐब यह है कि अपनी ख़ता या ग़लती का भी इक़रार न करेंगी, जहां तक हो सकेगा, बात को बना देंगी, चाहे बन सके या न बन सके।

23. एक ऐब यह है कि कहीं से थोड़ी–सी चीज़ उनके हिस्से की आयेगी मामलू दर्जे की चीज़ आये तो उसको नाक मारें, ताना देंगी। ऐसी चीज़ भेजने की ज़रूरत क्या थी ? भेजते हुए शर्म न आयी। यह बुरी बात है, उसकी इतनी ही हिम्मत थी। तुम्हारा तो इसने कुछ नहीं बिगाड़ा और ख़ाविंद के साथ भी उनकी यही आदत है कि खुश होकर चीज़ कम लेती हैं, उसको कह करके ऐब निकाल कर तब क़ुबूल करती हैं।

24. एक ऐब यह है कि उनको कोई काम कहो, उसमें झिक–झिक कर लेंगी फिर उस काम को करेंगी। भला जब वह काम करना ही है तो इसमें वाहियात बातों से क्या फ़ायदा निकला, ना–हक़ दूसरे का भी जी बुरा किया।

25. एक ऐब यह है कि कपड़ा पूरा सिल जाने से पहले पहन लेती हैं। कभी सूई चुभ जाती है, बे–ज़रूरत तक्लीफ़ में क्यों पड़ें।

26. एक ऐब यह भी है कि आने के वक़्त और चलने के वक़्त मिलकर ज़रूर रोती हैं, चाहे रोना न भी आये। मगर इस डर से रोती हैं कि कोई यों न कहे कि इसको मुहब्बत नहीं।

27. एक ऐब यह है कि अक्सर तकिया में या वैसे ही सूई रखकर उठकर चली जाती हैं और कोई बे–ख़बरी में आ बैठता है, उसके चुभ जाती है।

28. एक ऐब यह है कि बच्चों को गर्मी–सर्दी से नहीं बचातीं, इससे अक्सर बच्चे बीमार हो जाते हैं, फिर तावीज़–गंडे कराती फिरती हैं या दवा–इलाज, आगे कोई एहतियात फिर भी नहीं करती।

29. एक ऐब यह है कि बच्चों को बे–भूख खाना खिला देती हैं या मेहमान को इस्रार करके खिलाती हैं, फिर बे–भूख खाने की तक्लीफ़ उन्हें भुगतनी पड़ती है।

तजुर्बे और इंतिजाम की कुछ बातें

1. अपने दो लड़कों की या दो लड़कियों की शादी जहां तक हो सके, एकदम मत करो, क्योंकि बहुओं में ज़रूर फ़र्क़ होगा, दामादों में ज़रूर फ़र्क़ होगा। खुद लड़कों और लड़कियों की सूरत व शक्ल में, कपड़े की सजावट में, रंग व रौनक़ में, हया व शर्म में फ़र्क़ ज़रूर होगा। और भी बहुत–सी बातों में फ़र्क़ हो जाता है और लोगों की आदत है ज़िक्र–मज़्कूर करने की, और एक को घटाने की और दूसरे को बढ़ाने की। इससे ना–हक़ दूसरे का जी बुरा होता है।

2. हर किसी पर इत्मीनान मत कर लिया करो, किसी के भरोसे घर मत छोड़ जाया करो। ग़रज़ जब तक किसी को हर तरह के बर्ताव से, ख़ूब आज़मा न लो, उसका एतबार न करो, ख़ासकर अक्सर शहरों में बहुत सी औरतें हज्जिन बनी हुई काबे का ग़िलाफ़ लिए हुए और कोई तावीज़–गंडे झाड़–फूंक करती हुई, कोई फ़ाल देखती हुई, कोई तमाशा लिए हुए घरों में घुसती–फिरती हैं, इनको तो घर ही में मत आने दो, दरवाज़े ही से रोक दो। ऐसी औरतों ने बहुत–से घरों की सफ़ाई कर दी है।

3. कभी संदूक़ची या पानदान, जिसमें रूपया–पैसा, गहना, ज़ेवर रखती रहती हो, खुला छोड़कर मत उठो। ताला लगाकर या अपने साथ लेकर उठो।

4. जहां तक हो सके, सौदा क़र्ज़ मत मंगाओ, जो बहुत मजबूरी से मंगाना ही पड़े, तो दाम पूछकर तारीख़ के साथ लिख लो और जब दाम हों, तुरन्त दे दो।

5. धोबिन के कपड़े, पिसनहारी का अनाज और पिसाई सबका हिसाब लिखती रहो, ज़ुबानी याद का भरोसा मत करो।

6. जहां तक हो सके घर का ख़र्च बहुत किफ़ायत और इन्तिज़ाम से उठाओ, बल्कि जितना ख़र्च तुमको मिले, उसमें से कुछ बचा लिया करो।

7. जो औरतें बाहर से घर में आयी करती हैं, उनके सामने कोई बात मत किया करो, जिसका तुमको दूसरी जगह मालूम कराना मन्ज़ूर नहीं, क्योंकि ऐसी औरतें घरों की बातें दस घर में जाकर कहा करती हैं।

8. आटा–चावल अटकल से मत पकाओ अपने ख़र्च का अन्दाज़ा करके दोनों वक़्त सब चीज़ें नाप–तौल कर ख़र्च करो। अगर कोई तुमको ताना दे, कुछ परवाह मत करो।

9. जो लड़कियां बाहर निकलती हैं, उनको ज़ेवर बिल्कुल मत पहनाओ, इसमें जान व माल दोनों का डर है।

10. अगर कोई मर्द दरवाज़े पर आकर तुम्हारे शौहर या बाप–भाई से अपनी मुलाक़ात या दोस्ती या किसी क़िस्म की रिश्तेदारी का ताल्लुक़ ज़ाहिर करे, हरगिज़ उसको घर में मत बुलाओ यानी पर्दा करके भी उसको मत बुलाओ और न कोई क़ीमती चीज़ उसके क़ब्ज़े में दो। ग़ैर आदमी की तरह खाना वग़ैरह भेज दो। ज़्यादा मुहब्बत व इख़्लास मत करो। जब तक तुम्हारे घर का कोई मर्द उसको पहचान न ले। इसी तरह ऐसे आदमी की भेजी हुई चीज़ हरगिज़ मत बरतो। अगर वह बुरा माने, कुछ ग़म न करो।

11. इसी तरह कोई अन्जान औरत डोली वग़ैरह के साथ कहीं से आकर कहे कि मुझको फ़्लाने घर से आपको बुलाने को भेजा है, हरगिज़ उसके कहने से डोली पर मत सवार हो। मतलब यह कि अन–जाने आदमियों के कहने से कोई काम मत करो, न उसको अपने घर की कोई चीज़ दो, चाहे वह मर्द हो चाहे औरत हो, चाहे वह अपने नाम से ले या दूसरे के नाम से मांगे।

12. घर के अन्दर ऐसा कोई पेड़ मत रहने दो, जिसके फल से चोट लगने का डर है जैसे कैथ का पेड़।

13. कपड़ा सर्दी में ज़रा ज़्यादा पहनो। अक्सर औरतें बहुत कम कपड़ा पहनती हैं, कहीं ज़ुकाम हो जाता है, कहीं बुख़ार आ जाता है।

14. बच्चों को मां–बाप, बल्कि दादा का नाम भी याद करा दो और कभी–कभी पूछती रहा करो, ताकि उसको याद रहे। इसमें यह फ़ायदा है

कि अगर ख़ुदा–न–करे बच्चा कभी खो जाए और कोई उससे पूछे, तू किसका लड़का है, तेरे मां–बाप कौन हैं, तो अगर बच्चे को नाम याद होंगे तो बतला तो देगा, फिर कोई न कोई तुम्हारे पास उसको पहुंचा देगा और अगर याद न हुआ तो पूछने पर इतना ही कहेगा कि मैं अम्मा का हूं, मैं अब्बा का हूं। यह ख़बर नहीं कि अब्बा कौन, अम्मा कौन ?

15. एक जगह एक औरत अपना बच्चा छोड़कर कहीं काम को चली गयी। पीछे एक बिल्ली ने आकर उसको इतना नोचा कि इसी में जान गयी। इससे दो बातें मालूम हुईं—

एक तो यह कि बच्चे को कभी तन्हा नहीं छोड़ना चाहिए,

दूसरे यह कि बिल्ली–कुत्ते जानवर का कुछ भरोसा नहीं।

कुछ औरतें बेवक़ूफ़ी करती हैं कि बिल्लियों को साथ सुलाती हैं, भला उसका क्या भरोसा। अगर रात को कहीं धोखे में पंजा या दांत मार दे या नरख़रा पकड़ ले तो क्या कर लोगी।

16. दवा हमेशा पहले डाक्टर को दिखा लो और उसको ख़ूब साफ़ कर लो, कभी ऐसा होता है कि अनाड़ी पंसारी दवा कुछ की कुछ दे देता है। कभी उसमें ऐसी कोई चीज़ मिली होती है कि उसकी तासीर अच्छी नहीं होती और जो दवा किसी बोतल या डिबिया या पुड़िया में बच जाए उसके ऊपर एक काग़ज़ की चिट लगाकर उस दवा का नाम लिख दो। कई बार ऐसा होता है कि किसी को उसकी पहचान नहीं रही, इसलिए चाहे कितनी ही लागत की हुई, मगर फेंकना पड़ी और कभी ग़लत याद रही। और उसको दूसरी बीमारी में ग़लती से बरत लिया और उसने नुक़सान किया।

17. लिहाज़ की जगह से क़र्ज़ मत लो और ज़्यादा क़र्ज़ भी मत दो, इतना दो कि अगर वसूल न हो तो तुमको भारी न मालूम हो।

18. जो कोई बड़ा या नेक काम करो, पहले तो किसी समझदार, दीनदार, भला चाहने वाले आदमी से मश्विरा ले लो।

19. अपना रूपया–पैसा, माल व सामान छिपाकर रखो, हर किसी से उसका ज़िक्र न करो।

20. जब किसी को ख़त लिखो, पता पूरा और साफ़ लिखो और अगर उसी जगह फिर लिखो तो यों न समझो कि पहले ख़त में पता लिख दिया था, अब क्या ज़रूरी है, क्योंकि पहला ख़त ख़ुदा जाने है या नहीं। अगर न हुआ तो दूसरे आदमी को कैसी परेशानी होगी, शायद उसको ज़ुबानी भी

याद न रहा हो, या अनपढ़ होने की वजह से लिखने वाले को न बतला सके।

21. अगर रेल का सफ़र करना पड़े तो अपना टिकट बड़ी हिफ़ाज़त से रखो या अपने मर्दों[1] के पास रखो और गाड़ी में ग़ाफ़िल होकर ज़्यादा मत सोओ, न किसी औरत मुसाफ़िर से अपने दिल के भेद कहो, न अपने अस्बाब और ज़ेवर का उससे ज़िक्र करो। किसी की दी हुई चीज़, पान–पत्ता, मिठाई, खाना वग़ैरह कुछ मत खाओ और ज़ेवर पहनकर रेल में मत बैठो, बल्कि उतारकर संदूक़चा वग़ैरह में रख लो। जब मंज़िल पर पहुंचकर घर जाओ, उस वक़्त जो चाहो, पहन लो।

22. सफ़र में कुछ ख़र्च ज़रूर अपने पास रखो।

23. बावले आदमी को मत छेड़ो, न उससे बात करो। जब उसको होश नहीं, ख़ुदा जाने क्या कह बैठे या क्या कर गुज़रे, फिर ना–हक़ तुमको शर्मिंदगी और रंज हो।

24. अंधेरे में नंगा पांव कहीं मत रखो, अंधेरे में कहीं हाथ मत डालो, पहले चिराग़ की रोशनी ले लो, फिर हाथ डालो।

25. अपना भेद हर किसी से मत कहो। कुछ लोग ओछों से भेद कहकर फिर मना कर देते हैं कि किसी से कहना मत। इससे ऐसे आदमी और भी कहा करते हैं।

26. ज़रूरी दवाएं हमेशा अपने घर में रखो।

27. हर काम का पहले अंजाम सोच लिया करो, उस वक़्त शुरू करो।

28. चीनी और शीशे के बर्तन और सामान भी बे–ज़रूरत ज़्यादा मत ख़रीदो कि उसमें बड़ा रुपया बर्बाद होता है।

29. अगर औरतें रेल में बैठें और अपने साथ के मर्द दूसरी जगह बैठें हों, तो जिस स्टेशन पर उतरना हो, रेल पहुंचने के वक़्त उस स्टेशन का नाम सुनकर या तख़्ते पर लगा हुआ देखकर उतरना न चाहिए। कुछ शहरों में दो स्टेशन होते हैं, शायद उनके साथ का मर्द दूसरे स्टेशन पर उतरे और यह यहां उतर पड़ें तो दोनों परेशान होंगे या मर्द की आंख लग गयी हो और वह यहां न उतरा और यह, उतरीं तब भी मुसीबत होगी, बल्कि जब अपने घर का मर्द आ जाए, तब उतरें।

30. सफ़र में लिखी–पढ़ी औरतें ये चीज़ें भी साथ रखें—एक किताब मसअलों की, पेंसिल, काग़ज़, थोड़े से कार्ड, वुज़ू का बर्तन।

---

1. सुना है रेल वालों ने कानून बना दिया है, अपना टिकट अपने पास रखो।

31. सफ़र में जाने वालों से, जहां तक मुम्किन हो, कोई फ़रमाइश न करो कि फ़लां जगह से यह ख़रीद लाना। हमारी फ़लां चीज़ फ़लां जगह रखी है, तुम अपने साथ लेते आना या ये अस्बाब लेते जाओ, फ़लाने को पहुंचा देना या यह ख़त फ़लाने को दे देना, इन फ़रमाइशों से अक्सर दूसरे आदमी को तक्लीफ़ होती है और अगर दूसरा बे–फ़िक्र हुआ तो उसके भरोसे पर रहने से तुम्हारा नुक़्सान होगा। कार्ड तो पंद्रह पैसे में जहां चाहो भेज दो और चीज़ रेल से मंगा सकती हो या वह चीज़ अगर यहां मिल सकती हो तो महंगी भी ले सकती हो। अपनी थोड़ी–सी बचत के वास्ते दूसरों को परेशान करना बेहतर नहीं, कभी काम होता तो है ज़रा–सा, मगर उसके बंदोबस्त में बहुत उलझन होती है और अगर बहुत ही मजबूरी आ पड़े तो चीज़ के मंगाने से पहले दाम भी दे दो और अगर रेल से आए जाए तो कुछ ज़्यादा दाम दे दो कि शायद उसके पास खुद अपना सामान भी हो और सब मिलकर तौलने के क़ाबिल हो जाए।

32. रेल में या वैसे कहीं सफ़र में अनजान आदमी के हाथ की दी हुई चीज़ कभी न खाओ। कुछ बदमाश क़िस्म के लोग कुछ ज़हर या नशा खिलाकर माल व सामान ले भागते हैं

33. रेल की जल्दी में इसका ख़्याल रखो कि जिस दर्जे का टिकट तुम्हारे पास है, उससे बड़े किराए के दर्जे में मत बैठ जाओ।

34. सिलाई करते वक़्त अगर कपड़े में सूई अटक जाए तो उसे दांत से पकड़कर मत खींचो। कभी टूट कर या फिसल कर तालू में घुस जाती है।

35. एक नहरनी नाख़ुन काटने को ज़रूर अपने पास रखो। अगर वक़्त–बे–वक़्त नाइन को देर होगी, तो अपने हाथ से नाख़ुन काटने का आराम मिलेगा।

36. बनी हुई दवा कभी मत इस्तेमाल करो। जब तक उसका पूरा नुस्ख़ा किसी तजुर्बेकार–समझदार हकीम या डाक्टर को दिखलाकर इजाज़त न ले ली जाए, ख़ासकर आंखों में तो कभी ऐसी–वैसी दवा हरगिज़ न डालना चाहिए।

37. जिस काम का पूरा भरोसा न हो, उसमें दूसरे को कभी भरोसा न दो, वरना तक्लीफ़ और रंज होगा।

38. किसी की मस्लहत में दख़ल और इस्लाह न दो, हां, जिस पर पूरा भरोसा हो या जो खुद पूछे, वहां कुछ डर नहीं।

39. किसी को ठहराने या खाना खिलाने पर ज़्यादा ज़िद न करे,

कभी तो इसमें दूसरे को उलझन और तक्लीफ़ होती है। ऐसी मुहब्बत से क्या फ़ायदा, जिसका अन्जाम नफ़रत और इल्ज़ाम हो।

40. इतना बोझ मत उठाओ जो मुश्किल से उठे। हमने बहुत आदमी देखे हैं कि लड़कपन में उठा लिया और कुछ न कुछ बिगाड़ पड़ गया, जिससे सारी उम्र की तक्लीफ़ खड़ी हो गयी। ख़ासकर लड़कियां और औरतें बहुत एहतियात रखें, उनके बदन के जोड़, रग–पट्ठे और भी कमज़ोर और नर्म होते हैं।

41. सुआ या सूई या ऐसी कोई चीज़ छोड़कर मत उठो, शायद कोई भूले से उस पर आ बैठे और वह उसके चुभ जाए।

42. आदमी के ऊपर से कोई चीज़ वज़न की या ख़तरे की मत दो और खाना–पानी भी किसी के ऊपर से मत दो, शायद हाथ से छूट जाए।

43. किसी बच्चा या शागिर्द को सज़ा देना हो तो मोटी लकड़ी या लात–घूंसे से मत मारो। अल्लाह बचाए, अगर कहीं नाज़ुक जगह चोट लग जाए तो लेने के देने पड़ जाएं और चेहरे और सर पर भी मत मारो।

44. अगर कहीं मेहमान जाओ और खाना खा चुकी हो तो जाते ही घरवालों को इत्तिला कर दो, क्योंकि वे लिहाज़ के मारे खुद पूछेंगे नहीं, तो चुपके–चुपके फ़िक्र करेंगे, चाहे वक़्त हो या न हो। उन्होंने तक्लीफ़ झेलकर खाना पकाया, जब सामने आया तो तुमने कह दिया कि 'हमने खा लिया।' उस वक़्त उनको कितना अफ़सोस होगा, तो पहले ही से क्यों न कह दो। इसी तरह कोई दूसरा तुम्हारी दावत करे या तुमको ठहराये तो घरवालों से इजाज़त लो। अगर ऐसी ही मस्लहत हो जिससे तुमको खुद मंज़ूर करना पड़े तो घरवाले को ऐसे वक़्त इत्तिला कर दो कि वह खाने–पकाने का सामान न करे।

45. जो जगह लिहाज़ और तकल्लुफ़ की हो वहां ख़रीदने–बेचने का मामला मुनासिब नहीं, क्योंकि ऐसी जगह पर न बात साफ़ हो सकती है, तक़ाज़ा हो सकता है। एक दिल में कुछ समझता है, दूसरा कुछ समझता है, अन्जाम अच्छा नहीं।

46. चाक़ू वग़ैरह से दांत मत कुरेदो।

47. पढ़ने वाले बच्चों को दिमाग़ की, ताक़त की ग़िज़ा हमेशा खिलाती रहो।

48. जहां तक मुम्किन हो, रात को तंहा मकान में मत रहो, ख़ुदा जाने क्या मौक़ा पड़े और मजबूरी की और बात है। कुछ लोग यों ही मर

कर रह गये और कई-कई दिन तक लोगों को ख़बर नहीं हुई।

49. छोटे बच्चों को कुंए पर मत चढ़ने दो, बल्कि अगर घर में कुवां हो तो उस पर तख़्ता डलवा कर हर वक़्त ताला लगाये रखो और उनको लोटा देकर पानी लाने के लिए कभी मत भेजो, शायद वहां जाकर खुद की कुएं से डोल खींचने लगें।

50. पत्थर, सिल, ईंट बहुत दिनों तक, जो एक जगह रखी रहती है, अक्सर उसके नीचे बिच्छू वग़ैरह पैदा हो जाते हैं। उसको यकायक मत उठा लो, ख़ूब देख-भाल कर उठाओ।

51. जब बिछौने पर लेटने लगो तो उसको किसी कपड़े से फिर झाड़ लो, शायद कोई जानवर उस पर चढ़ गया हो।

52. रेशमी और ऊनी कपड़ों की तहों में नीम की पत्ती और काफ़ूर रख दिया करो, इससे कीड़ा नहीं लगता।

53. अगर घर में कुछ रूपए-पैसे दबाकर रखो तो एक दो आदमी घर के, जिन पर तुमको पूरा भरोसा हो, उनको भी बतला दो। एक जगह एक औरत पांच सौ रूपए मियां की कमाई के दबाकर मर गयी, जगह ठीक किसी को मालूम नहीं थी। सारे घर को खोद डाला कहीं पता न लगा। मियां ग़रीब आदमी था, ख़्याल करो कैसा सद्मा हुआ होगा।

54. कुछ आदमी ताला लगाकर कुंजी भी इधर-उधर पास ही रख देते हैं। यह बड़ी ग़लती की बात है।

55. मिट्टी का तेल बहुत नुक़्सान करता है, उसको न जलाने दें। और चिराग़ में बत्ती अपने हाथ से बनाकर डालें, जो न बहुत पतली हो, और न बहुत मोटी हों। कुछ मामाएं, बे-तमीज़ बहुत मोटी बत्ती डालती हैं, मुफ़्त में दोगुना-तिगुना तेल बरबाद आ सकता है और चिराग़ में बत्ती उकसाने के लिए पाबंदी के साथ एक लकड़ी या लोहे-पीतल का तार ज़रूर रखें, वरना उंगली ख़राब करना पड़ती है। चिराग़ गुल क़रते वक़्त एहतियात रखें। उस पर ऐसा हाथ न मारें कि चिराग़ ही आ पड़े, बल्कि उसके लिए पंखा या कपड़ा मुनासिब है और मजबूरी को मुंह से बुझा दें।

56. रात के वक़्त रूपया वग़ैरह गिनना हो तो धीरे गिनो कि आवाज़ न हो, इसके हज़ारों दुश्मन हैं।

57. जलता चिराग़ अकेले मकान में छोड़कर जाओ। इसी तरह दियासलाई सुलगती हुई वैसी ही मत फेंक दो। उसको या तो बुझाकर फेंको या फेंक कर जूती वग़ैरह में मल डालो ताकि उसमें बिल्कुल चिंगारी

न रहे।

58. बच्चों को दियासलाई से या आग से या आतशबाज़ी से हरगिज़ खेलने मत दो। हमारे पड़ोस में एक लड़का दियासलाई खींच रहा था, कुरते में आग लग गयी तमाम सीना जल गया। एक जगह आतशबाज़ी से एक लड़के का हाथ उड़ गया।

59. पाख़ाना वग़ैरह में चिराग़ ले जाओ तो बहुत एहतियात रखो, कहीं कपड़ों में न लग जाए। बहुत आदमी इस तरह जल चुके हैं, ख़ासकर मिट्टी का तेल तो और भी ग़ज़ब है।

बच्चों की एहतियात का बयान

1. हर दिन बच्चे का हाथ, मुंह, गला, कान, चड्ढे[1] वग़ैरह गीले कपड़े से ख़ूब साफ़ कर दिया करें। मैल जमने से गोश्त गलकर घाव पड़ जाते हैं।

2. जब बच्चा पेशाब–पाख़ाना करे, तुरन्त पानी से पाक कर दिया करें, खाली चीथड़े से पोंछने पर बस न किया करें, इससे बच्चे के बदन में खुजली और जलन पैदा हो जाती है। अगर मौसम ठंडा हो तो पानी आधा गर्म कर लें।

3. बच्चे को अलग सुला दें और हिफ़ाज़त के लिए दोनों तरफ़ की पट्टियों से दो चारपाइयां मिलाकर बिछाएं या उसकी दोनों करवट पर दो तकिए रख दें, ताकि गिर न पड़े। पास सुलाने में यह डर है कि शायद सोते में कहीं करवट के तले दब जाए। हाथ–पांव नाज़ुक तो होते ही हैं। अगर सदमा पहुंच जाए, ताज्जुब नहीं। एक जगह इसी तरह एक बच्चा रात को दब गया, सुबह को मरा हुआ मिला।

4. झूले की ज़्यादा आदत बच्चे को न डालें, क्योंकि झूला हर जगह नहीं मिलता और बहुत गोद में भी न रखें, इससे बच्चा कमज़ोर हो जाता है।

5. छोटे बच्चे को आदत डालें कि वह सबके पास आ जाया करे। एक आदमी के पास ज़्यादा हिल जाने से अगर वह आदमी मर जाए या नौकरी से छुड़ा दिया जाए तो बच्चे को मुसीबत हो जाती है।

---

1. यानी जंगासे।

6. अगर बच्चे को अन्ना का दूध पिलाना हो, तो ऐसी अन्ना तज्वीज़ करना चाहिए, जिसका दूध अच्छा हो और जवान हो और दूध उसका ताज़ा हो। यानी उसका बच्चा छः सात महीने से ज़्यादा का न हो और वह आदत की अच्छी हो और दीनदार हो। बेवक़ूफ़, बेशर्म, बद–चलन, कंजूस, लालची न हो।

7. जब बच्चा खाना खाने लगे तो अन्ना और खिलाई पर बच्चे का खाना न छोड़ें। बल्कि खुद अपने या अपने किसी सलीक़दार एतबार वाले आदमी के सामने खाना खिलाया करें ताकि बे–अंदाज़ा खाकर बीमार न हो जाए और बीमारी में दवा भी अपने सामने बनवाएं, अपने सामने पिलाएं।

8. जब कुछ समझदार हो जाए तो उसको अपने हाथ से खाने की आदत डालें और खाने से पहले हाथ धुलवा दिया करें और दाहिने हाथ से खाना सिखलाएं और उसको कम खाने की आदत डालें ताकि बीमारी और मर्ज़ से बचा रहे।

9. मां–बाप खुद भी ख़्याल रखें और जो मर्द या औरत बच्चे पर मुक़र्रर हो, वह भी ख़्याल रखे कि बच्चा हर वक़्त साफ़–सुथरा रहे, जब हाथ–मुंह मैला हो जाए, धुला दे।

10. अगर मुम्किन हो तो हर वक़्त कोई बच्चे के साथ लगा रहे। खेल–कूद के वक़्त इसका ध्यान रखे। बहुत दौड़ने–कूदने न दे, ऊंचे मकान पर ले जाकर न खिलाए, भले–मानुषों के बच्चों के साथ खिलाए। कमीनों के बच्चों के साथ न खेलने दे। ज़्यादा बच्चों में न खेलने दे। गलियों, सड़कों में न खेलने दे। बाज़ार वग़ैरह में उसको न लिए फिरे। उसकी हर बात को देखकर हर मौक़े के मुनासिब उसको आदाब व क़ायदा सिखलाए। बे–जा बातों से उसको रोके।

11. खिलाई की ताकीद कर दें कि उसको ग़ैर–जगह कुछ न खिलाए। अगर कोई उसको खाने–पीने की चीज़ दे तो घर लाकर मां–बाप के सामने रख दे। आप ही आप न खिला दे।

12. बच्चे को आदत डालें कि अपने बुज़ुर्गों के अलावा और किसी से कोई चीज़ न मांगे और न बग़ैर इजाज़त किसी की चीज़ लें।

13. बच्चे का बहुत लाड–प्यार न करें, वरना बिगड़ जाएगा।

14. बच्चे को बहुत तंग कपड़े न पहनाएं और बहुत गोटा–किनारी भी न लगाएं, हां, ईद–बक़रीद में हरज नहीं।

15. बच्चे को मंजन–मिस्वाक की आदत डालें।

16. इस किताब के सातवें हिस्से में जो आदाब और क़ायदे खाने-पीने के, बोलने-चालने के, मिलने-जुलने के, उठने-बैठने के लिखे गए हैं, उन सबकी आदत बच्चे को डालें। इस भरोसे में न रहें कि बड़ा होकर आप सीख जाएगा उसको उस वक़्त पढ़ा देंगे। याद रखो आप ही कोई नहीं सीखा करता और पढ़ने से जान तो जाता है, मगर आदत नहीं पड़ती और जब तक नेक बातों की आदत न हो, कितना ही कोई पढ़ा हो, हमेशा उससे बे-तमीज़ी, ना-लायक़ी और दिल दुखाने की बातें ज़ाहिर होती हैं और कुछ पांचवें हिस्से के और नवें हिस्से के ख़त्म के क़रीब बच्चों के बारे में लिखा गया है। वहां देखकर इन बातों का भी ख़्याल रखें।

17. पढ़ने में बच्चे पर बहुत मेहनत न डाले, शुरू में एक घंटा पढ़ने का मुक़र्रर करे, फिर दो घंटे, फिर तीन घंटे, इसी तरह उसकी ताक़त और सहारे के मुताबिक़ उससे मेहनत लेता रहे, ऐसा न करे कि सारा दिन पढ़ाता रहे। एक तो थकन की वजह से बच्चा जी चुराने लगेगा, फिर ज़्यादा मेहनत से दिल और दिमाग़ ख़राब होकर ज़ेहन और याददाश्त में गड़बड़ हो जाएगी और बीमारों की तरह सुस्त रहने लगेगा, फिर पढ़ने में जी न लगाएगा।

18. मामूली छुट्टियों के अलावा, सख़्त ज़रूरत के बग़ैर बार-बार छुट्टी न दिला दें कि उससे तबियत उचाट हो जाती है।

19. जहां तक मिले, जो इल्म व फ़न सिखाएं, ऐसे आदमी से सिखलाएं जो उसमें पूरा आलिम व कामिल हो। कुछ आदमी सुस्त उस्ताद रखकर उससे तालीम दिलवाते हैं, शुरू ही से तरीक़ा बिगड़ जाता है, फिर दुरुस्ती मुश्क़िल हो जाती है।

20. आसान सबक़ हमेशा तीसरे पहर के वक़्त मुक़र्रर करें और मुश्किल सबक़ सुबह को, क्योंकि आख़िरी वक़्त में तबियत थकी हुई होती है, मुश्किल सबक़ से घबरायेगी।

21. बच्चों को, ख़ासतौर से लड़कियों को पकाना और सीना ज़रूर सिखाएं।

22. शादी में दुल्हा-दूल्हन की उम्र में ज़्यादा फ़र्क़ होना बहुत सी ख़राबियों का सबब है और बहुत कम-उम्री में शादी न करें, इसमें भी बड़े नुक़्सान हैं। लड़कों को यह सिखलाओ कि सबके सामने ख़ासकर लड़कियों या औरतों के सामने ढेले से इस्तिन्जा न सुखाया करें।

नेकियों और नसीहतों की कुछ बातें

1. पुरानी बात का किसी को ताना देना बुरी बात है। औरतों को ऐसी बुरी आदतें हैं कि जिन रंजों की सफ़ाई और माफ़ी भी हो चुकी है, जब कोई नयी बात होगी, फिर उन रंजों के ज़िक्र को लेकर बैठेंगी। यह गुनाह भी है और इससे दिलों में दोबारा रंज व गुबार भी बढ़ जाता है।

2. अपनी ससुराल की शिकायत हरगिज़ मैके में जाकर मत करो। कुछ शिकायत गुनाह भी है और बे–सब्री की भी बात है और अक्सर इससे दोनों तरफ़ रंज भी बढ़ जाता है। इसी तरह ससुराल में जाकर मैके की तारीफ़ या वहां की बुराई मत करो, इसमें भी कभी–कभी फ़ख़्र व घमंड का गुनाह हो जाता है, और ससुराल वाले समझते हैं कि हमको बहू बे–क़द्र समझती है, इससे वह भी उसकी बे–क़द्री करने लगते हैं।

3. ज़्यादा बकवास की आदत मत डालो, वरना बहुत सी बातों में कोई न कोई बात ना–मुनासिब ज़रूर ही निकल जाती है, जिसका अन्जाम दुनिया में रंज और आख़िरत में गुनाह होता है।

4. जहां तक हो सके, अपना काम किसी से मत लो, खुद अपने हाथ से कर लिया करो, बल्कि दूसरों का भी काम कर दिया करो। इससे तुमको सवाब भी होगा और इससे हर एक की प्यारी भी बन जाओगी।

5. ऐसी औरतों को कभी मुंह मत लगाओ और कान देकर उनकी बात न सुनो, जो इधर–उधर की बातें घर में आकर सुनाएं। ऐसी बातें सुनने से गुनाह भी होता है और कभी बिगाड़ भी हो जाता है।

6. और अगर अपनी सास, ननद, देवरानी, जेठानी या दूर–नज़दीक के रिश्तेदार की शिकायत सुनो, तो उसको दिल में मत रखो, बेहतर तो यह है कि उसको झूठ समझकर दिल से निकाल डालो। अगर इतनी हिम्मत न हो तो जिसने तुमसे कहा है, उसका साम्ना कराकर आमने–सामने उसको साफ़ करो। इससे बिगाड़ नहीं बढ़ता है।

7. नौकरों पर हर वक़्त सख़्ती और तंगी मत किया करो। अपने बच्चों की देख–भाल रखो ताकि वे मामा–नौकरों को या उनके बच्चों को न सताने पाएं, क्योंकि ये लोग लिहाज़ के मारे ज़ुबान से तो कुछ नहीं कहेंगे, लेकिन दिल में ज़रूर कोसेंगे। फिर अगर न भी कोसें, जब भी ज़ुल्म का वबाल और गुनाह तो ज़रूर होगा।

8. अपना वक़्त फ़िज़ूल बातों में मत खोया करो और बहुत–सा वक़्त इस काम के लिए भी रखो कि इसमें लड़कियों को क़ुरआन और दीन की किताबें पढ़ाया करो। अगर ज़्यादा न हो तो क़ुरआन के बाद यह बहिश्ती ज़ेवर शुरू से ख़त्म तक ज़रूर पढ़ा दिया करो। लड़कियां चाहे अपनी हों या परायी हों, इन सबके लिए इसका भी ख़्याल रखो कि उनको ज़रूरी हुनर भी आ जाएं। लेकिन क़ुरआन मजीद के ख़त्म होने तक उनसे दूसरा काम मत लो और जब क़ुरआन पढ़ चुकें, और सफ़र भी कर लें, फिर सुबह के वक़्त पढ़ाओ, फिर जब छुट्टी लेकर खाना खा चुके उनसे लिखाओ फिर दिन रहे–से उनको खाना पकाने का और सीने–पिरोने का काम सिखाओ।

9. जो लड़कियां तुमसे पढ़ने आएं, उनसे अपने घर का काम मत लो, न उनसे अपने बच्चों की टहल कराओ, बल्कि उनको भी अपनी औलाद की तरह रखो।

10. नाम के वास्ते कभी कोई चिंता, कोई बोझ अपने ऊपर मत डालो। गुनाह का गुनाह, मुसीबत की मुसीबत।

11. कहीं आने–जाने के वक़्त इसकी पाबंद मत बनो कि ख़ामख़ाह जोड़ा ज़रूर ही बदला जाए, ज़ेवर भी सार लादा जाए, क्योंकि इसमें यही नीयत होती है कि देखने वाले हमको बड़ा समझें, सो ऐसी नीयत ख़ुद गुनाह है। और चलने में इसकी वजह से देर भी होती है, जिससे तरह–तरह के हरज हो जाते हैं। मिज़ाज में आजिज़ी और सादगी रखो। कभी जो कपड़े पहने हो, वही पहन कर चली जाया करो। कभी अगर कपड़े ज़्यादा मैले हुए या ऐसा ही कोई मौक़ा हुआ, मुख़्तसर तौर पर, जितना आसानी से और जल्दी हो सका, बदल लिया, बस छुट्टी हुई।

12. किसी से बदला लेने के वक़्त उसके ख़ानदान के घर मरे हुए के ऐब मत निकालो, इसमें गुनाह भी हो जाता है और ख़ामख़ाह दूसरों को रंज होता है।

13. दूसरों की चीज़ जब बरत चुको या जब बर्तन ख़ाली हो जाए, तुरन्त वापस कर दो। अगर कोई संयोग से उस वक़्त ले जाने वाला न मिले तो उसको अपने बरतने की चीज़ों में मिला–जुलाकर मत रखो, बल्कि अलग उठाकर रख दो, ताकि वह चीज़ बर्बाद न हो। वैसे भी बे–इजाज़त किसी की चीज़ बरतना गुनाह है।

14. अच्छा खाने–पीने की आदत मत डालो, हमेशा एक–सा वक़्त नहीं रहता फिर किसी वक़्त बहुत मुसीबत झेलनी पड़ती है।

15. एहसान किसी का चाहे थोड़ा ही–सा हो, उसको कभी मत भूलो और अपना एहसान चाहे कितना ही बड़ा हो, मत जतलाओ।

16. जिस वक़्त कोई काम न हो, सबसे अच्छा काम किताब देखना है, हमेशा अच्छी किताबें देखा करो। और जिन किताबों का असर अच्छा न हो, उनको कभी मत देखो।

17. चिल्लाकर कभी मत बोलो, बाहर आवाज़ जाएगी, कैसी शर्म की बात है।

18. अगर रात को उठो और घर वाले सोते हों, तो खड़–खड़, धड़–धड़ मत करो। ज़ोर से मत चलो, तुम तो ज़रूरत से जागीं, भला औरों को क्यों जगाया। जो काम करो, धीरे–से करो, धीरे–से किवाड़ खोलो, धीरे–से पानी लो, धीरे–से कूदो, धीरे से चलो, धीरे–से घड़ा बंद करो।

19. बड़ों से हंसी मत करो, यह बे–अदबी की बात है और कम–हौसला लोगों से भी बे–तकल्लुफ़ी न करो, कि वे बे–अदब हो जाएंगे, फिर तुमको नागवार होगा या वे लोग कहीं दूसरी जगह गुस्ताखी करके ज़लील होंगे।

20. अपने घरवालों की या अपनी औलाद की तारीफ़ किसी के सामने मत करो।

21. अगर किसी महफ़िल में सब खड़े हो जाएं, तुम भी मत बैठी रहो कि उसमें घमंड पाया जाता है।

22. अगर दो आदमियों में आपस में रंज हो तो तुम उन दोनों के दर्मियान ऐसी कोई बात मत कहो कि उनमें मेल हो जाये तो तुमको शर्मिन्दगी उठानी पड़े।

23. जब तक रूपए–पैसे या नर्मी से काम निकल सके और ख़तरे में न पड़ो।

24. मेहमान के सामने किसी पर गुस्सा मत करो इससे मेहमान का दिल वैसा खुला हुआ नहीं रहता, जैसे पहले था।

25. दुश्मन के साथ भी अख़्लाक़ से पेश आओ, उसकी दुश्मनी नहीं बढ़ेगी।

26. रोटी के टुकड़े यों ही मत पड़े रहने दो, जहां देखो, उठा लो। और साफ़ करके रख लो अगर न खा सको तो किसी जानवर को दो और दस्तरख़्वान, जिसमें टुकड़े हों, उसको ऐसी जगह पर मत झाड़ो, जहां किसी का पांव आए।

27. जब खाना खा चुको, उसको छोड़कर मत उठो कि उसमें

बे–अदबी है बल्कि पहले बर्तन उठवा दो, तब खुद उठो।

28. लड़कियों पर ताकीद रखो कि लड़कों में न खेला करें, क्योंकि इसमें दोनों की आदत बिगड़ जाती है और जो ग़ैर–लड़के घर में आएं, चाहे वह छोटे ही हों, मगर उस वक़्त लड़कियां वहां से हट जाया करें।

29. किसी की हाथ–पांव की हंसी हरगिज़ मत करो। अक्सर तो रंज हो जाता है और कभी जगह–बे–जगह चोट भी लग जाती है और ज़ुबानी भी ज़्यादा हंसी मत करो, जिससे दूसरा चिढ़ने लगे। इसमें भी तकरार हो जाती है, ख़ासकर मेहमान से हंसी करना और भी ज़्यादा बेहूदा बात है, जैसे कुछ बरातियों से हंसी करते हैं।

30. अपने बुज़ुर्गों के सिरहाने मत बैठो, लेकिन अगर वह किसी वजह से खुद हुक्म के तौर पर बैठने को कहें तो उस वक़्त अदब यही है कि कहना मान लो।

31. अगर किसी से कोई चीज़ मांगने के तौर पर लो तो उसको ख़ूब एहतियात से रखो और जब वह ख़ाली हो जाए, फ़ौरन उसके पास पहुंचा दो। यह राह मत देखो कि खुद मांगे। एक तो उसको ख़बर क्या कि अब ख़ाली हो गयी। दूसरे शायद लिहाज़ के मारे न मांगे और शायद उसको याद न रहे, फिर ज़रूरत के वक़्त उसको कैसी परेशानी होगी। और इसी तरह अगर किसी का क़र्ज़ हो तो इसका ख़्याल रखो कि जब ज़रा भी गुंजाइश हो, फ़ौरन जितना हो सके क़र्ज़ उतार दो।

32. अगर कभी किसी मजबूरी में कहीं रात बे–रात पैदल चलने का मौक़ा हो तो छड़े–कड़े वग़ैरह पांव से निकाल कर हाथ में ले लो। रास्ते में बजाती हुई मत चलो।

33. अगर कोई बिल्कुल तंहा कोठरी वग़ैरह में हो और किवाड़ वग़ैरह बंद हों, यकायकी खोलकर मत चली जाओ। ख़ुदा जाने वह आदमी नंगा हो, खुला हो, या सोता हो, और ना–हक़ बे–आराम हो, बल्कि धीरे–धीरे पहले पुकारो और अंदर आने की इजाज़त लो। अगर वह इजाज़त दे दे तो अन्दर जाओ, नहीं तो ख़ामोश हो जाओ, फिर दूसरे वक़्त सही। हां अगर कोई बहुत ही ज़रूरत की बात हो तो पुकारकर जगा लो। जब तक वह बोल न पड़े, तब तक अंदर फिर भी न जाओ।

34. जिस आदमी को पहचानती न हो, उसके सामने किसी शहर या किसी क़ौम की बुराई मत करो। शायद वह आदमी उसी शहर या उसी क़ौम का हो, फिर तुमको शर्मिन्दा होना पड़े।

35. इसी तरह जिस काम का करने वाला तुमको मालूम न हो, तो यों मत कहो कि यह किस बेवक़ूफ़ का है, या ऐसी ही काई बात मत कहो, शायद किसी ऐसे आदमी ने किया हो, जिसका तुम अदब करती हो, फिर पीछे मालूम होने पर शर्मिन्दा होना पड़े।

36. अगर तुम्हारा बच्चा किसी का क़ुसूर ख़ता करे, तो तुम कभी अपने बच्चे की तरफ़दारी मत करो, ख़ासकर बच्चे के सामने तो ऐसा करना बच्चे की आदत ख़राब करना है।

37. लड़कियों की शादी में ज़्यादा यह बात देखो कि दामाद के मिज़ाज में ख़ुदा का डर और दीनदारी हो। ऐसा आदमी अपनी बीवी को हमेशा आराम से रखता है। अगर माल व दौलत बहुत कुछ हुआ और दीन न हुआ तो वह आदमी अपनी बीवी का हक़ ही न पहचानेगा और उसके साथ वफ़ादारी न करेगा, बल्कि रूपया–पैसा भी न देगा। अगर दिया भी तो उससे ज़्यादा जला देगा।

38. कुछ औरतों की आदत है कि पर्दे में से किसी को बुलाया हो, तो ख़बर करने के लिए आड़ में होकर ढेला फेंकती हैं। कभी वह किसी के लग जाता है। ऐसा काम न करना चाहिए, जिसमें किसी को तक्लीफ़ पहुंचने का शुबहा हो, बल्कि अपनी जगह बैठी हुई ईंट वग़ैरह से खटका देना चाहिए।

39. अपने कपड़ों पर सूई–डोरे से कोई निशान फूल वग़ैरह बना दिया करो कि धोबी के घर कपड़े बदले न जाएं, वरना कभी ग़लती से तुम दूसरे के और दूसरा तुम्हारे कपड़े बरतकर ख़ामख़ाह गुनाहगार होगा और दुनिया का भी नुक़्सान है।

40. अरब में दस्तूर है कि जो किसी बुज़ुर्ग आदमी से कोई तबर्रुक के तौर पर लेना चाहते हैं तो वह चीज़ अपने पास से उन बुज़ुर्ग के पास लाकर कहते हैं कि आप इसको एक–दो दिन इस्तेमाल करके हमको दे दीजिए। इसमें उन बुज़ुर्ग को तरद्दुद नहीं करना पड़ता, वरना अगर बीस आदमी किसी बुज़ुर्ग से एक–एक कपड़ा मांगे तो उनकी गठरी में तो एक चीथड़ा भी न रहे। हमारे हिन्दुस्तान में बे–धड़क मांग बैठते हैं। कभी–कभी उनकी सोच हो जाती है, अगर हम लोग भी अरब का दस्तूर बरतें तो बहुत मुनासिब है।

41. अगर कोई आदमी अपनी तरफ़ से कोई बात कहे तो अगर उसके ख़िलाफ़ मुनासिब जवाब देना हो तो अपनी तरफ़ से जवाब दो।

किसी और के नाम से मत कहो कि तुम यों कहते हो और फ़लां आदमी इसके ख़िलाफ़ कहता है, क्योंकि अगर उस दूसरे शख़्स को उसने कुछ कह दिया तो वह सुनकर रंजीदा होगा।

42. सिर्फ़ अटकल और गुमान से, बिना जांच–पड़ताल किए किसी पर इल्ज़ाम मत लगाओ, इससे बहुत दिल दुखता है।

हाथ के हुनर और पेशे का थोड़ा सा बयान

कुछ लावारिस ग़रीब औरतें, जिनके खाने--कपड़े का कोई सहारा नहीं, ऐसी परेशानी और मुसीबत में हैं कि ख़ुदा की पनाह। इसका इलाज दो बातों से हो सकता है, या तो निकाह कर लें या अपने हाथ के हुनर से चार पैसे हासिल करें। मगर हिंदुस्तान के जाहिल निकाह को और हुनर को, दोनों को ऐब समझते हैं और यह किसी को तौफ़ीक़ नहीं होती कि ऐसे ग़रीबों के ख़र्च की ख़बर रखे, फिर बतलाओ इन बेचारियों का कैसे गुज़र हो।

(बीबियो !) दूसरों पर तो कुछ ज़ोर चलता नहीं, मगर अपने दिल पर और हाथ–पांव पर अल्लाह तआला ने अख़्तियार दिया है, दिल को समझाओ और किसी के बुरा भला कहने का ख़्याल न करो। अगर किसी की उम्र निकाह के क़ाबिल है, तो निकाह कर ले और इस क़ाबिल न हो या यह कि उसको ऐब तो नहीं समझती, मगर वैसे ही दिल नहीं चाहता या बखेड़े से घबराती है तो इस सूरत में अपना गुज़र किसी पाक हुनर के ज़रिये से करो। अगर कोई छोटा समझे या हंसे, हरगिज़ परवाह न करो। दूसरे, निकाह का बयान तो छठे हिस्से में पहले आ चुका है और हुनर और पेशे का बयान अब किया जाता है।

(बीबियो !) अगर इसमें कोई बात बे–इज़्ज़ती की होती तो पैग़म्बर इन बातों को क्यों करते। इनसे ज़्यादा किसकी इज़्ज़त है।

हदीस में है, हमारे पैग़म्बर सल्ल० ने बकरियां चरायी हैं और यह भी फ़रमाया है कि सबसे अच्छी कमाई अपने हाथ की है और हज़रत दाऊद अलै० अपने हाथ के हुनर से खाते थे। ये सारी बातें हमारे पैग़म्बर सल्ल० ने फ़रमायी हैं और पैग़म्बरों के कुछ ऐसे कामों का बयान क़ुरआन शरीफ़ में है और कुछ काम ऐसी किताबों में लिखे हैं, जिनमें पैग़म्बरों का हाल है। इन सब में से थोड़ों का नाम लिखा जाता है।

कुछ पैग़म्बरों और बुजुर्गों के हाथ के हुनर का बयान

1. हज़रत आदम अलै० ने खेती की है, आटा पीसा है और रोटी पकायी है।

2. हज़रत इदरीस अलै० ने लिखने का और दर्ज़ी का काम किया।

3. हज़रत नूह अलै० ने लकड़ी तराशकर नाव बनायी है, जो कि बढ़ई का काम है।

4. हज़रत हूद अलै० तिजारत करते थे।

5. हज़रत सालेह अलै० भी तिजारत करते थे।

6. हज़रत ज़ुल्क़र्नैन, जो बड़े बादशाह थे और कुछ ने उनको पैग़म्बर भी कहा है, वह ज़ंबील बुनते थे, जैसे यहां डलिया या टोकरी होती है।

7. हज़रत इब्राहीम अलै० ने खेती की है और राज का काम किया है। ख़ाना–ए–काबा बनाया था।

8. हज़रत लूत अलै० खेती करते थे।

9. हज़रत इस्माईल अलै० तीर बनाकर निशाना लगाते थे।

10. हज़रत इस्हाक़ अलै०, हज़रत याक़ूब अलै० और उनके सब बेटे बकरियां चराते थे।

11. हज़रत यूसुफ़ अलै० ने ग़ल्ले की तिजारत की है, जब सूखा पड़ा था।

12. हज़रत अय्यूब अलै० के यहां ऊंट और बकरियों के बच्चे बढ़ते थे और खेती होती थी।

13. हज़रत शुऐब अलै० के यहां बकरियां चरायी जाती थीं।

14. हज़रत मूसा अलै० ने कई साल बकरियां चरायी हैं और उनके निकाह का यही मह्र था।

15. हज़रत हारून अलै० ने तिजारत की है।

16. हज़रत अल–यसअ़ अलै० खेती करते थे।

17. हज़रत दाऊद अलै० ज़िरह (कवच) बनाते थे, जो कि लोहार

का काम है।

18. हज़रत लुक़्मान अलै० बड़े हिक्मत वाले आलिम हुए हैं और कुछ ने उनको पैग़म्बर भी कहा है, उन्होंने बकरियां चराई हैं।

19. हज़रत सुलैमान अलै० ज़ंबील बुनते थे।

20. हज़रत ज़करीया अलै० बढ़ई का काम करते थे।

21. हज़रत ईसा अलै० ने एक दुकानदार के यहां कपड़े रंगे थे।

22. हमारे पैग़म्बर सल्ल० का, बल्कि सब पैग़म्बरों का बकरियां चराना भी बयान हो चुका है। अगरचे इन पैग़म्बरों का गुज़र इन चीज़ों पर न था, मगर ये काम किये तो हैं, इनसे शर्म तो नहीं की।

इसी तरह बड़े–बड़े वली और बड़े–बड़े आलिम, जिनकी किताबों का मस्अला सनद है, उनमें से किसी ने कपड़ा बुना है, किसी ने चमड़े का काम किया है, किसी ने जूती सीने का काम किया है, किसी ने मिठाई बनाई है, फिर ऐसा कौन है, जो इन सबसे ज़्यादा (तौबा ! तौबा !!) इज़्ज़तदार है।

लिखने–पढ़ने का बयान

तुम किताबें पढ़ लेती हो, तुम्हें लिखना भी आता है। आमतौर पर तुम्हें दूसरों को ख़त लिखने की ज़रूरत पड़ती है। ख़त कैसे लिखे जाते हैं, इसके लिए तुम बाज़ार से कोई भी किताब मंगाकर समझ सकती हो। इस सिलसिले की कुछ ज़रूरी और काम की बातें तुम और सीख लो। ये बातें आमतौर से तुम्हें दूसरी किताबों में नहीं मिलेंगी।

1. जब ख़त लिखो, तो जल्दी न करो, ख़ूब संभालकर, हर्फ़ों को ख़ूब संवार कर लिखो। हां, अगर लिखने की मश्क़ ज़्यादा हो तो जल्द–जल्द लिखने में कोई हरज नहीं

2. हां, घसीट और कटे हुए और गंदा–संदा सारी उम्र मत लिखो।

3. अगर कोई जुम्ला ग़लत लिख गया या जो बात लिखना मंज़ूर न थी वह लिखी गयी, तो उसको थूक या पानी से मत मिटाओ। लिखने वालों के नज़दीक यह ऐब समझा जाता है। बल्कि ऐसे जुम्लों पर एक लकीर खींचकर उसे काट दो या अगर उसे बिल्कुल छिपाना ही मंज़ूर हो, तो ख़ूब रोशनाई भर दो या काग़ज़ बदल दो।

4. हर्फ़ बहुत छोटे–छोटे और ऊपर तले चढ़े हुए मत लिखो।

5. तरह–तरह के लिखे हुए ख़त पढ़ा करो, उससे ख़त पढ़ना आ जाएगा।

6. जिस मर्द से शरअ में पर्दा है, उसको बिना किसी बड़ी मजबूरी के ख़त मत लिखो।

7. ख़त में किसी को कोई बात बे–शर्मी या हंसी की मत लिखो।

8. जो ख़त कहीं भेजना हो, लिखकर अपने शौहर को दिखला दो और जिसके शौहर न हो, वह अपने घर के मर्द को, बाप को, भाई को ज़रूर दिखलाये। इसमें एक तो यह फ़ायदा है कि मर्दों को अल्लाह तआला ने ज़्यादा अक़्ल दी है, शायद इसमें कोई बात ना–मुनासिब लिखी गयी हो और तुम्हारी समझ में न आयी हो, वह समझकर निकाल देंगे या संवार देंगे।

दूसरा फ़ायदा यह है कि उनको किसी तरह शुबहा न होगा। याद रखो, किसी औरत पर शुबहा हो जाना औरत के लिए मर जाने की बात है, तो ऐसे काम क्यों करो, जो किसी को तुम पर शुबहा हो और इसी तरह जो ख़त तुम्हारे पास आए, वह भी अपने मर्दों को दिखला दिया करो, हां, ख़ुद मियां को जो ख़त जाए या मियां का ख़त आये, वह न दिखलाओ तो कुछ डर नहीं, मगर ऊपर से आए हुए ख़त का लिफ़ाफ़ा और जाने वाले ख़त का, फिर भी दिखला दो।

9. जहां तक हो सके, लिफ़ाफ़ा अपने मर्दों के हाथ से लिखवाया करो, कभी कोई ऐसी बात हो जाती है कि कचहरी दरबार में किसी बात को पूछने के लिए जाना पड़ता है, तो औरतों के वास्ते ऐसी बात किसी क़दर बे–जा है।

10. कार्ड या लिफ़ाफ़ा अगर पते की तरफ़ से कुछ बिगड़ जाए, तो उसको भी धोना मत, कभी–कभी तो टिकट की जगह मैली हो जाती है और डाक वालों को शुबहा हो जाता है, कहीं कोई मुक़दमा न खड़ा हो जाए। एक जगह ऐसा हो चुका है, जब सरकारी आदमियों ने पूछा, तो उस औरत को दसंत लग गये, बड़ी मुश्किल से वह क़िस्सा रफ़ा–दफ़ा हुआ और इसी तरह मैला टिकट भी न लगाए।

11. जो कागज़ सरकारी दरबार में पेश करने का हो, उस पर किसी मजबूरी के बग़ैर अपनी दस्तख़त कभी मत करो।

12. शौक़–शौक़ में सवाब लेने के ख़्याल से सारी दुनिया को ख़त–पत्र न लिखा करो, कोई मजबूरी ही आ पड़े तो ख़ैर, जैसे किसी

ग़रीब का कोई काम ज़रूरी अटका हुआ है और कोई लिखने वाला नहीं मिलता, तो मजबूरी की बात है, वरना कह दिया करो कि भाई मैं कोई मुंशी नहीं हूं। मैं अपना ख़त ग़ैर–मर्दों की नज़र से गुज़ारूं, बे–शर्मी की बात है। अपनी ज़रूरत के लिए दो–चार उलटी–सीधी लकीरें खींच लेती हूं, जाओ किसी और से लिखवाओ। वजह यह है कि कहीं–कहीं तो ऐसी बातों से बुरे मर्दों की नीयत बिगड़ गयी है। अल्लाह बुरी घड़ी से बचाए।

13. जब ख़त का जवाब लिख चुको, उसको चूल्हे में जला दो। इसमें एक तो कागज़ की बे–अदबी न होगी, मारा–मारा न फिरेगा, दूसरे ख़त में हज़ार बात होती है, खुदा जाने, किस–किस आदमी की नज़र पड़े। अपने घर की बात दूसरी जगह पहुंचानी क्या ज़रूर है। हां, अगर किसी जगह से कोई ख़त कुछ दिनों तक रखना ही ज़रूरी है, तो और बात है, मगर रखो तो हिफ़ाज़त से संदूक़ची वग़ैरह में रखो, ताकि मारा–मारा न फिरे।

14. अगर कोई छिपी भेद की बात लिखनी हो, तो पोस्टकार्ड मत लिखो।

15. ख़त में तारीख़, महीना और सन् ज़रूर लिखो। तारीख़, महीना और सन् लिखने में बहुत–से फ़ायदे हैं—

एक तो यह मालूम होता है कि इस ख़त को आए हुए कितने दिन हुए, शायद इसमें कोई बात लिखी हो और अब मौक़ा न रहा हो, तो धोखा न हो।

दूसरे अगर एक ख़त में एक बात लिखी है और दूसरे में उसके ख़िलाफ़ लिखी है तो अगर तारीख़ और सन् न हो तो देखने वाले को यह नहीं मालूम होगा कि इसमें कौन–सा पहला है और कौन–सा पिछला और मैं कौन–सी बात करूं और कौन–सी न करूं और अगर तारीख़ व सन् होगा तो इससे मालूम हो जाएगा, फ़लाना ख़त बाद का है, उसके मुताबिक़ अमल करना चाहिए। और भी तरह–तरह के फ़ायदे हैं।

16. पता बहुत साफ़ लिखो, यहां का भी और वहां का भी, वरना कभी–कभी तो बड़ी परेशानी हो जाती है, कभी तो ख़त नहीं पहुंचता और पहुंचता भी है तो जवाब भेजने के वक़्त पता नहीं पढ़ा जाता, तो जवाब नहीं आ सकता।

17. हर ख़त में अपना पूरा पता लिखा करो, शायद दूसरे को याद न रहे, और पहला ख़त भी हिफ़ाज़त से न रहे।

18. ऐसे कागज़ या ऐसी रोशनाई से मत लिखो कि हर्फ़ फैल जाएं या दूसरी तरफ़ छन जाएं कि पढ़ने में परेशनी हो और न बहुत मोटा मोटा कागज़ लो कि बे–फ़ायदा वज़न बढ़ने से महसूल बढ़ जाए।

19. ख़त उलट–पलट मत लिखो कि दूसरा यही ढूंढ़ता फिरे कि उसके बाद का जुम्ला कौन–सा है।

20. एक तरफ़ से सीधा–सादा लिखना शुरू करो और तर्तीब से लिखती चली जाओ, पढ़ने वाला सीधा पढ़ता चला जाए।

21. जब एक पेज लिख चुको तो उसको मिट्टी से या सोख़्ते से ख़ूब सुखा लो, फिर अगला पेज लिखना शुरू करो, वरना हर्फ़ मिट जाएंगे, पढ़े नहीं जाएंगे।

22. कुछ लोगों की आदत है कि क़लम में स्याही ज़्यादा लगा लेते हैं, फिर उसे चटाई या फ़र्श पर या दीवार पर छिड़क कर रोशनाई कम करते हैं। यह बे–तमीज़ी की बात है। शुरू ही से स्याही संभाल कर लगाओ, अगर ज़्यादा आये तो दावात के अन्दर झाड़ दो।

किताब ख़ात्मा जिसमें तीन मज़मून हैं

पहला मज़मून

इसमें ज़्यादा इल्म हासिल करने का तरीक़ा और कुछ किताबों के नाम हैं। हमने इस किताब में अल्लाह तआला की मदद से ख़ूब सोच–सोच कर दीन व दुनिया की ऐसी ज़रूरी बातें लिख दी हैं, जिनसे ज़्यादा काम पड़ा करता है और अगर ज़्यादा बातें मालूम करना हों तो उसके तीन तरीक़े हैं—

1. एक तो यह कि मर्दों की तरह कुछ फ़ारसी पढ़कर आगे अरबी पढ़ना शुरू करे। अरबी में बहुत बड़ी–बड़ी और अच्छी–अच्छी इल्म की बातें हैं और सच यह है कि दीन का इल्म और पूरी–पूरी ख़बर अरबी के अलावा नहीं मिलती, अगर इसकी हिम्मत हो तो यह किताब तो ख़त्म होने को आयी, तुम अल्लाह का नाम लेकर एक किताब है, 'तैसी रूल मुब्तदी' इसका नाम है। मेरे एक दोस्त मौलवी साहब ने लिखी है और मैंने बड़े शौक़ से उसको लिखवाया है और मुझको बहुत पसन्द आयी है और मैं अपने पास के बच्चों को वही पढ़वाता हूं और उनको इसके पढ़ने से बड़ी

ताक़त होती है। तुम वह किताब मंगवाकर ख़ूब समझ–समझकर पढ़ना शुरू कर दो, फिर आगे जो–जो पढ़ा जाएगा, उसकी तर्कीब (क्रम) इसी किताब के पहले पन्ने में लिखी है, उसी के मुताबिक़ पढ़ती रहना। थोड़े दिनों में अल्लाह तआला ने चाहा तो अरबी पढ़ने की ताक़त हो जाएगी।

हमने अरबी पढ़ने की भी एक छोटी और जल्दी हासिल हो जाने की तर्कीब निकाली है, इस तर्कीब के मिलने का पता भी उसी किताब के पहले पन्ने में लिखा है, उसके मुताबिक़ अरबी पढ़ लेना। इन्शाअल्लाहु तआला उस वक़्त से तीन साल के अन्दर तुम मौलवी यानी अरबी की आलिमा हो जाओगी। आलिमों के जो दर्जे हैं, वे तुमको मिलेंगे। आलिमों की तरह क़ुरआन व हदीस का वाज़ कहने लगोगी, आलिमों की तरह फ़तवा देने लगोगी, आलिमों की तरह लड़कियों को अरबी पढ़ाने लगोगी, फिर तुम्हारे वाज़ और फ़तवों से और पढ़ाने से और किताबों से जितनों को हिदायत मिलेगी, और फिर उनसे आगे जितनों को हिदायत मिलेगी, क़ियामत तक सबका सवाब तुम्हारे आमालनामे में भी लिखा जायेगा।

देखो, थोड़ी मेहनत में कितनी बड़ी दौलत मुफ़्त मिलती है। सबसे बढ़कर तरीक़ा दीन को हासिल करने का तो यह है।

2. दूसरा तरीक़ा यह है कि अगर तुम्हारे घर में कोई आलिम हो, तो खुद और जो तुम्हारे घर में न हो, शहर–बस्ती में हो, तो अपने मर्दों या होशियार लड़कों के ज़रिए से हर तरह की दीन की बातें आलिमों से पूछती रहो। मगर पूरे आलम–दीनदार से मस्अला पूछो। और जो अध–कच्चा हो या दुनिया की मुहब्बत में जायज़–नाजायज़ का ख़्याल उसको न हो, उसकी बात भरोसे के क़ाबिल नहीं।

3. तीसरा तरीक़ा यह है कि दीन की उर्दू या हिंदी ज़ुबान वाली किताबें देखा करो, ख़ूब सोच–सोचकर समझा करो। जहां शुबहा रहे, अपनी समझ से मतलब मत ठहरा लिया करो। बल्कि किसी आलिम से पूछ लो। अगर मौक़ा हो तो यही बेहतर है कि इन किताबों को भी सबक़ के तौर पर किसी जानने वाले से पढ़ लिया करो। अब यह समझो कि दीन के नाम से किताबें इस ज़माने में बहुत फैल गयी हैं, मगर बहुत–सी किताबें इनमें सही नहीं हैं, कुछ किताबों में कुछ ग़लत बातें मिली हुई हैं और कुछ किताबों का असर दिलों में अच्छा पैदा नहीं होता। और जो किताबें दीन ही की नहीं हैं, वे हर तरह से नुक़सान नहीं पहुंचाती हैं, लेकिन लड़कियां और औरतें इस बात को बिल्कुल नहीं देखतीं, जिस किताब को दिल

चाहा, ख़रीदकर पढ़ने लगीं, फिर इनसे नफ़ा के बजाए नुक़्सान होता है, आदतें बिगड़ जाती हैं, ख़्याल गंदे हो जाते हैं, बे–तमीज़ी, बे–शर्मी, शैतानी क़िस्से पैदा हो जाते हैं। ना–हक़ को इल्म बदनाम होता है कि साहब औरतों का पढ़ाना अच्छा नहीं।

सच तो यह है कि दीन का इल्म तो हर तरह अच्छी ही चीज़ है मगर जो दीन ही का इल्म न हो या तरीक़े से हासिल न किया जाए या उस पर अमल न हो तो उसमें दीन के इल्म पर क्या इल्ज़ाम हो सकता है।

इस बे–एहतियाती से बचने की तर्कीब यह है कि जो किताब मोल–लेना या देखना हो, पहले किसी आलिम[1] को दिखला लो। अगर वह फ़ायदे की बतला दें तो देखो, अगर नुक़्सान की बतलायें, तो न देखो, बल्कि घर में भी रखो। अगर चोरी–छिपे अपने किसी बच्चे के पास देखो, तो उसको अगल कर दो। ग़रज़ आलिमों को दिखलाए बग़ैर और उनसे पूछे बग़ैर कोई किताब मत देखो और कोई काम मत करो, बल्कि अगर आलिम भी बन जाओ तब भी अपने से ज़्यादा जानने वाले आलिम से पूछ–ताछ रखो। अपने इल्म पर घमंड न करो।

अब मुनासिब मालूम होता है कि इस ज़माने में जिन किताबों की बहुत रस्म है इनमें से कुछ किताबों के नाम नमूने के तौर पर बता दें कि कौन–कौन सी किताबें नफ़ा की हैं और कौन–कौन सी नुक़्सान की हैं।

इनके सिवा और जो किताबें हैं उनके मज़मून अगर नफ़े की किताबों से मिलते हुए हों, उनको भी नफ़ा वाली समझो नहीं तो नुक़्सान पहुंचाने वाली समझो और आसान बात यह है कि किसी आलिम को दिखला लिया करो।

दूसरा मज़्मून

इसमें सब हिस्सों के पढ़ने–पढ़ाने का तरीक़ा और जिन–जिन बातों का इसमें ख़्याल रखें, उन सबका बयान है। पढ़ाने वाला मर्द हो या औरत इसको पहले देख ले और इसी के मुताबिक़ बर्ताव करे तो पढ़ने वालियों और सीखने वालियों को बहुत फ़ायदा होगा।

1. अक़ीदे और मस्अले ख़ूब समझाकर पढ़ाये और ख़ुद पढ़ने वाली

1. दीनदार बड़ा आलिम।

की जुबान से कहला दे ताकि मालूम हो कि वह समझ गयी है

2. जो–जो दुआएं किताब में आयी हैं, सबको जुबानी सुनना चाहिए।

3. जब नमाज़ बच्चे से पढ़वायी जाए तो उससे कहो कि थोड़े दिनों तक सब सूरतें और दुआएं पुकार कर पढ़े और तुम बैठकर सुना करो। जब नामाज़ ख़ूब याद हो जाए फिर क़ायदे के मुताबिक़ पढ़ा करे।

4. अगर पढ़ाने वाला मर्द हो या कोई मस्अला बच्चे की समझ से ज़्यादा हो तो ऐसा मस्अला छोड़ो और किसी रंग से या पेंसिल से निशान बनवा दो। जब मौक़ा होगा, ऐसे मस्अलों को फिर समझा दिया जाएगा।

5. मर्द अपनी बीवी के ज़रिए शर्म की बातें समझा दे।

6. चौथे–पांचवें हिस्से में ज़रा बारीक बातें हैं। अगर बच्चे की समझ में न आए तो छठा या सातवां या दसवां हिस्सा पहले पढ़ा दो, और इनमें से जिसको मुनासिब समझो, पहले पढ़ा दो।

7. पढ़ने वाले को ताकीद करो कि सबक़ ख़ूब ध्यान से दोहराया करे और तबियत के ज़ोर से मतलब निकाला करे। जितना भी निकल सके और सबक़ पढ़कर कई बार कहा करे और अपने ही जी से मतलब भी कहा करे। इससे समझने की ताक़त आ जाती है।

8. पिछले पढ़े को कहीं–कहीं से सुन लिया करो, ताकि याद रहे।

9. पढ़ने वाले को ताकीद करो कि पीछे का कुछ तै करके रोज़ पढ़ा करे।

10. अगर दो–तीन लड़कियां एक ही सबक़ पढ़ रही हों, तो उनसे कहो कि आपस में पूछ–पाछ लिया करें।

11. जो बातें किताब की पढ़ती जाएं, जब पढ़ने वाली उसके ख़िलाफ़ करे, तो उसको तुरंत टोक दिया करे और इसी तरह जब कोई दूसरा आदमी कोई ख़िलाफ़ काम करे और नुक़्सान उठावे तो पढ़ने वालियों को बताना चाहिए कि देखो, फ़्लाने ने किताब के ख़िलाफ़ काम किया और नुक़्सान हुआ। इसी तरीक़े से अच्छी बातों की भलाई और बुरी बातों की बुराई ख़ूब दिल में बैठ जाएगी।

तीसरा मज़्मून

इसमें नेकियों के ज़ेवर की तारीफ़ में वही शेर हैं जो इस किताब के शुरू में लिखे गये थे। यही नेकियां बहिश्त के ज़ेवर हैं, तो इन शेरों को

इस किताब के नाम और मज़्मून से भी लगाव है और इनसे नेकियों की मुहब्बत दिल में और ज़्यादा होगी, इस झूठे ज़ेवर का लालच कम होगा। इसी के लालच ने उस सच्चे ज़ेवर को भुला रखा है। अगर किसी ने पहले हिस्से में ये शेर नहीं देखे होंगे, तो वह यहां पढ़ लेगी और अगर पहले देख चुकी होगी और ज़्यादा अमल का ख़्याल होगा, इसलिए इनको यहां दोबारा लिख दिया है और किताब इसी पर ख़त्म है। अल्लाह तआला नेक राह पर क़ायम रखकर हम सबका भलाई पर ख़ात्मा करे। वे शेर ये हैं—

असली इंसानी ज़ेवर

एक लड़की ने यह पूछा अपनी अम्मी जान से,
आप ज़ेवर की करें तारीफ़ मुझ अन्जान से।
कौन से ज़ेवर हैं अच्छे, यह जात दीजे मुझे,
और जो बद–ज़ब[1] हैं, वह भी बता दीजे मुझे।
ताकि अच्छे और बुरे में मुझको भी हो इम्तियाज़[2],
और मुझ पर आपकी बरकत से खुल जाए यह राज़।
यों कहा मां ने मुहब्बत से कि ऐ बेटी ! मेरी,
गोशे दिल[3] से बात सुन लो, ज़ेवरों की तुम ज़री।
सीम[4] व ज़र[5] के ज़ेवरों को लोग कहते हैं भला,
पर न मेरी जान होना तुम कभी इन पर फ़िदा।
सोने–चांदी की चमक बस देखने की बात है,
चार दिन की चांदनी है फिर अन्धेरी रात है।
तुमको लाज़िम है करो मर्ग़ूब[6] ऐसे ज़ेवरात,
दीन व दुनिया की भलाई, जिससे ऐ जां ! आये हाथ।
सर पे झूमर अक़्ल का रखना तुम ऐ बेटी, मुदाम[7]
चलते हैं जिसके ज़रिए से ही सब इंसां के काम।

---

1. जो देखने में बुरे लगें, 2. फ़र्क़,
3. दिल के कान से, ग़ौर से सुनो, 4. चांदी,
5. सोना, 6. पसंदीदा, 7. हमेशा

बालियां हों कान में ऐ जान ! गोशे होश की,
और नसीहत लाख तेरे झूमकों में हो भरी।
और आवेज़े नसायह[1] हों कि दिल आवेज़[2] हों,
गर करे उन पर अमल, तेरे नसीबे तेज़ हों।
कान के पत्ते दिया करते हैं कानों के अज़ाब,
कान में रखो नसीहत, दें जो औराक़े किताब[3]।
और ज़ेवर गर गले के कुछ तुझे दरकार हों,
नेकियां प्यारी मेरी ! तेरे गले का हार हों।
क़ूवते बाज़ू का हासिल तुझको बाज़ूबंद हो,
कामियाबी से सदा तू खुर्रम व खुर्संद[4] हो।
हैं जो सब बाज़ू के ज़ेवर सबके सब बेकार हैं,
हिम्मतें बाज़ू की ऐ बेटी ! तेरी दरकार हैं।
हाथ के ज़ेवर से प्यारी दस्तकारी ख़ूब है,
दस्तकारी वह हुनर है, सबको जो मर्ग़ूब है।
क्या करोगी ऐ मेरी जां ! ज़ेवरे ख़लख़ाल को,
फेंक देना चाहिए बेटी, बस इस जंजाल को।
सबसे अच्छा पांव का ज़ेवर यह है नूरे बसर,
तुम रहो साबित क़दम हर वक़्त राहे नेक पर।
सीम व ज़र का पांव में ज़ेवर न हो तो डर नहीं,
रास्ती से पांव फिसले गर न मेरी जां ! कहीं।

असली बहिश्ती ज़ेवर का दसवां
हिस्सा ख़त्म हुआ।

---

1. नसीहतों के बुंदें
2. मनमोहक,
3. किताब के पन्ने,
4. ख़ुश व कामियाब

(भाग-11)

बहिश्ती ज़ेवर

हज़रत मौलाना अशरफ़ अली थानवी (रह॰)

विषय सूची

असली बहिश्ती गौहर

यानी

असली बिहश्ती ज़ेवर का ग्यारहवां हिस्सा

بِسۡمِ اللّٰهِ الرَّحۡمٰنِ الرَّحِيۡمِ

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

दीबाचा[1]

अल्हम्दु वस्सलात के बाद, यह **बहिश्ती गौहर** ततिम्मा[2] है **बहिश्ती ज़ेवर का**, जो दस हिस्सों में छप चुका है और जिसके आख़िरी हिस्से के ख़त्म पर इस ततिम्मे की ख़बर और ज़रूरत को ज़ाहिर किया जा चुका है। लेकिन फ़ुर्सत न मिलने की वजह से इसके तमाम मस्अलों को फ़िक़्ह की असल किताबों से नक़ल करने का मौक़ा नहीं मिल सका। 'इल्मुल फ़िक़्ह' के नाम से लखनऊ से जो किताब छपी है और जिसमें बहुत-सी जगहों पर असल क़िताबों का हवाला भी दे दिया गया है, एक तालिब इल्म[3] की नज़र से पढ़कर उसमें से इस ततिम्मा के लिए मुनासिब यानी ज़रूरी मस्अलों को इकट्ठा कर दिया गया है। इसमें मर्दों के मस्अलों पर ज़्यादा तवज्जोह की गयी है। जहां ज़रूरत महसूस की गयी है, असल किताबें भी देख ली गयी हैं, और जहां कहीं कोई ग़लती मिली है उसे सुधार दिया गया है। ज़रूरत के मुताबिक़ घटा-बढ़ा दिया गया है। इसके बाद भी मुम्किन है, कोई अहम मस्अला या मस्अले रह गये हों, पढ़ने वालों से दर्ख़्वास्त है कि अगर ऐसी कोई बात हो तो उसकी इत्तिला ज़रूर दें ताकि अगले एडीशन में उन्हें बढ़ाया जा सके।

---

1. प्राक्कथन।
2. यानी जिस पर कोई चीज़ ख़त्म हो, इसे हिंदी में परिशिष्ट कहते हैं।
3. छात्र, इल्म का चाहने वाला।

पहले हिस्से का ततिम्मा

ज़रूरी इस्तिलाहें[1]

जानना चाहिए कि अल्लाह के जो हुक्म बंदों के कामों के बारे में हैं, उनकी आठ क़िस्में हैं—1. फ़र्ज़, 2. वाजिब, 3. सुन्नत, 4. मुस्तहब, 5. हराम, 6. मक्रूहे तह्रीमी, 7. मक्रूहे तंज़ीही, 8. मुबाह।

1. **फ़र्ज़**—वह है जो क़तई दलील से साबित हो और बिना उज़्र छोड़ने वाला फ़ासिक़ (ना–फ़र्मान) और अज़ाब का हक़दार होता है और जो इससे इंकार करे, वह काफ़िर है।

फिर इसकी दो क़िस्में हैं—फ़र्ज़े ऐन, फ़र्ज़े किफ़ाया।

(1) फ़र्ज़े ऐन वह है जिसका करना हर एक पर ज़रूरी है और जो कोई इसको बग़ैर मजबूरी छोड़े, वह अज़ाब का हक़दार और फ़ासिक़ है। जैसे, पांचों वक़्त की नमाज़ और जुमा की नमाज़ वग़ैरह।

(2) फ़र्ज़े किफ़ाया वह है, जिसका करना हर एक पर ज़रूरी नहीं, बल्कि कुछ लोगों के अदा करने से अदा हो जाएगा और अगर कोई अदा न करे, तो सब गुनाहगार होंगे, जैसे जनाज़े की नमाज़ वग़ैरह।

2. **वाजिब**—वह है जो ज़न्नी दलील[2] से साबित हो, इसका बे–मजबूरी छोड़ने वाला फ़ासिक़ और अज़ाब का हक़दार है, बशर्ते कि बग़ैर किसी तावील और शुबहे के छोड़े और जो इसका इंकार करे, वह भी फ़ासिक़ है, काफ़िर नहीं।

3. **सुन्नत**—वह काम है, जिसको नबी सल्ल० या सहाबा किराम रज़ि० ने किया हो और इसकी दो क़िस्में हैं—सुन्नते मुअक्कदा (ताकीदी सुन्नत) और सुन्नते ग़ैर मुअक्कदा (ग़ैर ताकीदी सुन्नत)।

---

1. पारिभाषिक शब्द।
2. ज़न्नी दलील वह दलील है, जिसमें दूसरे कमज़ोर पहलू हों और क़तई दलील से दर्जे में पीछे हो।

(1) सुन्नते मुअक्कदा वह काम है, जिसको नबी सल्ल० या सहाबा रज़ि० ने हमेशा किया हो और बिना किसी मजबूरी के कभी न छोड़ा हो, लेकिन छोड़ने वाले पर किसी क़िस्म की डांट और तम्बीह न की हो, इसका हुक्म भी अमल के एतबार से वाजिब का है यानी बे-उज़्र छोड़ने वाला और इसकी आदत करने वाला फ़ासिक़ और गुनाहगार है और नबी सल्ल० की शफ़ाअत[1] से महरूम रहेगा। हां, अगर कभी छूट जाए तो हरज नहीं मगर वाजिब के छोड़ने में, इसके छोड़ देने के मुक़ाबले में गुनाह ज़्याद है।

(2) सुन्नते ग़ैर मुअक्कदा वह काम है जिसको नबी सल्ल० या सहाबा रज़ि० ने किया हो और बे-उज़्र कभी छोड़ भी दिया हो, इसका करने वाला सवाब का हक़दार है और छोड़ने वाला अज़ाब का हक़दार नहीं। इसको सुन्नते ज़ाइदा और सुन्नते आदिया भी कहते हैं।

4. मुस्तहब—वह काम है जिसको नबी सल्ल० या सहाबा रज़ि० ने किया हो, लेकिन हमेशा और अक्सर नहीं बल्कि कभी-कभी इसका करने वाला सवाब का हक़दार है और न करने वाले पर किसी क़िस्म का गुनाह नहीं और इसको नफ़्ल, मंदूब और ततव्वुअ़ भी कहते हैं।

5. हराम—वह है जो क़तई दलील से साबित हो। इसका इंकार करने वाला काफ़िर है और इसका बे-उज़्र करने वाला फ़ासिक़ और अज़ाब का हक़दार है।

6. मक्रूह तह्रीमी—वह है जो ज़न्नी दलील से साबित हो। इसका इंकार करने वाला फ़ासिक़ है, जैसे कि वाजिब का इंकार करने वाला फ़ासिक़ है और इसका बे-उज़्र करने वाला गुनाहगार और अज़ाब का हक़दार है।

7. मक्रूह तंज़ीही—वह काम है, जिसके न करने में सवाब हो और करने में अज़ाब भी न हो।

8. मुबाह—वह काम है, जिसके करने में सवाब हो और न करने में अज़ाब न हो।

---

1. शफ़ाअत से मुराद मुतलक़ शफ़ाअत नहीं, जो बड़े गुनाहों तक के लिए आम होगी, बल्कि मुराद वह शफ़ाअत है तो सुन्नत की पैरवी का फल है।

तहारत (पाकी) का बयान

पानी के इस्तेमाल का हुक्म

मस्अला 1—ऐसे नापाक पानी का इस्तेमाल, जिसकी तीनों ख़ूबियां यानी मज़, महक और रंग, नजासत की वजह से बदल गए हों, किसी तरह दुरूस्त नहीं, न जानवरों को पिलाना दुरूस्त है, न मिट्टी वग़ैरह में डालकर गारा बनाना जायज़ है। अगर तीनों ख़ूबियां नहीं बदलीं तो उसका जांनवरों को पिलाना, मिट्टी में डालकर गारा बनाना और मकान में छिड़काव करना दुरूस्त है, मगर ऐसे गारे से मस्जिद न लीपे।

मस्अला 2—दरिया, नदी और बे तालाब, जो किसी की ज़मीन में न हों और वह कुवां, जिसको बनाने वाले ने वक़्फ़ कर दिया हो, तो उस तमाम पानी से आम लोग फ़ायदा उठा सकते हैं, किसी को यह हक़ नहीं है कि किसी को उसके इस्तेमाल से मना करे या इसके इस्तेमाल में ऐसा तरीक़ा अपनाये, जिससे आम लोगों को नुक़्सान हो, जैसे कोई आदमी दरिया या तालाब से नहर खोदकर लाये और इससे वह दरिया या तालाब सूख जाए, या किसी गांव या ज़मीन के डूबने का डर हो तो इस्तेमाल का यह तरीक़ा दुरूस्त नहीं और हर आदमी को अख़्यितयार हैं कि इस्तेमाल के इस नाजायज़ तरीक़े से मना करे।

मस्अला 3—किसी आदमी की ज़मीन में कुवां या चश्मा या हौज़ या नहर हो तो दूसरे लोगों को पानी पीने से या जानवरों को पिलाने से या वुज़ू व गुस्ल वग़ैरह के लिए पानी लेने से या घड़े भरकर अपने घर के पेड़ या क्यारी में पानी देने से मना नहीं कर सकता, क्योंकि इसमें सबका हक़ है। हां, अगर जानवरों की ज़्यादती की वजह से पानी ख़त्म हो जाने का या नहर वग़ैरह के ख़राब होने का डर हो, तो रोकने का अख़्तियार है और अगर अपनी ज़मीन में आने से रोकना चाहे तो देखा जाएगा कि पानी लेने वाले का काम दूसरी जगह से आसानी के साथ चल सकता है, जैसे कोई दूसरा कुवां वग़ैरह अगर एक मील शरओ से कम फ़ासले पर मौजूद है और वह किसी की ज़मीन भी नहीं है या उसका काम बन्द हो जाएगा

और तक्लीफ़ होगी, अगर इसकी कार्रवाई दूसरी जगह से हो सके, तो ख़ैर, वरना उस कुएं वाले से कहा जाएगा, या तो उस आदमी को अपने कुएं या नहर वग़ैरह पर आने की इस शर्त से इजाज़त दो कि नहर वग़ैरह तोड़ेगा नहीं, वरना उसको जितने पानी की ज़रूरत है, तुम ख़ुद निकाल कर या निकलवा कर उसके हवाले करो। हां, अपने खेत या बाग़ को पानी देना, उस आदमी की इजाज़त के बग़ैर दूसरे लोगों को जायज़ नहीं। वह इससे रोक सकता है। यही हुक्म है अपने आप उगने वाली घास का और जितने भी बे-तने के पौधे हैं, सब घास के हुक्म में हैं। हां, तनेदार पेड़ ज़मीन वाले की मिल्कियत हैं।

मस्अला 4—अगर एक आदमी दूसरे के कुएं या नहर से खेत को पानी देना चाहे और वह कुएं या नहर वाला उससे कुछ क़ीमत ले, तो जायज़ है या नहीं, इसमें अलग-अलग राएं हैं। बल्ख़ के बुज़ुर्गों ने जायज़ होने का फ़त्वा दिया है।

मस्अला 5—दरिया, तालाब और कुएं वग़ैरह से जो आदमी अपने किसी बर्तन में जैसे घड़े, मशक वग़ैरह में पानी भर ले, तो वह उस पानी का मालिक हो जाएगा। उस पानी से बग़ैर उस आदमी की इजाज़त के किसी को इस्तेमाल करना दुरुस्त नहीं। हां, अगर प्यास से बे-चैन हो जाए, जो ज़बरदस्ती भी छीन लेना जायज़ है, जबकि पानी वाले की सख़्त ज़रूरत से ज़्यादा मौजूद हो, मगर इस पानी की ज़मानत देनी पड़ेगी।

मस्अला 6—लोगों के पीने के लिए जो पानी रखा हुआ हो, जैसे गर्मियों में रास्तों पर पानी रख देते हैं, उससे वुज़ू व ग़ुस्ल दुरुस्त नहीं, हां, अगर ज़्यादा हो, तो हरज नहीं और जो पानी वुज़ू के लिए रखा हो, उससे पीना ठीक है।

मस्अला 7—अगर कुएं में एक-दो मेंगनी गिर जाए और वह खड़ी-खड़ी निकल आएं, कुंआ नापाक नहीं होता, चाहे वह कुंआ जंगल का हो या बस्ती का और मन हो या न हो।

पाकी-नापाकी के कुछ मस्अले

मस्अला 1—ग़ल्ला गाहने के वक़्त, यानी जब उस पर बैलों को चलाते हैं, अगर बैल ग़ल्ले पर पेशाब कर दे, तो ज़रूरत की वजह से वह माफ़ है यानी ग़ल्ला इससे नापाक न होगा और अगर उस वक़्त के सिवा

दूसरे वक़्त में पेशाब करें तो नापाक हो जाएगा, इसलिए कि यहां ज़रूरत नहीं।

मस्अला 2—काफ़िर खाने की जो चीज़ बनाते हैं, उसको और इसी तरह उनके बर्तन और कपड़े वग़ैरह को नापाक न कहेंगे, जब तक कि उसका नापाक होना किसी दलील या क़रीने से मालूम न हो।

मस्अला 3—कुछ लोग जो शेर वग़ैरह की चर्बी इस्तेमाल करते हैं और उसको पाक जानते हैं यह ठीक नहीं। अगर किसी दीनदार डाक्टर की राय हो कि इस मर्ज़ का इलाज सिवाए चर्बी के और कुछ नहीं, तो ऐसी हालत में कुछ उलेमा के नज़दीक दुरूस्त है, लेकिन नमाज़ के वक़्त उसको पाक करना ज़रूरी होगा।

मस्अला 4—रास्तों की कीचड़ और नापाक पानी माफ़ है, बशर्ते कि बदन या कपड़े में नापाकी का असर न मालूम हो। फ़तवा इसी पर है। बाक़ी एहतियात यह है कि जिस आदमी का बाज़ार और रास्तों में ज़्यादा आना–जाना न हो, वह इसके लगने से बदन और कपड़े साफ़ कर लिया करे, चाहे नापाकी का असर भी महसूस न हो।

मस्अला 5—नजासत अगर जलायी जाए, उसका धुंवा पाक है। वह अगर जम जाए और उससे कोई चीज़ बनायी जाए तो वह पाक है, जैसे नौशादर को कहते हैं कि नजासत है, धुएं से बनता है।

मस्अला 6—नजासत के ऊपर जो धूल–मिट्टी हो, वह पाक है, बशर्ते कि नजासत की तरी ने उसमें असर करके तर न कर दिया हो।

मस्अला 7—नजासतों से जो गैसें उठें वे पाक हैं, फल वग़ैरह के कीड़े पाक हैं, लेकिन उनका खाना दुरूस्त नहीं। अगर उनमें जान पड़ गयी हो और गूलर वग़ैरह सब फूलों के कीड़ों का यही हुक्म है।

मस्अला 8—खाने की चीज़ें अगर सड़ जाएं और बू करने लगें तो नापाक नहीं होतीं जैसे गोश्त हलवा वग़ैरह, मगर नुक़्सान के ख़्याल से उनका खाना दुरूस्त नहीं।

मस्अला 9—मुश्क और उसका नाफ़ा[1] पाक है, इसी तरह अंबर वग़ैरह।

मस्अला 10—सोते में आदमी के मुंह से जो पानी निकलता है वह पाक है।

---

1. हिरन के अन्दर जिस जगह मुश्क निकलता है, उसे नाफ़ा कहते हैं।

मस्अला 11—गंदा अंडा हलाल जानवर का पाक है, बशर्ते-की टूटा न हो।

मस्अला 12—सांप की केंचुली पाक है।

मस्अला 13—जिस पानी से कोई नजिस चीज़ धोयी जाए, वह नजिस है, चाहे वह पानी पहली बार का हो या दूसरी बार का हो, लेकिन इन पानियों में फ़र्क़ इतना है कि अगर पहली बार का पानी किसी कपड़े में लग जाए तो यह कपड़ा तीन बार धोने से पाक होगा और अगर दूसरी बार का पानी लग जाए तो सिर्फ़ दो बार धोने से पाक होगा और अगर तीसरी बार का लग जाए, तो एक ही बार धोने से पाक हो जाएगा।

मस्अला 14—मुर्दा इन्सान जिस पानी से नहलाया जाए, वह नजिस है।

मस्अला 15—सांप की खाल नजिस है यानी वह जो उसके बदन पर लगी हुई है, क्योंकि कंचूली पाक है।

मस्अला 16—मुर्दे इन्सान के मुंह का लुआब (राल) नजिस है।

मस्अला 17—इकहरे कपड़े में एक तरह माफ़ी की मिक़्दार से कम नजासत लगे और दूसरी तरफ़ फैल जाए और हर तरफ़ मिक़्दार से कम हो, लेकिन दोनों मिलाकर उस मिक़्दार से बढ़ जाए, तो वह कम ही समझी जाएगी और माफ़ होगी। हां, अगर कपड़ा दोहरा हो या दो कपड़ों को मिलाकर इस मिक़्दार से बढ़ जाए तो वह ज़्यादा समझी जाएगी और माफ़ न होगा।

मस्अला 18—दूध दूहते वक़्त दो–एक मेंगनी दूध में पड़ जाएं या थोड़ा–सा गोबर, एक–दो मेंगनी के बराबर गिर जाए, तो भाफ़ है, बशर्ते–कि निकाल डाला जाए।

मस्अला 19—चार–पांच साल का एक लड़का जो वुज़ू नहीं समझता, वह अगर वुज़ू करे, या दीवाना वुज़ू करे तो यह पानी इस्तेमाल किया हुआ नहीं माना जाएगा।

मस्अला 20—पाक कपड़ा, बर्तन और दूसरी पाक चीज़ें, जिस पानी से धोयी जाएंख उससे वुज़ू और ग़ुस्ल दुरुस्त है, बशर्ते कि पानी गाढ़ा न हो जाए और मुहावरे में इसको 'माए मुतलक़' यानी सिर्फ़ पानी कहते हों और अगर बर्तन वग़ैरह में खाने–पीने की चीज़ लगी हो, तो उसके धोवन से वुज़ू और ग़ुस्ल के जायज़ होने की शर्त यह है कि पानी की तीन ख़ूबियों में से दो ख़ूबियां बाक़ी हों, चाहे एक ख़ूबी बदल गयी हो और अगर दो ख़ूबियां बदल जाएं, तो फिर दुरुस्त नहीं।

मस्अला 21—इस्तेमाल किए हुए पानी का पीना और खाने की चीज़ों में इस्तेमाल करना मकरूह है और वुज़ू या ग़ुस्ल इससे दुरुस्त नहीं। हां, ऐसे पानी से नजासत धोना दुरुस्त है।

मस्अला 22—ज़मज़म के पानी से बे-वुज़ू को वुज़ू न करना चाहिए और इसी तरह वह आदमी जिसको नहाने की ज़रूरत हो, उससे ग़ुस्ल न करे और इससे नापाक चीज़ों का धोना और इस्तिंजा करना मकरूह है, हां, अगर मजबूरी हो कि पानी एक मील से पहले न मिल सके और ज़रूरी तहारत (पाकी) किसी और तरह से भी हासिल हो सकती हो, तो ये सब बातें ज़मज़म के पानी से जायज़ हैं।

मस्अला 23—औरत के वुज़ू और ग़ुस्ल के बचे हुए पानी से मर्द को वुज़ू और ग़ुस्ल न करना चाहिए, गो हमारे नज़दीक इससे वुज़ू वग़ैरह जायज़ है, मगर इमाम अहमद के नज़दीक जायज़ नहीं और इख़्तिलाफ़ (मतभेद) से बचना बेहतर है।

मस्अला 24—जिन जगहों पर अल्लाह तआला का अज़ाब किसी क़ौम पर आया हो, जैसे समूद और आद की क़ौम, उस जगह के पानी से वुज़ू और ग़ुस्ल न करना चाहिए। ऊपर के मस्अले की तरह इसमें भी इख़्तिलाफ़ है, मगर यहां भी इख़्तिलाफ़ से बचना दुरुस्त है और मजबूरी को इसका भी वही हुक्म है, जो ज़मज़म के पानी का है।

मस्अला 25—तनूर अगर नापाक हो जाए तो उसमें आग जलाने से पाक हो जाएगा, बशर्ते कि गर्म होने के बाद नजासत का असर न रहे।

मस्अला 26—नापाक ज़मीन पर मिट्टी वग़ैरह डालकर नजासत छिपा दी जाए, इस तरह की नजासत की बू न आए, तो मिट्टी के ऊपर का हिस्सा पाक है।

मस्अला 27—नापाक तेल या चर्बी का साबुन बना लिया जाए तो पाक हो जाएगा।

मस्अला 28—फ़स्द[1] की जगह पर या किसी और अंग को, जो ख़ून-पीप के निकलने से नजिस हो गया हो और धोना नुक़्सान करता हो, तो सिर्फ़ तर कपड़े से पोंछ देना काफ़ी है और आराम होने के बाद उस जगह का धोना ज़रूरी नहीं।

मस्अला 29—नापाक रंग अगर जिस्म में या कपड़े में लग जाए

1. आपरेशन

या बाल उस ना–पाक रंग से रंगीन हो जाएं तो सिर्फ़ इतना धोना कि पानी साफ़ निकलने लगे, काफ़ी है, अगरचे रंग दूर न हो।

मस्अला 30—अगर टूटे हुए दांत को, जो टूटकर अलग हो गया है, उसकी जगह पर रखकर जमा दिया जाए, चाहे पाक चीज़ से या नापाक चीज़ से और इसी तरह अगर कोई हड्डी टूट जाए और उसके बदले कोई नापाक हड्डी रख दी जाए या किसी घाव में कोई नापाक चीज़ भर दी जाए और वह अच्छा हो जाए तो उसको निकालना न चाहिए, बल्कि वह अपने आप पाक हो जाएगा।

मस्अला 31—ऐसी नापाक चीज़ को, जो चिकनी हो जैसे तेल, घी, मुर्दार की चर्बी, अगर किसी चीज़ में लग जाए और इतनी धोयी जाए कि पानी साफ़ निकलने लगे तो पाक हो जाएगी, अगरचे उस नापाक चीज़ की चिकनाहट बाक़ी हो।

मस्अला 32—नापाक चीज़ पानी में गिरे और उसके गिरने से छींटें उड़कर किसी पर जा पड़ीं, तो वह पाक है, बशर्ते कि इस नजासत का कुछ असर न छीटों में इन गिरे।

मस्अला 33—दोहरा कपड़ा या रूई का कपड़ा अगर एक तरफ़ नजिस हो जाए और एक तरफ़ पाक हो, तो कुल नापाक समझा जाएगा, नमाज़ इस पर दुरूस्त नहीं बशर्ते कि नापाक तरफ़ का नापाक हिस्सा नमाज़ी के खड़े होने या सज्दा करने की जगह हो और दोनों कपड़े आपस में सिले हुए हों और अगर सिले हुए न हों तो फिर एक के नापाक होने से दूसरा नापाक न होगा, बल्कि दूसरे पर नमाज़ दुरूस्त है, बशर्ते कि ऊपर का कपड़ा इस क़दर मोटा हो कि उसमें से नीचे की नजासत का रंग और बू ज़ाहिर न होती हो।

मस्अला 34—मुर्ग़ी या और कोई चिड़िया पेट चाक करने और उसकी गंदगी निकालने से पहले पानी में जोश दी जाए जैसा कि आजकल अंग्रेज़ों और उसका पालन करने वाले भारतीयों का रिवाज है, तो वह किसी तरह पाक नहीं हो सकती।

मस्अला 35—चांद या सूरज की तरफ़ पाख़ाना या पेशाब के वक़्त मुंह या पीठ करना मकरूह है, नहर और तालाब वग़ैरह के किनारे पाख़ाना–पेशाब करना मकरूह है, चाहे उसमें गंदगी न गिरे और इसी तरह ऐसे पेड़ के नीचे, जिसके साए में लोग बैठते हों और इसी फल–फूल वाले पेड़ के नीचे जाड़ों में जिस तरह धूप लेने वाले लोग बैठते हों,

जानवरों के दर्मियान में, मस्जिद और ईदगाह के इतने क़रीब, जिसकी बदबू से नमाज़ियों को तक्लीफ़ होती हो, क़ब्रस्तान में ऐसी जगह, जहां लोग वुज़ू और गुस्ल करते हों, रास्ते में और हवा के रूख़ पर, सूराख़ में, रास्ते के क़रीब और क़ाफ़िला या किसी मज्मे के क़रीब मकरूहे तह्रीमी हैं।

मतलब यह है कि ऐसी जगह जहां लोग उठते-बैठते हों और उनको तक्लीफ़ होती हो और ऐसी जगह, जहां से नजासत बहकर अपनी तरफ़ आये, मकरूह है।

पेशाब-पाख़ाना के वक़्त जिन बातों से बचना चाहिए

बात, बे-ज़रूरत खांसना, किसी आयत या हदीस और बरक़ती चीज़ का पढ़ना, ऐसी चीज़ जिस पर ख़ुदा या नबी या किसी फ़रिश्ते या किसी मुअज़्ज़म का नाम या कोई आयत या हदीस या दुआ लिखी हुई हो, अपने साथ रखना। हां, अगर ऐसी चीज़ जेब में हो या तावीज़ कपड़े वग़ैरह में लिपटा हुआ हो तो मकरूह नहीं। बे-ज़रूरत लेटकर या खड़े होकर पाख़ाना-पेशाब करना, तमाम कपड़े उतारकर, नंगे होकर पाख़ाना-पेशाब करना, दाहिने हाथ से इस्तिंजा करना।

जिन चीज़ों से इस्तिंजा दुरुस्त नहीं

हड्डी खाने की चीज़ें, लीद और कुल नापाक चीज़ें, वह ढेला या पत्थर, जिससे एक बार इस्तिंजा हो चुका हो, पक्की ईंट, ठोकरी, शीशा, कोयला, चूना, लोहा, चांदी, सोना वग़ैरह।

ऐसी चीज़ों से इस्तिंजा करना जो नजासत को साफ़ न करे जैसे सिरका वग़ैरह, वे चीज़ें जिनको जानवर वग़ैरह खाते हों, जैसे भुस और घास वग़ैरह और ऐसी चीज़ें जो क़ीमतदार हों, चाहे थोड़ीं क़ीमत हो या बहुत, जैसे कपड़ा, अर्क़ वग़ैरह, आदमी के बाल, हड्डी, गोश्त वग़ैरह, मस्जिद की चटाई या कूड़ा, झाड़ू वग़ैरह, पेड़ों के पत्ते, कागज़ चाहे लिखा हुआ हो या सादा, ज़मज़म का पानी, दूसरे के माल से बिला उसकी

इजाज़त व रज़ामंदी के, चाहे वह पानी हो या कपड़ा या और कोई चीज़ रूई और तमाम ऐसी चीज़ें जिनसे इन्सान या उनके जानवर नफ़ा उठाएं, इन तमाम चीज़ों से इस्तिंजा करना मकरूह है।

जिन चीज़ों से इस्तिंजा दुरूस्त है

पानी, मिट्टी का ढेला, पत्थर, बे–क़ीमत कपड़ा और कुल वे चीज़ें जो पाक हों, नजासत को दूर कर दें, बशर्ते कि माल और मोहतरम[1] न हों।

वुज़ू का बयान

मस्अला 1—दाढ़ी का ख़िलाल करे और तीन बार मुंह धोने के बाद ख़िलाल करे और तीन बार से ज़्यादा ख़िलाल न करे।

मस्अला 2—जो हिस्सा रूख़्सारा और कान के बीच में है उसका धोना फ़र्ज़ है, बशर्ते कि दाढ़ी निकली हो या नहीं।

मस्अला 3—ठोढ़ी का धोना फ़र्ज़ है, बशर्ते कि दाढ़ी के बाल उस पर न हों, या हों तो इतने कम हों कि खाल नज़र आये।

मस्अला 4—होंठ का जो हिस्सा, कि होंठ बंद होने के बाद दिखाई देता है, उसका धोना फ़र्ज़ है।

मस्अला 5—दाढ़ी या मोंछ या भवें अगर इतनी घनी हों कि खाल नज़र आए तो उस खाल का धोना, जो उससे छिपी हुई है, फ़र्ज़ नहीं है, बल्कि वह बाल ही खाल के बदले में हैं, उन पर से पानी बहा देना काफ़ी है।

मस्अला 6—भवें या दाढ़ी या मोंछे अगर इतनी घनी हों कि उसके नीचे की खाल छिप जाए और नज़र न आए तो ऐसी सूरत में इतने बालों का धोना वाजिब नहीं, जो चेहरे की हद के अन्दर हैं, बाक़ी बाल जो हद से आगे बढ़ गये हों, उनका धोना वाजिब नहीं।

मस्अला 7—अगर किसी आदमी के पिछले हिस्से का कोई हिस्सा बाहर निकल आये, जिसको हमारे मुहावरे में कांच निकलना कहते हैं, तो उससे वुज़ू जाता रहता है, चाहे वह अन्दर अपने आप चला जाए या किसी

---

1. एहतराम किया हुआ, मान्य, आदरणीय

लकड़ी–कपड़े हाथ वग़ैरह के ज़रिए से अन्दर पहुंचाया जाए।

मस्अला 8—मनी अगर बिना जोश के निकले तो वुज़ू टूट जाएगा, जैसे किसी ने कोई बोझ उठाया या किसी ऊंची जगह से गिर पड़ा और इस गिरने से मनी बिना जोश के निकल पड़ी।

मस्अला 9—अगर किसी के होश व हवास में ख़लल हो जाए, लेकिन यह ख़लल जुनून और मद–होशी की हद को न पहुंचा हो तो वुज़ू न जाएगा।

मस्अला 10—नमाज़ में अगर कोई आदमी सो जाए और सोने की हालत में ठहाका लगाये तो वुज़ू न जाएगा।

मस्अला 11—जनाज़े की नमाज़ और तिलावत के सज्दे में ठहाका लगाने से वुज़ू नहीं जाता, बालिग़ हो या ना–बालिग़।

मोज़ों पर मसह करने का बयान

मस्अला 1—बूट पर मसह जायज़ है, बशर्ते कि पूरे पैर को टखनो सहित छिपाये और उसका चाक फ़ीतों से इस तरह बंधा हो कि पैर की इतनी खाल नज़र न आये जो मसह में रूकावट बने।

मस्अला 2—किसी ने तयम्मुम की हालत में मोज़े पहने हों तो जब वुज़ू करे तो उन मोज़ों पर मसह नहीं कर सकता, इसलिए कि तयम्मुम मुकम्मल पाकी नहीं, चाहे वह तयम्मुम सिर्फ़ गुस्ल का हो या वुज़ू व गुस्ल, दोनों का हो या सिर्फ़ वुज़ू का।

मस्अला 3—गुस्ल करने वाले को मसह जायज़ नहीं, चाहे गुस्ल फ़र्ज़ हो या सुन्नत, जैसे पैरों पर मसह करे, तो यह दुरूस्त नहीं।

मस्अला 4—माज़ूर[1] का वुज़ू जैसे नमाज़ का वक़्त जाने से टूट

---

1. इस मस्अले का मतलब यह है कि माज़ूर की दो हालतें हैं—एक तो यह है कि जितनी मुद्दत में उसने वुज़ू किया है और मोज़ा पहने हुए है, उस तमाम मुद्दत में उसका वह मर्ज़ जिसकी वजह से वह माज़ूर हुआ है, पाया जाए और दूसरे यह कि वह मर्ज़ तमाम वक़्त या उसके किसी हिस्से में पाया जाए। पहली सूरत का हुक्म यह है कि नमाज़ का वक़्त निकलने से उसका वुज़ू टूट जाएगा और चूंकि उसने मोज़े पूरी पाकी पर पहने है, इसलिए उसका मसह न टूटेगा और तंदुरूस्तों की तरह ठहरने की हालत में एक दिन और एक रात और सफ़र क हालत में तीन दिन तीन रात मसह कर सकेगा और दूसरी सूरत

जाता है, वैसे ही उसका मसह भी जाता रहता है और उसको मोज़े उतार कर पैरों का धोना वाजिब है, हां, अगर उसका मर्ज़ वुज़ू करने और मोज़े पहनने की हालत में न पाया जाए तो वह भी सही आदमियों के बराबर समझा जाएगा।

मस्अला 5—पैर का बड़ा हिस्सा किसी तरह धुल गया, इस शक्ल में मोज़े को उतार कर पैरों को धोना चाहिए।

बे–वुज़ू होने की हालत के हुक्म

मस्अला 1—क़ुरआन मजीद और पारों के पूरे कागज़ को छूना मकरूहे तह्रीमी है, चाहे उस मौक़े को छूए जिसमें आयत लिखी है या उस मौक़े को जो सादा है और अगर पूरा क़ुरआन न हो, बल्कि किसी कागज़ या झल्ली वग़ैरह पर क़ुरआन की एक पूरी आयत लिखी हुई हो, बाक़ी हिस्सा सादा हो तो सादा जगह का छूना जायज़ है जबकि आयत पर हाथ न लगे।

मस्अला 2—क़ुरआन मजीद का लिखना मकरूह नहीं, बशर्ते कि लिखे हुए को हाथ न लगे, चाहे खाली मुक़ाम को छूए, मगर इमाम मुहम्मद के नज़दीक खाली जगह को भी छूना जायज़ नहीं और इसी में ज़्यादा एहतियात है। पहला क़ौल इमाम अबूयूसुफ़ का है और यही इख़्तिलाफ़ पहले मस्अले में भी है और हुक्म जब है क़ुरआन शरीफ़ और सीपारों के अलावा किसी कागज़ या कपड़े वग़ैरह में कोई आयत लिखी हो और उसका कुछ हिस्सा सादा भी हो।

मस्अला 3—एक आयत से कम का लिखना मकरूह नहीं, अगर किताब वग़ैरह में लिखे और क़ुरआन शरीफ़ में एक आयत से कम का लिखना भी जायज़ नहीं।

मस्अला 4—ना–बालिग़ बच्चों का बे–वुज़ू होने की हालत में भी क़ुरआन मजीद का देना और छूने देना मकरूह नहीं।

मस्अला 5—क़ुरआन मजीद के सिवा और आसमानी किताबों में तौरात, इंजील व ज़बूर वग़ैरह जैसी किताबों के सिर्फ़ उसी जगह का छूना

का हुक्म यह है कि वक़्त निकल जाने से जिस तरह उसका वुज़ू टूट जाएगा यों ही उसका मसह भी टूट जाएगा और उसको मोज़े उतारकर पांव धोने पड़ेंगे।

मकरूह है जहां लिखा हुआ हो। सादी जगह का छूना मकरूह नहीं और यही हुक्म क़ुरआन मजीद की उन आयतों का भी है जो तिलावत से मंसूख़[1] हैं।

मस्अला 6—वुज़ू के बाद अगर किसी अंग के बारे में न धोने का शुबहा हो, लेकिन वह अंग तै न हो तो ऐसी शक्ल में शक दूर करने के लिए बायें पैर को धोये। इसी तरह अगर वुज़ू के दर्मियान किसी अंग के बारे में शुबहा हो तो ऐसी हालत में आख़िरी अंग को धोयें, जैसे कुहनियों तक हाथ धोने के बाद यह शुबहा हो तो मुंह धो डाले और अगर पैर धोते वक़्त यह शुबहा हो तो कुहनियों तक हाथ धो डाले। यह उस वक़्त है कि अगर कभी-कभी शुबहा होता हो अगर किसी को अक्सर इस क़िस्म का शुबहा होता हो तो उसको चाहिए कि इस शुबहे की तरफ़ ख़्याल न करे और अपने वुज़ू को कामिल (पूरा) समझे।

मस्अला 7—मस्जिद के फ़र्श पर वुज़ू करना दुरुस्त नहीं, हां, अगर इस तरह वुज़ू करे कि वुज़ू का पानी मस्जिद में न गिरने पाये तो ख़ैर। इसमें अक्सर जगह बे-एहतियाती होती है कि वुज़ू ऐसे मौक़े पर किया जाता है कि वुज़ू का पानी मस्जिद के फ़र्श पर गिरता है।

गुस्ल[2] का बयान

मस्अला 1—बड़ी गन्दगी से पाक होने के लिए गुस्ल फ़र्ज़ है और ऐसी गंदगी पैदा होने की चार वज्हें हैं—

1. पहली वजह मनी का अपनी जगह से जोश के साथ अलग होकर जिस्म से बाहर आने की है, चाहे जागते में हो या सोते में, बे-होशी में हो या होश में, जिमाअ[3] से हो या बग़ैर जिमाअ के, किसी ख़्याल या सोच से हो या ख़ास हिस्से को हरकत देने से या और किसी तरह से।

मस्अला 2—अगर मनी अपनी जगह से जोश के साथ निकली, मगर ख़ास हिस्से से बाहर निकलते वक़्त जोश न था, तब भी गुस्ल फ़र्ज़ हो जाएगा, जैसे मनी अपनी जगह से जोश के साथ निकली, मगर उसके ख़ास हिस्से के सूराख़ हो हाथ से बद कर लिया या रूई वग़ैरह रख ली, थोड़ी देर के बाद जब जोश जाता रहा तो उसने ख़ास हिस्से के सूराख़

1. निरस्त, 2. नहाना, 3. संभोग।

से रूई हटायी और मनी बिना जोश के निकल आयी, तब भी गुस्ल फ़र्ज़ हो जाएगा।

मस्‌अला 3—अगर किसी के ख़ास हिस्से से कुछ मनी निकली और उसने गुस्ल कर लिया, गुस्ल के बाद दोबारा कुछ बिना जोश के निकली तो इस सूरत में पहला गुस्ल ग़लत हो जाएगा। दोबारा फिर गुस्ल फ़र्ज़ है, बशर्ते कि यह बाक़ी मनी सोने और पेशाब करने से पहले और या चालीस क़दम या उससे ज़्यादा चलने से पहले निकले, मगर इस बाक़ी मनी के निकलने से पहले अगर नमाज़ पढ़ ली हो, तो वह नमाज़ सही रहेगी, उसको दोहराना ज़रूरी नहीं।

मस्‌अला 4—किसी के ख़ास हिस्से से पेशाब के बाद मनी निकले, तो उस पर भी गुस्ल फ़र्ज़ होगा, बशर्ते कि जोश के साथ हो।

मस्‌अला 5—अगर किसी मर्द या औरत को अपने जिस्म या कपड़े पर सोकर उठने के बाद तरी मालूम हो तो उसमें बहुत सी सूरतें हैं, इनमें आठ इस तरह हैं—

1. यक़ीन या ग़ालिब ख़्याल यह हो जाए कि यह मनी है और एहतलाम[1] याद हो।
2. यक़ीन हो जाए कि यह मनी है और एहतलाम याद न हो।
3. यक़ीन हो जाए कि यह मज़ी[1] है और एहतलाम याद हो।
4. शक हो कि यह मनी है या मज़ी और एहतलाम याद न हो।
5. शक हो कि यह मनी है या वदी है और एहतलाम याद हो।
6. शक हो कि यह मज़ी यह वदी है और एहतलाम याद हो।

7,8. शक हो कि यह मनी है या मज़ी है या वदी है और एहतलाम याद न हो।

मस्‌अला 6—अगर किसी आदमी का ख़त्ना न हुआ हो और उसकी मनी ख़ास हिस्से के सूराख़ से बाहर निकलकर उस खाल के अन्दर रह जाए, जो ख़त्ने में काट डाली जाती है, तो उस पर गुस्ल फ़र्ज़ हो जाएगा, अगरचे मनी उस खाल के बाहर न निकली हो।

2. दूसरी वजह ईलाज यानी कि किसी ऐसे मर्द के, जिसे जोश आ रहा हो, ख़ास हिस्से के सर का किसी ज़िन्दा औरत के ख़ास हिस्से में या

---

1. स्वपन दोष। 2. मनी निकलने से पहले जो पानी निकलता है और जिससे जोश और बढ़ता है, उसे मज़ी कहते हैं।

किसी दूसरे ज़िंदा आदमी के मुश्तरका (पीछे का हिस्सा) हिस्से में दाख़िल होना, चाहे वह मर्द हो या औरत या ख़ंसी (नपुंसक) और चाहे मनी गिरे या न गिरे, इस सूरत में अगर दोनों में गुस्ल के सही होने की शर्त पायी जाती हैं यानी दोनों बालिग़ हैं तो दोनों पर, वरना जिसमें पायी जाती हैं, उस पर गुस्ल फ़र्ज हो जाएगा।

मस्अला 7—अगर औरत कम–सिन हो, मगर ऐसी कम–सिन न हो कि उसके साथ जिमाअ करने से उसके ख़ास हिस्से मुश्तरक हिस्से के मिल जाने का डर हो, तो उसके ख़ास हिस्से में मर्द के ख़ास हिस्से का सर दाख़िल होने से मर्द पर गुस्ल फ़र्ज़ हो जाएगा, अगर वह मर्द बालिग़ है।

मस्अला 8—जिस मर्द के ख़सीए कट गये हों, उसके ख़ास हिस्से का सिर किसी के मुश्तरक हिस्से या औरत के ख़ास हिस्से में दाख़िल हो, तब भी गुस्ल दोनों पर फ़र्ज़ हो जाएगा, मगर दोनों बालिग़ हों, वरना उस पर जो बालिग़ हो।

मस्अला 9—अगर किसी मर्द के ख़ास हिस्से का सर कट गया हो तो उसके बाक़ी जिस्म से उस मिक़्दार का एतबार किया जाएगा यानी अगर बाक़ी अंग से हश्फ़ा[1] के बराबर दाख़िल हो गया, तो गुस्ल वाजिब होगा, वरना नहीं।

मस्अला 10—अगर कोई मर्द अपने ख़ास हिस्से को कपड़े वग़ैरह से लपेट कर दाख़िल करे तो अगर जिस्म की गर्मी महसूस हो या न हो, गुस्ल फ़र्ज़ हो जाएगा।

मस्अला 11—अगर कोई औरत जोश की वजह से अपने ख़ास हिस्से में किसी बे–जोश मर्द या जानवर के ख़ास हिस्से को या किसी लकड़ी वग़ैरह को या अपनी उंगली को दाख़िल करे, तब भी उस पर गुस्ल फ़र्ज़ हो जाएगा, मनी गिरे या न गिरे, मगर यह शारेह (शरह करने) की राय है और असल मज़हब में बग़ैर मनी निकले गुस्ल वाजिब नहीं।

3. तीसरी वजह हैज़ से पाक होना है।

4. चौथी वजह निफ़ास से पाक होना है।

इनके मस्अले बहिश्ती ज़ेवर में गुज़र चुके हैं, वहीं देख लें।

---

1. अगला हिस्सा, सुपारी।

जिन शक्लों में गुस्ल फ़र्ज़ नहीं

मस्अला 1—मनी अगर अपनी जगह से जोश के साथ जुदा न हो, तो अगरचे ख़ास हिस्से से बाहर निकल आये, गुस्ल फ़र्ज़ न होगा, जैसे किसी आदमी ने कोई बोझ उठाया या ऊंचे से गिर पड़ा या किसी ने उसको मारा और सद्मे से उसकी मनी बिन जोश के निकल आयी, तो गुस्ल फ़र्ज़ न होगा।

मस्अला 2—अगर कोई मर्द किसी कम–सिन औरत के साथ जिमाअ करे तो गुस्ल फ़र्ज़ न होगा, बशर्ते कि मनी न गिरे और वह औरत इस क़द्र कम–सीन हो कि उसके साथ जिमाअ करने में ख़ास हिस्से और मुश्तरक हिस्से के मिल जाने का डर हो।

मस्अला 3—अगर कोई मर्द अपने ख़ास हिस्से में कपड़ा लपेट कर जिमाअ करे तो गुस्ल फ़र्ज़ न होगा, बशर्ते कि कपड़ा इतना मोटा हो कि जिस्म की गर्मी और जिमाअ का मज़ा उसकी वजह से न महसूस हो, मगर ज़्यादा एहतियात इसमें है कि हश्फे के ग़ायब होने से गुस्ल वाजिब हो जाएगा।

मस्अला 4—अगर कोई मर्द अपने ख़ास हिस्से का अंग हश्फ़े के सर के मिक़्दार से कम दाख़िल करे, तब भी गुस्ल फ़र्ज़ न होगा।

मस्अला 5—मज़ी और वदी के निकलने से ग़ुस्ल फ़र्ज़ नहीं होता।

मस्अला 6—हस्तिहाज़ा[1] से गुस्ल फ़र्ज़ न होगा।

मस्अला 7—अगर किसी आदमी को मनी जारी रहने का मर्ज़ हो तो उसके ऊपर उस मनी के निकलने से गुस्ल फ़र्ज़ न होगा।

मस्अला 8—सो उठने के बाद कपड़ो पर तरी देखे तो इन शक्लों में गुस्ल फ़र्ज़ नहीं होता—

---

1. किसी बिमारी की वजह से, हैज़ और निफ़ास के आलवा जो ख़ून आये, उसे इस्तिहाज़ा कहते हैं।

जिन शक्लों में गुस्ल वाजिब नहीं

1. यक़ीन हो जाए कि यह मज़ी है और एहतलाम याद न हो।

2. शक हो कि यह मनी है या वदी है और एहतलाम याद न हो।

3. शक हो कि यह मज़ी है या वदी है और एहतलाम याद न हो।

4,5. यक़ीन हो जाए कि यह वदी है और एहतलाम याद हो या न हो।

6. शक हो कि यह मनी या मज़ी या वदी है और एहतलाम याद न हो। हां, पहली, दूसरी और छठी शक्ल में एहतियात के तौर पर गुस्ल कर लेना वाजिब है। अगर गुस्ल न करेगा तो नमाज़ न होगी और सख़्त गुनाह होगा, क्योंकि इसमें इमाम अबूयूसुफ़ और तरफ़ैन[1] का इख़्तिलाफ़ है। इमाम अबूयूसुफ़ ने कहा, गुस्ल वाजिब नहीं और तरफ़ैन ने वाजिब कहा है और फ़त्वा तरफ़ैन के क़ौल पर है।

मस्अला 9—हुक़्ना (अमल) के मुश्तरक हिस्से में दाख़िल होने से गुस्ल फ़र्ज़ नहीं होता।

मस्अला 10—अगर कोई मर्द अपना ख़ास हिस्सा किसी औरत या मर्द की नाफ़ में दाख़िल करे और मनी न निकले तो उस पर गुस्ल फ़र्ज़ न होगा।

मस्अला 11—अगर कोई आदमी सपने में अपनी मनी गिरती हुई देखे और मनी गिरने का मज़ा भी उसको महसूस हो, मगर कपड़ों पर तरी या कोई और असर मालूम न हो, तो गुस्ल फ़र्ज़ न होगा।

जिन शक्लों में गुस्ल वाजिब है

1. अगर कोई काफ़िर इस्लाम लाए और कुफ़्र ही की हालत में उस पर गुस्ल फ़र्ज़ हुआ हो और वह न नहाया हो या नहाया हो, मगर शरअ के एतबार से वह गुस्ल सही न हुआ हो तो उस पर इस्लाम लाने के बाद नहाना वाजिब है।

---

1. इमाम मुहम्मद रह० और इमाम अबू हनीफ़ा रह०

2. अगर कोई आदमी पंद्रह वर्ष के पहले बालिग़ हो जाए और उसे पहला एहतलाम हो तो उस पर एहतियात के तौर पर ग़ुस्ल वाजिब है और इसके बाद जो एहतलाम हो या पंद्रह वर्ष के बाद मुहतलिम[1] हो तो उस पर ग़ुस्ल फ़र्ज़ है।

3. मुसलमान मुर्दे की लाश को नहलाना मुसलमानों पर फ़र्ज़ किफ़ाया है।

जिन शक्लों में ग़ुस्ल सुन्नत है

1. जुमा के दिन नमाज़ फ़ज्र के बाद से जुमा तक उन लोगों को ग़ुस्ल करना सुन्नत है, जिन पर नमाज़ जुमा वाजिब है।

2. दोनों ईदों के दिन फ़ज्र के बाद उन लोगों को ग़ुस्ल करना सुन्नत है, जिन पर दोनों ईदों की नमाज़ वाजिब है।

3. हज या उमरः के एहराम के लिए ग़ुस्ल करना सुन्नत है

4. हज करने वाले को अरफ़ा के दिन ढलने के बाद ग़ुस्ल क़रना सुन्नत है।

जिन शक्लों में ग़ुस्ल करना मुस्तहब है

1. इस्लाम लाने के लिए ग़ुस्ल करना मुस्तहब है, अगर बड़ी गंदगी से पाक हो।

2. कोई मर्द या औरत जब पंद्रह वर्ष की उम्र को पहुंचे और उस वक़्त तक कोई निशानी जवानी की उसमें न पायी जाए, तो उसको ग़ुस्ल करना मुस्तहब है।

3. पछने लगवाने के बाद और जुनून और मस्ती और बेहोशी दूर हो जाने के बाद ग़ुस्ल करना मुस्तहब है।

4. मुर्दे को नहलाने के बाद नहलाने वालों को ग़ुस्ल करना मुस्तहब है।

5. शब–बरात यानी शाबान की पन्द्रहवीं रात को ग़ुस्ल करना मुस्तहब है।

6. लैलतुल क़द्र की रातों में उस आदमी को ग़ुस्ल करना मुस्तहब

---

1. जिसे एहतलाम हो।

है, जिसको लैलतुल क़द्र मालूम हुई हो।

7. मदीना मुनव्वरा में दाख़िल होने के लिए गुस्ल मुस्तहब है।

8. मुज़दल्फ़ा में ठहरने के लिए दसवीं की सुबह को फ़ज्र के होने के बाद गुस्ल मुस्तहब है।

9. तवाफ़े ज़ियारत के लिए गुस्ल मुस्तहब है।

10. कंकरी फेंकने के वक़्त गुस्ल मुस्तहब है।

11. चांद गरहन, सूरज गरहन और बारिश के लिए पढ़ी गयी नमाज़ों के लिए गुस्ल मुस्तहब है।

12. डर और मुसीबत की नमाज़ के लिए गुस्ल मुस्तहब है।

13. किसी गुनाह के तौबा करने के लिए गुस्ल मुस्तहब है।

14. सफ़र में वापस आने वाले को गुस्ल मुस्तहब है, जब वह अपने वतन जाये।

15. आम मज्लिस में आने के लिए और नये कपड़े पहनने के लिए गुस्ल मुस्तहब है।

16. जिसको क़त्ल किया जाता है, उसको गुस्ल करना मुस्तहब है।

बे-गुस्ल होने के हुक्म

मस्अला 1—इस हालत में मस्जिद में दाख़िल होना हराम है। हां, अगर कोई सख़्त ज़रूरत हो तो जायज़ है, जैसे, किसी के घर का दरवाज़ा मस्जिद में है और दूसरा रास्ता उसके निकलने का उसके अलावा न हो और न वहां के अलावा दूसरी जगह रह सकता हो, तो उसको मस्जिद में तयम्मुम करके जाना जायज़ है या किसी मस्जिद में पानी का चश्मा या कुआ या हौज़ हो और उसके सिवा कहीं पानी न हो, तो उस मस्जिद में तयम्मुम करके जाना जायज़ है।

मस्अला 2—ईदगाह और मदरसा और ख़ानक़ाह वग़ैरह में जाना जायज़ है।

मस्अला 3—हैज़ व निफ़ास की हालत में औरत के नाफ़ और ज़ानू के दर्मियान के जिस्म को देखना या उससे अपने जिस्म को मिलाना, जब कोई कपड़ा बीच में न हो और जिमाअ करना हराम है।

मस्अला 4—हैज़ व निफ़ास की हालत में औरत का बोसा लेना और जूठा पानी वग़ैरह पीना उससे निपट कर सोना और उसकी नाफ़

और नाफ़ के ऊपर और[1] ज़ानू और ज़ानू के नीचे के जिस्म से अपने जिस्म को मिलाना, अरगचे कपड़ा बीच में न हो और नाफ़ और ज़ानू के दर्मियान में कपड़े के साथ मिलाना जायज़ है, बल्कि हैज़ की वजह से औरत से अलाहिदा होकर सोना या उसके लिपटने से बचना मक्रूह है।

मस्अला 5—अगर कोई मर्द सोकर उठने के बाद अपने ख़ास अंग पर तरी देखे और सोने से पहले उसके ख़ास हिस्से को जोश हो तो उस पर ग़ुस्ल फ़र्ज़ न होगा और वह तरी मज़ी समझी जाएगी, बशर्ते कि एहतलाम याद न हो और उस तरी के मनी होने का ग़ालिब ख़्याल न हो और अगर रान वग़ैरह या कपड़ों पर भी तरी हो, तो ग़ुस्ल बहरहाल वाजिब है।

मस्अला 6—अगर दो मर्द या दो औरतें या एक मर्द और एक औरत एक ही बिस्तर पर लेटें और सुबह उठने के बाद उस बिस्तर पर मनी का निशान पाया जाए और किसी तरीक़े से यह न मालूम हो कि किस की मनी है और न उस बिस्तर पर इनसे पहले कोई और सोया हो तो इस शक्ल में दोनों पर ग़ुस्ल फ़र्ज़ होगा और अगर पहले कोई और आदमी बिस्तर पर सो चुका है और मनी सूखी है तो इन दोनों शक्लों में किसी पर ग़ुस्ल फ़र्ज़ न होगा।

मस्अला 7—किसी पर ग़ुस्ल फ़र्ज़ हो और पर्दे की जगह नहीं तो उसमें यह तफ़्सील है कि मर्द का मर्दों के सामने नंगे होकर नहाना वाजिब है। इसी तरह औरत को औरतों के सामने भी नहाना वाजिब है और मर्द को औरतों के सामने और औरतों को मर्दों के सामने नहाना हराम है, बल्कि तयम्मुम करे।

---

1. ज़ानू के छूने और उससे बदन मिलाने को आम फ़क़ीहों ने जो जायज़ कहा है। मगर शामी ने उसके औरत होने की वजह से झिझक महसूस की है, मगर यह झिझक तो पूर बदन में है, क्योंकि औरत का सारा जिस्म औरत है और ज़ानू के नीचे पिंडली भी दाख़िल है, क्योंकि पिंडली छोड़ी हुई औरत है, इसलिए जम्हूर का क़ौल तर्जीह के क़ाबिल है।

तयम्मुम का बयान

मस्‌अला 1—कुएं से पानी निकालने की कोई चीज़ न हो और न कोई कपड़ा हो, जिसको कुएं में डालकर तर कर ले और उससे निचोड़ कर तहारत करे या पानी मटके वग़ैरह में हो और कोई चीज़ पानी निकालने की न हो और मटका झुकाकर भी पानी न ले सकता हो और हाथ नजिस हों और कोई दूसरा आदमी ऐसा न हो जो पानी निकाल दे या उसके हाथ धुला दे, ऐसी हालत में तयम्मुम दुरुस्त है।

मस्‌अला 2—अगर वह उज़्र जिसकी वजह से तयम्मुम किया गया है, आदमियों की तरफ़ से हो, तो उज़्र, जाता रहता है, तो जितनी नमाज़ें इस तयम्मुम से पढ़ी है, सब दोबारा पढ़नी चाहिएं, जैसे कोई आदमी जेलख़ाना में हो और जेल के मुलाज़िम उसको पानी न दें, या कोई आदमी उससे कहे कि अगर तू वुज़ू करेगा तो मैं तुझको मार डालूंगा। इस तयम्मुम से जो नमाज़ पढ़ी है, उसको फिर दोहराना पड़ेगा।

मस्‌अला 3—एक जगह से और एक ढेले से कुछ आदमी एक के बाद एक तयम्मुम करें तो दुरुस्त है।

मस्‌अला 4—जो आदमी पानी और मिट्टी दोनों के इस्तेमाल पर क़ुदरत न रखता हो, चाहे मिट्टी और पानी न होने की वजह से या बीमारी से, तो उसको चाहिए कि नमाज़, बिना मकरूह समझे, पढ़ ले, फिर उसको तहारत से लौटा ले, जैसे कोई आदमी रेल में हो और इत्तिफ़ाक़ से नमाज़ का वक़्त आ जाए और पानी और वह चीज़ जिससे तयम्मुम दुरुस्त है, जैसे मिट्टी और मिट्टी के बर्तन या धूल–मिट्टी न हो और नमाज़ का वक़्त जाता हो तो ऐसी हालत में बे–मकरूह समझे नमाज़ पढ़ लो। इसी तरह जेल में लो आदमी हो और वह पाक पानी और मिट्टी पर क़ुदरत न रखता हो तो बे–वुज़ू और तयम्मुम के नमाज़ पढ़ ले और दोनों शक्लों में नमाज़ दोहरानी पड़ेगी।

मस्‌अला 5—जिस शख़्स को आख़िरी वक़्त पानी मिलने का यक़ीन या गुमान ग़ालिब हो, उसको नमाज़ के आख़िरी मुस्तहब वक़्त तक पानी का इन्तिज़ार करना मुस्तहब है। जैसे, कुएं से पानी निकालने की कोई चीज़ न हो और यह यक़ीन या गुमान ग़ालिब हो कि आख़िरी

मुस्तहब वक़्त रस्सी–डोल मिल जाएगा या कोई आदमी रेल पर सवार हो और यक़ीनी तौर पर या ख़्याल के तौर पर मालूम हो कि आख़िरी वक़्त तक रेल ऐसे स्टेशन पर पहुंच जाएगी, जहां पानी मिल सकता है तो आख़िरी मुस्तहब वक़्त तक इंतिज़ार मुस्तहब है।

मस्अला 6—अगर कोई आदमी रेल पर सवार हो और उसमें पानी न मिलने से तयम्मुम किया हो और राह में चलती हुई रेल से उसे पानी के चश्मे तालाब वग़ैरह दिखलायी दें तो उसका तयम्मुम न जाएगा, इसलिए कि इस शक्ल में वह पानी के इस्तेमाल पर क़ुदरत नहीं रखता, रेल नहीं ठहर सकती और चलती हुई रेल से उतर नहीं सकता।

ततिम्मा दूसरा हिस्सा बहिश्ती ज़ेवर

नमाज़ के वक़्तों का बयान

मुद्रिक—वह आदमी, जिसको शरू से आख़िर तक किसी के पीछे जमाअत से नमाज़ मिले और उसको मुक़्तदी और मुअत्तिम्म भी कहते हैं।

मस्बूक़—वह आदमी जो रक्अत या उससे ज़्यादा हो जाने के बाद जमाअत में आकर शरीक हुआ हो।

लहिक़—वह आदमी जो किसी इमाम के पीछे नमाज़ में शरीक हुआ हो और शरीक होने के बाद उसकी रक्अतें या कुछ रक्अतें जाती रहीं, चाहे इस वजह कि वह सो गया हो या उसको हदस (गंदगी) हो जाए, छोटा हो या बड़ा।

मस्अला 1—मर्दों के लिए मुस्तहब है कि फ़ज्र की नमाज़ ऐसे वक़्त शुरू करे कि रोशनी ख़ूब फैल जाए और इतना वक़्त बाक़ी हो कि अगर नमाज़ पढ़ी जाए और उसमें चालीस–पचास आयतों की तिलावत अच्छी तरह की जाए और नमाज़ के बाद अगर किसी वजह से नमाज़ दोहराना चाहें तो उसी तरह चालीस–पचास आयतें उसमें पढ़ सकें। और औरतों को हमेशा और मर्दों को हज की हालत में, मुज़्दल्फ़ा में फ़ज्र की नमाज़ अंधेरे में पढ़ना मुस्तहब है।

मस्अला 2—जुमा की नमाज़ का वक़्त भी वही है जो ज़ुहर की नमाज़ का है। सिर्फ़ इतना फ़र्क़ है कि ज़ुहर की नमाज़ गर्मियों में कुछ देर करके पढ़ना बेहतर है, चाहे गर्मी में तेज़ी हो या न हो और जाड़ों के ज़माने में जल्दी पढ़ लेना बेहतर है और जुमा की नमाज़ हमेशा अव्वल वक़्त पढ़ना सुन्नत है। जम्हूर (बहुत बड़ी तायदाद में उलेमा) का यही क़ौल (कथन) है।

मस्अला 3—दोनों ईदों की नमाज़ का वक़्त सूरज के अच्छी तरह निकल आने के बाद शुरू होता है, दोपहर से पहले तक रहता है। 'सूरज के अच्छी तरह निकल आने' से मुराद है कि सूरज का पीलापन जाता रहे और

रोशनी ऐसी तेज़ हो जाए कि नज़र न ठहरे। इसे तै करने के लिए फ़क़ीहों ने लिखा है कि एक नेज़े[1] जितना ऊंचा हो जाए। दोनों ईदों की नमाज़ का जल्द पढ़ना मुस्तहब है मगर ईदुल फ़ित्र की नमाज़ अव्वल वक़्त से कुछ देर में पढ़नी चाहिए।

मस्अला 4—जब इमाम ख़ुत्बे के लिए अपनी जगह से उठ खड़ा हो और ख़ुत्बा जुमा का हो, या ईदों का या हज वग़ैरह का, तो इन वक़्तों में नमाज़ पढ़ना मक्रूह है और निकाह के ख़ुत्बे और क़ुरआन के ख़त्म में ख़ुत्बा के शुरू होने के बाद नमाज़ पढ़ना मकरूह है।

मस्अला 5—जब फ़र्ज़ नमाज़ की तक्बीर कही जाती हो, उस वक़्त भी नमाज़ मकरूह है, हां अगर फ़ज्र की सुन्नत न पढ़ी हो और किसी तरह यह यक़ीन बड़ा गुमान हो जाए कि रक्अत जमाअत से मिल जाएगी या कुछ उलेमा[2] के नज़दीक तशह्हुद ही मिल जाने की उम्मीद हो तो फ़ज्र की सुन्नतों का पढ़ लेना मकरूह नहीं या जो ताकीदी सुन्नत शुरू कर दी हो, उसको पूरा करें।

मस्अला 6—ईदों की नमाज़ से पहले, चाहे घर में हो या ईदगाह में, नफ़्ल नमाज़ मकरूह है और ईदों के बाद सिर्फ़ ईदगाह में मकरूह है।

अज़ान का बयान

मस्अला 1—अगर किसी अदा नमाज़ के लिए अज़ान कही जाए तो उसके लिए उस नमाज़ के वक़्त का होना ज़रूरी है। अगर वक़्त आने से पहले अज़ान दी जाए तो सही न होगी। वक़्त आने के बाद फिर इसको दोहराना होगा, चाहे फ़ज्र की अज़ान की हो या किसी और वक़्त की।

मस्अला 2—अज़ान और इक़ामत[3] का अरबी ज़ुबान में उन्हीं ख़ास लफ़्ज़ में होना ज़रूर है, जो नबी सल्ल० से नक़ल किये गये हैं और अगर किसी ज़ुबान में या अरबी ज़ुबान में किसी और लफ़्ज़ में अज़ान या इक़ामत कही जाए

---

1. एक नेज़े से यह मुराद है कि निकलने की जगह से इतना ऊंचा हो जाए।
2. मगर ज़ाहिर मज़हब यह है कि फ़ज्र सुबह की दोनों रक्अतें न मिलने का डर हो और तशह्हुद मिल जाने की उम्मीद हो, तो इस शक्ल में फ़ज्र की सुन्नत न पढ़े और दूसरे क़ौल को गौहर में कमज़ोर कहा गया मगर फ़त्हुल क़दीर में इसकी ताईद की गई है।
3. जमाअत के खड़े होने के वक़्त की छोटी अज़ान।

तो सही न होगी, अगरचे लोग उसको सुनकर अज़ान समझ लें और अज़ान का मक़्सद इससे हासिल हो जाए।

मस्अला 3—मुअज़्ज़िन (अज़ान देने वाला) का मर्द होना ज़रूरी है, औरत की अज़ान दुरुस्त नहीं। अगर कोई औरत अज़ान दे तो इसको दोहराना चाहिए। अगर बिना दोहराए हुए नमाज़ पढ़ ली जाएगी, तो गोया बे–अज़ान के पढ़ी गयी।

मस्अला 4—मुअज़्ज़िन का अक़्ल वाला होना भी ज़रूरी है। अगर कोई ना–समझ बच्चा या मजनून या मस्त अज़ान दे दे तो एतबार के क़ाबिल न होगी।

मस्अला 5—अज़ान का सुन्नत तरीक़ा यह है कि अज़ान देने वाला दोनों गंदगियों से पाक होकर किसी ऊंची जगह पर मस्जिद से अलग क़िब्ला की तरफ़ मुंह करके खड़ा हो और अपने दोनों कानों के सूराख़ों को कलमे की उंगली से बंद करके अपनी ताक़त के मुताबिक़ बुलंद आवाज़ से, न इतना कि जिससे तक्लीफ़ हो इन बोलों को कहे—

अल्लाहु अक्बर (اَللّٰہُ اَکْبَرُ) चार बार, फिर

अश्हदुअल्लाइलाह इल्लल्लाहु (اَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ)दो बार, फिर

अश्हदु अन्न मुहम्मदर्रसुलुल्लाह (اَشْهَدُ اَنَّ مُحَمَّدًا رَّسُوْلُ اللّٰهِ)दो बार, फिर

हय्य अलस्सला (حَیَّ عَلَی الصَّلٰوۃِ) दो बार, फिर

हय्य अल्लफ़लाह (حَیَّ عَلَی الْفَلَاحِ) दो बार, फिर

अल्लाहु अक्बर (اَللّٰہُ اَکْبَرُ) दो बार, फिर

लाइलाह इल्लल्लाह (لَآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ) एक बार।

'हय्य अलस्सला' कहते वक़्त अपने मुंह को दाहिनी तरफ़ फेर लिया करे, इस तरह कि सीना और क़दम क़िब्ले से फिरने न पाये और 'हय्य अल्लफ़लाह' कहते वक़्त बायीं तरफ़ मुंह फेर लिया करे, इस तरह कि सीना और क़दम क़िब्ले से न फिरने पाये।

फ़ज्र की अज़ान में 'हय्य अलल् फ़लाह' के बाद 'अस्सलातु ख़ैरुम मिनन्नौमि' (اَلصَّلٰوۃُ خَیْرٌ مِّنَ النَّوْمِ) भी दो बार कहे।

तो अज़ान के कुल बोल 15 हुए और फ़ज्र की अज़ान में 17 और अज़ान के लफ़्ज़ों को गाने के तौर पर अदा न करे, और न इस तरह की कुछ पस्त

आवाज़ से और कुछ बुलंद आवाज़ से ।

दो बार अल्लाहु अक्बर कह कर इतनी देर चुप रहे कि सुनने वाला उसका जवाब दे सके और अल्लाहु अक्बर के अलावा दूसरे लफ़्ज़ों में भी हर लफ़्ज़ के बाद इतना ही ख़ामोश रह कर दूसरा लफ़्ज़ कहे।

मस्अला 6—इक़ामत का तरीक़ा भी यही है। सिर्फ़ फ़र्क़ इतना है कि अज़ान मस्जिद से बाहर कही जाती है यानी यह बेहतर है और इक़ामत मस्जिद के अन्दर और अज़ान ऊंची आवाज़ से कही जाती है और इक़ामत दबी आवाज़ से।

इक़ामत में 'अस्सलातु ख़ैरुम् मिनन्नौमि' नहीं कहते बल्कि इसके बजाए पांचों वक़्त में 'क़द क़ामति स्सलातु (قَدْ قَامَتِ الصَّلٰوةُ) दो बार कहे।

इक़ामत कहते वक़्त कानों के सूराखों को बंद करना भी नहीं, इसलिए कि कान के सूराख़ आवाज़ बुलन्द होने के लिए बन्द किये जाते हैं और वह यहां मक़्सूद नहीं।

इक़ामत में 'हय्य अलस्सलाः' और 'हय्य अलल्फ़लाह' कहते वक़्त दाहिने-बाएं मुंह फेरना भी नहीं है, यानी ज़रूरी नहीं, वरना कुछ फ़क़ीहों ने लिखा है।

अज़ान व इक़ामत के हुक्म

मस्अला 1—सब फ़र्ज़ ऐन नमाज़ों के लिए एक बार अज़ान कहना मर्दों पर ताकीदी सुन्नत है, मुसाफ़िर हो या ठहरा हुआ जमाअत की नमाज़ हो या तंहा, अदा नमाज़ हो या क़ज़ा और जुमा की नमाज़ के लिए दोबारा अज़ान कहना।

मस्अला 2—अगर नमाज़ किसी ऐसी वजह से क़ज़ा हुई हो, तो अज़ान छिपे तौर पर धीरे कही जाए, ताकि लोगों को अज़ान सुनकर नमाज़ क़ज़ा होने का इल्म न हो, इसलिए कि नमाज़ का क़ज़ा हो जाना ग़फ़लत और सुस्ती की दलील है और दीन के कामों में ग़फ़लत और सुस्ती गुनाह है और गुनाह का ज़ाहिर करना अच्छा नहीं और अगर नमाज़ें क़ज़ा हुई हों और सब एक ही वक़्त पढ़ी जाएं तो सिर्फ़ पहली नमाज़ की अज़ान देना सुन्नत है और बाक़ी नमाज़ों के लिए सिर्फ़ इक़ामत। हां, यह मुस्तहब है कि हर एक के लिए अज़ान भी अलग दी जाए।

मस्अला 3—मुसाफ़िर के लिए अगर उसके तमाम साथी मौजूद हों, अज़ान मुस्तहब है, ताकीदी सुन्नत नहीं।

मस्अला 4—जो आदमी अपने घर में नमाज़ पढ़े, तंहा या जमाअत से, उसके लिए अज़ान–इक़ामत दोनों मुस्तहब हैं, बशर्ते कि मुहल्ले की मस्जिद या गांव की मस्जिद में अज़ान और इक़ामत हो चुकी हो, इसलिए कि मुहल्ले की अज़ान या इक़ामत तमाम मुहल्ले वालों को काफ़ी है।

मस्अला 5—जिस मस्जिद में अज़ान और इक़ामत के साथ नमाज़ हो चुकी हो, उसमें अगर नमाज़ पढ़ी जाए तो अज़ान और इक़ामत का कहना मकरूह है, हां, अगर उस मस्जिद में कोई मुअज़्ज़िन और इमाम मुक़र्रर न हो तो मकरूह नहीं, बल्कि अफ़ज़ल है।

मस्अला 6—अगर कोई आदमी ऐसी जगह पर, जहां जुमा की नमाज़ की शर्तें पायी जाती हों, और जुमा होता हो, जुह्र की नमाज़ पढ़ें तो उसकी अज़ान और इक़ामत कहना मकरूह है, चाहे वह जुहर की नमाज़ किसी मजबूरी से पढ़ता हो या बिना किसी मजबूरी के और चाहे जुमा की नमाज़ ख़त्म होने से पहले पढ़े या ख़त्म होने के बाद।

मस्अला 7—औरतों को अज़ान और इक़ामत कहना मकरूह है, चाहे जमाअत से पढ़ें या अकेले।

मस्अला 8—फ़र्ज़े ऐन नमाज़ों के सिवा और किसी नमाज़ के लिए अज़ान और इक़ामत सुन्नत नहीं, चाहे फ़र्ज़े किफ़ाया हो, जैसे जनाज़े की नमाज़, या वाजिब हो जैसे वित्र और दोनों ईदें, या नफ़्ल हो जैसे और नमाज़ें।

मस्अला 9—जो आदमी अज़ान सुने, मर्द हो या औरत, पाक हो या नापाक, उस पर आज़ान का जवाब देना मुस्तहब है और कुछ ने वाजिब भी कहा है, लेकिन ज़ाहिर मज़हब में मुस्तहब ही है। यानी जो लफ़्ज़ मुअज़्ज़िन की ज़ुबान से सुने, 'वही कहे। मगर हय्य अलस्सला:' (حَیَّ عَلَی الصَّلٰوۃ)

और 'हय्य अललफ़लाह' (حَیَّ عَلَی الْفَلَاح)

के जवाब में 'ला हौल व ला क़ूवत इल्लाबिल्लाह (لَا حَوْلَ وَلَا قُوَّۃَ اِلَّا بِاللّٰہِ)

भी कहे। और 'अस्सलातु खै़रूम मिनन्नौमि' (اَلصَّلٰوۃُ خَیْرٌ مِّنَ النَّوْم)

के जवाब में 'सदक़्त व बरर्त' (صَدَقْتَ وَبَرَرْتَ) और अज़ान के बाद दरूद शरीफ़ पढ़कर यह दुआ पढ़े—

अल्लाहुम्म रब्ब हाज़िहिद्दअ़ वतित्ताम्मति वस्सलातिल क़ाइमति आति सय्यिदिना मुहम्मद-निल-वसीलत वल्फ़ज़ीलत वब्अस्हु मक़ामम्म हमूद-निल-लज़ी व अत्तहू इन्नक ली तुख़्लिफ़ल मीआद०

मस्अला 10—जुमा की पहली अज़ान सुनकर तमाम कामों को छोड़कर जुमा की नमाज़ के लिए जामा मस्जिद में जाना वाजिब है। ख़रीदना-बेचना या किसी और काम में लगा रहना हराम है।

मस्अला 11—इक़ामत का जवाब देना भी मुस्तहब है, वाजिब नहीं और 'क़द क़ामतिस्सलातु' (قَدْ قَامَتِ الصَّلٰوۃ) के जवाब में 'अक़ामहल्लाहु व अदाम हा' (أَقَامَهَا اللّٰهُ وَأَدَامَهَا) कहे।

मस्अला 12—आठ हालतों में अज़ान का जवाब न देना चाहिए।

1. नमाज़ की हालत में

2. ख़ुत्बा सुनने की हालत में, चाहे वह ख़ुत्वा जुमा का हो या किसी और चीज़ का।

3. 4. हैज़ व निफ़ास में यानी ज़रूरी नहीं,

5. दीन का इल्म पढ़ने-पढ़ाने की हालत में,

6. जिमाअ की हालत में,

7. पेशाब या पाख़ाना की हालत में,

8. खाना खाने की हालत में, यानी ज़रूर नहीं, हां, इन चीज़ों से फ़ारिग़ होने के बाद अगर अज़ान हुए ज़्यादा ज़माना न गुज़रा हो, तो जवाब देना चाहिए, वरना नहीं।

अज़ान और इक़ामत की सुन्नतें वग़ैरह

अज़ान और इक़ामत की सुन्नतें दो क़िस्म की हैं कुछ मुअज़्ज़िन से मुताल्लिक़ हैं कुछ अज़ान और इक़ामत से मुताल्लिक़ हैं, इसलिए हम पहले न० 5 तक मुअज़्ज़िन की सुन्नतों का ज़िक्र करते हैं। इसके बाद अज़ान की सुन्नतें बयान करेंगे—

1. मुअज़्ज़िन मर्द होना चाहिए। औरत की अज़ान और इक़ामत मकरूह तहरीमी है। अगर औरत अज़ान कहे तो उसे दोहरा लेना चाहिए। इक़ामत दोहरायी नहीं जाती, इसलिए इक़ामत का दोहराया जाना शरअ से नहीं, अज़ान को दोहराया जाना इसके ख़िलाफ़ है।

2. मुअज़्ज़िन का अक़्ल वाला होना। मजनून (पागल) और मस्त और ना-समझ बच्चे की अज़ान व इक़ामत मकरूह है और इनकी अज़ानों को

दोहरा लेना चाहिए, न कि इक़ामत को।

3. मुअज़्ज़िन का ज़रूरी मस्अलों और नमाज़ के वक़्तों का जानना अगर जाहिल[1] आदमी अज़ान दे तो उसको मुअज़्ज़िन के बराबर सवाब न मिलेगा।

4. मुअज़्ज़िन का परहेज़गार और दीनदार होना और लोगों के हाल से ख़बरदार रहना, जो लोग जमाअत में न आते हों, उनको तंबीह करना यानी अगर यह ख़ौफ़ न हो कि मुझको कोई सताएगा।

5. मुअज़्ज़िन की आवाज़ का बुलन्द होना।

6. अज़ान का किसी जगह पर मस्जिद से अलग कहना और इक़ामत का मस्जिद के अन्दर कहना। मस्जिद के अन्दर अज़ान कहना मकरूहे तंज़ीही है, हां, जुमा की दूसरी अज़ान का मस्जिद के अन्दर मिंबर के सामने कहना मकरूह नहीं, बल्कि तमाम शहरों में इस पर अमल है।

7. अज़ान का खड़े होकर कहना। अगर कोई आदमी बैठे–बैठे अज़ान कहे तो मकरूह है और इसे दोहराना चाहिए। हां, अगर मुसाफ़िर सवार हो या मुक़ीम, सिर्फ़ अपनी नमाज़ के लिए कहे, तो फिर दोहराने की ज़रूरत नहीं।

8. इनका बुलन्द आवाज़ से कहना, हां अगर सिर्फ़ अपनी नमाज़ के लिए कहे तो अख़्तियार है, मगर फिर भी ज़्यादा सवाब बुलन्द आवाज़ में होगा।

9. अज़ान कहते वक़्त कानों के सूराख़ों को उंगलियों से बंद करना मुस्तहब है।

10. अज़ान के लफ़्ज़ों का ठहर–ठहर कर अदा करना और इक़ामत का जल्द–जल्द कहना सुन्नत है, यानी अज़ान की तक्बीरों में हर दो तक्बीर के बाद इतना रुके कि सुनने वाला उसका जवाब दे सके और तक्बीर के अलावा और लफ़्ज़ों में हर एक लफ़्ज़ के बाद उतना ही रुके, दूसरा लफ़्ज़ कहे और अगर किसी वजह से अज़ान वग़ैरह इतना ठहरे हुए कह दे तो इसका दोहराना मुस्तहब है। और अगर इक़ामत के लफ़्ज़ ठहर–ठहर कर कहे तो उसका दोहराना मुस्तहब नहीं।

11. अज़ान में 'हय्य अलस्सलाः' कहते वक़्त दाहिनी तरफ़ को मुंह फेरना और 'हय्या अललफ़लाह' कहते वक़्त बायीं तरफ़ को मुंह फेरना

---

1. जाहिल से मुराद यह है कि नमाज़ के वक़्तों को ख़ुद न जानता हो और किसी जानकर से पूछकर अज़ान कहे।

सुन्नत है, चाहे वह अज़ान नमाज़ की हो या किसी और चीज़ की, मगर सोना और क़दम क़िब्ले से न फिरने पाये।

12. अज़ान और इक़ामत का क़िब्ले की तरफ़ मुंह करके कहना, बशर्ते कि सवार न हो, बग़ैर क़िब्ला रूख हुए अज़ान व इक़ामत कहना मकरूहे तंज़ीही है।

13. अज़ान कहते वक़्त पाक होना सुन्नत है और दोनों नापाकियों से पाक होना मुस्तहब है और इक़ामत कहते वक़्त दोनों नापाकियों से पाक होना सुन्नत है और बड़ी नापाकी की हालत में कोई आदमी अज़ान कहे तो मकरूह तह्रीमी है और इस अज़ान का दोहराना मुस्तहब है। इसी तरह अगर कोई बड़ी या छोटी नापाकी की हालत में इक़ामत कहे तो मकरूहे तह्रीमी है मगर इक़ामत का दोहराया जाना मुस्तहब नहीं।

14. अज़ान और इक़ामत के लफ़्ज़ों का तर्तीब से कहना सुन्नत है। अगर कोई आदमी बाद के लफ़्ज़ को पहले कह जाए, जैसे 'अश्हदुअल्लाइलाह इल्लल्लाह' से पहले 'अश्हदु अन्न मुहम्मदर्रसूलुल्लाह' कह जाए या 'हय्य अलस्सला' से पहले 'हय्य अललफ़लाह' कह जाए तो इस शक्ल में सिर्फ़ बाद के लफ़्ज़ों का दोहराना ज़रूरी है। जिस उसने पहले कह दिया है।

पहली शक्ल में, 'अश्हदुअल्लाइलाह इल्लल्लाहु' कह कर 'अश्हदुअन्न मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह' फिर कहे और दूसरी शक्ल में 'हय्य अलस्सला' कह कर 'हय्य अललफ़लाह' फिर कहे। पूरी अज़ान दोहराना ज़रूरी नहीं।

15. अज़ान और इक़ामत[1] की हालत में कोई दूसरा कलाम न करना, चाहे वह सलाम का जवाब ही क्यों न हो। अगर कोई आदमी अज़ान व इक़ामत से कलाम करे तो अगर बहुत कलाम किया हो तो अज़ान दोहराये, इक़ामत नहीं।

---

1. यह हुक्म मुअज़्ज़िन का है और अज़ान और तक्बीर सुनने वाले को भी मुनासिब नहीं कि अज़ान और तक्बीर के दर्मियान बात करे और वह न क़ुरआन के पढ़ने में लगा हो और न किसी काम में, सिवाए जवाब देने के अज़ान और इक़ामत का। और अगर वह क़ुरआन पढ़ता हो तो चाहिए कि रोक दे और अज़ान और इक़ामत के सुनने और जवाब देने में लग जाए।

कुछ और मस्अले

मस्अला 1—अगर कोई आदमी अज़ान का जवाब देना भूल जाए या जान–बुझकर न दे और अज़ान के ख़त्म होने के बाद ख़्याल आये या देने का इरादा करे तो अगर ज़्यादा ज़माना न गुज़रा हो, तो जवाब दे दे, वरना, नहीं।

मस्अला 2—इक़ामत कहने के बाद अगर ज़्यादा ज़माना गुज़र जाए और जमाअत क़ायम न हों, तो इक़ामत दोहरानी चाहिए. हां, अगर कुछ थोड़ी सी देर हो जाए तो कुछ ज़रूरत नहीं। अगर इक़ामत हो जाए और इमाम ने फ़ज्र की सुन्नत न पढ़ी हो और पढ़ने में लग जाए, तो यह ज़माना ज़्यादा ताख़ीर (देर) का न समझा जाएगा। और इक़ामत को दोहराया न जाएगा। और अगर इक़ामत के बाद दूसरा काम शुरू कर दिया जाए, जो नमाज़ की क़िस्म से नहीं, जैसे खाना–पीना वग़ैरह तो इस सूरत में इक़ामत को दोहरा लेना चाहिए।

मस्अला 3—अगर मुअज़्ज़िन अज़ान देने की हालत में मर जाए या बेहोश हो जाए या उसकी आवाज़ बंद हो जाए या भूल जाए और कोई बतलाने वाला नहीं या उसका वुज़ू टूट जाए और वह उसको दूर करने के लिए चला जाए, तो इस अज़ान का नये सिरे से दोहराना सुन्नते मुअक्किदा (ताकीदी सुन्नत) है।

मस्अला 4—अगर किसी का अज़ान या इक़ामत कहने की हालत में वुज़ू टूट जाये तो बेहतर है कि अज़ान या इक़ामत पूरी करके ही उस ज़रूरत को करने को जाये।

मस्अला 5—एक मुअज़्ज़िन का दो मस्जिदों में अज़ान देना मकरूह है, जिस मस्जिद में फ़र्ज़ पढ़े, वहीं अज़ान दे।

मस्अला 6—जो शख़्स अज़ान दे, इक़ामत भी उसी का हक़ है। हां, अगर वह अज़ान देकर कहीं चला जाये या किसी दूसरे को इजाज़त दे दे तो दूसरा भी कह सकता है।

मस्अला 7—कई मुअज़्ज़िनों का एक साथ अज़ान कहना जायज़ है।

मस्अला 8—मुअज़्ज़िन को चाहिए कि इक़ामत जिस जगह कहना शुरू करे, वहीं ख़त्म करे।

मस्अला 9—अज़ान और इक़ामत के लिए नीयत शर्त नहीं, हां, सवाब बग़ैर नीयत के नहीं मिलता और नीयत यह है कि दिल में यह इरादा कर ले कि मैं अज़ान सिर्फ़ अल्लाह तआला की खुशी और सवाब के लिए कहता हूं। इसके अलावा कोई मक़्सद नहीं।

नमाज़ की शर्तों का बयान

तहारत (पाकी) के मस्अले

मस्अला 1—अगर कोई चादर इतनी बड़ी हो कि उसका नजिस हिस्सा नमाज़ पढ़ने वाले के उठने-बैठने से हिले-डुले नहीं, तो कुछ हरज नहीं और इसी तरह उस चीज़ को भी पाक होना चाहिए, जिसको नमाज़ पढ़ने वाला उठाये हो, बशर्ते कि वह चीज़ खुद अपनी ताक़त से रुकी हुई न हो, जैसे नमाज़ पढ़ने वाला किसी बच्चे को उठाये हुए हो और उस बच्चे का जिस्म या कपड़ा नजिस हो और वह बच्चा खुद अपनी ताक़त से रुका हुआ न हो, तब तो उसका पाक होना नमाज़ की सेहत के लिए शर्त है। पस जब उस बच्चे का बदन और कपड़ा इस क़दर गंदा हो जो नमाज़ में रुकावट डालने वाला है, तो इस शक्ल में उस आदमी की नमाज़ ठीक न होगी और अगर खुद अपनी ताक़त से रुका हुआ बैठा हो, तो कुछ हरज नहीं, इसलिए कि वह अपनी ताक़त और सहारे से बैठा है। पस यह गंदगी उसी की तरफ़ लगी कही जाएगी और नमाज़ पढ़ने वाले से कुछ उसका ताल्लुक़ न समझा जाएगा। इसी तरह अगर नमाज़ पढ़ने वाले के जिस्म पर कोई ऐसी नजिस चीज़ हो, जो अपने पैदा होने की जगह पर हो और बाहर उसका कुछ असर मौजूद न हो, तो कुछ हरज नहीं, इसलिए कि इसकी तरी इसके जिस्म के अंदर है और वही उसके पैदा होने की जगह है, पस उस गंदगी जैसा होगा जो इन्सान के पेट में रहती है, जिससे पाकी शर्त नहीं। इसी तरह अगर कोई ऐसा अंडा, जिसकी ज़र्दी ख़ून हो गयी हो, नमाज़ पढ़ने वाले के पास हो, तो भी कुछ हरज नहीं, इसलिए कि इसका ख़ून उसी जगह है, जहां पैदा हुआ है, बाहर उसका कुछ असर नहीं। इसके ख़िलाफ़ कि अगर शीशी में पेशाब भरा हो और वह नमाज़ पढ़ने वाले के पास हो, अगर्चे मुंह उसका बंद हो, इसलिए कि उसका

पेशाब ऐसी जगह नहीं है, जहां पेशाब पैदा होता है।

मस्अला 2—नमाज़ पढ़ने की जगह नजासते हक़ीक़ीया[1] से पाक होनी चाहिए। हां, अगर नजासत माफ़ होने भर की हो, तो कोई हरज नहीं। नमाज़ पढ़ने की जगह से वह जगह मुराद है, जहां उसके घुटने, हाथ, माथा और नाक रहती है।

मस्अला 3—अगर सिर्फ़ एक पैर की जगह पाक हो और दूसरे पैर को उठाये रहे, तब भी काफ़ी है।

मस्अला 4—अगर किसी कपड़े पर नमाज़ पढ़ी जाए, तब भी उसका इसी क़दर पाक होना ज़रूरी है, पूरे कपड़े का पाक होना ज़रूरी नहीं, चाहे कपड़ा छोटा हो या बड़ा।

मस्अला 5—अगर किसी जगह कोई पाक कपड़ा बिछाकर नमाज़ पढ़ी जाए तो इसमें यह भी शर्त है कि वह कपड़ा इतना बारीक न हो कि उसके नीचे की चीज़ साफ़ तौर पर इससे नज़र आये।

मस्अला 6—अगर नमाज़ पढ़ने की हालत में नमाज़ पढ़ने वाले का कपड़ा किसी नजिस जगह पर पड़ता हो[2] तो कुछ हरज नहीं।

मस्अला 7—अगर कपड़े के इस्तेमाल में आदमियों के काम की वजह से मजबूरी हो तो जब मजबूरी जाती रहेगी, नमाज़ दोहरानी पड़ेगी, जैसे कोई शख़्स जेल में हो और जेल के मुलाज़िमों ने उसके कपड़े उतार लिए हों या कोई दुश्मन कहता हो कि अगर तू कपड़े पहनेगा तो मैं तुम्हें मार डालूंगा और अगर आदमियों की तरफ़ से नहीं तो फिर नमाज़ को दोहराने की ज़रूरत नहीं, जैसे किसी के पास कपड़े ही न हों।

मस्अला 8—अगर किसी के पास एक कपड़ा हो कि चाहे उससे अपने जिस्म को छिपाए, चाहे उसको बिछाकर नमाज़ पढ़े तो उसको चाहिए कि अपने जिस्म को छिपा ले और नमाज़ उसी नापाक जगह में पढ़ लें, अगर पाक जगह न मिले।

---

1. यानी जितनी नापाक चीज़ें हैं, जैसे, पेशाब पाख़ाना, मनी वग़ैरह।
2. यानी जबकि पाक जगह खड़ा हो और सज्दा करने में कपड़े जिस जगह पर पड़ते हों, बशर्ते कि वह नापाक जगह सूखी या गीली हो, मगर कपड़ों में इस क़दर नजासत का असर न आये जो नमाज़ में रूकावट बन जाए।

क़िब्ला के मस्अले

मस्अला 1—अगर क़िब्ला मालूम न होने की शक्ल में जमाअत से नमाज़ पढ़ी जाए, तो इमाम और मुक़्तदी[1], सबको अपने अपने गुमान पर अमल करना चाहिए, लेकिन अगर किसी मुक़्तदी का ग़ालिब गुमान इमाम के ख़िलाफ़ होगा, तो उसकी नमाज़ उस इमाम के पीछे न होगी, इसलिए कि वह इमाम उसके नज़दीक ग़लती पर है और किसी को ग़लती पर समझकर उसकी इक़्तिदा[2] जायज़ नहीं।

नीयत के मस्अले

मस्अला 1—मुक़्तदी को अपने इमाम की इक़्तिदा की नीयत करना भी शर्त है।

मस्अला 2—इमाम को सिर्फ़ अपनी नमाज़ की नीयत करना शर्त है, इमामत की नीयत करना शर्त नहीं। हां, अगर कोई औरत उसके पीछे नमाज़ पढ़ना चाहे और मर्दों के बराबर खड़ी हो और जनाज़ा, जुमा और ईदों की नमाज़ न हो, तो उसकी इक़्तिदा सही होने के लिए उसकी इमामत की नीयत करना शर्त है और अगर मर्दों के बराबर न खड़ी हो या जनाज़ा, जुमा या ईदों की नमाज़ न हो, तो फिर शर्त नहीं।

मस्अला 3—मुक़्तदी को इमाम का तै करना शर्त नहीं कि वह ज़ैद है या उमर बल्कि सिर्फ़ इतनी नीयत काफ़ी है कि मैं इस इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ता हूं, हां, अगर नाम लेकर तै कर लेगा और फिर उसके ख़िलाफ़ ज़ाहिर होगा, तो उसकी नमाज़ न होगी। जैसे, किसी शख़्स ने यह नीयत की कि मैं ज़ैद के पीछे नमाज़ पढ़ता हूं, हालांकि जिसके पीछे नमाज़ पढ़ता है, वह ख़ालिद है, तो उसकी नमाज़ न होगी।

मस्अला 4—जनाज़े की नमाज़ में यह नीयत करना चाहिए कि मैं यह नमाज़ अल्लाह तआला की ख़ुशनूदी और इस मैयत की दुआ के लिए

---

1. इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ने वाले,
2. पैरवी,

पढ़ता हूं और मुक़्तदी को यह न मालूम हो कि यह मय्यत मर्द है या औरत, तो उसको यह नीयत कर लेना काफ़ी है कि मेरा इमाम जिसकी नमाज़ पढ़ता है, उसको मैं भी पढ़ता हूं।[1]

कुछ उलेमा के नज़दीक सही यह है कि फ़र्ज़ और वाजिब नमाज़ों के सिवा और नमाज़ों में सिर्फ़ नमाज़ की नीयत कर लेना काफ़ी है। इस ख़ास करने की कोई ज़रूरत नहीं कि यह नमाज़ सुन्नत है या मुस्तहब और सुन्नत फ़ज्र के वक़्त की है या ज़ुहर के वक़्त की है, या यह सुन्नत तहज्जुद या तरावीह या चांद गरहन की है या सूरज–गरहन की, मगर तर्जीह इसी बात को दी गयी है कि ख़ास करके ही नीयत करे।

तक्बीर तह्रीमा[2] का बयान

मस्अला 1—कुछ न जानने वाले जब मस्जिद में आकर इमाम को रुकूअ में पाते हैं, तो जल्दी से आते ही झुक जाते हैं और उसी हालत में तक्बीरे तह्रीमा कहते हैं, उनकी नमाज़ नहीं होती, इसलिए कि तक्बीरे तह्रीमा नमाज़ के सही होने की शर्त है और तक्बीरे तह्रीमा के लिए क़ियाम[3] शर्त है, जबकि क़ियाम न किया, वह सही न हुई और जब वह सही न हुई तो नमाज़ कैसे हो सकती है ?

फ़र्ज़ नमाज़ के कुछ मस्अले

मस्अला 1—आमीन के आलिफ़ (आ) को बढ़ाकर पढ़ना चाहिए, इसके बाद कोई सूरः क़ुरआन मजीद की पढ़े।

मस्अला 2—अगर सफ़र की हालत हो या कोई ज़रूरत सामने हो, तो अख़्तियार है कि सूरः फ़ातिहा के बाद जो सूरः चाहे पढ़े। अगर सफ़र और ज़रूरत की हालत न हो तो फ़ज्र और ज़ुहर की नमाज़ में सूरः हुजुरात और सूरः बुरूज और उनके दर्मियान की सूरतों में जिसको चाहे

---

1. अगर इमाम औरत की नमाज़ पढ़ता है तो मैं भी औरत की नमाज़ पढ़ता हूं और अगर इमाम मर्द की नमाज़ पढ़ता है तो मैं भी मर्द की पढ़ता हूं।
2. नीयत बांधने के बाद की पहली तक्बीर।
3. खड़ा होना।

पढ़े।

फ़ज्र की पहली रक्अत में, दूसरी रक्अत के मुक़ाबले में बड़ी सूरः होनी चाहिए। बाक़ी वक़्तों में दोनों रक्अतों की सूरतें बराबर होनी चाहिएं। एक–दो आयत की कमी–बेशी का कुछ एतबार नहीं। अस्र और इशा की नमाज़ में 'वस्समाइ वत्तारिक़ि' और 'लम यकुन' और उनके दर्मियान की सूरतों में से कोई सूरः पढ़नी चाहिए। मग़्रिब की नमाज़ में 'इज़ाज़ुलज़िलत' आख़िर तक।

मस्अला 3—जब रुकूअ से उठकर सीधा खड़ा हो तो इमाम सिर्फ़ 'समिअल्लाहु लिमन हमिदह' और मुक़्तदी सिर्फ़ 'रब्बना लकल हम्दु' और मुंफ़रिद[1] दोनों कहे, फिर तक्बीर कहता हुआ दोनों हाथों को घुटनों पर रखे हुए सज्दे में जाए। तक्बीर का आख़िर और सज्दे का शुरू साथ ही हो यानी सज्दे में पहुंचते ही तक्बीर ख़त्म हो जाए।

मस्अला 4—सज्दे में पहले घुटनों को ज़मीन पर रखना चाहिए, फिर हाथों को, फिर नाक को, फिर माथे को, मुंह दोनों हाथों के दर्मियान में होना चाहिए और उंगलियां मिली हुई क़िब्ला–रुख़ होनी चाहिएं और दोनों पैर उंगलियों के बल खड़े हुए हों और उंगलियों का रुख़ क़िब्ले की तरफ़ और पेट ज़ानू से अलग और बाज़ू बग़ल से जुदा हों। पेट ज़मीन से इतना ऊंचा हो कि बकरी का बहुत छोटा बच्चा दर्मियान से निकल सके।

मस्अला 5—फ़ज्र, मग़्रिब और इशा के वक़्त पहली दो रक्अतों में सूरः फ़ातिहा और दूसरी सूरः और 'समिअल्लाहु लिमन हमिदह' और सब तक्बीरें इमाम बुलन्द आवाज़ से कहे और मुंफ़रिद को क़िर्अत[2] में तो अख़्तियार है, मगर समिअल्लाहु लिमन हमिदह और तक्बीर धीरे से कहे। ज़ुहर–असर के वक़्त इमाम सिर्फ़ समिअल्लाहु लिमन हमिदह और सब तक्बीरें बुलंद आवाज़ से कहे और मुंफ़रिद धीरे और मुक़्तदी हर वक़्त तक्बीरें वग़ैरह धीरे से कहे।

मस्अला 6—नमाज़ ख़त्म कर चुकने के बाद दोनों हाथ सीने तक उठाकर फैलाये और अल्लाह तआला से अपने लिए दुआ मांगे और इमाम हो तो तमाम मुक़्तदियों के लिए भी। दुआ मांग चुकने के बाद दोनों हाथ

---

1. अकेले नमाज़ पढ़ने वाला
2. क़ुरआन का आवाज़ से पढ़ना

मुंह पर फेर ले। मुक़्तदी चाहे अपनी–अपनी दुआ मांगे या इमाम की दुआ सुनायी दे तो चाहे सब 'आमीन–आमीन'[1] कहते रहें।

मस्अला 7—जिन नमाज़ों के बाद सुन्नतें हैं, जैसे ज़ुहर, मग़्रिब, इशा, उनके बाद बहुत देर तक दुआ न मांगे, बल्कि मुख़्तसर दुआ मांगकर उन सुन्नतों के पढ़ने में लग जाए और जिन नमाज़ों के बाद सुन्नतें नहीं, जैसे फ़ज्र, असर, इनके बाद जितनी देर तक चाहे, दुआ मांगे और इमाम हो तो मुक़्तदियों के दाहिनी या बायीं तरफ़ को मुंह फेरकर बैठ जाए, इसके बाद दुआ मांगे, बशर्ते कि कोई मस्बूक़ उसके मुक़ाबले में नमाज़ न पढ़ रहा हो।

मस्अला 8—फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद, बशर्ते कि इनके बाद सुन्नतें न हों, वरना सुन्नत के बाद मुस्तहब है कि 'अस्तग़्फ़िरुल्लाहल्लज़ी ला इलाह इल्ला हुवल हय्युल क़य्यूम' (أَسْتَغْفِرُ اللّٰهَ الَّذِىْ لَا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ الْحَىُّ الْقَيُّوْمُ) तीन बार 'आयतल कुर्सी', 'कुल हुवल्लाहु अहद', 'कुल अऊज़ु बिरब्बिल फ़लक़', 'क़ुल अऊज़ु बिरब्बिन्नास' एक बार पढ़कर तैंतीस बार 'सुबहानल्लाह', तैंतीस बार 'अलहमदुलिल्लाह' और चौंतीस बार अल्लाहु अक्बर' पढ़।

मस्अला 9—औरतें भी इसी तरह नमाज़ पढ़ें। सिर्फ़ कुछ जगहों पर उनको इसके ख़िलाफ़ करना चाहिए, जिनकी तफ़्सील नीचे दी जाती हैं—

1. तक्बीरे तह्रीमा के वक़्त मर्दों को चादर वग़ैरह से हाथ निकाल कर कानों तक उठाना चाहिए। अगर कोई ज़रूरत, जैसे सर्दी वग़ैरह, अंदर हाथ रखने की न हो और औरतों को हर हाल में बग़ैर हाथ निकाले हुए कंधों तक उठाना चाहिए।

2. तक्बीरे तह्रीमा के बाद मर्दों को नाफ़ के नीचे हाथ बांधना चाहिए और औरतों को सीने पर।

3. मर्दों को छोटी उंगली और अंगूठे का हल्क़ा[2] बनाकर बायीं कलाई को पकड़ना चाहिए और दाहिनी तीन उंगलियां बायीं कलाई पर बिछाना चाहिए और औरतों को दाहिनी हथेली की पीठ पर रख देना चाहिए। हल्क़ा बनाना और बायीं कलाई को पकड़ना न चाहिए।

---

1. ऐसा ही हो, ऐसा ही हो।
2. घेरा।

4. मर्दों को रुकूअ में अच्छी तरह झुक जाना चाहिए कि सर और सुरीन और पीठ बराबर हो जाएं और औरतों को इतना न झुकना चाहिए, बल्कि सिर्फ़ इतना कि जिसमें उनके हाथ घुटनों तक पहुंच जाएं।

5. मर्दों को रुकूअ में उंगलियां फैला कर घुटनों पर रखना चाहिए और औरतों को बिना फलाए हुए, बल्कि मिलाकर।

6. मर्दों को रुकूअ की हालत में कुहनियां पहलू से अलग रखनी चाहिए और औरतों को मिली हुई।

7. मर्दों को सज्दे में पेट रानों से और बाज़ू बग़ल से जुदा रखना चाहिए और औरतों को मिला हुआ।

8. मर्दों को सज्दे में कुहनियां ज़मीन से उठी हुई रखना चाहिए और औरतों को ज़मीन पर बिछी हुई।

9. मर्दों को सज्दे में दोनों पैर उंगलियों के बल खड़े रखना चाहिए और औरतों को नहीं।

10. मर्दों को बैठने की हालत में बायें पैर पर बैठना चाहिए और दाहिने पैर को उंगलियों के बल खड़ा रखना चाहिए और औरतों को बायीं सुरीन के बल बैठना चाहिए और दोनों पैर दाहिनी तरफ़ निकाल देना चाहिए, इस तरह कि दाहिनी रान बायीं रान पर आ जाए और दाहिनी पिंडली बायीं पिंडली पर।

11. औरतों को किसी वक़्त ऊंची आवाज़ से क़िर्अत करने का अख़्तियार नहीं, बल्कि उनको हर वक़्त धीमी आवाज़ से क़िर्अत करनी चाहिए।

तहीयतुल मस्जिद

मस्अला 1—यह नमाज़ उस आदमी के लिए सुन्नत है, जो मस्जिद में दाख़िल हो।

मस्अला 2—इस नमाज़ का मक़सद मस्जिद का अदब है, जो हक़ीक़त में ख़ुदा ही का अदब है, इसलिए कि मकान का अदब मकान के मालिक के ख़्याल से होता है, बस ग़ैर–ख़ुदा का अदब किसी तरह इसका मक़सद नहीं बन सकता। मस्जिद में आने के बाद बैठने से पहले दो रक्अत नमाज़ पढ़ ले, बशर्ते कि कोई मकरूह वक़्त न हो।

मस्अला 3—अगर मकरूह वक़्त हो तो सिर्फ़ चार बार इन कलमों को कह ले—सुब्हानल्लाह, अल्हम्दु लिल्लाह, व लाइलाह इल्लल्लाहु

वल्लाहु अक्बर (سُبْحَانَ اللّٰهِ وَالْحَمْدُ لِلّٰهِ وَلَا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَاللّٰهُ اَكْبَرُ)
और इसके बाद कोई दरूद शरीफ़ पढ़ ले।

इसकी नीयत यह है—'नवैतु अन उसल्लिय रक्अतें तहीयतिल मस्जिद' (نَوَيْتُ اَنْ اُصَلِّيَ رَكْعَتَيْ تَحِيَّةِ الْمَسْجِدِ) या उर्दू में इस तरह कह ले, चाहे दिल ही में समझ ले कि मैंने यह इरादा किया कि दो रक्अत नमाज़ तहीयतुल मस्जिद पढूं।

मस्अला 4—दो रक्अत की बात कुछ ख़ास नहीं, अगर चार रक्अतें पढ़ी जाएं, तब भी कुछ हरज नहीं। अगर मस्जिद में आते ही कोई फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ी जाए या और कोई सुन्नत अदा की जाए तो वही फ़र्ज़ या सुन्नत तहीयतुल मस्जिद के क़ाइम-मुक़ाम हो जाएगी या इसके पढ़ने से तहीयतुल मस्जिद का सवाब भी मिल जाएगा, अगरचे इसमें तहीयतुल मस्जिद की नीयत नहीं की गयी।

मस्अला 5—अगर मस्जिद में जाकर कोई शख़्स बैठ जाए और उसके बाद तहीयतुल मस्जिद पढ़े, तब भी कुछ हरज नहीं, मगर बेहतर यह है कि बैठने से पहले पढ़ ले।

हदीस—नबी सल्ल० ने फ़रमाया कि जब तुममें से कोई मस्जिद जाया करे तो जब तक दो रक्अत नमाज़ न पढ़ ले, न बैठे।

मस्अला 6—अगर मस्जिद में कई बार जाने का इत्तिफ़ाक़ हो, तो सिर्फ़ एक बार तहीयतुल मस्जिद पढ़ लेना काफ़ी है, चाहे पहली बार पढ़ ले या आख़िर में।

सफ़र की नफ़्लें

मस्अला 1—जब कोई आदमी अपने वतन से सफ़र करने लगे तो उसके लिए मुस्तहब है कि दो रक्अत नमाज़ घर में पढ़कर सफ़र करे और जब सफ़र से आये तो मुस्तहब है कि पहले मस्जिद में जाकर दो रक्अत नमाज़ पढ़ ले, इसके बाद अपने घर जाए।

हदीस—नबी सल्ल० ने फ़रमाया कि कोई अपने घर में उन दो रक्अतों से बेहतर कोई चीज़ नहीं छोड़ जाता जो सफ़र करते वक़्त पढ़ी जाती हैं।

हदीस—नबी सल्ल० जब सफ़र से वापस तशरीफ़ लाते तो पहले

मस्जिद में जाकर दो रक्अत नमाज़ पढ़ लेते थे।

मस्अला 2—मुसाफ़िर को यह मुस्तहब है कि सफ़र के दौरान जब किसी मंज़िल पर पहुंचे और वहां ठहरने का इरादा हो बैठने से पहले दो रक्अत नमाज़ पढ़ ले।

क़त्ल की नमाज़

मस्अला 1—जब कोई मुसलमान क़त्ल किया जाता हो तो उसको मुस्तहब है कि दो रक्अत नमाज़ पढ़कर अपने गुनाहों की माफ़ी की अल्लाह तआला से दुआ करे ताकि यही नमाज़ व इस्तग़्फ़ार दुनिया में उसका आख़िरी अमल रहे।

हदीस—एक बार नबी सल्ल० ने अपने साथियों (रज़ि०) में से कुछ क़ारियों को कुरआन मजीद की तालीम के लिए कहीं भेजा था। रास्ते में मक्का के काफ़िरों ने उन्हें गिरफ़्तार कर लिया, सिवाए हज़रत ख़ुबैब रज़ि० के और सबको वहीं क़त्ल कर दिया। हज़रत ख़ुबैब रज़ि० को मक्का में ले जाकर बड़ी धूम और बड़े एहतिमाम से शहीद किया। जब यह शहीद होने लगे तो उन लोगों से इजाज़त लेकर दो रक्अत नमाज़ पढ़ी। उसी वक़्त से यह नमाज़ मुस्तहब हो गयी।

तरावीह का बयान

मस्अला 1—वित्र का तरावीह के बाद पढ़ना बेहतर है, अगर पहल पढ़ ले तब भी दुरूस्त है।

मस्अला 2—नमाज़ तरावीह में चार रक्अत के बाद इतनी देर तक बैठना, जितनी देर में चार रक्अतें पढ़ी गई हैं, मुस्तहब है। हां, अगर इतनी देर बैठने में लोगों को तक्लीफ़ हो और जमाअत के कम हो जाने का डर हो, तो उससे कम बैठे। इस बैठने में अख़्तियार है, चाहे अकेले नफ़्लें पढ़े, चाहे तस्बीह वग़ैरह पढ़े, चाहे चुप बैठा रहे।

मस्अला 3—अगर कोई आदमी इशा की नमाज़ के बाद तरावीह पढ़ चुका हो, और पढ़ चुकने के बाद मालूम हो कि इशा की नमाज़ में कोई बात ऐसी हो गयी थी, जिसकी वजह से इशा की नमाज़ नहीं हुई, तो उसको इशा की नमाज़ की दोहराने के बाद तरावीह को भी दोहराना

चाहिए।

मस्अला 4—अगर इशा की नमाज़ जमाअत से न पढ़ी गयी हो तो तरावीह भी जमाअत से न पढ़ी जाए, इसलिए कि तरावीह इशा के तहत है, हां, जो लोग जमाअत से इशा की नमाज़ पढ़कर तरावीह जमाअत से पढ़ रहे हैं, उनके साथ शरीक होकर उस आदमी को भी तरावीह का जमाअत से पढ़ना दुरूस्त हो जाएगा, जिसने इशा की नमाज़ बग़ैर जमाअत के पढ़ी है, इसलिए कि वह उन लोगों के ताबेअ समझा जायेगा, जिनकी जमाअत दुरूस्त है।

मस्अला 5—अगर कोई शख़्स मस्जिद में ऐसे वक़्त पहुंचे कि इशा की नमाज़ हो चुकी हो तो उसे चाहिए कि पहले इशा की नमाज़ पढ़ ले फिर तरावीह में शरीक हो और अगर इस दर्मियान में तरावीह की कुछ रक्अतें हो जाएं तो उनको वित्र के बाद पढ़े और यह आदमी वित्र जमाअत से पढ़े।

मस्अला 6—महीने में एक बार क़ुरआन मजीद को तर्तीबवार तरावीह में पढ़ना सुन्नते मुअक्कदा है, लोगों को काहिली या सुस्ती से उसे छोड़ना न चाहिए। हां, अगर यह डर हो कि अगर पूरा क़ुरआन मजीद पढ़ा जाएगा तो लोग नमाज़ में न आएंगे और जमाअत टूट जाएगी, या उनको बहुत ना–गवार होगा तो बेहतर है, जितना लोगों को बोझ न मालूम दे, उतना ही पढ़ा जाए। 'अलम तर कैफ़' से आख़िर तक की दस सूरतें पढ़ दी जाएं। हर रक्अत में एक सूरः, फिर जब दस रक्अतें पढ़ दी जाएं। हर रक्अत में एक सूरः, फिर जब दस रक्अत हो जाएं तो उन्हीं सूरतों को दोबारा पढ़ दे या और जो सूरते चाहे पढ़ें।

मस्अला 7—एक क़ुरआन मजीद से ज़्यादा न पढ़े, उस वक़्त तक कि लोगों का शौक़ न मालूम हो जाए।

मस्अला 8—एक रात में[1] पूरे क़ुरआन मजीद का पढ़ना जायज़ है, बशर्ते कि लोग निहायत शौक़ीन हों कि उनको बोझ न मालूम हो। अगर बोझ मालूम हो और ना–गवार हो, तो मकरूह है।

मस्अला 9—तरावीह में किसी सूरः के शुरू पर एक बार 'बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम' बुलंद आवाज़ से पढ़ देना चाहिए, इसलिए कि बिस्मिल्लाह भी कुरआन मजीद की एक आयत है। अगरचे किसी सूरः का

---

1. शबीना इस हुक्म में शामिल हैं, इसका हुक्म 'इस्लाहुर्रूसूम' में देखो।

हिस्सा नहीं। पस अगर बिस्मिल्लाह बिल्कुल न पढ़ी जाएगी तो क़ुरआन मजीद के पूरे होने में एक आयत की कमी रह जाएगी। और अगर धीमी आवाज़ से पढ़ी जाएगी तो मुक़्तदियों का क़ुरआन मजीद पूरा न होगा।

मस्अला 10—तरावीह का पूरे रमज़ान में पढ़ना सुन्नत है। अगरचे क़ुरआन मजीद महीना पूरे होने से पहले ख़त्म हो जाए, जैसे पंद्रह दिन में पूरा क़ुरआन शरीफ़ पढ़ लिया जाए तो बाक़ी ज़माने में भी तरावीह का पढ़ना सुन्नत मुअक्कदा है।

मस्अला 11—सही[1] यह है कि 'क़ुलहुवल्लाहु' का तरावीह में तीन बार पढ़ना, जैसा कि आजकल रिवाज है मकरूह है।

चांद गरहन व सूरज गरहन की नमाज़

मस्अला 1—सूरज गरहन के वक़्त दो रक्अत नमाज़ सुन्नत है।

मस्अला 2—सूरज गरहन की नमाज़ जमाअत से अदा की जाए, बशर्ते कि जुमा का इमाम या वक़्त का हाकिम या उसका नायब इमामत करे और एक रिवायत में है कि हर इमाम अपनी मस्जिद में सूरज गरहन की नमाज़ पढ़ा सकता है।

मस्अला 3—सूरज गरहन की नमाज़ के लिए अज़ान या इक़ामत नहीं, बल्कि लोगों का जमा करना मक़्सद हो तो 'अस्सलातु जामिअतुन' (जमा करने वाली नमाज़) पुकार दिया जाए।

मस्अला 4—सूरज गरहन की नमाज़ में बड़ी–बड़ी सूरतों का जैसे सूरः बक़रः वग़ैरह पढ़ना और रुकूअ और सज्दों का बहुत देर तक अदा करना सुन्नत है। इसमें क़िर्अत धीरे से पढ़े।

मस्अला 5—नमाज़ के बाद इमाम को चाहिए कि दुआ में लग जाए और मुक़्तदी 'आमीन–आमीन' कहें, जब तक कि गरहन ख़त्म न हो

---

1. मकरूह होने की वजह यह है कि आजकल आम लोगों ने उसको ख़त्म का ज़रूरी हिस्सा समझ लिया है, जैसा कि उनके तरीक़े से मालूम होता है, इसलिए मकरूह है, न यह कि सूरः का दोहराना खुद मुकरूह हो, जैसा कि हज़रत मौलाना ने तीसरे हिस्से के ततिम्मे में एक सवाल के जवाब में लिखा है। पस सूरः का दोहराना चाहे अपने में जायज़ हो या मकरूह, यह रस्म बहरहाल छोड़ देने के क़ाबिल है।

जाए, दुआ में लगा रहना चाहिये। हां, अगर ऐसी हालत में सूरज डूब जाये या किसी नमाज़ का वक़्त आ जाए, तो दुआ को रोक कर नमाज़ में लग जाना चाहिए।

मस्अला 6—चांद गरहन के वक़्त भी दो रक्अत नमाज़ सुन्नत है, मगर इसमें जमाअत सुन्नत नहीं। सब लोग अकेले-अकेले नमाज़ें पढ़ें और अपने-अपने घरों में पढ़ें। मस्जिद में जाना भी सुन्नत नहीं।

मस्अला 7—इसी तरह जब कोई डर या मुसीबत पेश आये तो नमाज़ पढ़ना सुन्नत है, जैसे तेज़ आंधी चले या भूंडोल आये या बिजली गिरे या सितारे बहुत टूटें या बर्फ़ बहुत गिरे या पानी बहुत बरसे या कोई मर्ज़, जैसे हैज़ा वग़ैरह फैल जाये या किसी दुश्मन वग़ैरह का डर हो, मगर इन वक़्तों में जो नमाज़ पढ़ी जाएं, इनमें जमाअत न की जाए, हर आदमी अपने-अपने घर में अकेले पढ़े। नबी सल्ल० को जब कोई मुसीबत या रंज होता तो नमाज़ में लग जाते।

मस्अला 8—जितनी नमाज़ें यहां बयान हुईं, उनके अलावा भी नफ़्ल नमाज़ें जितनी ज़्यादा पढ़ी जाएं, सवाब और दर्जों में तरक़्क़ी की वजह होगी, ख़ासतौर से उन वक़्तों में, जिनकी बड़ाई हदीसों में आयी है। और इनमें इबादत करने का बढ़ावा नबी सल्ल० ने दिया है। जैसे रमज़ान की आख़िरी दस रातों और शाबान की पंद्रहवीं तारीख़ के इन वक़्तों की बड़ी बड़ाइयां हैं और इनमें इबादत का बहुत सवाब हदीस में आया है। हम ने कम जगह को ध्यान में रखने की वजह से इनकी तफ़्सील से नहीं लिखा।

इस्तिस्क़ा[1] की नमाज़ का बयान

जब पानी की ज़रूरत हो और पानी न बरसता हो, उस वक़्त अल्लाह तआला से पानी बरसने की दुआ करना सुन्नत है।

इस्तिस्क़ा के लिए दुआ करना इस तरीक़े से मुस्तहब है कि तमाम मुसलमान मिलकर अपने लड़कों-बूढ़ों और जानवरों सहित नंगे पैर नर्मी और आजिज़ी के साथ मामूली कपड़ों में जंगल की तरफ़ जाएं, तौबा को नये सिरे से करें और हक़वालों के हक़ अदा करें और अपने साथ किसी बद-दीन को न ले जाएं, फिर दो रक्अत बिला अज़ान और इक़ामत के

1. पानी बरसने की दुआ

जमाअत से पढ़ें इमाम आवाज़ से क़िर्अत करे, फिर दो ख़ुत्बा पढ़े, जिस तरह ईद[1] के दिन किया जाता है। फिर इमाम क़िब्ला-रूख होकर खड़ा हो जाये और दोनों हाथ उठाकर अल्लाह तआला से पानी बरसाने की दुआ करे और तमाम हाज़िर लोग भी दुआ करें। तीन दिन लगातार ऐसा ही करें, तीन दिन के बाद नहीं, क्योंकि इससे ज़्यादा साबित नहीं और अगर निकलने से पहले या एक दिन नमाज़ पढ़कर बारिश हो जाए, तो जब भी तीन दिन पूरे कर दें और तीनों दिनों रोज़े भी रखें तो मुस्तहब है और जाने से पहले सदक़ा-ख़ैरात करना भी मुस्तहब है।

नमाज़ के फ़र्ज़ों-वाजिबों के मुताल्लिक़

कुछ मस्अले

मस्अला 1—मुद्रिक पर क़िर्अत नहीं। इमाम की क़िर्अत सब मुक़्तदियों की तरफ़ से काफ़ी है और हनफ़ियों के नज़दीक मुक़्तदी को इमाम के पीछे क़िर्अत करना मकरूह है।

मस्अला 2—मस्बूक़ को अपनी गयी हुई रक्अतों में से एक या दो रक्अत में क़िर्अत करना फ़र्ज़ है।

मस्अला 3—मतलब यह कि इमाम के होते हुए मुक़्तदी को क़िर्अत करना न चाहिए। हां, मस्बूक़ के लिए चूंकि उन गयी हुई रक्अतों में इमाम नहीं होता, इसलिए उसको क़िर्अत चाहिए।

मस्अला 4—सज्दे की जगह को पैरों की जगह से आधा गज़ से ज़्यादा ऊंचा न होना चाहिए। अगर आधे गज़ से ज़्यादा ऊंची जगह पर सज्दा किया जाए तो दुरुस्त नहीं। हां, अगर कोई ऐसी ही ज़रूरत पेश आ जाए तो जायज़ है, जैसे जमाअत ज़्यादा हो और लोग इतने मिलकर खड़े हों कि ज़मीन पर सज्दा मुम्किन न हो तो नमाज़ पढ़ने वालों की पीठ पर सज्दा करना जायज़ है, बशर्ते कि जिस आदमी की पीठ पर सज्दा किया

---

1. यानी जैसे कि ईद की नमाज़ के बाद ख़ुत्बा पढ़ा जाता है, इसी तरह यहां भी नमाज़ के बाद दोनों ख़ुत्बे पढ़े।

जाये, वह भी वही नमाज़ पढ़ता हो, जो सज्दा करने वाला पढ़ रहा हैं।

मस्अला 5—ईदों की नमाज़ में, अलावा मामूली तक्बीरों के छः तक्बीरें कहना वाजिब है।

मस्अला 6—इमाम को फ़ज्र की दोनों रक्अतों में और मग़्रिब की और इशा की पहली दो रक्अतों में, चाहे क़ज़ा हों या अदा और जुमा और ईदों और तरावीह की नमाज़ में और रमज़ान के वित्र में ऊंची आवाज़ से क़िर्अत करना वाजिब है।

मस्अला 7—मुंफ़रिद को फ़ज्र की दोनों रक्अतों में और मग़्रिब की और इशा की पहली दो रक्अतों में अख़्तियार है, चाहे बुलंद आवाज़ से क़िर्अत करे या धीमी आवाज़ से। आवाज़ बुलंद होने की फ़क़ीहों ने यह हद लिखी है कि कोई दूसरा आदमी सुन सके और धीमी आवाज़ की यह हद लिखी है कि ख़ुदा सुन सके, दूसरा न सुन सके।

मस्अला 8—इमाम और मुंफ़रिद को ज़ुहर–असर की कुल रक्अतों में और मग़्रिब और इशा की आख़िरी रक्अतों में धीमी आवाज़ से क़िर्अत करना वाजिब है।

मस्अला 9—जो नफ़्ल नमाज़ें दिन को पढ़ी जाएं, उन्हें धीमी आवाज़ से क़िर्अत करना चाहिए और जो नफ़्लें रात को पढ़ी जाएं, उनमें अख़्तियार है।

मस्अला 10—मुंफ़रिद अगर फ़ज्र, मग़्रिब और इशा की क़ज़ा पढ़े, तो उनमें भी उनको धीमी आवाज़ से क़िर्अत करना वाजिब है। अगर रात को क़ज़ा पढ़े तो उसे अख़्तियार है।

मस्अला 11—अगर कोई आदमी मग़्रिब की या इशा की पहली दूसरी रक्अत में सूरः फ़ातिहा के बाद दूसरी सूरः मिलाना भूल जाए तो उसे तीसरी–चौथी रक्अत में सूरः फ़ातिहा के बाद दूसरी सूरः पढ़ना चाहिए और इन रक्अतों में भी ऊंची आवाज़ से क़िर्अत करना वाजिब है और आख़िर में सज्दा सहव करना चाहिए।

नमाज़ की कुछ सुन्नतें

मस्अला 1—तक्बीरे तहरीमा कहने से पहले दोनों हाथों का

1. यानी जो आदमी दूर खड़ा हो, वह न सुन सके और यह मतलब नहीं कि जो बिल्कुल पास हो, वह भी न सुन सके।

उठाना मर्दों को कानों तक और औरतों को कन्धों तक सुन्नत है। उज़्र की हालत में मर्दों को भी कंधों तक हाथ उठाने में कुछ हरज नहीं।

मस्अला 2—तक्बीरे तह्रीमा के बाद तुरन्त हाथों को बाधं लेना, मर्दों को नाफ़ के नीचे और औरतों को सीने पर सुन्नत है।

मस्अला 3—मर्दों को इस तरह हाथ बांधना कि दाहिनी हथेली पर रख लें और दाहिने अंगूठे और छोटी उंगली से बायीं कलाई को पकड़ लेना और तीन उंगलियां बायीं कलाई पर बिछाना सुन्नत है।

मस्अला 4—इमाम और मुंफ़रिद को सूरः फ़ातिहा के ख़त्म होने के बाद धीमी आवाज़ से आमीन कहना और क़िर्अत बुलंद आवाज़ से हो तो सब मुक़्तदियों को भी धीमे से आमीन कहना सुन्नत है।

मस्अला 5—मर्दों को रूकूअ की हालत में अच्छी तरह झुक जाना कि पीठ और सर और सुरीन सब बराबर हो जाएं, सुन्नत है।

मस्अला 6—रूकूअ में मर्दों को दोनों हाथों का पहलू से जुदा रखना सुन्नत है क़ौमे[1] में इमाम को सिर्फ़ 'समिअल्लाहु लिमन हमिदह' कहना और मुक़्तदी को सिर्फ़ 'रब्बना लकल्हम्दु' और मुंफ़रिद को दोनों कहना सुन्नत है।

मस्अला 7—सज्दे की हालत में मर्दों को अपने पेट का ज़ानू से और कुहनियों का पहलू से अलग रखना और हाथों की बाहों का ज़मीन से उठा हुआ रखना सुन्नत है।

मस्अला 8—पहले और आख़िरी क़ायदा में मर्दों को इस तरह बैठना कि दाहिना पैर उंगलियों के बल खड़ा हो और उसकी उंगलियों का रूख़ क़िब्ले की तरफ़ हो और बायां पैर ज़मीन पर बिछा हो और उसी पर बैठे हों और दोनों हाथ ज़ानुओं पर हों, उंगलियों के सिरे घुटनों के क़रीब हों, यह सुन्नत है।

मस्अला 9—इमाम को सलाम बुलंद आवाज़ से कहना सुन्नत है।

मस्अला 10—इमाम को अपने सलाम में अपने तमाम मुक़्तदियों की नीयत करना, चाहे मर्द हों या औरत या लड़के हों और साथ रहने वाले फ़रिश्तों की नीयत करना और मुक़्तदियों को अपने साथ नमाज़ पढ़ने वालों की और साथ रहने वाले फ़रिश्तों की और अगर इमाम दाहिनी तरफ़ हो तो दाहिने सलाम में और बायीं तरफ़ हो तो बायें सलाम में और अगर सामने हो तो दोनों सलामों में इमाम की भी नीयत करना सुन्नत है।

मस्अला 11—तक्बीरे तह्रीमा कहते वक़्त मर्दों को अपने हाथों

1. रूकूअ के बाद खड़े होने को क़ौमा कहते हैं।

का आस्तीन या चादर वग़ैरह से बाहर निकाल लेना, बशर्ते कि कोई उज़्र जैसे सर्दी वग़ैरह के न हो सुन्नत है।

जमाअत का बयान

चूंकि जमाअत से नमाज़ पढ़ना वाजिब या ताकीदी सुन्नत है।[1] इसलिए इसका ज़िक्र भी नमाज़ के वाजिबों–सुन्नतों के बाद और मकरूहों वग़ैरह से पहले मुनासिब मालूम हुआ और मस्अलों के ज़्यादा और एहतमाम के क़ाबिल होने की वजह से उसके लिए अलग उन्वान क़ायम किया गया। जमाअत कम से कम दो आदमियों के मिलकर नमाज़ पढ़ने को कहते हैं। इस तरह कि एक आदमी उनमें ताबेअ हो और दूसरा मत्बूअ। मत्बूअ को इमाम और ताबेअ को मुक़्तदी कहते हैं।

मस्अला 1—इमाम के सिवा एक आदमी के नमाज़ में शरीक हो जाने से जमाअत हो जाती है, चाहे वह आदमी मर्द हो या औरत, गुलाम हो या आज़ाद, बालिग़ हो या समझदार, नाबालिग़ बच्चा। हां, जुमा और ईदों की नमाज़ में कम से कम इमाम के सिवा तीन आदमियों के बग़ैर जमाअत नहीं होती।

मस्अला 2—जमाअत के होने में यह भी ज़रूरी नहीं कि फ़र्ज़ नमाज़ हो, बल्कि अगर नफ़्ल भी दो आदमी इस तरह एक दूसरे के ताबेअ होकर पढ़ें तो जमाअत हो जाएगी, चाहे इमाम व मुक़्तदी दोनों नफ़्ल पढ़ते हों या मुक़्तदी नफ़्ल पढ़ता हो, हां, जमाअत की नफ़्ल का आदी होना या तीन मुक़्तदियों से ज़्यादा होना मकरूह है।

जमाअत की बड़ाई और ताकीद

जमाअत की बड़ाई और ताकीद में सही हदीसें इतनी आयी हैं कि अगर सब एक जगह जमा की जाएं तो बहुत काफ़ी मोटी किताब तैयार हो सकती है, उनके देखने से क़तई रूप से यह नतीजा निकलता है कि जमाअत, नमाज़ पूरी करने में एक ऊंचे दर्जे की शर्त है।

---

1. यानी कुछ के नज़दीक वाजिब और कुछ के नज़दीक ताकीदी सुन्नत है, जिसका बयान आगे आता है।

नबी सल्ल० ने कभी उसको छोड़ा नहीं। फ़रमाया, यहां तक कि मर्ज़ की हालत में जब आपको खुद चलने की ताक़त न थी, दो आदमियों के सहारे से मस्जिद में तशरीफ़ ले गये और जमाअत से नमाज़ पढ़ी। जमाअत छोड़ने पर आपको सख़्त गुस्सा आता था और जमाअत के छोड़ने पर बड़ी से बड़ी सज़ा देने को आपका जी चाहता था। बेशक मुहम्मद सल्ल० की शरीअत में जमाअत का बहुत बड़ा एहतमाम किया गया है और होना भी चाहिए था। नमाज़ जैसी इबादत की शान भी इसी को चाहती थी कि जिस चीज़ से उसकी तक्मील हो, वह भी ताकीद के ऊंचे दर्जे पर पहुंचा दी जाए। हम इस जगह पर पहले इस आयत को लिखकर जिससे कुछ तफ़्सीर लिखने वालों और फ़क़ीहों ने जमाअत को साबित किया है, कुछ हदीसें बयान करते हैं

अल्लाह का हुक्म है—

'वर्कअूमअर्राकिअ़ीन०' नमाज़ पढ़ने वालों के साथ मिलकर यानी जमाअत से इस आयत में खुला हुआ हुक्म जमाअत से नमाज़ पढ़ने का है, मगर चूंकि रुकूअ के मानी कुछ तफ़्सीर लिखने वालों ने 'गिड़गिड़ा–गिड़गिड़ा कर भी लिखे हैं, इसलिए फ़र्ज़ होना साबित न होगा।

हदीस 1—नबी सल्ल० ने इब्ने उमर रज़ि० जमाअत की नमाज़ में अकेले[1] नमाज़ से सत्ताईस दर्जा ज़्यादा सवाब रिवायत करते हैं।

हदीस 2—नबी सल्ल० ने फ़रमाया कि अकेले नमाज़ पढ़ने से एक आदमी के साथ नमाज़ पढ़ना बहुत बेहतर है और दो आदमियों के साथ और भी बेहतर है और जितनी बड़ी जमाअत हो, उतना ही अल्लाह तआला को पसंद है।

हदीस 3—हज़रत अनस बिन मालिक रज़ि० रिवायत करते हैं कि नबी सल्ल० के साथियों ने इरादा किया कि अपने पुराने मकानों से (चूंकि वे मस्जिदे नबुवी से दूर थे) उठकर नबी सल्ल० के क़रीब आकर ठहरें, तब उनसे नबी सल्ल० ने फ़रमाया कि तुम अपने क़दमों में, जो ज़मीन पर

---

1. मतलब यह है कि अकेले नमाज़ पढ़ने से जितना सवाब मिलता है, जमाअत से पढ़ने में उससे सत्ताईस गुना ज़्यादा मिलता है।

पड़ते हैं, सवाब नहीं समझते।[1]

फ़—इससे मालूम हुआ कि जो आदमी जितनी दूर से चलकर मस्जिद में आयेगा उतना ही ज़्यादा सवाब मिलेगा।

हदीस 4—नबी सल्ल० ने फ़रमाया कि जितना वक़्त नमाज़ के इंतिज़ार में गुज़रता है, वह सब नमाज़ में गिना जाता है।

हदीस 5—नबी सल्ल० ने एक दिन इशा के वक़्त अपने उस उन साथियों से जो जमाअत में शरीक थे, फ़रमाया कि लोग नमाज़ पढ़-पढ़कर सो रहे और तुम्हारा वह वक़्त जो इंतिज़ार में गुज़रा, सब नमाज़ में गिना गया।

हदीस 6—नबी सल्ल० बुरैदा अस्लमी रज़ि० रिवायत करते हैं कि आपने फ़रमाया, खुशख़बरी दो उन लोगों को, जो अन्धेरी रातों में जमाअत के लिए मस्जिद जाते हैं, इस बात की कि क़ियामत में उनके लिए पूरी रोशनी होगी।

हदीस 7—हज़रत उस्मान रज़ि० रिवायत करते हैं कि नबी सल्ल० ने फ़रमाया है कि जो आदमी इशा की नमाज़ जमाअत से पढ़े, उसको आधी रात की इबादत का सवाब मिलेगा और जो इशा और फ़ज्र की नमाज़ जमाअत से पढ़ेगा, उसे पूरी रात का सवाब मिलेगा।

हदीस 8—हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० नबी सल्ल० से रिवायत करते हैं कि एक दिन आपने फ़रमाया कि मेरे दिल में यह इरादा हुआ है कि किसी को हुक्म दूं कि लकड़ियां जमा करे और फिर अज़ान का हुक्म दूं और किसी से कहूं कि वह इमामत करे और मैं उन लोगों के घरों पर जाऊं जो जमाअत में नहीं आते और उनके घरों को जला दूं।

हदीस 9—एक रिवायत में है कि अगर मुझे छोटे बच्चों और औरतों का ख़्याल न होता तो मैं इशा की नमाज़ में लग जाता और ख़ादिमों को हुक्म देता कि उनके घरों के माल व अस्बाब को उनके साथ जला दें। (मुस्लिम)

इस हदीस में इशा का ख़ास करना इस मस्लहत से मालमू होता है कि वह सोने का वक़्त होता है और शायद तमाम लोग उस वक़्त घरों में

---

1. लेकिन अगर किसी के मुहल्ले में मस्जिद हो तो उसको छोड़कर दूर न जाये, क्योंकि मुहल्ले की मस्जिद का हक़ है, बल्कि अगर वहां जमाअत भी न होती हो तब भी वहां ही जाकर अज़ान व इक़ामत कह कर तंहां नमाज़ पढ़े।

होते हैं। इमाम तिर्मिज़ी इस हदीस को लिखकर फ़रमाते हैं कि यही मज़मून इब्ने मस्ऊद, अबुद्दर्दा, इब्ने अब्बास और जाबिर रज़ियल्लाहु तआला अन्हुम से भी रिवायत की गयी है। ये सब लोग नबी सल्ल० के क़रीबी साथियों में से हैं।

हदीस 10—हज़रत अबूद्दर्दा रज़ि० फ़रमाते हैं कि नबी सल्ल० ने फ़रमाया कि किसी आबादी या जंगल में तीन मुसलमान हों और जमाअत से नमाज़ न पढ़ें तो बेशक उन पर शैतान ग़ालिब हो जाएगा। पस ऐ अबुद्दर्दा ! जमाअत को अपने ऊपर ज़रूरी समझ लो। देखो भेड़िया (शैतान) उसी बकरी (आदमी) को खाता है (बहकाता है) जो अपने गल्ले (जमाअत) से अलग हो गयी हो।

हदीस 11—इब्ने अब्बास रज़ि० से रिवायत है कि जो आदमी अज़ान सुनकर जमाअत में न आये और उसे कोई उज़्र भी न हो, तो उसकी वह नमाज़ जो अकेली पढ़ी हो, क़ुबूल न होगी।[1] साथियों ने पूछा कि वह उज़्र क्या है ? हज़रत सल्ल० ने फ़रमाया कि डर या रोग।

इस हदीस में डर या रोग की तफ़्सील नहीं की गयी। कुछ हदीसों में कुछ तफ़्सील भी है।

हदीस 12—हज़रत मेहजन रज़ि० फ़रमाते हैं कि एक बार मैं नबी सल्ल० के साथ था कि इतने में अज़ान हुई और अल्लाह के रसूल सल्ल० नमाज़ पढ़ने लगे और मैं अपनी जगह पर जाकर बैठ गया। प्यारे नबी सल्ल० ने नमाज़ से फ़ारिग़ होकर फ़रमाया कि ऐ मेहजन ! तुमने जमाअत से नमाज़ क्यों न पढ़ी ? क्या तुम मुसलमान नहीं हो ? मैंने अर्ज़ किया कि ऐ अल्लाह के रसूल सल्ल० ! मैं मुसलमान तो हूं मगर अपने घर में नमाज़ पढ़ चुका था। नबी सल्ल० ने फ़रमाया कि जब मस्जिद में आओ और देखो कि जमाअत हो रही है, लोगों के साथ मिलकर नमाज़ पढ़ लिया करो। अगर्चे[2] पढ़ चुके हो।

---

1. यानी पूरा सवाब न मिलेगा कि यह नहीं कि फ़र्ज़ अदा न होगा, कभी कोई इस ख़्याल से नमाज़ ही छोड़ दे कि नमाज़ तो क़ुबूल तो होगी ही नहीं, फिर तंहा भी न पढ़े, क्योंकि कुछ फ़ायदा नहीं। ऐसा ख़्याल हरगिज़ न चाहिए।
2. मगर फ़ज्र, असर और मग़्रिब की नमाज़ अगर तंहा पढ़ ली हो और फिर जमाअत हो तो अब जमाअत में शामिल न होना चाहिए, इसलिए कि फ़ज्र और असर के बाद तो नफ़्लें न पढ़ना चाहिए और मग़्रिब में इसलिए कि तीन रक्अत नफ़्लों की शरीअत में नहीं है।

मौजूद है कि नबी सल्ल० के मुबारक क़दम ज़मीन पर घसिटते हुए जाते थे यानी इतनी ताक़त भी न थी कि ज़मीन से पैर उठा सकें। वहां हज़रत अबूबक्र रज़ि० नमाज़ शुरू कर चुके थे, चाहा कि पीछे हट जाएं मगर नबी सल्ल० ने मना फ़रमाया और उन्हीं से नमाज़ पढ़वायी।

असर 2—एक दिन हज़रत अमीरुल मोमिनीन उमर फ़ारूक़ रज़ि० ने सुलेमान बिन अबी हश्मा को सुबह की नमाज़ में नहीं पाया, तो उनके घर गये और उनकी मां से पूछा कि अजा मैंने सुलैमान को फ़ज्र की नमाज़ में नहीं देखा। उन्होंने कहा कि वह रात भर नमाज़ पढ़ते रहे, इस वजह से उस वक़्त उनको नींद आ गयी। तब हज़रत फ़ारूक़ रज़ि० ने फ़रमाया कि मुझे फ़ज्र की नमाज़ जमाअत के साथ पढ़ना ज़्यादा प्यारी है, इसके मुक़ाबले में कि तमाम रात इबादत करूं। —मुअत्ता इमाम मालिक

शैख़ अब्दुल हक़ मुहद्दिस देहलवी ने लिखा है कि इस हदीस से साफ़ ज़ाहिर है कि सुबह की नमाज़ जमाअत से पढ़ने में तहज्जुद से भी ज़्यादा सवाब है। इसलिए उलेमा ने लिखा है कि अगर शब–बेदारी (रात का जागना) फ़ज्र की नमाज़ में ख़लल डालता हो तो उसका छोड़ देना बेहतर है। —अशअतुल लमआत

असर 3—हज़रत इब्ने मस्ऊद रज़ि० फ़रमाते हैं कि बेशक हमने आज़मा लिया अपने को और सहाबा रज़ि को कि जमाअत नहीं छोड़ता, मगर वह मुनाफ़िक़, जिसका निफ़ाक़[1] खुला हुआ हो या बीमार, मगर बीमार भी दो आदमियों का सहारा लेकर जमाअत के लिए हाज़िर होते थे। बेशक नबी सल्ल० ने हमें हिदायत की राहें बतलायीं, उनमें नमाज़ भी है उन मस्जिदों में, जहां अज़ान होती हो यानी जमाअत होती हो।

दूसरी रिवायत में है कि फ़रमाया, जिसे ख़्वाहिश हो कल (क़ियामत में) अल्लाह तआला के सामने मुसलमान जाए, उसे चाहिए कि पंचवक़्ती नमाज़ों की पाबंदी करे उन जगहों पर जहां अज़ान हुई हो। (यानी जमाअत से नमाज़ पढ़ी जाती हो) बेशक अल्लाह तआला ने तुम्हारे नबी सल्ल० के लिए हिदायत के तरीक़े निकाले हैं और यह नमाज़ भी उन्हीं तरीक़ों में से है। अगर तुम अपने घरों में नमाज़ पढ़ लिया करोगे, जैसे कि मुनाफ़िक़ पढ़ लेता है तो बेशक छूट जाएगी तुमसे तुम्हारे नबी सल्ल० की सुन्नत और अगर तुम छोड़ दोगे अपने पैग़म्बर सल्ल० की सुन्नत को तो

1. यानी ज़ाहिर में मुसलमान होना और हक़ीक़त में काफ़िर होना।

बेशक गुमराह हो जाओगे और कोई शख़्स अच्छी तरह वुज़ू करके नमाज़ के लिए मस्जिद नहीं जाता, मगर उसके हर क़दम पर एक सवाब मिलता है और एक दर्जा मिलता है और एक गुनाह माफ़ होता है और हमने देख लिया कि जमाअत से अलग नहीं रहता मगर मुनाफ़िक़। हम लोगों की हालत तो यह थी कि बीमारी की हालत में दो आदमियों पर तकिया लगाकर जमाअत के लिए लाये जाते थे और लाइन में खड़े कर दिए जाते थे।[1]

असर 4—एक बार एक आदमी मस्जिद से अज़ान के बाद[2], नमाज़ पढ़े बग़ैर चला गया, तो हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० ने फ़रमाया कि उस आदमी ने अबुल् क़ासिम सल्ल० की नाफ़रमानी की और उनके पाक हुक्म को न माना। —मुस्लिम शरीफ़

देखो, हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० ने जमाअत छोड़ने को क्या कहा ? क्या किसी मुसलमान को अब भी बे–उज़्र जमाअत छोड़ने की हिम्मत हो सकती है ? क्या किसी ईमानदार को हज़रत अबुल् क़ासिम सल्ल० की ना–फ़रमानी गवारा हो सकती है ?

असर 5—हज़रत उम्मे दर्दा रज़ि० फ़रमाती हैं कि एक बार हज़रत अबूदर्दा रज़ि० मेरे पास इस हाल में आये कि निहायत गुस्से में थे। मैंने पूछा कि इस वक़्त आपको गुस्सा क्यों आया ? कहने लगे, अल्लाह की क़सम ! मैं मुहम्मद सल्ल० की उम्मत में अब कोई बात नहीं देखता, मगर यह कि वे जमाअत से नमाज़ पढ़ लेते हैं, यानी अब इसको भी छोड़ने लगे हैं।

असर 6—नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बहुत से साथियों से रिवायत किया जाता है कि उन्होंने फ़रमाया कि जो कोई अज़ान सुनकर जमाअत में न जाए, उसकी नमाज़ ही न होगी। यह लिखकर इमाम तिर्मिज़ी लिखते हैं कि कुछ आलिमों ने कहा है कि हुक्म ताकीदी है। मक़्सद यह है कि बे–उज़्र जमाअत का छोड़ना जायज़ नहीं।[3]

---

1. मिश्कात शरीफ़।
2. अज़ान के बाद मस्जिद से ऐसे शख़्स को कि फिर उस मस्जिद में आकर जमाअत के साथ नमाज़ पढ़ने का इरादा रखता हो, बाहर जाना मना है, हां अगर कोई बड़ा बहाना हो और सख़्त मजबूरी हो, तो हरज नहीं।
3. और बे उज़्र अकेले नमाज़ पढ़ने से अगर्चे नमाज़ हो जाएगी, मगर कामिल (पूरी) न होगी।

असर 7—मुजाहिद ने इब्ने अब्बास रज़ि० से पूछा कि जो आदमी तमाम दिन रोज़े रखता हो और रात भर नमाज़ें पढ़ता हो, मगर जुमा और जमाअत में न शरीक होता हो, उसे आप क्या कहते है ? फ़रमाया कि दोज़ख़ में जाएगा। —तिर्मिज़ी

इमाम तिर्मिज़ी इस हदीस का मतलब यह बयान फ़रमाते हैं कि जुमा और जमाअत का दर्जा कम समझकर[1] छोड़ दे तब यह हुक्म किया जाएगा। लेकिन अगर दोज़ख़ में जाने से मुराद थोड़े दिन के लिए जान लिया जाए तो इस मतलब के निकालने की कुछ ज़रूरत न होगी।

असर 8—पुराने नेक बुज़ुर्गों का यह दस्तूर था कि जिसकी जमाअत छूट जाती, सात दिन तक उसका मातम करते थे। —एह्याउल उलूम

सहाबा रज़ि० के क़ौल भी थोड़े से बयान हो चुके, जो हक़ीक़त में नबी सल्ल० के क़ौल हैं। अब ज़रा मुस्लिम गिरोह के उलेमा और बुज़ुर्गों को देखिए कि इनका जमाअत के बारे में क्या ख़्याल है और इन हदीसों का मतलब उन्होंने क्या समझा है।

1. ज़ाहिरीया[2] और इमाम अहमद रह० के कुछ मानने वालों का मज़हब है कि जमाअत नमाज़ के सही होने की शर्त है, बग़ैर इसके नमाज़ नहीं होती।

2. इमाम अहमद का सही मज़हब यह है कि जमाअत फ़र्ज़े ऐन है, अगरचे नमाज़ के सही होने की शर्त नहीं। इमाम शाफ़ई रह० के कुछ मानने वालों का भी यही मज़हब है।

3. इमाम शाफ़ई रह० के कुछ मानने वालों का यह मज़हब है कि जमाअत फ़र्ज़े किफ़ाया है। इमाम तहावी जो हनफ़ीया में एक बड़े दर्जे के फ़क़ीह और हदीस के आलिम हैं, उनका यही मज़हब है।

4. अक्सर हनफ़ी आलिमों के नज़दीक जमाअत वाजिब है। अल्लामा इब्ने हुमाम और हलबी और बहरूर्राइक़ के लेखक वग़ैरह भी इसी तरफ़ हैं।

5. अक्सर हनफ़ीया[3] के नज़दीक जमाअत ताकीदी सुन्नत है मगर

---

1. इसलिए कि शरीअत के हुक्मों को हल्का और छोटा समझना कुफ़्र है और इस मतलब की हाजत जब पड़ेगी कि हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि० के फ़रमाने का यह मतलब हो कि ऐसा आदमी हमेशा जहन्नम में जाएगा।

2. ज़ाहिरीया एक इस्लामी फ़िर्क़े का नाम है।

3. जमाअत के हुक्म के बारे में फ़क़ीहों में इख़्तिलाफ़ हुआ है। कुछ ने कहा है कि जमाअत ताकीदी सुन्नत है और कुछ ने कहा है कि वाजिब है। इसके

वाजिब के हुक्म में और हक़ीक़त में हनफ़ियों के इन दोनों क़ौलों में कुछ मुख़ालफ़त नहीं।

6. हमारे उलेमा लिखते हैं कि अगर किसी शहर में लोग जमाअत छोड़ दें और कहने से भी न मानें तो उनसे लड़ना हलाल है।

7. क़नीह वग़ैरह में है कि बे–उज़्र जमाअत के छोड़ने वाले को सज़ा देना वक़्त के इमाम पर वाजिब है और उसके पड़ोसी अगर उसके इस बुरे काम पर कुछ न बोलें[1] तो गुनाहगार होंगे।

8. अगर मस्जिद जाने के लिए इक़ामत सुनने का इन्तिज़ार करे तो गुनाहगार होगा।[2] यह इसलिए कि अगर इक़ामत सुनकर चला करेंगे तो एक–दो रक्अत या पूरी जमाअत के चले जाने का डर है। इमाम मुहम्मद रह० से रिवायत है कि जुमा और जमाअत के लिए तेज़ क़दम जाना दुरुस्त है, बशर्ते कि ज़्यादा तक्लीफ़ न हो।

9. जमाअत का छोड़ने वाला ज़रूर गुनाहगार है और उसकी गवाही क़ुबूल न की जाएगी, बशर्ते कि उसने बे–उज़्र आसानी के लिए जमाअत छोड़ दी है।

10. अगर कोई आदमी दीनी मस्अलों के पढ़ने और पढ़ाने में दिन–रात लगा रहता हो और जमाअत में हाज़िर न होता हो तो माज़ूर न समझा जाएगा, उसकी गवाही मक़्बूल न होगी। —बहरुर्राइक़ वग़ैरह

बाद कुछ फ़क़ीहों ने इसको रायों का इख़्तिलाफ़ समझा है और इन दोनों को मिलाने की फ़िक्र की है। जिन लोगों ने मिलाने की फ़िक्र की, उनमें से कुछ ने कहा कि ताकीदी सुन्नत का मतलब यह है कि वह वाजिब है और इसका वजूद सुन्नत से साबित है और कुछ ने कहा है कि इसे हमेशा क़ायम रखना ही ताकीदी सुन्नत है और कमी–कमी वाजिब है। ये वे बातें थीं जो फ़िक़्ह की किताबों में मेरी नज़र से गुज़री हैं। यही वह मेल है जो 'इल्मुल फ़िक़्ह' में बयान की गई है और इससे 'बहिश्ती गौहर' में नक़ल हुई थी। वह मेरी नज़र से गुज़री और उसका सही मतलब मेरी समझ में आया, इसमें ग़ैर कर लिया जाए। —मुल्ला हबीब अहमद

1. यानी उसको इस काम से न रोकें और नसीहत अपनी ताक़त के मुताबिक़ न करें जबकि उनको उस आदमी से किसी नुक़्सान का भी डर न हो तो वे पड़ोसी गुनाहगार होंगे।

2. यानी सुस्ती से।

जमाअत की हिक्मतें ओर फ़ायदे

इस बारे में उलेमा ने बहुत कुछ बयान किया है, मगर जहां तक मेरी नज़र पहुंची है, हज़रत शाह मौलाना वलीयुल्लाह सहाब मुहद्दिस देहलवी रह० से बेहतर जामेअ और बेहतर तक़रीर किसी की नहीं। अगरचे ज़्यादा लुत्फ़ यही था कि उन्हीं की पाकीज़ा इबारत से वह मज़ामीन सुने जाएं, मगर मुख़्तसर करने के ख़्याल से मैं उनकी बातों का खुलासा यहां दर्ज करता है। वे फ़रमाते हूं कि—

1. कोई चीज़ इससे ज़्यादा फ़ायदा देने वाली नहीं कि कोई इबादत आम रस्म बना दी जाए, यहां तक कि वह इबादत एक ज़रूरी इबादत हो जाए कि उसका छोड़ना इबादत छोड़ने की तरह ना-मुम्किन हो जाए और कोई इबादत नमाज़ से ज़्यादा शानदार नहीं कि उसके साथ यह ख़ास एहतमाम किया जाए।

2. मज़हब में हर क़िस्म के लोग होते हैं, जाहिल भी, आलिम भी, इसलिए यह बड़ी मस्लहत की बात है कि सब लोग जमा होकर एक-दूसरे के सामने इस इबादत को अदा करें। अगर किसी से कोई गलती हो जाए, तो दूसरा उसे सिखा दे। गोया अल्लाह तआला की इबादत एक ज़ेवर हुई कि तमाम परखने वाले उसे देखते हैं, जो ख़राबी उसमें होती है, बतला देते हैं और जो बेहतरी होती है, उसे पसन्द करते हैं, बस यह एक उम्दा ज़रिया नमाज़ के पूरा करने का होगा।

3. जो लोग बे-नमाज़ी होंगे, उनका हाल भी इससे खुल जाएगा और इनको वाज़ व नसीहत का मौक़ा मिलेगा।

4. कुछ मुसलमानों का मिलकर अल्लाह तआला की इबादत करना और उससे दुआ मांगना एक अजीब ख़ूबी रखता है, रहमत उतरने और क़ुबूल होने की।

5. इस उम्मत से अल्लाह तआला का यह मक़्सद है कि उसका कलमा बुलंद हो और कुफ़्र का कलमा पस्त हो। और धरती पर कोई मज़हब इस्लाम से ग़ालिब न रहे और यह बात जब ही हो सकती है कि यह तरीक़ा मुक़र्रर किया जाए कि तमाम मुसलमान आम व ख़ास मुसाफ़िर और ठहरे हुए, छोटे और बड़े अपनी किसी बड़ी और मशहूर इबादत के लिए जमा हुआ करें और शान व शौकत इस्लाम की ज़ाहिर करें।

इन्हीं सब मस्लहतों से शरीअत की पूरी तवज्जोह जमाअत की तरफ़ हो गयी और इस पर उभारा गया और इसे छोड़ने से सख़्ती के साथ रोका गया। जमाअत में यह फ़ायदा भी है कि तमाम मुसलमानों को एक दूसरे के हाल पर इत्तिला होती रहेगी और एक दूसरे के दर्द व मुसीबत में शरीक हो सकेगा, जिससे दीनी भाईचारा और ईमानी मुहब्बत पूरी तरह ज़ाहिर होगी जो इस शरीअत का एक बड़ा मक़्सद है और जिसकी ताकीद और बड़ाई जगह–जगह क़ुरआन मजीद और नबी सल्ल० की हदीसों में बयान फ़रमाई गई है। अफ़सोस हमारे ज़माने में जमाअत छोड़ने की एक आम आदत हो गयी है। जाहिलों का क्या ज़िक्र, हम कुछ पढ़े–लिखे लोगों को इस बला में फंसे देख रहे हैं। अफ़सोस, ये लोग हदीसें पढ़ते हैं और उनका मतलब समझते हैं, मगर जमाअत की सख़्त ताकीदें उनके पत्थर से ज़्यादा सख़्त दिलों पर कुछ असर नहीं करती। क़ियामत में जब अल्लाह के सामने सबसे पहले नमाज़ के मुक़दमे पेश होंगे और उसके अदा न करने वाले या अदा में कमी करने वालों से पूछ–ताछ शुरू होगी तो ये लोग क्या जवाब देंगे।

जमाअत के वाजिब होने की शर्तें

1. मर्द होना, औरतों पर जमाअत वाजिब नहीं।
2. बालिग़ होना, ना–बालिग़ बच्चों पर जमाअत वाजिब नहीं।
3. आज़ाद होना, गुलाम पर जमाअत वाजिब नहीं।
4. तमाम मजबूरियों से खाली होना, इन मजबूरियों की हालत में जमाअत वाजिब नहीं, मगर अदा करे तो बेहतर है, न अदा करने में जमाअत के सवाब से महरूम रहेगा।

जमाअत छोड़ने की मजबूरियां चौदह हैं—

1. कपड़ा, सतरे औरत के मुताबिक़ न पाया जाना।
2. मस्जिद के रास्तें में सख़्त कीचड़ वग़ैरह हो कि चलना बहुत कठीन हो। इमाम अबू युसूफ़ रह० ने हज़रत इमाम आज़म रह० से पूछा कि कीचड़ वग़ैरह की हालत में जमाअत के लिए आप क्या हुक्म देते हैं ? फ़रमाया कि जमाअत का छोड़ना मुझे पसंद नहीं।
3. पानी बहुत ज़ोर से बरसता हो। ऐसी हालत में इमाम मुहम्मद ने 'मुअत्ता' में लिखा है कि अगरचें न जाना जायज़ है, मगर बेहतर यही है कि जमाअत से जाकर नमाज़ पढ़े।

4. सर्दी सख़्त होना कि बाहर निकलने में या मस्जिद तक जाने में किसी बीमारी के पैदा हो जाने का या बढ़ जाने का ख़ौफ़ हो।

5. मस्जिद जाने में माल व अस्बाब के चोरी हो जाने का डर हो।

6. मस्जिद जाने में किसी दुश्मन के मिल जाने का डर हो।

7. मस्जिद जाने में किसी क़र्ज़ वाले के मिल जाने का और उससे तक्लीफ़ पहुंचने का डर हो बशर्ते कि उसके क़र्ज़ के अदा करने की ताक़त न हो और अगर ताक़त हो तो वह ज़ालिम समझा जाएगा और उसको जमाअत के छोड़ने की इजाज़त न होगी।

8. अन्धेरी रात हो कि रास्ता दिखलायी न देता हो, लेकिन अगर रोशनी का सामान खुदा ने दिया हो तो जमाअत न छोड़नी चाहिए।

9. रात का वक़्त हो और आंधी बहुत सख़्त चलती हो।

10. किसी रोगी की सेवा करता हो कि उसके जमाअत में चले जाने से उस रोगी को तक्लीफ़ या घबराहट का डर हो।

11. खाना तैयार हो या तैयारी के क़रीब हो। और भूख ऐसी लगी हो कि नमाज़ में जी न लगने का डर हो।

12. पेशाब या पाख़ाना ज़ोर का मालूम होता हो।

13. सफ़र का इरादा रखता हो और डर हो कि जमाअत से नमाज़ पढ़ने में देर हो जाएगी, क़ाफ़िला निकल जाएगा। रेल का मस्अला इसी पर सोचा जा सकता है, मगर फ़र्क़ इतना है कि वहां एक क़ाफ़िले के बाद दूसरा क़ाफ़िला बहुत दिनों में मिलता है और यहां रेल एक दिन में कई बार मिल जाती है। अगर एक वक़्त की रेल न मिले तो दूसरे वक़्त जा सकता है। हां, अगर कोई ऐसा ही सख़्त हरज होता हो तो कोई बात नहीं है। इसी वजह से शरीअत से हरज उठा दिया गया है।

14. कोई ऐसी बीमारी हो जिसकी वजह से चल–फिर न सके या अन्धा हो या लुंजा हो या कोई पैर कटा हो, लेकिन जो अंधा बे–तक्लीफ़ मस्जिद तक पहुंच जाए, उसको जमाअत न छोड़ना चाहिए।

जमाअत के सही होने की शर्तें

शर्त 1—इस्लाम, काफ़िर की जमाअत सही नहीं।

शर्त 2—अक़्लमंद होना, मस्त, बेहोश, दीवाने की जमाअत सही नहीं।

शर्त 3—मुक़्तदी की नमाज़ को नीयत के साथ इमाम के इक़्तिदा की भी नीयत करना यानी यह इरादा दिल में करना कि मैं इस इमाम के पीछे फ़लां नमाज़ पढ़ता हूं। नीयत का बयान ऊपर तफ़्सील से लिखा जा चुका है।

शर्त 4—इमाम और मुक़्तदी दोनों के मकान का मिला होना, चाहे हक़ीक़त में मिले हों, जैसे दोनों एक ही मस्जिद[1] या एक ही घर में खड़े हों या हुक्म से मिले हों, जैसे किसी दरिया के पुल पर जमाअत क़ायम की जाए और इमाम पुल के उस प्रार हो, अगर बीच में बराबर सफ़ें खड़ी हों, तो इस सूरत में अगरचे इमाम के और उन मुक्तदियों के दर्मियान जो पुल के उस पार हैं, दरिया रूकावट है और इस वजह से दोनों का मकान हुक्म से एक या मिला हुआ समझा जाएगा और इक़्तिदा सही हो जाएगी।

मस्अला 1—अगर मुक्तदी मस्जिद की छत पर खड़ा हो और इमाम मस्जिद के अंदर हो, तो दुरूस्त है, इसलिए कि मस्जिद की छत मस्जिद के हुक्म में है और ये दोनों जगहें हुक्म से मिली हुई समझी जाएंगी। इसी तरह अगर किसी की छत मस्जिद से मिली हुई हो और बीच में कोई चीज़ रोक न बन रही हो, तो वह भी हुक्म से मस्जिद से मिली हुई समझी जाएगी और उसके ऊपर खड़े होकर उस इमाम की इक़्तिदा करना, जो मस्जिद में नमाज़ पढ़ रहा है, दुरूस्त है।

मस्अला 2—अगर मस्जिद बहुत बड़ी हो और इसी तरह अगर घर बहुत बड़ा हो या जंगल हो और इमाम और मुक़्तदी के दर्मियान इतना ख़ाली मैदान हो कि जिसमें दो सफ़ें हो सकें तो ये दोनों जगहें, जहां मुक़्तदी ख्रड़ा है और जहां इमाम है, अलग–अलग समझी जाएंगी और इक़्तिदा सही न होगी।

मस्अला 3—इसी तरह अगर इमाम और मुक्तदी के दर्मियान कोई नहर हो, जिसमें नाव वग़ैरह चल सके या कोई इतना बड़ा हौज़ हो, जिसकी पाकी का हुक्म शरीअत ने दिया हो या कोई आम राह हो, जिससे बैलगाड़ी वग़ैरह निकल सके और बीच में सफ़ें न हों तो वे दोनों मिला हुआ न समझे जाएंगे और इक़्तिदा दुरूस्त न होगी। हां, बहुत छोटी गोल

---

1. यानी जबकि वह मस्जिद या घर बहुत बड़े न हो, क्योंकि बड़ी मस्जिद, बड़े घर का हुक्म आगे आएगा।

अगर रोक हो, जिसके बराबर तंग रास्ता[1] नहीं होता, वह इक़्तिदा के लिए रूकावट नहीं।

मस्अला 4—इसी तरह अगर दो सफ़ों के दर्मियान में कोई ऐसी नहर या ऐसा रास्ता पड़ जाए, तो उस सफ़ की इक़्तिदा दुरूस्त न होगी, जो इन चीज़ों के उस पार है।

मस्अला 5—पैदल की इक़्तिदा सवार के पीछे या एक सवार की दूसरे सवार के पीछे सही नहीं, इसलिए कि दोनों के मकान मिले हुए नहीं, हां, अगर एक ही सवारी पर दोनों सवार हों, तो दुरूस्त है।

शर्त 5—मुक़्तदी और इमाम दोनों की नमाज़ अलग–अलग न होना, अगर मुक़्तदी की नमाज़ इमाम की नमाज़ से अलग होगी तो इक़्तिदा दुरूस्त न होगी, जैसे इमाम ज़ुहर की नमाज़ पढ़ता हों और मुक़्तदी असर की नमाज़ करे या नीयत करे या इमाम कल के ज़ुहर की क़ज़ा पढ़ते हों और मुक़्तदी आज के ज़हर की। हां अगर दोनों कल के ज़हर की क़ज़ा पढ़ते हो या दोनों आज ही के ज़ुहर की क़ज़ा पढ़ते हों, तो दुरूस्त है। हां, इमाम अगर फ़र्ज़ पढ़ता हो और मुक़्तदी नफ़्ल तो इक़्तिदा सही है, इसलिए कि इमाम की नमाज़ मज़बूत है।

मस्अला 6—मुक़्तदी अगर तरावीह पढ़ना चाहे और इमाम नफ़्ल पढ़ता हो, तब भी इक़्तिदा न होगी, क्योंकि इमाम की नमाज़ कमज़ोर है।

शर्त 6—इमाम की नमाज़ का सही होना, अगर इमाम की नमाज़ ख़राब होगी तो सब मुक़्तदियों की नमाज़ भी ख़राब हो जाएगी, चाहे यह ख़राबी नमाज़ ख़त्म होने से पहले मालूम हो जाए या ख़त्म होने के बाद, जैसे यह कि इमाम के कपड़ों में नजासते ग़लीज़ा एक दिरहम से ज़्यादा थी और नमाज़ ख़त्म होने के बाद या नमाज़ ही के बीच में मालूम हुई या इमाम का वुज़ू न था और नमाज़ के बाद या बीच नमाज़ में उसको ख़्याल आया।

मस्अला 7—इमाम की नमाज़ अगर किसी वजह से ख़राब हो गयी हो और मुक़्तदियों को न मालूम हुआ हो तो इमाम पर ज़रूरी है कि अपने मुक़्तदियों को, जहां तक मुम्किन हो सके, उसकी इत्तिला कर दे ताकि वे लोग अपनी नमाज़ें दोहरा लें, चाहे आदमी के ज़रिए की जाए या ख़त के ज़रिए से।

शर्त 7—मुक़्तदी का इमाम से आगे न खड़ा होना, चाहे बराबर

---

1. तंग से तंग रास्ता वह है जिसकी चौड़ाई में ऊंट आ सके तो जो गोल और चौड़ाई में उससे कम हो, वह इक़्तदा में रूकावट नहीं।

खड़ा हो या पीछे, अगर मुक़्तदी इमाम से आगे खड़ा हो तो उसकी इक़्तिदा दुरूस्त न होगी। इमाम से आगे खड़ा होना उस वक़्त समझा जाएगा कि जब मुक़्तदी की एड़ी इमाम की एड़ी से आगे हो जाए। अगर एड़ी आगे न हो और उंगलियां आगे बढ़ जाएं, चाहे पैर के बड़े होने की वजह से या उंगलियों के लंबे होने की वजह से, तो यह आगे खड़ा होना न समझा जाएगा और इक़्तिदा दुरूस्त हो जाएगी।

शर्त 8—मुक़्तदी को इमाम की हरकतों का, जैसे रूकूअ, क़ौमे, सज्दों और क़ादों वग़ैरह का जानना, चाहे इमाम को देखकर या उसके किसी मुकब्बिर (तक्बीर कहने वाले) की आवाज़ सुनकर या किसी मुक़्तदी को देखकर, अगर मुक़्तदी को इमाम की हरकतों की जानकारी न हो, चाहे किसी चीज़ की आड़ की वजह से या और किसी वजह से, तो इक़्तिदा सही न होगी और अगर आड़ जैसा कि पर्दे या दीवार वग़ैरह हो, मगर इमाम को हरकतें मालूम होती हों तो इक़्तिदा दुरूस्त है।

मस्अला 8—अगर इमाम का मुसाफ़िर या ठहरा हुआ होना मालूम न हो सके, लेकिन अन्दाज़ा हो कि वह ठहरा हुआ है, बशर्ते कि वह शहर या गांव के अन्दर हो और नमाज़ पढ़ा दे मुसाफ़िर की–सी यानी चार रक्अत वाली नमाज़ में दो रक्अत पर सलाम फेर दे और मुक़्तदी को इस सलाम से इमाम के मुताल्लिक़ सह्व (ग़लती) का शुब्हा हो तो उस मुक़्तदी को अपनी चार रक्अत पूरी कर लेने के बाद इमाम की हालत का पता लगाना वाजिब है कि इमाम को सह्व हुआ या वह मुसाफ़िर था। अगर पता चले कि वह मुसाफ़िर था तो नमाज़ सही हो गयी और अगर सह्व के होने का पता चले तो नमाज़ दोहराये और अगर कुछ पता न लगाया, बल्कि मुक़्तदी इसी शुबहे की हालत में नमाज़ पढ़कर चला गया तो इस शक्ल में भी उस पर नमाज़ दोहराना वाजिब है।

मस्अला 9—अगर इमाम के बारे में ठहरे होने का ख़्याल है मगर वह नमाज़ शहर या गांव में नहीं पढ़ रहा बल्कि शहर या गांव से बाहर पढ़ा रहा है और उसने चार रक्अत वाली नमाज़ में मुसाफ़िर, की सी नमाज़ पढ़ायी और मुक़्तदी को इमाम के सह्व का शुबहा हुआ, इस शक्ल में भी मुक़्तदी अपनी चार रक्अत पूरी करे और नमाज़ के बाद इमाम का हाल मालूम करे तो अच्छा है, अगर न मालूम करे तो इसकी नमाज़ ख़राब न होगी, क्योंकि शहर या गांव से बाहर इमाम का मुसाफ़िर होना ही ज़ाहिर है और उसके बारे में मुक़्तदी का यह ख़्याल कि शायद इसको

सह्व हुआ है, ज़ाहिर के ख़िलाफ़ है, इसलिए इस शक्ल में पता लगा लेना ज़रूरी नहीं। इसी तरह अगर इमाम चार रक्अत वाली नमाज़ शहर या गांव में पढ़ाये या जंगल वग़ैरह में और किसी मुक़्तदी को उसके बारे में मुसाफ़िर होने का शुबहा हो, लेकिन इमाम ने पूरी चार रक्अतें पढ़ायीं तब भी मुक़्तदी को नमाज़ के बाद इमाम के बारे में पता लगाना वाजिब नहीं। और फ़ज्र में और मग़्रिब की नमाज़ में किसी वक़्त भी इमाम के मुसाफ़िर या ठहरे हुए होने का पता लगाना ज़रूरी नहीं, क्योंकि इन नमाज़ों में ठहरे हुए और सफ़र वाले सब बराबर हैं।

खुलासा यह कि इस पता लगाने की ज़रूरत सिर्फ़ एक शक्ल में है जबकि इमाम शहर या गांव में या किसी जगह चार रक्अत वाली नमाज़ में दो रक्अत पढ़ाये और मुक़्तदी को इमाम पर सह्व का शुबहा हो।

शर्त 9—मुक़्तदी को तमाम अर्कान (नमाज़ की हरकतें) में क़िर्अत के अलावा, इमाम का शरीक रहना, चाहे इमाम के साथ अदा करे या उसके बाद या उससे पहले, बशर्ते कि उसी रूक्न के आख़िर तक इमाम उसका शरीक हो जाए। पहली शक्ल की मिसाल, इमाम के साथ रूकूअ–सज्दा वग़ैरह करे। दूसरी शक्ल की मिसाल इमाम रूकूअ करके खड़ा हो जाए, इसके बाद मुक़्तदी रूकूअ करे। तीसरी शक्ल की मिसाल, इमाम से पहले रूकूअ करे, मगर रूकूअ में इतनी देर तक रहे कि इमाम का रूकूअ उससे मिल जाए।

मसअला 10—अगर किसी रूक्न में इमाम की शिर्कत न की जाए, जैसे इमाम रूकूअ करे और मुक़्तदी रूकूअ न करे या इमाम दो सज्दे करे और मुक़्तदी एक ही सज्दा कर ले या किसी रूक्न की शुरूआत इमाम से पहले की जाए और आख़िर तक इमाम उसमें शरीक न हो, जैसे मुक़्तदी इमाम से पहले रूकूअ में जाए और इससे पहले कि इमाम रूकूअ करे, खड़ा हो जाए, इन दोनों शक्लों में इक़्तिदा दुरूस्त न होगी।

शर्त 10—मुक़्तदी की हालत का इमाम से कम या बराबर होना जैसे :—

1. क़ियाम करने वाले की इक़्तिदा क़ियाम से आजिज़ के पीछे दुरूस्त है। शुरू में माज़ूर का क़ुअूद क़ियाम के बराबर है।

2. तयम्मुम करने वाले के पीछे, चाहे वुज़ू का हो या गुस्ल का हुक्म पाकी में बराबर है, कोई किसी से कम ज़्यादा नहीं।

3. मसह करने वाले के पीछे, चाहे मोज़ों पर करता हो या पट्टी पर

धोने वाले की इक़्तिदा दुरुस्त है, इसलिए कि मसह करना और धोना दोनों एक ही दर्जे की पाकियां हैं, किसी को किसी पर बढ़ावा नहीं।

4. माज़ूर (मजबूर) की इक़्तिदा माज़ूर के पीछे दुरुस्त है, बशर्ते कि दोनों एक ही उज़्र में पड़े हों, जैसे दोनों को सलसले बौल[1] या दोनों का हवा निकलने का मर्ज़ हो।

5. उम्मी[2] की इक़्तिदा उम्मी के पीछे दुरुस्त है, बशर्ते कि मुक़्तदियों में कोई क़ारी[3] न हो।

6. औरत या ना–बालिग़ की इक़्तिदा बालिग़ मर्द के पीछे दुरुस्त है।

7. औरत की इक़्तिदा औरत के पीछे दुरुस्त है।

8. ना–बालिग़ औरत या ना–बालिग मर्द की इक़्तिदा ना–बालिग़ मर्द के पीछे दुरुस्त है।

9. नफ़्ल पढ़ने वाले की इक़्तिदा वाजिब पढ़ने वाले के पीछे दुरुस्त है। जैसे, कोई आदमी ज़ुहर की नमाज़ पढ़ चुका हो और दोबारा फिर नमाज़ में शरीक हो जाए।

10. नफ़्ल पढ़ने वाले की इक़्तिदा नफ़्ल पढ़ने वाले के पीछे दुरुस्त है।

11. क़सम की नमाज़ पढ़ने वाले की इक़्तिदा नफ़्ल पढ़ने वाले के पीछे दुरुस्त है, इसलिए कि क़सम की नमाज़ भी असल में नफ़्ल नमाज़ ही है। यानी एक आदमी ने क़सम खायी कि मैं दो रक्अत नमाज़ पढ़ूंगा और फिर किसी नफ़्ल वाले के पीछे उसने दो रक्अत पढ़ ली तो नमाज़ हो जाएगी और क़सम पूरी हो जाएगी।

12. नज़्र की नमाज़ पढ़ने वाले की इक़्तिदा नज़्र की नमाज़ पढ़ने वाले के पीछे दुरुस्त है, बशर्ते कि दोनों की नज़्र एक हो। जैसे एक आदमी की नज़्र के बाद दूसरा आदमी कहे कि मैंने भी उस चीज़ की नज़्र की, जिसकी फ़लां आदमी ने नज़्र की है और अगर यह शक्ल न हो, जैसे एक ने दो रक्अत की मिसाल के तौर पर, अलग नज़्र की और दूसरे ने अलग, तो इनमें से किसी को दूसरे की इक़्तिदा दुरुस्त न होगी।

---

1. पेशाब का एक मर्ज़, जिसमें पेशाब के क़तरे लगातार निकले।

2–3. उम्मी वह है जो एक आयत क़ुरआन की ज़ुबानी न पढ़ सकता हो। और क़ारी से मुराद वह आदमी है जो ज़रूरत भर ज़ुबानी क़ुरआन मजीद पढ़ सके।

हासिल यह कि जब मुक़्तदी इमाम से कम या बराबर होगा तो इक़्तिदा दुरूस्त हो जाएगी। अब हम वे शक्लें लिखते हैं, जिनमें मुक़्तदी इमाम से ज़्यादा है, चाहे यक़ीनी तौर पर या शुबहे की बुनियाद पर इक़्तिदा दुरूस्त नहीं।

1. बालिग़ की इक़्तिदा चाहे मर्द हो या औरत, ना–बालिग़ के पीछे दुरूस्त नहीं।

2. मर्द की इक़्तिदा, चाहे बालिग़ हो या ना–बालिग़ औरत के पीछे दुरूस्त नहीं।

3. नपुंसक की नपुंसक के पीछे दुरूस्त नहीं। नपुंसक उसे कहते हैं, जिसमें मर्द और औरत होने की निशानियां ऐसी टकरा रही हों कि न उनका मर्द होना ही पता चले न औरत होना और ऐसी मख़्लूक़ होती ही बहुत कम है।

4. जिस औरत[1] को अपने हैज़ का ज़माना याद न हो, उसकी इक़्तिदा उसी क़िस्म की औरत के पीछे दुरूस्त नहीं। इन दोनों शक्लों में मुक़्तदी का इमाम से ज़्यादा होने का शुबहा है, इसलिए इक़्तिदा जायज़ नहीं, क्योंकि पहले शक्ल में जो नपुंसक इमाम है, शायद औरत हो और जो नपुंसक मुक़्तदी है, शायद मर्द हो। इसी तरह दूसरी शक्ल में जो औरत इमाम है, शायद वह ज़माना उसके हैज़ का हो और जो मुक़्तदी है शायद उसकी पाकी का हो।

5. नपुंसक की इक़्तिदा औरत के पीछे दुरूस्त नहीं, इस ख़्याल से कि शायद वह नपुंसक मर्द हो।

6. होश व हवास वाले की इक़्तिदा पागल व मस्त, बे–होश व बे–अक़्ल के पीछे दुरूस्त नहीं।

7. ग़ैर–माज़ूर की इक़्तिदा माज़ूर के पीछे, जैसे उस आदमी के पीछे जिसको सल्सले बौल वग़ैरह की शिकायत हो, दुरूस्त नहीं।

8. एक उज़्र (मजबूरी) वाले की इक़्तिदा दो उज़्र वाले के पीछे दुरूस्त नहीं, मिसाल के तौर पर किसी को सिर्फ़ हवा के निकलने का मर्ज़ हो और वह ऐसे आदमी की इक़्तिदा करे जिसको हवा निकलने और

---

1. इससे मुराद वह औरत है, जिसको एक तो एक ख़ास आदत के साथ हैज़ आता हो, इसके बाद किसी मर्ज़ की वजह से उसका ख़ून जारी हो जाए और जारी रहे और वह औरत अपनी आदत हैज़ की भूल जाए।

सल्सले बौल दो बीमारियां हों।

9. एक तरह के उज़्र वाले की इक़्तिदा दूसरी तरह के उज़्र वाले के पीछे दुरुस्त नहीं, जैसे सल्सले बौल वाला ऐसे आदमी की इक़्तिदा करे जिसको नक्सीर बहने की शिकायत हो।

10. क़ारी की इक़्तिदा उम्मी के पीछे दुरुस्त नहीं और क़ारी वह कहलाता है जिसको इतना क़ुरआन सही याद हो, जिससे नमाज़ हो जाती है और उम्मी वह जिसको इतना भी याद न हो।

11. उम्मी की इक़्तिदा उम्मी के पीछे, जबकि मुक़्तदियों में कोई क़ारी मौजूद हो, दुरुस्त नहीं, क्योंकि इस शक्ल में उस इमाम उम्मी की नमाज़ ख़राब हो जाएगी, इसलिए कि मुम्किन था कि वह इस क़ारी को इमाम कर देता और उसकी क़िर्अत सब मुक़्तदियों की तरफ़ से काफ़ी हो जाती है और जब इमाम की नमाज़ ख़राब हो गयी तो सब मुक़्तदियों की नमाज़ ख़राब हो जाएगी, जिनमें वह उम्मी मुक़्तदी भी है।

12. उम्मी की इक़्तिदा गूंगे के पीछे दुरुस्त नहीं, इसलिए कि उम्मी अगरचे अमल से क़िर्अत नहीं कर सकता मगर ताक़त तो रखता है, इस वजह से कि वह क़िर्अत सीख सकता है, गूंगे में तो यह भी ताक़त नहीं।

13. जिस आदमी का जिस्म जितना ढांकना फ़र्ज़ है, छिपा हुआ हो, उसकी इक़्तिदा नंगे के पीछे दुरुस्त नहीं।

14. रुकूअ–सज्दा करने वाले की इक़्तिदा, इन दोनों आजिज़ के पीछे दुरुस्त नहीं और अगर कोई आदमी सज्दे से आजिज़ हो, उसके पीछे भी इक़्तिदा दुरुस्त नहीं।

15. फ़र्ज़ पढ़ने वाले की इक़्तिदा नफ़्ल पढ़ने वाले के पीछे दुरुस्त नहीं।

16. नज़्र की नमाज़ पढ़ने वाले की इक़्तिदा नफ़्ल नमाज़ पढ़ने वाले के पीछे दुरुस्त नहीं, इसलिए कि नज़्र की नमाज़ वाजिब है।

17. नज़्र की नमाज़ पढ़ने वाले की इक़्तिदा क़सम की नमाज़ पढ़ने वाले के पीछे दुरुस्त नहीं, जैसे, अगर किसी ने क़सम खायी कि मैं आज चार रक्अत पढूंगा और किसी ने नज़्र की तो वह नज़्र करने वाला अगर उसके पीछे नमाज़ पढ़े तो दुरुस्त न होगी, इसलिए कि नज़्र की नमाज़ वाजिब है और क़सम की नफ़्ल, क्योंकि क़सम से बरी वाजिब होता है और इसमें यह भी हो सकता है कि कफ़्फ़ारा दे दे और वह नमाज़ न पढ़े।

18. जिस आदमी से साफ़ हुरूफ़ अदा न हो सकते हों, जैसे 'स' को

'त' या 'र' को 'ल' पढ़ता हो या किसी और हर्फ़ में ऐसी ही तब्दीली होती हो तो उसके पीछे साफ़ और सही पढ़ने वाले की नमाज़ दुरुस्त नहीं। हां, अगर पूरी क़िर्अत में एक–आध हर्फ़ ऐसा हो जाए तो इक़्तिदा सही हो जाएगी।

शर्त 11—इमाम का वाजिबुल इंफ़िराद न होना यानी ऐसे शख़्स के पीछे इक़्तिदा दुरुस्त नहीं, जिसका इस वक़्त मुंफ़रिद रहना ज़रूरी है, जैसे मस्बूक़ कि उसको इमाम की नमाज़ ख़त्म हो जाने के बाद अपनी छुटी हुई रक्अतों का तंहा पढ़ना ज़रूरी है, पस अगर कोई शख़्स किसी मस्बूक़ की इक़्तिदा करे तो दुरुस्त न होगी।

शर्त 12—इमाम को किसी का मुक़्तदी न होना यानी ऐसे शख़्स को इमाम न बनाना चाहिए जो खुद किसी का मुक़्तदी हो चाहे हक़ीक़त में, जैसे मुद्रिक या हुक्म से जैसे लाहिक़ अपनी उन रक्अतों में जो इमाम के साथ उसको नहीं मिलीं, मुक़्तदी का हुक्म रखता है, इसलिए अगर कोई शख़्स किसी मुद्रिक या लाहिक़ की इक़्तिदा करे तो दुरुस्त नहीं। इसी तरह मस्बूक़ अगर लाहिक़ की या लाहिक़ मस्बूक़ की इक़्तिदा करे, तब भी दुरुस्त नहीं।

ये बारह शर्तें जो हमने जमाअत के सही होने की, बयान की हैं, अगर इनमें से कोई शर्त किसी मुक़्तदी में न पायी जाएगी, तो उसकी इक़्तिदा सही न होगी और जब किसी मुक़्तदी की इक़्तिदा सही न होगी तो उसकी वह नमाज़ भी न होगी, जिसकी उसने इक़्तिदा की हालत में अदा किया है।

जमाअत के हुक्म

मस्अला 1—जमाअत, जुमा और ईदों की नमाज़ों में शर्त है यानी ये नमाज़ें अकेले सही ही नहीं होतीं। पांचों वक़्त की नमाज़ों में वाजिब है, बशर्ते कि कोई मजबूरी न हो और तरावीह में सुन्नते मुआक्कया (ताकीदी सुन्नत) है, अगरचे एक क़ुरआन मजीद जमाअत के साथ हो चुका हो और इसी तरह सूरज गरहन के लिए और रमज़ान के वित्र में मुस्तहब है और रमज़ान के अलावा और किसी ज़माने के वित्र में मकरूहे तंज़ीही है यानी जबकि पाबंदी की जाए और अगर पाबंदी न की जाए, बल्कि कभी–कभी दो–तीन आदमी जमाअत से पढ़ लें तो मकरूह नहीं और चांद

गरहन की नमाज़ में और तमाम नफ़्लों में मकरूहे तह्रीमी है, बशर्ते कि उस एहतिमाम से अदा की जाएं जिस एहतमाम से फ़र्ज़ की जमाअत होती है यानी अज़ान व इक़ामत के साथ या और किसी तरीक़े से लोगों को जमा करके, हां, अगर बे अज़ान व इक़ामत और बे-बुलाये हुए दो-तीन आदमी जमा होकर किसी नफ़्ल को जमाअत से पढ़ लें, तो कोई हरज नहीं और फिर भी हमेशा ऐसा न करें और इसी तरह मकरूहे तह्रीमी है। हर-हर फ़र्ज़ की दूसरी जमाअत मस्जिद में इन चार शर्तों से—

1. मस्जिद मुहल्ले की हो और आम रास्ते पर न हो। मस्जिद मुहल्ले की तारीफ़ यह है कि वहां इन इमाम और नमाज़ी तै हो।

2. पहली जमाअत बुलंद आवाज़ से अज़ान व इक़ामत कहकर पढ़ी गयी हो।

3. पहली जमाअत उन लोगों ने पढ़ी हो जो उस मुहल्ले में रहते हों और जिनको उस मस्जिद के इन्तिज़ाम का अख़्तियार हासिल है।

4. दूसरी जमाअत उसी शक्ल और एहतमाम से अदा की जाए, जिस शक्ल और एहतमाम से पहली जमाअत अदा की गयी है और यह चौथी शर्त सिर्फ़ इमाम अबू युसूफ़ रह० के नज़दीक है और इमाम साहब के नज़दीक शक्ल बदल देने पर भी कराहत रहती है। पस अगर दूसरी जमाअत मस्जिद में न अदा की जाए बल्कि घर में, फिर मकरूह नहीं।

इसी तरह अगर कोई शर्त इन चार शर्तों में से न पायी जाए, जैसे मस्जिद आम रास्ते पर हो, मुहल्ले की न हो, जिसके मानी ऊपर मालूम हो चुके तो इसमें दूसरी, बल्कि तीसरी-चौथी जमाअत भी मकरूह नहीं या पहली जमाअत ऊंची आवाज़ से अज़ान और इक़ामत कहकर न पढ़ी गयी हो तो दूसरी जमाअत मकरूह नहीं या पहली जमाअत उन लोगों ने पढ़ी हो जो उस मुहल्ले में नहीं रहते, न उनको मस्जिद के इन्तिज़ाम का अख़्तियार हासिल है या इमाम अबू युसूफ़ के क़ौल के मुताबिक़ दूसरी जमाअत उस शक्ल से न अदा की जाए, जिस शक्ल से पहली जमाअत अदा की गयी हो, जिस जगह पहली जमाअत का इमाम खड़ा था, दूसरी जमाअत का इमाम वहां से हटकर खड़ा हो तो शक्ल बदल जाएगी और जमाअत मकरूह न होगी।

तंबीह—हर चंद कि कुछ लोगों का अमल इमाम अबू युसूफ़ के क़ौल पर है, लेकिन इमाम साहब का क़ौल दलील से भी मज़बूत है और इस वक़्त दीन की बातों में, ख़ासतौर से जमाअत के मामले में जो सुस्ती

और गफ़लत हो रही है, उसका तक़ाज़ा भी यही है कि शक्ल की तब्दीली के बावजूद कराहत (मकरूह होना) पर फ़त्वा दिया जाए वरना लोग जान-बूझकर पहली जमाअत को छोड़ देंगे कि हम अपनी दूसरी कर लेंगे।

मुक़्तदी और इमाम के मुताल्लिक़ मस्अले

मस्अला 1—मुक़्तदियों को चाहिए कि तमाम हाज़िर लोगों में से जो इमामत के क़ाबिल हो, जिसमें अच्छी ख़ूबियां ज़्यादा हों, उसको इमाम बना दें और अगर कई शख़्स ऐसे हों, जो इमामत के क़ाबिल होने में बराबर हों तो ज़्यादा लोगों की राय जिसकी तरफ़ हो, उसको इमाम बना दें। अगर किसी ऐसे शख़्स के होते हुए जो इमाम बनाये जाने के ज़्यादा लायक़ है, किसी ऐसे शख़्स को इमाम कर देंगे, जो उससे कम है तो सुन्नत छोड़ने की ख़राबी में पड़ जाएंगे।

मस्अला 2—सबसे ज़्यादा इमाम बनाये जाने का हक़ उस शख़्स को है जो नमाज़ के मस्अले ख़ूब जानता हो, बशर्ते कि ज़ाहिर में उसमें कोई नाफ़रमानी की बात न हो और जिस क़दर क़िर्अत मस्नून है, उसे याद हो और क़ुरआन सही पढ़ता हो। फिर वह शख़्स जो क़ुरआन मजीद अच्छा पढ़ता हो यानी क़िर्अत के क़ायदों के मुताबिक़। फिर वह शख़्स जो सबसे ज़्यादा परहेज़गार हो। फिर वह शख़्स जो सबसे ज़्यादा उम्र रखता हो, फिर वह शख़्स जो सबसे ज़्यादा मिलनसार हो, फिर वह शख़्स जो सबसे ज़्यादा ख़ूबसूरत हो, फिर वह शख़्स जो सब में ज़्यादा शरीफ़ हो फिर वह, जिसकी आवाज़ सबसे उम्दा हो, फिर वह शख़्स जो ज़्यादा कपड़ा पहने हो, फिर वह शख़्स जिसका सर सबसे बड़ा हो, मगर ढंग से, फिर वह शख़्स जो ठहरा हुआ हो, मुसाफ़िरों के मुक़ाबले में, फिर वह शख़्स जो अस्ली आज़ाद हो, फिर वह शख़्स जिसने छोटी नापाकी से तयम्मुम किया हो, उसके मुक़ाबले में, जिसने बड़ी नापाकी से तयम्मुम किया हो।

कुछ के नज़दीक बड़ी नापाकी से तयम्मुम करने वाला पहले है और जिस आदमी में दो ख़ूबी पाई जाए, वह ज़्यादा हक़दार है उसके मुक़ाबले में, जिसमें एक ही ख़ूबी पायी जाती हो, जैसे वह शख़्स, जो नमाज़ के मस्अले भी जानता हो और क़ुरआन मजीद भी अच्छा पढ़ता हो, ज़्यादा हक़दार है उसके मुक़ाबले में जो सिर्फ़ नमाज़ के मस्अले जानता हो और

क़ुरआन मजीद अच्छा न पढ़ता हो।

मस्अला 3—अगर किसी के घर में जमाअत की जाए तो घर वाला इमामत का ज़्यादा हक़दार है, इसके बाद वह शख़्स जिसको वह इमाम बना दे। हां, अगर घर वाला बिल्कुल अंपढ़ हो, दूसरे लोग मस्अलों को जानते-समझते हों तो फिर उन्हीं को हक़ होगा।

मस्अला 4—जिस मस्जिद में कोई इमाम मुक़र्रर हो, उस मस्जिद में उसके होते हुए दूसरे को इमामत का हक़ नहीं, हां, अगर वह किसी दूसरे को इनाम बना दे तो हरज नहीं।

मस्अला 5—क़ाज़ी यानी शरीअत का हाकिम या बादशाहे इस्लाम के होते हुए दूसरे को इमामत का हक़ नहीं।

मस्अला 6—क़ौम की रज़ामंदी के बग़ैर इमामत करना मकरूहे तह्रीमी है। हां, अगर वह शख़्स सबसे ज़्यादा इमामत का हक़ रखता हो यानी इमामत की ख़ूबियां उसके बराबर किसी में न पायी जाती हों, फिर उसके ऊपर कुछ कराहत नहीं, बल्कि जो उसकी इमामत से नाराज़ हो, वही ग़लती पर है।

मस्अला 7—फ़ासिक़ (ना फ़रमान) और बिदअती का इमाम बनाना मकरूहे तह्रीमी है। हां, अगर खुदा न करे, ऐसे लोगों के सिवा कोई दूसरा आदमी वहां मौजूद न हो तो फिर मकरूह नहीं। इसी तरह अगर बिद्अती और फ़ासिक़ ज़ोरदार हों कि उनके हटाने की कोई ताक़त न रखता हो या कोई बड़ा फ़ित्ना पैदा होता हो तो भी मुक़्तदियों पर कराहत नहीं।

मस्अला 8—गुलाम का यानी जो फ़िक़्ह के क़ायदे से गुलाम हो, वह नहीं, जो अकाल वग़ैरह में ख़रीद लिया जाए, उसका इमाम बनाना अगरचे वह अज़ाद किया हुआ हो गंवार यानी गांव के रहने वाले का और अंधे का, जो पाकी-नापाकी का ध्यान न रखता हो या ऐसे शख़्स का जिसे रात को कम नज़र आता हो और हरामी का इमाम बनाना मकरूहे तंज़ीही है। हां, अगर ये लोग इल्म व फ़ज़्ल वाले हों और लोगों को इनका इमाम बनाना, जिसकी दाढ़ी न निकली हो और बे-अक़्ल को इमाम बनाना मकरूहे तंज़ीही है।

मस्अला 9—नमाज़ के फ़र्ज़ों और वाजिबों में तमाम मुक़्तदियों को इमाम का पालन करना वाजिब है, हां, सुन्नतों वग़ैरह में पालन करना वाजिब नहीं, पस, अगर इमाम शाफ़ई मज़हब का हो और रुकूअ में जाते वक़्त और रुकूअ से उठते वक़्त हाथों को उठाये तो हनफ़ी मुक़्तदी को

हाथों का उठाना ज़रूरी नहीं।[1] इसीलिए कि हाथों का उठाना उनके नज़दीक भी सुन्नत है इसी तरह फ़ज्र की नमाज़ में शाफ़ई मज़हब इमाम कुनूत पढ़ेगा, तो हनफ़ी मुक़्तदियों के लिए ज़रूरी नहीं, हां, वित्र में अल–बत्ता चूंकि कुनूत पढ़ना वाजिब है, इसलिए अगर शाफ़ई इमाम अपने मज़हब के मुताबिक़ रूकूअ के बाद पढ़े तो हनफ़ी मुक़्तदियों को भी रूकूअ के बाद पढ़ना चाहिए।

मस्अला 10—इमाम को नमाज़ में ज़्यादा बड़ी–बड़ी सूरतें पढ़ना, जो सुन्नत मिक़्दार से भी ज़्यादा हों या रूकूअ–सज्दे, वग़ैरह में बहुत ज़्यादा देर तक रहना मकरूह तहरीमी है, बल्कि इमाम को चाहिए कि अपने मुक़्तदियों की ज़रूरत और कमज़ोरी वग़ैरह का ख़्याल रखे, जो सब में ज़्यादा ज़रूरतमंद हो, उसकी रियायत करके क़िर्अत वग़ैरह करे बल्कि ज़्यादा ज़रूरत के वक़्त सुन्नत मिक़्दार से भी कम क़िर्अत करना बेहतर है ताकि लोगों का हरज न हो, जो जमाअत में तायदाद में कमी की वजह हो जाए।

मस्अला 11—अगर एक ही मुक़्तदी हो और वह मर्द हो या ना–बालिग़ लड़का, तो उसको इमाम के दाहिनी तरफ़, इमाम के बराबर या कुछ पीछे, हट कर खड़ा होना चाहिए। अगर बायीं तरफ़ या इमाम के पीछे खड़ा हो तो मकरूह है।

मस्अला 12—और अगर एक से ज़्यादा मुक़्तदी हो तो उनको इमाम के पीछे सफ़ बांधकर खड़ा होना चाहिए। अगर इमाम के दाहिने–बायीं तरफ़ खड़े हों और दो हों, तो मकरूहे तंज़ीही है। और अगर दो से ज़्यादा हों तो मक्रूहे तह्रीमी है, इसलिए की जब दो से ज़्यादा मुक़्तदीहों तो इमाम का आगे खड़ा होना वाजिब है।

मस्अला 13—अगर नमाज़ शुरू करते वक़्त एक ही मर्द मुक़्तदी था और वह इमाम के दाहिनी तरफ़ खड़ा हो, इसके बाद और मुक़्तदी आ गये तो पहले मुक़्तदी के चाहिए कि पीछे हट आये ताकि सब मुक़्तदी मिलकर इमाम के पीछे खड़े हों, अगर वह न हटे तो इन मुक़्तदियों को चाहिए कि पीछे खींच लें और अगर अनजाने से वे मुक़्तदी इमाम के दाहिने या बायीं तरफ़ खड़े हो जाएं और पहले मुक़्तदी को पीछे न हटायें तो इमाम को चाहिए कि वह आगे बढ़ जाए ताकि वे मुक़्तदी सब मिल जाएं और इमाम के पीछे हो जाएं। इसी तरह अगर पीछे हटने की जगह न

---

1. और बेहतर भी नहीं, बल्कि मकरूह है।

हो, तब भी इमाम को चाहिए कि आगे बढ़ जाए, लेकिन अगर मुक़्तदी मस्अलों को न जानता हो, जैसा कि हमारे ज़माने में पाया जाता है, तो उसको हटाना मुनासिब नहीं, कभी कोई ऐसी हरकत न कर बैठे, जिससे नमाज़ ही, ग़ारत हो जाए।

मस्अला 14—अगर मुक़्तदी औरत हो या ना–बालिग़ लड़की तो उसको चाहिए कि इमाम के पीछे खड़ी हो, चाहे एक हो या एक से ज़्यादा।

मस्अला 15—अगर मुक़्तदियों में हर क़िस्म के लोग हों, कुछ मर्द, कुछ औरत, कुछ ना–बालिग़ तो इमाम को चाहिए कि इस तर्तीब से उनकी सफ़ें क़ायम करे। पहले मर्दों की सफ़ें, फिर ना–बालिग़ लड़कों की, फिर ना–बालिग़ औरतों की, फिर ना–बालिग़ लड़कियों की।

मस्अला 16—इमाम को चाहिए कि सफ़ें सीधी करे यानी सफ़ में लोगों को आगे–पीछे होने से मना करे, सबको बराबर खड़ा होने का हुक्म दे, सफ़ में एक दूसरे से मिलकर खड़ा होना चाहिए, दर्मियान में खाली जगह न रहना चाहिए।

मस्अला 17—अकेले एक शख़्स का सफ़ के पीछे खड़ा होना मकरूह है, बल्कि ऐसी हालत में चाहिए कि अगली सफ़ से किसी आदमी को खींचकर अपने साथ खड़ा कर ले, लेकिन खींचने में अगर डर हो कि वह अपनी नमाज़ ख़राब कर लेगा या बुरा मानेगा, तो जाने दे।[1]

मस्अला 18—पहली सफ़ में जगह होते हुए दूसरी सफ़ में खड़ा होना मकरूह है, हां, जब पूरी सफ़ हो जाए, तब दूसरी सफ़ में खड़ा होना चाहिए।

मस्अला 19—मर्द को सिर्फ़ औरतों की इमामत करना ऐसी जगह मकरूहे तह्रीमी है, जहां कोई मर्द न हो, न कोई महरम औरत, जैसे उसकी बीवी, मां, बहन, वग़ैरह कि मौजूद न हो। हां, अगर कोई मर्द[2] या महरम औरत मौजूद हो तो फिर मकरूह नहीं।

---

1. चूंकि इसमें बहुत से मस्अलों का जानना ज़रूरी है और इस ज़माने में न जानना ही फ़ैशन है, इसलिए जाने दे, न खींचे।

2. यह मस्अला दुर्रे मुख़्तार से लिया गया है और भले ही इसमें पूरे से इख़्तिलाफ़ किया गया है मगर लेखक महोदय के नज़दीक तर्जीह उसी को हासिल है जोकि उन्होंने ऊपर फ़रमाया है।

मस्अला 20—अगर कोई आदमी तंहा फ़ज्र या मग़्रिब या इशा का फ़र्ज़ धीमी आवाज़ से पढ़ रहा हो, इसी बीच कोई आदमी उसकी इक़्तिदा करे, तो उसमें दो शक्लें हैं—

एक यह कि यह आदमी दिल में इरादा करे कि मैं अब इमाम बनता हूं ताकि नमाज़ जमाअत से हो जाए।

दूसरी शक्ल यह है कि इरादा न करे, बल्कि पहले की तरह अपने को यही समझे कि गोया मेरे पीछे आ खड़ा हुआ, लेकिन मैं इमाम नहीं बनता, बल्कि पहले ही की तरह तंहा पढ़ता हूं। पस पहली शक्ल में तो उस पर उसी जगह से ऊंची आवाज़ से क़िर्अत करना वाजिब है, पस अगर सूरः फ़ातिहा या किसी क़दर दूसरी सूरः भी धीमी आवाज़ से पढ़ चुका हो तो उसको चाहिए, उसी जगह बाक़ी फ़ातिहा और बाक़ी सूरः को ऊंची आवाज़ से पढ़े, इसलिए इमाम को फ़ज्र, मग़्रिब और इशा के वक़्त ऊंची आवाज़ से क़िर्अत करना वाजिब है और दूसरी शक्ल में बुलंद आवाज़ से पढ़ना वाजिब नहीं और इस मुक़्तदी की नमाज़ भी ठीक रहेगी क्योंकि मुक़्तदी की नमाज़ के ठीक रहने के लिए इमाम का इमामत की नीयत करना ज़रूरी नहीं।

मस्अला 21—इमाम को और ऐसा ही मुंफ़रिद को, जबकि वह घर या मैदान में नमाज़ पढ़ता हो, मुस्तहब है कि अपनी आंख के सामने चाहे दाहिनी तरफ़ या बायीं तरफ़ कोई ऐसी चीज़ खड़ी करे जो एक हाथ या उससे ज़्यादा ऊंची और एक उंगली के बराबर मोटी हो। हां, अगर मस्जिद में नमाज़ पढ़ता हो या ऐसी जगह पर जहां लोगों का सामने से गुज़र न होता हो तो इसकी कुछ ज़रूरत नहीं और इमाम का सुतरा[1] तमाम मुक़्तदियों की तरफ़ से काफ़ी है। सुतरा क़ायत हो जाने के बाद सुतरे के आगे से निकल जाने में कुछ गुनाह नहीं, लेकिन अगर सुतरा के अंदर से कोई आदमी निकलेगा, तो वह गुनाहगार होगा।

मस्अला 22—लाहिक़ वह मुक़्तदी है, जिसकी कुछ रक्अतें या सब रक्अतें जमाअत में शरीक होने के बाद जाती रहीं, चाहे मजबूरी से जैसे नमाज़ में सो जाए और इस बीच कोई रक्अत वग़ैरह जाती रही या लोगों के ज़्यादा होने से रूकूअ—सज्दे वग़ैरह न कर सके या वुज़ू टूट जाए और वुज़ू करने के लिए जाए, इस बीच में उसकी रक्अतें जाती रहीं

1. नमाज़ी के सामने रखी या खड़ी हुई चीज़, जिसका ज़िक्र अभी हुआ।

(डर की नमाज़ में पहला गिरोह लाहिक़ है। इसी तरह जो ठहरा हुआ मुसाफ़िर की इक़्तिदा करे और मुसाफ़िर क़स्त्र करे तो वह ठहरा हुआ, इमाम के नमाज़ ख़त्म करने के बाद लाहिक़ है) या बे-उज़्र जाती रहीं, जैसे इमाम से पहले किसी रक्अत का रूकूअ-सज्दा[1] कर ले और इस वजह से यह रक्अत उसकी बेकार समझी जाए तो इस रक्अत के एतबार से लाहिक़ समझा जाएगा। पस लाहिक़ को वाजिब है कि पहले अपनी इन रक्अतों को अदा करे जो उसकी जाती रहीं बाद इनके अदा करने के अगर जमाअत बाक़ी हो तो शरीक हो जाए, वरना बाक़ी नमाज़ भी पढ़ ले।

मस्अला 23—लाहिक़ अपनी गयी हुई रक्अतों में भी मुक़्तदी समझा जाएगा यानी जैसे मुक़्तदी क़िर्अत नहीं करता, वैसे ही लाहिक़ भी क़िर्अत न करे, बल्कि ख़ामोश खड़ा रहे और जैसे मुक़्तदी को सह्व की ज़रूरत नहीं होती, वैसे ही लाहिक़ को भी।

मस्अला 24—मस्बूक़ यानी जिसकी एक-दो रक्अत रह गयी हो, उसको चाहिए कि पहले इमाम के साथ शरीक होकर जितनी नमाज़ बाक़ी हो, जमाअत से अदा करे, इमाम की नमाज़ ख़त्म होने के बाद खड़ा हो जाए और अपनी गयी हुई रक्अतों को अदा करे।

मस्अला 25—मस्बूक़ को अपनी गयी हुई रक्अतें मुंफ़रिद की तरह क़िर्अत के साथ अदा करना चाहिए और अगर इन रक्अतों में कोई सह्व हो जाए तो उसको सज्दा सह्व भी करना ज़रूरी है।

मस्अला 26—मस्बूक़ को अपनी गयी हुई रक्अतें इस तर्तीब से अदा करनी चाहिए कि पहली क़िर्अत वाली, फिर बे-क़िर्अत की और जो रक्अतें इमाम के साथ पढ़ चुका है, उनके हिसाब से क़ादा करे यानी उन रक्अतों के हिसाब से जो दूसरी हो उसमें पहला क़ादा करे और जो तीसरी रक्अत हो और नमाज़ तीन रक्अत वाली हो, तो उसमें आख़िरी क़ादा करे। इसी पर आगे का अन्दाज़ा किया जा सकता है।

मिसाल—ज़ुहर की नमाज़ में तीन रक्अत हो जाने के बाद कोई आदमी शरीक हो, उसको चाहिए कि इमाम के सलाम फेर देने के बाद खड़ा हो जाए और गयी हुई तीन रक्अतें इस तर्तीब से अदा करे, पहली रक्अत में सूरः फ़ातिहा के साथ सूरः मिलाकर रूकूअ-सज्दे करके पहला

---

1. यानी इमाम से पहले रूकूअ या सज्दे में चला जाए और पहले ही उठ खड़ा हो।

क़ादा करे, इसलिए कि यह रक्अत उस मिली हुई रक्अत से दूसरी है, फिर दूसरी रक्अत में भी सूरः फ़ातिहा के साथ सूरः मिलाये और इसके बाद क़ादा न करे और अपनी रक्अत में सूरः न मिलाये, इसलिए कि यह रक्अत क़िर्अत की न थी और इसमें क़ादा करे कि यह आख़िरी क़ादा है।

मस्अला 27—अगर कोई आदमी लाहिक़ भी हो और मस्बूक़ भी, जैसे कुछ रक्अतें हो जाने के बाद शरीक हुआ हो और शिर्कत के बाद फिर कुछ रक्अतें उसकी चली जाएं तो उसको चाहिए कि पहले अपनी इन रक्अतों को अदा करे और जो शिर्कत के बाद गयी हैं, जिनमें वह लाहिक़ है, अगर उनके अदा करने में अपने को ऐसा समझे जैसे वह इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ रहा है यानी क़िर्अत न करे और इमाम की तर्तीब का ख़्याल रखे इसके बाद अगर जमाअत बाक़ी हो तो उसमें शरीक हो जाए, वरना बाक़ी नमाज़ भी पढ़ ले। इसके बाद अपनी उन रक्अतों को अदा करे, जिनमें मस्बूक़ है।

मिसाल—अस्र की नमाज़ में एक रक्अत हो जाने के बाद कोई आदमी शरीक हो और शरीक होने के बाद ही उसका वुज़ू टूट गया और वुज़ू करने गया। इस बीच में नमाज़ ख़त्म हो गयी, तो उसको चाहिए कि पहले इन तीनों रक्अतों को अदा करे जो शरीक होने के बाद गयी हैं, फिर उस रक्अत को जो उसके शरीक होने से पहले हो चुकी थी और उन तीनों रक्अतों को मुक़्तदी की तरह अदा करे, यानी क़िर्अत न करे और इन तीनों की पहली रक्अत में क़ादा करे, इसलिए कि यह इमाम की दूसरी रक्अत है और इमाम ने इसमें क़ादा किया था, फिर दूसरी रक्अत में क़ादा न करे, इसलिए कि इमाम की यह तीसरी रक्अत है, फिर तीसरी रक्अत में क़ादा करे, इसलिए कि यह इमाम की चौथी रक्अत है और इस रक्अत में इमाम ने क़ादा किया था, फिर उस रक्अत को अदा करे जो उसके शरीक होने से पहले हो चुकी थी। और इसमें क़ादा करे, इसलिए कि यह उसकी चौथी रक्अत है और इस रक्अत में उसको क़िर्अत भी करना होगी, इसलिए इस रक्अत में वह मस्बूक़ है और मस्बूक़ अपनी गयी हुई रक्अतों के अदा करने में मुंफ़रिद का हुक्म करता है।

मस्अला 28—मुक़्तदियों को हर रुक्न का इमाम के साथ ही बिना देर किए हुए अदा करना सुन्नत है। तह्रीमा भी इमाम की तह्रीमा के साथ करे, रुकूअ भी इमाम के साथ, क़ौमा भी उसके क़ौमा के साथ, सज्दा भी उसके सज्दे के साथ, मतलब यह है कि हर हरकत उसकी हर

हरकत के साथ। हां, अगर पहले क़ादा में इमाम इससे पहले खड़ा हो जाए कि मुक़्तदी अत्तहीयात पूरा कर लें तो मुक़्तदियों को चाहिए कि अत्तीयात पूरा करके खड़े हों।[1] इसी तरह आख़िरी क़ादा में अगर इमाम इसके पहले कि मुक़्तदी अत्तहीयात पूरी करें, सलाम फेर दे तो मुक़्तदियों को चाहिए कि अत्तहीयात पूरी करके सलाम फेरे, हां, रूकूअ–सज्दा वग़ैरह में अगर मुक़्तदियों ने तस्बीह न पढ़ी हो तो इमाम के साथ खड़ा होना चाहिए।

जमाअत में शामिल होने न होने के मस्अले

मस्अला 1—अगर कोई आदमी अपने मुहल्ले या मकान के क़रीब मस्जिद में ऐसे वक़्त पहुंचा कि वहां जमाअत हो चुकी हो तो उसको मुस्तहब है कि दूसरी मस्जिद में जमाअत को खोजने जाए। और यह भी अख़्तियार है कि अपने घर में वापस आकर घर के आदमियों को जमा करके जमाअत करे।

मस्अला 2—अगर कोई आदमी अपने घर में फ़र्ज़ नमाज़ अकेले पढ़ चुका हो, इसके बाद देखे कि वही नमाज़ जमाअत से हो रही है तो उसको चाहिए कि जमाअत में शामिल हो जाए, बशर्ते कि नमाज़ इशा का वक़्त हो और फ़ज्र, असर, मग़्रिब के वक़्त जमाअत में शरीक न हो, इसलिए कि फज्र, असर की नमाज़ के बाद नफ़्ल नमाज़ मकरूह है और मग़्रिब के वक़्त इसलिए कि यह दूसरी नमाज़ नफ़्ल होगी और नफ़्ल में तीन रक्अत नहीं है।

मस्अला 3—अगर कोई शख़्स फ़र्ज़ नमाज़ शुरू कर चुका हो और इसी हालत में फ़र्ज़ जमाअत से होने लगे तो अगर वह फ़र्ज़ दो रक्अत वाला है जैसे फ़ज्र की नमाज़, तो इसका हुक्म यह है कि अगर पहली रक्अत का सज्दा न किया हो तो उस नमाज़ को तोड़ दे और जमाअत

---

1. अगरचे यह डर हो कि इमाम रूकूअ में जाए और अगर ऐसा हो जाए तो बाद तशहहुद के तीन तस्बीह के बराबर क़ियाम करके रूकूअ में जाए और इसी तरह तर्तीब के साथ सब अर्कान अदा करता रहे, चाहे इमाम को कितनी ही दूर जाकर पाए। यह इक़्तिदा के ख़िलाफ़ न होगा, क्योंकि जैसे इमाम के साथ रहने को कहते हैं, उसी तरह इमाम के पीछे–पीछे को कहते हैं। इमाम से पहले कोई काम करना यह इक़्तिदा के ख़िलाफ़ है।

में शामिल हो जाए और पहली रक्अत का सज्दा कर लिया हो और दूसरी रक्अत का सज्दा न किया हो तो भी तोड़ दे और जमाअत में शामिल हो जाए और दूसरी रक्अत का सज्दा कर लिया हो तो दोनों रक्अत पूरी कर ले और अगर वह फ़र्ज़ तीन रक्अत वाला हो, जैसे मग़्रिब तो इसका हुक्म यह है कि अगर दूसरी रक्अत का सज्दा न किया हो तो तोड़ दे और अगर दूसरी रक्अत का सज्दा कर लिया हो तो अपनी नमाज़ को पूरी कर ले और बाद में जमाअत के अंदर शरीक न हो, क्योंकि नफ़्ल तीन रक्अत के साथ जायज़ नहीं। और अगर वह फ़र्ज़ चार रक्अत वाला हो, जैसे जुहर, असर व इशा तो अगर पहली रक्अत का सज्दा न किया हो तो दो रक्अत पर अत्तहीयात वग़ैरह पढ़कर सलाम फरे दे और जमाअत में मिल जाए और अगर तीसरी रक्अत शुरू कर दी हो और उसका सज्दा न किया हो तो तोड़ दे और अगर सज्दा कर लिया हो तो पूरी कर ले और जिन शक्लों में नमाज़ पूरी कर ली जाए, उनमें से मग़्रिब और फ़ज्र और असर में तो दोबारा जमाअत में शरीक न हो और जुहर और इशा में शरीक हो जाए और जिन शक्लों में तोड़ देना हो, खड़े–खड़े एक सलाम फेर दे।

मस्अला 4—अगर कोई आदमी नफ़्ल नमाज़ शुरू कर चुका हो और फ़र्ज़ जमाअत से होने लगे, तो नफ़्ल नमाज़ को न तोड़े बल्कि उसको चाहिए कि दो रक्अत पढ़कर सालम फेर दे, अगरचे चार रक्अत की नीयत की हो।

मस्अला 5—जुहर और जुमा की सुन्नत मुअक्कदा शुरू कर चुका हो, और फ़र्ज़ होने लगे तो ज़ाहिर मज़हब यह है कि दो रक्अत पर सलाम करके जमाअत में शरीक हो जाए और बहुत से फ़क़ीहों के नज़दीक बेहतर[1] यह है कि चार रक्अत पूरी कर ले और अगरचे तीसरी रक्अत शुरू कर दी तो अब चार का पूरा करना ज़रूरी है।

मस्अला 6—अगर फ़र्ज़ नमाज़ हो रही हो तो फिर सुन्नत वग़ैरह न शुरू की जाए, बशर्ते कि किसी रक्अत के चले जाने का डर हो, हां, अगर यक़ीन हो या ज़्यादा गुमान हो कि कोई रक्अत न जाने पायेगी, तो पढ़ ले। 'जैसे जुहर के वक़्त जब फ़र्ज़ शुरू हो जाए और डर हो कि सुन्नत पढ़ने से कोई रक्अत जाती रहेगी तो फिर सुन्नत मुअक्कदा जो फ़र्ज़ से पहले पढ़ी जाती है, छोड़ दे, फिर जुहर और जुमा में फ़र्ज़ के बाद बेहतर

---

1. यानी मज़बूत मज़हब।

यह है कि बाद वाली सुन्नत मुअक्कदा पहले पढ़कर इन सुन्नतों को पढ़ ले, मगर कि अगर फ़ज्र की सुन्नतें चूंकि ज़्यादा ताकीदी हैं, इसलिए इनके लिए यह हुक्म है फ़ज्र शुरू हो चुका हो, तब भी अदा कर ली जाएं, बशर्ते कि एक रक्अत मिल जाने की उम्मीद हो।[1] और अगर एक रक्अत के मिलने की भी उम्मीद न हो तो फिर न पढ़े और फिर अगर चाहे, सूरज निकलने के बाद पढ़े।

मस्अला 7—अगर यह डर हो कि फ़ज्र की सुन्नत अगर नमाज़ की सुन्नतों और मुस्तहबों वग़ैरह की पाबंदी से अदा की जाएगी, तो जमाअत न मिलेगी तो ऐसी हालत में चाहिए कि सिर्फ़ फ़र्ज़ों और वाजिबों पर भरोसा क़रे, सुन्नतें वग़ैरह छोड़ दे।

मस्अला 8—फ़र्ज़ होने की हालत में जो सुन्नतें पढ़ी जाएं, चाहे वे फ़ज्र की हों या किसी और की, वे ऐसी जगह पर पढ़ी जाएं, जो मस्जिद से अलग हो, इसलिए जहां फ़र्ज़ नमाज़ होती हो, फिर कोई दूसरी नमाज़ वहां पढ़ना मक्रूहे तह्रीमी है और अगर कोई ऐसी जगह न मिले तो सबसे अलग मस्जिद के किसी कोने में पढ़ ले।

मस्अला 9—अगर जमाअत का क़ादा मिल जाए और रक्अतें न मिलें, तब भी जमाअत का सवाब मिल जाएगा।

मस्अला 10—जिस रक्अत का रुकूअ इमाम के साथ मिल जाए तो समझा जाएगा कि वह रक्अत मिल गयी। हां, अगर रुकूअ न मिले तो उस रक्अत की गिनती मिलने में न होगी।

नमाज़ जिन चीज़ों से फ़ासिद होती है

मस्अला 1—नमाज़ की हालत में अपने इमाम के सिवा किसी को लुक़्मा देना यानी क़ुरआन मजीद के ग़लत पढ़ने पर उसे टोकना मुफ़ीदे नमाज़ है।[2]

मस्अला 2—सही यह है कि मुक़्तदी अगर इमाम को लुक़्मा दे तो

1. ज़ाहिर मज़हब यही है कि जब तक कम से कम एक रक्अत मिलने की उम्मीद हो, उस वक़्त तक पढ़ ले, वरना छोड़ दे और एक क़ौल यह है कि आख़िरी क़ादा मिलने तक सुन्नतें पढ़ ले, मगर बेहतर ज़ाहिर मज़हब है।
2. यह एक इख़्तिलाफ़ी मस्अला है।

नमाज़ फ़ासिद (ख़राब) न होगी, चाहे इमाम ज़रूरत भर क़िर्अत कर चुका हो या नहीं। ज़रूरत भर से क़िर्अत की वह मिक़्दार मुराद है, जो सुन्नत है। हां, ऐसी शक्ल में बेहतर यह है कि रूकूअ कर दें, जैसा इससे अगले मस्अले में आता है।

मस्अला 3—इमाम अगर ज़रूरत भर क़िर्अत कर चुका हो तो उसको चाहिए कि रूकूअ कर दे। मुक़्तदियों को लुक़्मा देने पर मजबूर न करे। (ऐसा करना मक्रूह है) और मुक़्तदियों को चाहिए कि जब तक बड़ी ज़रूरत न हो, इमाम को लुक़्मा न दें (यह भी मक्रूह है।) बड़ी ज़रूरत से मतलब यह है कि, जैसे इमाम ग़लत पढ़कर आगे बढ़ना चाहता हो या रूकूअ न करता हो या ख़ामोश खड़ा हो जाए और अगर बड़ी ज़रूरत के बग़ैर भी बतला दिया, तब भी नमाज़ ख़राब न होगी जैसा इससे ऊपर मस्अला गुज़रा।

मस्अला 4—अगर कोई आदमी किसी नमाज़ पढ़ने वाले को लुक़्मा दे और वह लुक़्मा देने वाला उसका मुक़्तदी न हो, चाहे वह भी नमाज़ में हो या नहीं, तो यह आदमी अगर लुक़्मा ले लेगा तो उस लुक़्मा लेने वाले की नमाज़ ख़राब हो जाएगी। हां, अगर उसको अपने आप याद आ जाए चाहे उसके लुक़्मा देने के साथ ही या पहले या पीछे उसके लुक़्मा देने को कुछ दख़ल न हो और अपनी याद पर भरोसा करके पढ़े तो जिसको लुक़्मा दिया गया है, उसकी नमाज़ में ख़राबी न आयेगी।

मस्अला 5—अगर कोई नमाज़ पढ़ने वाला किसी ऐसे आदमी को लुक़्मा दे जो उसका इमाम नहीं, चाहे वह भी नमाज़ में हो या न हो, हर हाल में लुक़्मा देने वाले की नमाज़ ख़राब हो जाएगी।

मस्अला 6—मुक़्तदी अगर किसी दूसरे आदमी का पढ़ना सुनकर या क़ुरआन मजीद में देखकर इमाम को लुक़्मा दे, तो उसकी नमाज़ ख़राब हो जाएगी और इमाम अगर ले लेगा, तो उसकी नमाज़ भी और अगर मुक़्तदी को क़ुरआन देखकर या दूसरे से सुनकर ख़ुद भी याद आ गया और फिर अपनी याद पर लुक़्मा दिया तो नमाज़ ख़राब न होगी।

मस्अला 7—इसी तरह अगर नमाज़ की हालत में क़ुरआन मजीद देखकर एक आयत क़िर्अत की जाए, तब भी नमाज़ ख़राब हो जाएगी और अगर वह आयत जो देखकर पढ़ी, उसे याद भी किया तो नमाज़ ख़राब न होगी।

मस्अला 8—औरत का मर्द के साथ इस तरह खड़ा हो जाना कि

एक का कोई अंग दूसरे के किसी अंग के सामने हो जाए, इन शर्तों से नमाज़ को ख़राब करता है, यहां तक कि अगर सज्दे में जाने के वक़्त औरत का सर मर्द के सामने हो जाए, तब भी नमाज़ जाती रहेगी—

1. औरत बालिग़ हो चुकी हो (चाहे जवान हो या बूढ़ी) या ना–बालिग़ है, मगर जिमाअ के क़ाबिल हो, तो अगर कम–सिन ना–बालिग़ लड़की नमाज़ में सामने हो जाए तो नमाज़ ख़राब न होगी।

2. दोनों नमाज़ में हों, पस अगर एक नमाज़ में हो, तो इस सामने होने से नमाज़ ख़राब न होगी।

3. कोई आड़ बीच में न हो, पस अगर कोई पर्दा बीच में हो या कोई सुतरा आड़ हो या कोई बीच में इतनी जगह छूटी हो, जिसमें एक आदमी बे–तकल्लुफ़ खड़ा हो सके तो भी ख़राब न होगी।

4. औरत में नमाज़ के सही होने की शर्तें पायी जाती हों पस अगर औरत पागल हो या हैज़ या निफ़ास की हालात में हो, तो उसके सामने से नमाज़ फ़ासिद न होगी। इसलिए कि इन शक्लों में वह खुद नमाज़ में न समझी जाएगी।

5. नमाज़ जनाज़े की न हो। पस जनाज़े की नमाज़ में सामना फ़साद नहीं पैदा करता।

6. सामना एक रूक्न[1] के बराबर बाक़ी रहे। अगर इससे कम सामना रहे तो ख़राबी नहीं पैदा करता। जैसे इतनी देर तक सामने रहे कि जिसमें रूकूअ वग़ैरह नहीं हो सकता, उसके बाद जाती रहे, तो इस थोड़े सामने से नमाज़ में ख़राबी न आयेगी।

7. तहरीमा दोनों की एक हो, यानी यह औरत उस मर्द की मुक़्तदी हो या दोनों किसी तीसरे के मुक़्तदी हों।

8. इमाम ने उस औरत की इमामत की नीयत की हो, नमाज़ शुरू करते वक़्त या बीच में वह जब आकर मिली हो, अगर इमाम ने उसकी इमामत की नीयत न की हो तो फिर इस सामने से नमाज़ न ख़राब होगी, बल्कि उसी औरत की नमाज़ सही न होगी।

मस्‌अला 9—अगर इमाम वुज़ू टूट जाने के बाद, ख़लीफ़ा (नायब) किये बग़ैर मस्जिद से बाहर निकल गया, तो मुक़्तदियों की नमाज़ ख़राब हो

---

1. नमाज़ के रूक्न (स्तंभ) चार हैं—क़ियाम, क़िर्अत, सज्दा, रूकूअ और रूक्न के बराबर का मतलब यह है कि जिसमें तीन बार 'सुबहानल्लाह' कह सके।

जाएगी।

मस्अला 10—इमाम ने किसी ऐसे आदमी को ख़लीफ़ा कर दिया, जिसमें इमामत की सलाहियत (योग्यता) नहीं, जैसे किसी पागल या ना–बालिग़ बच्चे को या किसी औरत को, तो सबकी नमाज़ ख़राब हो जायेगी।[1]

मस्अला 11—अगर मर्द नमाज़ में हो और औरत नमाज़ की हालत में उस मर्द का बोसा ले, तो उस मर्द की नमाज़ ख़राब न होगी। हां, अगर उसके बोसा लेते वक़्त मर्द को जोश हो गया हो, तो अल–बत्ता नमाज़ ख़राब हो जाएगी। और अगर औरत नमाज़ में हो और कोई मर्द उसका बोसा ले ले, तो औरत की नमाज़ जाती रहेगी। चाहे मर्द ने शहवत (जोश) से बोसा लिया हो, या बे–शहवत और चाहे औरत को जोश आया या नहीं।

मस्अला 12—अगर कोई आदमी नमाज़ी के सामने से निकलना चाहे तो नमाज़ की हालत में उसे रोकना जायज़ है, बशर्ते कि इस रोकने में ज़्यादा काम (हरकत) न हो और ज़्यादा हरकत हो गयी तो नमाज़ ख़राब हो गयी।

नमाज़ जिन चीज़ों से मकरूह हो जाती है

मस्अला 1—नमाज़ की हालत में कपड़े का रिवाज के ख़िलाफ़ पहनना यानी जो तरीक़ा उसके पहनने का हो और जिस तरीक़े से उसे तहज़ीब वाले पहनते हैं, उसके ख़िलाफ़ उसका इस्तेमाल करना मक्रूहे तह्रीमी है।

मिसाल—कोई आदमी चादर ओढ़े और उसका किनारा[2] कंधे पर डाले या कुरता पहने और अस्तिनों में हाथ न डाले, इससे नमाज़ मकरूह हो जाती है।

मस्अला 2—नंगे सर नमाज़ पढ़ना मक्रूह है, हां, अगर आजिज़ी और नर्मी की नीयत से ऐसा करे, तो कुछ हरज नहीं।

मस्अला 3—अगर किसी की टोपी या पगड़ी नमाज़ पढ़ने में गिर

---

1. यानी सबकी नमाज़ ख़राब हो जाए मित्र, इमाम की भी, ख़लीफ़ा की भी, सब मुक़्तदियों की भी।
2. यानी दोनों किनारे छूटे हों। अगर एक किनारा छूटा हो और दूसरा कंधों पर पड़ा हो तो नमाज़ मकरूह होगी।

जाए तो बेहतर यह है कि उसी हालत में उसे उठा कर पहन ले, लेकिन अगर पहनने में ज़्यादा काम (अमल कसीर) की ज़रूरत पड़े तो फिर न पहने।

मस्अला 4—मर्दों को अपने दोनों हाथों की कुहनियों का सज्दा की हालत में ज़मीन पर बिछा देना मक्रूहे तह्रीमी है।

मस्अला 5—इमाम का मेहराब में खड़ा होना मक्रूहे तंज़ीही है। हां, अगर मेहराब से बाहर खड़ा हो, मगर सज्दा मेहराब में होता हो, तो मक्रूह नहीं।

मस्अला 6—सिर्फ़ इमाम का बे–ज़रूरत किसी ऊंची जगह पर खड़ा होना जिसकी ऊंचाई एक हाथ यसा उससे ज़्यादा हो, मक्रूहे तंज़ीही है। इमाम के साथ कुछ मुक़्तदी भी हों तो मक्रूह नहीं। अगर इमाम के साथ सिर्फ़ एक मुक़्तदी हो, तो मक्रूह है और कुछ ने कहा है कि अगर एक हाथ से कम हो और सरसरी नज़र से उसकी ऊंचाई अलग मालूम होती हो, तब भी मक्रूह है।

मस्अला 7—कुल मुक़्तदियों का इमाम से बे–ज़रूरत किसी ऊंची जगह पर खड़ा होना मक्रूहे तंज़ीही है। हां, कोई ज़रूरत हो, जैसे जमाअत ज़्यादा हो और जगह बाक़ी न होती हो तो मक्रूह नहीं या कुछ मुक़्तदी इमाम के बराबर हों और कुछ ऊंची जगह पर हों तब भी जायज़ है।

मस्अला 8—मुक़्तदी को अपने इमाम से पहले कोई काम शुरू करना मक्रूहे तह्रीमी है।

मस्अला 9—मुक़्तदी को, जबकि इमाम क़ियाम में क़िर्अत कर रहा हो, कोई दुआ वग़ैरह या कुरआन मजीद की तिलावत करना चाहे वह सूरः फ़ातिहा हो या और कोई सूरः हो, मक्रूहे तह्रीमी है।

नमाज़ में हदस[1] हो जाने का बयान

नमाज़ में अगर हदस हो जाए तो अगर बड़ा हदस होगा, जिससे गुस्ल वाजिब हो जाए, तो नमाज़ ख़राब हो जाएगी। छोटा हदस दो हालतों से ख़ाली नहीं—अख़्तियारी होगा या बे–अख़्तियारी। यानी उसके वजूद में या

1. गंदगी, नापाकी। बड़ा हदस वह नापाकी जिससे गुस्ल वाजिब होता है, छोटा हदस वह, जिससे वुज़ू टूट जाता है।

उसकी वजह से बंदों के अख़्तियार को दख़ल होगा या नहीं। अगर अख़्तियार होगा तो नमाज़ ख़राब हो जाएगी। जैसे कोई आदमी नमाज़ में ठहाका मारकर हंसे या अपने बदन में कोई चोट लगाकर ख़ून निकाल ले या जान–बूझकर हवा निकाले या कोई आदमी छत के ऊपर चले और इस चलने की वजह से कोई पत्थर वग़ैरह छत से गिरकर किसी नमाज़ी के सर में लगे और ख़ून निकल आये, इन सब शक्लों में नमाज़ ख़राब हो जाएगी, इसलिए कि ये तमाम काम बंदों के अख़्तियार से होते हैं।

अगर बे–अख़्तियारी होगा तो इसमें दो शक्लें होंगी, या ऐसा बहुत कम होगा, जैसे प..लपन, बेहोशी या इमाम का मर जाना वग़ैरह, या ऐसा बहुत ज़्यादा होगा जैसे हवा निकलना, पेशाब पाख़ाना, मज़ी वग़ैरह तो अगर बहुत कम वाला होगा तो नमाज़ ख़राब हो जाएगी और बहुत कम वाला न होगा तो नमाज़ ख़राब न होगी। बल्कि उस आदमी को शरअ से अख़्तियार और इजाज़त है कि इस हदस को दूर करने के बाद उसी नमाज़ को पूरा करे और इसको 'बिना' कहते हैं लेकिन अगर नमाज़ दोहरा ले यानी फिर शुरू से पढ़े तो बेहतर है और इस बिना करने की सूरत में नमाज़ फ़ासिद न होने की कुछ शर्तें हैं—

1. रूक्न को हदस की हालत में अदा न करे।

2. किसी रूक्न को चलने की हालत में अदा न करे, जैसे जब वुज़ू के लिए जाए या वुज़ू करके लौटे तो क़ुरआन मजीद की तिलावत न करे, इसलिए कि क़ुरआन मजीद का पढ़ना नमाज़ का रूक्न हो।

3. कोई ऐसा काम जो नमाज़ के ख़िलाफ़ हो, न करे, न कोई ऐसा काम करे जिससे बचना मुम्किन हो।

4. हदस के बाद बग़ैर किसी मजबूरी के किसी रूक्न के अदा करने के बराबर रूके नहीं, बल्कि फ़ौरन वुज़ू करने के लिए जाए, हा, किसी मजबूरी से देर हो जाए तो हरज नहीं। जैसे, सफ़ें ज़्यादा हों और खुद पहली सफ़ में हो और सफ़ों को फाड़कर आना कठिन हो।[1]

---

1. तो इस शक्ल में अगर रूक्न के बराबर आने में देर लग जाए कि मुश्किल से सफ़ों से निकल कर आये तो कोई बात नहीं और जिस तरह उस आदमी को सफ़ें फ़ाड़कर अपनी जगह जाना जायज़ है, उसी तरह वुज़ू करने के लिए, जिसका वुज़ू जाता रहे, चाहे वह इमाम हो या मुक़्तदी, उसको भी सफ़ें फाड़कर निकल जाना और ज़रूरत के मुताबिक़ क़िब्ला से फिर जाना भी जायज़ है।

मस्अला 1—मुंफ़रिद को अगर हदस हो जाए, तो उसको चाहिए कि फ़ौरन वुज़ू कर ले और जितनी जल्दी मुम्किन हो, वुज़ू से फ़ारिग़ हो ले, मगर वुज़ू तमाम सुन्नतों और मुस्तहब के साथ चाहिए और इस बीच कोई कलाम वग़ैरह न करे, पानी अगर क़रीब मिल सके, तो दूर न जाए।

हासिल यह कि जितनी हरकत ज़्यादा ज़रूरी हो, उससे ज़्यादा न करे। वुज़ू के बाद चाहे वहीं अपनी बाक़ी नमाज़ पूरी कर ले और यही अफ़ज़ल है और चाहे जहां पहले था, वहां जाकर पढ़े और बेहतर यह है कि जान–बूझकर पहली नमाज़ को सलाम फेरकर तोड़ दे और वुज़ू के बाद नये सिरे से नमाज़ पढ़े।

मस्अला 2—इमाम को अगर हदस हो जाए, अगर्चे आख़िरी क़ादे में हो, तो उसको चाहिए कि फ़ौरन वुज़ू करने के लिए चला जाए और बेहतर यह है कि अपने मुक़्तदियों में, जिसको इमामत के क़ाबिल समझता हो, उसको अपनी जगह खड़ा कर दे। मुद्रिक को ख़लीफ़ा करना बेहतर है, अगर मस्बूक़ को कर दे, तब भी जायज़ है और इस मस्बूक़ को इशारे से बतला दे कि मेरे ऊपर इतनी रक्अतें वग़ैरह बाक़ी हैं। रक्अतों के लिए उंगली से इशारा करे, जैसे एक रक्अत बाक़ी हो तो एक उंगली उठाए, दो रक्अतें बाक़ी हों तो दो उंगली, रुकूअ बाक़ी हो तो घुटनों पर हाथ रख दे। सज्दा बाक़ी हो तो पेशानी पर, क़िर्अत बाक़ी हो तो मुंह पर, सज्दा तिलावत बाक़ी हो तो माथे और ज़ुबान पर, सज्दा सह्व करना हो तो सीने पर, जब कि वह भी समझता हो, वरना, उसको ख़लीफ़ा न बनाये। फिर जब खुद वुज़ू कर चुके तो अगर जमाअत बाक़ी हो तो, जमाअत में आकर अपने ख़लीफ़ा का मुक़्तदी बन जाए और अगर वुज़ू करके वुज़ू की जगह के पास ही खड़ा हो गया, तो अगर दर्मियान में कोई ऐसी चीज़ या इतना फ़ासला रोक बना रहा हो, जिससे इक़्तिदा सही नहीं होती, तो दुरुस्त नहीं, वरना[1] दुरुस्त है। और अगर जमाअत हो चुकी हो तो अपनी नमाज़ पूरी करे, चाहे जहां वुज़ू किया है वहीं या जहां पहले था, वहां।

मस्अला 3—अगर पानी मस्जिद के फ़र्श के अन्दर मौजूद हो तो फिर ख़लीफ़ा करना ज़रूरी नहीं, चाहे कर ले और चाहे न करे, बल्कि जब खुद वुज़ू करके आये, इमाम बन जाये और इतनी देर तक मुक़्तदी उसके

---

1. यानी वुज़ू की जगह ऐसी शक्ल में खड़ा होना दुरुस्त है और उसका जमाअत में शरीक होना सही हो जाएगा।

इंतिज़ार में रहें।

मस्अला 4—ख़लीफ़ा कर देने के बाद इमाम नहीं रहता, बल्कि अपने ख़लीफ़ा का मुक़्तदी हो जाता है, इसलिए अगर जमाअत हो चुकी हो तो इमाम अपनी नमाज़ लाहिक़ की तरह पूरी कर ले। अगर इमाम किसी को ख़लीफ़ा न करे, बल्कि मुक़्तदी लोग किसी को अपने में से ख़लीफ़ा कर दें या खुद कोई मुक़्तदी आगे बढ़कर इमाम की जगह पर खड़ा हो जाए और इमाम होने की नीयत कर ले, तब भी दुरूस्त है, बशर्ते कि इमाम उस वक़्त तक मस्जिद से बाहर न निकल चुका हो और अगर नमाज़ मस्जिद में न होती हो, तो सफ़ों से या सुतरे से आगे न बढ़ा हो अगर इन हदों से आगे बढ़ चुका हो तो नमाज़ ख़राब हो जाएगी, अब कोई दूसरा इमाम नहीं बन सकता।[1]

मस्अला 5—अगर मुक़्तदी को हदस हो जाए, उसको फ़ौरन वुज़ू करना चाहिए। वुज़ू के बाद अगर जमाअत बाक़ी हो तो उसमें शरीक हो जाए वरना अपनी नमाज़ पूरी कर ले और मुक़्तदी को अपनी जगह पर जाकर नमाज़ पढ़नी चाहिए अगर जमाअत बाक़ी हो, लेकिन अगर इमाम की और उसके वुज़ू की जगह में कोई चीज़ इक़्तिदा में रूकावट न बने तो यहां भी खड़ा होना जायज़ है और अगर जमाअत हो चुकी हो तो मुक़्तदी को अख़्तियार है, चाहे इक़्तिदा की जगह जाकर नमाज़ पूरी करे या वुज़ू की जगह में पूरी करे और यही बेहतर है।

मस्अला 6—अगर इमाम मस्बूक़ को अपनी जगह पर खड़ा कर दे तो उसको चाहिए कि जिस क़दर रक्अतें वग़ैरह इमाम पर बाक़ी थी, उनको अदा करके किसी मुद्रिक को अपनी जगह कर दे ताकि वह मुद्रिक सलाम फेर दे और मस्बूक़ फिर अपनी गयी हुई रक्अतें अदा करने में लग जाए।

मस्अला 7—अगर किसी को आख़िरी क़ादे में, इसके बाद कि अत्तहीयात के बराबर बैठ चुका हो, जुनून हो जाए या बड़ा हदस हो जाए या बे-इरादा छोटा हदस हो जाए या बेहोश हो जाए तो नमाज़ ख़राब हो जाएगी और फिर उस नमाज़ को दोहराना होगा।

मस्अला 8—चूंकि ये मस्अले बारीक हैं आजकल इल्म की कमी है, ज़रूर ग़लती का डर है, इसलिए बेहतर यह है कि बिना न करे बल्कि वह

---

1. यानी उस जमाअत को पूरा करने के लिए कोई इमाम नहीं बन सकता। हां; दोबारा जमाअत से पढ़ी जाए।

नमाज़ सलाम के साथ तोड़कर फिर नये सिरे से नमाज़ पढ़ ले।

सह्व के कुछ मस्अले

मस्अला 1—अगर धीमी आवाज़ की नमाज़ में कोई आदमी, चाहे इमाम या मुंफरिद, ऊंची आवाज़ से क़िर्अत कर जाए या ऊंची आवाज़ की नमाज़ में इमाम धीमी[1] आवाज़ से क़िर्अत करे तो उसको सज्दा सह्व करना चाहिए। हां, अगर धीमी आवाज़ की नमाज़ में बहुत थोड़ी क़िर्अत ऊंची आवाज़ से की जाए, जो नमाज़ सही होने के लिए काफ़ी न हो, जैसे दो–तीन लफ़्ज़ ऊंची आवाज़ से निकल जाएं या आवाज़ वाली नमाज़ में इमाम उतना ही धीमे पढ़ दे तो सज्दा सह्व ज़रूरी नहीं। यही ज़्यादा सही है।

नमाज़ क़ज़ा हो जाने के मस्अले

मस्अला 1—अगर कुछ लोगों की नमाज़ किसी वक़्त की क़ज़ा हो गयी हो तो उनको चाहिए कि उस नमाज़ को जमाअत से अदा करें। अगर ऊंची आवाज़ की नमाज़ हो तो ऊंची आवाज़ से क़िर्अत की जाए और धीमी आवाज़ की हो तो धीमी आवाज़ से।

मस्अला 2—अगर कोई ना–बालिग़ लड़का इशा की नमाज़ पढ़कर सोये और फ़ज्र निकलने के बाद जागने पर मनी का असर देखे, जिससे मालूम हो कि उसको एहतलाम हो गया है तो बेहतर यह है कि इशा की नमाज़ को फिर दोहराये और फ़ज्र निकलने से पहले जागकर मनी का असर देखे तो सबके नज़दीक इशा की नमाज़ क़ज़ा पढ़े।

मरीज़ के कुछ मस्अले

मस्अला 1—अगर कोई माज़ूर इशारे से रुकूअ व सज्दा कर चुका हो, उसको नमाज़ के अन्दर ही रुकूअ–सज्दे पर क़ुदरत हो गई तो वह नमाज़ उसकी ख़राब हो जाएगी, फिर नये सिरे से उस पर नमाज़ पढ़ना

---

1. और इस शक्ल में मुंफ़रिद पर सज्दा सह्व नहीं।

वाजिब है और अगर अभी इशारे से रूकूअ सज्दा न किया हो कि तंदुरूस्त हो गया तो पहली नमाज़ सही है, उस पर बुनियाद रखना जायज़ है।

मस्अला 2—अगर कोई आदमी क़िर्अत के लम्बी होने की वजह से खड़े-खड़े थक जाए और तक्लीफ़ होने लगे तो उसको किसी दीवार या पेड़ या लकड़ी वग़ैरह से तकिया लगा लेना मकरूह नहीं। तरावीह की नमाज़ में कमज़ोर और बूढ़े लोगों को अक्सर इसकी ज़रूरत पेश आती है।

मुसाफ़िर की नमाज़ के मस्अले

मस्अला 1—कोई आदमी पंद्रह दिन ठहरने की नीयत करे, मगर दो जगहों पर और इन दो जगहों पर इतना फ़ासला हो कि आवाज़ दूसरी जगह पर न जा सकती हो, जैसे दस दिन मक्का में रहने का इरादा करे और पांच दिन मिना में। मक्का से मिना तीन मील की दूरी पर है, तो इस शक्ल में वह मुसाफ़िर ही गिना जाएगा।

मस्अला 2—और अगर ज़िक्र किये गये मस्अले में रात को एक ही जगह पर रहने की नीयत करे और दिन को दूसरी जगह पर, तो जिस जगह रात को ठहरने की नीयत की है, वह उसका वतने इक़ामत हो जाएगा, न्हां उसको क़स्त्र की इजाज़त न होगी। अब दूसरी जगह जहां दिन को रहता, अगर उसकी पहली जगह से सफ़र की दूरी पर है, तो वहां जाने से मुसाफ़िर हो जाएगा, वरना मुक़ीम (ठहरा हुआ) रहेगा।

मस्अला 3—और अगर ज़िक्र किये गये मस्अले में एक जगह से दूसरी जगह से इतना क़रीब हो कि एक जगह की अज़ान की आवाज़ दूसरी जगह जा सकती है, तो वे दोनों जगहें एक ही समझी जायेंगी और इन दोनों में पंद्रह दिन ठहरने के इरादे से मुक़ीम (ठहरा हुआ) हो जाएगा।

मस्अला 4—मुक़ीम की इक़्तिदा मुसाफ़िर के पीछे हर हाल में दुरूस्त है, चाहे अदा नमाज़ हो या क़ज़ा और मुसाफ़िर इमाम जब दो रक्अतें पढ़कर सलाम फेर दे, तो मुक़ीम मुक़्तदी को चाहिए कि अपनी नमाज़ उठकर पूरी करे और इसमें क़िर्अत न करे, बल्कि चुप खड़ा रहे, इसलिए कि वह लाहिक़ है और पहला क़ादा उस मुक़्तदी पर भी इमाम का पालन करने की वजह से फ़र्ज़ होगा। मुसाफ़िर इमाम को मुस्तहब है कि अपने मुक़्तदियों को दोनों तरफ़ सलाम फेरने के बाद फ़ौरन अपने मुसाफ़िर होने की इत्तिला कर दे।

मस्अला 5—मुसाफ़िर भी मुक़ीम की इक़्तिदा कर सकता है, मगर वक़्त के अंदर और वक़्त जाता रहा हो फ़ज्र और मग़्रिब में कर सकता है और ज़ुहर, असर, इशा में नहीं, इसलिए कि जब मुसाफ़िर मुक़ीम की इक़्तिदा करेगा तो इमाम के पालन में पूरी चार रक्अत भी पढ़ेगा और इमाम का पहला क़दा फ़र्ज़ न होगा और उसका फ़र्ज़ होगा, पस फ़र्ज़ पढ़ने वाले की इक़्तिदा ग़ैर–फ़र्ज़ वाले के पीछे हुई और यह दुरुस्त नहीं।[1]

मस्अला 6—अगर कोई मुसाफ़िर नमाज़ की हालत में इक़ामत की नीयत कर ले चाहे शुरू में या बीच में या आख़िर में, अगर सज्दा सह्व या सलाम से पहले तो उसको वह नमाज़ पूरी पढ़नी चाहिए, इसमें क़स्र नहीं, हां, अगर नमाज़ का वक़्त गुज़र जाने के बाद नीयत करे या लाहिक़ होने की हालत से नीयत करे तो उसकी नीयत का असर उस नमाज़ में ज़ाहिर न होगा और यह नमाज़ अगर चार रक्अत की होगी तो उसको क़स्र करना उसमें वाजिब होगा।

मिसाल 1––किसी मुसाफ़िर ने ज़ुहर की नमाज़ शुरू की, एक रक्अत पढ़ने के बाद वक़्त गुज़र गया। उसके बाद उसने ठहरने की नीयत की तो यह नीयत उस नमाज़ में असर न करेगी और यह नमाज़ उसको कस्र से पढ़नी होगी।

मिसाल 2—कोई मुसाफ़िर किसी मुसाफ़िर का मुक़्तदी हुआ और लाहिक़ हो गया, फिर अपनी गयी हुई रक्अतें अदा करने लगा ,उसने[2] इक़ामत की नीयत कर ली तो इस नीयत का असर उस नमाज़ पर कुछ न पड़ेगा और यह नमाज़ अगर चार रक्अत की होगी, तो उसको क़स्र से पढ़नी होगी।

---

1. और वक़्त के अंदर यह बात नहीं है कि फ़र्ज़ वाले के पीछे ज़रूरी हो, इसलिए कि इक़्तिदा की वजह से मुसाफ़िर के ज़िम्मे चार रक्अतें फ़र्ज़ हो गयीं और वक़्त गुज़रने के बाद यह हुक्म नहीं, दोनों शक्लों का फ़र्क़ फ़िक़्ह की किताबों में मिल जायेगा।

2. बानी लाहिक़ ने।

डर की नमाज़

जब किसी दुश्मन का सामना होने वाला हो, चाहे दुश्मन इंसान हो या कोई मारकर खा जाने वाला जानवर या कोई अजगर वग़ैरह और ऐसी हालत में सब मुसलमान या कुछ लोग भी मिलकर जमाअत से नमाज़ न पढ़ सकें और सवारियों पर बैठे-बैठे इशारों से अकेले नमाज़ पढ़ लें, इस्तिक़्बाले क़िब्ला (क़िबले की तरफ़ रूख़ करना) भी उस वक़्त शर्त नहीं। हां, अगर दो आदमी एक ही सवारी पर बैठे हों तो वे दोनों जमाअत कर लें और अगर इसकी भी मोहलत न हो तो माज़ूर हैं उस वक़्त नमाज़ न पढ़ें, इत्मीनान के बाद उसकी क़ज़ा पढ़ लें और अगर यह मुम्किन हो कि कुछ लोग मिलकर जमाअत से नमाज़ पढ़ सकें, अगरचे सब आदमी न पढ़ सकते हों तो ऐसी हालत में उनको जमाअत न छोड़ना चाहिए। इस क़ायदे से नमाज़ पढ़ें, यानी तमाम मुसलमानों के दो हिस्से कर दिए जाएं। एक हिस्सा दुश्मन के मुक़ाबले में रहे और दूसरा हिस्सा इमाम के साथ नमाज़ शुरू कर दे, अगर तीन-चार रक्अत की नमाज़ हो, जैसे ज़ुहर, असर, मग़्रिब, इशा, जबकि ये लोग मुसाफ़िर न हों और क़स्र न करें।

पस जब इमाम दो रक्अत नमाज़ पढ़कर तीसरी रक्अत के लिए खड़ा होने लगे और अगर ये लोग क़स्र करते हों या दो रक्अत वाली नमाज़ हो, जैसे फ़ज्र, जुमा, ईद की नमाज़ें या मुसाफ़िर की ज़ुहर, असर, इशा की नमाज़, तो एक ही रक्अत के बाद या हिस्सा चला जाए और दूसरा हिस्सा वहां से आकर इमाम के साथ बाक़ी नमाज़ पढ़े। इमाम को इन लोगों के आने का इन्तिज़ार करना चाहिए। फिर जब बाक़ी नमाज़ इमाम पूरी कर चुके तो सलाम फेर दे और यह लोग बग़ैर सलाम फेरे हुए दुश्मन के मुक़ाबले में चले जाएं और पहले लोग फिर यहां आकर अपनी बाक़ी नमाज़ बे-क़िर्अत के पूरी कर लें और सलाम फेर दें। इसलिए कि वे लोग लाहिक़ हैं। फिर ये लोग दुश्मन के मुक़ाबले में चले जाएं, दूसरा हिस्सा यहां आकर अपनी नमाज़ क़िर्अत के साथ पूरी कर ले और सलाम फेर दे, इसलिए कि वे लोग मस्बूक़ हैं।

मस्अला 1—नमाज़ की हालत में दुश्मन के मुक़ाबले में जाते वक़्त पैदल चलना चाहिए। अगर सवार होकर चलेंगे तो नमाज़ ख़राब हो जाएगी, इसलिए कि यह ज़्यादा अमल है।

मस्अला 2—दूसरे हिस्से का इमाम के साथ बाक़ी नमाज़ पढ़कर चले जाना और पहले हिस्से के फिर आकर अपनी नमाज़ पूरी करना मुस्तहब और अफ़्ज़ल है, वरना यह भी जायज़ है कि पहला हिस्सा नमाज़ पढ़कर चला जाए और दूसरा हिस्सा इमाम के साथ बाक़ी नमाज़ पढ़कर अपनी नमाज़ वहीं पूरी कर ले, तब दुश्मन के मुक़ाबले में जाए। जब ये लोग वहां पहुंच जाएं, तो पहला हिस्सा अपनी नमाज़ वहीं पढ़ ले, यहां न आये।

मस्अला 3—यह तरीक़ा नमाज़ पढ़ने का उस वक़्त के लिए है कि जब सब लोग एक ही इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ना चाहते हों, जैसे कोई बुज़ुर्ग शख़्स हो और सब चाहते हों कि उसी के पीछे नमाज़ पढ़ें, वरना बेहतर यह है कि एक हिस्सा एक इमाम के साथ पूरी नमाज़ पढ़ ले और दुश्मन के मुक़ाबले में चला जाए, फिर दूसरा हिस्सा दूसरे शख़्स को इमाम बनाकर पूरी नमाज़ पढ़ ले।

मस्अला 4—अगर यह डर हो कि दुश्मन बहुत ही क़रीब है और जल्द ही यहां पहुंच जाएगा और इस ख़्याल से उन लोगों ने पहले क़ायदे से नमाज़ पढ़ी, बाद इसके यह ख़्याल ग़लत निकला तो इमाम की नमाज़ सही हो गयी, मगर मुक़्तदियों को इसे दोहरा लेना चाहिए, इसलिए कि वह नमाज़ बहुत सख़्त ज़रूरत के लिए, क़ियास के ख़िलाफ़ ज़्यादा काम के साथ शुरू की गयी है। ज़्यादा ज़रूरत के बग़ैर इतना अमले कसीर नमाज़ को ख़राब करने वाली है।

मस्अला 5—अगर कोई नाजायज़ लड़ाई हो तो उस वक़्त इस तरीक़े से नमाज़ पढ़ने की इजाज़त नहीं, जैसे बाग़ी लोग, इस्लाम के बादशाह पर चढ़ायी करें या दुनिया की किसी नाजायज़ ग़रज़ से कोई किसी से लड़े तो ऐसे लोगों के लिए इतना अमले कसीर माफ़ न होगा।

मस्अला 6—नमाज़ क़िब्ले की सम्त (दिशा) के ख़िलाफ़ शुरू कर चुके हों कि इतने में दुश्मन भाग जाए तो उनको चाहिए कि फ़ौरन क़िब्ले की तरफ़ फिर जाएं, वरना नमाज़ न होगी।

मस्अला 7—अगर इत्मीनान से क़िब्ले की तरफ़ नमाज़ पढ़ रहे हों और उसी हालत में दुश्मन आ जाए तो फ़ौरन उनको दुश्मन की तरफ़ फिर जाना जायज़ है और उस वक़्त क़िब्ला रूख़ होना शर्त न रहेगा।

मस्अला 8—अगर कोई आदमी नदी में तैर रहा हो और नमाज़ का वक़्त आख़िर हो जाए तो उसको चाहिए कि अगर मुश्किल हो तो

थोड़ी देर तक अपने हाथ पैर को हरकत न दे और इशारों से नमाज़ पढ़ ले।

यहां तक कि पंजवक़्ती नमाज़ों का और उनसे मुताल्लिक़ चीज़ों का ज़िक्र था। अब चूंकि अल्लाह के फ़ज़्ल से यह पूरा हुआ इसलिए जुमा की नमाज़ का बयान लिखा जाता है, इसलिए कि जुमा की नमाज़ भी इस्लाम में बड़ी अहमियत रखती है, इसलिए ईदों की नमाज़ से इसे पहले रखा गया है।

जुमा की नमाज़ का बयान

अल्लाह तआला को नमाज़ से ज़्यादा कोई चीज़ पसंद नहीं और इसीलिए किसी इबादत की इतनी ज़्यादा ताकीद और बड़ाई शरीअत में नहीं आयी और इसी वजह से परवरदिगारे आलम ने इस इबादत को अपनी न ख़त्म होने वाली नेमतों का शुक्र अदा करने के लिए जिनका सिलसिला पैदाइश के शुरू से आख़िर वक़्त तक, बल्कि मौत के बाद और पैदाइश के पहले भी ख़त्म नहीं होता, हर दिन में पांच वक़्त मुक़र्रर फ़रमाया है और जुमा के दिन चूंकि तमाम दिनों से ज़्यादा नेमतें दी गयी हैं, यहां तक कि हज़रत आदम अलै०, जो इन्सानी नस्ल के लिए असल जड़ हैं, उसी दिन पैदा किये गए हैं, इसलिए एक ख़ास नमाज़ का हुक्म हुआ है।

हम ऊपर जमाअत की हिक्मतें और फ़ायदे भी बयान कर चुके हैं और यह भी ज़ाहिर हो चुका है कि जितनी जमाअत ज़्यादा हो उतना ही ये फ़ायदे ज़्यादा ज़ाहिर होते हैं। और यह उसी वक़्त मुम्किन है जब अलग-अलग मुहल्लों के लोग और उस जगह के अक्सर बाशिंदे एक जगह जमा होकर नमाज़ पढ़ें और हर दिन पांचों वक़्त यह बात बड़ी तक्लीफ़ की वजह होती।

इन सब वजहों से शरीअत ने हफ़्ते में एक दिन ऐसा मुक़र्रर फ़रमाया है, जिसमें अलग-अलग मुहल्लों और गांवों के मुसलमान आपस में जमा होकर इस इबादत को अदा करें। चूंकि जुमा का दिन तमाम दिनों में बुज़ुर्ग व बरतर था, इसलिए यह ख़ास बात इसी दिन के लिए की गयी है।

अगली उम्मतों के लिए भी अल्लाह तआला ने इस इबादत का हुक्म फ़रमाया था, मगर उन्होंने अपनी बद-क़िस्मती से इसमें इख़्तिलाफ़ किया

और इस सरकशी का नतीजा यह हुआ कि वे इस बड़ी सआदत[1] से महरूम रहे और यह बड़ाई भी इस उम्मत के हिस्से में पड़ी।

यहूदियों ने सनीचर का दिन मुक़र्रर किया, इस ख़्याल से कि इस दिन में अल्लाह तआला ने तमाम मख़्लूक़ों के पैदा करने से फ़रागत की थी। ईसाइयों ने इत्वार का दिन मुक़र्रर किया, इस ख़्याल से कि यह दिन कायनात के शुरू होने का है, चुनांचे अब तक ये क़ौमें इन दोनों दिनों में बहुत एहतमाम करती हैं और तमाम दुनिया के काम छोड़कर इबादत में लगी रहती हैं ईसाई हुकूमतों में इतवार के दिन इसी वजह से तमाम दफ़्तरों में छुट्टी हो जाती है।

जुमा की बड़ाई

1. नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि तमाम दिनों से बेहतर जुमा का दिन है। उसी दिन में हज़रत आदम अलैहिस्सलाम पैदा किये गए और उसी दिन वे जन्नत में दाख़िल किये गए और उसी दिन जन्नत से बाहर लाये गए। और क़ियामत भी उसी दिन होगी।

—सहीह मुस्लिम शरीफ़

2. इमाम अहमद रह० से नक़ल किया गया है कि उन्होंने फ़रमाया जुमा की रात का दर्जा लैलतुल क़द्र (क़द्र की रात) से भी ज़्यादा है कुछ वज्हों से, इसलिए कि इसी रात में सरवरे आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अपनी मां के पाक पेट में नुमायां हुए और हज़रत सल्ल० का तशरीफ़ लाना दुनिया व आख़िरत की इतनी भलाई और बरकत की वजह हुआ, जिसे न कोई नाप सकता है, न गिर सकता है।

—अश्अतुल्लम् आत फ़ारसी शरह मिश्कात

3. नबी सल्ल० ने फ़रमाया कि जुमा में एक घड़ी ऐसी है कि अगर कोई मुसलमान उस वक़्त अल्लाह तआला से दुआ मांगे तो ज़रूर क़ुबूल हो।

—बुख़ारी व मुस्लिम

उलेमा की रायें इस मामले में अलग हैं कि यह घड़ी, जिसका ज़िक्र हदीस में गुज़रा किस वक़्त है। शेख़ अब्दुल् हक़ मुहद्दिस देहलवी ने शरह 'सफ़रुस्सआदत' में चालीस क़ौल नक़ल किए हैं, अगर इन सब में दो

1. सौभाग्य।

क़ौलों को बड़ा जाना है—

एक यह कि वह घड़ी खुत्बा पढ़ने के वक़्त से नमाज़ के ख़त्म होने तक है।

दूसरे यह कि वह घड़ी दिन के आख़िरी हिस्से में है। इस दूसरे क़ौल को बहुत बड़े गिरोह ने अपनाया है। और बहुत सी सही हदीसें इसकी ताईद में हैं।

शेख़ देहलवी फ़रमाते हैं कि जब जुमा का दिन ख़त्म होने लगे तो उनको ख़बर कर दे, ताकि वे उस वक़्त ज़िक्र और दुआ में लग जाएं

—अश्अतुल्लम्आत

4. नबी सल्ल० ने फ़रमाया कि तुम्हारे सब दिनों में जुमा का दिन अफ़ज़ल है। उसी दिन सूर फूंका जाएगा। उस दिन ज़्यादा से ज़्यादा मुझ पर दरूद शरीफ़ पढ़ा करो कि वह उसी दिन[1] मेरे सामने पेश किया जाता है।

सहाबा ने अर्ज़ किया कि ऐ अल्लाह के रसूल सल्ल० ! आप पर कैसे पैश किया जाता है, हालांकि मरने के बाद आपकी हड्डियां भी न होंगी। हज़रत सल्ल० ने फ़रमाया कि अल्लाह तआला ने हमेशा के लिए ज़मीन पर नबियों (अलै०) का बदन[2] हराम कर दिया है। —अबूदाऊद शरीफ़

5. नबी सल्ल० ने इर्शाद फ़रमाया कि शाहिद (गवाह) से मुराद जुमा का दिन है। कोई दिन जुमा से ज़्यादा बुज़ुर्ग नहीं। इसमें एक घड़ी ऐसी है कि कोई मुसलमान इसमें दुआ नहीं करता, मगर यह कि अल्लाह तआला क़ुबूल फ़रमाता है और किसी चीज़ से पनाह नहीं मांगता, मगर यह कि अल्लाह तआला उसको पनाह देता है। —तिर्मिज़ी

'शाहिद' ला लफ़्ज़ सूरः बुरूज में आया है। अल्लाह तआला ने उस दिन की क़सम खायी है—

'वस्समाइ ज़ातिल् बुरूजि वल् यौमिल मौऊदि व शाहिदिंव्व मश्हूद०

'क़सम है आसमान की जो बुर्जों वाला है[3] और क़मस है मौऊद

---

1. उस दिन की क़ैद इस हदीस में नहीं है।
2. यानी ज़मीन नबियों अलै० के बदन में कुछ घट–बढ़ नहीं कर सकती, जैसा कि दुनिया में था, वैसा ही रहता है।
3. यानी बड़े–बड़े सितारों वाला। बुर्जों के यहां ये मानी हैं।

(क़ियामत) के दिन की और क़सम है शहिद (जुमा) की और मशहूद (अरफ़ा) की।

6. नबी सल्ल० ने फ़रमाया कि जुमा का दिन तमाम दिनों का सरदार और अल्लाह पाक के नज़दीक सबसे बुज़ुर्ग है और ईदुल फ़ित्र और ईदे अज़्हा से भी ज़्यादा अल्लाह तआला के नज़दीक उसकी बड़ाई है। —इब्ने माजा

7. नबी सल्ल० ने फ़रमाया कि जो मुसलमान जुमा के दिन या जुमा की रात को मरता है, अल्लाह तआला उसको क़ब्र के अज़ाब से महफ़ूज़ रखता है। —तिर्मिज़ी

8. इब्ने अब्बास रज़ि० ने एक बार आयत 'अल–यौम अक्मल्तु लकुम दीनकुम' की तिलावत फ़रमायी। उनके पास एक यहूदी बैठा था। उसने कहा कि अगर हम पर ऐसी आयत उतरती तो हम उस दिन को ईद बना लेते। इब्ने अब्बास रज़ि० ने फ़रमाया कि यह आयत दो ईदों के दिन उतरी थी—एक जुमा का दिन, दूसरे अरफ़ा का दिन। यानी हमको बनाने की क्या ज़रूरत, उस दिन तो खुद ही दो ईदें थीं।

9. नबी सल्ल० फ़रमाते थे कि जुमा की रात सफ़ेद रात है और जुमा का दिन रोशन दिन है। —मिश्कात शरीफ़

10. क़ियामत के बाद जब अल्लाह तआला जन्नत के हक़दारों को जन्नत में और दोज़ख़ के हक़दारों को दोज़ख़ में भेज देंगे और यही दिन वहां भी होंग, अगर्चे वहां दिन–रात न होंगे, मगर अल्लाह तआला उनकी दिन और रात की मिक़्दार और घंटों में गिनती करेगा, पस जब जुमा का दिन आएगा और वह वक़्त होगा, जिस वक़्त मुसलमान दुनिया में जुमा की नमाज़ के लिए निकलते थे, एक पुकारने वाला आवाज़ देगा कि ऐ जन्नत वालो ! ज़्यादा के जंगल में चलो, वह ऐसा जंगल होगा कि जिसकी लम्बाई–चौड़ाई अल्लाह तआला के सिवा कोई नहीं जानता। वहां मुश्क के ढेर होंगे आसमान के बराबर ऊंचाई में, अम्बिया अलै० नूर के मेम्बरों पर बिठलाये जाएंगे और मोमिन लोग याक़ूत की कुर्सियों पर। पस जब सब लोग अपनी–अपनी जगहों पर बैठ जाएंगे, अल्लाह तआला एक हवा भेजेगा, जिससे वह मुश्क जो वहां ढेर होगा, उड़ेगा, वह हवा उस मुश्क, के लगाने का तरीक़ा उस औरत से भी ज़्यादा जानती है, जिसको तमाम दुनिया की खुश्बुएं दी जाएं।

फिर अल्लाह तआला अर्श उठाने वालों को हुक्म देगा कि अर्श को उन लोगों के दर्मियान में ले जाकर रखो। फिर उन लोगों को ख़िताब करके

फ़रमायेगा कि मेरे बंदो ! जो ग़ैब घर ईमान लाये हो, हालांकि मुझको देखा न था और मेरे पैग़म्बर सल्ल० की तस्दीक़ की और मेरे हुक्म की इताअत की, अब कुछ मुझसे मांगो। यह दिन ज़्यादा इनाम करने का है। सब लोग एक जुबान होकर कहेंगे कि ऐ पालनहार ! हम तुझसे खुश हैं, तू भी हम से राज़ी हो जा। हक़ तआला फ़रमायेगा कि जन्नत वालो ! अगर मैं तुमसे राज़ी न होता तो तुमको अपनी जन्नत में न रखता, और कुछ मांगो, यह दिन ज़्यादा इनाम करने का है। जब सब लोग एक आवाज़ होकर कहेंगे कि ऐ परवरदिगार ! हमको अपना जमाल दिखा दे कि हम तेरी पाक ज़ात को अपनी आंखों से देख लें।

पस अल्लाह तआला पर्दे उठा देगा और उन लोगों पर ज़ाहिर हो जाएगा, अपने बे–इंतिहा जमाल से उनको घेर लेगा। अगर जन्नत वालों के लिए यह हुक्म न हो चुका होता कि ये लोग कभी जलाये न जायेंगे, तो बेशक वे उस नूर की ताब न ला सकें और जल जाएं।

फिर उनसे फ़रमायेगा कि अब अपनी–अपनी जगहों पर वापस जाओ और उन लोगों का हुस्न व जमाल हक़ीक़ी असर से दो गुना हो गया होगा। ये लोग अपनी बीवियों के पास आयेंगे, न बीवियां उनको देखेंगी, न ये बीवियों को। थोड़ी देर के बाद जब वह जो उनको छिपाये हुए था, हट जायेगा, तब ये आपस में एक दूसरे को देखेंगे। इनकी बीवियां कहेंगी कि जाते वक़्त जैसी शक्ल तुम्हारी थी वह अब नहीं यानी हज़ारों दर्जे उससे अच्छी है। लोग जवाब देंगे कि हां, यह इस वजह से है कि हक़ तआला ने अपनी पाक ज़ात को हम पर ज़ाहिर किया था और हमने उस जमाल को अपनी आंखों से देखा। —शरह स्फ़रूस्सआदत

देखिए जुमा के दिन कितनी बड़ी नेमत मिली।

11. हर दिन दोपहर के वक़्त दोज़ख़ तेज़ की जाती है, मगर जुमा की बरक़त से जुमा के दिन नहीं तेज़ की जाती। —एहयाउल्उलूम

12. नबी सल्ल० ने एक जुमा को इर्शाद फ़रमाया कि ऐ मुसलमानों! इस दिन को अल्लाह तआला ने ईद मुक़र्रर फ़रमाया है, तो इस दिन गुस्ल करो और जिसके पास खुश्बू हो, वह खुश्बू लगाये और मिस्वाक को उस दिन लाज़िम कर लो। —इब्ने माजा

जुमा के आदाब

1. हर मुसलमान को चाहिए कि जुमा का एहतमाम जुमेरात से करे।

जुमेरात के दिन अस्त्र के बाद 'इस्तग़फ़ार' वग़ैरह ज़्यादा करे और अपने पहनने के कपड़े साफ़ करके रखे और खुश्बू घर में न हो और मुम्किन हो तो उसी दिन ला रखे ताकि फिर जुमा के दिन कामों में उसको न लगना पड़े।

बुज़ुर्गों ने फ़रमाया है कि सबसे ज़्यादा जुमा का फ़ायदा उसको मिलेगा जो उसके इन्तिज़ार में रहता हो और उसकी तैयारी जुमेरात से करता हो और सबसे ज़्यादा बद–क़िस्मत वह है, जिसको यह भी न मालूम हो कि जुमा कब है, यहां तक कि सुबह लोगों से पूछे कि आज कौन–सा दिन है और कुछ बुज़ुर्ग जुमा की रात को ज़्यादा तैयारी के लिए जामा मस्जिद ही में जाकर रहते थे।[1]

2. फिर जुमा के दिन गुस्ल करे, सर के बालों को और बदन को ख़ूब साफ़ करे और मिस्वाक करना भी उस दिन बहुत बड़ाई रखता है।[2]

3. जुमा के दिन नहाने के बाद अच्छे से अच्छे कपड़े, जो उसके पास हों, पहने और मुम्किन हो तो खुश्बू लगाये और नाखुन वग़ैरह कतरवा ले।[3]

4. जामा मस्जिद में बहुत सवेरे जाए। जो आदमी जितने सवेरे जाएगा, उतना ही उसको सवाब मिलेगा। नबी करीम सल्ल० ने फ़रमाया कि जुमा के दिन फ़रिश्ते दरवाज़े पर उस मस्जिद के, जहां जुमा पढ़ा जाता है, खड़े होते हैं और सबसे पहले जो आता है, उसको, फिर उसके बाद दूसरे को, इसी तरह दर्जा–ब–दर्जा सबका नाम लिख लेते हैं और सबसे पहले जो आया, उसको ऐसा सवाब मिलता है, जैसे अल्लाह तआला की राह में ऊंट क़ुर्बानी करने वाले को, उसके बाद, फिर जैसे गाय की क़ुर्बानी करने में, फिर जैसे अल्लाह तआला के लिए मुर्ग़ ज़िब्ह करने में, फिर जैसे अल्लाह तआला की राह में किसी को अंडा सदक़ा दिया जाए।

फिर जब खुत्बा होने लगता है, तो फ़रिश्ते यह दफ़्तर बंद कर लेते हैं और खुत्बा सुनने में लग जाते हैं। —मुस्लिम शरीफ़ व बुख़ारी शरीफ़

अगरचे उस ज़माने में सुबह के वक़्त और फ़ज्र के बाद रास्ते और गलियां भरी हुई नज़र आती थीं। तमाम लोग इतने सवेरे से जामा मस्जिद जाते थे और इतनी भीड़ लगी रहती थी जैसे ईद के दिनों में। फिर जब यह तरीक़ा जाता रहा तो लोगों ने कहा कि यह पहली बिद्अत[4] है, जो इस्लाम में

---

1. एहयाउल उलूम जिल्द एक, पृ० 161, 2. वही, 3. वही,
4. यानी सवेरे न जाना और यहां बिद्अत से लफ़्ज़ी बिद्अत मुराद है यानी

(शेष अगले पृष्ठ पर)

पैदा हुई है।

यह लिखकर इमाम ग़ज़ाली रह० फ़रमाते हैं कि क्यों नहीं शर्म आती मुसलमानों को यहूदियों और ईसाइयों से कि वे लोग अपनी इबादत के दिन यानी यहूदी सनीचर को और इसाई इतवार को अपने इबादतख़ानो में और गिरजा घरों में कैसे सवेरे जाते हैं और दुनिया चाहने वाले कितने सवेरे बाज़ारों में ख़रीदने–बेचने के लिए पहुंच जाते हैं। पस दीन चाहने वाले क्यों नहीं क़दम आगे बढ़ाते। —एहयाउल उलूम

सच्ची बात तो यह है कि मुसलमानों ने इस ज़माने में उस मुबारक दिन की बिल्कुल क़ीमत घटा दी। उनको यह भी ख़बर नहीं होती कि आज कौन–सा दिन है और उसका क्या दर्जा है। अफ़सोस ! वह दिन जो किसी ज़माने में मुसलमानों के नज़दीक ईद से भी ज़्यादा था और जिस दिन पर नबी सल्ल० को फ़ख़्र था और जो दिन अगली उम्मतों को नसीब न हुआ था, आज मुसलमानों के हाथ से उसकी ऐसी ज़िल्लत और ना–क़द्री हो रही है, अल्लाह तआला की दी हुई नेमत को इस तरह बर्बाद करना सख़्त ना–शुक्री है, जिसका वबाल हम अपनी आंखों से देख रहे हैं—

इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि रजिऊन०

5. जुमा की नमाज़ के लिए पैदल जाने में हर क़दम पर एक साल रोज़े रखने का सवाब मिलता है। —तिर्मिज़ी शरीफ़

6. नबी सल्ल० जुमा के दिन फ़ज्र की नमाज़ में सूरः 'अलिफ़–लाम–मीम सज्दा' और सूरः 'हल अता अलल् इंसानि' पढ़त थे। इसलिए इन सूरतों को जुमा के दिन फ़ज्र की नमाज़ में मुस्तहब समझ कर कभी–कभी पढ़ा करे, कभी–कभी छोड़ भी दे, ताकि लोगों को वाजिब होने का ख़्याल न हो।

7. जुमा[1] की नमाज़ में नबी सल्ल० सूरः जुमा और सूरः मुनाफ़िक़ून या 'सब्बिहिस्म रब्बिकल् अअ्ला' और 'हल अताक हदीसुल ग़ाशियः पढ़ते थे।

8. जुमा के दिन, चाहे नमाज़ से पहले या पीछे सूरः कह्फ़ पढ़ने में

नयी बात और शरअी बिद्अत मुराद नहीं है, जिसका मतलब यह है कि दीन में इबादत समझकर नयी बात पैदा करना, क्योंकि यह हराम है और सवेरे न जाना हराम नहीं।

1. यानी कभी ऊपर की दोनों सूरतें और कभी ये दोनों सूरतें पढ़ते हैं।

बहुत सवाब है। नबी सल्ल० ने फ़रमाया कि जुमा के दिन जो कोई सूरः कहफ़ पढ़े, उसके लिए अर्श के नीचे से आसमान के बराबर बुलंद एक नूर ज़ाहिर होगा कि क़ियामत के अंधेरे में उसके काम आयेगा और इस जुमा से पहले जुमे तक के जितने गुनाह उससे माफ़ हुए थे, सब साफ़ हो जाएंगे।

——शरअ सफ़रुस्सआदत

उलेमा ने लिखा है कि इस हदीस में छोटे गुनाह मुराद हैं, इसलिए कि बड़े गुनाह तो बे—तौबा के माफ़ नहीं होते।

9. जुमा के दिन दरूद शरीफ़ पढ़ने में भी और दिनों से ज़्यादा सवाब मिलता है, इसलिए हदीसों में आया है कि जुमा के दिन दरूद शरीफ़ ज़्यादा पढ़ा करो।

जुमा की नमाज़ की बड़ाई और ताकीद

जुमा की नमाज़ फ़र्ज़े ऐन है। कुरआन मजीद और हदीसों और उम्मत के लोगों के इज्माअ[1] से साबित है और इस्लाम के बड़े शिआर (अदब, निशानी) में से है। इसका इंकार करने वाला काफ़िर और बिना उज़्र के इसको छोड़ने वाला फ़ासिक़ (ना—फ़रमान) है।

1. अल्लाह तआला का क़ौल है—

यानी ऐ ईमान वालों ! जब जुमा की नमाज़ के लिए अज़ान कही जाए तो तुम लोग अल्लाह तआला के ज़िक्र (याद) की तरफ़ दौड़ो और ख़रीदना—बेचना छोड़ दो। यह तुम्हारे लिए बेहतर है अगर तुम जानो।[2]

ज़िक्र से मुराद इस आयत में जुमा की नमाज़ और उसका ख़ुत्बा है। दौड़ने से मक़्सद पूरी तैयारी के साथ जाना है।

2. नबी सल्ल० ने फ़रमाया है कि जो आदमी जुमा के दिन गुस्ल और तहारत, मुम्किन हद तक करे, इसके बाद अपने बालों में तेल लगाये और ख़ुश्बू का इस्तेमाल करे, इसके बाद नमाज़ के लिए चले और जब मस्जिद में

1. वह राय, जिस पर सब जमा हो जाएं।
2. यह बात उभारने के लिए है कि तुम मुसलमान तो जानने वाले हो। जानने वालों को तो इसके ख़िलाफ़ न करना चाहिए।

जाए तो किसी आदमी को उसकी जगह से उठाकर न बैठे, फिर जितनी नफ़्लें उसकी क़िस्मत में हों, पढ़े, फिर जब इमाम[1] खुत्बा पढ़ने लगे तो ख़ामोश रहे, तो पिछले जुमा से उस वक़्त तक के गुनाह माफ़ हो जाएंगे।

——सहीह बुख़ारी शरीफ़

3. नबी सल्ल० ने फ़रमाया कि जो कोई जुमा के दिन गुस्ल करे और सवेरे मस्जिद में पैदल जाए, सवार होकर न जाए, फिर खुत्बा सुने और इस बीच में कोई बेकार काम न करे, तो उसको हर क़दम के बदले में एक साल के पूरी इबादत का सवाब मिलेगा, एक साल के रोज़ों का और एक साल की नमाज़ों का। ——तिर्मिज़ी

4. इब्ने उमर और अबू हुरैरह रज़ि० फ़रमाते हैं कि हमने नबी सल्ल० को यह फ़रमाते सुना कि लोग जुमा की नमाज़ के छोड़ देने से बाज़ रहें वरना अल्लाह तआला उनके दिलों पर मुहर कर देगा, फिर वे सख़्त ग़फ़लत[2] में पड़ जाएंगे। सहीह मुस्लिम

5. नबी सल्ल० ने फ़रमाया कि जो आदमी तीन जुमा सुस्ती से यानी बिन किसी उज़्र के छोड़ देता है, उसके दिल पर अल्लाह तआला मुहर कर देता है। —तिर्मिज़ी शरीफ़

और एक रिवायत में है कि अल्लाह तआला उससे बेज़ार हो जाता है।

6. तारिक़ बिन शिहाब रज़ि० फ़रमाते हैं कि नबी सल्ल० ने फ़रमाया कि जुमा की नमाज़ जमाअत के साथ हर मुसलमान पर वाजिब हक़ है, मगर चार पर नहीं—

(1) एक गुलाम, यानी जो शरअ के क़ायदे के मुताबिक़ मम्लूक[3] हो।
(2) दूसरे औरत,
(3) तीसरे ना–बालिग़ लड़का
(4) चौथे बीमार। —अबू दाऊद शरीफ़

7. इब्ने उमर रज़ि० रिवायत करते हैं कि नबी सल्ल० ने जुमा

---

1. दूसरी हदीस में है कि जिस वक़्त इमाम मिंबर पर आकर बैठ जाए, उसी वक़्त से नमाज़ पढ़ना और बातें करना ना–जायज़ है और यही इमामे आज़म रह० का मज़हब है।
2. यानी मुहर करने का यह नतीजा होगा कि अल्लाह तआला की पनाह, जब ग़फ़लत मुसल्लत हो गयी तो जहन्नम से छुटकारा बहुत मुश्किल है।
3. ख़रीदा हुआ गुलाम।

छोड़ने वालों के हक़ में फ़रमाया कि मेरा पक्का इरादा[1] हुआ कि किसी को अपनी जगह इमाम कर दूं और खुद उन लोगों के घरों को जला दूं जो जुमा की नमाज़ में हाज़िर नहीं होते। —सहीह मुस्लिम

इसी मज़्मून की हदीस जमाअत छोड़ने वालों के हक़ में भी आयी है, जिसको हम ऊपर लिख चुके हैं।

8. इब्ने अब्बास रज़ि० फ़रमाते हैं कि नबी सल्ल० ने फ़रमाया कि जो आदमी बे-ज़रूरत जुमा की नमाज़ छोड़ देता है, वह मुनाफ़िक़[2] लिख दिया जाता है, ऐसी किताब में जो किसी भी तब्दीली से बिल्कुल बची हुई है। —मिश्कात शरीफ़

यानी उसके निफ़ाक़ का हुक्म का हुक्म हमेशा रहेगा, हां, अगर तौबा करे, या रहम करने वालों में से सबसे बड़े रहम करने वाला अपनी सिर्फ़ मेहरबानी से माफ़ फ़रमा दे तो वह दूसरी बात है।

9. हज़रत जाबिर रज़ि० नबी सल्ल० से रिवायत करते हैं कि हज़रत सल्ल० ने फ़रमाया कि जो आदमी अल्लाह तआला पर और क़ियामत के दिन पर ईमान रखता हो, उसको जुमा के दिन जुमा की नमाज़ पढ़ना ज़रूरी है, अलावा मरीज़ और मुसाफ़िर और औरत और लड़के और गुलाम के। पस अगर कोई आदमी बेकार काम या तिजारत में लग जाए तो अल्लाह तआला भी इससे मुंह मोड़ लेता है[3] और बे-नियाज़ और महमूद है (जिसकी तारीफ़ की जाए) —मिश्कात शरीफ़

यानी उसको किसी की इबादत की परवाह नहीं, न उसको कुछ फ़ायदा है चाहे कोई उसकी तारीफ़ बखाने या न बखाने।

10. इब्ने अब्बास रज़ि० से रिवायत है कि उन्होंने फ़रमाया, जिस आदमी ने लगातार कई जुमे छोड़े, पस उसने इस्लाम को पीठ-पीछे डाल दिया।

---

1. यानी मज़बूत और मुस्तक़िल इरादा हो गया, मगर कुछ वज्हों से आपने ऐसा नहीं किया।
2. यह मतलब नहीं कि वह काफ़िर हो गया जोकि सच्चे मानी मुनाफ़िक़ के हैं, बल्कि उसमें मुनाफ़िक़ जैसी आदत है, जो गुनाह है।
3. यानी उससे बे-तवज्जोह हो जाता है और वह तो बे-परवाह है ही, न किसी से नफ़ा हासिल करने वाला और न किसी का मुहताज। बंदा जो बेहतरी करता है, अपने ही नफ़ा के लिए करता है, पस जब बंदे ने खुद ही अपनी ना-लायक़ी से दोज़ख़ में जाने का सामान किया, तो अल्लाह तआला को भी उसकी कुछ परवाह नहीं।

अश्अूतल्लम्–आत

11. इब्ने अब्बास रज़ि० से किसी ने पूछा कि एक आदमी मर गया और वह जुमा और जमाअत में शरीक न होता था, उसके बारे में आप क्या फ़रमाते हैं ? उन्होंने जवाब दिया कि वह दोज़ख़ में है।[1] फिर वह आदमी एक महीने तक बराबर उन्हीं से यही सवाल करता रहा और वह यही जवाब देते रहे। —एहयाउल उलूम

इन हदीसों से सरसरी नज़र के बाद भी यह नतीजा अच्छी तरह निकल सकता है कि जुमा की नमाज़ की सख़्त ताकीद शरीअत में है। और इसके छोड़ने पर बड़े–बड़े डरावे आये हैं। क्या अब भी कोई आदमी इस्लाम के दावे के बाद इस फ़र्ज़ के छोड़ने की हिम्मत कर सकता है।

जुमा की नमाज़ के वाजिब होने की शर्तें

1. मुक़ीम होना यानी सफ़र में न होना, पस मुसाफ़िर पर जुमा की नमाज़ वाजिब नहीं।

2. सही होना, पस मरीज़ पर जुमा की नमाज़ वाजिब नहीं। जो मर्ज़ जामा मस्जिद तक पैदल जाने में रूकावट हो, उस मर्ज़ का भरोसा है। बुढ़ापे की वजह से अगर कोई आदमी कमज़ोर हो गया हो कि मस्जिद तक न जा सके या अंधा हो, ये सब लोग मरीज़ समझे जाएंगे और जुमा की नमाज़ उन पर वाजिब न होगी।

3. आज़ाद होना, गुलाम पर जुमा की नमाज़ वाजिब नहीं।

4. मर्द होना, औरत पर नमाज़ वाजिब नहीं।

5. जमाअत को छोड़ने के लिए जो मजबूरियां बयान हो चुकी हैं, उनसे ख़ाली होना। अगर इन मजबूरियों में से कोई मजबूरी मौजूद हो तो जुमा की नमाज़ वाजिब न होगी—

मिसाल 1—पानी बहुत ज़ोर से बरसता हो।

मिसाल 2—किसी मरीज़ की देख–भाल करता हो।

मिसाल 3—मस्जिद जाने में किसी दुश्मन का डर हो।

मिसाल 4—और नमाज़ों के वाजिब होने की जो शर्तें हम ऊपर ज़िक्र कर चुके हैं, वे भी इसमें मोतबर हैं यानी अक़्ल वाला होना बालिग़ होना, मुसलमान होना।

1. इससे पहले यह मज़्मून कुछ तब्दीली के साथ गुज़र चुका है।

ये शर्तें जो बयान हुई जुमा की नमाज़ के वाजिब होने की थीं।

अगर कोई आदमी इन शर्तों के न पाये जाने के बाद भी जुमा की नमाज़ पढ़े तो उसकी नमाज़ हो जाएगी, यानी जुहर का फ़र्ज़ उसके ज़िम्मे से उतर जाएगा, जैसे कोई मुसाफ़िर या कोई औरत जुमा की नमाज़ पढ़े।

जुमा की नमाज़ के सही होने की शर्तें

1. मिस्त्र यानी शहर या क़स्बा, पस गांव या जंगल में जुमा की नमाज़ दुरुस्त नहीं। हां, जिस गांव[2] की आबादी क़स्बे के बराबर हो, जैसे तीन चार हज़ार आदमी हों, वहां जुमा दुरुस्त है।

2. जुहर का वक़्त, पस जुहर के वक़्त से पहले और उसके निकल जाने के बाद जुमा की नमाज़ दुरुस्त नहीं, यहां तक कि अगर जुमा की नमाज़ पढ़ने की हालत में वक़्त जाता रहे तो नमाज़ ख़राब हो जाएगी, अगरचे आख़िरी क़ादा तशह्हुद के बराबर हो चुका हो और इसी वजह से जुमा की नमाज़ की क़ज़ा पढ़ी नहीं जाती।

3. ख़ुत्बा यानी लोगों के सामने अल्लाह तआला का ज़िक्र करना, चाहे सिर्फ़ 'सुब्हानल्लाह' या 'अल्हम्दुलिल्लाह' कह दिया जाए, अगरचे सिर्फ़ इतने ही को काफ़ी समझना, सुन्नत के ख़िलाफ़ होने की वजह से मकरूह है।

4. ख़ुत्बे का नमाज़ से पहले होना, अगर नमाज़ के बाद ख़ुत्बा पढ़ा जाए तो नमाज़ न होगी।

5. ख़ुत्बे का वक़्त जुहर के अंदर होना, पस वक़्त आने से पहले अगर ख़ुत्बा पढ़ा जाए तो नमाज़ न होगी।

6. जमाअत यानी इमाम के अलावा, कम से कम तीन आदमियों का ख़ुत्बे के शुरू से पहली रक्अत के सज्दे तक मौजूद रहना, तो वे तीन आदमी जो ख़ुत्बे के वक़्त थे और हों और नमाज़ के वक़्त और, मगर यह

---

1. अगरचें औरत को जमाअत में शरीक न होना चाहिए।
2. इसका मतलब यह है कि जिस बस्ती को इस वजह से कि उसकी आबादी क़स्बे की–सी है, यानी जिसे 'क़स्बा' कह सकें, उसमें जुमा की नमाज़ दुरुस्त है। आबादी की जो तायदाद लिखी गयी है, वह मिसाल के तौर पर है, न कि हद–बंदी के लिए ।

शर्त है कि ये तीन आदमी ऐसे हों जो इमामत[1] कर सकें। पस अगर सिर्फ़ औरत या ना–बालिग़ लड़के हों तो नमाज़ न होगी।

7. अगर सज्दा करने से पहले लोग चले जाएं और तीन आदमियों से कम बाक़ी रह जाएं या कोई न रहे तो नमाज़ ख़राब हो जाएगी। हां, अगर सज्दा करने के बाद चले जाएं, तो फिर कुछ हरज नहीं।

8. आम इजाज़त के साथ, पूरा एलान करते हुए जुमा की नमाज़ का पढ़ना। पस किसी ख़ास जगह छिपकर जुमा की नमाज़ पढ़ना दुरुस्त नहीं। अगर किसी ऐसी जगह जुमा की नमाज़ पढ़ी जाए जहां आम लोगों को आने की इजाज़त न हो या जुमा को मस्जिद के दरवाज़े बंद कर लिए जाएं, तो नमाज़ न होगी।

ये शर्तें हैं जो जुमा की नमाज़ के सही होने की बयान हुईं। अगर कोई आदमी इन शर्तों के पाये जाने के बाद भी जुमा की नमाज़ पढ़े तो उसकी नमाज़ न होगी, ज़ुहर की नमाज़ फिर उसको पढ़ना पड़ेगी और चूंकि यह नमाज़ नफ़्ल होगी और नफ़्ल इस तैयारी के साथ मकरूह है इसलिए ऐसी हालत में जुमा की नमाज़ पढ़ना मकरूहे तहरीमी है।

जुमा के ख़ुत्बे के मस्अले

मस्अला 1—जब सब लोग जमाअत में आ जाएं तो इमाम को चाहिए कि मिंबर पर बैठ जाए और मुअज़्ज़िन उसके सामने खड़े होकर अज़ान कहे। अज़ान के बाद फ़ौरन इमाम खड़ा होकर ख़ुत्बा शुरू कर दे।

मस्अला 2—ख़ुत्बे में बारह चीज़ें सुन्नत हैं—

1. ख़ुत्बा पढ़ने की हालत में ख़ुत्बा पढ़ने वाले का खड़ा रहना।
2. दो ख़ुत्बे पढ़ना।
3. दोनों ख़ुत्बों के बीच इतनी देर तक बैठना कि 'सुब्हानल्लाह' कह सकें।
4. दोनों हदसों (ना–पाकियों) से पाक होना।
5. ख़ुत्बा पढ़ने की हालत में मुंह लोगों की तरफ़ रखना।
6. ख़ुत्बा शुरू करने से पहले अपने दिल में 'अऊज़ु बिल्लाहि मिनश्शैतानिर्रजीम' कहना।

---

1. यानी उनमें से किसी को इमाम बना दिया जाए तो शरअ के लिहाज़ से उसकी इमामत दुरुस्त हो जाए

'7. ख़ुत्बा ऐसी आवाज़ से पढ़ना कि लोग सुन सकें।

8. ख़ुत्बे में इन आठ क़िस्म के मज़्मूनों का होना—1. अल्लाह तआला का शुक्र और उसकी तारीफ़, 2. ख़ुदा के एक होने और नबी सल्ल० की रिसालत की गवाही, 4. नबी सल्ल० पर दरूद, 5. वाज़ व नसीहत, 6. कुरआन मजीद की आयतों का या किसी सूरः का पढ़ना, 7. दूसरे ख़ुत्बे में फिर इन सब चीज़ों का दोहराना, 8. दूसरे ख़ुत्बे में बजाए वाज़ व नसीहत के मुसलमानों के लिए दुआ करना—ये आठ क़िस्म के मज़्मूनों की लिस्ट थी। आगे उन बातों की लिस्ट है जो ख़ुत्बे की हालत में सुन्नत हैं।

9. ख़ुत्बे को ज़्यादा लंबा न करना, बल्कि नमाज़ से कम रखना।

10. ख़ुत्बे मिंबर पर पढ़ना। अगर मिंबर न हो तो किसी लाठी वग़ैरह पर सहारा देकर खड़ा होना और मिंबर के होते हुए किसी लाठी वग़ैरह पर हाथ रखकर खड़ा होना और हाथ पर हाथ रख लेना, जैसा कि कुछ लोगों की हमारे ज़माने में आदत है, इसकी कोई सनद नहीं।

11. दोनों ख़ुत्बों का अरबी ज़ुबान में होना, और किसी ज़ुबान में ख़ुत्बा पढ़ना या उसके साथ किसी और ज़ुबान के शेर वग़ैरह मिला देना जैसा कि हमारे ज़माने में कुछ लोगों का तरीक़ा है, सुन्नते मुअक्कदा के ख़िलाफ़ है और मक्रूहे तहरीमी है।—इमदादुल् फ़तावा, जिल्द 1, पृ० 25

12. ख़ुत्बा सुनने वालों का क़िब्ला रूख़ होकर बैठना। दूसरे ख़ुत्बे में नबी सल्ल० के आल व अस्हाब, और बीवियों, ख़ास तौर से शुरू के चारों ख़लीफ़ों और हज़रत हमज़ा व अब्बास रज़ि० के लिए दुआ करना मुस्तहब है। इस्लामी बादशाह के लिए दुआ करना जायज़ है, मगर उसकी ऐसी तारीफ़ करना जो ग़लत हो, मक्रूहे तहरीमी है।

मस्अला 3—जब इमाम ख़ुत्बे के लिए उठकर खड़ा हो, उस वक़्त से कोई नमाज़ पढ़ना या आपस में बात–चीत करना मक्रूहे तहरीमी है। हां, क़ज़ा नमाज़ का पढ़ना तर्तीब वालों के लिए उस वक़्त भी जायज़ बल्कि वाजिब है, फिर जब तक इमाम ख़ुत्बा ख़त्म न कर दे ये सब चीज़ें मना है।

मस्अला 4—जब ख़ुत्बा शुरू हो जाए तो इमाम हाज़िर लोगों को इसका सुनना वाजिब है, चाहे इमाम के नज़दीक बैठे हों या दूर और कोई ऐसा काम करना जो सुनने में रूकावट बने, मक्रूहे तहरीमी है औ खाना–पीना, बात–चीत करना, चलना–फिरना, इस्लाम या सलाम का जवाब या तस्बीह पढ़ना या किसी को शरअी मस्अला बताना, जैसा कि नमाज़ की हालत में मना है, वैसा ही इस वक़्त भी मना है, हां, ख़तीब (ख़ुत्बा

पढ़ने वाले) को जायज़ है कि खुत्बा पढ़ने की हालत में किसी को शरअी मस्अला बात दे।

मस्अला 5—अगर सुन्नत–नफ़्ल पढ़ने में खुत्बा हो जाए तो बेहतर यह है कि सुन्नते मुअक्कदा पूरा करे और नफ़्ल में दो रक्अत पर सलाम फेर दे।

मस्अला 6—दोनों खुत्बों के बीच बैठने की हालत में इमाम को या मुक़्तदियों को हाथ उठाकर दुआ मांगना मक्रूहे तहरीमी है। हां, बे–हाथ उठाये हुए अगर दिल में दुआ मांगी जाए तो जायज़ है, बशर्ते कि ज़ुबान से कुछ न कहे, न धीमे, न ज़ोर से। लेकिन नबी सल्ल० और उनके साथियों रज़ि० से नक़ल नहीं किया गया है। रमज़ान के आख़िरी जुमा के खुत्बे में विदा और जुदाई के मज़्मून का पढ़ना, इस वजह से कि नबी सल्ल० और उनके साथियों से नक़ल नहीं किया गया है, न फ़िक़्ह की किताबों में कहीं इसका पता है और ऐसा हमेशा करते रहने से आप लोगों को इसके ज़रूरी होने का ख़्याल होने लगता है, इसलिए बिद्अत है।

तंबीह—हमारे ज़माने में इस खुत्बे को ऐसा ज़रूरी समझ लिया गया है कि अगर कोई न पढ़े तो उसे ताने दिये जाते हैं, और उस खुत्बे के सुनने में तैयारी भी ज़्यादा की जाती है। रूहुल् इख़्वान

मस्अला 7—ख़ुत्बा का किसी किताब वग़ैरह से देखकर पढ़ना जायज़ है।

मस्अला 8—नबी सल्ल० का नाम मुबारक अगर खुत्बे में आये तो मुक़्तदियों को अपने दिल में दरूद शरीफ़ पढ़ लेना जायज़ है।

नबी सल्ल० का खुत्बा, जुमा के दिन

नबी सल्ल० का ख़ुत्बा नक़ल करने का यह मतलब नहीं कि लोग उसी खुत्बे को ज़रूरी समझ लें, बल्कि कभी–कभी बरक़त और पैरवी के लिए इसको रख लिया जाया करे। आदत शरीफ़ यह थी कि जब सब लोग जमा हो जाते, उस वक़्त आप तश्रीफ़ लाते और हाज़िर लोगों को सलाम करते और हज़रत बिलाल रज़ि० अज़ान कहते। जब अज़ान ख़त्म हो जाती, आप खड़े हो जाते और साथ ही ख़ुत्बा शुरू फ़रमा देते। जब तक मिंबर न बना था, किसी लाठी या कमान से हाथ को सहारा दे लेते थे और कभी–कभी उस लकड़ी के स्तून से, जो मेहराब के पास था, जहां आप ख़ुत्बा पढ़ते थे, तकिया लगा देते थे। मिंबर बन जाने के बाद फिर किसी लाठी वग़ैरह से सहारा लेना, इसकी रिवायत

नहीं मिलती (ज़ादुल मुआद जिल्द 1 पृ० 120)

दो खुत्ब पढ़ते और दोनों के बीच में कुछ थोड़ी देर बैठ जाते और उस वक़्त कुछ बात न करते, न दुआ मांगते। जब दूसरे खुत्बे से आप छुट्टी पाते, हज़रत बिलाल रज़ि० इक़ामत कहते और आप नमाज़ शुरू फ़रमाते। खुत्बा पढ़ते वक़्त हज़रत नबी सल्ल० की आवाज़ बुलंद हो जाती थी और मुबारक आंखें लाल हो जाती थीं।

मुस्लिम शरीफ़ में है कि खुत्बा पढ़ते वक़्त हज़रत नबी सल्ल० की ऐसी हालत होती थी कि जैसे कोई आदमी किसी दुश्मन के लश्कर से, जो बहुत जल्द आना चाहता हो, अपने लोगों को ख़बर देता हो। अक्सर खुत्बे फ़रमाया करते थे कि 'बुअ़िस्तु अना वस्साअतु क हातैनि'[1](بُعِثْتُ اَنَا وَالسَّا
عَةُ كَهَاتَيْنِ)

यानी मैं और क़ियामत इस तरह साथ भेजा गया हूं जैसे दो उंगलियां और बीच की उंगली और शहादत की उंगली को मिला देते थे और इसके बाद फ़रमाते थे—

اَمَّا بَعْدُ فَاِنَّ خَيْرَ الْحَدِيْثِ كِتَابُ اللّٰهِ وَخَيْرُ
الْهَدْيِ هَدْيُ مُحَمَّدٍ وَّشَرُّ الْاُمُوْرِ مُحْدَثَاتُهَا وَكُلُّ بِدْعَةٍ ضَلَالَةٌ اَنَا اَوْلٰى بِكُلِّ
مُؤْمِنٍ مِّنْ نَفْسِهٖ مَنْ تَرَكَ مَالًا فَلِاَهْلِهٖ وَمَنْ تَرَكَ دَيْنًا اَوْ ضِيَاعًا فَعَلَيَّ

अम्मा बअ़्दु फ़ इन्न ख़ैरल हदीसि किताबुल्लाहि व ख़ैरूल हद्यि हद्यु मुहम्मदिन व शर्रूल् उमूरि मुह्दसातुहा व कुल्लु बिदअ़तिन ज़लाल तुन अना औला बिकुल्लि मुअ्मिनिम मिन नफ़्सिही मन त र क मालन फ़लि अह्लिही व मन तर क दैनन औ ज़ियाअन फ़ अ़लय्य० يَا اَيُّهَا النَّاسُ تُوْبُوْا قَبْلَ اَنْ تَمُوْتُوْا وَبَا

और कभी यह खुत्बा पढ़ते थे—

دِرُوْا بِالْاَعْمَالِ الصَّالِحَةِ وَصِلُوا الَّذِيْ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَ رَبِّكُمْ بِكَثْرَةِ ذِكْرِكُمْ لَهٗ وَكَثْرَةِ الصَّدَ
قَةِ بِالسِّرِّ وَالْعَلَانِيَةِ تُؤْجَرُوْا وَتُحْمَدُوْا وَتُرْزَقُوْا وَاعْلَمُوْا اَنَّ اللّٰهَ قَدْ فَرَضَ عَلَيْكُمُ الْجُمُعَةَ مَكْتُوْ
بَةً فِيْ مَقَامِيْ هٰذَا فِيْ شَهْرِيْ هٰذَا فِيْ عَامِيْ هٰذَا اِلٰى يَوْمِ الْقِيَامَةِ مَنْ وَّجَدَ اِلَيْهِ سَبِيْلًا فَمَنْ تَرَكَهَا فِيْ
حَيَاتِيْ اَوْ بَعْدِيْ جُحُوْدًا بِهَا اَوِ اسْتِخْفَافًا بِهَا وَلَهٗ اِمَامٌ جَائِرٌ اَوْ عَادِلٌ فَلَا جَمَعَ اللّٰهُ شَمْلَهٗ وَلَا بَارَكَ لَهٗ فِيْ اَمْرِهٖ
اَلَا وَلَا صَلٰوةَ لَهٗ اَلَا وَلَا زَكٰوةَ لَهٗ وَلَا حَجَّ لَهٗ اَلَا وَلَا بِرَّ لَهٗ حَتّٰى يَتُوْبَ فَاِنْ تَابَ تَابَ اللّٰهُ اَلَا وَلَا
تَؤُمَّنَّ امْرَاَةٌ رَجُلًا اَلَا وَلَا يَؤُمَّنَّ اَعْرَابِيٌّ مُهَاجِرًا اَلَا وَلَا يَؤُمَّنَّ فَاجِرٌ مُؤْمِنًا اِلَّا اَنْ يَقْهَرَهٗ سُلْطَانٌ يَخَافُ
سَيْفَهٗ وَسَوْطَهٗ

1. मतलब आपका यह था कि क़ियामत बहुत क़रीब है, मेरे बाद बहुत जल्द आयेगी।

या ऐयुहन्नासु मूतू क़बल अन तमूमू व बादिरू बिल् अअ़मालिस्सालिहाति सिलुल्लज़ी बैन कुम व बैन रब्बिकुम बिकस्रति ज़िक्रिकुम लहू व कस्रतिस्सद क़ति बिस्सिर्रि वल् अ़ लनियति तुअ्‌ जरू व तुह्मदू व तुर्ज़क़ू वअ्‌ लमू अन्नल्लाह क़द फ़ र ज़ अ़ लैकुमुल जुमअत मक्तू बतन फ़ी मक़ामी हाज़ा फ़ी शहरी हाज़ा फ़ी आमी हाज़ा इला यौमिल क़ियामति मंव्व ज द इलैहि सबीलन फ़ मन त र कहा फ़ीहयाती औ बअ्‌ दी जुहू द न बिहा व इस्तिख़्फ़ाफ़न बिहा व लहू इमामुन जाइरून औ आदिलुन फ़ ला ज म अ़ल्लाहु शम्लहु व बा र क लहू फ़ी अम्रिही अ ला व ला सलात लहू अला व ला ज़कात लहू व ला हज्ज लहू अला व ला बिर्र लहू हत्ता यतू ब फ़ इन ताब ताबल्लाहु अ ला व ला तुअम्मन्न इम्र अतुन रजुलन अला वला युअम्मन्न एराबीयुन मुहाजिरन अला व ला युअम्मन्न फ़ाजिरन मुअ्‌मिनन इल्ला यक़्हरूहू सुल्तानुन यख़ाफ़ु सैफ़ह व सौत हू० —इब्ने माजा

और कभी हम्द व सलात के बाद यह ख़ुत्बा पढ़ते थे—

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّاٰتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنَّ مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ اَرْسَلَهٗ بِالْحَقِّ بَشِيْرًا وَّنَذِيْرًا بَيْنَ يَدَيِ السَّاعَةِ مَنْ يُّطِعِ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ فَقَدْ رَشَدَ وَاهْتَدٰى وَمَنْ يَّعْصِهِمَا فَاِنَّهٗ لَا يَضُرُّ اِلَّا نَفْسَهٗ وَلَا يَضُرُّ اللّٰهَ شَيْئًا

अल्हम्दु लिल्लाहि नह्म दुहू व नस्तग़्फ़िरूहू व नअूज़ु बिल्लाहि मिन शुरूरि अन्फ़ुसिना व मिन सय्यिआति अअ्‌ मालिना मय्यह्दिहिल्लाहु फ़ला मुज़िल्ल लहू व मंय्युज़िललहू फ़ ला हादिया लहू व अश्हदु अल्ला इलाह इल्लल्लाहु वह्दहू ला शरीक लहू व अशहदु अन्न मुहम्मदन अब्दुहू व रसूलुहू अर्सलहू बिल हक़्क़ि बशीरंव्व नज़ीरा बैन य द यिस्साअति मंय्युतिअिल्लाह व रसूलहू फ़ क़द र श द वह्तदा व मंय्यअ्‌ सिहिमा फ़ इन्नहू ला यज़ुर्रू इल्ला नफ़्सहू व ला यज़ुर्रूल्लाह शैअन०
—अबूदाऊद

एक सहाबी फ़रमाते है कि हज़रत सूरः क़ाफ़ ख़ुत्बे में अक्सर पढ़ा करते थे यहां तक कि मैंने सूरः 'क़ाफ़' हज़रत सल्ल० ही से सुनकर याद की, जब आप मिंबर पर इसको पढ़ा करते थे और कभी सूरः

वल्अस्त्रि और कभी ' यस्तवी अस्हा बुन्नारि व अस्हाबुल जन्नति अस्हाबुल जन्नती हुमुल फ़ाइज़ून'० (وَيَسْتَوِيْ اَصْحٰبُ النَّارِ وَاَصْحٰبُ الْجَنَّةِ ۚ اَصْحٰبُ الْجَنَّةِ هُمُ الْفَآئِزُوْنَ) और कभी 'व ना दौ या मालिकु लियक़्ज़ि अ़ लैना रब्बुक क़ाल इन्नकुम माकिसून० (وَنَادَوْا يٰمٰلِكُ لِيَقْضِ عَلَيْنَا رَبُّكَ ۚ قَالَ اِنَّكُمْ مّٰكِثُوْنَ)—बह्रु र्राइक़

नमाज़ के मस्अले

मस्अला 1—बेहतर यह है कि जो आदमी खुत्बा पढ़े, वही नमाज़ भी पढ़ाये और अगर कोई दूसरा हो, तब भी जायज़ है।

मस्अला 2—ख़ुत्बा होते ही फ़ौरन इक़ामत कहकर नमाज़ शुरू कर देना सुन्नत है। ख़ुत्बा और नमाज़ के दर्मियान में दुनिया का कोई काम करना मक्रूहे तहरीमी है और अगर दर्मियान में फ़स्ल (दूरी) ज़्यादा हो जाए, तो इसके बाद खुत्बा के दोहराने की ज़रूरत है, हां, कोई दीनी काम हो, जैसे किसी को कोई शरआी मस्अला बताए या वुज़ू न रहे और वुज़ू करने जाए या खुत्बे के बाद मालूम हो कि उसको गुस्ल की ज़रूरत थी और गुस्ल करने जाए, तो कुछ कराहत नहीं, न खुत्बे के दोहराने की ज़रूरत है।

मस्अला 3—जुमा की नमाज़ इस नीयत से पढ़ी जाए—

नवैतु अन उसल्लिय रक्अतयिल् फ़र्ज़ि सलातिल् जुमअति
यानी मैंने यह इरादा किया कि दो रक्अत फ़र्ज़ जुमा पढूं।

मस्अला 4—बेहतर यह है कि जुमा की नमाज़ एक जगह एक ही मस्जिद में सब लोग जमा होकर पढ़ें, अगरचे एक जगह की कई मस्जिदों में भी जुमा की नमाज़ जायज़ है।

मस्अला 5—अगर कोई मस्बूक़ आख़िरी क़ादे में अत्तहीयात पढ़ते वक़्त या सज्दा सह्व के बाद आकर मिले तो उसकी शिर्कत सही हो जाएगी। और उसको जुमा की नमाज़ पूरी करनी चाहिए, ज़ुह्र पढ़ने की

ज़रूरत नहीं।

मस्अला 6—कुछ लोग जुमा के बाद ज़ुहर एहतियात के तौर पर पढ़ा करते हैं। चूंकि आम लोगों का अक़ीदा इससे बहुत बिगड़ गया है, उनको बिल्कुल मना करना चाहिए, हां, अगर कोई इल्म वाला शुबहे के मौक़े पर पढ़ना चाहे, तो अपने पढ़ने की किसी को इत्तिला न करे।

ईदों की नमाज़ का बयान

मस्अला 1—शव्वाल के महीने की पहली तारीख़ के 'ईदुल् फ़ित्र' कहते हैं और ज़िलहिज्जा की दसवीं तारीख़ को 'ईदुल्अज़्हा' कहते हैं। ये दोनों दिन इस्लाम में ईद और ख़ुशी के दिन हैं। इन दोनों दिनों में दो रक्अत नमाज़ शुक्रिए के तौर पर पढ़ना वाजिब है। जुमा की नमाज़ के वाजिब होने के लिए जो शर्तें ऊपर गुज़र चुकी हैं, वही सब इन दोनों ईदों को नमाज़ में भी हैं, ख़ुत्बे के अलावा कि जुमा की नमाज़ का ख़ुत्बा फ़र्ज़ और शर्त है और नमाज़ से पहले पढ़ा जाता है और इन दोनों ईदों की नमाज़ में शर्त यानी फ़र्ज़ नहीं, सुन्नत है और पीछे पढ़ा जाता है, मगर ईदों के ख़ुत्बे का सुनना भी जुमा के ख़ुत्बे की तरह वाजिब है यानी उस वक़्त बोलना–चालना, नमाज़ पढ़ना सब हराम है।

ईदुल फ़ित्र के दिन तेरह चीज़ें सुन्नत हैं—

1. शरअ के मुताबिक़ अपने को सजाना।
2. गुस्ल करना, 3. मिस्वाक करना।
4. अच्छे से अच्छे कपड़े पहनना, जो पास मौजूद हों।
5. ख़ुश्बू लगाना, 6. सुबह को बहुत सवेरे उठना।
7. ईदगाह में बहुत सवेरे जाना।
8. ईदगाह जाने से पहले कोई मीठी चीज़ जैसे, छोहारे वग़ैरह ख़ाना,
9. ईदगाह जाने से पहले सद्क़ा–ए–फ़ित्र देना।
10. ईद की नमाज़ ईदगाह में पढ़ना जाकर यानी शहर की मस्जिद में बे–उज्र न पढ़ना।
11. जिस रास्ते से जाए, उसके सिवा दूसरे रास्ते से वापस आना।
12. पैदल जाना, और
13. रास्ते में अल्लाहु अक्बर अल्लाहु अक्बर लाइलाह इल्लल्लाहु वल्लाहु अक्बर अल्लाहु अक्बर व लिल्लाहिल हम्दु (اَللّٰہُ اَکْبَرُ اَللّٰہُ اَکْبَرُ

لَا اِلٰہَ اِلَّا اللّٰہُ وَاللّٰہُ اَکْبَرُ اَللّٰہُ اَکْبَرُ وَلِلّٰہِ الْحَمْدُ

धीमी आवाज़ से पढ़ते हुए जाना चाहिए।

मस्अला 2—ईदुल फ़ित्र की नमाज़ पढ़ने का यह तरीक़ा है कि यह नीयत करे—

نَوَیْتُ اَنْ اُصَلِّیَ رَکْعَتَیِ الْفَرْضِ صَلٰوۃِ الْجُمُعَۃِ

नवैतु अन उसल्लिय रक्अतयिल् वाजिबि सलात ईदिल् फ़ित्र मअ सित्ति तक्बीरातिन वाजिबातिन——

यानी मैंने यह नीयत की कि दो रक्अत वाजिब नमाज़ ईद की छ: वाजिब तक्बीरों के साथ पढ़ूं। यह नीयत करके हाथ बांध ले और 'सुब्हानकल्लाहुम्म' आख़िर तक पढ़कर तीन बार अल्लाहु अक्बर पढ़े और हर बार तक्बीरे तहरीम की तरह दोनों कानों तक हाथ उठाये और तक्बीर के बाद हाथ लटका दे और हर तक्बीर के बाद इतनी देर रुके कि तीन बार[1] सुब्हानल्लाह कह सकें, तीसरी तक्बीर के बाद हाथ न लटकाये बल्कि बांध ले और अऊज़ू बिल्लाहि पढ़कर सूरः फ़ातिहा और कोई दूसरी सूरः पढ़कर क़ायदे के मुताबिक़ रुकूअ–सज्दा करके खड़ा हो और उस दूसरी रक्अत में पहले सूरः फातिहा और सूरः पढ़ ले, इसके बाद तीन–तीन तक्बीरें इसी तरह कहे, लेकिन यहां तीसरी तक्बीर के बाद हाथ न बांधे बल्कि लटकाये रखे और फिर तक्बीर कह कर रुकूअ में जाये।

मस्अला 3—नमाज़ के बाद दो ख़ुत्बे मिंबर पर खड़े होकर पढ़े और दोनों ख़ुत्बों के दर्मियान में उतनी ही देर तक बैठे जितनी देर जुमा के ख़ुत्बे में बैठता है।

मस्अला 4—ईदों की नमाज़ के बाद (या ख़ुत्बे के बाद दुआ मांगना, जो नबी सल्ल० और उनके सहाबा रज़ि० और उनके बाद के बुज़ुर्गों से नक़ल नहीं किया गया है, मगर चूंकि आमतौर से हर नमाज़ के बाद दुआ मांगना सुन्नत है, इसलिए ईदों की नमाज़ के बाद भी दुआ मांगना सुन्नत होगा।

मस्अला 5—ईदों के ख़ुत्बों को पहले तक्बीर से शुरू करे। पहले ख़ुत्बे में नौ बार 'अल्लाहु अक्बर' कहे, दूसरे में सात बार।

मस्अला 6—ईदे अज़्हा की नमाज़ का भी यही तरीक़ा है और इसमें भी वे सब चीज़ें सुन्नत हैं जो ईदुल फ़ित्र में हैं। फ़र्क़ इतना है कि ईदुल अज़्हा की नीयत में बजाए ईदुल फित्र के ईदुल अज़्हा दाख़िल करे। ईदुल

---

1. अगर ज़्यादा भीड़ की वजह से ज़्यादा रुकने की ज़रूरत हो, तो हरज नहीं।

फ़ित्र में ईदगाह जाने से पहले कोई चीज़ खाना सुन्नत है, यहां नहीं। और ईदुल फ़ित्र में रास्ते में चलते वक़्त धीरे-धीरे तक्बीर कहना सुन्नत है और यहां बुलंद आवाज़ से। और ईदुल फ़ित्र की नमाज़ देर करके पढ़ना सुन्नत है और ईदुल अज़्हा की सवेरे और यहां सद्क़ा-ए-फ़ित्र नहीं, बल्कि बाद में क़ुर्बानी है हैसियत वालों पर। और अज़ान व इक़ामत न यहां है, न वहां।

मस्अला 7—जहां ईद की नमाज़ पढ़ी जाए वहां उस दिन और कोई नमाज़ पढ़ना मक्रूह है, नमाज़ से पहले भी और पीछे भी। हां, नमाज़ के बाद घर में आकर नमाज़ पढ़ना मक्रूह नहीं है। और नमाज़ से पहले यह भी मक्रूह है।

मस्अला 8—औरतें और वे लोग जो किसी वजह से ईद की नमाज़ न पढ़ें, उनको ईद की नमाज़ से पहले कोई नफ़्ल वग़ैरह मक्रूह है।

मस्अला 9—ईदुल फ़ित्र के ख़ुत्बे में सदक़ा-ए-फ़ित्र और ईदुल अज़्हा के ख़ुत्बे में क़ुर्बानी के मस्अले और तक्बीरे तश्रीक़ के अहकाम बयान करना चाहिए। तक्बीर, यानी हर नमाज़ के बाद एक बार—

अल्लाहु अक्बर अल्लाहु अक्बर ला इलाह इल्लल्लाहु वल्लाहु अक्बर अल्लाहु अक्बर व लिल्लाहिल हम्दु०

कहना वाजिब है। बशर्ते कि वह फ़र्ज़ जमाअत से पढ़ा गया हो और वह जगह शहर हो। यह तक्बीर औरत और मुसाफ़िर पर वाजिब नहीं। अगर ये लोग किसी ऐसे शख़्स के मुक़्तदी हों, जिस पर तक्बीर वाजिब है, तो उन पर भी तक्बीर वाजिब हो जाएगी, लेकिन अगर मुंफ़रिद और औरत और मुसाफ़िर भी कह ले तो बेहतर है कि साहिबैन[2] के नज़दीक उन सब पर वाजिब है।

मस्अला 10—यह तक्बीर अरफ़े यानी नवीं तारीख़ की फ़ज्र से तेरहवीं तारीख़ की असर तक कहना वाजिब है। सब तेईस नमाज़ें हुई। जिनके बाद तक्बीर वाजिब है।

मस्अला 11—इस तक्बीर का ऊंची आवाज़ से कहना वाजिब है, हां, औरतें धीमी आवाज़ से कहें।

---

1. इस मस्अले में नमाज़ से मुराद नफ़्ल नमाज़ है।
2. इमाम अबू यूसुफ़ और इमाम मुहम्मद रह०

मस्अला 12—नमाज़ के बाद फ़ौरन तक्बीर कहना चाहिए।

मस्अला 13—अगर इमाम तक्बीर कहना भूल जाए तो मुक़्तदियों को चाहिए कि फ़ौरन तक्बीर कह दें। यह इंतिज़ार न करें कि जब इमाम कहे, तब कहें।

मस्अला 14—ईदुल-अज़हा की नमाज़ के बाद भी तक्बीर कह लेना कुछ के नज़दीक वाजिब है।

मस्अला 15—ईदों की नमाज़ सब के यहां कई मस्जिदों में जायज़ है।

मस्अला 16—अगर किसी को ईद की नमाज़ न मिली हो और सब लोग नमाज़ पढ़ चुके हों तो वह आदमी तंहा ईद की नमाज़ नहीं पढ़ सकता, इसलिए कि जमाअत इसमें शर्त हैं इसी तरह अगर कोई आदमी जमाअत में शरीक हुआ हो और किसी वजह से उसकी नमाज़ ख़राब हो गयी हो तो वह भी इसकी क़ज़ा नहीं पढ़ सकता। न उस पर इसकी क़ज़ा वाजिब है। हां, अगर कुछ और लोग भी इसके साथ शरीक हो जाएं तो पढ़ना वाजिब है।

मस्अला 17—अगर किसी मजबूरी से पहले दिन नमाज़ न पढ़ी जा सके तो ईदुल फ़ित्र की नमाज़ दूसरे दिन और ईदुल अज़हा की नमाज़ बारहवीं तारीख़ तक पढ़ी जा सकती है।

मस्अला 18—इदुल अज़हा की नमाज़ में बे-उज़्र भी बारहवीं तारीख़ तक देर करने से नमाज़ हो जाएगी मगर मकरूह है और ईदुल फ़ित्र में बे-उज़्र देर करने से नमाज़ ही नहीं होगी। उज़्र (मजबूरी) की मिसाल—

1. किसी वजह से इमाम[1] नमाज़ पढ़ाने न आया हो।

2. पानी बरस रहा हो।

3. चांद की तारीख़ का पता न चले और दिन ढलने के बाद जब वक़्त जाता रहे, मालूम हो।

4. बदली के दिन नमाज़ पढ़ी गयी हो और बदली खुल जाने के बाद मालूम हो कि बे-वक़्त नमाज़ पढ़ी गयी।

मस्अला 19—अगर कोई आदमी ईद की नमाज़ में ऐसे वक़्त आकर शरीक हो कि इमाम तक्बीरों से छुट्टी ले चुका हो और अगर रुकूअ में आकर

---

1. मुराद वह इमाम है, जिसके बग़ैर नमाज़ पढ़ने में फ़ित्ने का डर हो, चाहे हुकूमत वाला हो या न हो और अगर फ़ित्ने का डर न हो तो फिर मुसलमान किसी को इमाम बनाकर नमाज़ पढ़ लें। इमाम न आने की वजह से देर न करें।

शरीक हुआ हो तो अगर ग़ालिब गुमान हो कि तक्बीरों की फ़रागत के बाद इमाम को रुकूअ मिल जाएगा तो नीयत बांधकर तक्बीर कह ले इसके बाद रुकूअ में जाए। और अगर न मिलने का ख़ौफ़ हो तो रुकूअ में शरीक हो जाए और रुकूअ की हालत में बजाए तस्बीह, तक्बीरें कह ले, मगर रुकूअ की हालत में तक्बीरें कहते वक़्त हाथ न उठाये और इससे पहले कि पूरी तक्बीरें कह चुके इमाम रुकूअ से सर उठा ले तो यह भी खड़ा हो जाए और जितनी तक्बीरें रह गयी हैं, वे इससे माफ़ हैं।

मस्अला 20—अगर किसी की एक रक्अत ईद की नमाज़ में चली जाए तो जब वह उसको अदा करने लगे तो पहले क़िर्अत कर ले, इसके बाद तक्बीर कहे, अगरचे क़ायदे के मुताबिक़ पहले तक्बीर कहना चाहिए था, लेकिन चूंकि इस तरीक़े से दोनों रक्अतों में तक्बीरें एक के बाद एक हुई जाती हैं और यह किसी सहाबी का मज़हब नहीं है, इसलिए इसके ख़िलाफ़ हुक्म दिया गया। अगर इमाम तक्बीर कहना भूल जाए और रुकूअ में उसको ख़्याल आए तो उसको चाहिए कि रुकूअ की हालत में तक्बीर कह ले, फिर क़ियाम की तरफ़ न लौटे और अगर लौट जाए, तब भी जायज़ है यानी नमाज़ ख़राब न होगी, लेकिन हर हाल में भीड़ की ज़्यादती की वजह से सज्दा सह्व न करे।

काबा के अन्दर नमाज़ पढ़ने का बयान

मस्अला 1—जैसा कि काबा शरीफ़ के बाहर उसके रुख़ पर नमाज़ पढ़ना दुरुस्त है वैसा ही काबा मुकर्रमा के अंदर भी नमाज़ पढ़ना दुरुस्त है। क़िब्ला रुख़ हो जाएगा, चाहे जिस तरफ़ पढ़े, इस वजह से कि वहां चारों तरफ़ क़िब्ला है। जिस तरफ़ मुंह किया जाए काबा ही काबा है और जिस तरह नफ़्ल नमाज़ जायज़ है, उसी तरह फ़र्ज़ नमाज़ भी।

मस्अला 2—काबा शरीफ़ की छत पर खड़े होकर अगर नमाज़ पढ़ी जाए तो वह भी सही है, इसलिए कि जिस जगह काबा है, वह ज़मीन और उसके ऊपर जो हिस्सा हवा का आसमान तक है, सब क़िब्ला ही क़िब्ला है। कुछ काबा की दीवारों तक ही नहीं है। इसीलिए अगर कोई आदमी किसी ऊंचे पहाड़ पर खड़े होकर नमाज़ पढ़े, जहां काबा की दीवारों से बिल्कुल सामना न हो, तो उसकी नमाज़ सबके यहां दुरुस्त है। लेकिन चूंकि इसमें काबा की बे-ताज़ीमी है और काबा की छत पर नमाज़

पढ़ने से नबी सल्ल० से मना फ़रमाया है, इसलिए मक्रूहे तह्रीमी होगी।

मस्अला 3—काबा के अन्दर तंहा नमाज़ पढ़ना भी जायज़ है और जमाअत से भी। और वहां यह भी शर्त नहीं कि इमाम और मुक़्तदियों का मुंह एक ही तरफ़ हो, इसलिए कि वहां हर तरफ़ क़िब्ला है। हां, यह शर्त ज़रूर है कि मुक़्तदी इमाम से आगे बढ़कर न खड़े हों। अगर मुक़्तदी का मुंह इमाम के मुंह के सामने हो, तब भी दुरूस्त है, इसलिए कि इस सूरत में वह मुक़्तदी इमाम के आगे न कहा जाएगा। आगे जब होता कि जब दोनों का मुंह एक ही तरफ़ होता और फिर मुक़्तदी आगे बढ़ा हुआ होता। मगर, हां, इस सूरत में नमाज़ मक्रूह होगी, इसलिए कि किसी आदमी की तरफ़ मुंह करके नमाज़ पढ़ना मक्रूह है, लेकिन अगर कोई चीज़ बीच में आड़ कर दी जाए तो यह कराहत न रहेगी।

मस्अला 4—अगर इमाम काबे के अन्दर और मुक़्तदी काबे से बाहर घेरा बनाये खड़े हों, तब भी नमाज़ हो जाएगी, लेकिन अगर सिर्फ़ इमाम काबे के अन्दर होगा और कोई मुक़्तदी उसके साथ न होगा, तो नमाज़ मक्रूह होगी, इसलिए कि इस शक्ल में, इसकी वजह से कि काबे के अन्दर की ज़मीन ऊंची है, इमाम की जगह एक क़द के बराबर मुक़्तदियों से ऊंची होगी।

मस्अला 5—अगर मुक़्तदी अन्दर हो और इमाम बाहर, तब भी नमाज़ दुरूस्त है, बशर्ते कि मुक़्तदी इमाम से आगे न हो।

मस्अला 6—और अगर सब बाहर हों और एक तरफ़ इमाम हो और चारों तरफ़ मुक़्तदी घेरा बनाये खड़े हों, जैसा कि आम आदत वहां इसी तरह नमाज़ पढ़ने की है तो भी दुरूस्त है, लेकिन शर्त यह है कि जिस तरफ़ इमाम खड़ा है उस तरफ़ को मुक़्तदी इमाम के मुक़ाबले में ख़ाना-ए-काबा के ज़्यादा नज़दीक न हो, क्योंकि इस शक्ल में वह इमाम से आगे समझा जाएगा, तो कि इक़्तिदा में रूकावट है, हां, अगर दूसरी तरफ़ के मुक़्तदी खाना-ए-काबा से इमाम के मुक़ाबले में नज़दीक भी हों, तो कुछ नुक़्सान नहीं और 'ह' इमाम है जो काबा से दो गज़ के फ़ासले पर पढ़ा रहा है और 'व' और 'ज़' मुक़्तदी हैं जो काबा से एक गज़ के फ़ासले पर खड़े हैं मगर व तो ह की तरफ़ खड़ा है और 'ज़' तो दूसरी तरफ़ खड़ा है। व की नमाज़ न होगी, ज़ की हो जाएगी।

ब व ह अ

र ज़ ज

सज्दा तिलावत का बयान

मस्अला 1—अगर कोई आदमी किसी इमाम से सज्दा की आयत सुने, इसके बाद उसकी इक़्तिदा करे, तो उसको इमाम के साथ सज्दा करना चाहिए और अगर इमाम सज्दा कर चुका हो तो इसमें दो शक्लें हैं—

एक यह कि जिस रक्अत में सज्दा की आयत की तिलावत इमाम ने की हो, वही रक्अत अगर उसको मिल जाए, तो उसको सज्दा की ज़रूरत नहीं। उस रक्अत के मिल जाने से समझा जाएगा कि वह सज्दा भी मिल गया। दूसरे यह कि वह रक्अत न मिले तो उसको नमाज़ ख़त्म करने के बाद नमाज़ से अलग सज्दा करना वाजिब है।

मस्अला 2—मुक़्तदी से अगर सज्दे की आयत सुनी जाए तो सज्दा वाजिब न होगा, न उस पर, न उसके इमाम पर, न उन लोगों पर जो उस नमाज़ में शरीक हों। हां, जो लोग इस नमाज़ में शरीक नहीं, चाहे वे लोग नमाज़ न पढ़ते हों या कोई दूसरी नमाज़ पढ़ रहे हों, तो उन पर सज्दा वाजिब होगा।

मस्अला 3—तिलावत के सज्दे में ठहाका से वुज़ू नहीं जाता, लेकिन सज्दा बातिल हो जाता है।

मस्अला 4—औरत का सामना तिलावत के सज्दे को ख़राब नहीं करता।

मस्अला 5—तिलावत का सज्दा अगर नमाज़ में वाजिब हुआ हो तो उसका अदा करना फ़ौरन वाजिब है, देर करने की इजाज़त नहीं।

मस्अला 6—नमाज़ के बाहर का सज्दा नमाज़ में और नमाज़ के बाद में बल्कि दूसरी नमाज़ में भी अदा नहीं किया जा सकता। पस अगर कोई आदमी नमाज़ में सज्दे की आयत पढ़े और सज्दा न करे तो उसका गुनाह उसके ज़िम्मे होगा और इसके सिवा कोई उपाय नहीं कि

तौबा करे या सबसे बड़ा रहम करने वाला अपनी मेहरबानी से माफ़ फ़रमा दे।

मसअला 7—अगर दो आदमी अलग-अलग घोड़ों पर सवार नमाज़ पढ़ते हुए जा रहे हों और हर आदमी एक ही आयत सज्दे की तिलावत करे और एक दूसरे की तिलावत को नमाज़ ही में सुने तो हर आदमी पर एक ही सज्दा वाजिब होगा, तो नमाज़ ही में अदा करना वाजिब है और अगर एक ही आयत को नमाज़ में पढ़ा और उसी को नमाज़ से बाहर सुना तो दो सज्दे वाजिब होंगे, एक तिलावत की वजह से, दूसरा सुनने की वजह से । मगर तिलावत की वजह से जो होगा वह नमाज़ का समझा जाएगा और नमाज़ ही में अदा किया जाएगा और जो सुनने की वजह से होगा, वह नमाज़ के बाहर अदा किया जाएगा।

मसअला 8—अगर सज्दे की आयत नमाज़ में पढ़ी जाए और रुकूअ किया जाए या दो-तीन आयतों के बाद और उस रुकूअ में झुकते वक़्त तिलावत के सज्दे की भी नीयत कर ली जाए तो सज्दा अदा हो जाएगा। अगर इसी तरह सज्दा की आयत की तिलावत के बाद नमाज़ का सज्दा किया जाए यानी रुकूअ व क़ौमा के बाद, तब भी यह सज्दा अदा हो जाएगा और इसमें नीयत की भी ज़रूरत नहीं।

मसअला 9—जुमा, ईदों और धीमी आवाज़ की नमाज़ों में सज्दे की आयत न पढ़नी चाहिए, इसलिए कि सज्दा करने में मुक़्तदियों के गड़-बड़ का डर है।

मय्यत के गुस्ल के मसअले

मसअला 1—अगर कोई आदमी दरिया में डूब कर मर गया हो तो वह जिस वक़्त निकाला जाए, उसका गुस्ल देना फ़र्ज़ है। पानी में डूबना गुस्ल के लिए काफ़ी न होगा, इसलिए कि मय्यत का गुस्ल ज़िंदों पर फ़र्ज़ है और डूबने में कोई उनका काम नहीं हुआ। हां, अगर निकालते वक़्त गुस्ल की नीयत से उसको पानी में हरकत दे दी जाए तो गुस्ल हो जाएगा। इसी तरह अगर मय्यत के ऊपर पानी बरस जाए या और किसी तरह से पानी पहुंच जाए, तब भी उसका गुस्ल देना फ़र्ज़ रहेगा।

मसअला 2—अगर किसी आदमी का सिर्फ़ सर कहीं देखा जाए तो उसको गुस्ल न दिया जाएगा, बल्कि यों ही दफ़न कर दिया जाएगा। अगर

किसी आदमी का बदन आधे से ज़्यादा कहीं मिले तो उसका गुस्ल देना ज़रूरी है, चाहे सर के साथ मिले या बे–सरके और अगर आधे से ज़्यादा न हो, बल्कि आधा हो तो अगर सर के साथ मिले तो गुस्ल दिया जाएगा वरना नहीं। और अगर आधे से कम हो तो गुस्ल न दिया जाएगा, चाहे सर के साथ हो या बे–सर के।

मस्अला 3—अगर कोई मय्यत कहीं देखी जाए और किसी भी तरह यह मालूम न हो कि यह मुसलमान था या गै़र मुसलमान, तो अगर दारूल इस्लाम[1] में ऐसी बात हुई हो तो उसको गुस्ल दिया जाएगा और नमाज़ भी पढ़ी जाएगी।

मस्अला 4—अगर मुसलमानों की लाशें, गै़र–मुसलमानों की लाशों में मिल जाएं और कोई पहचान न बाक़ी रहे तो इन सबको गुस्ल दिया जाएगा और अगर पहचान बाक़ी हो तो मुसलमान की लाशें अलग कर ली जाएं और सिर्फ़ उन्हीं को गुस्ल दिया जाएगा, गै़र–मुसलमानों की लाशों को गुस्ल न दिया जाए।

मस्अला 5—अगर किसी मुसलमान का कोई रिश्तेदार गै़र मुसलमान हो और वह मर जाए तो उसकी लाश उसके मज़हब वालों को दे दी जाए। अगर उसका कोई मज़हब वाला न हो या हो मगर लेना क़ुबूल न करे तो मजबूरी की हालत में वह मुसलमान इस गै़र मुसलमान को गुस्ल दे, मगर न सुन्नत तरीक़े से यानी उसको वुज़ू न कराए और सर उसका न साफ़ कराया जाए, काफ़ूर वगै़रह उसके बदन में न मला जाए, बल्कि जिस तरह नजिस चीज़ को धोते हैं उसी तरह उसको धोंए और गै़र मुसलमान धोने से पाक न होगा, यहां तक कि अगर कोई आदमी उसको लिए हुए नमाज़ पढ़े तो उसकी नमाज़ दुरूस्त न होगी।

मस्अला 6—बाग़ी लोग या डाकू अगर मारे जाएं तो उनके मुर्दों को गुस्ल न दिया जाए, बशर्ते कि ठीक लड़ाई के वक़्त मारे गये हों।

मस्अला 7—इस्लाम से फिरा हुआ अगर मर जाए तो उसको भी गुस्ल न दिया जाए और उसके मज़हब वाले उसकी लाश मांगें तो उनको भी न दी जाए।

मस्अला 8—अगर पानी न होने की वजह से किसी मय्यत को तयम्मुम कराया गया हो और फिर पानी मिल जाए तो उसको गुस्ल दे देना चाहिए।

---

1. यहां मुराद इससे वह जगह है, जहां मुसलमान ज़्यादा बसते हों।

मय्यत के कफ़न के कुछ मस्अले

मस्अला 1—अगर इंसान का कोई अंग या आधा जिस्म बग़ैर सर के पाया जाए तो उसको भी किसी न किसी कपड़े में लपेट देना काफ़ी है। हां, अगर आधे जिस्म के साथ सर भी हो या आधे से ज़्यादा जिस्म का हिस्सा हो, गो सर भी न हो तो सुन्नत तरीक़े से कफ़न देना चाहिए।

मस्अला 2—किसी इंसान की क़ब्र खुल जाए या और किसी वजह से उसकी लाश बाहर निकल आये और कफ़न न हो तो उसको भी सुन्नत कफ़न देना चाहिए, बशर्ते कि वह लाश फटी न हो और अगर फट गयी हो तो सिर्फ़ कपड़े में लपेट देना काफ़ी है।[1]

जनाज़े की नमाज़े के मस्अले

जनाज़े की नमाज़, सच तो यह है कि अल्लाह तआला से उस मय्यत के लिए दुआ है।

मस्अला 1—नमाज़ जनाज़े के वाजिब होने की वही सब शर्तें हैं, जो और नमाज़ों के लिए हम ऊपर लिख चुके हैं। हां, इसमें एक शर्त और ज़्यादा है, वह यह कि उस आदमी की मौत का इल्म भी हो। पस जिसको यह ख़बर न होगी वह माज़ूर (मजबूर) है, नमाज़ जनाज़ा उस पर ज़रूरी नहीं।

मस्अला 2—नमाज़ जनाज़े के लिए दो क़िस्म की शर्तें हैं—

एक क़िस्म की शर्त वे हैं जो नमाज़ पढ़ने वालों से ताल्लुक़ रखती हैं, वे वही हैं जो और नमाज़ों के लिए ऊपर बयान हो चुकीं यानी तहारत (पाकी), सतरे औरत, क़िब्ला–रूख़ होना, नीयत। हां, वक़्त उसके लिए शर्त नहीं और इसके लिए तयम्मुम नमाज़ न मिलने के ख़्याल से जायज़ है। जैसे नमाज़ जनाज़ा हो रही हो और वुज़ू करने में यह ख़्याल हो कि नमाज़ ख़त्म हो जाएगी तो तयम्मुम कर ले, और नमाज़ों के ख़िलाफ़ कि उनमें अगर वक़्त के चले जाने का डर हो तो भी तयम्मुम जायज़ नहीं।

मस्अला 3—आजकल कुछ आदमी जनाज़े की नमाज़ जूता पहने

1. यानी सुन्नत कफ़न की ज़रूरत नहीं, सिर्फ़ लपेट कर दफ़न कर दे।

हुए पढ़ते हैं, उनके लिए यह बात ज़रूरी है कि वह जगह जिस पर खड़े हुए हों और जूते दोनों पाक हों और अगर जूता पैर से निकाल दिया जाए और उस पर खड़े हों तो सिर्फ़ जूते का पाक होना ज़रूरी है। अक्सर लोग इसका ख़्याल नहीं करते और उनकी नमाज़ नहीं होती।

दूसरी क़िस्म की वे शर्तें हैं जिनका मय्यत से ताल्लुक़ है, वे छः हैं---

शर्त 1—मय्यत का मुसलमान होना, पस काफ़िर और इस्लाम से फिरे हुए आदमी की नमाज़ सही नहीं। मुसलमान अगरचे नाफ़रमान या बिद्अती हो, उसकी नमाज़ सही है। सिवाए उन लोगों के जो हक़ वाले बादशाह से बग़ावत करें या डाके डातले हों, बशर्ते कि ये लोग वक़्त के बादशाह से लड़ाई की हालत में क़त्ल हो जाएं और अगर लड़ाई के बाद अपनी मौत से मर जाएं तो फिर उनकी नमाज़ पढ़ी जाएगी। इसी तरह जिस आदमी ने अपने बाप या मां को क़त्ल किया हो और इसकी सज़ा में वह मारा जाए तो उसकी नमाज़ भी न पढ़ी जाएगी और इन लोगों की नमाज़ ज़जरन (सज़ा के तौर पर) नहीं पढ़ी जाती और जिस आदमी ने अपनी ख़ुशकुशी (आत्महत्या) करके दी हो, उस पर नमाज़ पढ़ना, सही यह है, कि दुरूस्त है।

मस्अला 4—जिस लड़के के बाप या मां मुसलमान हों, वह लड़का मुसलमान समझा जाएगा और उसकी नमाज़ पढ़ी जाएगी।

मस्अला 5—मय्यत से मुराद वह आदमी है, जो ज़िंदा पैदा होकर मर गया हो अगर मरा हुआ लड़का पैदा हो तो उसकी नमाज़ दुरूस्त नहीं।

शर्त 2—मय्यत के बदन और कफ़न का नजासते हक़ीक़ी और हुक्मी से पाक होना। अगर नजासते हक़्क़ी उसके बदन से निकली हो और इस वजह से उसका बदन बिल्कुल नजिस हो जाए तो कुछ हरज नहीं, नमाज़ दुरूस्त है।

मस्अला 6—अगर कोई मय्यत नजासते हुक्मी से पाक न हो यानी उसको गुस्ल न दिया गया हो या गुस्ल के मुम्किन न होने की सूरत में तयम्मुम न कराया गया हो, उसकी नमाज़ दुरूस्त नहीं। हां, अगर उसका पाक होना मुम्किन न हो, जैसे बे–गुस्ल या तयम्मुम कराये हुए दफ़न कर चुके हों और क़ब्र पर मिट्टी भी पड़ चुकी हो तो फिर उसकी नमाज़ उसकी क़ब्र पर उसी हालत में पढ़ना जायज़ है। अगर किसी मय्यत पर बे–गुस्ल या तयम्मुम, नमाज़ पढ़ी गयी हो और वह दफ़न कर दिया गया हो और दफ़न के बाद ख़्याल आये कि उसको गुस्ल नहीं दिया गया था, तो उसकी नमाज़

दोबारा उसकी क़ब्र पर पढ़ी जाए, इसलिए कि पहली नमाज़ सही नहीं हुई, हां, अब चूंकि गुस्ल मुम्किन नहीं, इसलिए नमाज़ हो जाएगी।

मस्अला 7—अगर कोई मुसलमान बे-नमाज़ पढ़े हुए दफ़न कर दिया गया हो, तो उसकी नमाज़ उसकी क़ब्र पर पढ़ी जाएगी, जब तक कि उसकी लाश के फट जाने का डर न हो। जब ख़्याल हो कि अब लाश फट गयी होगी, तो फिर नमाज़ न पढ़ी जाए और लाश फटने की मुद्दत हर जगह के एतबार से अलग-अलग है, इसे तै नहीं किया जा सकता, यही ज़्यादा सही है। कुछ ने तीन दिन, कुछ ने दस दिन और कुछ ने एक माह मुद्दत बयान की है।

मस्अला 8—मय्यत जिस जगह रखी हो, उस जगह का पाक होना शर्त नहीं। अगर मय्यत पाक पलंग या तख़्त पर हो और अगर पलंग या तख़्त भी नापाक हो या मय्यत को पलंग व तख़्त के बावजूद नापाक ज़मीन पर रख दिया जाए तो इस शक्ल में इख़्तिलाफ़ (मत-भेद) है। कुछ के नज़दीक मय्यत की जगह का पाक होना शर्त है, इसलिए नमाज़ न होगी। कुछ के नज़दीक शर्त नहीं, इसलिए नमाज़ सही हो जाएगी।

शर्त 3—मय्यत के जिस्म (यानी ढांकना जिसका ज़रूरी हो) या ढका हुआ होना। अगर मय्यत बिल्कुल नंगी हो तो उसकी नमाज़ दुरुस्त नहीं।

शर्त 4—मय्यत का नमाज़ पढ़ने वाले के आगे होना। अगर मय्यत नमाज़ पढ़ने वाले के पीछे हो, तो नमाज़ दुरुस्त नहीं।

शर्त 5—जिस चीज़ पर मय्यत हो, उसका ज़मीन पर रखा हुआ होना। अगर मय्यत को लोग अपने हाथों पर उठाये हुए हों या किसी गाड़ी या जानवर पर हो और इसी हालत में उसकी नमाज़ पढ़ी जाए, तो सही नहीं होगी।

शर्त 6—मय्यत का वहां मौजूद होना। अगर मय्यत वहां न मौजूद हो, तो नमाज़ सही न होगी।

मस्अला 9—नमाज़ जनाज़े में दो चीज़ें फ़र्ज़ हैं—

1. चार बार अल्लाहु अक्बर कहना। हर तक्बीर यहां एक रक्अत की जगह पर समझी जाती है।[1]

2. क़ियाम खानी होकर नमाज़ जनाज़ा पढ़ना, जिस तरह फ़र्ज़-वाजिब

---

1. यानी जैसी रक्अत ज़रूरी है, वैसे ही हर तक्बीर ज़रूरी है और इस नमाज़ के अर्कान तक्बीरें और क़ियाम हैं।

नमाज़ों में क़ियाम फ़र्ज़ है और बे–उज़्र उसका छोड़ना जायज़ नहीं। उज़्र का बयान ऊपर हो चुका है।

मस्अला 10—रुकूअ–सज्दा–क़ादा वग़ैरह इस नमाज़ में नहीं।

मस्अला 11—नमाज़ जनाज़ा में तीन चीज़ें सुन्नत हैं—

1. अल्लाह तआला की हम्द (तारीफ़) करना,
2. नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर दरूद पढ़ना,
3. मय्यत के लिए दुआ करना। जमाअत इसमें शर्त नहीं है। पस अगर एक आदमी भी जनाज़े की नमाज़ पढ़ ले, तो फ़र्ज़ अदा हो जाएगा, चाहे वह औरत हो या मर्द, बालिग़ हो या ना–बालिग़।

मस्अला 12—हां, यहां जमाअत की ज़रूरत ज़्यादा है, इसलिए कि यह दुआ है मय्यत के लिए और कुछ मुसलमानों का जमा होकर अल्लाह के दरबार में किसी चीज़ के लिए दुआ करना एक अजीब ख़ूबी रखता है, रहमत के उतरने और कुबूल होने के लिए।

मस्अला 13—नमाज़ जनाज़ा का सुन्नत और मुस्तहब तरीक़ा यह है कि मय्यत को आगे रखकर इमाम उसके सीने के सामने खड़ा हो जाए और सब लोग यह नीयत करें—

نَوَيْتُ اَنْ اُصَلِّيَ صَلٰوةَ الْجَنَازَةِ لِلّٰهِ تَعَالٰى وَدُعَاءً لِّلْمَيِّتِ

नवैतु अन् उसल्लिय सलातल् ज ना ज़ति लिल्लाहि तआला व दुआअल् लिल् मय्यितिo।

यानी मैंने यह इरादा किया कि नमाज़े जनाज़ा पढ़ूं जो ख़ुदा की नमाज़ है और मय्यत के लिए दुआ है । यह नीयत करके दोनों हाथ तक्बीरे तहरीमा जैसे कानों तक उठाकर एक बार अल्लाहु अक्बर कहकर दोनों हाथ नमाज़ की तरह बांध लें। फिर सुब्हानकल्लाहुम्म आख़िर तक पढ़ें। इसके बाद फिर एक बार अल्लाहुअक्बर कहें, मगर इस बार हाथ न उठाएं इसके बाद दरूद शरीफ़ पढ़ें और बेहतर यह है कि वही दरूद शरीफ़ पढ़ा जाए, जो नमाज़ में पढ़ा जाता है। फिर एक बार अल्लाहु अक्बर कहें, इस बार भी हाथ न उठाएं। इस तक्बीर के याद मय्यत के लिए दुआ करें अगर वह बालिग़ हो, चाहे मर्द हो या औरत यह दुआ पढ़ें—

اَللّٰهُمَّ اغْفِرْ لِحَيِّنَا وَمَيِّتِنَا وَشَاهِدِنَا وَغَائِبِنَا وَصَغِيْرِنَا وَكَبِيْرِنَا وَذَكَرِنَا وَاُنْثَانَا اَللّٰهُمَّ
مَنْ اَحْيَيْتَهٗ مِنَّا فَاَحْيِهٖ عَلَى الْاِسْلَامِ وَمَنْ تَوَفَّيْتَهٗ مِنَّا فَتَوَفَّهٗ عَلَى الْاِيْمَانِ

अल्लाहुम्मग़्फ़िर लिहय्यिना व मय्यितिना व शाहिदिना व गाइबिना व सग़ीरिना व कबीरिना व ज़ क रिना व उन्साना अल्लाहुम्म म न अह्यैतहू मिन्ना फ़ अह्यिही अलल् इस्लामि व मन लवफ़्फ़ैतहू मिन्ना फ़ त वफ़्फ़हू अलल् ईमानि०

और कुछ हदीसों में यह दुआ भी आयी है—

اَللّٰهُمَّ اغْفِرْ لَهٗ وَارْحَمْهُ وَعَافِهٖ وَاعْفُ عَنْهُ وَاَكْرِمْ نُزُلَهٗ وَوَسِّعْ مَدْخَلَهٗ وَاغْسِلْهُ بِالْمَاءِ وَالثَّلْجِ وَالْبَرَدِ وَنَقِّهٖ مِنَ الْخَطَايَا كَمَا يُنَقَّى الثَّوْبُ الْاَبْيَضُ مِنَ الدَّنَسِ وَاَبْدِلْهُ دَارًا خَيْرًا مِّنْ دَارِهٖ وَاَهْلًا خَيْرًا مِّنْ اَهْلِهٖ وَزَوْجًا خَيْرًا مِّنْ زَوْجِهٖ وَاَدْخِلْهُ الْجَنَّةَ وَاَعِذْهُ مِنْ عَذَابِ الْقَبْرِ وَعَذَابِ النَّارِ

अल्लाहुम्मग़्फ़िर लहू वर्हमहु व आफ़िही वअ्फ़ु अन्हु व अक्रिम नुज़ुलहू व वस्सिअ मदख़ल हू वग़्सिलहु बिल् माइ वस्सल्जि वल् बर्दि व नक़्क़िही मिनल् ख़ताया कमा युनक़्क़स्सौबुल अब्यज़ु मिनद्द न सि व अब्दि—लहु दारन ख़ैरम मिन दारिही व अह्लन ख़ैरम मिन अह्लिही व ज़ौजन ख़ैरम मिन ज़ौजिही वद्ख़िलहुल जन्नत व अअिज़्हु मिन अज़ाबिल क़ब्रि व अज़ाबिन्नारि०

और इन दोनों दुआओं को पढ़ ले तब भी बेहतर है, बल्कि अल्लामा शामी रह० ने 'रद्दुल मुख़्तार' में दोनों दुआओं को एक ही में मिलाकर लिखा है।

इन दोनों दुआओं के सिवा और दुआएं भी हदीसों में आयी हैं और इसको हमारे फ़क़ीहों ने भी नक़ल किया है, जिस दुआ को चाहे अपनाये और अगर मय्यत ना—बालिग़ लड़का हो यह दुआ पढ़े—

اَللّٰهُمَّ اجْعَلْهُ لَنَا فَرَطًا وَّاجْعَلْهُ لَنَا اَجْرًا وَّذُخْرًا وَّاجْعَلْهُ لَنَا شَافِعًا وَّمُشَفَّعًا

अल्लाहुम्मज् अलहु लना फ़ रतंव्वज् अलहु लना अज् रंव्व ज़ुख़्रंव्वज अलहु लना शाफ़िअंव्व मुशफ़्फ़आ०

और अगर ना—बालिग़ लड़की हो तब भी यही दुआ है। सिर्फ़ इतना फ़र्क़ है। कि तीनों 'इज्अलूहु (اِجْعَلْهُ) की जगह 'इज्अलहा० (نِعًا وَّمُشَفَّعًا और शफ़ि अंव्वमुशाफ़्फ़आ (تًا وَّمُشَفَّعَةً) की जगह 'शाफ़िअतंव्व मुशफ़्फ़अः' (شَافِعَةً اَللّٰهُ اَكْبَرُ) पढ़ें। जब यह दुआ पढ़ चुकें, तो फिर एक बार अल्लाहु अक्बर कहें और इस बार भी हाथ न उठाएं और इस तक्बीर के बाद सलाम फेर दें, जिस तरह नमाज़ में सलाम फेरते हैं। इन नमाज़ में अत्तहीयात और क़ुरआन मजीद की

क़िर्अत वग़ैरह नहीं है।

मस्अला 14—नमाज़ जनाज़ा इमाम और मुक़्तदी दोनों के हक़ में बराबर है, सिर्फ़ इतना फ़र्क़ है कि इमाम तक्बीरें और सलाम ऊंची आवाज़ से कहेगा और मुक़्तदी धीमी आवाज़ से बाक़ी चीज़ें यानी सना और दरूद और दुआ मुक़्तदी भी धीमी आवाज़ से पढ़ेंगे और इमाम भी धीमी आवाज़ से पढ़ेगा।

मस्अला 15—जनाज़े की नमाज़ में मुस्तहब है कि मौजूद लोगों की तीन सफ़ें कर दी जाएं, यहां तक कि अगर सिर्फ़ सात आदमी हों, तो एक आदमी उनमें से इमाम बना दिया जाए और पहली सफ़ में तीन आदमी खड़े हों और दूसरी सफ़ में दो और तीसरी में एक।

मस्अला 16—जनाज़े की नमाज़ भी उन चीज़ों से ख़राब हो जाती है, जिन चीज़ों से दूसरी नमाज़ों में ख़राबी होती है, सिर्फ़ इतना फ़र्क़ है कि जनाज़े की नमाज़ में ज़ोर की हंसी से वुज़ू नहीं जाता और औरत के सामने से इसमें ख़राबी नहीं आता।

मस्अला 17—जनाज़े की नमाज़ उस मस्जिद में पढ़ना मक्रूह तहरीमी है जो पंजवक़्ती नमाज़ों या जुमा या ईदों की नमाज़ के लिए बनाई गयी हो, चाहे जनाज़ा मस्जिद में हो या मस्जिद के बराबर हो और नमाज़ पढ़ने वाले अंदर हों, हां, जो ख़ास जनाज़े की नमाज़ के लिए बनायी गयी हो, उसमें मक्रूह नहीं।

मस्अला 18—मय्यत की नमाज़ में इस मक़्सद से ज़्यादा देर करना कि जमाअत ज़्यादा हो जाए, मक्रूह है।

मस्अला 19—जनाज़े की नमाज़ बैठकर या सवारी की हालत में पढ़ना जायज़ नहीं, जबकि कोई मजबूरी न हो।

मस्अला 20—अगर एक ही वक़्त में कई जनाज़े जमा हो जाएं तो बेहतर यही है कि हर जनाज़े की नमाज़ अलग पढ़ी जाए और अगर तमाम जनाज़ों की एक ही नमाज़ पढ़ी जाए तब भी जायज़ है। और उस वक़्त चाहिए कि सब जनाज़ों की सफ़ क़ायम कर दी जाए, जिसकी बेहतर शक्ल यह है कि एक जनाज़े के आगे दूसरा जनाज़ा रख दिया जाए कि सब के पैर एक तरफ़ हों और सबके सर एक तरफ़। और यह शक्ल इसलिए बेहतर है कि उसमें सबका सीना इमाम के सामने हो जाएगा जो सुन्नत है।

मस्अला 21—अगर जनाज़े अलग-अलग जिंसों के हों तो इस तर्तीब से उनकी सफ़ क़ायम की जाए कि इमाम के क़रीब मर्दों के जानज़े, उनके बाद लड़कों के, उनके बाद बालिग़ औरतों के, इनके बाद ना-बालिग़

लड़कियों के।

मस्अला 22—अगर कोई आदमी जनाज़े की नमाज़ में ऐसे वक़्त पहुंचा कि कुछ तक्बीरें उसके आने से पहले हो चुकी हों तो जितनी तक्बीरें हो चुकी हों, उसके एतबार से वह शख़्स मस्बूक़ समझा जाएगा और उसको चाहिए कि फ़ौरन अपनी और नमाज़ों की तरह तक्बीर तहरीमा कहकर शरीक न हो जाए, बल्कि इमाम की तक्बीर कह इंतिज़ार करे। जब इमाम तक्बीर कहे तो उसके साथ यह भी तक्बीर कहे और यह तक्बीर उसके हक़ में तक्बीर तहरीमा होगी, फिर जब इमाम सलाम फेरे दे तो यह आदमी अपनी गयी हुई तक्बीरों को अदा कर ले और इसमें कुछ पढ़ने की ज़रूरत नहीं। अगर कोई आदमी ऐसे वक़्त पहुंचे कि इमाम चौथी तक्बीर भी कह चुका हो, तो वह आदमी इस तक्बीर के हक़ में मस्बूक़ न समझा जाएगा। उसको चाहिए कि फ़ौरन तक्बीर कहकर इमाम के सलाम से पहले शरीक हो जाए और नमाज़ के ख़त्म के बाद अपनी गयी हुई तक्बीरों को दोहरा ले।

मस्अला 23—अगर कोई आदमी तक्बीर तहरीमा यानी पहली तक्बीर या किसी और तक्बीर के वक़्त मौजूद था और नमाज़ में शिर्कत के लिए मुस्तैद था, मगर सुस्ती या किसी और वजह से शरीक न हुआ हो तो फ़ौरन तक्बीर कहकर नमाज़ में शरीक होना चाहिए। इमाम की दूसरी तक्बीर का उसको इंतिज़ार न करना चाहिए और जिस तक्बीर के वक़्त हाज़िर था, उस तक्बीर का दोहराना उसके ज़िम्मे होगा बशर्ते कि इसके पहले इमाम दूसरी तक्बीर कहे या उस तक्बीर को अदा करे, चाहे इमाम का साथ न हो।

मस्अला 24—जनाज़े की नमाज़ का मस्बूक़ जब अपनी गयी हुई तक्बीर को अदा करे और ख़ौफ़ हो कि अगर दुआ पढ़ेगा तो देर होगी और जनाज़ा उसके सामने से उठा लिया जाएगा, तो दुआ न पढ़े।

मस्अला 25—जनाज़े की नमाज़ में अगर कोई आदमी लाहिक़ हो जाए तो उसका वही हुक्म है, जो और नमाज़ों के लाहिक़ का है।

मस्अला 26—जनाज़े की नमाज़ में सबसे ज़्यादा इमामत का हक़ वक़्त के बादशाह को है, चाहे तक़्वा और दरअ[1] में उससे बेहतर लोग भी वहां मौजूद हों। अगर वक़्त का बादशाह वहां न हो, उसका नायब यानी जो आदमी उसकी तरफ़ से शहर का हाकिम हो, वह इमामत का हक़दार है,

---

1. यहां तक़्वा और दरअ दोनों का एक ही मतलब है यानी परहेज़गारी।

चाहे दरअ और तक़्वा में उससे बड़े लोग वहां मौजूद हों। और वह भी न हो तो शहर का क़ाज़ी, वह भी न हो तो उसका नायब, उन लोगों के होते हुए दूसरे का इमाम बनना, बिला इनकी इजाज़त के जायज़ नहीं। उन्हीं का इमाम बनाना वाजिब है। अगर इनमें से कोई वहां मौजूद न हो तो उस मुहल्ले का इमाम हक़दार है, बशर्ते कि मय्यत के रिश्तेदारों में कोई आदमी उससे अफ़ज़ल न हो, वरना मय्यत के वे रिश्तेदार, जिनको बली होने का हक़ हासिल है, इमामत के हक़दार हैं या वह आदमी जिसको वे इजाज़त दें। अगर वली की इजाज़त के बग़ैर किसी ऐसे आदमी ने नमाज़ पढ़ा दी हो, जिसको इमामत का हक़ नहीं, तो वली को अख़्तियार है कि फिर दोबारा नमाज़ पढ़े यहां तक कि अगर मय्यत दफ़न हो चुकी हो, तो उसकी क़ब्र पर भी नमाज़ पढ़ सकता है, उस वक़्त तक जब तक कि लाश के फट जाने का ख़्याल न हो।

मस्अला 27—अगर बे–इजाज़त वली मय्यत के किसी ऐसे आदमी ने नमाज़ पढ़ा दी हो, जिसको इमामत का हक़ है, तो फिर मय्यत का वली नमाज़ नहीं दोहरा सकता। इसी तरह अगर मय्यत के वली ने वक़्त के बादशाह के न मौजूद होने की हालत में नमाज़ पढ़ा दी हो तो वक़्त के बादशाह वग़ैरह को दोहराने का अख़्तियार न होगा, बल्कि सही यह है कि अगर मय्यत का वली वक़्त के बादशाह वग़ैरह की मौजूदगी की हालत में नमाज़ पढ़ ले तब भी वक़्त के बादशाह वग़ैरह को दोहराने का अख़्तियार नहीं होगा, चाहे ऐसी हालत में वक़्त के बादशाह के इमाम न बनाने से वाजिब के छोड़ने का गुनाह मय्यत के वलियों पर हो। मतलब यह कि एक जनाज़े की नमाज़ कई बार पढ़ना जायज़ नहीं मगर मय्यत के वली को, जबकि उसकी इजाज़त के बग़ैर किसी ग़ैर–हक़दार ने नमाज़ पढ़ा दी हो, दोबारा पढ़ना दुरुस्त है।

दफ़न के मस्अले

मस्अला 1—मय्यत का दफ़न करना फ़र्ज़ किफ़ाया है, जिस तरह इसका गुस्ल और नमाज़।

मस्अला 2—जब मय्यत की नमाज़ से फ़राग़त हो जाए तो फ़ौरन उसको दफ़न करने के लिए, जहां क़ब्र खुदी हो, ले जाना चाहिए।

मस्अला 3—अगर मय्यत कोई दूध पीता बच्चा हो या उससे कुछ बड़ा हो, लोगों को चाहिए कि उसको हाथ में ले जाएं यानी एक आदमी

उसको अपने दोनों हाथों पर उठा ले, फिर उससे दूसरा आदमी ले ले। इसी तरह बदलते हुए ले जाएं और अगर कोई बड़ा आदमी हो तो उसको किसी चारपाई वग़ैरह पर रखकर ले जाएं और उसके चारों पायों को एक-एक आदमी उठाये। मय्यत की चारपाई हाथों से उठाकर कंधों पर रखना चाहिए, माल व अस्बाब की तरह शानों (मोढ़ों) पर लादना मक्रूह है। इसी तरह बे-मजबूरी उसका किसी जानवर या गाड़ी वग़ैरह पर रखकर ले जाना भी मक्रूह है और मजबूरी हो तो बिला कराहत जायज़ है, जैसे क़ब्रस्तान बहुत दूर हो।

मस्अला 4—मय्यत के उठाने का मुस्तहब तरीक़ा यह है कि पहले उसका अगला दाहिना पाया अपने दाहिने कंधे पर रखकर कम से कम दस क़दम चले। इसके बाद पिछला दाहिना पाया दाहिने कंधे पर रखकर कम से कम दस क़दम चले। इसके बाद बायां पाया अपने कंधे पर रखकर दस क़दम चले, फिर पिछला बायां पाया बाएं कंधे पर रखकर कम से कम दस क़दम चले ताकि चारों पायों को मिलकर चालीस[1] क़दम हो जाएं।

मस्अला 5—जनाज़े का तेज़ क़दम ले जाना सुन्नत है, मगर इतना कि लाश को हरकत न होने लगे।

मस्अला 6—जो लोग जनाज़े के साथ जाएं, उनको इससे पहले कि जनाज़ा कंधे से उतार जाए, बैठना मक्रूह है, हां, अगर कोई ज़रूरत हो तो कुछ हरज भी नहीं।

मस्अला 7—जो लोग जनाज़े के साथ न हों, बल्कि कहीं बैठे हुए हों, उनको जनाज़े को देखकर खड़ा हो जाना चाहिए।

मस्अला 8—जो लोग जनाज़े के साथ हों, उनको जनाज़े के पीछे, चलना मुस्तहब है। अगरचे जनाज़े के आगे भी चलना जायज़ है। हां अगर सब लोग जनाज़े के आगे हो जाएं तो मक्रूह है। इसी तरह जनाज़े के आगे किसी सवारी पर चलना भी मक्रूह है।

मस्अला 9—जनाज़े के साथ पैदल चलना मुस्तहब है और अगर किसी सवारी पर हो तो जनाज़े के पीछे चले।

मस्अला 10—जनाज़े के साथ जो लोग हों, उनको कोई दुआ या ज़िक्र ऊंची आवाज़ से पढ़ना मक्रूह है। मय्यत की क़ब्र कम से कम उसके आधे क़द के बराबर गहरी खोदी जाए और क़द से ज़्यादा न होनी चाहिए

---

1. यानी हर एक का उठाना चारों आदमियों में से चालीस-चालीस क़दम हो जाए।

और उसके क़द की लंबाई के बराबर हो और बग़ली क़ब्र संदूक़ के मुक़ाबले में बेहतर है, हां, अगर ज़मीन बहुत नर्म हो कि बग़ली खोदने में क़ब्र के बैठ जाने का डर हो तो फिर बग़ली क़ब्र न खोदी जाए।

मस्अला 11—यह भी जायज़ है कि अगर बग़ली क़ब्र न खुद सके तो मय्यत को किसी संदूक़ में रखकर दफ़न कर दें, चाहे संदूक़ लकड़ी का हो या पत्थर का या लोहे का, मगर बेहतर यह है कि इस संदूक़ में मिट्टी बिछा दी जाए।

मस्अला 12—जब क़ब्र तैयार कर चुके तो मय्यत को क़िब्ले की तरफ़ से क़ब्र में उतार दें। इसकी शक्ल यह है कि जनाज़ा क़ब्र से क़िब्ले की तरफ़ रखा जाए और उतारने वाले क़िब्ला रूख खड़े होकर मय्यत को उठाकर क़ब्र में रख दें।

मस्अला 13—क़ब्र में उतारने वालों का ताक़ या जुफ़्त में होना सुन्नत है। नबी सल्ल० को आपकी पाक क़ब्र में चार आदमियों ने उतारा था।

मस्अला 14—क़ब्र में रखते वक़्त 'बिस्मिल्लाहि व अला मिल्लति रसूलिल्लाहि' (بِسْمِ اللّٰهِ وَعَلٰی مِلَّةِ رَسُوْلِ اللّٰهِ) कहना मुस्तहब है।

मस्अला 15—मय्यत को क़ब्र में रखकर दाहिने पहलू पर उसको क़िब्ला रूख कर देना सुन्नत है।

मस्अला 16—क़ब्र में रखने के बाद कफ़न खुल जाने के डर से जो गांठ दी गयी थी, खोल दी जाए।

मस्अला 17—इसके बाद कच्ची ईंटों या तख़्त से बंद कर दें। पक्की ईंटों या लकड़ी के तख़्तों से बंद करना मकरूह है। हां, जहां ज़मीन बहुत नर्म हो कि क़ब्र के बैठ जाने का डर हो, पक्की ईंट या लकड़ी के तख़्ते रख देना या संदूक़ में रखना भी जायज़ है।

मस्अला 18—औरत को क़ब्र में रखते वक़्त पर्दा करके रखना मुस्तहब है और अगर मय्यत के बदन के ज़ाहिर हो जाने का डर हो तो फिर पर्दा करना वाजिब है।

मस्अला 19—मर्दों के दफ़न करते वक़्त क़ब्र पर पर्दा न करना चाहिए, हां अगर मजबूरी हो, जैसे पानी बरस रहा हो या बर्फ़ गिर रहा हो या धूप कड़ी हो तो फिर जायज़ है।

मस्अला 20—जब मय्यत को क़ब्र में रख चुके तो जितनी मिट्टी

उसकी क़ब्र से निकली हो, यह सब उस पर डाल दे, इससे ज़्यादा मिट्टी डालना मक्रूह है, जब कि बहुत ज़्यादा हो कि क़ब्र एक बालिश्त से बहुत ज़्यादा ऊंची हो जाए और अगर थोड़ी–सी हो, फिर मक्रूह नहीं।

मस्अला 21—क़ब्र में मिट्टी डालते वक़्त मुस्तहब है कि सिरहाने की तरफ़ से शुरू किया जाए और हर आदमी अपने दोनों हाथों में मिट्टी लेकर डाल दे और पहली बार पढ़े—'मिन्हाख़लक़्नाकुम' (مِنْهَا خَلَقْنٰكُمْ) और दूसरी बार 'वफ़ीहानुईदुकुम (وَفِيْهَا نُعِيْدُكُمْ)और तीसरी बार 'व मिनहा नुख़्रिजुकुम तारतन उख़्रा'(وَمِنْهَا نُخْرِجُكُمْ تَارَةً اُخْرٰى)

मस्अला 22—दफ़्न के बाद थोड़ी देर तक क़ब्र पर ठहरना और मय्यत के लिए मग़्फ़िरत की दुआ करना या क़ुरआन मजीद पढ़कर उसका सवाब उसको पहुंचाना मुस्तहब है।

मस्अला 23—मिट्टी डाल चुकने के बाद क़ब्र पर पानी छिड़कना मुस्तहब है।

मस्अला 24—किसी मय्यत को, छोटा हो बड़ा, मकान के अन्दर दफ़्न न करना चाहिए, इसलिए कि यह बात नबियों अलै० के साथ ख़ास है।

मस्अला 25—क़ब्र का चौकोर बनाना मक्रूह है, मुस्तहब यह है कि उठी हुई ऊंट के कोहान की तरह बनायी जाए। उसकी ऊंचाई एक बालिश्त या इससे कुछ ज़्यादा होना चाहिए।

मस्अला 26—क़ब्र का एक बालिश्त से बहुत ज़्यादा बुलंद करना मक्रूह तह्रीमी है। क़ब्र पर गच करना, उस पर मिट्टी लगाना मक्रूह है।

मस्अला 27—दफ़्न कर चुकने के बाद क़ब्र कोई इमारत जैसे गुंबद या क़ुब्बे वग़ैरह बनाना, ज़ीनत के मक़्सद से, हराम है और मज़बूती की नीयत से मक्रूह है। मय्यत की क़ब्र पर कोई चीज़ याददाश्त के तौर पर लिखना जायज़ है[1], बशर्ते कि कोई ज़रूरत हो, वरना जायज़ नहीं, लेकिन इस ज़माने में चूंकि आम लोगों ने अपने अक़ीदे व अमल को बहुत ख़राब कर

---

1. सही हदीस में क़ब्र पर कुछ लिखने से मना किया गया है।

लिया है और इन ख़राबियों में पसंदिदा चीज़ भी ना–जायज़ हो जाती है, इसलिए ऐसे मामले बिल्कुल नाजायज़ होंगे और जो–जो ज़रूरतें ये लोग बयान करते हैं, सब नफ़्स के बहाने हैं, जिनको वे दिल में खुद भी समझते हैं।

शहीद के हुक्म

अगरचे शहीद भी ज़ाहिर में मय्यत है, मगर आम मुर्दों के सब हुक्म इसमें जारी नहीं हो सकते और बड़ाइयां भी इसकी बहुत हैं, इसलिए इसके हुक्मों का अलग बयान करना मुनासिब हुआ।

शहीद की क़िस्मों का ज़िक्र हदीसों में बहुत मिलता है। कुछ उलेमा ने इन क़िस्मों को जमा करने के लिए मुस्तक़िल किताबें भी लिखी हैं, मगर हमको शहीद के जो हुक्म यहां बयान करने हैं, वे उस शहीद के साथ ख़ास है, जिसमें ये कुछ शर्तें पायी जाएं—

शर्त 1—मुसलमान होना, पस ग़ैर–मुस्लिम के लिए किसी क़िस्म की शहादत साबित नहीं हो सकती।

शर्त 2—मुकल्लफ़ यानी आक़िल–बालिग़ होना। पस जो आदमी जुनून की हालत में मारा जाए यानी बालिग़ होने की हालत में तो उसके लिए शहादत के हुक्म, जिनका हम आगे ज़िक्र करेंगे, साबित न होंगे।

शर्त 3—बड़ी हदस से पाक होना, अगर कोई आदमी नापाकी की हालत में या कोई औरत हैज़–निफ़ास से शहीद हो जाए तो उसके लिए भी शहीद के वे हुक्म साबित न होंगे।

शर्त 4—बे–गुनाह मक़्तूल (जिसे क़त्ल किया जाए) होना, पस अगर कोई आदमी बे–गुनाह मक़्तूल नहीं हुआ, बल्कि किसी शरई जुर्म की सज़ा में मारा गया हो या मक़्तूल ही न हुआ हो, यों ही मर गया हो, तो उसके लिए भी शहीद के वे हुक्म साबित न होंगे।

शर्त 5—अगर किसी मुसलमान या ज़िम्मी के हाथ से मारा गया हो, जैसे किसी पत्थर वग़ैरह से मारा जाए तो उस पर शहीद के हुक्म जारी न होंगे लेकिन लोहा बिल्कुल ही घायल करने वाले हथियार के हुक्म में है, चाहे उसमें धार न हो और अगर कोई आदमी लड़ाई के काफ़िरों या बाग़ियों या डाकुओं के हाथ से मारा गया हो या उसको लड़ाई के मैदान में मक़्तूल मिले तो उसमें घायल करने वाले हथियार से मक़्तूल होने की शर्त नहीं, यहां

तक कि अगर किसी पत्थर वग़ैरह से भी वे लोग मारे और मर जाए, तो शहीद के हुक्म उस पर जारी हो जाएंगे, बल्कि यह भी शर्त नहीं कि वे लोग खुद क़त्ल करने वाले हुए हों, बल्कि अगर वे सब क़त्ल भी हुए हों यानी उनसे बातें हो जाएं जो क़त्ल की वजह बन जाएं तब भी शहीद के हुक्म जारी हो जाएंगे।

मिसाल 1—किसी लड़ाई वाले दुश्मन ने अपने जानवर से किसी मुसलमान को रौंद डाला और खुद भी उस पर सवार था।

मिसाल 2—कोई मुसलमान किसी जानवर पर सवार था। उस जानवर को किसी लड़ाई के दुश्मन ने भगाया, जिसकी वजह से मुसलमान उस जानवर से गिरकर मर गया।

मिसाल 3—किसी लड़ाई के दुश्मन वग़ैरह ने किसी मुसलमान के घर या जहाज़ में आग लगा दी हो, जिससे कोई जल कर मर गया।

शर्त 6—इस क़त्ल की सज़ा में शुरू में शरीअत की तरफ़ से कोई माली बदला न तै हो बल्कि सब क़िसास वाजिब हो। पस अगर माली बदला मुक़र्रर होगा, तब भी उस मक़्तूल पर शहीद के हुक्म न लगायेंगे, भले ही जुल्म से मारा जाए।

मिसाल 1—कोई मुसलमान किसी मुसलमान को घाव न करने वाले हथियार से क़त्ल कर दे।

मिसाल 2—कोई मुसलमान किसी मुसलमान को घाव करने वाले हथियार से क़त्ल कर दे, मगर भूले से, जैसे किसी जानवर पर या किसी निशाने पर हमला कर रहा हो और वह किसी इंसान के लग जाए।

मिसाल 3—कोई आदमी किसी जगह अलावा लड़ाई के मैदान के मक़्तूल पाया जाए और कोई क़ातिल उसका मालूम न हो। इस सब शक्लों में चूंकि इस क़त्ल के बदले में माल वाजिब होता है, क़िसास नहीं वाजिब होता, इसलिए यहां शहीद के हुक्म जारी न होंगे। माली बदले के मुक़र्रर होने में 'शुरू में' की क़ैद इस वजह से लगायी गयी कि अगर 'शुरू में' क़िसास मुक़र्रर हुआ हो, मगर किसी रुकावट की वजह से क़िसास माफ़ होकर उसके बदले में माल वाजिब हुआ हो तो वहां शहीद के हुक्म जारी हो जाएंगे।

मिसाल—कोई आदमी घाव करने वाले हथियार से जान–बूझकर जुल्म के साथ मारा गया हो, लेकिन क़ातिल और मक़्तूल के वारिसों में कुछ माल के बदले सुलह हो गयी हो, तो इस शक्ल में, चूंकि शुरू में क़िसास वाजिब हुआ था और शुरू में माल वाजिब नहीं हुआ था, बल्कि सुलह की

वजह से वाजिब हुआ, इसलिए यहां शहीद के हुक्म जारी हो जाएंगे।

मिसाल—कोई बाप अपने बेटे को घाव करने वाले हथियार से मार डाले तो इस शक्ल में शुरू में क़िसास ही वाजिब हुआ था, माल शुरू में वाजिब नहीं हुआ, लेकिन बाप के अदब व बुज़ुर्गी की वजह से क़िसास माफ़ होकर उसके बदले में माल वाजिब हुआ है, इसलिए यहां भी शहीद के हुक्म जारी हो जाएंगे।

शर्त 7—घाव लगने के बाद फिर कोई आराम या ज़िंदगी का लुत्फ़ उठाने का काम, जैसे खाने–पीने, सोने, दवा करने, ख़रीदने–बेचने वग़ैरह उससे न हो सके और एक नमाज़ के वक़्त के बराबर उसकी ज़िंदगी होश व हवास में न गुज़रे और न उसको होश की हालत में मैदान से उठा कर लाये, हां, अगर जानवरों के कुचल देने के डर से उठा लाएं तो कुछ हरज न होगा। पस अगर कोई आदमी घाव के बाद ज़्यादा बातें करे तो वह भी शहीद के हुक्मों में दाख़िल न होगा, इसलिए कि ज़्यादा बातें करना ज़िंदों का काम है। इसी तरह अगर कोई आदमी वसीयत करे तो वह वसीयत अगर किसी दुनिया के मामले में है तो शहीद के हुक्म से ख़ारिज हो जाएगा और अगर दीन के मामले में हो तो ख़ारिज न होगा। अगर कोई आदमी लड़ाई के मैदान में शहीद हो और उससे काम हों तो शहीद के हुक्मों से ख़ारिज हो जाएगा, वरना नहीं। लेकिन यह आदमी अगर लड़ने में मारा गया है और अब तक लड़ाई ख़त्म नहीं हुई तो ऊपर की चीज़ों के होने के बावजूद वह शहीद है।

मस्अला 1—जिस शहीद में सब शर्तें पायी जाए, उसका एक हुक्म यह है कि उसको गुस्ल न दिया जाए और उसका ख़ून उसके जिस्म से मिटाया न जाए, इसी तरह उसको दफ़न कर दें।

दूसरा हुक्म यह है कि जो कपड़े पहने हो, उन कपड़ों को उसके जिस्म से न उतारें हां, अगर उसके कपड़े सुन्नत तायदाद से कम हों तो सुन्नत तायदाद के पूरा करने के लिए और कपड़े ज़्यादा कर दिए जाएं। इसी तरह अगर उसके कपड़े सुन्नत कफ़न से ज़्यादा हों तो ज़्यादा कपड़े उतार लिए जाएं। और अगर उसके जिस्म पर ऐसे कपड़े हों, जिनमें कफ़न होने की सलाहियत न हो, जैसे पोस्तीन (खाल) वग़ैरह तो उनको भी उतार लेना चाहिए। हां, अगर ऐसे कपड़ों के सिवा उसके जिस्म पर कोई कपड़ा न हो तो फिर पोस्तीन वग़ैरह को न उतारना चाहिए। टोपी, जूता, हथियार वग़ैरह, हर हाल में उतार लिया जाएगा और बाकी सब हुक्म जो और मुर्दे

के लिए हैं, जैसे नमाज़ वग़ैरह वे सब उनके हक़ में भी जारी होंगे। अगर किसी शहीद में इन शर्तों में से कोई शर्त न पायी जाए तो उसको गुस्ल भी दिया जाएगा और दूसरे मुर्दों की तरह नया कफ़न भी पहनाया जाएगा।

जनाज़े के दूसरे मस्‌अले

मस्‌अला 1—अगर मय्यत को क़ब्र में क़िब्ला रूख़ करना याद न रहे और दफ़न करने और मिट्टी डाल देने के बाद ख़्याल आये तो फिर क़िब्ला–रूख़ करने के लिए उसकी क़ब्र खोलना जायज़ नहीं। हां, अगर सिर्फ़ तख़्ते रखे गये हों, मिट्टी न डाली गयी हो तो वहां तख़्ते हटाकर उसको क़िब्ला–रूख़ कर देना चाहिए।

मस्‌अला 2—औरतों को जनाज़े के साथ जाना मक्रूहे तह्‌रीमी है।

मस्‌अला 3—रोने वाली औरतों का या बयान करने वालियों का जनाज़े के साथ जाना मना है।

मस्‌अला 4—मय्यम को क़ब्र में रखते वक़्त अज़ान कहना बिद्अत है।

मस्‌अला 5—अगर इमाम जनाज़े की नमाज़ में चार तक्बीर से ज़्यादा कहे तो हनफ़ी मुक़्तदियों को चाहिए कि इन ज़्यादा तक्बीरों में उनकी पैरवी न करें बल्कि ख़ामोश खड़े रहें। जब इमाम सलाम करे तो ख़ुद भी सलाम फेर दें, हां, अगर ज़्यादा तक्बीरें इमाम से न सुनी जाएं, बल्कि मुकब्बिर[1] से, तो मुक़्तदियों को चाहिए कि पैरवी करें और हर तक्बीर को तक्बीरे तह्‌रीमा समझें, यह ख़्याल करके शायद इससे पहले जो चार तक्बीरें मुकब्बिर नक़ल कर चुका है, वह ग़लत तो, इमाम ने अब तक्बीरे तह्‌रीमा कही हो।

मस्‌अला 6—अगर कोई आदमी नाव पर मर जाए और ज़मीन वहां से इतनी दूर हो कि लाश के ख़राब होने का डर हो तो उस वक़्त चाहिए कि गुस्ल और कफ़्नाने और नमाज़ से छुट्टी पाने के बाद उसको दरिया में डाल दें और अगर किनारा इतना दूर न हो और वहां जल्दी उतरने की उम्मीद हो तो उस लाश को छोड़ दें और ज़मीन में दफ़न कर दें।

---

1. तक्बीर कहने वाला,

मस्अला 7—अगर किसी आदमी को नमाज़ जनाज़े की वह दुआ जो नक़ल की गयी है, याद न हो, तो उसको सिर्फ़ 'अल्लाहुम्म ग़्फ़िर लिल् मुअ् मिनीन वल् मुअमिनात (اللهم اغفر للمؤمنين والمؤمنات) कह देना काफ़ी है। अगर यह भी याद न हो सके और सिर्फ़ चारों तक्बीरों को काफ़ी समझा जाए, तब भी नमाज़ अदा हो जाएगी, इसलिए कि दुआ फ़र्ज़ नहीं, सुन्नत है और इसी तरह दरूद शरीफ़ भी फ़र्ज़ नहीं है।

मस्अला 8—जब क़ब्र में मिट्टी पड़ चुके हो उसके बाद मय्यत का क़ब्र से निकलना जायज़ नहीं। हां अगर किसी आदमी का हक़ मारा जाता हो तो अल–बत्ता निकालना जायज़ है—

मिसाल 1—जिस ज़मीन में उसको दफ़न किया है, वह किसी दूसरे की मिल्कियत और वह उसके दफ़न पर राज़ी न हो।

मिसाल 2—किसी आदमी का माल क़ब्र में रह गया हो।

मस्अला 9—अगर कोई औरत मर जाए और उसके पेट में ज़िंदा बच्चा हो तो उसका पेट चाक करके वह बच्चा निकाल लिया जाए। इसी तरह अगर कोई आदमी किसी का माल निगल कर मार जाए और माल वाला मांगे तो वह माल उसका पेट चाक करके निकाल लिया जाए, लेकिन अगर मुर्दा माल छोड़कर मरा है, तो उसके तर्के[1] में से वह माल अदा कर दिया जाए और पेट चाक न किया जाए।

मस्अला 10—दफ़न करने से पहले लाश का एक जगह से दूसरी जगह दफ़न करने के लिए ले जाना बेहतर होने के ख़िलाफ़ है, जब कि वह जगह एक दो मील से ज़्यादा न हो और अगर उससे ज़्यादा हो तो जायज़ नहीं और दफ़न के बाद क़ब्र खोदकर लाश ले जाना, तो हर हालत में ना–जायज़ है।

मस्अला 11—मय्यत की तारीफ़ करना, चाहे नज़्म[2] में हो या नस्र[3] में, जायज़ है। बशर्ते कि तारीफ़ में किसी क़िस्म का मुबालग़ा[4] न हो यानी ऐसी तारीफ़ें बयान की जाएं जो उसमें न हों।

---

1. छोड़ा हुआ माल, 2. पद्य 3. गद्य 4. अतिशयोक्ति

मस्अला 12—मय्यत के अज़ीज़दारों को तस्कीन व तसल्ली देना और सब्र की बड़ाइयां और उसका सवाब उनको सुनाकर उनको सब्र पर उभारना और उनके और मय्यत के लिए दुआ करना जायज़ है। इसी को ताज़ियत कहते हैं। तीन दिन के बाद ताज़ियत करना मक्रूहे तंज़ीही है। लेकिन अगर ताज़ियत करने वाला या मय्यत के रिश्तेदार सफ़र में हों और तीन दिन के बाद आये तो इस शक्ल में तीन दिन के बाद भी ताज़ियत मक्रूह नहीं। जो आदमी एक आर ताज़ियत कर चुका हो, उसको फिर दोबारा ताज़ियत करना मक्रूह है।

मस्अला 13—अपने लिए कफ़न तैयार रखना मक्रूह नहीं, क़ब्र का तैयार रखना मक्रूह है।

मस्अला 14—मय्यत के कफ़न पर बग़ैर रोशनाई के वैसे ही उंगली की हरकत से कोई दुआ जैसे अह्द नामा वग़ैरह लिखना या उसके सीने पर 'बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम' (بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ) और माथे पर कलमा 'ला इलाह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह' (لَآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ مُحَمَّدٌ رَّسُوْلُ اللّٰهِ) लिखना जायज़ है, मगर किसी सही हदीस से इसका सबूत नहीं है, इसलिए इसके सुन्नत या मुस्तहब होने का ख़्याल न रखना चाहिए।

मस्अला 15—क़ब्र पर कोई हरी डाली रख देना मुस्तहब है और उसके क़रीब कोई पेड़ वग़ैरह निकल आया हो तो उसका काट डालना मक्रूह है।

मस्अला 16—एक क़ब्र में एक से ज़्यादा लाश दफ़न न करना चाहिए, मगर बड़ी ज़रूरत के वक़्त जायज़ है, फिर अगर सब मुर्दे मर्द ही हों तो जो उनमें सबसे अफ़ज़ल हो, उसको आगे रखें, बाक़ी सबको उसके पीछे दर्जा–ब–दर्जा रखें और अगर कुछ मर्द हों और कुछ औरतें तो मर्दों को आगे रखे और उनके पीछे औरतों को।

मस्अला 17—क़ब्रों की ज़ियारत करना यानी उनको जाकर देखना मर्दों के लिए मुस्तहब है। बेहतर यह है कि वह दिन जुमा का हो। बुज़ुर्गों की क़ब्रों की ज़ियारत के लिए सफ़र करके जाना भी जायज़ है जब कि कोई अक़ीदा व अमल शरअ के ख़िलाफ़ न हो, जैसा आजकल उर्सों में ख़राबियां होती हैं।

मस्जिद के हुक्म

वहां हम मस्जिद के उन हुक्मों को बयान करना नहीं चाहते जो वक़्फ़ से ताल्लुक़ रखते हैं, इसलिए कि इनका ज़िक्र वक़्फ़ के बयान में मुनासिब मालूम होता है। हम यहां उन हुक्मों को बयान करते हैं जो नमाज़ से या मस्जिद की ज़ात से ताल्लुक़ रखते हैं।

मस्अला 1—मस्जिद के दरवाज़े का बंद करना मक्रूहे तह्रीमी है। हां, अगर नमाज़ का वक़्त न हो और माल व अस्बाब की हिफ़ाज़त के लिए दरवाज़ा बंद कर लिया जाए, तो जायज़ है।

मस्अला 2—मस्जिद की छत पर पाख़ाना–पेशाब या जिमाअ करना ऐसा ही है जैसा मस्जिद के अंदर।

मस्अला 3—जिस घर में मस्जिद हो, उस पूरे घर[1] को मस्जिद का हुक्म नहीं। इसी तरह उस जगह को भी मस्जिद का हुक्म नहीं जो ईदों या जनाज़े की नमाज़ के लिए मुक़र्रर की गयी हो।

मस्अला 4—मस्जिद के दर व दीवार[2] का नक़्श (बेल–बूटा बनाना) करना अगर अपने ख़ास माल से हो तो हरज नहीं, मगर मेहराब वाली दीवार पर मक्रूह है और अगर मस्जिद की आमदनी से हो तो ना–जायज़ है।

मस्अला 5—मस्जिद की दर व दीवार पर क़ुरआन मजीद की आयतों या सूरतों का लिखना अच्छा नहीं।

मस्अला 6—मस्जिद के अन्दर या मस्जिद की दीवार पर थूकना या नाक साफ़ करना बहुत बुरी बात है और अगर बड़ी ज़रूरत पेश आए तो अपने कपड़े वग़ैरह में ले ले।

मस्अला 7—मस्जिद के अंदर वुज़ू या कुल्ली वग़ैरह करना मक्रूह

---

1. बल्कि वह ख़ास जगह, जिसको नमाज़ के लिए ख़ास कर लिया है, साफ़–पाक रखने के क़ाबिल है, तो सब हुक्म इसमें भी मस्जिद के न होंगे।
2. अगर ऐसा बेल–बूटा न बनाया जाये, जिससे नमाज़ में ख़्याल बटे और नमाज़ में इन बेल–बूटों के देखने में लग जाएं और नमाज़ अच्छी तरह अदा न कर सकें। अगर ऐसा करेगा, जैसा कि अक्सर इस ज़माने में रिवाज है, तो गुनाहगार होगा।

तह्रीमी है।

मस्अला 8—नापाक और हैज़ वाली औरत को मस्जिद के अन्दर जाना गुनाह है।

मस्अला 9—मस्जिद के अन्दर ख़रीदना–बेचना मक्रूह तह्रीमी है, हां, एतकाफ़ की हालत में ज़रूरत भर मस्जिद के अन्दर ख़रीदना–बेचना जायज़ है। ज़रूरत से ज़्यादा उस वक़्त भी जायज़ नहीं, मगर वह चीज़[1] मस्जिद के अन्दर मौजूद न होनी चाहिए।

मस्अला 10—अगर किसी के पैर में मिट्टी वग़ैरह भर जाए तो उसको मस्जिद की दीवार या स्तून पोंछना मक्रूह है।

मस्अला 11—मस्जिद के अन्दर पेड़ों का लगाना मक्रूह है। इसलिए कि यह तरीक़ा अह्ले किताब[2] का है। हां अगर इसमें मस्जिद का कोई फ़ायदा हो तो जायज़ है। जैसे, मस्जिद की ज़मीन में नमी ज़्यादा हो कि दीवारों के गिर जाने का डर हो, तो ऐसी हालत में अगर पेड़ लगाया जाये तो वह नमी को सोख लेगा।

मस्अला 12—मस्जिद को रास्ता क़रार देना जायज़ नहीं। हां, अगर कड़ी ज़रूरत आ जाए तो कभी–कभी ऐसी हालत में मस्जिद से होकर निकल जाना जायज़ है।

मस्अला 13—मस्जिद में किसी पेशेवर को अपना पेशा करना जायज़ नहीं, इसलिए कि मस्जिद दीन के कामों, ख़ासतौर से नमाज़ के लिए बनायी जाती है, इसमें दुनिया के काम न होना चाहिएं। यहां तक कि जो आदमी क़ुरआन वग़ैरह तंख़्वाह लेकर पढ़ाता हो, वह भी पेशा वालों में दाख़िल है। उसको मस्जिद से अलग बैठकर पढ़ाना चाहिए। हां, अगर कोई आदमी मस्जिद की हिफ़ाज़त के लिए मस्जिद में बैठे और साथ में अपना काम भी करता जाए तो कुछ हरज नहीं, जैसे कोई कातिब या दरज़ी मस्जिद के अन्दर हिफ़ाज़त के लिए बैठे और साथ ही अपनी किताबत या सिलाई भी करता जाए, तो जायज़ है।

ततिम्मा बहिश्ती ज़ेवर दूसरा हिस्सा पूरा हुआ।

---

1. यानी जिस चीज़ को बेचता है, वह मस्जिद में न लायी जाए और अगर सि क़ीमत का रूपया मस्जिद में ले आया जाए तो कुछ हरज नहीं।
2. आसमानी किताब वाले जैसे ईसाई–यहूदी वग़ैरह,

ततिम्मा बहिश्ती ज़ेवर तीसरा हिस्सा

रोज़े का बयान

मस्अला 1—एक शहर वालों का चांद देखना दूसरे शहर वालों पर भी हुज्जत है। इन दोनों शहरों में कितनी ही दूसरी क्यों न हो, यहां तक कि अगर शुरू पच्छिम में चांद देखा जाए और उसकी ख़बर भरोसे के तरीक़े से पूरब के आख़िर में रहने वालों को पहुंच जाए तो उन पर उस दिन रोज़ा ज़रूरी होगा।

मस्अला 2—अगर दो सिक़ा[1] आदमियों की गवाही से चांद का देखना साबित हो जाए और उसी हिसाब से लोग रोज़ा रखें, तो तीस रोज़े पूरे हो जाने के बाद ईदुल–फ़ित्र का चांद न देखा जाए, चाहे आसमान साफ़ हो या नहीं और 31वें दिन इफ़्तार कर लिया जाए और वह दिन शव्वाल की पहली तारीख़ समझी जाए।

मस्अला 3—अगर 30 तारीख़ को दिन के वक़्त चांद दिखायी दे तो रात आगे की समझी जाएगी और वह दिन अगले माह की तारीख़ क़रार दिया जाएगा, चाहे यह देखना दिन ढले से पहले हों या ढलने के बाद।

मस्अला 4—जो आदमी रमज़ान या ईद का चांद देखे और किसी वजह से इसकी गवाही शरीअत से एतबार के क़ाबिल न क़रार पाये, उस पर इन दोनों दिनों का रोज़ा रखना वाजिब है।

मस्अला 5—किसी आदमी ने इसकी वजह से कि रोज़े का ख़्याल न रहा, कुछ खा–पी लिया या जिमाअ कर लिया और यह समझा कि मेरा रोज़ा जाता रहा, इस ख़्याल से जान–बूझकर कुछ खा–पी लिया तो उसका रोज़ा इस शक्ल में ख़राब हो जाएगा और कफ़्फ़ारा ज़रूरी न होगा, सिर्फ़ क़ज़ा वाजिब है और अगर मस्अला जानता हो और फिर भूलकर ऐसा करने के बाद जान–बूझकर इफ़्तार कर दे तो जिमाअ की

1. शरीअत के लिहाज़ से जो भले हों,

सूरत में कफ़्फ़ारा भी लाज़िम होगा और खाने की सूरत में उस वक़्त भी सिर्फ़ क़ज़ा ही है।

मस्अला 6—किसी को बे–अख़्तियार कै हो गयी या एहतलाम हो गया या औरत वग़ैरह के देखने से इंज़ाल[1] हो गया और मस्अला मालूम न होने की वजह से वह यह समझा कि मेरा रोज़ा जाता रहा और उसने जान–बूझकर खा–पी लिया तो रोज़ा ख़राब हो गया। और सिर्फ़ क़ज़ा लाज़िम होगी, न कि कफ़्फ़ारा और अगर मस्अला मालूम हो कि इससे रोज़ा नहीं जाता और फिर जान–बूझकर इफ़्तार कर दिया तो कफ़्फ़ारा भी लाज़िम होगा।

मस्अला 7—मर्द अगर अपने ख़ास हिस्से के सूराख़ में कोई चीज़ डाले तो वह चूंकि पेट तक नहीं पहुंचती, इसलिए रोज़ा ख़राब न होगा।

मस्अला 8—किसी ने मुर्दा औरत से या ऐसी कम–सिन नाबालिग़ लड़की से जिसके साथ जिमाअ का चाव नहीं होता या किसी जानवर से जिमाअ किया या किसी को लिपटाया या बोसा लिया या जलक़[2] किया और इन सब शक्लों में मनी निकल पड़ी तो रोज़ा ख़राब हो जाएगा और कफ़्फ़ारा वाजिब न होगा।

मस्अला 9—किसी रोज़ेदार औरत से ज़बरदस्ती या सोने की हालत में जुनून की हालत में जिमाअ किया तो औरत का रोज़ा ख़राब हो जाएगा और औरत पर सिर्फ़ क़ज़ा ज़रूरी होगी और मर्द भी अगर रोज़दार हो तो उस पर क़ज़ा व कफ़्फ़ारा दोनों ज़रूरी हैं।

मस्अला 10—वह आदमी जिसमें रोज़े के वाजिब होने की तमाम शर्तें पायी जाती हों, रमज़ान के उस अदाई रोज़े में, जिसकी नीयत सुबह–सवेरे से पहले कर चुका हो, जान–बुझकर मुंह के ज़रिए से पेट में कोई ऐसी पहुंचाये जो इंसान की दवा या ग़िज़ा में इस्तेमाल की जाती ही यानी उसके इस्तेमाल से किसी क़िस्म का नफ़ा, जिस्म का या लज़्ज़त मिलने का, सोचा जाता हो और उसके इस्तेमाल से भले लोग नफ़रत न करते हों, चाहे वह बहुत ही थोड़ा हो, यहां तक कि एक तिल के बराबर जिमाअ करे या करवाये लिवातत[3] भी इसी हुक्म में है। जिमाअ में ख़ास

---

1. मनी का निकलना,
2. हाथ से हरकत देकर मनी गिराना।
3. लड़कों से बद–कारी करना।

हिस्से के सर का दाख़िल हो जाना काफ़ी है, मनी का निकलना भी शर्त नहीं। इस सब शक्लों में क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों वाजिब होंगे, मगर यह बात शर्त है कि जिमाअ ऐसी औरत से किया जाए जो जिमाअ के क़ाबिल हो, बहुत कम-सिन लड़की न हो जिसमें जिमाअ की बिल्कुल क़ाबिलियत न पायी जाए।

मस्अला 11—अगर कोई आदमी सर में तेल डाले या सुर्मा लगाये या मर्द अपने पिछले हिस्से के सूराख़ में कोई सूखी चीज़ दाख़िल करे और उसका सर बाहर रहे या तर चीज़ दाख़िल करे और वह हक़्ना की जगह तक पहुंचे तो चूंकि ये चीज़ें पेट तक नहीं पहुंचतीं, इसलिए रोज़ा ख़राब न होगा और न कफ़्फ़ारा वाजिब होगा, न क़ज़ा। और अगर सूखी चीज़ जैसे रूई या कपड़ा वग़ैरह मर्द ने अपने पिछले हिस्से में दाख़िल की और वह सारी अंदर ग़ायब कर दी या तर चीज़ दाख़िल की और वह हक़्ना की जगह तक पहुंच गयी तो रोज़ा ख़राब हो जाएगा और सिर्फ़ क़ज़ा वाजिब होगी।

मस्अला 12—तो लोग हुक्का पीने के आदी हों या किसी फ़ायदे की ग़रज़ से हुक़्क़ा पिए रोज़े की हालत में, तो उन पर भी कफ़्फ़ारा और क़ज़ा दोनों वाजिब होंगे।

मस्अला 13—अगर कोई किसी ना-बालिग़ बच्चे से या पागल से जिमाअ कराये, तब भी उस पर क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों ज़रूरी होंगे।

मस्अला 14—जिमाअ में औरत और मर्द दोनों का अक़्ल् वाला होना शर्त नहीं, यहां तक कि अगर एक पागल हो और दूसरा अक़्ल वाला, तो अक़्ल वाले पर कफ़्फ़ारा ज़रूरी होगा।

मस्अला 15—सोने की हालत में मनी के निकलने से, जिसको एहतलाम कहते हैं, अगर कोई बग़ैर ग़ुस्ल किये हुए रोज़ा रखे तो रोज़ा ख़राब न होगा। इसी तरह अगर किसी औरत के या उसका ख़ास हिस्सा देखने से या सिर्फ़ किसी बात का ख़्याल दिल में करने से मनी निकल जाए, जब भी रोज़ा ख़राब नहीं होता।

मस्अला 16—मर्द का अपने ख़ास हिस्से के सूराख़ में कोई चीज़ जैसे तेल या पानी डालना, चाहे पिचकारी के ज़रिए से या वैसे ही या रूई वग़ैरह का दाख़िल करना, अगर ये चीज़ें मसाने तक पहुंच जाएं, रोज़े को ख़राब नहीं करता।

मस्अला 17—किसी आदमी ने इस वजह से कि रोज़े का ख़्याल नहीं रहा या अभी कुछ रात बाक़ी थी, इसलिए जिमाअ शुरू कर दिया या

कुछ खाने-पीने लगा और उसके बाद ही जैसे ही रोज़े का ख़्याल आ गया ज्योंही सुबह सादिक़ हुई, तुरन्त अलग हो गया या लुक़्मा को मुंह से फेंक दिया, चाहे अलग हो जाने के बाद मनी भी निकल जाए, तब भी रोज़ा ख़राब न होगा और मनी का यह निकलना एहतलाम के हुक्म में होगा।

मस्अला 18—मिस्वाक करने से अगरचे दिन ढलने के बाद हो, ताज़ा लकड़ी से हो या सूखी से, रोज़े में नुक़्सान न आएगा।

मस्अला 19—औरत का बोसा लेना और उससे चिमटना मक्रूह है, जब कि मनी के गिरने का डर हो या अपने आपके बे-अख़्तियार हो जाने का और इस हालत में जिमाअ कर लेने का डर हो और अगर यह डर न हो तो फिर मक्रूह नहीं।

मस्अला 20—किसी औरत वग़ैरह के होंठ का मुंह में लेना और ख़ास नंगा बदन मिलाना, दाख़िल किए बग़ैर, हर हालत में मक्रूह है, चाहे मनी के गिरने का या जिमाअ का डर हो या न हो।

मस्अला 21—अगर कोई मुक़ीम रोज़े की नीयत के बाद मुसाफ़िर बन जाए और थोड़ी दूर जाकर भूली हुई चीज़ के लेने को अपने मकान वापस आये और वहां पहुंचकर रोज़ को ख़राब कर दे तो उसको कफ़्फ़ारा देना होगा, इसलिए कि वह उस वक़्त मुसाफ़िर न था, चाहे वह ठहरने की नीयत से न गया था और न वहां ठहरा।

मस्अला 22—सिवाए जिमाअ के और किसी वजह से अगर कफ़्फ़ारा वाजिब हुआ हो और एक कफ़्फ़ारा अदा न करने पाया हो कि दूसरा वाजिब हो जाए तो उन दोनों के लिए एक ही कफ़्फ़ारा काफ़ी है, अगरचे दोनों कफ़्फ़ारे दो रमज़ानों के हों। हां, जिमाअ की वजह से जितने रोज़े ख़राब हुए हों तो अगर वे एक ही रमज़ान के रोज़े हैं तो एक ही कफ़्फ़ारा काफ़ी है और अगर दो रमज़ान के हैं तो हर एक रमज़ान का कफ़्फ़ारा अलग देना होगा, अगरचे पहला कफ़्फ़ारा अदा न किया हो,

एतकाफ़ के मस्अले

मस्अला 1—एतकाफ़ के लिए तीन चीज़ें ज़रूरी हैं—

1. जमाअत वाली मस्जिद में ठहरना।
2. एतकाफ़ की नीयत से ठहरना। पस बे-इरादा ठहर जाने को एतकाफ़ नहीं कहते, चूंकि नीयत के सही होने के लिए नीयत करने वाले

का मुसलमान और अक़्ल वाला होना शर्त है, इसलिए अक़्ल और इस्लाम का शर्त होना भी नीयत के बयान में आ गया।

3. हैज़ व निफ़ास से ख़ाली और पाक होना और नापाक न होना।

मस्अला 2—सबसे बेहतर वह एतकाफ़ है जो मस्जिदे हराम यानी काबा मुकर्रमा में किया जाए, इसके बाद मस्जिदे नबुवी का, इसके बाद मस्जिदे बैतुल्मक़्दिस का, इसके बाद उस जामा मस्जिद का, जिसमें जमाअत का इंतिज़ाम हो। अगर जामा मस्जिद में जमाअत का इंतिज़ाम न हो तो मुहल्ले की मस्जिद, इसके बाद वह मस्जिद जिसमें सबसे ज़्यादा जमाअत होती है।

मस्अला 3—एतकाफ़ की तीन क़िस्में हैं—1. वाजिब, 2. सुन्नत मुअक्कदा, 3. मुस्तहब।

1. वाजिब—वह है जिसकी नज़्र की जाए। नज़्र चाहे किसी से ग़ैर मुताल्लिक़ हो जैसे कोई आदमी, बिना किसी शर्त के, एतकाफ़ की नज़्र करे या मुताल्लिक़, जैसे कोई आदमी यह शर्त करे कि अगर मेरा फ़्ला काम हो जाएगा मैं एतकाफ़ करूंगा।

2. सुन्नत मुअक्कदा—वह है कि रमज़ान की आख़िरी दहाई में नबी सल्ल० से पाबंदी के साथ एतकाफ़ करना सहीह हदीसों में नक़ल में नक़ल दिया गया है, मगर यह सुन्नत मुअक्कदा कुछ के कर लेने से सबके ज़िम्मे से उतर जाएगी, और

3. मुस्तहब—वह है कि रमज़ान की दहाई की आख़िरी दहाई के सिवा किसी और ज़माने में, चाहे रमज़ान–की पहली–दूसरी दहाई हो या और कोई महीना हो, एतकाफ़ करें।

मस्अला 4—वाजिब एतकाफ़ के लिए रमज़ान शर्त है। जब कोई आदमी एतकाफ़ करेगा तो उसको रोज़ा रखना होगा, बल्कि अगर यह भी नीयत करे कि मैं रोज़ा न रखूंगा, तब भी उसको रोज़ा रखना ज़रूरी होगा। इसी वजह से अगर कोई आदमी रात के एतकाफ़ की नीयत करे, तो वह भी बेकार समझी जाएगी, क्योंकि रात में रोज़े का कोई तुक नहीं। हां, अगर रात दिन दोनों की नीयत करे या सिर्फ़ कई दिनों की, तो फिर रात साथ में दाख़िल हो जाएगी और रात को भी एतकाफ़ करना ज़रूरी होगा। और अगर सिर्फ़ एक ही दिन के एतकाफ़ की नज़्र करे तो रात साथ में भी दाख़िल न होगी, रोज़ा का ख़ास एतकाफ़ के लिए रखना ज़रूरी नहीं चाहे जिस मक़्सद से रोज़ा रखा जाए, एतकाफ़ के लिए काफ़ी है। जैसे, काई

आदमी रमज़ान में एतकाफ़ की नज़्र करे तो रमज़ान का रोज़ा इस एतकाफ़ के लिए भी काफ़ी है, हां, उस रोज़े का वाजिब होना ज़रूरी है। नफ़्ल रोज़े इसके लिए काफ़ी नहीं। जैसे, कोई आदमी नफ़्ल रोज़ा रखे और उसके बाद उसी दिन एतकाफ़ की नज़्र करे तो सही नहीं। अगर कोई आदमी पूरे रमज़ान के एतकाफ़ की नज़्र करे और संयोग से रमज़ान में न कर सके तो किसी और महीने में उसके बदले कर लेने से उसकी नज़्र पूरी हो जाएगी मगर मिलाकर लगातार रोज़े रखना और उनमें एतकाफ़ करना ज़रूरी होगा।

मस्अला 5—सुन्नत एतकाफ़ में तो रोज़ा होता ही है, उसके लिए शर्त करने की ज़रूरत नहीं।

मस्अला 6—मुस्तहब एतकाफ़ में भी एहतियात यह है कि रोज़ा शर्त है और एतबार की बात यह है कि शर्त नहीं।

मस्अला 7—वाजिब एतकाफ़ कम से कम एक दिन हो सकता है और ज़्यादा जितनी नीयत करे और सुन्नत एतकाफ़ एक दहाई, इसलिए कि सुन्नत एतकाफ़ रमज़ान की आख़िरी दहाई में होता है और मुस्तहब के लिए कोई मिक्दार मुक़र्रर नहीं, एक मिनट, बल्कि उससे भी कम हो सकता है।

मस्अला 8—एतकाफ़ की हालत में दो क़िस्म के काम हराम हैं यानी उनके करने से अगर वाजिब या सुन्नत है तो ख़राब हो जाएगा और उसकी क़ज़ा[1] करनी पड़ेगी। और अगर एतकाफ़ मुस्तहब है तो ख़त्म हो जाएगा, इसलिए कि मुस्तहब एतकाफ़ के लिए कोई मुद्दत मुक़र्रर नहीं, पर उसकी क़ज़ा भी नहीं। पहली क़िस्म, एतकाफ़ की जगह से बे-ज़रूरत बाहर निकलना आम ज़रूरत है, चाहे क़ुदरती हो या शरअी। क़ुदरती जैसे पाख़ाना-पेशाब, नापाकी या ग़ुस्ल, खाना खाना भी क़ुदरती ज़रूरत में दाख़िल है, जबकि कोई आदमी खाना लाने वाला न हो। शरअी ज़रूरत, जैसे जुमा की नमाज़।

मस्अला 9—जिस ज़रूरत के लिए एतकाफ़ की मस्जिद से बाहर जाए उसके फ़ारिग़ होने के बाद वहां ठहरे नहीं और जहां तक मुम्किन

---

1. मतलब यह है कि जितने दिनों का एतकाफ़ फ़ौत हो गया, उसको क़ज़ा करना पड़ेगा। वाजिब की क़ज़ा वाजिब है और सुन्नत की सुन्नत है और रमज़ान के एतकाफ की कजा के लिए रमज़ान होना ज़रूरी नहीं है, हा रोज़ा होना ज़रूरी है।

हो, ऐसी जगह अपनी ज़रूरत पूरी करे जो उस मस्जिद से ज़्यादा क़रीब हो। जैसे, पाखाने के लिए अगर जाए और उसका घर अगर दूर हो और उसके दोस्त वग़ैरह का घर क़रीब हो तो वहीं जाए, हां, अगर उसकी तबियत अपने घर ही के लिए हो और दूसरी जगह जाने से उसकी ज़रूरत पूरी न हो, तो फिर जायज़ है। अगर जुमा की नमाज़ के लिए किसी मस्जिद में जाए और नमाज़ के बाद वहीं ठहर जाए और वहीं एतकाफ़ को पूरा करे, तब भी जायज़ है, मगर मक्रूह है।

मस्अला 10—भूले से भी अपने एतकाफ़ की मस्जिद को एक मिनट, बल्कि इससे भी कम छोड़ देना जायज़ नहीं।

मस्अला 11—जो उज़्र (मजबूरी) ज़्यादा न पाया जाता हो उसके लिए अपने एतकाफ़ करने की जगह छोड़ देना एतकाफ़ के ख़िलाफ़ है। जैसे किसी मरीज़ की देखभाल के लिए या किसी डूबते हुए को बचाने के लिए या आग बुझाने को या मस्जिद के गिरने के ख़ौफ़ से, तो इन शक्लों में एतकाफ़ की जगह से निकल जाना गुनाह नहीं, बल्कि जान बचाने के लिए ज़रूरी है, मगर एतकाफ़ क़ायम न रहेगा। अगर किसी शरअी या क़ुदरती ज़रूरत के लिए निकले और इस दर्मियान चाहे ज़रूरत पूरी होने से पहले या उसके बाद किसी मरीज़ की देख–भाल करे या नमाज़ जनाज़े में शरीक हो जाए, तो कुछ हरज नहीं।

मस्अला 12—जुमा की नमाज़ के लिए ऐसे वक़्त जाए कि तहीयतुल मस्जिद और जुमा की सुन्नत वहां पढ़ सके और नमाज़ के बाद भी सुन्नत पढ़ने के लिए ठहरना जायज़ है। वक़्त के इस मिक़्दार का अंदाज़ा उस आदमी की राय पर छोड़ दिया गया है अगर अंदाजा गलत हो जाए यानी कुछ पहले से पहुंच जाए, तो कुछ हरज नहीं।

मस्अला 13—अगर कोई आदमी ज़बरदस्ती एतकाफ़ की जगह एतकाफ़ से बाहर निकाल दिया जाए तब भी उसका एतकाफ़ क़ायम न रहेगा, जैसे किसी जुर्म में वक़्त के हाकिम की तरफ़ से वारंट जारी हो और सिपाही उसको गिरफ्तार करके ले जाएं या किसी का कर्ज चाहता हो और वह उसको बाहर निकाले।

मस्अला 14—इसी तरह अगर किसी शरअी या क़ुदरती ज़रूरत से निकले और रास्ते में कोई क़र्ज़ वाला रोक ले या बीमार हो जाए और एतकाफ़ की जगह तक पहुंचने में देर हो जाए तब भी एतकाफ़ क़ायम न रहेगा।

दूसरी क़िस्म उन कामों की, जो एतकाफ़ में ना–जायज़ हैं। जिमाअ वग़ैरह करना, चाहे जान–बूझकर कर किया जाए या भूले से एतकाफ़ का ख़्याल न रहने की वजह से मस्जिद में किया जाए या मस्जिद मे बाहर, हर हाल में एतकाफ़ ग़लत हो जाएगा, जो काम कि जिमाअ के तहत हैं जैसे बोसा लेना या गले मिलना, वे भी एतकाफ़ की हालत में ना–जायज़ हैं, मगर इनसे एतकाफ़ ग़लत नहीं होता, जब तक कि मनी न निकले। हां, अगर इन कामों से मनी निकल पड़े तो फिर एतकाफ़ ख़राब हो जाएगा। हां, अगर सिर्फ़ ख़्याल और सोच से अगर मनी निकल जाए तो एतकाफ़ ख़राब न होगा।

मस्अला 15—एतकाफ़ की हालत में बे–ज़रूरत किसी दुनिया के काम में लग जाना मक्रूहे तह्रीमी है, जैसे बे–ज़रूरत बेचने–ख़रीदने या व्यापार का कोई काम करना, हां, जो काम बहुत ज़रूरी हो, जैसे घर में खाने को न हो और उसके सिवा कोई दूसरा आदमी इत्मीनान के क़ाबिल खरीदन वाला न हो, ऐसी हालत में ख़रीदना–बेचना जायज़ है, मगर फ़रीक़ का मस्जिद में लाना किसी हाल में जायज़ नहीं, बशर्ते कि उसके मस्जिद में लाने से मस्जिद के ख़राब होने या जगह रूक जाने का डर हो। हां, अगर मस्जिद के ख़राब हो जाने या या जगह रूक जाने का डर न हो तो कुछ के नज़दीक जायज़ है।

मस्अला 16—एतकाफ़ की हालत में बिल्कुल चुप बैठना भी मक्रूहे तह्रीमी है, हां, बुरी बातें ज़ुबान से न निकाले, झूठ न बोले, ग़ीबत न करे, बल्कि क़ुरआन मजीद की तिलावत या किसी दीनी इल्म के पढ़ने–पढ़ाने या किसी और इबादत में अपना वक़्त लगाये। मतलब यह कि चुप बैठना कोई इबादत नहीं।

ज़कात का बयान

मस्अला 1—साल गुज़रना सबमें शर्त है।

मस्अला 2—जानवरों की एक क़िस्म, जिनमें ज़कात फ़र्ज़ है, साइमा है, साइमा वे जानवर हैं, जिनमें ये बातें पायी जाती हैं—

1. साल के अक्सर हिस्से में अपने मुंह से चर कर पेट भरते हों और घर में उनको खड़ा करके न खिलाया जाता हो। अगर आधा साल मुंह से चरकर रहते हों और आधा साल उनको घर में खड़ा करके खिलाया जाता हो, तो फिर वे साइमा नहीं हैं। इसी तरह अगर घास उनके लिए घर में

मंगायी जाती हो, चाहे वह क़ीमत के साथ हो या बे–क़ीमत, तो फिर वे साइमा नहीं हैं।

2. दूध के लिए या नस्ल के ज़्यादा होने या मोटापे के लिए रखे गये हों। अगर दूध और नस्ल और मोटापे की ग़रज़ से न रखे गये हों, बल्कि गोश्त खाने–खिलाने या सवारी के लिए तो फिर साइमा न कहलायेंगे।

साइमा जानवरों की ज़कात का बयान

मस्अला 1—साइमा जानवरों की ज़कात में यह शर्त है कि वह ऊंट–ऊंटनी, या गाय–बैल, भैंस–भैंसा, बकरा–बकरी, भेड़–दुंबा हो, जंगली जानवरों पर जैसे हिरन वग़ैरह, ज़कात फ़र्ज़ नहीं, हां, अगर तिजारत की नीयत से ख़रीद कर रखे जाएं, तो उन पर तिजारत की ज़कात फ़र्ज़ होगी जो जानवर किसी देसी और जंगली जानवर से मिलकर पैदा हों, तो अगर उनकी मां देसी है तो वे देसी समझे जाएंगे और अगर जंगली है, तो जंगली समझे जाएंगे, जैसे बकरी और हिरन से कोई जानवर पैदा हुआ हो तो वह बकरी के हुक्म में है और नील गाय और गाय से कोई जानवर पैदा हो, तो वह गाय के हुक्म में है।

मस्अला 2—जो जानवर साइमा हो और साल के दर्मियान में उसको तिजारत की नीयत से बेच दिया जाए, तो उस साल उसकी ज़कात देना पड़ेगी और जब से उसने तिजारत की नीयत की, उस वक़्त से उसका तिजारती साल शुरू होगा।

मस्अला 3—जानवरों के बच्चों में अगर वे तंहा हों, ज़कात फ़र्ज़ नहीं, हां, अगर उनके साथ बड़ा जानवर भी हो, तो फिर उन पर ज़कात फ़र्ज़ हो जाएगी और ज़कात में वही बड़ा जानवर दिया जाएगा और साल पूरा होने के बाद अगर वह बड़ा जानवर मर जाए तो ज़कात ख़त्म हो जाएगी।

मस्अला 4—वक़्फ़ के जानवरों पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं।

मस्अला 5—घोड़ों पर जब वे साइमा हों और नर व मादा मिले–जुले हों, ज़कात है या तो फ़ी घोड़ा एक दीनार यानी पौने तीन रूपए दे दे और या सबकी क़ीमत का चालीसवां हिस्सा दे दे।

मस्अला 6—गधे और ख़च्चर पर, जबकि तिजारत के लिए न हों, ज़कात फ़र्ज़ नहीं।

ऊंट का निसाब

याद रखो कि पांच ऊंट में ज़कात फ़र्ज़ है, इससे कम में नहीं। पांच ऊंट में एक बकरी और दस में दो और पंद्रह में तीन और बीस में चार बकरी देना फ़र्ज़ है, चाहे नर हो या मादा, मगर एक साल से कम न हो और दर्मियान में कुछ नहीं। फिर पचीस ऊंट में एक ऐसी ऊंटनी, जिसको दूसरा वर्ष शुरू हो और 26 से 35 तक कुछ नहीं। फिर 36 ऊंट में एक ऐसी ऊंटनी जिसको तीसरा वर्ष शुरू हो चुका हो और 37 से 45 तक कुछ नहीं फिर 46 ऊंट में एक ऐसी ऊंटनी जिसको चौथा वर्ष शुरू हो चुका हो और 47 से 60 तक कुछ नहीं। फिर 61 ऊंट में एक ऐसी ऊंटनी जिसको पांचवां वर्ष शुरू हो और 62 और 75 तक कुछ नहीं, फिर 76 ऊंट में दो ऐसी ऊंटनियां, जिनको तीसरा वर्ष शुरू हो चुका हो और 77 से 80 तक कुछ नहीं, फिर 81 ऊंट में दो ऐसी ऊंटनियां जिनको चौथा वर्ष शुरू हो और 82 से 120 तक कुछ नहीं फिर जब 120 से ज़्यादा हो जाएं तो फिर नया हिसाब किया जाएगा यानी अगर चार ज़्यादा हैं तो कुछ नहीं, जब ज़्यादती पांच तक पहुंच जाए यानी 125 हो जाएं तो फिर एक बकरी और दो वे ऊंटनियां जिनको चौथा वर्ष शुरू हो जाए। इसी तरह हर पांच में एक बकरी बढ़ती रहेगी 144 तक और 145 हो जाए तो एक दूसरे वर्ष वाली ऊंटनी और दो तीन वर्ष वाली 148 तक और 150 हो जाएं तो तीन ऊंटनियां चौथे वर्ष वाली वाजिब होंगी। जब इससे भी बढ़ जाएं, तो फिर नये सिरे से हिसाब होगा, यानी पांच ऊंटों में चौबीस तक फ़ी पांच ऊंट एक बकरी, तीन चौथे वर्ष वाली ऊंटनी के साथ और फिर पचीस में एक दूसरे वर्ष वाली ऊंटनी और 36 में एक तीसरे वर्ष वाली ऊंटनी, फिर जब 136 हो जाएं, तो चार तीन वर्ष वाली ऊंटनी दो सौ तक फिर जब उससे भी बढ़ जाएं तो हमेशा इसी तरह चलेगा जैसा कि डेढ़ सौ के बाद से चला है।

मस्अला 2—ऊंट की ज़कात में अगर ऊंट दिया जाए तो मादा होना चाहिए, हां, नर अगर क़ीमत में मादा के बराबर हो तो दुरुस्त है।

गाय भैंस का निसाब

गाय और भैंस दोनों एक क़िस्म में हैं दोनों का निसाब भी एक है और अगर दोनों के मिलाने से निसाब पूरा होता हो तो दोनों को मिला लेंगे, जैसे बीस गायें हों और दस भैंसे हों तो दोनों को मिलाकर तीस का निसाब पूरा कर लेंगे, मगर ज़कात में वही जानवर दिया जाएगा, जिसकी तायदाद ज़्यादा हो यानी अगर गायें ज़्यादा हैं तो ज़कात में गाय दी जाएगी और अगर भैंसें ज़्यादा हों तो ज़कात में भैंस दी जाएगी और जो दोनों बराबर हों तो अच्छी क़िस्म में जो जानवर कम क़ीमत का हो, घटिया क़िस्म में जो जानवर ज़्यादा क़ीमत का हो, दिया जाएगा, पस तीस गाय-भैंस में एक गाय या भैंस का बच्चा, जो पूरे एक वर्ष का हो, नर हो या मादा, तीस में कम कुछ नहीं और 30 के बाद 39 तक भी कुछ नहीं। चालीस गाय-भैंस में पूरे दो वर्ष का बच्चा नर या मादा, 41 से 49 तक कुछ नहीं। जब साठ हो जाएं तो एक-एक वर्ष के दो बच्चे दिए जाएंगे, फिर जब साठ से ज़्यादा हो जाएं तो हर तीस में एक वर्ष का बच्चा और हर चालीस में दो वर्ष का बच्चा, जैसे 70 हो जाएं तो एक-एक वर्ष का बच्चा और एक दो वर्ष का बच्चा, क्योंकि 70 में एक 30 का निसाब है और एक चालीस का और एक अस्सी हो जाएं तो दो वर्ष के दो बच्चे, क्योंकि 80 में 40 के दो निसाब हैं। और नव्वे में एक-एक वर्ष के तीन बच्चे, क्योंकि नव्वे में तीस के तीन निसाब हैं और सौ में दो बच्चे एक-एक वर्ष के और एक बच्चा दो वर्ष का, क्योंकि सौ में दो निसाब तीस-तीस के हैं और एक निसाब चालीस का है, हां, जहां दोनों निसाबों का हिसाब अलग-अलग नतीजा पैदा करता हो, वहां अख़्तियार है, चाहे जिस का एतबार करें, जैसे एक सौ बीस में चार निसाब तो तीस के हैं और तीन निसाब चालीस के हैं, पस अख़्तियार है कि तीस के निसाब का एतबार करके एक-एक वर्ष के चार बच्चे दें चाहे चालीस के निसाब का एतबार करके दो-दो वर्ष के तीन बच्चे दें।

बकरी–भेड़ का निसाब

ज़कात के बारे में बकरी–भेड़ सब बराबर हैं चाहे भेड़ दुमदार हो, जिसको दुम्बा कहते हैं, या मामूली हो। अगर दोनों का निसाब अलग–अलग पूरा हो तो दोनों की ज़कात साथ[1] दी जाएगी और मज्मूआ एक निसाब का होगा और हर एक का निसाब पूरा न हो मगर दोनों के मिला देने से निसाब पूरा हो जाता है, जब भी दोनों को मिला लेंगे और जो ज़्यादा होगा, ज़कात में वही दिया जाएगा। और दोनों बराबर हैं तो अख़्तियार है चालीस बकरी या भेड़ से कम में कुछ नहीं, चालीस बकरी या भेड़ में एक बकरी या भेड़, चालीस के बाद 120 तक कुछ नहीं, फिर 121 में दो भेड़ या बकरियां और 122 से 200 तक कुछ नहीं, फिर 201 में तीन भेड़ या बकरियां, फिर 399 तक कुछ नहीं फिर चार सौ में चार बकरियां या भेड़ें, फिर चार सौ से ज़्यादा में हर सौ में एक बकरी के हिसाब से ज़कात देनी होगी। सौ से कम में कुछ नहीं।

ज़कात के अलग–अलग मस्अले

मस्अला 1—अगर कोई शख़्स हराम माल को हलाल के साथ मिला देगा, तो सबकी ज़कात उसको देनी होगी।[2]

मस्अला 2—अगर कोई आदमी ज़कात वाजिब होने के बाद मर जाए तो उसके माल की ज़कात न ली जाएगी, हां, अगर वह नसीहत कर गया हो तो उसका तिहाई माल ज़कात में ले लिया जाएगा, चाहे यह

---

1. इस मस्अले में बहुत छान–फटक के बाद बात साफ़ हो गयी कि इस शक्ल में भी मज्मूए को एक ही क़िस्म क़रार देकर एक क़िस्म में जो ज़कात वाजिब होती है, दी जाएगी, लेकिन अगर बकरी देगा तो मामूले दर्जे की और अगर भेड़ देगा तो अच्छे दर्जे की। ग़रज़ इसको दो निसाब न कहेंगे। और दो जानवर वाजिब न कहेंगे, जैसाकि 'अल–मुग़तनिम फ़ी ज़कातिल मुग़्निम' में इसकी तफ़्सील आती है।
2. यानी हराम होना और दो क़िस्म के मालों का जमा होना ज़कात में कोई रूकावट नहीं डालते लेकिन अगर और कोई वजह रूकावट हो तो दूसरी बात है।

तिहाई पूरी ज़कात के लिए काफ़ी न हो और अगर इसके वारिस तिहाई से ज़्यादा देने पर राज़ी हों तो जितना वह अपनी ख़ुशी से देने पर राज़ी हों, ले लिया जाएगा।

मस्अला 3—अगर एक साल के बाद क़र्ज़ वाला अपना क़र्ज़ क़र्ज़दार को माफ़ कर दे तो क़र्ज़ वाले को ज़कात उस साल की न देना पड़ेगी क्योंकि ज़काती माल के हलाक कर देने से ज़कात ख़त्म नहीं होती।

मस्अला 4—फ़र्ज़ न वाजिब सदक़ों के अलावा सद्क़ा देना उसी वक़्त मुस्तहब है, जबकि माल अपनी ज़रूरतों और अपने घरवालों की ज़रूरतों से ज़्यादा हो, वरना मक्रूह है। इसी तरह अपने कुछ माल सद्क़े में देना भी मक्रूह है, हां, अगर वह अपने को भरोसा और सब्र की ख़ूबी के यक़ीनी तौर पर जानता हो और घर–ख़ानदान वालों को भी तक्लीफ़ का डर न हो, तो फिर मक्रूह नहीं, बल्कि बेहतर है।

मस्अला 5—अगर किसी ना–बालिग़ लड़की का निकाह कर दिया जाए और वह शौहर के घर में रूख़्सत कर दी जाए तो अगर वह मालदार है तब तो उस पर सदक़ा–ए–फ़ित्र वाजिब है और अगर मालदार नहीं है तो देखना चाहिए कि अगर ख़िदमत के क़ाबिल शौहर है या उसके मुवानसत के क़ाबिल है तो उसका सद्क़ा–ए–फ़ित्र न बाप पर वाजिब है, न शौहर पर, ख़ुद उस पर और अगर वह ख़िदमत के क़ाबिल और मुवानसत के क़ाबिल न हो, तो उसके बाप पर उसका सदक़ा–ए–फ़ित्र वाजिब रहेगा और अगर शौहर के घर रूख़्सत नहीं की गयी तो वह ख़िदमत के क़ाबिल और मुवानसत के क़ाबिल न हो, तो भी हर हाल में उसके बाप पर उसका सद्क़ा–ए–फ़ित्र वाजिब होगा।

———

ततिम्मा तीसरा हिस्सा बहिश्ती ज़ेवर का पूरा हुआ। चौथे हिस्से का ततिम्मा नहीं है। आगे ततिम्मा पांचवें हिस्से का शुरू होता है।

ततिम्मा बहिश्ती ज़ेवर पांचवां हिस्सा

बालों के बारे में हुक्म

मस्अला 1—पूरे सर पर बाल रखना कान की लौ तक या कुछ उससे नीचे तक सुन्नत है और अगर सर मुंडाये तो पूरा सर मुंडा देना सुन्नत है और कतरवा देना भी दुरूस्त है, मगर कतरवाना और आगे की तरफ़ कुछ बड़े रखना, जो आजकल का फ़ैशन है, जायज़ नहीं और इसी तरह कुछ हिस्सा मुंडवाना, कुछ रहने देना दुरूस्त नहीं। इसी से मालूम हो गया कि आजकल बाबरी रखनी या चंदवा खुलवाने या सर के अगले हिस्से के बाल गलाई बनवाने की जो रस्म है, दुरूस्त नहीं।

मस्अला 2—अगर बाल बहुत बढ़ा लिए, तो औरतों की तरह जूड़ा बांधना दुरूस्त नहीं।

मस्अला 3—औरतों को सर मुंडाना, बाल कतरवाना हराम है, हराम है, हदीस में लानत आयी है।

मस्अला 4—लबों का कतरवाना, इतना कि लब के बराबर हो जाए सुन्नत है और मुंडाने में इख़्तिलाफ़ है। कुछ बिद्अत कहते हैं, कुछ इजाज़त देते हैं, इसलिए न मुंडाने में एहतियात है।

मस्अला 5—मोंछ दोनों तरफ़ लंबी रहने देना दुरूस्त है, बशर्ते कि लबें लंबी न हों।

मस्अला 6—दाढ़ी मुंडाना या कतरवाना हराम है, हां एक मुट्ठी से जो ज़्यादा हो, उसका कतरवा देना दुरूस्त है। इसी तरह चारों तरफ़ से थोड़ा–थोड़ा ले लेना कि सुडौल और बराबर हो जाए, दुरूस्त है।

मस्अला 7—गाल की तरफ़ जो बाल बढ़ जाएं, उनको बराबर कर देना यानी ख़त बनवाना दुरूस्त है, इसी तरह अगर दोनों भवें कुछ ले ली जाएं और दुरूस्त कर दी जाएं, यह भी दुरूस्त है।

मस्अला 8—हलक़ के बाल मुंडवाना न चाहिए, मगर अबू यूसुफ़ रह० से नक़ल किया जाता है कि इसमें कुछ हरज नहीं।

मस्अला 9—गुद्दी के बाल बनवाने को फ़क़ीहों ने मकरूह लिखा

है।

मस्अला 10—ज़ीनत की ग़रज़ से सफ़ेद बाल का चुनना मना है, हां, मुजाहिद का दुश्मन पर रोब डालने के लिए दूर करना बेहतर है।

मस्अला 11—नाक के बाल उखाड़ना न चाहिए, कैंची से कतर डालना चाहिए।

मस्अला 12—सोना और पीठ के बाल बनाना जायज़ है, मगर अदब के ख़िलाफ़ और बेहतर के ख़िलाफ़ है।

मस्अला 13—नाक के नीचे के बाल को मर्द के लिए उस्तरे से दूर करना बेहतर है। मूंडते वक़्त शुरूआत नाक के नीचे से करे और हड़ताल वग़ैरह और दवा लगाकर ख़त्म करना जायज़ है और सुन्नत के मुताबिक़ यह है कि चुटकी या चिमटी से दूर करे, उस्तरा न लगे।

मस्अला 14—बग़ल के बाल में बेहतर तो यह है कि मोचने वग़ैरह से दूर किए जाएं और उस्तरे से मुंडाना भी जायज़ है।

मस्अला 15—इसके अलावा तमाम बदन के और बालों का मूंडना–रखना दोनों दुरूस्त है।

मस्अला 16—पैर के नाख़ून दूर करना भी सुन्नत है, हां, मुजाहिद के लिए लड़ाई के मुल्क में नाख़ून और मोंछ का न कटवाना मुस्तहब है।

मस्अला 17—हाथ के नाख़ून इस तर्तीब से कटवाना बेहतर है—दाहिने हाथ को शहादत की उंगली से शुरू करें और छंगुलिया तक तर्तीब के साथ कतरवा कर बायीं छंगुलिया पर ख़त्म करे। यह तर्तीब बेहतर है, इसके ख़िलाफ़ भी दुरूस्त है।

मस्अला 18—कटे हुए नाख़ून और बाल दफ़न कर देना चाहिए। दफ़न न करे तो किसी महफ़ूज़ जगह पर डाल दे, यह भी जायज़ है। मगर नजिस व गंदी जगह न डाले, इससे बीमार होने का अंदेशा है।

मस्अला 19—नाख़ून का दांत से काटना मकरूह है।[1] इससे बर्स (सफ़ेद दाग़) की बीमारी हो जाती है।

मस्अला 20—नापाकी की हालत में बाल बनाना, नाख़ून काटना, नाक के नीचे के बाल वग़ैरह दूर करना मकरूह है।

मस्अला 21—हर हफ़्ते में एक बार नाफ़ के नीचे के बाल, बग़ल,

1. पस यह कराहत डाक्टरी लिहाज़ से है, जिससे बचना अच्छा है।

लबें, नाख़ून वग़ैरह दूर करके, नहा–धोकर साफ़–सुथरा होना अफ़ज़ल है और सबसे बेहतर जुमा का दिन है कि जुमा की नमाज़ से पहले इन चीज़ों से छुटकारा लेकर नमाज़ को जाए। हर हफ़्ते न हो तो पंद्रहवें दिन सही, ज़्यादा से ज़्यादा चालीस दिन, इसके बाद रूख़सत नहीं। अगर चालीस दिन गुज़र गये और इन चीज़ों से पाकी हासिल न की, तो गुनाहगार होगा।

शुफ़आ का बयान

मस्अला 1—जिस वक़्त शफ़ीअ को बैअ की ख़बर पहुंची, अगर तुरन्त मुंह से न कहा कि मैं शुफ़आ लूंगा, तो शुफ़आ ग़लत हो जाएगा, फ़िर उस आदमी को दावा करना जायज़ नहीं, यहां तक कि अगर शफ़ी के पास ख़त पहुंचा और उसके शुरू में यह ख़बर लिखी है कि फ़लां मकान बेचा गया और उस वक़्त उसने ज़ुबान से न कहा कि मैं शुफ़आ लूंगा, यहां तक कि तमाम ख़त पढ़ा गया, तो उसका शुफ़आ ग़लत हो गया।

मस्अला 2—अगर शफ़ीअ ने कहा कि मुझको इतना रूपया दो तो अपने शुफ़आ के हक़ से हाथ खींच लूं तो इस शक्ल में चूंकि अपना हक़ ख़त्म करने पर राज़ी हो गया, इसलिए शुफ़आ तो ख़त्म हुआ, लेकिन चूंकि यह रिश्वत है, इसलिए यह रूपया लेना–देना हराम है।

मस्अला 3—अगर अब तक हाकिम ने शुफ़ा नहीं दिलाया था कि शफ़ीअ मर गया, उसके वारिसों को शुफ़आ न पहुंचेगा और अगर ख़रीदार मर गया तो शुफ़आ बाक़ी रहेगा।

मस्अला 4—शफ़ीअ को ख़बर पहुंची कि इतनी क़ीमत का मकान बिका है, उसने हाथ उठा लिया, फिर मालूम हुआ कि कम क़ीमत का बिका है, उस वक़्त शुफ़आ ले सकता है। इसी तरह पहले सुना था कि फ़लां शख़्स ख़रीदार है, फिर सुना कि कहीं, बल्कि दूसरा ख़रीदार हैं, या पहले सुना था कि आधा बिका है, फिर मालूम हुआ कि पूरा है। इन शक्लों में पहली बार हाथ उठा लेने से शुफ़आ ग़लत न होगा।

खेती या फल की बटाई का बयान

मस्अला 1—एक आदमी ने ख़ाली ज़मीन किसी को देकर कहा कि तुम उसमें खेती करो, जो पैदा होगा, उसको फ़लां निस्बत (अनुपात) से बांट लेंगे, यह मुज़ारअत (खेती की बटाई) है और जायज़ है।

मस्अला 2—एक आदमी ने बाग़ लगाया और दूसरे आदमी से कहा कि तुम इस बाग़ को सींचो, ख़िदमत करो, जो फल आयेगा चाहे एक–दो साल या दस–बारह साल तक, आधे–आध या तीन तिहाई बांट लिया जाएगा। यह मुसाक़ात (फल की बटाई) है और यह भी जायज़ है।

मस्अला 3—खेती में बटाई की इतनी शर्तें हैं—

1. ज़मीन का खेती करने लायक़ होना।
2. ज़मींदार व किसान का अक़्ल वाला, और बालिग़ होना,
3. खेती की मुद्दत का बयान करना,
4. बीज का बयान कर देना कि ज़मींदार का होगा या किसान का,
5. खेती की जिस का बयान कर देना कि गेहूं होंगे या जौ,
6. किसान के हिस्से का ज़िक्र हो जाना कि कुल पैदावार में कितना होगा।
7. ज़मीन को ख़ाली करके किसान के सुपुर्द करना।
8. ज़मीन की पैदावार में किसान और मालिक का शरीक रहना,
9. ज़मीन और बीज एक आदमी का होना, और बैल और मेहनत वग़ैरह दूसरे के होने या एक की सिर्फ़ ज़मीन और बाक़ी चीज़ें दूसरे से मुताल्लिक़ हों।

मस्अला 4—अगर इन शर्तों में से कोई शर्त न हो तो बटाई ख़राब हो जाएगी।

मस्अला 5—ख़राब बटाई में सब पैदावार बीज वाले की होगी और दूसरे आदमी को, अगर वह ज़मीन वाला है, तो ज़मीन का किराया दस्तूर के मुताबिक़ मिलेगा और अगर वह काश्तकार है तो मज़दूरी दस्तूर के मुताबिक़ मिलेगी, मगर यह मज़दूरी और किराया उससे ज़्यादा न दिया जाएगा, जो आपस में दोनों के ठहर चुका है। यानी अगर आमने–सामने बटाई ठहरी थी तो कुल पैदावार की आधे से ज़्यादा न मिलेगी।

मस्अला 6—बटाई के मामले के बाद अगर दोनों में से कोई शर्त के मुताबिक़ काम करने से इंकार कर दे तो उससे ज़बरदस्ती काम लिया जाएगा। अगर बीज वाला इंकार करे तो उसपर ज़बरदस्ती न की जाएगी।

मस्अला 7—अगर दोनों समझौता करने वालों में से कोई मर जाए तो बटाई ग़लत हो जाएगी।

मस्अला 8—अगर बटाई की तै मुद्दत गुजर जाए और खेती पक्की न हो तो किसान को ज़मीन का बदला उस जगह के दस्तूर के मुताबिक़ देना होगा, इन ज़्यादा दिनों के बदले में।

मस्अला 9—कुछ जगहों पर रस्म है कि बटाई की ज़मीन में जो ग़ल्ला पैदा होता है, उसको समझौते के मुताबिक़ आपस में बांट लेते हैं और जो जिंस चरी वग़ैरह पैदा होती है, उसको नहीं बांटते, बल्कि बीघों के हिसाब से काश्तकार से नक़द लगान वसूल कर लेते हैं, तो ज़ाहिर में तो यह ना जायज़ मालूम होता है, इसलिए कि यह शर्त बटाई के ख़िलाफ़ है। मगर इस तरह कि इस क़िस्म की जिंसों को पहले ही से बटाई से अलग कहा जाए और जाने–पहचाने मामलों के एतबार से पिछले मामले की यों तफ़्सील की जाए कि दोनों की मुराद यह थी कि फ़्लां जिंसो में बटाई का समझौता करते हैं और फ़्लां जिंसों में ज़मीन इजारे के तौर पर दी जाती है, इस तरह जायज़ हो सकता है, मगर इसमें दोनों फ़रीक़ों की रज़ामंदी शर्त है।

मस्अला 10—कुछ ज़मींदारों की आदत है कि बटाई के अपने हिस्से के अलावा काश्तकार के हिस्से में से कुछ हक़ मुलाज़िमों और कमीनों के भी निकालते हैं, तो अगर यह ठहरा लिया कि हम दो मन या चार मन इन हक़ों का लेंगे, यह तो नाजायज़ है और अगर इस तरह ठहराया कि जैसे एक मन में एक सेर, तो यह दुरूस्त है।

मस्अला 11—कुछ लोग इसका फ़ैसला नहीं करते कि क्या बोया जाएगा, फिर बाद में झगड़ा होता है, यह ना जायज़ है या तो उस बीज का नाम खुलकर ले ले या आम इजाज़त दे दे कि जो चाहे बोना।

मस्अला 12—कुछ जगह रस्म है कि काश्तकार ज़मीन में बीज बोकर दूसरे लोगों के सुपुर्द कर देता है और शर्त ठहरती है कि तुम इसमें मेहनत व ख़िदमत करो जो कुछ हासिल होगा, एक तिहाई, मान लो उन मेहनतियों का होगा, सो यह भी बटाई है, जिस जगह असली ज़मींनदार इस मामले को न रोकता हो, वहां जायज़ है, वरना जायज़ नहीं।

मस्अला 13—इस ऊपर की शक्ल में भी पिछली शक्ल की तरह जानी–पहचानी तफ़्सील है कुछ जिंस तो उन आलिमों को बांट देते हैं और कुछ में फ़ी बीघा कुछ नक़द दे देते हैं, पस इसमें भी ज़ाहिर में वही शुब्हा जायज़ न होने का और वही सूरत जायज़ होने की जारी है।

मस्अला 14—इजारा या बटाई में बारह साल कम व बेश मुद्दत तक ज़मीन से फ़ायदा उठाकर मौरूसियत का दावा करना, जैसा इस वक़्त रिवाज है, बिल्कुल ग़लत, हराम, जुल्म और हक़मारी है। मालिक की खुशी से इजाज़त हासिल किए बग़ैर उससे नफ़ा हासिल करना जायज़ नहीं, अगर ऐसा किया तो उसकी पैदावार भी ग़लत है और उसका खाना भी हराम है।

मस्अला 15—फलों की बटाई का हाल सब बातों में खेती की बटाई जैसा है।

मस्अला 16—अगर फल लगे हुए पेड़ पाल–पोस दे और फल ऐसे हों कि पानी देने और मेहनत करने से बढ़ते हों, तो दुरुस्त है और अगर उनका बढ़ना पूरा हो चुका हो तो फलों की बटाई दुरुस्त न होगी जैसे कि खेती की बटाई कि खेती तैयार होने के बाद दुरुस्त नहीं।

मस्अला 17—और फलों की बटाई का समझौता जब ख़त्म हो जाए तो फल सब पेड़ वाले के होंगे और काम करने वाले को मामूली मज़दूरी मिलेगी, जिस तरह खेती की बटाई में बयान हुआ।

नशेदार चीज़ों का बयान

मस्अला 1—जो चीज़ पतली बहने वाली नशेदार हो, चाहे शराब हो या ताड़ी या कुछ और उसके ज़्यादा पीने से नशा हो जाता हो, उसका एक क़तरा भी हराम है चाहे इस छोटी मिक़्दार से नशा न हो। इसी तरह दवा में इस्तेमाल करना चाहे पीने में या लेप करने में, मना है, चाहे वह नशेदार चीज़ अपनी असली सूरत में रहे, चाहे इस्तेमाल से किसी और शक्ल की हो जाए, हर हाल में मना है। यहां से अंग्रेज़ी दवाओं का हाल मालूम हो गया, जिनमें अक्सर इस क़िस्म की चीज़ें मिलायी जाती हैं।

मस्अला 2—और जो नशेदार हो, मगर पतली न हो, बल्कि शुरू से जमी हुई हो जैसे तम्बाकू, जायफ़ल अफीम वग़ैरह, उसका हुक्म यह है कि जो मिक़्दार अमली तौर पर नशा पैदा करे या उससे बड़ा नुक़्सान हो,

वह तो हराम है और जो मिक़्दार नशा न लाये, न उससे कोई नुक़्सान हो, वह जायज़ है।

शिर्कत का बयान

शिर्कत (साझेदारी) दो तरह की होती है—

एक अम्लाक की शिर्कत कहलाती है, जैसे एक आदमी मर गया और उसके तर्के में कुछ वारिस शरीक हैं या रूपया मिलाकर दो आदमियों ने एक चीज़ ख़रीदी या एक आदमी ने दो आदमियों की कोई चीज़ हिबा (भेंट) कर दी, उसका हुक्म यह है कि किसी को दूसरे शरीक की इजाज़त के बग़ैर किसी क़िस्म का इस्तेमाल जायज़ नहीं।

दूसरी शिर्कत अक़्दों (समझौतों) की है यानी दो आदमियों ने आपस में समझौता किया, हम तुम शिर्कत में व्यपार करेंगे, इस शिर्कत की क़िस्में और हुक्म ये हैं—

मस्अला 1—एक क़िस्म शिर्कत इनान हैं यानी दो आदमियों ने थोड़ा-थोड़ा रूपया जुटाया और फ़ैसला किया कि इसका कपड़ा या ग़ल्ला या और कुछ ख़रीद कर व्यापार करें, इसमें यह शर्त है कि दोनों की पूंजी नक़द हो, चाहे रूपया हो या अशर्फ़ी या पैसे, सो अगर दोनों आदमी कुछ सामान ग़ैर-नुक़द शामिल करके शिर्कत से व्यापार करना चाहें या एक की पूंजी नक़द हो और दूसरे का ग़ैर-नक़द, यह शिर्कत सही नहीं होगी।

मस्अला 2—शिर्कत इनान में जायज़ है कि एक का माल ज़्यादा हो, एक का कम, और नफ़ा की शिर्कत आपसी रज़ामंदी पर है यानी अगर यह शर्त ठहरे कि माल तो कम न ज़्यादा है, मगर नफ़ा बराबर बंटेगा या माल बराबर है मगर नफ़ा तीन तिहाई[1] होगा तो भी जायज़ है।

मस्अला 3—इस शिर्कत इनान में हर शरीक को शिर्कत के माल में हर क़िस्म का व्यापार से ताल्लुक़ रखने वाला इस्तेमाल है, बशर्ते कि यह समझौता के ख़िलाफ़ न हो, लेकिन एक शरीक का क़र्ज़ दूसरे से मांगा न जाएगा।

मस्अला 4— अगर शिर्कत क़रार देने के बाद कोई चीज़ ख़रीदी नहीं गयी और शिर्कत का माल सबका या एक आदमी का बर्बाद हो

---

1. यानी एक को दो तिहाई और दूसरे को तिहाई.

गया तो शिर्कत ग़लत हो जाएगी और एक आदमी भी कुछ ख़रीद चुका है और फिर दूसरे का माल हलाक हो गया तो शिर्कत ग़लत न होगी, माल दोनों का होगा और जितना इस माल में दूसरे का हिस्सा है, उस हिस्से के मुताबिक़ क़ीमत में से दूसरे शरीक से वसूल कर लिया जाए या जैसे एक आदमी के पास दस रुपए थे और दूसरे के पास पांच, दस रुपए वाले का माल ख़रीद लिया था और पांच रुपए वाले के रुपये बर्बाद हो गये, सो पांच रुपये वाला इस माल में तिहाई का शरीक है और दस रुपये का तिहाई नक़द वापस कर लेगा यानी तीन रुपए पांच आने चार पाई और अगले साल शिर्कत पर बिकेगा।

मस्अला 5—इस शिर्कत में दोनों आदमियों के माल का मिला देना ज़रूरी नहीं, सिर्फ़ ज़ुबानी इक़रार व क़ुबूल से यह शिर्कत हो जाती है।

मस्अला 6—नफ़ा निस्बत (अनुपात) से मुक़र्रर होना चाहिए यानी आधा–आधा या तीन–तिहाई जैसे अगर यों ठहरा कि एक आदमी को सौ रुपए मिलेंगे, बाक़ी दूसरे का, यह जायज़ नहीं।

मस्अला 7—एक क़िस्म शिर्कत ज़ाया है, इसे शिर्कत तफ़सील भी कहते हैं जैसे दो दर्ज़ी या दो रंगरेज़ आपस में समझौता करें कि जो काम जिसके पास आये, उसको क़ुबूल करे, और जो मज़दूरी मिले, आपस में आधे–आध या तीन तिहाई या चौथाई वग़ैरह[1] के हिसाब से बांट लें, यह जायज़ है।

मस्अला 8—जो काम एक ने ले लिया, दोनों पर लाज़िम हो गया, जैसे एक शरीक ने एक कपड़ा सीने के लिए लिया तो मालिक जिस तरह उस पर तक़ाज़ा कर सकता है, दूसरे पर भी कर सकता है। इसी तरह जैसे यह कपड़ा सीने वाला मज़दूरी मांग सकता है, दूसरा भी मज़दूरी ले सकता है, और जिस तरह असल को मज़दूरी देने से मालिक छुट्टी पा जाता है, इसी तरह दूसरे को दे दिया तो भी अपनी ज़िम्मेदारी से आज़ाद हो सकता है।

मस्अला 9—एक दूसरी क़िस्म शिर्कत की यह है यानी यह कि न इनके पास माल है, न कोई हुनर व पेशा है, सिर्फ़ आपस में क़रार पाया

---

1. यानी चार हिस्सों में से एक को तीन हिस्से और दूसरे को एक हिस्सा मिलेगा।

कि दुकानदारों से उधार माल लेकर बेचा करें। इस शिर्कत में भी हर शरीक दूसरे का वकील होगा और शिर्कत में जिस निस्बत से शिर्कत होगी, उसी निस्बत से नफ़ा का हक़ होगा यानी अगर ख़रीदी हुई चीज़ों को आधे का साझीदार बनाया गया, तो नफ़ा भी आधा–आधा बंटेगा और अगर माल को तीन तिहाई साझी का ठहराया गया तो नफ़ा भी तीन तिहाई बंटेगा।

ततिम्मा पांचवां हिस्सा बहिश्ती ज़ेवर ख़त्म हुआ। छठे, सातवें, आठ्वें, नवें, दसवें हिस्से का ततिम्मा नहीं है आगे बहिश्ती गौहर यानी ग्यारहवें हिस्से का ततिम्मा (बहिश्ती जौहर) आता है।

बहिश्ती जौहर

यानी ततिम्मा असली बहिश्ती गौहर

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

وَصَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلٰى خَيْرِ خَلْقِهٖ سَيِّدِنَا مُحَمَّدٍ وَّاٰلِهٖ وَسَلَّمَ اَجْمَعِيْنَ ۝

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम व सल्लल्लाहु तआला अला ख़ैरि ख़ल्क़िही सय्यिदिना मुहम्मदिंव्व आलिही व अज्मईन०

कुछ मौत के बारे में और क़ब्रों की ज़ियारत का बयान

1. अल्लाह के रसूल सल्ल० ने फ़रमाया कि मौत को ज़्यादा से ज़्यादा याद किया करो, इसलिए कि वह यानी मौत का याद करना गुनाह को दूर करता है और गंदी बातों, और बेकार चीज़ों से बेज़ार करता है। यानी जब इंसान मौत को ज़्यादा से ज़्यादा याद करेगा, तो दुनिया में जी न लगेगा और तबियत दुनिया के सामान से नफ़रत करेगी और ज़ाहिद हो जाएगा और आख़िरत की तलब और वहां की नेमतों की ख़्वाहिशों और वहां के दर्दनाक अज़ाब का डर होगा, इस तरह ज़रूरी बात है कि नेक कामों में तरक़्क़ी करेगा और गुनाहों से बचेगा।

तमाम नेकियों की जड़ 'ज़ुह्द' है यानी दुनिया से बेज़ार होना। जब तक दुनिया से और उसकी साज–सज्जा से ताल्लुक़ ख़त्म न होगा, अल्लाह की तरफ़ पूरा ध्यान नहीं रह सकता। यह बार–बार कहा जा चुका है कि दुनिया की कुछ बातें ज़रूरी हैं उनकी गिनती इबादत में होती है और वे दीन में शामिल हैं, दुनिया छोड़ने में वे शामिल नहीं हैं। बल्कि दुनिया की जिन चीज़ों को छोड़ने की बात की जाती है, वे वह हैं जो अल्लाह की याद से गाफ़िल कर दें, गो किसी दर्जे में सही हो। जिस दर्जे

की ग़फ़लत होगी, उसी दर्जे की वह छोड़ने लायक़ होगी। तो मालूम हुआ कि मौत की याद और उसका ध्यान रखना और उस नाज़ुक और शानदार सफ़र के लिए तैयारी करना हर अक़्ल वाले के लिए ज़रूरी है।

2. दूसरी हदीस में आया है कि जो चौबीस बार हर दिन मौत को याद करे तो वह शहीदों का दर्जा पायेगा, सो अगर तुम उसको याद करोगे, खुशहाली की हालत में, तो वह याद करना उस खुशहाली में कमी लायेगा या जब खुशहाल आदमी मौत का ध्यान रखेगा तो उस खुशहाली की उसके नज़दीक कोई क़ीमत न रहेगी, जो ग़लत की वजह है, क्योंकि यह समझेगा कि बहुत जल्द मुझसे जुदा होने वाला है, इससे ताल्लुक़ जोड़ना नफ़ा का सौदा नहीं, बल्कि घाटे का सौदा है, क्योंकि जो चीज़ प्यारी होती है, उसकी जुदाई तक्लीफ़ की वजह होती है। हां, वह काम कर लें, जो वहां काम आये जहां हमेशा रहता है, पस इन विचारों से माल का कुछ बुरा असर न पड़ेगा और अगर तुम उसे तंगी की हालत में याद करोगे तो वह (याद करना) तुमको राज़ी कर देगा, तुम्हारी गुज़र–बसर (यानी जो कुछ भी तुम्हारी थोड़ी सी रोज़ी है उसी) से राज़ी हो जाओगे, कि कुछ दिनों का ठहरना है, फिर क्यों ग़म करें। इसका बदला अल्लाह तआला बहुत जल्द बहुत उम्दा देंगे।

3. अल्लाह के रसूल सल्ल० ने फ़रमाया, कि बेशक ज़मीन हर दिन सत्तर बार पुकारती है, ऐ आदमी की औलाद ! खा लो जो चाहो और जिससे चाहो, चाव रखो, पस खुदा की क़सम ! अल–बत्ता मैं ज़रूर तुम्हारे मांस और तुम्हारी हड्डियां खाऊंगी, अगर शुब्हा हो कि आवाज़ ज़मीन की हम सुनते नहीं तो हमको क्या फ़ायदा, जवाब यह है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० के इर्शाद से जब यह मालूम हो गया कि ज़मीन इस तरह कहती है तो जैसा ज़मीन की आवाज़ से दुनिया दिल से सर्द हो जाती है, इसी तरह अब भी असर होना चाहिए। किसी चीज़ के इल्म के लिए यह क्या ज़रूरी है कि इसकी आवाज़ ही से इल्म हो, बल्कि मक़्सद तो उसका इल्म होना है, चाहे किसी तरीक़े से ही। जैसे, कोई आदमी दुश्मन के लश्कर को आता देखकर जैसा घबराता है और उससे बचने का सामान करता है, इसी तरह किसी मोतबर आदमी के ख़बर देने से भी घबराता है, क्योंकि दोनों शक्लों में उसको दुश्मन की फ़ौज के आने का इल्म हो गया, जो घबराने और बचाव करने के सामान की वजह है। और कोई ख़बर देने वाला प्यारे नबी सल्ल० से बढ़कर बल्कि आपके बराबर भी नहीं हो सकता, पस जब और लोगों के आने का एतबार किया जाता है तो आपके फ़रमाये हुए का बेहतर तरीक़े से

एतबार होना चाहिए, क्योंकि आप निहायत सच्चे हैं।

4. हदीस में है, 'कफ़ा बिल् मौति वाइज़न व बिल् यक़ीनि ग़िनन०' यानी मौत वाइज़ के एतबार से काफ़ी है (यानी मौत का वाज़ काफ़ी है कि उसकी याद रखे, उसको दुनिया से बे-चाव करने के लिए और किसी चीज़ की ज़रूरत नहीं) और रोज़ी मिलने का यक़ीन ग़िना के एतबार से काफ़ी है (यानी जब इंसान को अल्लाह तआला के वायदे पर यक़ीन है कि हर जानदार को उस अन्दाज़े से जो उसके हक़ में बेहतर है, रोज़ी ज़रूर दी जाती है, तो यह काफ़ी ग़नी (खुशहाल) है, ऐसा आदमी परेशान नहीं हो सकता, बल्कि जो माल से ग़िना हासिल होता है उससे यह ऊंचा है कि उसकी फ़ना नहीं और माल को फ़ना है, क्या मालूम है कि जो माल इस वक़्त मौजूद है, वह कल को भी बाक़ी रहेगा या नहीं और अल्लाह के वायदे को बक़ा है, जितनी रोज़ी का वायदा है, ज़रूर मिलेगी, खूब समझ लो।

5. हदीस में है कि जो आदमी पसंद करता है अल्लाह तआला से मिलना, तो अल्लाह तआला भी उससे मिलना चाहते हैं और जो अल्लाह तआल से मिलना ना-पसंद करता है और दुनिया के माल-दौलत, साज-सज्जा से जुदाई नहीं चाहता, तो अल्लाह तआला उससे मिलना ना-पसंद फ़रमाते हैं। और ज़ाहिर है कि बग़ैर मौत के अल्लाह तआला से मुलाक़ात ना-मुम्किन है पस मौत, चूंकि महबूब से मुलाक़ात का ज़रिया है, इसलिए मोमिन को महबूब होनी चाहिए और ऐसे सामान पैदा करे जिससे मौत ना-गवार न हो यानी नेक अमल करे ताकि जन्नत की खुशी में मौत महबूब माल हों और गुनाहों से बचे ताकि मौत ना-पसंदीदा न मालूम हो, क्योंकि गुनाहगार को बड़े अज़ाब के डर की वजह से मौत से नफ़रत होती है, इसलिए मौत के बाद अज़ाब होता है। नेक-बख़्त को भी, अगरचे अज़ाब का डर होता है और जन्नत की भी उम्मीद होती है, मगर तजुर्बा है कि नेक-बख़्त को बावजूद उस घबराहट के, मौत से नफ़रत नहीं होती और परेशानी नहीं होती और उम्मीद का असर ख़ौफ़ के मुक़ाबले में ग़ालिब हो जाता है। इसी तरह यह भी तजुर्बा है कि काफ़िर व ना-फ़र्मान पर उम्मीद का असर ग़ालिब नहीं होता, इसलिए वह मौत से घबराता है।

6. हदीस में है कि जो मुर्दे को नहलाये, पस उनको ढक ले (यानी कोई बुरी बात, जैसे शक्ल का बिगड़ जाना वग़ैरह ज़ाहिर हुआ, और इसके बारे में पूरे हुक्म बहिश्ती ज़ेवर दूसरे हिस्से में गुज़र चुके हैं, वह ज़रूर देख लेना चाहिए) छिपा लेगा अल्लाह तआला उसके गुनाह (यानी आख़िरत में

गुनाहों की वजह से उसकी रूसवाई न होगी) और जो कफ़न दे मुर्दे को तो अल्लाह तआला उसको सुन्दुस (जो एक बारीक रेशमी कपड़े का नाम है) पहनाएगा आख़िरत में। कुछ जाहिल मुर्दे के काम से डरते हैं और उनको मनहूस समझते हैं, यह सख़्त बे-हूदा बात है। क्या उनको मरना नहीं है कि ख़ूब मुर्दे की ख़िदमत का अंजाम दे और बड़ा सवाब ले। और अपना मरना याद करे कि अगर हमसे भी लोग ऐसे बचें जैसे कि हम बचते हैं तो हमारे जनाज़े की क्या हालत होगी और अज़ाब नहीं कि अल्लाह तआला बदला देने को उसको ऐसे ही लोगों के हवाले कर दें।

7. हज़रत अली रज़ि० फ़रमाते हैं कि फ़रमाया अल्लाह के रसूल सल्ल० ने जो गुस्ल दे मुर्दे को और उसे कफ़न दे और उसके हुनूत लगाये (हुनूत एक क़िस्म की ख़ुश्बू का नाम है, इसके बजाए काफ़ूर है) और उठाये उसके जनाज़े को, उस पर नमाज़ पढ़े और न खोले उसकी वह (बुरी) बात, जो देखे, वह दूर हो जाएगा अपने गुनाहों से इस तरह जैसे कि उस दिन जबकि उसकी मां ने उसको जना था, गुनाहों से दूर था (यानी माफ़ हो जाएंगे)।

8. हदीस में है जो नहलाये मुर्दे को, पस छिपा ले उसके ऐब को, तो उसके लिए बड़े (यानी छोटे गुनाहों में जो बड़े हैं) माफ़ कर दिये जाएंगे और जो उसे कफ़न दे, अल्लाह तआला जन्नत का सुन्दुस और इस्तब्रक़ पहना देगा और जो मय्यत के लिए क़ब्र खोदे, पस उसको उसमें दफ़न करे, जारी फ़रमायेगा अल्लाह तआला उस शख़्स के लिए उतना अज्र जो उस मकान के सवाब के जैसा होगा, जिसमें क़ियामत तक उस आदमी को रखता (यानी उसको इतना बदला मिलेगा, जितना कि उस मुर्दे को रहने के लिए मकान उधार देने का मिलता) ध्यान रहे कि जितनी बड़ाई और सवाब मुर्दे की ख़िदमत का उस वक़्त तक बयान दिया गया, सब इस शक्ल में है, जबकि सिर्फ़ अल्लाह तआला के लिए ख़िदमत की जाए। दिखावा, मज़दूरी वग़ैरह मक़्सद न हो और अगर मज़दूरी ली तो सवाब न होगा, अगरचे मज़दूरी लेना जायज़ है, लेकिन मज़दूरी का जायज़ होना दूसरी बात है और सवाब दूसरी बात। और तमाम दीनी काम जो मज़दूरी लेकर किये जाते हैं, कुछ तो ऐसे हैं, जिन पर मज़दूरी लेना हराम है वग़ैरह मक़्सद न हो और अगर मज़दूरी ली तो सवाब न होगा, मज़दूरी और उनका सवाब भी नहीं होता और कुछ ऐसे हैं जिन पर मज़दूरी लेना जायज़ है और माल हलाल है, मगर सवाब नहीं होता। ख़ूब छान-फटक करके इस पर अमल करना चाहिए।

यह मौक़ा तफ़्सील का नहीं है, मगर इन बातों के बारे में एक मुफ़ीद

ज़रूरी बात अर्ज़ करता हूं ताकि आंख वाले तंबीह पकड़।

वह यह कि जिन दीनी कामों पर मज़दूरी लेना जायज़ है, उनके करने से बिल्कुल सवाब नहीं मिलता, मगर कुछ शर्तों के साथ सवाब भी मिलेगा, ख़ूब गौर से सुनो।

कोई गरीब आदमी जिसकी बसर औकात और ज़रूरी ख़र्चों को चलाने के लिए, अलावा इस मज़दूरी के और कोई ज़रिया नहीं, वह दीनी काम करके, ज़रूरत पर मज़दूरी ले और सच्ची नीयत से यह सोचे कि अगर रोज़ी का कोई और ज़रिया होता, तो मैं हरगिज़ मज़दूरी न लेता। और अल्लाह वास्ते काम करता या अल्लाह तआला कोई ज़रिया ऐसा पैदा करें तो मैं मज़दूरी छोड़ दूं और मुफ़्त काम करूं, तो ऐसे आदमी को दीनी ख़िदमत का सवाब मिलेगा, क्योंकि उसकी नीयत दीन का फैलाना है, मगर रोज़ी की ज़रूरत मजबूर करती है और चूंकि रोज़ी का हासिल करना भी ज़रूरी है और उसका हासिल करना भी अल्लाह के हुक्म का अदा करना है, इसलिए इस नीयत यानी रोज़ी हासिल करने का भी सवाब मिलेगा और नीयत सही होने से दोनों सवाब मिलेगा, मगर इन कैदों पर गहरा सोच–विचार करके अमल करना चाहिए। ख़ामख़ाह ख़र्च बढ़ा लेना और गैर–ज़रूरी ख़र्चों को ज़रूरी समझ लेना और उसका बहाना करना, उस गैब के जानने वाले के यहां नहीं चलेगा, वह दिल के इरादों को ख़ूब जानता है। ये बातें ख़ूब सोच–विचार और छान–फटक कर लिखी गयी हैं। शामी वगैरह से ये बातें ली गयी हैं और ज़ाहिर है कि जिसमें तवक्कुल (अल्लाह पर भरोसा करना) की शर्तें जमा हों और फिर वह नेक काम पर मज़दूरी ले, तो अगर वह इन तीनों को जमा कर ले, जिनके मिलने से सवाब लिखा गया है, तब भी उसको सवाब मिलेगा, मगर तवक्कुल की बड़ाई ख़त्म हो जाएगी।

मुसलमानों को, ख़ासतौर से उनके इल्म वालों को इस बात में ख़ास तवज्जोह व एहतियात की ज़रूरत है कि सबसे बड़े पैदा करने वाले के दीन की ख़िदमत करके उसकी ख़ुशी हासिल न करना और बिना किसी सख़्त मजबूरी के एक छोटे और जल्द ख़त्म होने वाले नफ़ा पर नज़र करना, क्या अल्लाह तआला के साथ किसी दर्जे की बे–मुरव्वती नहीं है। हमारा काम बढ़ावा देना और गलत फ़हमी को दूर करना है और जायज़ कामों में तंगी का हमको हक़ हासिल नहीं है, मगर इतना ज़रूर कहेंगे कि सवाब की हमको सख़्त ज़रूरत है।

9. हदीस में है कि पहला तोहफ़ा मोमिन का यह है कि गुनाह[1] बख़्श दिए जाते हैं उस आदमी के, जो उसके जनाज़े की नमाज़ पढ़ता है।

10. हदीस में है कि कोई मुसलमान ऐसा नहीं है कि वह मर जाए और उसके जनाज़े पर तीन सफ़ें मुसलमानों की नमाज़ पढ़ें, मगर वाजिब कर लिया उसने जन्नत को (यानी उसकी बख़्शिश हो जाएगी)।

11. हदीस में है कि नहीं है कोई ऐसा मुसलमान कि वह मर जाए, पस खड़े हों, यानी नमाज़ पढ़ें उसके जनाज़े पर चालीस मर्द ऐसे, जो शिर्क न करते हों अल्लाह तआला के साथ, मगर बात यह है कि वे नमाज़ पढ़ने वाले शफ़ाअत क़ुबूल किए जाएंगे उस मुर्दे के सिलसिले में (यानी जनाज़े की नमाज़, जो हक़ीक़त में दुआ है मय्यत के लिए, क़ुबूल कर ली जाएगी और उस मुर्दे की बख़्शिश हो जाएगी)।

12. हदीस में है कि मुसलमान ऐसा नहीं, जिस (जनाज़े की नमाज़) पर एक जमाअत नमाज़ पढ़े, मगर यह बात है कि वे लोग शफ़ाअत क़ुबूल किये जाएंगे उस (मय्यत के बारे) में।

13. हदीस में है कि नहीं है कोई मुर्दा कि उस पर इबादत गुज़ार मुसलमानों की एक जमाअत नमाज़ पढ़, पस वे नमाज़ी सिफ़ारिश करें यानी दुआ पढ़ें उसके लिए, मगर यह बात है कि वे सिफ़ारिश क़ुबूल किये जाएंगे इसके बारे में यानी उनकी दुआ क़ुबूल होगी और उस मुर्दे की मग़्फ़िरत हो जाएगी।

14. हदीस में है कि जो चारपाई (जनाज़े) के चारों पास उठाए तो उसके चालीस बड़े गुनाह बख़्शे जाएंगे। (इसके बारे में ऊपर लिखा जा चुका है)

15. हदीस में है कि जनाज़े वालों में (यानी जनाज़े में जो साथ होते हैं) अफ़ज़ल वह है, जो इनमें उस जनाज़े के साथ बहुत ज़्यादा ज़िक्र करे और जो न बैठे यहां तक कि जनाज़ा ज़मीन पर रख दिया जाए और ज़्यादा पूरा करने वाला पैमाना (सवाब) का वह है जो तीन बार उस पर मुट्ठी भर कर ख़ाक डाले (यानी ऐसे शख़्स को ख़ूब सवाब मिलेगा)।

16. हदीस में है कि अपने मुर्दों को नेक क़ौम के दर्मियान में दफ़न करो, इसलिए कि बेशक मुर्दा बुरे पड़ोसी की वजह से तक्लीफ़ में रहता है। (यानी फ़ासिकों और काफ़िरों के दर्मियान होने से मुर्दे को तक्लीफ़ होती है

---

1. यानी छोटे गुनाह।

और तक्लीफ़ की शक्ल यह है कि फ़ासिक़ों और काफ़िरों पर अज़ाब होता है और वे इसकी वजह से रोते चिल्लाते हैं। इस शोर–हंगामे की वजह से तक्लीफ़ होती है) जैसा कि तक्लीफ़ पाता हैं ज़िंदा बुरे पड़ोसी की वजह से।

17. हदीस में है कि जनाज़े के साथ 'ला इलाह इल्लल्लाह' (لَآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰه) ज़्यादा से ज़्यादा पढ़ो। जनाज़े के साथ अगर ज़िक्र करे तो धीमी आवाज़ से करे, इसलिए कि ज़ोर से जनाज़े के साथ ज़िक्र करना शामी में मकरूह लिखा है।

18. सही हदीस में है, जिसको हाकिम ने रिवायत किया है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने फ़रमाया, तुमको क़ब्रों की ज़ियारत से मैंने मना किया था, एक ख़ास वजह से, जो अब बाक़ी नहीं रही। आगाह हो जाओ पस अब ज़ियारत करो उनकी यानी क़ब्रों की, इसलिए कि क़ब्रों की ज़ियारत नर्म करती है दिल को और दिल की नर्मी से नेकियां अमल में आती हैं और रूलाती है हर आंख को और याद दिलाती है आख़िरत को और तुम क़ब्र पर ग़ैर शरअी बात न कहो।

19. हदीस में है, मैंने तुमको मना किया था क़ब्रों की ज़ियारत से। पस उनकी ज़ियारत करो, इसलिए कि ज़ियारत बे–चाव करती है दुनिया से और याद दिलाती है आख़िरत की। क़ब्रों की ज़ियारत सुन्नत है, ख़ासकर जुमा के दिन।

20. हदीस में है कि जो हर जुमा को मां–बाप की या बाप की या मां की क़ब्र की ज़ियारत करे तो उसकी मग़्फ़िरत की जाएगी और वह मां–बाप का ख़िदमतगुज़ार लिख दिया जाएगा, (नामा–ए–आमाल में)। —बैहक़ी

मगर क़ब्र का तवाफ़ करना, बोसा लेना मना है, चाहे किसी नबी की क़ब्र हो या वली की या किसी की हो और क़ब्रों पर जाकर पहले इस तरह सलाम करे— اَلسَّلَامُ عَلَيْكُمْ يَا اَهْلَ الْقُبُوْرِ مِنَ الْمُؤْمِنِيْنَ وَالْمُسْلِمِيْنَ يَغْفِرُ اللّٰهُ لَنَا وَلَكُمْ وَاَنْتُمْ سَلَفُنَا وَنَحْنُ بِالْاَثَرِ

अस्सलामु अलैकुम या अह्लल् क़ुबूरि मिनल् मुअ्मिनीन वल् मुस्लिमीन यग़्फ़िरूल्लाहु लना व लकुम व अन्तुम स लफ़ुना व नह्नु बिल् अस्त्रि०

जैसा कि तिर्मिज़ी और तबरानी में ये लफ़्ज़ 'सलामि मौता' के लिए आए हैं और क़िब्ले की तरफ़ पीठ करके और मय्यत की तरफ़ मुंह करके क़ुरआन मजीद पढ़े, जितना भी हो सके।

21. हदीस में है कि जो क़ब्रों पर गुज़रे और सूरः इख़्लास ग्यारह बार पढ़ कर मुर्दे को बख़्शे, तो मुर्दों की गिनती के मुताबिक़ उसको भी सवाब दिया जाएगा।

22. हदीस में है कि जो क़ब्रस्तान में दाख़िल हो, फिर सूरः अल्हम्दु शरीफ़ और सूरः इख़्लास, सूरः तकासुर पढ़कर उसका सवाब क़ब्रस्तान वालों को बख़्शे, उसकी शफ़ाअत करेंगे।

23. हदीस में है कि जो कोई सूर : यासीन क़ब्रस्तान में पढ़े तो मुर्दों के अज़ाब में अल्लाह तआला कमी करेगा और पढ़ने वाले को उन मुर्दों की गिनती के बराबर सवाब मिलेगा।

ये तीनों हदीसें, सनद के साथ, नीचे अरबी में लिख दी हैं।

24. हदीस में है कि नहीं है कोई मर्द कि गुज़रे किसी ऐसे आदमी की क़ब्र पर, जिसे वह दुनिया में पहचानता था, फिर उस पर सलाम करे, मगर यह बात है कि वह मय्यत उसको पहचान लेती है और उसको सलाम का जवाब देती है तो इस जवाब को सलाम करने वाला नहीं सुनता।

तीन हदीसें

اخرج ابو محمد السمرقندی فی فضائل قل هو الله احد عن علی مرفوعا من مر علی المقابر وقرا قل هو الله
احد احد عشر مرة ثم وهب اجره للاموات اعطی من الاجر بعدد الاموات

1. बयान किया अबू मुहम्मद समरक़ंदी ने 'क़ुलहुवल्लाहु अहद' के फ़ज़ाइल में हज़रत अली रज़ि० से मर्फ़ूअन रिवायत करके कि जो आदमी गुज़रे क़ब्रस्तान में और पढ़े ग्यारह बार 'क़ुलहुवल्लाहु' और फिर उसका सवाब बख़्श दे मुर्दों को, तो उसको इतना सवाब मिलेगा, जितने उस क़ब्रस्तान में मुर्दे दफ़न हुए हैं।

اخرج ابو القاسم سعد بن علی الزنجانی فی فوائده عن
ابی هریرة مرفوعا من دخل المقابر ثم قرا فاتحة الكتاب وقل هو الله احد والهكم التكاثر ثم قال اللهم
انی جعلت ثواب ما قرات من كلامك لاهل المقابر من المؤمنین والمؤمنات كانوا شفعاء له الی الله تعالی

2. अबुल क़ासिम साद बिन अली ज़ंजानी हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से मर्फ़ूअन रिवायत करते हैं कि जो आदमी दाख़िल हो क़ब्रस्तान में और पढ़े 'अल्हम्दु शरीफ़' और 'क़ुल हुवल्लाहु अहद' और 'अल्हाकुमुत्तकासुर' फिर कहे, ऐ अल्लाह ! मैंने तेरे कलाम की क़िर्अत का सवाब इसी क़ब्रस्तान के

ईमानदार मर्द और औरतों को बख़्शा तो वे सब अल्लाह तआला के यहां उसकी शफ़ाअत करने वाले होंगे।

اخرج عبد العزيز صاحب الخلال بسنده عن
انس رضي الله عنه ان رسول الله صلى الله عليه وسلم قال من دخل المقابر فقرأ سورة يٰسين خفف الله عنهم وكان
له بعدد من فيها حسنات هذه الاحاديث اوردها الامام السيوطي في شرح الصدور بشرح احوال الموتى
والقبور ص ١٢٣ مطبوعة مصر قال المعلق على رسالة بهشتي گوهر الحديث الاول والثالث يدلان ظاهرا على
ان الثواب الحاصل من الاحياء للاموات يصل اليهم على السواء ولا يتجزى ولا يتحمل

3. बयान किया अब्दुल अज़ीज़ साहब ख़िलाल ने अपनी सनद से हज़रत अनस रज़ि० के वास्ते से कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने फ़रमाया, जो क़ब्रस्तान में आये, फिर सूरः यासीन पढ़े, तो ख़ुदा उसकी बरकत से क़ब्र वालों के अज़ाब में कमी कर देता है और उनके पढ़ने वाले को उतना सवाब मिलता है, जितने इस क़ब्रस्तान में मुर्दे हैं।

इन हदीसों को बयान किया जलालुद्दीन सुयूती रह० ने किताब शर्हुस्सुदूर पृ० 123, प्रकाशन मिस्त्र में।

मस्अले

सवाल—जमाअत में इमाम के क़िर्अत शुरू करने के बाद कोई आदमी आकर शरीक हो तो अब उसको 'सना' यानी 'सुब्हानकल्लाहुम्म' पढ़ना चाहिए या नहीं। अगर चाहिए तो नीयत बांधने के साथ ही या किस वक़्त ?

जवाब—नहीं पढ़ना चाहिए।

सवाल—कोई आदमी रुकूअ में इमाम के साथ शरीक हुआ, अब रक्अत तो उसको मिल गयी, मगर सना फ़ौत हो गयी, अब उसको दूसरी रक्अत में सना पढ़नी चाहिए या किसी और रक्अत में या पढ़ने की ज़िम्मेदारी नहीं रही ?

जवाब—कहीं न पढ़े।

सवाल—रुकूअ की तस्बीह भूले से सज्दे में कही यानी बजाए 'सुब्हान रब्बियल अअ्ला' के 'सुब्हान रब्बियल् अज़ीम' कहता रहा या इसके उलट कहता रहा, तो सज्दा सह्व तो न होगा या नमाज़ में कोई ख़राबी तो न होगी ?

जवाब—इससे सुन्नत छूटी, इससे सज्दा सह्व ज़रूरी नहीं होता।

सवाल—रुकूअ की तस्बीह सज्दा सह्व में कह चुका था और फिर

सज्दे ही में ख़्याल आया कि यह रूकूअ की तस्बीह है तो अब सज्दा की तस्बीह याद आने पर कहना चाहिए या रूकूअ की तस्बीह काफ़ी होगी।

जवाब—अगर इमाम या मुंफ़रिद है तो सज्दा की तस्बीह कह ले और अगर मुक़्तदी है तो इमाम के साथ उठ खड़ा हो।

सवाल—नमाज़ में जम्हाई जब न रूके तो मुंह में हाथ दे देना चाहिए या नहीं ?

जवाब—जब वैसे न रूके तो हाथ से रोक लेना जायज़ है।

सवाल—टोपी अगर सज्दे में गिर पड़े, तो उसे फिर हाथ से उठा कर सर पर रख लेना चाहिए या नंगे सर नमाज़ पढ़े।

जवाब—सर पर रख लेना बेहतर है, अगर अमले कसीर की ज़रूरत न पड़े।

सवाल—नमाज़ में सूरः फ़ातिहा के बाद जब कोई सूरः शुरू करे तो बिस्मिल्लाह कह कर शुरू करे और अगर दो रूकूअ वाली सूरः पढ़े तो शुरू सूरः पर बिस्मिल्लाह कहे और दूसरी रक्अत में जब उसी सूरः का दूसरा रूकूअ करे तो बिस्मिल्लाह कहे या नहीं।

जवाब—सूरः के शुरू में बेहतर है और रूकूअ पर नहीं। वल्लाहु आलम।

—कत्बा अशरफ़ अली थानवी

मस्अला 1—इमाम को बग़ैर किसी ज़रूरत के मेहराब के सिवा और किसी जगह मस्जिद में खड़ा होना मक्रूह है, मगर मेहराब में खड़े होने के वक़्त पैर बाहर होने चाहिए।

मस्अला 2—जो दावत नाम करने के लिए की जाए, तो उसका क़ुबूल न करना बेहतर है।

मस्अला 3—गवाही पर मुआवज़ा लेना हराम है। लेकिन गवाह को अपनी और अपने बाल–बच्चों की ज़रूरत भर का ख़र्चा लेना जायज़ है, उतने वक़्त के लिए, जो ख़र्च हुआ है, जबकि उसके पास कोई आमदनी का ज़रिया न हो।

मस्अला 4—अगर दावत की मज्लिस में शरीअत के ख़िलाफ़ कोई बात हो, सो अगर वहां जाने से पहले मालूम हो जाए तो दावत क़ुबूल न करे, हां, अगर पक्की उम्मीद हो कि मेरे जाने से मेरी शर्म और लिहाज़ की वजह से वह बात रोक दी जाएगी, तो जाना बेहतर है और अगर

मालूम न था और चला गया और वहां जाकर देखा, सो अगर यह आदमी दीन की पैरवी कराने वाला हो, तब तो लौट आये और अगर पैरवी कराने वाला नहीं है और आम लोगों में से है, तो अगर ठीक खाने के मौक़े पर शरीअत के ख़िलाफ़ वह बात है, तो वहां न बैठे और अगर दूसरे मौक़े पर है तो ख़ैर, मजबूरी के साथ बैठ जाए और बेहतर है कि मकान मालिक को समझाये और अगर इतनी हिम्मत न पाये तो सब्र करे और दिल से उसे बुरा समझे। और अगर कोई आदमी दीन की पैरवी कराने वाला न हो, लेकिन असर वाला हो कि लोग उसके कामों की पैरवी करते हों, तो वह भी इस मस्अले में दीन की पैरवी कराने वाले के हुक्म में है।

मस्अला 5—कुछ सूदी बैंकों में रूपया अमानत के तौर पर जमा कर देते हैं और उसका नफ़ा नहीं लेते, सो चूंकि यक़ीनी तौर पर बैंक में वही रूपया महफ़ूज़ नहीं रहता, कारोबार में लगातार लगा रहता है, इसलिए वह अमानत नहीं रहता, बल्कि क़र्ज़ हो जाता है, और अगर उस आदमी ने सूद नहीं लिया, मगर सूद लेने वालों की मदद क़र्ज़ से की और गुनाह की मदद गुनाह है, इसलिए रूपया दाख़िल करना भी दुरूस्त नहीं यानी यह जमा करना भी ऐसा ही है, जैसे सूद लेने के लिए जमा करना।

मस्अला 6—जो आदमी पाख़ाना कर रहा हो, पेशाब कर रहा हो, उसको सलाम करना हराम है और उसका जवाब देना भी जायज़ नहीं।

मस्अला 7—अगर कोई आदमी कुछ लोगों में किसी का नाम लेकर सलाम करे, जैसे यों कहे, अस्सलाम अलैक या ज़ैद, तो जिसको सलाम किया है, उसके सिवा कोई और जवाब दे दे, तो वह जवाब न समझा जाएगा और जिसको सलाम किया है, उसके ज़िम्मे जवाब फ़र्ज़ बाक़ी रहेगा। अगर जवाब न देगा तो गुनाहगार होगा, मगर इस तरह सलाम करना सुन्नत के ख़िलाफ़ है। सुन्नत का तरीक़ा यह है कि जमाअत में किसी को ख़ास कर न करे और 'अस्सलामु अलैकुम' कहे। और अगर किसी एक ही आदमी को सलाम करना हो, जब भी यही लफ़्ज़ इस्तेमाल करे। और इसी तरह जवाब में भी, जवाब चाहे जिसको दिया हो। एक ही आदमी हो या ज़्यादा हों, 'वअलैअकुमस्सलामु' कहना चाहिए।

मस्अला 8—सवार को पैदल चलने वाले को सलाम करना चाहिए और जो खड़ा हो, वह बैठे हुए को सलाम करे और थोड़े से लोग बहुत से लोगों को सलाम करें और छोटा बड़े को सलाम करे और इन सब शक्लों

में अगर उलटा करे, जैसे बहुत से लोग थोड़ों को और बड़ा छोटे को सलाम करे, तो यह भी जायज़ है, मगर बेहतर वही है जो पहले बयान हुआ।

मस्अला 9—ग़ैर–महरम मर्द के लिए किसी जवान या दर्मियानी उम्र की औरत को सलाम करना मना है, इसी तरह ख़तों में लिखकर भेजना या किसी के ज़रिए से कहला कर भेजना और इसी तरह ना–महरम औरतों के लिए मर्दों को सलाम करना भी मना है, इसलिए इन शक्लों में बड़े फ़ित्ने का डर है और फ़ित्ने की वजह भी फ़ित्ना ही होता है, हां अगर किसी बूढ़ी औरत या बूढ़े मर्द को सलाम किया जाए तो हरज नहीं, मगर ग़ैर–महरमों से ऐसे ताल्लुक़ात रखना ऐसी हालत में भी बेहतर नहीं, हां, जहां कोई ख़ास बात इसका तक़ाज़ा कर रही हो और फ़ित्ने का ख़तरा न हो, तो वह और बात है।

मस्अला 10—जब तक कोई ख़ास ज़रूरत न हो, काफ़िरों को सलाम न करे और इसी तरह फ़ासिक़ों को भी और जब कोई बड़ी ज़रूरत हो तो हरज नहीं और अगर उसके सलाम और कलाम करने से उसके हिदायत पर आने की उम्मीद हो तो भी सलाम कर ले।

मस्अला 11—जो लोग इल्मी बातें कर रहे या मस्अले की बात–चीत करते हों, पढ़ते–पढ़ाते हों या उनमें से एक इल्मी बात–चीत कर रहा हो और बाक़ी सुन रहे हों, तो उनको न सलाम करे, अगर करेगा तो गुनाहगार होगा और इस तरह तक्बीर और अज़ान के वक़्त भी (मुअज़्ज़िन या ग़ैर–मुअज़्ज़िन को) सलाम करना मकरूह है और सही यह है कि इन तीनों शक्लों में जवाब न दे।

दूसरा ततिम्मा बहिश्ती गौहर

मां–बाप के हक़ूक़

(बहिश्ती गौहर का हाशिया लिखने वाले कहते हैं कि यह मज़मून जो 'दूसरा ततिम्मा' के नाम से दिया जाता है, हज़रत मौलाना अशरफ़ अली थानवी साहब का लिखा हुआ है, जिसमें मां–बाप के हुकूक़ के बारे में लिखा गया है। बहिश्ती ज़ेवर, पांचवां हिस्सा में, 'हुकूक़'—मां–बाप के हुकूक़ का भी कुछ ज़िक्र हुआ है, लेकिन चूंकि वह मिला–जुला था औरतों और मर्दों के दर्मियान और इस मौजूदा मज़मून का ताल्लुक़ ज़्यादातर मर्दों से है, इसलिए बहिश्ती गौहर से उसका मिला देना मुनासिब मालूम हुआ, पस इसको पांचवां हिस्सा बहिश्ती ज़ेवर का ततिम्मा समझना चाहिए। मज़मून इस तरह है।) بسم الله الرحمن الرحيم. نحمده ونصلي على رسوله الكريم قال الله تعالى

إن الله يأمركم أن تؤدوا الأمانات إلى أهلها وإذا حكمتم بين الناس أن تحكموا بالعدل الآية

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम० नह्मदुहू व नसल्ली अला रसूलिहिल करीमि क़ालल्लाहु तआला इन्नल्लाह यअ्मुरुकुम अनतुअद्दल् अमानाति इला अह्लिहा व इज़ा हकम्तुम बेनन्नासि अन्तह्कुमू बिल् अद्लि०

तर्जुमा—अल्लाह तआला तुमको हुक्म देते हैं कि अमानतें अमानत वालों को अदा करा दो और जब तुम लोगों में हुक्म करो, इंसाफ़ से हुक्म करो।

इस आदत से दो हुक्म मालूम हुए—एक यह कि हक़ वालों को उनके वाजिब हक़ अदा करना वाजिब है। दूसरे यह कि एक हक़ के लिए दूसरे आदमी का हक़ बर्बाद करना ना जायज़ है।

इन दोनों हुक्मों से मुताल्लिक़ चीज़ों में से वे ख़ास दो मौक़े भी हैं जिनके बारे में इस वक़्त कुछ कहने का इरादा है—

एक उन में मां–बाप के वाजिब व ग़ैर–वाजिब हक़ों का तै करना है,

दूसरे मां–बाप के हक़ों और बीवी या बच्चों के हक़ों में टकराव होने के वक़्त इन हक़ों में बीच की राह निकालना है।

ऐसा बताने की ज़रूरत इसलिए पेश आयी कि लोगों के तुजुर्बे ने बतलाया कि जिस तरह कुछ बे–क़ैद लोग मां–बाप के हुक़ूक़ में ज़्यादती करते हैं, उनकी वाजिब फ़र्मांबरदारी से आंखें चुरा लेते हैं और उन हुक़ूक़ का वबाल अपने सर पर लेते हैं, इसी तरह कुछ दीनदार मां–बाप के हक़ों के अदा करने में दूसरों के जैसे बीवी–बच्चों के हुक़ूक़ की परवाह नहीं करते और उनके हक़ूक़ के मारे जाने का वबाल अपने सर पर लेते हैं।

कुछ ऐसे हैं तो किसी का हक़ तो नहीं मारते, लेकिन ग़ैर–वाजिब को वाजिब समझकर उनके अदा करने का इरादा करते हैं। और चूंकि कभी उन्हें बरदाश्त नहीं कर पाते, इसलिए तंग होते हैं और इससे ग़लत ख़्याल पैदा होने लगते हैं कि शरीअत के कुछ हुक्मों में बर्दाश्त न करने के क़ाबिल सख़्ती और तंगी है। इस तरह इन बेचारों के दीन को नुक़सान पहुंचता हैं और इस हैसियत से इसको भी हक़ वाले के वाजिब हक़ को बर्बाद करने में दाख़िल कर सकते हैं। और वह हक़ वाला उस आदमी का नफ़्स है कि उसके भी कुछ हक़ूक़ वाजिब होते हैं, जैसा कि प्यारे नबी सल्ल० ने फ़रमाया कि तुम्हारे नफ़्स का भी तुम पर हक़ है। फिर यह कि इन वाजिब हक़ों में सबसे बढ़कर हिफ़ाज़त अपने दीन की है।

पस जब मां–बाप के ग़ैर–वाजिब हक़ को वाजिब समझना गुनाह की तरफ़ ले जाता है, इसलिए वाजिब हुक़ूक़ का फ़र्क़ करना भी वाजिब है। इस फ़र्क़ के बाद फिर अगर अमली तौर पर इन हक़ूक़ को लाज़िम कर लेगा, मगर अक़ीदे के एतबार से वाजिब न समझेगा, तो वह बात तो न होगी, लेकिन इस तंगी को अपने हाथों की ख़रीदी हुई समझेगा और जब तक बर्दाश्त करेगा, उसकी बड़ी हिम्मत है और ऐसा सोचकर भी उसे लज़्ज़त मिलेगी कि मैं बावजूद मेरे ज़िम्मे न होने के इसे बर्दाश्त करता हूं और जब चलेगा, उसे छोड़ देगा। ग़रज़ हुक्मों के इल्म में हर तरह की मस्लहत ही मस्लहत है और जिहालत में हर तरह का नुक़सान ही नुक़सान है, पस इसी फ़र्क़ की वजह से ये कुछ सतरें लिखता हूं। अब इस तम्हीद के बाद एक तो उसके बारे में हदीस व फ़िक़्ह की ज़रूरी रिवायतों को जमा करके, फिर उनसे जो हुक्म निकलते हैं, उनकी तक़रीर कर दूंगा और अगर उसे मां–बाप के हुक़ूक़ की दर्मियानी राह' के नाम से याद किया तो ना–मुनासिब नहीं।

वल्लाहु मुस्तआनु व अलैहित्तक्लानु— واللہ المستعان وعلیہ التکلان.

في المشكوة عن ابن ابي عمرؓ قال كانت تحتي امرأة احبها وكان عمرؓ يكرهها فقال طلقها فابيت فاتى عمر رسول الله صلى الله عليه وسلم فذكر ذلك له فقال لي رسول الله صلى الله عليه وسلم طلقها رواه الترمذي في المرقاة طلقها امر ندب او وجوب ان كان هناك باعث آخر وقال امام الغزالي في الاحياء ج ٢ ص ١٣ كشوري في هذ الحديث فهذا يدل على ان حق الوالد مقدم ولكن والد يكرهها لا بغرض فاسد مثل عمرؓ في المشكوة عن معاذؓ قال اوصاني رسول الله صلى الله عليه وسلم وساق الحديث وفيه لا تعقن والديك وان امراك ان تخرج من اهلك ومالك الحديث في المرقاة شرط للمبالغة باعتبار الاكمل ايضاً اما باعتبار اصل الجواز فلا يلزمه طلاق زوجة امرأة بفراقها وان تاذيا ببقائها ايذاء شديدا لانه قد يحصل له ضرر بها فلا تكلف لاجلهما اذ من شان شفقتهما انهما لو تحققا ذلك لم يأمراه به فالزامهما له بدمع ذلك حمق منهما ولا يلتفت اليه وكذلك اخراج ماله انتهى مختصراً قلت وقرينة على كونه للمبالغة اقترانه بقوله عليه السلام في ذلك الحديث لا تشرك بالله وان قتلت او حرقت فهذا للمبالغة قطعاً والا فنفس الجواز يتلفظ كلمة الكفر وان يفعل ما يقتضي الكفر ثابت بقوله تعالى من كفر بالله من بعد ايمانه الا من اكره الاية فافهم في المشكوة عن ابن عباسؓ قال قال رسول الله صلى الله عليه وسلم من اصبح مطيعا لله في والديه الحديث وفيه قال رجل وان ظلماه قال وان ظلماه رواه البيهقي في شعب الايمان في المرقاة في والديه اي في حقهما وفيه ان طاعة الوالدين لم تكن طاعة مستقلة بل هي طاعة الله التي بلغت توصيتها من الله تعالى بحسب طاعتهما الطاعة الى ان قال ويؤيده انه ورد لا طاعة لمخلوق في معصية الخالق وفيهما وان ظلماه قال الطيبي يراد بالظلم ما يتعلق بالامور الدنيوية لا الاخروية قلت وقوله صلى الله عليه وسلم هذا وان ظلماه كقوله عليه السلام في اعطاء المصدق ارضوا مصدقيكم وان ظلمتم رواه ابوداؤد لقوله عليه السلام فيهم وان ظلموا فعليهما الحديث رواه ابوداؤد ومعناه على ما في اللمعات قوله وان ظلموا اي بحسب زعمكم او على الفرض والتقدير مبالغة ولو كانوا ظالمين حقيقة كيف يأمر بارضاءهم في المشكوة عن ابن عمرؓ عن النبي صلى الله عليه وسلم في قصة ثلاثة نفر يتماشون واخذهم المطر فمالوا الى غار في الجبل فانحطت على فم غارهم صخرة فاطبقت عليهم في هذا الحديث اكرامهما او عقلهما واكرامات ابداء بالصبية قبلهما والصبية يتضاغون فذكر احدهم من امره فقمت عند رؤسهما اي الوالدين الذين كانا شيخين كبيرين كما عند في الحديث متفق عليه في المرقاة تقديما لاحسان الوالدين على المولودين لتعارض عزمهم بكبرهما فان الرجل الكبير يبقى كالطفل الصغير قلت وهذا التضاغي كما في قصة اضياف ابي طلحة قال فعليهم بشيء ونوميهم في جواب قول امرأته هل عندك شيء قالت لا الا قوت صبياني ومعناه كما في اللمعات قالوا هذا محمول على ان الصبيان لم يكونوا محتاجين الى الطعام وانما كان طلبهم على عادة الصبيان من غير جوع والا وجب تقديمهم وكيف يتركان واجباً وقد اثنى الله عليهما اهملت ايضاً مما يؤيد وجوب الاضطراري الى هذا التاويل تقدم حق الولد الصغير على حق الوالد في نفسه كما في الدر المختار باب النفقة ولو له اب وطفل فالطفل احق به وقيل (بصيغة التمريض) يقسمهما فيهما في كتاب الآثار للامام محمدؒ ص ١٠٠ عن عائشةؓ قالت افضل ما اكلتم كسبكم وان اولادكم من كسبكم قال محمد لا باس به اذا كان محتاجا ان ياكل من مال ابنه بالمعروف فان كان غنيا فاخذ منه شيئا فهو دين عليه وهو قول ابي حنيفة ؒ قال اخبرنا ابو حنيفة عن حماد عن ابراهيم قال ليس

للاب من مال ابنه شئ الا ان يحتاج اليه من طعام او شراب او كسوة قال محمد به ناخذ
وهو قول ابى حنيفة فى كنز العمال عن الحاكم وغيره ان اولادكم هبة الله تعالى لكم
يهب لمن يشاء اناثا ويهب لمن يشاء الذكور فهم واموالهم لكم اذا احتجتم اليها وقد يحل
قوله عليه السلام فى الحديث اذا احتجتم على تقليد امام محمد قول عائشة وان اولادكم من كسبكم بما اذا
كان محتاجا ويلزم التقليد كونه دينا عليه اذا اخذ من غير حاجة كما هو ظاهر قلت وايضا فسر
ابو بكر الصديق بهذا قوله عليه السلام انت ومالك لابيك قال ابو بكر انما يعنى
بذالك النفقة رواه البيهقى كذا فى تاريخ الخلفاء وفى الدر المختار لا يفرض القتال على صبى
وبالغ له ابوان او احدهما لان طاعتهما فرض عين الى ان قال لا يحل سفر فيه خطر الا باذنهما وما لا
خطر فيه يحل بلا اذن ومنه السفر فى طلب العلم فى رد المحتار الحلبى ستة من منعه ان كان يدخلهما من
ذلك مشقة شديدة وشمل الكافرين ايضا او احدهما اذا كره خروجه مخافة ومشقة ولا بد لكراهة
قتال اهل دينه فلا يطيعه ما لم يخف عليه الضيعة اذ لو كان معسرا محتاجا الى خدمته فرضت عليه
ولو كافرا وليس من الصواب ترك فرض عين ليتوصل الى فرض كفاية قوله فيه خطر كالجهاد و
سفر البحر قوله وما لا خطر كالسفر للتجارة والحج والعمرة يحل بلا اذن الا ان خيف عليهما الضيعة
سرخسى) قوله ومنه السفر فى طلب العلم لانه اولى من التجارة اذا كان الطريق امنا ولم يخف
عليهما الضيعة سرخسى) اه قلت ومثله فى البحر الرائق والفتاوى الهندية وفيها فى مسئلة فلا بد من
الاستيذان فيه اذا كان لمعنيه بد ج ٢ ص ٦٦٥ فى در المختار باب النفقة وكذا تجب لها السكنى فى
بيت خال عن اهله ومن اهلها الخ وفى رد المحتار بعد ما نقل الاقوال المختلفة ما نصه فى الشريفة
ذات اليسار لابد من افرادها فى دار ومتوسطة الحال يكفيها بيت واحد من دار والى ان قال
واهل بلادنا الشامية لا يسكنون فى بيت من دار مشتملة على اجانب وهذا فى اوساطهم فضلا عن اشرافهم
الا ان تكون دارا موروثة بين اخوة مثلا فيسكن كل منهم جهة منها مع الاشتراك فى مرافقها ثم قال
لا شك ان المعروف يختلف باختلاف الزمان والمكان فعلى المفتى ان ينظر الى حال اهل زمانه وبلده
اذ بدون ذلك لا تحصل المعاشرة بالمعروف اه۔

इन रिवायतों से कुछ मस्अले ज़ाहिर हुए—

एक यह कि जो चीज़ शरअ के एतबार से वाजिब हो और मां–बाप उसे मना करें, इसमें उनकी फ़र्मांबरदारी जायज़ नहीं, वाजिब होने का कोई सवाल ही नहीं। इस क़ायदे में ये बात भी आ गयी—जैसे उस आदमी के पास माली फैलाव इतना कम है कि अगर मां–बाप की ख़िदमत करे तो बीवी–बच्चों को तक्लीफ़ होने लगे, तो उस आदमी को जायज़ नहीं कि

बीवी–बच्चों को तक्लीफ़ दे और मां–बाप पर ख़र्च करे और जैसे बीवी का हक़ है कि वह शौहर के मां–बाप से जुदा रहने की मांग करे, पस वह अगर इसकी ख़्वाहिश करे और मां–बाप उसको शामिल रखना चाहें तो शौहर को जायज़ नहीं कि इस हालत में बीवी को उनके शामिल रखे, बल्कि वाजिब होगा कि उसको जुदा रखे या जैसे हज व उमरा को या फ़र्ज़ भर इल्म हासिल करने को न जाने दें तो इसमें उनकी इताअत नाजायज़ होगी।

दूसरे यह कि बात शरअ से ना–जायज़ हो और मां–बाप उसका हुक्म करें, उसमें भी उसकी फ़रमांबरदारी जायज़ नहीं। जैसे, वे किसी ना–जायज़ नौकरी का हुक्म करें या जाहिलियत की रस्में अख़्तियार करा दें।

तीसरे यह कि जो बात शरअ से न वाजिब हो और न मना हो, बल्कि जायज़ हो, बल्कि सिर्फ़ पसंदीदा हो और मां–बाप उसके करने की या न करने को कहें तो उसमें तफ़्सील हैं, देखना चाहिए कि इस चीज़ की उस आदमी को ऐसी ज़रूरत है कि इसके बग़ैर उसको तक्लीफ़ होगी, जैसे ग़रीब आदमी है, पस पैसा नहीं, बस्ती में कोई शक्ल कमाई की नहीं, मगर मां–बाप नहीं जाने देते या यह कि उस आदमी को ऐसी ज़रूरत नहीं। अगर इस दर्जे की ज़रूरत है, तब तो इसमें मां–बाप का हुक्म मानना ज़रूरी नहीं और अगर इतनी ज़रूरत नहीं, तो फिर देखना चाहिए कि इस काम के करने में कोई ख़तरा व डर हलाक होने या मर्ज़ बढ़ने का है या नहीं और यह भी देखना चाहिए कि उस आदमी के इस काम में लग जाने की वजह से, कोई नौकर या सामान न होने की वजह से, ख़ुद उनके तक्लीफ़ उठाने का डर ज़्यादा है या नहीं। पस अगर इस काम में ख़तरा है या उसके ग़ायब हो जाने से, उसकी बेसर व सामानी की वजह से तक्लीफ़ होगी, तब तो उनकी मुख़ालफ़त जायज़ नहीं। जैसे, ग़ैर–वाजिब लड़ाई में जाता है या समुद्र का सफ़र करता है या फिर उनका कोई ख़बरगीरी करने वाला न रहेगा और उसके पास इतना माल नहीं है, जिससे नौकर का या काफ़ी ख़र्च का इंतिज़ाम कर जाए और यह काम और सफ़र भी ज़रूरी नहीं, तो इस हालत में उनका कहना मानना वाजिब होगा और अगर इन दोनों बातों में से कोई बात यानी न इस काम या सफ़र में उसको कोई ख़तरा है और न उनकी मशक़्क़त और ज़ाहिरी तक्लीफ़ का कोई ख़तरा है, तो बे–ज़रूरत भी वह काम या सफ़र, उनके

रोने के बावजूद जायज़ है, तो मुस्तहब यही है कि उस वक़्त भी उनका कहा माने !

इस उसूली बात से आगे का हुक्म भी मालूम हो गया कि जैसे, वे कहें कि अपनी बीवी को बे-वजह पूरी तलाक़ दे दे, तो कहना मानना वाजिब नहीं या जैसे वे कहें कि तमाम कमाई अपनी हमको दिया करो तो इसमें कहा मानना वाजिब नहीं और वे अगर इस चीज़ पर ज़बरदस्ती करेंगे, तो गुनाहगार होंगे। इसलिए कि हदीस में आता है कि वे अगर ज़रूरी ज़रूरतों से ज़्यादा, बे-इजाज़त लेंगे, तो उनके ज़िम्मे क़र्ज़ होगा, जिसकी मांग दुनिया में भी की जा सकती है। अगर यहां न देंगे, तो क़ियामत में देना पड़ेगा। फ़क़ीहों की तफ़्सील इसके लिए काफ़ी है, वे हदीसों का मतलब ख़ूब समझते हैं, जबकि हाकिम की हदीस में भी 'इज़हतज्तुम' की क़ैद आयी है। वल्लाहु अअलम

कतबा—

अशरफ़ अली, थाना भवन

27 जुमादल ऊख़्रा 1332 हि०

नोट—चूंकि ये शक्लें नमाज़ में अक्सर पेश आती हैं, इसलिए हज़रत मौलाना क़द्दस सिर्रहू से पूछा गया। मौलाना ने जवाब में तहरीर फ़रमाकर हुक्म फ़रमाया कि इन मस्अलों को इसी तरह सवाल व जवाब बहिश्ती गौहर के तौर पर आख़िर में दाख़िल कर दो। इस हुक्म के मुताबिक़ हज़रत मौलाना क़द्दस सिर्रहू के इस जगह ये मस्अले दाख़िल किये गये, इससे पहले जिन लोगों ने इस किताब को छापा है, उसमें ये मस्अले न मिलेंगे, इसलिए ख़रीदारों को देखकर ख़रीदना चाहिए, वरना किताब अधूरी रहेगी।